॥ पूर्ण परमात्मने नमः ॥

हिन्दू साहेबान! नहीं समझे गीता, वेद, पुराण

जीव हमारी जाति है, मानव (Mankind) धर्म हमारा।
हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई, धर्म नहीं कोई न्यारा।।

प्रथम संस्करण (अगस्त 2013) = 10,000 प्रतियां
द्वितीय संस्करण (नवंबर 2013) = 11,000 प्रतियां

शंका–समाधान हेतु निम्न नंबरों पर सम्पर्क करें :–
7988070314, 9053275569, 9992600844,

धर्मार्थ मूल्य केवल 40/- रूपये

मुद्रक :- कबीर प्रिंटर्स
C-117, सैक्टर-3, बवाना इन्डस्ट्रियल एरिया, नई दिल्ली।
प्रकाशक :-
प्रचार प्रसार समिति तथा सर्व संगत
सतलोक आश्रम, बरवाला, जिला-हिसार (हरियाणा)

संत रामपाल जी महाराज जी से नाम उपदेश (मंत्र दीक्षा) प्राप्त करने के लिए एवं अधिक जानकारी के लिए इन नंबरों पर संपर्क करे :- 8222880541, 8222880542, 8222880543
8222880544, 8222880545, 9992600844

E-mail : jagatgururampalji@yahoo.com
Visit us at : www.jagatgururampalji.org
Follow us onTwitter : twitter.com/satlokashram

विषय सूची

❑❑❑

''हिन्दू साहेबान! नहीं समझे गीता, वेद, पुराण''

''प्रथम अध्याय''

''दो शब्द''

विश्व के सब भाईयों तथा बहनों को मेरा शत्-शत् प्रणाम। हिन्दू साहेबानों से मेरा निवेदन है कि इस पुस्तक को कृपया निष्पक्ष बुद्धि से दिल थामकर पूरा पढ़ना। हिन्दू समाज के लिए यह पुस्तक संजीवनी है तथा वरदान सिद्ध होगी।

{निवेदन :- भक्तात्मा हिन्दुओं से मेरा करबद्ध निवेदन है कि इस पुस्तक के अमृतज्ञान के सत्य तथा असत्य को जानने के लिए आप गीता प्रेस गोरखपुर से प्रकाशित व मुद्रित तथा श्री जयदयाल गोयन्दका जी द्वारा अनुवादित ''पदच्छेद अन्वय साधारण भाषाटीकासहित श्रीमद्भगवत गीता'' साथ रखें। अजब आनंद आएगा क्योंकि इसमें अनुवादक ने शब्दों के अर्थ आमने-सामने भिन्न-भिन्न किए हैं। अन्य अनुवादकों ने ऊपर संस्कृत में मूल पाठ रखा है, नीचे केवल अनुवाद सीधा किया है। शब्दों के अर्थ भिन्न-भिन्न नहीं किए हैं। यदि मुझ पर भरोसा करो तो उस गीता की भी आवश्यकता नहीं है क्योंकि मैंने उसी पुस्तक की फोटोकॉपी लगाई हैं।}

पुस्तक ''हिन्दू साहेबान! नहीं समझे गीता, वेद, पुराण'' का आधार सूक्ष्मवेद यानि तत्त्वज्ञान है। समझने के लिए प्रमाण वेदों, गीता, महाभारत तथा पुराणों आदि शास्त्रों से लिए हैं। सूक्ष्मवेद में कहा है कि :-

ब्रह्मा, विष्णु तथा महेशा। तीनूं देव दयालु हमेशा।।
तीन लोक का राज है। ब्रह्मा, विष्णु महेश।।
तीनों देवता कमल दल बसैं, ब्रह्मा, विष्णु, महेश।
प्रथम इनकी बंदना, फिर सुन सतगुरू उपदेश।।

अर्थात् सूक्ष्मवेद में अध्यात्म का सम्पूर्ण ज्ञान है। उसमें कहा है कि तीनों देवता श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी बहुत दयालु हृदय के हैं। इनकी केवल तीन लोक (स्वर्ग लोक, पाताल लोक, पृथ्वी लोक) में सत्ता है। ये तीन लोक के मालिक हैं, परंतु लोक तो बहुत सारे हैं जिनका मालिक परम अक्षर ब्रह्म है जिसकी सत्ता तीनों लोकों समेत सब पर है। मोक्ष प्राप्ति के लिए प्रथम इन तीनों देवताओं की बंदना अर्थात् मान-सम्मान यानि साधना करनी होती है। फिर सतगुरू का उपदेश सुनो जो परम अक्षर ब्रह्म की पूजा साधना बताएगा। उस संत से तत्त्वज्ञान सुनो। तत्त्वदर्शी संत पूर्ण मोक्ष प्राप्ति की साधना/पूजा बताता है। पूर्ण मोक्ष के लिए इन तीनों देवताओं की शास्त्रोक्त साधना करनी होती है, परंतु पूजा गीता अध्याय 8 श्लोक 3,

8, 9, 10, अध्याय 15 श्लोक 17, अध्याय 18 श्लोक 62 में बताए ''परम अक्षर ब्रह्म'' की करनी होती है। परम अक्षर ब्रह्म को गीता अध्याय 8 श्लोक 9 तथा अध्याय 15 श्लोक 17 में गीता ज्ञान देने वाले ने अपने से अन्य बताया है तथा कहा है कि (उत्तम पुरूषः तू अन्य) **पुरूषोत्तम तो मेरे से अन्य है, वही परमात्मा है। सबका धारण-पोषण करने वाला अविनाशी परमेश्वर है।**

{पूजा तथा साधना का अंतर जानने के लिए कृपया आप इसी पुस्तक में पृष्ठ 179 पर पढ़ें।}

मेरा उद्देश्य :- विश्व के मानव को सत्य ज्ञान सुनाकर सनातनी बनाना है क्योंकि पिछला इतिहास बताता है कि पहले केवल एक सनातन पंथ (धर्म) ही था। तत्त्वज्ञान के अभाव से हम धर्मों में बंटते चले गए जो विश्व में अशांति का कारण बना है। एक-दूसरे के जानी दुःश्मन बन गए हैं।

यह बात विश्व का मानव निर्विरोध मानता है कि सबका मालिक (परमात्मा) एक है। परंतु वह कौन है? कैसा है यानि साकार है या निराकार है? मानव रूप में या अन्य रूप में? यह प्रश्न वाचक चिन्ह (?) अभी तक लगा है। इस पुस्तक में वह प्रश्नवाचक चिन्ह (?) पूर्ण रूप से हटा दिया है। सत्य को ग्रहण करना, असत्य से किनारा करना, एक नेक मानव का परम कर्तव्य बनता है। इस पुस्तक में एक शब्द भी चारों वेदों व वेदों के सार रूप श्रीमद्भगवत गीता, पुराणों तथा सूक्ष्मवेद से बाहर नहीं है। सूक्ष्मवेद में बताया है कि विश्व के सभी जीवात्मा परमशांति वाले सनातन परम धाम में उस परमात्मा के पास रहते थे जिसके विषय में गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में कहा है कि हे भारत! तू सर्वभाव से उस परमेश्वर की शरण में जा, उसकी कृपा से ही तू परमशांति को तथा (शाश्वतम् स्थानम्) सनातन परम धाम यानि सत्यलोक को प्राप्त होगा।

उस परमेश्वर का प्रमाण :- गीता अध्याय 8 श्लोक 1 में अर्जुन ने प्रश्न किया कि {आपने गीता अध्याय 7 श्लोक 29 में जो तत् ब्रह्म कहा है} वह तत् ब्रह्म क्या है? जिसका उत्तर देते हुए गीता अध्याय 8 श्लोक 3, 8, 9, 10, गीता अध्याय 15 श्लोक 4 तथा 17 आदि में कहा है। जिस लोक में वह तत् ब्रह्म यानि परम अक्षर ब्रह्म (सत्यपुरूष) रहता है, उसमें परमशांति है यानि महासुख है। उस सनातन परम धाम में गए साधक फिर लौटकर संसार में नहीं आते।

जीवात्मा जब से परम अक्षर ब्रह्म यानि परमेश्वर से बिछड़ी है यानि उस परमशांति वाले सनातन परम धाम से काल ब्रह्म के दुःखालय लोक में आई है, उसी समय से ही इसको उस सुख का अभाव खल रहा है जो परमात्मा के पास था। उस सुख की खोज में इधर-उधर भटक रही है। इस यात्रा में जैसा भी मार्गदर्शक मिला, उस पर विश्वास कर लिया क्योंकि भक्त का हृदय नम्र व श्रद्धायुक्त होता है। इस कारण से धर्म बनते चले गए। अधूरे ज्ञान से मानव समाज धर्मों में बंटता चला गया। अनेकों पंथ (धर्म) बन गए। सर्वप्रथम एक आदि सनातन पंथ (धर्म) था। मानव समाज शास्त्रोक्त साधना करता था।

वह सत्ययुग का समय था। पाँचों वेदों (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद तथा सूक्ष्मवेद) शास्त्र थे। चार वेद ब्रह्मा जी को मिले, उनमें सम्पूर्ण अध्यात्म ज्ञान नहीं था। परम अक्षर ब्रह्म सत्ययुग में लीला करने के लिए शिशु रूप धारण करके आए। बड़े होकर सूक्ष्मवेद का प्रचार किया। तब तक उस समय के ऋषियों ने चारों वेदों वाला ज्ञान पढ़ लिया था। सूक्ष्मवेद वाला कुछ ज्ञान चारों वेदों में न होने के कारण उसको गलत माना। इसलिए सूक्ष्मवेद को धीरे-धीरे छोड़ दिया, परंतु लगभग एक लाख वर्ष तक सत्ययुग में शास्त्रोक्त भक्ति की गई। इसके पश्चात् शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण प्रारंभ हो गया। गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में कहा है कि जो व्यक्ति शास्त्रविधि को त्यागकर अपनी इच्छा से मनमाना आचरण करता है, उसको न सिद्धि प्राप्त होती है, न उसकी गति होती है, न उसे सुख मिलता है। (इन तीन वस्तुओं के लिए ही भक्ति की जाती है।)

{संत गरीबदास जी ने सूक्ष्मवेद में कहा है :- आदि सनातन पंथ हमारा। जानत नहीं इसे संसारा।।
षट्दर्शन सब खट-पट होई। हमरा पंथ ना पावे कोई।।
इन पंथों से वह पंथ अलहदा। पंथों बीच सब ज्ञान है बहदा।।

अर्थात् हमारा आदि सनातन पंथ है जिसको संसार के व्यक्ति नहीं जानते। वह आदि सनातन पंथ सब पंथों से भिन्न है। गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में कहा है कि (पुरा) सृष्टि की आदि में जिस (ब्रह्मणः) सच्चिदानंद घन ब्रह्म की साधना तीन नामों ॐ, तत्, सत् वाली की जाती थी जो तीन विधि से स्मरण किया जाता है। सब ब्राह्मण यानि साधक उसी वेद (जिसमें यह तीन नाम का मंत्र लिखा है) के आधार से यज्ञ-साधना करते थे।

विशेष :- ये तीन नाम मंत्र चार वेदों में नहीं हैं।}

''सनातनी पूजा का अंत''

गीता अध्याय 4 श्लोक 1-2 में स्पष्ट किया है कि हे अर्जुन! यह योग यानि गीता वाला अर्थात् चारों वेदों वाला ज्ञान मैंने सूर्य से कहा था। सूर्य ने अपने पुत्र मनु से कहा। मनु ने अपने पुत्र इक्ष्वाकू को कहा। इसके पश्चात् यह ज्ञान कुछ राज ऋषियों ने समझा। उसके पश्चात् यह ज्ञान (नष्टः) नष्ट हो गया यानि लुप्त हो गया।

जैन संस्कृति कोष नामक पुस्तक में पृष्ठ 175-177 पर कहा है कि :-

तीर्थंकर ऋषभदेव की जीवन घटनाएँ :- तीर्थंकर ऋषभदेव अंतिम कुलकर नाभिराज के पुत्र थे। उनकी माता मरूदेवी थी। वे इक्ष्वाकूवंशी नाभिराज अयोध्या के एक लोकप्रिय राजा थे। तरूण होने पर नाभिराज ने ऋषभदेव का विवाह सुनंदा और सुमंगला से कर दिया। सुनंदा ने तेजस्वी पुत्र बाहुबली और पुत्री सुंदरी को जन्म दिया और सुमंगला ने भरत सहित 99 पुत्रों और ब्राह्मी पुत्री को जन्म दिया।

समय आने पर ऋषभदेव ने भरत को अयोध्या का, बाहुबली को तक्षशिला का और शेष युवराजों को उनकी योग्यतानुसार राज्य सौंपकर संसार त्याग

दिया और दीक्षा लेकर साधना में लीन हो गये। साधना काल में पाणि पात्री ऋषभदेव एक वर्ष तक निराहार रहे। बाद में बाहुबली के पौत्र श्रेयांस कुमार ने इक्षुरस देकर उनकी इस निराहार-वृत्ति को तोड़ा। लगातार एक हजार वर्ष तक तपस्या करने वाले मुनि ऋषभदेव ने अंत में केवलज्ञान प्राप्त किया और धर्मदेशना प्रारंभ की। प्रथम धर्मदेशना भरत के पुत्र मरीचि को दी जो बाद में जैन धर्म के चौबीसवें तीर्थंकर महावीर वर्धमान बने।

❖ पवित्र गीता में क्या कहा है? कृपया पढ़ें व विचार करें।

गीता अध्याय 6 श्लोक 16 में कहा है कि हे अर्जुन! यह योग यानि भक्ति/ साधना न तो बिल्कुल न खाने वाले की सिद्ध होती है, न अधिक खाने वाले की, न अधिक सोने वाले की, न अधिक जागने वाले की सिद्ध होती है।

ध्यान देने योग्य :- श्री ऋषभदेव जी ने गीता ज्ञान यानि वेदों, शास्त्रों में बताई साधना के विपरीत शास्त्रविधि को त्यागकर मनमाना आचरण अपनी इच्छा से किया जिससे कोई लाभ नहीं हुआ, न होना था।

अन्य प्रमाण :- गीता अध्याय 17 श्लोक 5-6 में इस प्रकार कहा है :- जो मनुष्य शास्त्रविधि रहित यानि शास्त्रविधि को त्यागकर केवल मन कल्पित घोर तप को तपते हैं, वे शरीर में प्राणियों व कमल चक्रों में विराजमान शक्तियों को तथा हृदय में स्थित मुझको भी कृश करने वाले हैं। उन अज्ञानियों को तू आसुर स्वभाव के जान।

उपरोक्त गीता शास्त्र के उल्लेख से स्पष्ट हो जाता है कि इक्ष्वाकू वंशी नाभि राज तक यानि सत्ययुग में लगभग एक लाख वर्ष तक वेदों यानि गीता वाले ज्ञानानुसार पूजा की जाती थी। उसके पुत्र ऋषभदेव जी से शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण प्रारंभ हुआ। सनातनी पूजा का अंत हुआ। श्री ऋषभदेव जी की पूजा यानि घोर तप करना वेदोक्त साधना नहीं है। इसलिए ऋषभदेव जी की भक्ति शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण था जिससे उनका जीवन नष्ट हो गया था। मोक्ष नहीं हुआ। प्रमाण श्रीमद्भागवत सुधा सागर (सुख सागर) पुराण में इस प्रकार है :-

एक समय ऋषभदेव जी मुख में पत्थर का टुकड़ा लेकर नग्नावस्था में वन में घूम रहे थे। जंगल में आग लग गई। उस दावानल में ऋषभदेव जी जलकर मर गए। (यह पौराणिक कथा है।) क्या यह गति यानि मुक्ति हो गई? उसी समय से यह शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण सब ऋषिजन करने लगे। प्रमाण के लिए किसी भी पुराण को पढ़ो। लिखा है कि उस ऋषि ने इतने वर्ष घोर तप किया, उसने इतने वर्ष तप किया आदि। फिर वे शास्त्रविधि विरूद्ध साधक ऋषिजन अपना-अपना अनुभव जो शास्त्र विरूद्ध साधना से हुआ, उसका कथन करने लगे। अन्य ऋषिजन एक-दूसरे की सुनकर आगे उन्हीं शास्त्रों के विपरीत ज्ञान को सुनाने लगे जिनसे अठारह

पुराण बन गए। पुराण ऋषियों के अनुभव की देन हैं जिनमें सारा का सारा ज्ञान वेदों व गीता के विपरीत है। {श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शंकर जी ने भी घोर तप किया जो गीता शास्त्र के विपरीत मनमानी साधना है।}

वर्तमान में सनातन धर्म का नाम वैदिक धर्म तथा हिन्दू धर्म भी प्रसिद्ध है। आदि शंकराचार्य जी ने देवी-देवताओं की पूजा का विधान बताया और पुराणों के ज्ञान को सनातन धर्म यानि हिन्दू धर्म में दृढ़ता के साथ प्रवेश कर दिया।

गीता अध्याय 4 श्लोक 1-2 को फिर पढ़ते हैं जिनमें गीता ज्ञान दाता ने अर्जुन से कहा है कि मैंने इस योग को यानि गीता वाले वेद ज्ञान को (क्योंकि श्रीमद्भगवत गीता चारों वेदों का सार है यानि संक्षिप्त रूप है। इस तथ्य को पूरा हिन्दू समाज मानता है।) सूर्य से कहा था। सूर्य ने अपने पुत्र वैवस्वत यानि मनु से कहा, और मनु ने अपने पुत्र इक्ष्वाकू से कहा।(गीता अध्याय 4 श्लोक 1)

हे परन्तप अर्जुन! इस प्रकार परंपरा से प्राप्त इस योग को यानि गीता उर्फ वेद ज्ञान को राज ऋषियों ने जाना। किंतु उसके बाद वह योग (वेद ज्ञान) बहुत समय से इस पृथ्वी लोक में नष्ट हो गया यानि लुप्त हो गया।(गीता अध्याय 4 श्लोक 2)

{ध्यान दें तो श्लोक 2 के मूल पाठ में ''नष्टः'' शब्द है जिसका अर्थ नष्ट हो गया सटीक अर्थ है।} राजा नाभी राज तक सत्ययुग लगभग एक लाख वर्ष व्यतीत हो गया था। गीता का ज्ञान द्वापर के अंत में यानि कलयुग से लगभग 100 वर्ष पहले बोला गया था। गणित की रीति से नाभी राज के बाद यह गीता का ज्ञान 37 लाख 87 हजार 900 वर्ष बाद बोला गया। इस दौरान सब ऋषियों ने वेदों के विपरीत साधना की, जिसका प्रमाण तथा परिणाम 18 पुराण हैं। पुराणों में कोई भी साधना गीता यानि वेदों के अनुसार नहीं है। यहाँ केवल दो शब्द लिख रहा हूँ ताकि बुद्धिमान संकेत समझें। विस्तार से इस पुस्तक में आगे लिखा है।

प्रमाण गीता के विपरीत साधना का :- गीता अध्याय 9 श्लोक 25 में कहा है कि जो पित्तर पूजता है, पित्तरों को प्राप्त होगा यानि पित्तर बनेगा। भूत पूजने वाला भूतों को प्राप्त होगा यानि भूत बनेगा। देवताओं को पूजने वाला, देवताओं को प्राप्त होगा यानि देवताओं के पास जाएगा। मेरा भक्त मुझे प्राप्त होगा।

यदि पवित्र हिन्दू धर्म की पूजाओं पर दृष्टि दौड़ाई जाए तो पता चलता है कि लगभग पूरा हिन्दू समाज पित्तर पूजा, भूत पूजा, देवी-देवताओं की पूजा करता है जो शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण होने से गीता अध्याय 16 श्लोक 23 के अनुसार व्यर्थ प्रयत्न है।

<u>सनातनी पूजा का पुनः उत्थान</u> :- मैं (लेखक) तथा 90% मेरे अनुयाई हिन्दू हैं। हमने शास्त्रविधि रहित साधना त्याग दी है। शास्त्रों को अच्छी तरह पढ़ा व समझा है। उसके पश्चात् शास्त्रोक्त साधना प्रारंभ की है जो सर्व शास्त्रों से प्रमाणित है। वह इस प्रकार है :-

गीता अध्याय 4 श्लोक 34 को भी पढ़ें जिसमें कहा है कि उस ज्ञान को (सूक्ष्मवेद वाले ज्ञान को) तू तत्त्वदर्शी संतों के पास जाकर प्राप्त कर।

विचारणीय विषय यह है कि तत्त्वज्ञान गीता में नहीं है। यदि होता तो गीता ज्ञान देने वाला यह नहीं कहता कि तत्त्वज्ञान को तत्त्वदर्शी संतों से जान। तत्त्वदर्शी संत के अभाव में मानव समाज मनमाना आचरण करके अपना मानव जीवन नष्ट कर रहा है। जब गीता अध्याय 4 श्लोक 34 वाला तत्त्वदर्शी संत मिल जाता है, वह सम्पूर्ण अध्यात्म ज्ञान बताता है जिसको सुन-समझकर बुद्धिमान अपनी साधना शास्त्रों के अनुसार करता है। जीवन धन्य कर लेता है। एक धर्म (मानव धर्म) बन जाता है।

<u>संत गरीबदास जी {गाँव-छुड़ानी, जिला-झज्जर हरियाणा (भारत)} ने अपनी अमृतवाणी में कहा है कि</u> :-

गरीब, ऐसा निर्मल नाम है, निर्मल करे शरीर।
और ज्ञान मंडलीक है, चकवै ज्ञान कबीर।।

अर्थात् संत गरीबदास जी ने कहा है कि सच्चा नाम ऐसा कारगर है जो आत्मा को निर्मल कर देता है। अध्यात्म ज्ञान शरीर के कष्ट भी दूर करता है। कबीर साहेब का अध्यात्म ज्ञान (चकवै) चक्रवर्ती (All rounder) है। अन्य ज्ञान (मंडलीक) क्षेत्रीय यानि लोक वेद है।

<u>संत गरीबदास जी को दस वर्ष की आयु में परमात्मा सर्वोपरि लोक सनातन परम धाम यानि सत्यलोक से आकर गाँव-छुड़ानी, जिला-झज्जर, हरियाणा में मिले थे। उनकी आत्मा को ऊपर ले गए जहाँ परमात्मा रहता है</u>।

प्रमाण :- ऋग्वेद मंडल 9 सूक्त 54 मंत्र 3 में कहा है कि परमेश्वर सबसे ऊपर के लोक में विराजमान है। :-

प्रमाण के लिए देखें यह फोटोकॉपी इस मंत्र की जिसका अनुवाद आर्यसमाज के अनुवादकों ने किया है। इसके प्रकाशक तिलकराज आर्य अध्यक्ष, आर्य प्रकाशन 814, कुण्डेवालान, अजमेरी गेट, दिल्ली हैं तथा मुद्रक अजय प्रिन्टर्स, शाहदरा दिल्ली है :-

(प्रमाण ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सुक्त 54 मन्त्र 3)

अयं विश्वानि तिष्ठति पुनानो भुवनोपरि ।
सोमो देवो न सूर्यः ॥३॥

पदार्थः—(सूर्यः, न) सूर्य के समान जगत्प्रेरक (अयम्) यह परमात्मा (सोमः, देवः) सौम्य स्वभाव वाला और जगत्प्रकाशक है और (विश्वानि, पुनानः) सब लोकों को पवित्र करता हुआ (भुवनोपरि, तिष्ठति) सम्पूर्ण ब्रह्माण्डों के ऊर्ध्व भाग में भी वर्तमान है ॥३॥

विवेचन :- ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 54 मन्त्र 3 की फोटोकापी में आप देखें, इसका अनुवाद आर्यसमाज के विद्वानों ने किया है। उनके अनुवाद में भी स्पष्ट है कि वह परमात्मा (भुवनोपरि) सम्पूर्ण ब्रह्माण्डों के ऊर्ध्व अर्थात् ऊपर (तिष्ठति) विराजमान है, ऊपर बैठा है।

इसका यथार्थ अनुवाद इस प्रकार है :-

(अयम्) यह (सोमः देव) चन्द्रमा जैसा शीतल अमर परमेश्वर (सूर्यः) सूर्य के (न) समान (विश्वानि) सर्व को (पुनानः) पवित्र करता हुआ (भुवनोपरि) सर्व ब्रह्माण्डों के ऊर्ध्व अर्थात् ऊपर (तिष्ठति) बैठा है।

भावार्थ :- जैसे सूर्य ऊपर है और अपना प्रकाश तथा उष्णता से सर्व को लाभ दे रहा है। इसी प्रकार यह अमर परमेश्वर जिसका ऊपर के मंत्र में वर्णन किया है, सर्व ब्रह्माण्डों के ऊपर बैठा है।

कबीर परमेश्वर जी ने संत गरीबदास जी को उसी परमेश्वर ने ऊपर ले जाकर पुनः पृथ्वी पर छोड़ा था। उनको मृतक जानकर अंतिम संस्कार के लिए चिता पर रख दिया था। अचानक जीवित हो गया। फिर 51 वर्ष जीवित रहे। (कुल 61 वर्ष जीवित रहे।) उनको परमात्मा ने सम्पूर्ण अध्यात्म ज्ञान (तत्त्वज्ञान यानि सूक्ष्मवेद) बताया। उनका ज्ञान योग खोल दिया। उसके पश्चात् संत गरीबदास जी ने बताया कि कुल का मालिक एक है। वह परम अक्षर ब्रह्म यानि सत्यपुरूष है। विश्व के सब प्राणी उसी के बच्चे हैं। वर्तमान के धर्मगुरूओं ने धर्म की दीवारें भ्रम के कारण खड़ी कर रखी हैं।

गरीब, वही मुहम्मद वही महादेव, वही आदम वही ब्रह्मा।
गरीबदास दूसरा कोई नहीं, देख आपने घरमा।।

अर्थात् संत गरीबदास जी ने कहा है कि हजरत मुहम्मद जी शिव लोक से आई आत्मा थे। इसलिए मुसलमान धर्म का प्रवर्तक भी परमात्मा शिव की खास आत्मा है। बाबा आदम के विषय में कहा जाता है कि ये ब्रह्मा जी के लोक से नीचे आए थे। इसलिए ब्रह्मा जी व आदम जी का मूल निवास स्थान एक ही है। यदि मेरी बात पर विश्वास नहीं होता है तो अपने घर यानि शरीर रूपी महल में मेरी बताई साधना करके देखो, आपकी दिव्य दृष्टि

खुल जाएगी। फिर आपको विश्वास हो जाएगा कि विश्व के सर्व मानव एक परम पिता की संतान हैं।

विचार करो :- मुसलमान धर्म की शुरूआत (Starting) हजरत ईशा जी के जन्म से लगभग 450 वर्ष पश्चात् हुई।

आदि शंकराचार्य जी का जन्म ईशा जी से 508 वर्ष पूर्व हुआ जिसने सनातन धर्म (पंथ) को हिन्दू नाम भी दिया। मूर्ति पूजा, देवी-देवताओं की पूजा पर आधारित किया। सनातन धर्म सत्ययुग से चला आ रहा है। इसलिए हजरत ईशा जी, हजरत मूसा जी, हजरत आदम जी तथा हजरत मुहम्मद जी के जीव पहले सनातनी थे। इसलिए विश्व के सब प्राणी एक परमात्मा के बच्चे हैं। एक परमेश्वर के अंश हैं।

मेरा (रामपाल दास का) विचार यह है कि :-

जीव हमारी जाति है, मानव धर्म हमारा।
हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई, धर्म नहीं कोई न्यारा।।

अध्यात्म ज्ञान-विज्ञान से सिद्ध करता हूँ कि विश्व के प्राणी एक परमात्मा के बच्चे हैं जो उस अपने पिता के पास जाने के लिए इच्छुक हैं। उसी के पास जाने के लिए भिन्न-भिन्न भक्ति के उपाय कर रहे हैं। अब संत गरीबदास जी की वाणी के आधार से विश्व के मानव की एकता को जानते हैं।

संत गरीबदास जी की उपरोक्त वाणी का भावार्थ है कि विश्व के सब मानव (स्त्री-पुरूष) के शरीर की संरचना एक समान है। प्रत्येक मानव (स्त्री-पुरूष) के शरीर में कमल दल यानि कमल चक्र बने हैं। मानव शरीर में ही मोक्ष प्राप्त किया जा सकता है। मोक्ष प्राप्ति यानि उस लोक में जाने का एक ही मार्ग है, जिसमें परमात्मा (परम अक्षर ब्रह्म) निवास करता है। वह स्थान वह परमपद है जिसके विषय में गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में वर्णन है। कहा है कि :- तत्त्वज्ञान प्राप्त होने के पश्चात् ‘‘परमेश्वर के उस परमपद की खोज करनी चाहिए, जहाँ जाने के पश्चात् साधक फिर लौटकर संसार में कभी नहीं आते। जिस परमेश्वर से संसार रूप वृक्ष की प्रवृति विस्तार को प्राप्त हुई है यानि जिसने सृष्टि की उत्पत्ति की है। जो सबका धारण-पोषण करने वाला है, उसकी भक्ति करो।

प्रमाण के लिए पेश है फोटोकॉपी गीता अध्याय 15 श्लोक 4 की जिसके अनुवादक श्री जयदयाल गोयंदका जी हैं। प्रकाशक व मुद्रक, गीता प्रेस गोरखपुर है :-

ततः, पदम्, तत्, परिमार्गितव्यम्, यस्मिन्, गताः, न, निवर्तन्ति, भूयः, तम्, एव, च, आद्यम्, पुरुषम्, प्रपद्ये, यतः, प्रवृत्तिः, प्रसृता, पुराणी ॥ ४ ॥

ततः	= उसके पश्चात्	पुराणी	= पुरातन
तत्	= उस	प्रवृत्तिः	= संसारवृक्षकी प्रवृत्ति
पदम्	= परमपदरूप परमेश्वरको	प्रसृता	= विस्तारको प्राप्त हुई है,
परिमार्गितव्यम्	= भलीभाँति खोजना चाहिये,	तम्, एव	= उसी
यस्मिन्	= जिसमें	आद्यम्, पुरुषम्	= आदि-पुरुष नारायणके
गताः	= गये हुए पुरुष	प्रपद्ये	= मैं शरण हूँ—(इस प्रकार दृढ़ निश्चय करके उस परमेश्वरका मनन और निदिध्यासन करना चाहिये।)
भूयः	= फिर		
न, निवर्तन्ति	= लौटकर संसारमें नहीं आते		
च	= और		
यतः	= जिस परमेश्वरसे (इस)		

"शरीर में बने कमलों की जानकारी"

परम अक्षर ब्रह्म यानि सबके मालिक के परम धाम (स्थान) में जाने का एक मार्ग है जो मानव शरीर में बने कमल चक्रों से होकर गुजरता है, अन्य कोई मार्ग नहीं है। ये कमल चक्र मानव शरीर में रीढ़ की हड्डी के साथ-साथ अंदर की ओर स्थान-स्थान पर बने हैं जिनकी स्थिति समझने के लिए कृपया मानव चित्र को देखो।

शरीर (पिण्ड) में बने कमलों (चक्रों) के चित्र
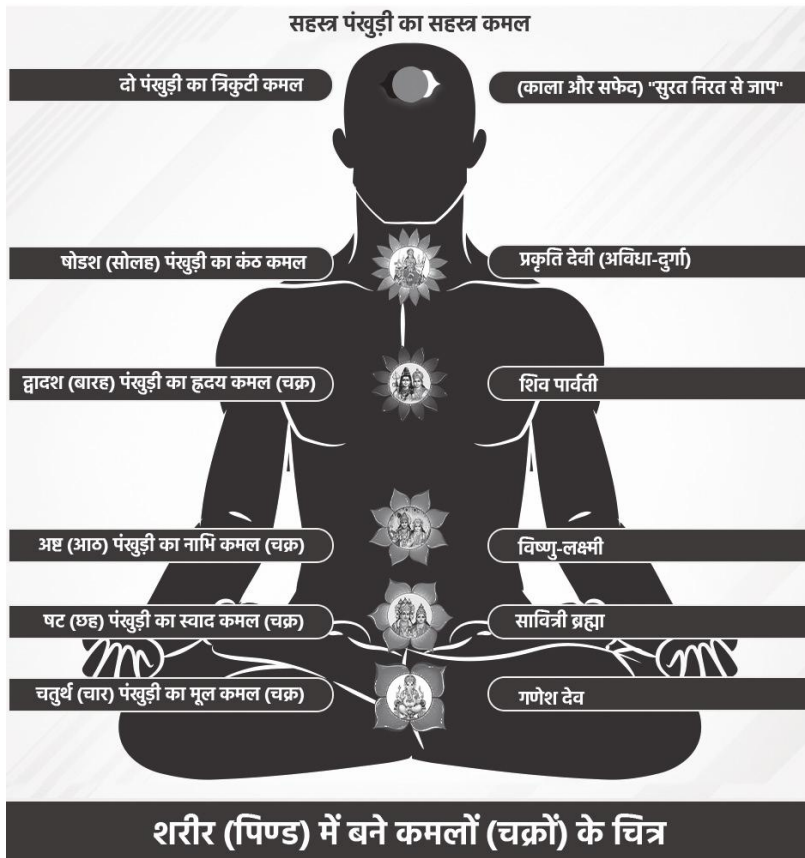
आप देख रहे हैं यह चित्र। इसमें प्रत्येक कमल की स्थिति स्पष्ट की है। प्रत्येक कमल में प्रवेश द्वार है जो बंद रहता है।

इस प्रकार की स्थिति प्रत्येक मानव (स्त्री-पुरूष) के शरीर में है। सब कमल (चक्र) बंकनाल एक टेढ़ी-मेढ़ी नाड़ी से जुड़े हैं। वह पाईप यानि नलकी की तरह है जिसको बंकनाल कहा जाता है। उसमें कमलों के द्वारों से अन्य कोई प्रवेश द्वार नहीं है। जीवात्मा हृदय कमल में रहता है। जो सत्य भक्ति करता है, वह परायण काल में यानि संसार से जाने के समय हृदय कमल से मूल कमल में आता है। वहाँ से ऊपर को चलता है। उसकी सारे जीवन की भक्ति की शक्ति से सब कमल चक्र खुले होते हैं। वह निर्बाध अपने ईष्ट धाम में चला जाता है।

विशेष :- जैसे टी.वी. (Television) में चैनल बने होते हैं। जो कार्यक्रम टी.वी पर देखा जाता है, वह वास्तव में कहीं अन्य स्थान पर हो रहा होता है। वह चैनल पर दिखाई देता है। इसी प्रकार निम्न देव व परमात्मा अपने-अपने लोकों में होते हुए T.V. चैनल की तरह कमलों में दिखाई देते हैं।

जैसे सूर्य प्रकाश ऊर्जा यंत्र (Solar System) पर सूर्य का प्रकाश पड़ने

से उसमें ऊर्जा संचित होने लगती है। इसी प्रकार मंत्रों के जाप से कमल खुल जाते हैं। उससे पहले मुरझाए रहते हैं। कमल खुलने के बाद प्रत्येक देवता की शक्ति साधक के अंतःकरण यानि आत्मा पर प्रभाव डालने लगती हैं जिससे भक्ति संचित होने लगती है।

संत गरीबदास जी ने सूक्ष्मवेद में बताया है। उसमें कहा है कि :-

तीनों देवता कमल दल बसैं, ब्रह्मा, विष्णु, महेश।
प्रथम इनकी बन्दना, सुन सतगुरू उपदेश।।

अर्थात् श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी तीनों देवता हमारे शरीर में बने कमल दलों (कमल चक्रों) में (बसैं) निवास करते हैं। इसलिए सर्वप्रथम साधना स्तुति इनकी करनी होती है। इनसे ऊपर की साधना तत्त्वदर्शी संत यानि सतगुरू से सुनो।

अब सुनो सतगुरू के द्वारा बताई नीचे व ऊपर की साधना का ज्ञान :-

1. मूल कमल (चक्र) में देवता श्री गणेश जी का निवास है :- इसकी चार पंखुड़ियाँ हैं। इसके प्रवेश द्वार को खोलने का एक मंत्र है जो श्री गणेश जी की साधना करने का मूल मंत्र है। जिससे श्री गणेश जी तुरंत फल देने लगता है। जीव आत्मा के लिए प्रवेश द्वार खोल देता है। फिर आत्मा स्वाधिष्ठान चक्र (स्वाद चक्र) की ओर चलती है क्योंकि जीवात्मा को उस लोक में जाना है जिसमें परमात्मा रहता है। जहाँ जाने के पश्चात् साधक लौटकर संसार में नहीं आता।

2. स्वाद कमल (चक्र) (इसको स्वाधिष्ठान कमल चक्र भी कहा जाता है।):- इस कमल की छः पंखुड़ियाँ हैं। श्री ब्रह्मा जी तथा उनकी पत्नी सावित्री जी का निवास है। इसके द्वार को खोलने का मंत्र है जिसकी साधना यानि जाप करने से यह द्वार ब्रह्मा जी खोल देते हैं। जीवात्मा फिर ऊपर को नाभि कमल की ओर चलती है।

3. नाभि कमल (चक्र) :- इसकी आठ पंखुड़ियाँ हैं। इसमें श्री विष्णु जी तथा इनकी पत्नी श्री लक्ष्मी जी का निवास है। इसका द्वार भी बंद रहता है। इसे खोलने का भी एक मंत्र है। जिसका जाप करना होता है जो इन देव-देवी को शीघ्र प्रभावित यानि प्रसन्न कर देता है। ये भी जीवात्मा के लिए द्वार खोल देते हैं। फिर जीवात्मा हृदय कमल की ओर ऊपर को चलती है।

4. हृदय कमल (चक्र) :- इसकी बारह पंखुड़ियाँ हैं। इसमें श्री शिव जी तथा इनकी पत्नी श्री पार्बती जी का निवास है। इसका द्वार भी बंद रहता है। इस द्वार को खोलने का एक मंत्र का जाप करना पड़ता है। यह मंत्र इन देव व देवी को विशेष आकर्षित करता है। ये प्रसन्न होकर मार्ग दे देते हैं। फिर आत्मा ऊपर को कंठ कमल की ओर चलती है।

5. कंठ कमल (चक्र) :- इसकी सोलह पंखुड़ियाँ हैं। इसमें श्री देवी दुर्गा

जी (अष्टांगी) का निवास स्थान है। इसका भी द्वार बंद रहता है। इसको खोलने का भी एक मंत्र है जिसका जाप करना होता है। जिसके वश होकर (आकर्षित होकर) यानि प्रसन्न होकर श्री देवी जी जीवात्मा के लिए द्वार खोल देती है। फिर जीवात्मा ऊपर को आगे को त्रिकुटी कमल की ओर चलती है।

6. त्रिकुटी कमल (चक्र) :- इसकी दो पंखुड़ियाँ हैं। एक का रंग काला है, दूसरी का सफेद है। सफेद में परम अक्षर ब्रह्म संत रूप में विराजमान हैं। सतगुरू उपाधि है। काले रंग वाली में काल ब्रह्म भी संत रूप में विराजमान है। वह भी परम अक्षर ब्रह्म जैसा रूप धारण करता है ताकि जीवों को भ्रमित करके अपने जाल में रख सके। इस स्थान पर पहुँचने के पश्चात् जीवात्मा समझो ऐसी स्थिति में पहुँच जाती है जैसे कोई विदेश गया हो। स्वदेश लौटने के लिए एयरपोर्ट (हवाई अड्डे) पर पहुँच जाता है। वहाँ से जहाँ-जहाँ जाना होता है, उसको उसी वायु यान में बैठा दिया जाता है। यहाँ से सीधा जीवात्मा को धर्मराय (न्यायधीश) की दरगाह (न्यायालय) में ले जाया जाता है। वहाँ सबका धर्म कर्मों व पाप कर्मों का हिसाब (लेखा) होता है। इसके बाद जैसे कोई श्री विष्णु जी का भक्त है, उसको विष्णु जी के लोक में भेजा जाता है। जो श्री शिव जी का उपासक है, उसे शिव जी के लोक में भेजा जाता है। जो अन्य देवता का पुजारी है, उसे उसके पास भेजा जाता है। जो माता श्री देवी दुर्गा जी का साधक/साधिका है, उसे श्री देवी जी के लोक में भेजा जाता है। अन्य जो पापी हैं, उनको नरक या अन्य प्राणियों के शरीरों में भी कर्मानुसार भेज दिया जाता है।

7. सहंस्र कमल (चक्र) :- इस कमल की एक हजार पंखुडियाँ हैं। इसमें काल ब्रह्म (ज्योति निरंजन) का निवास है। यह कमल ब्रह्मलोक का चैनल है। ब्रह्मलोक में जाने का प्रवेश द्वार ब्रह्मरंद्र कहलाता है। यह भी बंद रहता है। इसको खोलने का दो अक्षर का मंत्र है, उसका जाप करना होता है।

विशेष :- सम्पूर्ण अध्यात्म ज्ञान न होने के कारण साधक ओम् नाम का जाप विधि से नहीं करता। इस कारण से उसे देव लोक प्राप्त होता है। जैसे ओम् नमः शिवाय, ओम् भगवते वासुदेवाय नमः आदि-आदि जाप करते हैं। अकेला ओम् नाम से भी ब्रह्मरंद्र नहीं खुलता। यह सत्यनाम से खुलता है। सतनाम दो अक्षर का है। ब्रह्मरंद्र न खुलने के कारण उसको विष्णु लोक में या शिव लोक में भेजा जाता है क्योंकि ओम् नाम का जाप करने वाले इसका तड़का अपने ईष्ट देव के मंत्र के साथ अवश्य लगाते हैं, जैसे ऊपर दो मंत्र लिखे हैं। फिर पृथ्वी पर राजा बनाया जाता है। फिर पशु योनि में जाता है।

इससे आगे दो कमल और हैं :- 8. अष्टदल कमल, 9. संख कमल दल। इनका विवरण नहीं लिखूँगा। यह रहस्य उपदेशी को समझाया जाता है। उपरोक्त सब कमल चक्रों को खोलने के जो मंत्र हैं, वे केवल दास

(लेखक-रामपाल दास) के पास हैं। मोक्ष के इच्छुक प्रत्येक मानव को इन कमलों को खोलकर ही मोक्ष प्राप्त होता है।

कमल चक्रों को दो विधि से खोला जाता है :-

1. ध्यान समाधि का अभ्यास करके हठ योग मार्ग से :- यह विधि अति कठिन है। आम आदमी इस विधि को नहीं कर सकता। एक जीवन में एक या दो कमल चक्र खुल पाते हैं। इनके विषय में पूरी जानकारी नहीं होने से साधक उसी एक कमल चक्र में आसक्त होकर वहाँ का नजारे देखने लग जाता है। कुछ सिद्धियाँ प्राप्त हो जाती हैं, उन्हीं से प्रसिद्धि प्राप्त करके जीवन नष्ट कर जाता है।

2. नाम जाप से :- नामों का जाप करके सब कमल खोले जाते हैं, यह विधि सरल व शास्त्रोक्त होने से कारगर है। इस विधि को आम आदमी आसानी से कर सकता है। यह कार्य करते-करते भी की जा सकती है जो सूक्ष्मवेद में बताया है। गरीबदास जी ने कहा है :-

नाम उठत नाम बैठत, नाम सोवत जाग रे। नाम खाते नाम पीते, नाम सेती लाग रे।।

अर्थात् नाम का जाप कार्य करते-करते किया जा सकता है।

यजुर्वेद अध्याय 40 मंत्र 15 में कहा है कि :- ''ओम् क्रतो स्मर, क्लिबे स्मर, कृतुम् स्मर।'' **अर्थात् ओम् नाम का जाप कार्य करते-करते कर, विशेष लगन तड़फ के साथ तथा मानव जीवन का मुख्य कर्तव्य मानकर जाप कर।**

गीता अध्याय 8 श्लोक 5 व 7 में कहा है कि हे अर्जुन! तू युद्ध भी कर, मेरा स्मरण भी कर।

विचार करो :- युद्ध से कठिन कार्य कोई नहीं होता। भक्ति उस दौरान भी की जानी चाहिए अर्थात् साधना नाम जाप वाली कारगर है। नाम का जाप तीन वर्ष के बच्चे से लेकर वृद्ध तक आसानी से कर सकता है। कार्य करते-करते भी कर सकता है। चलते-फिरते भी कर सकता है। लेटा-लेटा व बैठकर भी नामों का जाप कर सकता है।

विशेष :- दूसरे शब्दों में मंत्र के जाप का ऐसे प्रभाव देवी-देवताओं पर होता है जैसे सर्प ने डसने के लिए फन फैला रखा होता है। सर्प वश करने की विद्या जानने वाला यानि गारडू मंत्र बोलकर सर्प को विवश कर देता है। जिसके प्रभाव से सर्प अपना फन इकट्ठा करके रास्ता छोड़कर चल देता है। इसको परमेश्वर कबीर जी ने बहुत अच्छे तरीके से समझाया है।

कबीर, जैसे फनपति (सर्प) मंत्र सुन, राखै फन सकोड़।
ऐसा बीरा मेरे मंत्र नाम से, काल ब्रह्म लेवे मुंह मोड़।।

अर्थात् कबीर परमेश्वर जी ने कहा है कि जैसे सर्प ने डसने के लिए फन उठा रखा होता है तो गारडू मंत्र जाप कर देता है जिससे प्रभावित होकर

सर्प फन इकट्ठा करके चला जाता है। ऐसे ही मेरे द्वारा दिए नाम मंत्र के जाप से काल ब्रह्म मुरझा जाता है। मार्ग नहीं रोक पाता। इसी प्रकार कमलों के मंत्र के जाप से ये सब देवी-देव मार्ग छोड़ देते हैं।

अन्य उदाहरण :- जैसे गाँव के व्यक्ति भैंस को गर्भ धारण करवाने के लिए भैंसे की खोज में जाते हैं क्योंकि भैंसा कहीं घास चर रहा होता है। भैंस वाला भैंसे को बुलाने के लिए उसका मूल मंत्र बोलता है जिससे भैंसा इतना प्रभावित होता है कि वह पूरी गति से उस मंत्र को बोलने वाले की ओर खींचा चला आता है। फिर उसे भैंस दिखाई देती है। भैंस को गर्भ धारण करता है। उसका वह मंत्र है कुर्र-कुर्र। यदि भैंसा-भैंसा बोलो तो भैंसा (झोटा) बिल्कुल टस से मस नहीं होता। इसी प्रकार विष्णु-विष्णु आदि नाम से श्री विष्णु देवता टस से मस नहीं होता। परंतु जो मंत्र दास बताता है, उससे खींचा चला आता है, पूर्ण लाभ देता है। इस प्रकार अन्य देवों की स्थिति जानो। अध्यात्म मार्ग के कुछ नियम हैं, जिनका पालन करना अनिवार्य है।

1. पूर्ण गुरू से दीक्षा ली जाए।

बिना गुरू के किया गया नाम जाप व दिया गया दान निष्फल होता है।

कबीर, गुरू बिन माला फेरते, गुरू बिन देते दान।
गुरू बिन दोनों निष्फल हैं, पूछो वेद पुराण।।

अर्थात् कबीर जी ने कहा है कि गुरू बिन नाम स्मरण करना व दान देना व्यर्थ है। अपने वेदों व पुराणों में पढ़ लो।

''कमलों के मंत्रों का जाप करना जीवात्मा के कल्याण की सच्ची साधना'' है। इसमें न कोई धर्म नया बनता है, न कोई धर्म छोड़ना है। किसी भी धर्म का मानव (स्त्री-पुरूष) इस साधना को कर सकता है। वर्तमान में अधिकतर हिन्दू समाज का कहना है कि रामपाल दास हिन्दू धर्म का विरोधी है। श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी की भक्ति छोड़ने को कहता है। इस विषय में आप स्वयं विचार करें कि क्या श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी की साधना छुड़वाई है या शास्त्रोक्त भक्ति बताई है?

''सभी धर्मों के मानवों को कर्म फल तीनों देवता ही देते हैं।''

प्रश्न :- शंका होती है कि शरीर में जो कमल (चक्र) व देवता ब्रह्मा, विष्णु आदि बताए हैं। इनको न ईसाई, न यहूदी, न मुसलमान, न सिख आदि जानते तक नहीं, मानना (पूजना) तो दूर की कौड़ी है।

उत्तर :- किसी के न मानने व न जानने से इन देवताओं का अस्तित्व समाप्त नहीं हो जाता। यह अध्यात्म ज्ञान की कमी है। सम्पूर्ण अध्यात्म ज्ञान जो सूक्ष्म वेद में है, उसका ज्ञान वर्तमान में मेरे (लेखक के) अतिरिक्त विश्व में किसी को ज्ञान नहीं है। प्रत्येक धर्म के व्यक्तियों को अपने ही शास्त्रों

का ज्ञान भी पूर्ण नहीं है। इसी कारण से मन में आता है कि यह नहीं हो सकता, वह नहीं हो सकता। आपको शास्त्रों से प्रमाणित करता हूँ।

प्रमाण के लिए :- जैसे मुसलमान धर्म की पाक पुस्तक ''कुरान मजीद'' है। ईसाई धर्म की Holy Book ''इंजिल'' है जो ईशा जी को दी गई थी। यहूदी धर्म की पाक पुस्तक ''तौरेत'' है जो मूसा जी को मिली। हजरत दाऊद जी को ''जबूर'' पाक पुस्तक मिली। इन चारों पुस्तकों का ज्ञानदाता एक ही है। जिसको ये चारों धर्मों यानि पंथों वाले अपना खुदा (GOD) मानते हैं। इसलिए इनको यह भी मान्य होना चाहिए कि इन चारों पवित्र पुस्तकों में जो ज्ञान है, वह सत्य है। यदि कोई कहे कि हम बाईबल को नहीं मानते, केवल कुर्आन को मानते हैं तो वे अपने खुदा का अपमान कर रहे हैं। जो ज्ञान पाक कुर्आन में नहीं है, वह बाईबल में बता रखा है। इसलिए दोबारा बताना अल्लाह ने उचित नहीं समझा। इसलिए बाईबल के ज्ञान को भी समान-सम्मान देना चाहिए।

विशेष :- पहले यह स्पष्ट करना उचित समझता हूँ कि पवित्र पुस्तक बाईबल कोई अलग शास्त्र नहीं है। इसमें पाक जबूर, पाक तौरेत, पाक इंजिल को इकठ्ठा जिल्द (Bind) किया है।

एक मुसलमान वक्ता अपनी वीडियो में कह रहा था कि मैं बाईबल को नहीं मानता, ''इंजिल'' को मानता हूँ। उस श्रीमान् को यही नहीं पता बाईबल में इंजिल पुस्तक भी है।

अब बाईबल ग्रन्थ से कुछ प्रमाण दिखाता हूँ कि विश्व के सर्व मानव व अन्य प्राणियों के व्यवस्थक ये ही तीनों देवता (ब्रह्मा जी, विष्णु जी तथा शिव जी) हैं। :-

बाईबल ग्रन्थ में सृष्टि की उत्पत्ति अध्याय में लिखा है कि परमेश्वर ने छः दिन में सृष्टि की उत्पत्ति की। छठे दिन आदमी बनाए। सर्व प्रथम आदम जी को मिट्टी से बनाया, उसमें जान डाल दी। परमेश्वर जी ने मानव (स्त्री-पुरूष) को अपने जैसे शरीर वाला अपनी ही शक्ल जैसा बनाया। आदम की हड्डी निकालकर उसकी पत्नी हव्वा बनाई। परमेश्वर ने सातवें दिन विश्राम किया, ऊपर तख्त पर जा बैठा। {उसके पश्चात् श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी का कार्य प्रारंभ हो गया।} श्री ब्रह्मा जी ने बाबा आदम जी तथा उनकी पत्नी हव्वा जी को स्वर्ग में एक वाटिका में छोड़ दिया। उनको बताया कि आप बीच में लगे वृक्षों के फल नहीं खाना। यदि खाए तो तुम मर जाओगे। वे दोनों वाटिका में रहने लगे। जिन वृक्षों के फल खाने को प्रभु ने मना किया था, उनके फल वे नहीं खाते थे। एक सर्प आया, उसने हव्वा तथा हजरत आदम जी से पूछा कि आप बीच वाले वृक्षों के फल क्यों नहीं खा रहे? आदम व हव्वा ने कहा कि इनको खाने को ईश्वर ने मना किया है। हम इनके फल खाएँगे तो हम मर जाएँगे। सर्प

बोला! इनके फल खाने से तुम बिल्कुल नहीं मरोगे। इन वृक्षों के फल खाने से तुम्हें भले-बुरे का ज्ञान हो जाएगा। ईश्वर नहीं चाहता कि तुम्हें भले-बुरे का ज्ञान हो। सर्प की बात मानकर दोनों ने भले-बुरे का ज्ञान करवाने वाले वृक्षों के फल खा लिए। उनकी आँखें खुल गई। कुछ दिन बाद ईश्वर आया। उसके पैरों की आवाज सुनकर हव्वा व आदम छुप गए। उनको पता चल गया था कि नंगा रहना अच्छा नहीं होता। ईश्वर ने आवाज लगाई कि तुम कहाँ हो? आदम तथा हव्वा ने उत्तर दिया कि हम नंगे हैं। आपकी आवाज सुनकर हम छुप गए हैं। ईश्वर ने पूछा कि क्या तुमने बीच वाले वृक्षों का फल खा लिया? उत्तर मिला कि हाँ! हमने बीच वाले वृक्षों के फल खा लिए। आदम ने कहा कि आपने जो मेरे साथ स्त्री छोड़ी है, इसको सर्प ने बहका दिया। हमने फल खा लिया। ईश्वर ने आदम व हव्वा के पहनने के लिए वस्त्र बनवाए। ईश्वर ने कहा कि मानव को भले-बुरे का ज्ञान हो गया है। कहीं ये अमर होने वाले वृक्षों के फल खा ले और हम में से एक के समान हो जाए। इसलिए आदम जी व हव्वा जी को स्वर्ग से निकाल दिया।

➢ इस बाईबल के लेख से सिद्ध हो गया कि देवता एक से अधिक हैं। सब धर्मों के व्यक्तियों को कर्मों का फल ये तीनों देवता देते हैं।

अन्य प्रमाण :- पवित्र बाईबल के उत्पत्ति ग्रंथ 17-18 (Genesis 17-18) पृष्ठ 24 पर लिखा है कि अब्राहिम नामक व्यक्ति के घर तीन प्रभु आए। उस समय वह अपने घर से बाहर खेत में वृक्षों की छाया में बैठा था। दोपहर का समय था। अब्राहिम ने जमीन पर लेटकर उनको प्रणाम किया। भोजन करवाया। वे पापियों का नाश करने गए थे। वहाँ से दो तो वापिस लौट गए, एक उस नगरी में गया जहाँ के व्यक्ति व्याभिचारी, अन्यायी, बेहया, धर्म-कर्म रहित हो चुके थे। उस नगरी को नष्ट कर दिया।

इन प्रमाणों से स्पष्ट है कि यही तीनों देवता सर्व मानव को कर्मानुसार फल देते हैं। नगरी नष्ट करने का कार्य तमगुण शंकर जी का है। इसलिए वे अकेले गए और उन पापियों का नाश किया। दो (श्री ब्रह्मा जी तथा श्री विष्णु जी) वापिस चले गए थे।

विशेष :- चारों पवित्र पुस्तकों (पाक कुरान, पवित्र बाईबल यानि पवित्र जबूर, पवित्र इंजिल, पवित्र तौरेत) का ज्ञान जिस प्रभु ने दिया, उसी ने पवित्र चारों वेदों (पवित्र ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद) का ज्ञान श्री ब्रह्मा जी को दिया, फिर स्वयंभू मनु जी को मिला। वेदों में चक्रों (कमलों) का ज्ञान है, परंतु अधूरा है। सूक्ष्मवेद में सम्पूर्ण अध्यात्म ज्ञान है। उसी से कमल चक्रों का सम्पूर्ण ज्ञान पहले लिख दिया है। पवित्र वेदों का ज्ञान इन चारों पाक पुस्तकों (तौरेत, जबूर, इंजिल तथा कुरआन) से पहले का है। इसलिए प्रभु ने इन पुस्तकों में दोबारा बताना उचित न समझा। सूक्ष्मवेद पांचवाँ वेद है।

उसमें सम्पूर्ण अध्यात्म ज्ञान है। उसमें कमलों का वर्णन विस्तार से कहा है। वह सम्पूर्ण ज्ञान न वेदों में, न गीता में, न पुराणों में, न कुरान में, न बाईबल में है।

{क्योंकि गीता ज्ञान देने वाले ने गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में कहा है कि तत्त्वज्ञान जो गीता में नहीं है, उसको तत्त्वदर्शी संतों के पास जाकर प्राप्त कर। (यदि गीता में तत्त्वज्ञान होता तो बता देता कि तत्त्वज्ञान उस अध्याय में है।) इसी प्रकार कुरआन मजीद में सूरत-फूर्कानि-25 आयत 52-59 में कहा है कि जिस परमात्मा ने छः दिन में सृष्टि रची, सातवें दिन तख्त पर जा विराजा। उसकी खबर किसी बाखबर यानि तत्त्वदर्शी संत से पूछो।} इस प्रकरण से स्पष्ट हो जाता है कि विश्व के मानव को कर्म फल देने वाले श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी हैं व अन्य देवता भी हैं। प्रत्येक मानव के शरीर के कमलों में जो-जो देवी-देवता व प्रभु बताए हैं, इनकी साधना करके ही मानव अपना कल्याण करवाएँ।

मैं (रामपाल दास) व मेरे अनुयाई इन देवताओं की साधना नित्य करते हैं। हम देवताओं की पूजा नहीं करते, साधना करते हैं। इसके साथ-साथ एक ''असुर निकंदन रमैणी'' आरती है जो दिन के 12 बजे से रात्रि 12 बजे तक कभी-भी करने का विधान है। हम प्रतिदिन करते हैं। फिर भी कोई कहता है कि रामपाल देवी-देवताओं को नहीं मानता, न अपने अनुयाईयों को इनकी साधना करने देता। उसने ठीक से हमारे ज्ञान व भक्ति व साधना को समझा नहीं है। हम जीव तो इन देवताओं की शक्ति की तुलना में कीड़े-मकोड़े के समान हैं, परंतु हम सत्य भक्ति व साधना करते हैं। हमारा मोक्ष निश्चित है। जो दास के द्वारा बताई शास्त्र प्रमाणित साधना व पूजा करेगा, उसका भी पूर्ण मोक्ष हो जाएगा। वह भी गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में कहे सनातन परम धाम यानि सत्यलोक में चला जाएगा। उसको परमशांति प्राप्त होगी। उसका तीन ताप का कष्ट भी समाप्त हो जाएगा जो जीव के दुःखों का मूल है।

{नोट :- पूजा व साधना में क्या अंतर है, कृपया आप जी पढ़ें इसी पुस्तक के पृष्ठ 179 पर। यहाँ केवल दो शब्द हैं यानि संक्षिप्त वर्णन है।}

जो प्रार्थना हम करते हैं, उसका कुछ अंश यहाँ लिखता हूँ :-

''मैं (लेखक) देवी-देवताओं का सम्मान करता हूँ।''

मैं तथा मेरे अनुयाई प्रतिदिन विश्व के सभी देवी तथा देवताओं का सम्मान व उनकी स्तुति करते हैं।

प्रमाण के लिए दोपहर की स्तुति के कुछ अंश :-

सत पुरुष समर्थ ॐकारा। अदली पुरुष कबीर हमारा।1।
आदि युगादि दया के सागर। काल कर्म के मोचन आगर।2।
दुःख भंजन दरवेश दयाला। असुर निकंदन करै पैमाला।3।

आब खाक पावक और पौना। गगन सुन्न दरियाई दौंना।4।
धर्मराय दरबानी चेरा। सुर असुरौं का करै नबेरा।5।
सत का राज धर्मराय करहीं। अपना किया सबही डंड भरहीं।6।
शंकर शेष रु ब्रह्मा बिष्णुं। नारद शारद जा उर रसनं।7।
गौरिज और गणेश गौसांईं। कारज सकल सिद्ध होय जाहीं।8।
ब्रह्मा विष्णु रु शंभु शेषा। तीन्यू देव दयालु हमेशा।9।
सावित्री और लक्ष्मी गौरा। तिहूँ देवा सिर कर हैं चौंवरा।10।
नील नाभ से ब्रह्मा आये। आदि ॐ के पुत्र कहाये।16।
शंभू मनू ब्रह्मा की शाखा। ऋग युज साम अथर्व भाषा।17।
पीबरत भया उतानं पाता। जाके ध्रू हैं आत्म ज्ञाता।18।
सनक, सनंदन, सनातन, संत कुमारा। च्यार पुत्र अनुरागी धारा।19।
तेतीस कोटि कला बिसतारी। सहंस अठासी मुनिजन धारी।20।
कश्यप पुत्र सूरज सुर ज्ञानी। तीन लोक में किरण समानी।21।
साठ हजार संगी बाल्यखेलं। बीना रागी अजब बलेलं।22।
तीन कोटि योद्धा संग जाके। सिक बंधी है पूर्ण साके।23।
हाथ खड्ग गले पुष्प की माला। कश्यप सुत है रूप बिशाला।24।
कौस्तभ मणि जड़्या विमान तुम्हारा। सुरनर मुनिजन करत जुहारा।25।
चंद सूर चकवै पृथ्वी मांहीं। निश वासर चरणौं चित्त लाहीं।26।
पीठै सूरज सनमुख चन्दा। काटैं त्रिलोकी के फंधा।27।
तारायन सब स्वर्ग समूलं। पखे रहैं सतगुरु के फूलं।28।
जै जै ब्रह्मा समर्थ स्वामी। येती कला परम पद धामी।29।
जै जै शंभु शंकर नाथा। कला गणेश अरु गौरिज माता।30।
कोटि कटक पैमाल करंता। ऐसे समर्थ शंभु कंता।31।
चंद लिलाट सूर संगीता। योगी शंकर ध्यान उदीता।32।
नील कण्ठ सोहे गरूड़ आसन। शंभु योगी अचल सिंहासन।33।
गंग तरंग छूटैं बहु धारा। अजपा तारी जय–जय कारा।34।
रिद्धि सिद्धि दाता शंभु गोसांई। दारिद्र मोक्ष सबै होय जांहीं।35।
आसन पदम लगाये योगी। निःइच्छा निर्बाणी भोगी।36।
सर्प भुजंग गले रुंड माला। बृषभ चढ़िये दीन दयाला।37।
वामें कर त्रिशूल विराजै। दहनें कर सुदर्शन साजै।38।
सुन अरदास देवन के देवा। शंभु योगी अलख अभेवा।39।
तूं पैमाल करै पल मांही। ऐसे समर्थ शंभु सांई।40।
इक लख योजन ध्वजा फरकैं। पचरंग झंडे मौहरे रखैं।41।
काल भद्र कृत देव बुलाऊँ। शंकर के दल सब हीं ध्याऊँ।42।
भैरव खेत्रपाल पलीतं। भूत अरु दैत्य चढ़े संगीतं।43।

राक्षस भंजन विरद तुम्हारा। ज्यौं लंका पर पदम अठारा।44।
कोट्यौं गंधर्व कमंद चढ़ावैं। शंकर दल गिनती नहीं आवैं।45।
मारैं हाक दहाक चिंघारैं। अग्नि चक्र बांनों तन जारैं।46।
कंप्या शेष धरणि थर्रानी। जा दिन लंका घाली घानी।47।
तुम शंभू ईशन के ईशा। वृषभ चढ़िये बिसवे बीसा।48।
इन्द्र कुबेर और वरुण बुलाऊँ। रापति सेत सिंहासन ल्याऊँ।49।
इन्द्र दल बादल दरियाई। छ्यानवै कोटि की हुई चढ़ाई।50।
सुरपति चढ़े इन्द्र अनुरागी। अनंत पदम गंधर्व बड़ भागी।51।
कृष्ण भंडारी चढ़े कुबेरा। अब दिल्ली मंडल बौहर्यौं फेरा।52।
बरूण विनोद चढ़े ब्रह्मज्ञानी। कला संपूर्ण बारह बाणी।53।
धर्मराय आदि युगादि चेरा। चौदह कोटि कटक दल तेरा।54।
चित्र–गुप्त के कागज मांही। जेता उपज्या सतगुरु सांई।55।
सातौं लोक पाल का रासा। उर में धरिये साधु दासा।56।
विष्णु नाथ है असुर निकंदन। संतों के सब काटै फंधन।57।
नरसिंह रूप धरे घुर्राया। हिरनांकुस कूँ मारन धाया।58।
शंख चक्र गदा पदम बिराजै। भाल तिलक जाकै उर साजै।59।
बांहन गरुड़ कृष्ण असवारा। लक्ष्मी ढोरै चंवर अपारा।60।
रावण अहीरावण से मारे। सेतु बांध सैंना दल त्यारे।61।
जरासिंघ और बालि खपाये। कंस केसी चांनौर हराये।62।
कालीदह में नागी नाथा। शिशुपाल चक्र से काट्या माथा।63।
कालयवन मथुरा पर धाये। अठारह कोटि कटक चढ आये।64।
मुचकंद पर पीतांबर डार्या। कालयवन जहां बेग संहारा।65।
परशुराम बावन अवतारा। कोई न जानैं भेव तुम्हारा।66।
संखासुर मारे निर्बाणी। बाराह रूप धरे प्रवानी।67।
राम औतार रावण की बेरा। हनुमंत हांका सुनी सुमेरा।68।

''गीता ज्ञान दाता से अन्य पूर्ण परमात्मा का प्रमाण''

हमारा इष्ट यानि पूज्य''परम अक्षर ब्रह्म'' है, हम पूजा इसकी करते हैं जो गीता का ज्ञान बताने वाले से अन्य है। पूर्ण परमात्मा है। अविनाशी है, सबका धारण-पोषण करने वाला है तथा सम्मान साधना प्रधान देवताओं का भी करते हैं।

परम अक्षर ब्रह्म के विषय में गीता में इस प्रकार लिखा है :- गीता अध्याय 8 श्लोक 1 में अर्जुन ने गीता ज्ञान बोलने वाले से प्रश्न किया कि, हे भगवन! आपने जिस तत् ब्रह्म के विषय में गीता अध्याय 7 श्लोक 29 में कहा है, वह तत् ब्रह्म क्या है?

गीता ज्ञान बताने वाले ने गीता अध्याय 8 श्लोक 3 में उत्तर दिया है :-

''वह परम अक्षर ब्रह्म'' है। फिर इसी गीता अध्याय 8 के श्लोक 5-7 तक अपनी भक्ति करने को कहा है तथा गीता के इसी अध्याय 8 के श्लोक 8-10 20-22 में अपने से अन्य इसी परम अक्षर ब्रह्म की भक्ति करने को कहा है। इसके विषय में गीता अध्याय 2 श्लोक 17, गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में बताया है। परम अक्षर ब्रह्म को गीता बोलने वाले ने सबका धारण-पोषण करने वाला तथा परमात्मा कहा है। यह भी कहा है कि यही वास्तव में अविनाशी है, पुरूषोत्तम है जिसको मारने में कोई सक्षम नहीं है, जिससे संसार व्याप्त है, जो मेरे से अन्य है। गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में उसी की शरण में जाने को कहा है।

पेश है प्रमाण के लिए गीता अध्याय 7 श्लोक 29, गीता अध्याय 8 श्लोक 1, 3, 5-10, 20-22 तथा गीता अध्याय 15 श्लोक 17, गीता अध्याय 2 श्लोक 17 की फोटोकॉपी।

{जिसके अनुवादक जयदयाल गोयंदका हैं तथा प्रकाशक व मुद्रक गीता प्रेस गोरखपुर (उत्तर प्रदेश) है।}

(गीता अध्याय 7 श्लोक 29 की फोटोकॉपी)

जरामरणमोक्षाय, माम्, आश्रित्य, यतन्ति, ये,
ते, ब्रह्म, तत्, विदुः, कृत्स्नम्, अध्यात्मम्, कर्म, च, अखिलम्॥ २९॥

और—

ये	= जो	**ब्रह्म**	= ब्रह्मको,
माम्	= मेरे	**कृत्स्नम्**	= सम्पूर्ण
आश्रित्य	= शरण होकर		
जरामरणमोक्षाय	= { जरा और मरणसे छूटनेके लिये	**अध्यात्मम्**	= अध्यात्मको
		च	= तथा
यतन्ति	= यत्न करते हैं,	**अखिलम्**	= सम्पूर्ण
ते	= वे (पुरुष)	**कर्म**	= कर्मको
तत्	= उस	**विदुः**	= जानते हैं।

(गीता अध्याय 8 श्लोक 1 की फोटोकॉपी)

किम्, तत्, ब्रह्म, किम्, अध्यात्मम्, किम्, कर्म, पुरुषोत्तम,
अधिभूतम्, च, किम्, प्रोक्तम्, अधिदैवम्, किम्, उच्यते॥ १॥

इस प्रकार भगवान्‌के वचनोंको न समझकर अर्जुन बोले—

पुरुषोत्तम	= हे पुरुषोत्तम!	**अधिभूतम्**	= अधिभूत (नामसे)
तत्	= वह		
ब्रह्म	= ब्रह्म	**किम्**	= क्या
किम्	= क्या है?	**प्रोक्तम्**	= कहा गया है
अध्यात्मम्	= अध्यात्म	**च**	= और
किम्	= क्या है?	**अधिदैवम्**	= अधिदैव
कर्म	= कर्म	**किम्**	= किसको
किम्	= क्या है?	**उच्यते**	= कहते हैं?

(गीता अध्याय 8 श्लोक 3 की फोटोकॉपी)

अक्षरम्, ब्रह्म, परमम्, स्वभावः, अध्यात्मम्, उच्यते,
भूतभावोद्भवकरः, विसर्गः, कर्मसञ्ज्ञितः ॥ ३ ॥

इस प्रकार अर्जुनके प्रश्न करनेपर श्रीभगवान् बोले, अर्जुन!—

परमम्	= परम	**उच्यते**	= कहा जाता है (तथा)
अक्षरम्	= अक्षर	**भूतभावोद्भवकरः**	= भूतोंके भावको उत्पन्न करनेवाला (जो)
ब्रह्म	= 'ब्रह्म' है,	**विसर्गः**	= त्याग है, (वह)
स्वभावः	= अपना स्वरूप अर्थात् जीवात्मा	**कर्मसञ्ज्ञितः**	= 'कर्म' नामसे कहा गया है।
अध्यात्मम्	= 'अध्यात्म' (नामसे)		

(गीता अध्याय 8 श्लोक 5 की फोटोकॉपी)

अन्तकाले, च, माम्, एव, स्मरन्, मुक्त्वा, कलेवरम्,
यः, प्रयाति, सः, मद्भावम्, याति, न, अस्ति, अत्र, संशयः ॥ ५ ॥

और

यः	= जो पुरुष	**सः**	= वह
अन्तकाले, च	= अन्तकालमें भी	**मद्भावम्**	= मेरे साक्षात् स्वरूपको
माम्	= मुझको	**याति**	= प्राप्त होता है—
एव	= ही	**अत्र**	= इसमें (कुछ भी)
स्मरन्	= स्मरण करता हुआ	**संशयः**	= संशय
कलेवरम्	= शरीरको	**न**	= नहीं
मुक्त्वा	= त्यागकर	**अस्ति**	= है।
प्रयाति	= जाता है,		

(गीता अध्याय 8 श्लोक 6 की फोटोकॉपी)

यम्, यम्, वा, अपि, स्मरन्, भावम्, त्यजति, अन्ते, कलेवरम्,
तम्, तम्, एव, एति, कौन्तेय, सदा, तद्भावभावितः ॥ ६ ॥

कारण कि—

कौन्तेय	= हे कुन्तीपुत्र अर्जुन! (यह मनुष्य)	**त्यजति**	= त्याग करता है,
अन्ते	= अन्तकालमें	**तम्, तम्**	= उस-उसको
यम्, यम्	= जिस-जिस	**एव**	= ही
वा, अपि	= भी	**एति**	= प्राप्त होता है; (क्योंकि वह)
भावम्	= भावको	**सदा**	= सदा
स्मरन्	= स्मरण करता हुआ	**तद्भावभावितः**	= उसी भावसे भावित रहा है।
कलेवरम्	= शरीरका		

(गीता अध्याय 8 श्लोक 7 की फोटोकॉपी)

[निरन्तर भगवच्चिन्तन करते हुए युद्ध करनेकी आज्ञा एवं उसका फल]

तस्मात्, सर्वेषु, कालेषु, माम्, अनुस्मर, युध्य, च,
मयि, अर्पितमनोबुद्धिः, माम्, एव, एष्यसि, असंशयम्॥ ७॥

तस्मात् = इसलिये (हे अर्जुन! तू)
सर्वेषु = सब
कालेषु = समयमें (निरन्तर)
माम् = मेरा
अनुस्मर = स्मरण कर
च = और
युध्य = युद्ध भी कर। (इस प्रकार)
मयि = मुझमें
अर्पितमनोबुद्धिः = अर्पण किये हुए मन-बुद्धिसे युक्त होकर (तू)
असंशयम् = निःसन्देह
माम् = मुझको
एव = ही
एष्यसि = प्राप्त होगा।

(गीता अध्याय 8 श्लोक 8 की फोटोकॉपी)

अभ्यासयोगयुक्तेन, चेतसा, नान्यगामिना,
परमम्, पुरुषम्, दिव्यम्, याति, पार्थ, अनुचिन्तयन्॥ ८॥

पार्थ = हे पार्थ! (यह नियम है कि)
अभ्यासयोगयुक्तेन = परमेश्वरके ध्यानके अभ्यासरूप योगसे युक्त
नान्यगामिना = दूसरी ओर न जानेवाले
चेतसा = चित्तसे
अनुचिन्तयन् = निरन्तर चिन्तन करता हुआ (मनुष्य)
परमम् = परम (प्रकाशस्वरूप)
दिव्यम् = दिव्य
पुरुषम् = पुरुषको अर्थात् परमेश्वरको (ही)
याति = प्राप्त होता है।

(गीता अध्याय 8 श्लोक 9 की फोटोकॉपी)

कविम्, पुराणम्, अनुशासितारम्, अणोः, अणीयांसम्,
अनुस्मरेत्, यः, ,सर्वस्य, धातारम्, अचिन्त्यरूपम्, आदित्यवर्णम्, तमसः, परस्तात्॥ ९॥

यः = जो पुरुष
कविम् = सर्वज्ञ,
पुराणम् = अनादि,
अनुशासितारम् = सबके नियन्ता, *
अणोः, अणीयांसम् = सूक्ष्मसे भी अति सूक्ष्म,
सर्वस्य = सबके
धातारम् = धारण-पोषण करनेवाले,
अचिन्त्यरूपम् = अचिन्त्यस्वरूप
आदित्यवर्णम् = सूर्यके सदृश नित्य चेतन प्रकाशरूप (और)
तमसः = अविद्यासे
परस्तात् = अति परे शुद्ध सच्चिदानन्दघन परमेश्वरका
अनुस्मरेत् = स्मरण करता है—

(गीता अध्याय 8 श्लोक 10 की फोटोकॉपी)

प्रयाणकाले, मनसा, अचलेन, भक्त्या, युक्तः, योगबलेन,
च, एव, भ्रुवोः, मध्ये, प्राणम्, आवेश्य, सम्यक्, सः, तम्,
परम्, पुरुषम्, उपैति, दिव्यम्॥ १०॥

सः	= वह	**अचलेन**	= निश्चल
भक्त्या, युक्तः	= भक्तियुक्त पुरुष	**मनसा**	= मनसे
प्रयाणकाले	= अन्तकालमें (भी)	**(स्मरन्)**	= स्मरण करता हुआ
योगबलेन	= योगबलसे	**तम्**	= उस
भ्रुवोः	= भृकुटीके	**दिव्यम्**	= दिव्यरूप
मध्ये	= मध्यमें	**परम्**	= परम
प्राणम्	= प्राणको	**पुरुषम्**	= पुरुष परमात्माको
सम्यक्	= अच्छी प्रकार	**एव**	= ही
आवेश्य	= स्थापित करके	**उपैति**	= प्राप्त होता है—
च	= फिर		

(गीता अध्याय 8 श्लोक 20 की फोटोकॉपी)

परः, तस्मात्, तु, भावः, अन्यः, अव्यक्तः, अव्यक्तात्, सनातनः,
यः, सः, सर्वेषु, भूतेषु, नश्यत्सु, न, विनश्यति॥ २०॥

तु	= परंतु	**सनातनः**	= सनातन
तस्मात्	= उस	**अव्यक्तः**	= अव्यक्त
अव्यक्तात्	= अव्यक्तसे (भी अति)	**भावः**	= भाव है;
		सः	= वह परम दिव्य पुरुष
परः	= परे	**सर्वेषु**	= सब
अन्यः	= दूसरा अर्थात् विलक्षण	**भूतेषु**	= भूतोंके
		नश्यत्सु	= नष्ट होनेपर (भी)
यः	= जो	**न, विनश्यति**	= नष्ट नहीं होता।

(गीता अध्याय 8 श्लोक 21 की फोटोकॉपी)

अव्यक्तः, अक्षरः, इति, उक्तः, तम्, आहुः, परमाम्, गतिम्,
यम्, प्राप्य, न, निवर्तन्ते, तत्, धाम, परमम्, मम॥ २१॥

और जो—

अव्यक्तः	= अव्यक्त	**यम्**	= जिस सनातन अव्यक्तभावको
अक्षरः	= 'अक्षर'		
इति	= इस (नामसे)	**प्राप्य**	= प्राप्त होकर (मनुष्य)
उक्तः	= कहा गया है,	**न, निवर्तन्ते**	= वापस नहीं आते,
तम्	= उसी अक्षर नामक अव्यक्तभावको	**तत्**	= वह
		मम	= मेरा
परमाम्, गतिम्	= परमगति	**परमम्**	= परम
आहुः	= कहते हैं, (तथा)	**धाम**	= धाम है।

(गीता अध्याय 8 श्लोक 22 की फोटोकॉपी)

पुरुषः, सः, परः, पार्थ, भक्त्या, लभ्यः, तु, अनन्यया, यस्य, अन्तःस्थानि, भूतानि, येन, सर्वम्, इदम्, ततम्॥ २२॥

पार्थ	= हे पार्थ!	**ततम्**	= परिपूर्ण * है,
यस्य	= जिस परमात्माके	**सः**	= वह सनातन अव्यक्त
अन्तःस्थानि	= अन्तर्गत	**परः**	= परम
भूतानि	= सर्वभूत हैं (और)	**पुरुषः**	= पुरुष
येन	= जिस सच्चिदानन्दघन परमात्मासे	**तु**	= तो
		अनन्यया	= अनन्य[१]
इदम्	= यह	**भक्त्या**	= भक्तिसे (ही)
सर्वम्	= समस्त जगत्	**लभ्यः**	= प्राप्त होनेयोग्य है।

(गीता अध्याय 15 श्लोक 17 की फोटोकॉपी)

उत्तमः, पुरुषः, तु, अन्यः, परमात्मा, इति, उदाहृतः, यः, लोकत्रयम्, आविश्य, बिभर्ति, अव्ययः, ईश्वरः॥ १७॥

तथा इन दोनोंसे—

उत्तमः	= उत्तम	**बिभर्ति**	= सबका धारण-पोषण करता है (एवं)
पुरुषः	= पुरुष		
तु	= तो	**अव्ययः**	= अविनाशी,
अन्यः	= अन्य ही है,	**ईश्वरः**	= परमेश्वर (और)
यः	= जो	**परमात्मा**	= परमात्मा
लोकत्रयम्	= तीनों लोकोंमें	**इति**	= इस प्रकार
आविश्य	= प्रवेश करके	**उदाहृतः**	= कहा गया है।

(गीता अध्याय 2 श्लोक 17 की फोटोकॉपी)

अविनाशि, तु, तत्, विद्धि, येन्, सर्वम्, इदम्, ततम्, विनाशम्, अव्ययस्य, अस्य, न, कश्चित्, कर्तुम्, अर्हति॥ १७॥

इस न्यायके अनुसार—

अविनाशि	= नाशरहित	**ततम्**	= व्याप्त है।
तु	= तो (तू)	**अस्य**	= इस
तत्	= उसको	**अव्ययस्य**	= अविनाशीका
विद्धि	= जान,	**विनाशम्**	= विनाश
येन	= जिससे	**कर्तुम्**	= करनेमें
इदम्	= यह		
सर्वम्	= सम्पूर्ण जगत् (दृश्यवर्ग)	**कश्चित्**	= कोई भी
		न, अर्हति	= समर्थ नहीं है।

<u>गीता ज्ञान बोलने वाले ने अपनी स्थिति गीता अध्याय 2 श्लोक 12, गीता अध्याय 4 श्लोक 5, गीता अध्याय 10 श्लोक 2 में इस प्रकार बताई है</u> :-

पेश हैं गीता अध्याय 2 श्लोक 12, गीता अध्याय 4 श्लोक 5, गीता अध्याय 10 श्लोक 2 की फोटोकॉपी :-

(गीता अध्याय 2 श्लोक 12 की फोटोकॉपी)

न, तु, एव, अहम्, जातु, न,आसम्, न, त्वम्, न, इमे, जनाधिपाः,
न, च, एव, न, भविष्यामः, सर्वे, वयम्, अतः, परम् ॥ १२ ॥

न	= न	न	= नहीं
तु	= तो	(आसन्)	= थे
(एवम्)	= ऐसा	च	= और
एव	= ही (है कि)	न	= न
अहम्	= मैं	(एवम्)	= ऐसा
जातु	= किसी कालमें	एव	ही (है कि)
न	= नहीं	अतः	= इससे
आसम्	= था (अथवा)	परम्	= आगे
त्वम्	= तू	वयम्	= हम
न	= नहीं	सर्वे	= सब
(आसीः)	= था (अथवा)	न	= नहीं
इमे	= ये	भविष्यामः	= रहेंगे।
जनाधिपाः	= राजालोग		

(गीता अध्याय 4 श्लोक 5 की फोटोकॉपी)

बहूनि, मे, व्यतीतानि, जन्मानि, तव, च, अर्जुन,
तानि, अहम्, वेद, सर्वाणि, न, त्वम्, वेत्थ, परन्तप ॥ ५ ॥

इसपर श्रीभगवान् बोले—

परन्तप	= हे परन्तप	व्यतीतानि	= हो चुके हैं।
अर्जुन	= अर्जुन!	तानि	= उन
मे	= मेरे	सर्वाणि	= सबको
च	= और	त्वम्	= तू
तव	= तेरे	न	= नहीं
बहूनि	= बहुत-से	वेत्थ	= जानता, (किंतु)
जन्मानि	= जन्म	अहम्	= मैं
		वेद	= जानता हूँ।

(गीता अध्याय 10 श्लोक 2 की फोटोकॉपी)

न, मे, विदुः, सुरगणाः, प्रभवम्, न, महर्षयः,
अहम्, आदिः, हि, देवानाम्, महर्षीणाम्, च, सर्वशः ॥ २ ॥

हे अर्जुन!—

मे	= मेरी	विदुः	= जानते हैं;
प्रभवम्	= उत्पत्तिको अर्थात् लीलासे प्रकट होनेको	हि	= क्योंकि
		अहम्	= मैं
न	= न	सर्वशः	= सब प्रकारसे
सुरगणाः	= देवतालोग (जानते हैं और)	देवानाम्	= देवताओंका
		च	= और
न	= न	महर्षीणाम्	= महर्षियोंका (भी)
महर्षयः	= महर्षिजन (ही)	आदिः	= आदि कारण हूँ।

इन श्लोकों में स्पष्ट किया है कि हे अर्जुन! तेरे और मेरे बहुत जन्म हो चुके हैं, तू नहीं जानता, मैं जानता हूँ। मैं और ये राजा लोग तथा तू पहले भी जन्मे थे, आगे भी जन्मेंगे। मेरी उत्पत्ति को न ऋषिजन जानते हैं, न देवता जानते हैं। हम (रामपाल दास व अनुयाई) गीता का आदेश पालन करते हुए उसी परमेश्वर की शरण में जा चुके हैं। हम परम अक्षर ब्रह्म यानि सत्यपुरूष जी को ईष्ट रूप में प्रतिष्ठित करके अपने धर्म-कर्म तथा पूजा-साधना करते हैं। अन्य विश्व के सर्व धर्मों व देवों का सम्मान करते हैं। दास (लेखक) आप हिन्दू साहेबानों व विश्व के सब मानव से प्रार्थना करता हूँ कि आप भी अविलंब उसी की शरण में जाओ। आप सबका मानव जीवन धन्य हो जाएगा।

प्रश्न :- आप (लेखक-रामपाल दास) के धर्म का क्या नाम है? ईष्ट कौन हैं? साधना क्या की जाती है? किस शास्त्र को आधार मानते हो?

उत्तर :- पुस्तक के प्रारंभ में मैंने अपना धर्म स्पष्ट कर दिया है। हमारा धर्म मानव है। हम मानव शरीरधारी प्राणी हैं। यह आदि सनातन धर्म (पंथ) कहा जाता है। हमारा इष्ट - परम अक्षर ब्रह्म यानि सत्यपुरूष है। हम सूक्ष्मवेद के आधार से साधना व पूजा करते हैं। परम अक्षर ब्रह्म का नाम कबीर है। चारों वेद व गीता जी का ज्ञान सूक्ष्मवेद से लिया अधूरा ज्ञान है, परंतु जितना इनमें ज्ञान है, वह सत्य है। सूक्ष्मवेद से मिलता है। हमारा धाम सत्यलोक है जिसे सनातन परम धाम भी कहा जाता है।

कृपया पढ़ें इसी पुस्तक के पृष्ठ 437 पर उन साधकों की आत्म कथा जो पहले हिन्दू समाज में चल रही शास्त्रों के विपरीत पूजा करते थे जिससे कोई लाभ नहीं हुआ। जब से शास्त्रोक्त साधना करने लगे, कितना चमत्कारी लाभ हुआ। मोक्ष भी होगा।

अतः विश्व के सब भाईयों तथा बहनों से निवेदन करता हूँ कि सब एक हो जाओ। सत्य साधना करके जन्म-मृत्यु के कष्ट से सदा के लिए छुटकारा प्राप्त करो। परमेश्वर के उस परम धाम में जाओ जहाँ जाने के पश्चात् साधक/साधिका फिर लौटकर संसार में नहीं आते।

आप सर्व का शुभचिंतक

लेखक

संत रामपाल दास

''दूसरा अध्याय''

''पवित्र हिन्दू शास्त्र V/S हिन्दू''

{हिन्दू धर्म को सनातन धर्म तथा वैदिक धर्म भी कहा जाता है।}

''पवित्र हिन्दू धर्म के मुख्य शास्त्र''

धर्मनिष्ठ हिन्दू समाज की धार्मिक पुस्तक इस प्रकार हैं :- पवित्र चारों वेद (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद), पवित्र श्रीमद्भगवत गीता, अठारह पुराण, महाभारत ग्रन्थ, श्रीमद्भागवत् (सुधा सागर) तथा ग्यारह उपनिषद् आदि-आदि। हिन्दुओं का मानना है कि इन सर्व पवित्र शास्त्रों में परमात्मा की जानकारी है, भक्ति की जानकारी है, ये सत्य ज्ञान युक्त हैं। इन्हीं को आधार मानकर अपने धार्मिक अनुष्ठान व भक्ति कर्म करते है। अधिक संख्या में हिन्दुओं का निवास स्थान होने के कारण महान भारत देश का नाम हिन्दुस्तान भी है।

''पवित्र हिन्दू (सनातन) धर्मग्रंथों की अच्छी बातें''

पवित्र गीता की अच्छी बातें :- 1. श्रीमद्भगवत गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में कहा है कि :-

गीता अध्याय 16 श्लोक 23 :- हे अर्जुन! जो व्यक्ति शास्त्रविधि को त्यागकर अपनी इच्छा से मनमाना आचरण करता है। उसको न सुख प्राप्त होता है, न सिद्धि प्राप्त होती है तथा न उसकी गति यानि मुक्ति (मोक्ष प्राप्ति) होती है।

गीता अध्याय 16 श्लोक 24 :- इससे तेरे लिए अर्जुन! कर्तव्य (जो साधना करनी चाहिए) तथा अकर्तव्य (जो साधना नहीं करनी चाहिए) की व्यवस्था में शास्त्र ही प्रमाण हैं। तू शास्त्रोक्त भक्ति कर।

❖ गीता अध्याय 4 श्लोक 5, गीता अध्याय 2 श्लोक 12, गीता अध्याय 10 श्लोक 2 में कहा है कि हे अर्जुन! तेरे और मेरे बहुत जन्म हो चुके हैं। तू नहीं जानता, मैं जानता हूँ। तू, मैं और ये राजा लोग पहले भी जन्में थे और आगे भी जन्मेंगे।

❖ मेरी उत्पत्ति को ऋषिजन व देवतागण नहीं जानते क्योंकि ये मेरे से उत्पन्न हुए हैं। (स्पष्ट है गीता ज्ञान कहने वाला नाशवान है।)

❖ गीता अध्याय 2 श्लोक 17, गीता अध्याय 15 श्लोक 17, में कहा है कि हे अर्जुन! अविनाशी तो उसको जान जिसे मारने में कोई सक्षम नहीं है। जिससे सारा संसार व्याप्त है यानि जिसने संसार की उत्पत्ति की है। जो तीनों लोकों में प्रवेश करके सबका धारण-पोषण करता है। उसे परमात्मा कहा जाता है। वह अविनाशी परमेश्वर है। वह (उत्तम पुरूषः तू अन्य) पुरूषोत्तम

यानि समर्थ श्रेष्ठ परमात्मा तो मेरे से अन्य ही है जो परमात्मा कहलाता है। वह अविनाशी परमेश्वर है।

गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में :- गीता ज्ञान देने वाले ने कहा है कि हे भारत! तू सर्वभाव से उस परमेश्वर यानि परम अक्षर ब्रह्म की शरण में जा, उसकी कृपा से परमशांति को तथा (शाश्वतम् स्थानम्) सनातन परम धाम यानि अविनाशी लोक (सत्यलोक) को प्राप्त होगा।

''जिस परमेश्वर की शरण में जाने को कहा है, उसके विषय में गीता अध्याय 8 श्लोक 1,3,8,9,10, 20-22, गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में इस प्रकार कहा है'' :- अर्जुन ने गीता अध्याय 8 श्लोक 1 में प्रश्न किया कि आपने गीता अध्याय 7 श्लोक 29 में जिस तत् ब्रह्म के विषय में कहा है वह तत् ब्रह्म क्या है? गीता अध्याय 8 श्लोक 3 में उत्तर दिया कि ''वह परम अक्षर ब्रह्म है। उसी के विषय में अध्याय 8 श्लोक 8,9,10,20-22 में कहा है कि जो तत् ब्रह्म'' यानि परम अक्षर ब्रह्म की भक्ति करता है, वह उसी को प्राप्त होता है। वह (उत्तमः पुरूषः तू अन्यः) पुरूषोत्तम तो मेरे से अन्य है। वह परमात्मा कहा जाता है, जो तीनों लोकों में प्रवेश करके सबका धारण-पोषण करता है। अविनाशी परमेश्वर है।

❖ अपने विषय में गीता ज्ञान दाता ने इस प्रकार कहा है :- गीता अध्याय 8 श्लोक 5 व 7 में कहा है कि जो मेरी भक्ति करेगा, वह मुझे प्राप्त होगा। युद्ध भी कर, मेरा स्मरण भी कर। गीता ज्ञान देने वाले ने गीता अध्याय 2 श्लोक 12, गीता अध्याय 4 श्लोक 5, गीता अध्याय 10 श्लोक 2 में अपनी स्थिति बताई है कि तू, मैं और ये राजा लोग सब जन्म व मृत्यु को प्राप्त होते हैं। तेरे व मेरे अनेकों जन्म हो चुके हैं। (स्पष्ट है कि गीता ज्ञान कहने वाला नाशवान है।)

❖ गीता शास्त्र में पित्तर व भूत पूजा, देवताओं की पूजा निषेध कही है। व्रत करना व्यर्थ कहा है। कर्म सन्यास गलत कहा है। कर्म करते-करते भक्ति करना उत्तम बताया है।

प्रमाण :- गीता अध्याय 9 श्लोक 25, गीता अध्याय 7 श्लोक 12-15, 20-23, गीता अध्याय 6 श्लोक 16, गीता अध्याय 5 श्लोक 2-6, गीता अध्याय 3 श्लोक 4-9 में।

❖ पवित्र वेदों की अच्छी बातें :- परमात्मा सबसे ऊपर के लोक में विराजमान (बैठा) है। वह राजा के समान दिखाई देता है यानि सिहांसन पर बैठा है। सिर के ऊपर मुकट है, सफेद छत्र है, नराकार है।

❖ परमात्मा ऊपर के लोक से गति करके (चलकर) पृथ्वी पर आता है। अच्छी आत्माओं को मिलता है। उनके संकटों को समाप्त करता है।

❖ कवियों जैसा आचरण करता हुआ घूमता है। अपने मुख कमल से वाणी बोलकर भक्ति करने के लिए प्रेरणा करता है। भक्ति के गुप्त नामों (मंत्रों) का आविष्कार करता है।

❖ परमात्मा तत्त्वज्ञान यानि सम्पूर्ण अध्यात्म ज्ञान को (काव्येना) कवित्व से यानि दोहों, शब्दों, चौपाईयों के रूप में बोलता है। इस कारण से प्रसिद्ध कवियों में से एक कवि की उपाधि भी प्राप्त करता है यानि उसी कारण से परमात्मा कवि भी कहलाता है।

❖ परमेश्वर तीन प्रकार की लीला करता है :-

1. प्रत्येक युग में अपने लोक से सशरीर आकर किसी सरोवर में कमल के फूल पर नवजात शिशु के रूप में विराजमान होता है। उस शिशु की परवरिश (पोषण) की लीला कंवारी गायों द्वारा होती है। बड़ा होकर तत्त्वज्ञान प्रचार करता है।

2. परमात्मा कभी भी किसी स्थान पर प्रकट होकर भक्तों को वेश बदलकर मिलता है। उनकी रक्षा करता है। भक्ति का सच्चा मार्ग बताता है।

3. वेश बदलकर किसी स्थान पर संत वेश में कुछ समय रहता है। वहाँ कुटिया या आश्रम बनाकर अच्छी आत्माओं को भक्ति की सच्ची विधि व तत्त्वज्ञान सुनाता है।

❖ पुराणों की अच्छी बातें :- सब तीर्थों में श्रेष्ठ तीर्थ चित्तशुद्धि तीर्थ है। उदाहरण दिया है कि ''तीर्थों के जल में स्नान करने से शरीर का मैल तो धुल जाता है, परंतु मन का मैल नहीं धुलता। उसके लिए तत्त्वदर्शी संत का सत्संग सुनना चाहिए। सत्संग चित्तशुद्धि करता है। यह चित्तशुद्धि तीर्थ कहा जाता है। गीता अध्याय 4 श्लोक 32 तथा 34 में भी इसी कथन का समर्थन है।

❖ एक समय ऋषि वशिष्ठ जी तथा ऋषि विश्वामित्र जी गंगा दरिया के किनारे आश्रमों में रहते थे। गंगा तीर्थ के जल में प्रतिदिन स्नान करते थे। उसी गंगा जल को पीते थे। एक बार किसी बात पर दोनों का क्लेश हो गया। दोनों ने शस्त्र निकाल लिए, एक-दूसरे को मारने को तैयार हो गए। उनका बीच-बचाव करवाकर युद्ध समाप्त करवाया।

❖ सूक्ष्मवेद में कहा है कि :-

कबीर, गंगा कांठै घर करें, पीवै निर्मल नीर।
मुक्ति नहीं सत्यनाम बिन, कह सच्च कबीर।।
कबीर, तीर्थ कर—कर जग मुआ, ऊड़ै पानी न्हाय।
सत्यनाम जपा नहीं, काल घसीटें जाय।।

अर्थात् गंगा नदी के किनारे निवास करें, मोक्षदायिनी मानकर तथा गंगा का निर्मल पानी पीते हैं, परंतु भक्ति के सत्य शास्त्र प्रमाणित नाम बिना मोक्ष संभव नहीं है।

❖ कबीर परमेश्वर जी आगे बताते हैं कि भ्रमित ज्ञान के आधार से संसार के व्यक्ति तीर्थों पर जाते हैं। आजीवन यह साधना करते हैं। जब मृत्यु हो जाती है तो उनको राहत उस साधना से नहीं मिलती। काल के दूत उनको बलपूर्वक (घसीटकर) खींचकर ले जाते हैं, दंडित करते हैं।

❖ कर्मकांड करना (पित्तर पूजा, श्राद्ध निकालना, भूत पूजा, मूर्ति पूजा) वेद विरूद्ध है। अज्ञानवश करते हैं।

प्रमाण :- मार्कण्डेय पुराण में ''रौच्य ऋषि की उत्पत्ति कथा'' अध्याय में है। ये सब अच्छी बातें आप जी इसी पुस्तक में पढ़ेंगे जो प्रमाणों सहित लिखी हैं। ग्रंथों (शास्त्रों) की फोटोकॉपी लगाकर स्पष्ट किया है।

पवित्र हिन्दू धर्म की धार्मिक क्रियाएँ :- आदि शंकराचार्य जी का जन्म 508 वर्ष ईशा पूर्व हुआ यानि 2013 से गिनें तो 2521 वर्ष पूर्व हुआ। उन्होंने जो भक्ति मार्ग बताया है, उसका अनुसरण पवित्र हिन्दू समाज वर्तमान में कर रहा है। श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी को आदरणीय भगवान मानते हैं। मूर्ति पूजा भी अवश्य करते हैं। पंच देव पूजा का विधान है जिसमें ये तीनों देवता भी हैं, इनकी पूजा करते हैं। यह भी मानते हैं कि श्री ब्रह्मा जी रजगुण हैं, श्री विष्णु जी सतगुण हैं तथा श्री शंकर जी तमगुण हैं।

मार्कण्डेय पुराण में यह भी प्रमाणित किया है कि तीन प्रधान देवता हैं। रजगुण युक्त श्री ब्रह्मा जी, सतगुण युक्त श्री विष्णु जी तथा तमगुण युक्त श्री शिव शंकर जी हैं। ये ही तीन देवता हैं। ये ही तीन गुण हैं।

हिन्दू समाज का मानना है कि इन तीनों देवताओं के कोई माता-पिता नहीं हैं। यह भी मानते हैं कि ये कभी मरते नहीं हैं। इनका जन्म भी नहीं हुआ है, ये स्वयंभू हैं। फिर यह भी कहते हैं कि श्री ब्रह्मा जी की आयु सौ वर्ष है जिसकी गणना इस प्रकार करते हैं :-

श्री ब्रह्मा जी का एक दिन 1008 (एक हजार आठ) चतुर्युग का है, इसे एक कल्प भी कहा जाता है।

एक चतुर्युग में चार युग हैं :-

1. ''सत्य युग :- यह 1728000 (सतरह लाख अठाईस हजार) वर्ष का समय है।

2. त्रेता युग :- यह 1296000 (बारह लाख छ्यानवै हजार) वर्ष का समय है।

3. द्वापर युग :- यह 864000 (आठ लाख चौंसठ हजार) वर्ष का समय है।

4. कलयुग :- यह 432000 (चार लाख बत्तीस हजार) वर्ष का समय है। गणित की रीति से एक चतुर्युग का समय 4320000 (तिरतालीस लाख बीस हजार) वर्ष हुआ। एक हजार आठ से गुणा करके देख लेना कितने पृथ्वी के वर्षों का एक दिन श्री ब्रह्मा जी का बनता है। इतने ही समय की रात्रि बताई है। यह एक दिन-रात हुआ। ऐसे तीस दिन व रात का महीना, बारह (12) महीनों का एक वर्ष है। ऐसे-ऐसे सौ वर्ष की श्री ब्रह्मा जी की आयु मानते हैं।

वर्तमान में श्री ब्रह्मा जी पचास वर्ष के होकर इकावनवें (51वें) वर्ष में प्रवेश हैं।

हिन्दू साहेबान श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी का जन्म-मृत्यु नहीं मानते। जब चर्चा की जाती है तो तीनों को ही अजन्मा तथा अविनाशी कहते हैं। परमात्मा को निराकार बताते हैं। स्वर्ग सर्वोत्तम मोक्ष स्थान मानते हैं। गो लोक की भी महिमा बराबर करते रहते हैं। कभी-कभी ब्रह्मलोक की भी चर्चा कर लेते हैं। इसके साथ-साथ अन्य देवियों और देवताओं की पूजा का तड़का साथ लगाते रहते हैं। इतनी पूजा से भी हिन्दू साधकों को संतोष नहीं है। इसके साथ-साथ कर्मकांड को पूजा का अहम हिस्सा मानते हैं यानि मूर्ति पूजा, पित्तर पूजा अर्थात् श्राद्ध कर्म करना, भूत पूजा यानि मृत्यु के पश्चात् शरीर का अंतिम संस्कार करके मृतक की गति यानि मुक्ति करवाने के लिए उसकी शेष बची अस्थियों को उठाकर गंगा दरिया के जल में पंडित जी (अपने धार्मिक गुरू जी) से प्रवाह करवाना, तेरहवाँ या सत्तरहवाँ दिन मनाना। उस दिन पंडित जी को बुलाकर पूजा-पाठ करवाते हैं, मृतक की गति करवाने हेतु। फिर महीना पूरा होने पर वही गति करवाने की पूजा करवाते हैं। फिर वर्षी क्रिया यानि मृत्यु के एक वर्ष पश्चात् उसी तिथि को फिर गति करवाने के लिए पूजा पंडित जी से करवाते हैं। फिर पिंड भरवाए जाते हैं गति के अर्थ ही। फिर श्राद्ध करवाए जाते हैं, पित्तरों को तृप्त करने के लिए। कहा जाता है कि कौवे को श्राद्ध भोज अवश्य करवाना चाहिए। यह भी माना जाता है कि हो सकता है मृतक कौआ बन गया हो। गरूड़ पुराण का पाठ करवाना भी कुछ हिन्दू साहेबान नहीं चूकते, मृत्यु के पश्चात् मृतक के जीव की गति करवाते-करवाते दुर्गति करवाकर यानि कौआ बनवाकर दम लेते हैं।

<u>आश्चर्य</u> :- शिक्षित हिन्दू श्रद्धालु प्रतिदिन श्रीमद्भगवत गीता का पाठ करते हैं। पुराणों को पढ़ना भी हिन्दू समाज की पूजा का अहम हिस्सा है। रामायण ग्रन्थ व महाभारत ग्रन्थ का पढ़ना-सुनना मुख्य धर्म-कर्म है, परंतु हिन्दू श्रद्धालुओं को इन ग्रन्थों का यथारूप में ज्ञान कतई नहीं है। यही कारण है कि ढेर सारी पूजा करके भी प्यासे ही हैं, मोक्ष नहीं।

मंदिरों में पूजा हेतु जाना महत्वपूर्ण माना जाता है। तीर्थों पर भ्रमण करके धर्म लाभ उठाना, चारों धामों की यात्रा करके तथा कुंभ के वक्त प्रभी में स्नान करके पुण्य कमाना भी नहीं चूकते, जो व्यर्थ की पूजा है।

एक दिन एक हिन्दू साधक से वार्ता हुई। वह सुबह-सुबह कई मंदिरों में जाता था। उसने ज्ञान चर्चा के दौरान बताया कि आज छुट्टी है, रविवार है। आज चार मंदिरों में गया। शमशान घाट वाले में भी गया। वे चारों शिव जी के मंदिर हैं। मैंने उससे प्रश्न किया है कि हे भक्त! आपको प्यास लगी हो। आपको शीतल मीठे जल की तीन-चार टूंटी (TAP) इकट्ठी लगी मिल जाएँ। आप एक टूटी को खोलकर जल पीओगे। प्यास बुझ जाएगी। प्यास

बुझाने के पश्चात् क्या आप दो फुट की दूरी पर लगी दूसरी टूटी से भी जल पीओगे। उत्तर था कि प्यास बुझने पर कौन दूसरी टूटी को छूएगा। यदि टूटी में जल नहीं मिलता तो साथ वाली सब टूटियों को खोलकर पानी पीने की कोशिश करता। हे भक्त! इसी प्रकार आप परमात्मा से आत्मा को तृप्त करने यानि मन्नत माँगने गए। यदि आपको प्रथम मंदिर से ही तृप्ति हो जाती तो क्या आप दो किलोमीटर दूर दूसरे मंदिर में जाते? इससे सिद्ध है कि उन मंदिरों में परमात्मा नहीं है। उनमें भगवान की मूर्तियाँ हैं। सेब की मूर्ति से पेट नहीं भरता, सेब से भरता है। इसी प्रकार परमात्मा की मूर्ति से परमात्मा का लाभ नहीं मिलता। परमात्मा की शास्त्रोक्त साधना से लाभ मिलता है।

पवित्र हिन्दू समाज में चारों वेदों (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद) का नाम पूरे सम्मान के साथ लिया जाता है। माना जाता है कि वेदों में परमेश्वर की पूजा व साधना का सर्वोत्तम ज्ञान है। आश्चर्य की बात है कि 80% हिन्दू समाज वेदों के विपरीत भक्ति कर्म करते हैं तथा 80% हिन्दुओं ने वेदों की शक्ल भी नहीं देखी है।

विशेष :- हिन्दू समाज श्रीमद्भगवत गीता को चारों वेदों का सार तथा संक्षिप्त रूप मानता है। गीता में वेद ज्ञान निष्कर्ष रूप में संक्षेप में कहा है। यह भी निर्विरोध राय है।

किसी बाबा की मृत्यु के पश्चात् उसके शरीर को धरती में गाड़कर उसके ऊपर यादगार रूप में मंढ़ी (छोटा मंदिर) बनाकर फिर उसकी धोक खाना यानि पूजा करना, मत्था टेकना शुरू कर देते हैं। अपने जनों की मृत्यु के पश्चात् उनके लिए घर या खेत में पित्तर स्थान बनाते हैं। चार-पाँच ईंटों को रखकर एक झोंपड़ी रूप बनाकर उस पर ज्योति जलाना भी पूजा का हिस्सा माना जाता है। (यह है मुख्य पूजा पवित्र हिन्दू समाज की।)

प्रश्न 1 :- हिन्दू धर्म के पवित्र शास्त्रों की स्थिति क्या है?

उत्तर :- चारों वेद प्रभुदत्त हैं तथा श्रीमद्भगवत गीता चारों वेदों का संक्षिप्त रूप यानि सारांश है। इसलिए गीता भी प्रभु द्वारा दिया ज्ञान है।

प्रश्न 2 :- किस प्रभु के द्वारा चारों वेद प्रदान किए गए हैं?

उत्तर :- परम अक्षर ब्रह्म यानि सत्यपुरूष ने प्रदान किए हैं।

प्रश्न 3 :- परम अक्षर ब्रह्म कौन प्रभु है, कहाँ प्रमाण है?

उत्तर :- गीता अध्याय 8 श्लोक 1 में अर्जुन ने गीता ज्ञान देने वाले प्रभु (हिन्दुओं के अनुसार श्री कृष्ण जी) से प्रश्न किया कि (जो आपने गीता अध्याय 7 श्लोक 29 में तत् ब्रह्म कहा है) वह तत् ब्रह्म क्या है? (किम् तत् ब्रह्म?)

गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 8 श्लोक 3 में उत्तर दिया है। कहा कि ''वह परम अक्षर ब्रह्म है।'' फिर गीता अध्याय 8 के ही श्लोक 5 व 7 में

अपनी भक्ति करने को अर्जुन से कहा तथा कहा कि जो मेरी भक्ति करेगा, वह मुझे प्राप्त होगा।

❖ फिर गीता अध्याय 8 के ही श्लोक 8, 9, 10, 20-22 में अपने से अन्य ''परम अक्षर ब्रह्म'' की भक्ति करने को कहा है। यह भी कहा है कि वह सच्चिदानंद घन ब्रह्म यानि परम अक्षर ब्रह्म ही (सर्वस्य धातारम्) सबका धारण-पोषण करने वाला है। जो साधक उसकी भक्ति करता है, उसे प्राप्त होता है।

''<u>पवित्र गीता ज्ञान वक्ता की भक्ति की उपलब्धि</u>''

फिर गीता अध्याय 8 श्लोक 13 में अपनी भक्ति का मंत्र केवल ओम् एक अक्षर कहा है :-

मूल पाठ :- ओम् इति एकाक्षरम् ब्रह्म व्याहरन् माम् अनुस्मरण।
य: प्रयाति, त्यजन् देहम्, स: याति् परमाम् गतिम्।।13।।

अर्थात् (माम् ब्रह्म) मुझ ब्रह्म यानि गीता ज्ञान दाता का (ओम् इति एकाक्षरम्) केवल एक अक्षर ओम् है। (य:) जो इसका (अनुस्मरण) उच्चारण करके स्मरण करता हुआ (प्रयाति त्यजन देहम्) शरीर त्यागकर जाता है, (स:) वह साधक (याति परमाम् गतिम्) ओम् मन्त्र से मिलने वाली परम गति यानि ब्रह्मलोक को प्राप्त होता है। ब्रह्मलोक में काल ब्रह्म रहता है।

प्रश्न 4 :- यह कहाँ प्रमाण है कि ''ओम् नाम का जाप करने वाले ब्रह्मलोक में जाते हैं और ब्रह्म भी ब्रह्मलोक में रहता है?

उत्तर :- श्री देवी महापुराण के सातवें स्कंद के अध्याय 36 में श्री देवी जी ने राजा हिमालय से कहा कि हे राजन्! और बातें छोड़कर यानि और सबकी भक्ति छोड़कर केवल ओम् नाम का स्मरण कर, जिसके स्मरण से तू ब्रह्म को प्राप्त हो जाएगा जो दिव्य आकाश रूप ब्रह्मलोक में रहता है।

{ध्यान रहे :- गीता अध्याय 8 श्लोक 16 में कहा है कि ब्रह्मलोक में गए साधक भी पुनरावर्ती यानि आवा-गमन (जन्म-मरण के चक्र) में हैं।}

प्रश्न 5 (हिन्दू पक्ष) :- गीता अध्याय 8 श्लोक 16 में यह भी कहा है कि ''हे अर्जुन! ब्रह्मलोक पर्यन्त सब लोक पुनरावर्ती में हैं, परंतु कुंती पुत्र! मुझको प्राप्त होकर पुनर्जन्म नहीं होता।'' इससे स्पष्ट है कि गीता ज्ञान देने वाले को प्राप्त होकर पुनर्जन्म नहीं होता।

उत्तर :- इस श्लोक का अनुवाद गलत किया है। विचार करो गीता के ज्ञान देने वाले ने गीता अध्याय 8 श्लोक 13 में अपनी भक्ति का केवल एक ओम् अक्षर बताया है। श्री देवी महापुराण के सातवें स्कंद में स्पष्ट है कि ओम् नाम का जाप करने वाला ब्रह्मलोक में जाता है, ब्रह्म को प्राप्त होता है। ब्रह्म, ब्रह्मलोक में रहता है। गीता अध्याय 8 श्लोक 16 में स्पष्ट है कि ब्रह्मलोक में गए साधक भी पुनरावर्ती यानि जन्म-मरण के चक्र में हैं। वहाँ जाकर भी पुन:

जन्म लेना होता है। पृथ्वी पर आना पड़ता है। ब्रह्म तो ब्रह्मलोक में रहता है। श्री देवी पुराण में प्रमाण है। ब्रह्म को प्राप्त होने वाला ही तो ब्रह्मलोक में जाएगा, तभी तो ब्रह्म को प्राप्त होगा। गीता अध्याय 8 श्लोक 16 में यही कहा है कि ब्रह्मलोक में जाने वाले भी जन्म-मृत्यु के चक्र में हैं। यदि गीता अध्याय 8 श्लोक 13 के मूल पाठ को ध्यान से देखें तो उसमें कहा है (माम् ब्रह्म) मुझ ब्रह्म का केवल एक ओम् अक्षर है.....'' मेरे से अन्य अनुवादकों ने गीता अध्याय 8 श्लोक 16 का अनुवाद ठीक नहीं किया है। दास (लेखक) ने ठीक किया है जो आगे किया है। यदि अन्य अनुवादकों का सरलार्थ गीता अध्याय 8 श्लोक 16 का ठीक मानें कि मुझे प्राप्त होकर पुनर्जन्म नहीं होता। जब गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 2 श्लोक 12, गीता अध्याय 4 श्लोक 5, गीता अध्याय 10 श्लोक 2 में तो अपने को जन्मने व मरने वाला कहा है। गीता ज्ञान दाता ने अपनी साधना का एक ओम् अक्षर बताया है तो वह ब्रह्म हुआ क्योंकि ओम् नाम जाप तो ब्रह्म का है। जब वह स्वयं ही जन्मता-मरता है तो गीता ज्ञान देने वाला यह नहीं कह सकता कि मुझे प्राप्त होकर पुनर्जन्म नहीं होता। गीता अध्याय 8 श्लोक 16 का अन्य अनुवादकों ने अनुवाद गलत किया है। गीता ज्ञान दाता ने स्वयं गीता के कई श्लोकों में अपना जन्म व मृत्यु बताया है। अविनाशी परमात्मा अपने से अन्य बताया है।

मैं (लेखक) यही स्पष्ट करना चाहता हूँ कि हमारे हिन्दू धर्मगुरूओं ने अपने पवित्र ग्रंथों गीता, चारों वेदों, महाभारत तथा अठारह पुराणों को नहीं समझा।

कृपया पढ़ें मेरा अनुवाद गीता अध्याय 8 श्लोक 16 का :-

गीता अध्याय 8 श्लोक 16 का यथार्थ अनुवाद :- हे अर्जुन! (आब्रह्मभुवनात्) ब्रह्मलोक पर्यन्त सब लोक (पुनरावर्तिनः) पुनरावर्ती में हैं यानि जहाँ जाकर भी पीछे संसार में आना पड़े, ऐसे हैं। (तु) परंतु (कौन्तेय!) हे कुंती पुत्र! (न विद्यते) जो यह नहीं जानते (माम् उपेत्य) मुझे प्राप्त होकर भी उनका (पुनर्जन्म) पुनर्जन्म होता है। भावार्थ है कि जो यह नहीं जानते कि ब्रह्मलोक में जाकर भी वापिस आना पड़ता है, वे मेरी भक्ति करके मुझे प्राप्त होकर भी जन्म-मरण के चक्र में रह जाते हैं।

ध्यान रहे :- गीता अध्याय 6 श्लोक 23 में ''विद्यात्'' शब्द का अर्थ इसी अनुवादक ने ''जानना'' किया है। यदि इस श्लोक 16 में ''विद्यते'' का अर्थ जानना कर दिया जाए तो सीधा अर्थ हो जाता है। जैसे विद्या का अर्थ ज्ञान होता है। जब गीता ज्ञान देने वाला स्वयं कहता है मेरी जन्म-मृत्यु होती है तो इस अध्याय 8 श्लोक 16 में यह नहीं कह सकता, मुझे प्राप्त होकर पुनर्जन्म नहीं होता। इससे स्पष्ट होता है कि ''हिन्दू साहेबान नहीं समझे गीता, वेद, पुराण''।

''पवित्र हिन्दू धर्मगुरू नहीं समझे गीता निर्मल ज्ञान''

(पेश है एक झलक गुरूओं के अनुवाद की :-)

अन्य प्रमाण :- 1. गीता अध्याय 10 श्लोक 3 :- कृपया पढ़ें फोटोकॉपी गीता अध्याय 10 श्लोक 3 की जो गीता प्रेस गोरखपुर से प्रकाशित व मुद्रित है जिसके अनुवादक श्री जयदयाल गोयन्दका जी हैं।

(गीता अध्याय 10 श्लोक 3 की फोटोकॉपी)

यः, माम्, अजम्, अनादिम्, च, वेत्ति, लोकमहेश्वरम्,
असम्मूढः, सः, मर्त्येषु, सर्वपापैः, प्रमुच्यते ॥ ३ ॥

और—

यः	= जो		ईश्वर
माम्	= मुझको	**वेत्ति**	= तत्त्वसे जानता है,
अजम्	= अजन्मा अर्थात् वास्तवमें जन्मरहित	**सः**	= वह
		मर्त्येषु	= मनुष्योंमें
अनादिम्	= अनादि*	**असम्मूढः**	= ज्ञानवान् पुरुष
च	= और	**सर्वपापैः**	= सम्पूर्ण पापोंसे
लोकमहेश्वरम्	=लोकोंका महान्	**प्रमुच्यते**	= मुक्त हो जाता है।

विशेष विवेचन :- गीता अध्याय 10 श्लोक 3 का अनुवाद गलत किया है। जिसमें लिखा है कि (गीता ज्ञान देने वाले ने कहा) ''जो मुझको अजन्मा, अनादि और लोकों का महान ईश्वर तत्त्व से जानता है, वह मनुष्यों में ज्ञानवान पुरूष सम्पूर्ण पापों से मुक्त हो जाता है।''(अनुवाद समाप्त)

महा आश्चर्य :- गीता अध्याय 10 श्लोक 2 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि मेरी उत्पत्ति हुई है जिसका अनुवाद भी इन्हीं अनुवादकों ने किया है। फिर श्लोक 3 में तुरंत यह कहे कि मैं अजन्मा हूँ तो यह मूर्खता कही जाती है। परंतु गीता ज्ञान दाता ऐसी गलती नहीं कर सकता। यह इक्कीस ब्रह्मांडों का मालिक है, परंतु नाशवान है। यह गलती अनुवादकों की है जो अपनी बुद्धि से काम न लेकर लोक वेद को ही आधार बनाकर अर्थ करते हैं।

गीता अध्याय 10 श्लोक 3 का यथार्थ अनुवाद इस प्रकार है :- (य) जो (माम्) मुझको (च) और (अजम्) अजन्मा यानि वास्तव में जन्म रहित है (अनादिम्) अनादि यानि जिसकी आदि न हो अर्थात् जो सदा से है (लोकमहेश्वरम्) सब लोकों के महान ईश्वर यानि परम अक्षर ब्रह्म को (वेति) जानता है। (सः) वह (मर्त्येषु) मनुष्यों में (असम्मूढः) ज्ञानवान पुरूष (सर्व पापैः) सम्पूर्ण पापों से (प्रमुच्यते) मुक्त हो जाता है।

अर्थात् जो मुझको तथा अजन्मा को यानि परम अक्षर ब्रह्म को जो वास्तव में जन्म रहित को, अनादि को यानि जो सदा से है, उस सब लोकों के महान ईश्वर यानि कुल के मालिक को तत्त्व से जानता है। वह मनुष्यों में ज्ञानवान पुरूष यानि तत्त्वदर्शी संत सम्पूर्ण पापों से मुक्त हो जाता है।

ध्यान देने योग्य :- गीता का ज्ञान बोलने वाले ने इसी गीता अध्याय 10 श्लोक 2 में कहा है कि ''मेरी उत्पत्ति को यानि जन्म को न देवता लोग जानते हैं, न महर्षिजन ही जानते हैं क्योंकि मैं सब प्रकार से देवताओं और महर्षियों का आदि कारण हूँ।

भावार्थ यह है कि गीता ज्ञान दाता स्वयं स्वीकार करता है कि मेरी उत्पत्ति यानि जन्म हुआ, परंतु जितने भी देवता हैं तथा महर्षिजन हैं, वे मेरी उत्पत्ति को नहीं जानते क्योंकि वे मेरे से उत्पन्न हुए हैं। पाठकजन! विचार करें कि पिता की उत्पत्ति को बच्चे तो नहीं जानते, परंतु दादा जी तो जानता है। उस दादा जी (Grand Father) ने इस गीता ज्ञान दाता काल ब्रह्म की उत्पत्ति बताई है। आप पढ़ेंगे इसी पुस्तक में अध्याय ''सृष्टि रचना'' में।

मेरे (लेखक के) गीता अध्याय 10 श्लोक 3 के अनुवाद का समर्थन गीता अध्याय 10 श्लोक 2 के साथ-साथ गीता अध्याय 2 श्लोक 12, गीता अध्याय 4 श्लोक 5 में भी है। जिनमें गीता ज्ञान बताने वाले ने कहा है कि :-

''हे अर्जुन! तेरे और मेरे बहुत जन्म हो चुके हैं, उन सबको तू नहीं जानता, मैं जानता हूँ।''(गीता अध्याय 4 श्लोक 5)

(हे अर्जुन!) मैं, तू तथा ये राजा लोग पहले भी जन्में थे, आगे भी जन्मेंगे।(गीता अध्याय 2 श्लोक 12)

कृपया देखें इसी पुस्तक के पृष्ठ 25 पर फोटोकॉपी गीता अध्याय 10 श्लोक 2, गीता अध्याय 4 श्लोक 5, गीता अध्याय 2 श्लोक 12 की जिनके अनुवादक भी जयदयाल गोयन्दका जी ही हैं तथा प्रकाशक व मुद्रक भी गीता प्रेस गोरखपुर ही है।

गीता अध्याय 4 का श्लोक 5 में गीता बोलने वाले ने स्पष्ट कहा है कि हे परन्तप अर्जुन! मेरे और तेरे बहुत जन्म हो चुके हैं। उन सबको तू नहीं जानता, मैं जानता हूँ।

विवेचन :- उपरोक्त तीनों श्लोकों से स्पष्ट हो गया है कि गीता ज्ञान दाता (आपके अनुसार श्री कृष्ण उर्फ श्री विष्णु) नाशवान है। उसकी जन्म-मृत्यु होती है।

अन्य प्रमाण देखो जो स्पष्ट करते हैं कि हिन्दू धर्मगुरू नहीं समझे गीता का निर्मल ज्ञान :-

''अविनाशी परमात्मा गीता बोलने वाले से अन्य है :-''

प्रमाण :- अविनाशी परमात्मा तो गीता ज्ञान दाता (आपके अनुसार श्री कृष्ण जी उर्फ श्री विष्णु जी) से अन्य है जो सर्व प्राणियों की उत्पत्ति करता है यानि जिससे यह जगत व्याप्त है। सबका धारण-पोषण करने वाला है। गीता ज्ञान दाता ने अर्जुन को उसकी शरण में जाने के लिए कहा है। कहा है कि यदि अर्जुन तू जन्म-मरण तथा जरा (वृद्धावस्था) से पूर्ण रूप से छुटकारा चाहता है। शाश्वत् स्थान (अमर लोक यानि सतलोक) प्राप्त करना चाहता है तथा परम शांति चाहता है तो मेरे से अन्य उस परमेश्वर (परम अक्षर ब्रह्म) की शरण में जा।

☛ प्रमाण के लिए पेश हैं गीता अध्याय 2 श्लोक 17, गीता अध्याय 15 श्लोक 17, गीता अध्याय 18 श्लोक 46, 61 तथा 62 :-

गीता अध्याय 2 श्लोक 17 में गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य अविनाशी परमेश्वर के विषय में कहा है कि ''नाशरहित (अविनाशी) तो उसको जान जिससे यह सम्पूर्ण जगत व्याप्त है। इस अविनाशी का विनाश करने में (उसे मारने में) कोई भी समर्थ नहीं है।

पेश है फोटोकॉपी गीता अध्याय 2 श्लोक 17 की :-

अविनाशि, तु, तत्, विद्धि, येन्, सर्वम्, इदम्, ततम्,
विनाशम्, अव्ययस्य, अस्य, न, कश्चित्, कर्तुम्, अर्हति॥ १७॥

इस न्यायके अनुसार—

अविनाशि	= नाशरहित	**ततम्**	= व्याप्त है।
तु	= तो (तू)	**अस्य**	= इस
तत्	= उसको	**अव्ययस्य**	= अविनाशीका
विद्धि	= जान,	**विनाशम्**	= विनाश
येन	= जिससे	**कर्तुम्**	= करनेमें
इदम्	= यह		
सर्वम्	= { सम्पूर्ण जगत्	**कश्चित्**	= कोई भी
	(दृश्यवर्ग)	**न, अर्हति**	= समर्थ नहीं है।

यही प्रमाण गीता अध्याय 18 श्लोक 46 में भी है। इसमें भी गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य परमेश्वर के विषय में कहा है कि ''जिस परमेश्वर से सम्पूर्ण प्राणियों की उत्पत्ति हुई है और जिससे यह समस्त जगत व्याप्त है, उस परमेश्वर की अपने स्वभाविक कर्मों द्वारा पूजा करके मनुष्य परम सिद्धि को प्राप्त हो जाता है। (यहाँ भी गीता बोलने वाले ने अपने से अन्य परमेश्वर के विषय में कहा है।)

पेश है गीता अध्याय 18 श्लोक 46 फोटोकॉपी :-

यतः, प्रवृत्तिः, भूतानाम्, येन्, सर्वम्, इदम्, ततम्,
स्वकर्मणा, तम्, अभ्यर्च्य, सिद्धिं, विन्दति, मानवः ॥ ४६ ॥

यतः = जिस परमेश्वरसे		**तम्** = उस परमेश्वरकी	
भूतानाम् = सम्पूर्ण प्राणियोंकी		**स्वकर्मणा** = अपने स्वाभाविक कर्मोंद्वारा	
प्रवृत्तिः = उत्पत्ति हुई है (और)			
येन = जिससे		**अभ्यर्च्य** = पूजा करके[२]	
इदम् = यह		**मानवः** = मनुष्य	
सर्वम् = समस्त (जगत्)		**सिद्धिम्** = परम सिद्धिको	
ततम् = व्याप्त है*,		**विन्दति** = प्राप्त हो जाता है।	

<u>यही प्रमाण गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में है कि अविनाशी व सबका धारण-पोषण करने वाला व पुरूषोत्तम परमात्मा तो गीता ज्ञान देने वाले से अन्य ही बताया है</u>।

पेश है गीता अध्याय 15 श्लोक 17 की फोटोकॉपी :-

उत्तमः, पुरुषः, तु, अन्यः, परमात्मा, इति, उदाहृतः,
यः, लोकत्रयम्, आविश्य, बिभर्ति, अव्ययः, ईश्वरः ॥ १७ ॥

तथा इन दोनोंसे—

उत्तमः = उत्तम	**बिभर्ति** = सबका धारण-पोषण करता है (एवं)
पुरुषः = पुरुष	
तु = तो	**अव्ययः** = अविनाशी,
अन्यः = अन्य ही है,	**ईश्वरः** = परमेश्वर (और)
यः = जो	**परमात्मा** = परमात्मा
लोकत्रयम् = तीनों लोकोंमें	**इति** = इस प्रकार
आविश्य = प्रवेश करके	**उदाहृतः** = कहा गया है।

❖ गीता अध्याय 18 श्लोक 61 में भी गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य परमेश्वर के विषय में कहा है कि हे अर्जुन! शरीर रूप यंत्र में आरूढ़ हुए सम्पूर्ण प्राणियों को अंतर्यामी परमेश्वर अपनी माया (शक्ति) से (उनके कर्मों के अनुसार) भ्रमण करवाता हुआ सब प्राणियों के हृदय में स्थित है।

<u>इसमें गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य अंतर्यामी परमेश्वर का ज्ञान करवाया है</u>।

पेश है फोटोकॉपी गीता अध्याय 18 श्लोक 61 की :-

ईश्वरः, सर्वभूतानाम्, हृद्देशे, अर्जुन, तिष्ठति,
भ्रामयन्, सर्वभूतानि, यन्त्रारूढानि, मायया॥ ६१॥

क्योंकि—

अर्जुन	=	हे अर्जुन!			(उनके कर्मोंके अनुसार)
यन्त्रारूढानि	=	शरीररूप यन्त्रमें आरूढ़ हुए	**भ्रामयन्**	=	भ्रमण कराता हुआ
सर्वभूतानि	=	सम्पूर्ण प्राणियोंको	**सर्वभूतानाम्**	=	सब प्राणियोंके
ईश्वरः	=	अन्तर्यामी परमेश्वर	**हृद्देशे**	=	हृदयमें
मायया	=	अपनी मायासे	**तिष्ठति**	=	स्थित है।

अब पेश है प्रमाण जिसमें गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 18 के श्लोक 62 में भी अपने से अन्य परमेश्वर की शरण में जाने की राय दी है। कहा है कि हे भारत! (तू) सब प्रकार से उस परमेश्वर की शरण में जा (जिसके विषय में ऊपर कहा है), उस परमात्मा की कृपा से ही तू परम शांति को तथा सनातन परम धाम (अमर लोक/सतलोक) को प्राप्त होगा।

<u>वह परमेश्वर कौन है? उसके विषय में गीता ज्ञान बोलने वाले ने गीता अध्याय 8 श्लोक 3 में बताया है कि वह ''परम अक्षर ब्रह्म'' है</u>।

पेश है फोटोकॉपी गीता अध्याय 18 श्लोक 62 की :-

तम्, एव, शरणम्, गच्छ, सर्वभावेन, भारत,
तत्प्रसादात्, पराम्, शान्तिम्, स्थानम्, प्राप्स्यसि, शाश्वतम्॥ ६२॥

इसलिये—

भारत	=	हे भारत! (तू)	**तत्प्रसादात्**	=	उस परमात्माकी कृपासे (ही तू)
सर्वभावेन	=	सब प्रकारसे			
तम्	=	उस परमेश्वरकी	**पराम्**	=	परम
एव	=	ही	**शान्तिम्**	=	शान्तिको (तथा)
			शाश्वतम्	=	सनातन
शरणम्	=	शरणमें*	**स्थानम्**	=	परम धामको
गच्छ	=	जा।	**प्राप्स्यसि**	=	प्राप्त होगा।

''पवित्र गीता जी के अनुवादकों की अज्ञानता का प्रमाण''

पेश है हिन्दू धर्मगुरू साहेबानों की सरेआम अज्ञानता व शब्दों के अर्थों के अनर्थ का प्रमाण :-

गीता अध्याय 18 श्लोक 66 :- गीता जी के सब अनुवादकों ने गीता अध्याय

18 श्लोक 66 का अनुवाद गलत किया है। इस श्लोक 66 के मूल पाठ में ''व्रज'' शब्द है जिसका अर्थ आना किया है जो गलत है। ''व्रज'' का अर्थ जाना, चले जाना, प्रस्थान करना, एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाना है।

प्रमाण के लिए पेश है फोटोकॉपी ''संस्कृत-हिन्दी कोश'' की जिसके संग्रहकर्ता हैं वामन शिवराम आप्टे :-

संस्कृत-हिन्दी कोश

(दस हजार नये शब्दों तथा लेखक द्वारा संकलित छन्द एवं साहित्यिक तथा भारत के प्राचीन इतिहास में प्राप्त भौगोलिक नामों के परिशिष्टों सहित)

लेखक

वामन शिवराम आप्टे

चौखम्बा विद्याभवन

वाराणसी

(९९३)

व्रज् (भ्वा० पर० व्रजति) 1. जाना, चलना, प्रगति करना, —नाविनीतर्व्रजेद् धुर्यैः—मनु० ४।६७ 2. पधारना, पहुँचना दर्शन करना—मामेकं शरणं व्रज—भग० १८।६६ 3. बिदा होना, सेवा से निवृत्त होना, पीछे हटना 4. (समय का) बीतना—इयं व्रजति यामिनी त्यज नरेन्द्र निद्रारसम्—विक्रम० ११।७४, (यह धातु प्रायः गम् या या धातु की भाँति प्रयुक्त होती है), अनु—, 1. बाद में जाना, अनुगमन करना—मनु० ११।१११ - कु० ७।३८ 2. अभ्यास करना, सम्पन्न करना 3. सहारा लेना, आ—, आना, पहुँचना, परि —, भिक्षु या साधु के रूप में इधर-उधर घूमना, संन्यासी या परिव्राजक हो जाना, प्र—, 1. निर्वासित होना 2. सांसारिक वासनाओं को छोड़ देना, चौथे आश्रम में प्रविष्ट होना, अर्थात् संन्यासी हो जाना—मनु० ६।३८, ८।३६३।

शब्दकोश से स्पष्ट हुआ कि ''व्रज'' माने जाना है।

अन्य प्रमाण :- एस्कोन के संस्थापक श्री प्रभुपाद जी महाराज द्वारा अनुवादित श्रीमद्भगवत गीता के अध्याय 18 श्लोक 66 के अनुवाद से पहले शब्दों के अर्थ लिखे हैं। उनमें तो ''व्रज'' का अर्थ जाओ ठीक लिखा है। परंतु श्लोक 66 के अनुवाद में आओ गलत किया है।

''स्वामी प्रभुपाद जी की गीता अनुवाद में गलती''

प्रमाण के लिए पेश है फोटोकॉपी गीता अध्याय 18 श्लोक 66 की जिसके अनुवादक हैं स्वामी प्रभुपाद जी तथा भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित है :-

गीतोपनिषद्

श्रीमद्भगवद्गीता

यथारूप

संपूर्ण एवं अखण्ड संस्करण

परिवर्धित एवं परिशोधित

मूल संस्कृत पाठ, शब्दार्थ, अनुवाद तथा विस्तृत तात्पर्य सहित

कृष्णकृपामूर्ति

श्री श्रीमद् ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद

संस्थापकाचार्य : अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ

भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट

५५४ श्रीमद्भगवद्गीता यथारूप अध्याय १८

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥ ६६॥

सर्व-धर्मान्–समस्त प्रकार के धर्म; **परित्यज्य**–त्यागकर; **माम्**–मेरी; **एकम्**–एकमात्र; **शरणम्**–शरण में; **व्रज**–जाओ; **अहम्**–मैं; **त्वाम्**–तुमको; **सर्व**–समस्त; **पापेभ्यः**–पापों से; **मोक्षयिष्यामि**–उद्धार करूँगा; **मा**–मत; **शुचः**–चिन्ता करो।

समस्त प्रकार के धर्मों का परित्याग करो और मेरी शरण में आओ। मैं समस्त पापों से तुम्हारा उद्धार कर दूँगा। डरो मत।

तात्पर्य : भगवान् ने अनेक प्रकार के ज्ञान तथा धर्म की विधियाँ बताई हैं—परब्रह्म का ज्ञान, परमात्मा का ज्ञान, अनेक प्रकार के आश्रमों तथा वर्णों का ज्ञान, संन्यास का ज्ञान, अनासक्ति, इन्द्रिय तथा मन का संयम, ध्यान आदि का ज्ञान। उन्होंने अनेक प्रकार से नाना प्रकार के धर्मों का वर्णन किया है। अब, *भगवद्गीता* का सार प्रस्तुत करते हुए भगवान् कहते हैं कि हे अर्जुन! अभी तक बताई गई सारी विधियों का परित्याग करके, अब केवल मेरी शरण में आओ। इस शरणागति से वह समस्त पापों से बच जाएगा, क्योंकि भगवान् स्वयं उसकी रक्षा का वचन दे रहे हैं।

इस फोटोकॉपी में स्पष्ट है कि ऊपर शब्दों के अर्थ में तो ''व्रज'' का अर्थ तो जाना (जाओ) ठीक किया है, परंतु अनुवाद में आना (आओ) कर दिया जिससे गीता के सब ज्ञान का अज्ञान बना दिया। कारण यही रहा कि इन गुरूजनों को श्री कृष्ण से आगे का ज्ञान ही नहीं है। इनको अपने सद्ग्रन्थों का भी ज्ञान नहीं है। इसलिए लिख दिया कि ''मेरी शरण में आ जा।'' गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में ''गच्छ'' शब्द है जिसका अर्थ भी ''जाना'' है, वहाँ ठीक कर दिया।

जब श्लोक 62 में गीता ज्ञान दाता अपने से अन्य उस परमेश्वर (तत् ब्रह्म यानि परम अक्षर ब्रह्म) की शरण में जाने को कह रहा है। श्लोक 66 में अपनी शरण में आने को नहीं कहा है क्योंकि गीता अध्याय 2 श्लोक 7 में अर्जुन ने कहा है कि मैं आपकी शरण हूँ यानि अर्जुन शरण में तो पहले से ही था। फिर यह कहना कि मेरी शरण में आ, न्याय संगत भी नहीं है। यह अध्यात्म ज्ञान का टोटा है।

पेश है लेखक द्वारा किया इस श्लोक का यथार्थ अनुवाद :-

गीता अध्याय 18 श्लोक 66 का यथार्थ अनुवाद :-

सर्वधर्मान् परित्यज्य, माम्, एकम् शरणम् व्रज।
अहम्, त्वा, सर्व पापेभ्यः, मोक्षयिष्यामि, मा, शुचः।।66।।

अनुवाद :- गीता ज्ञान देने वाले ने कहा है कि (सर्वधर्मान् माम्) मेरे स्तर के जितने भी धार्मिक कर्म हैं, उन सबको मुझमें (परित्यज्य) त्यागकर (एकम्) उस एक सर्व शक्तिमान परम अक्षर ब्रह्म की (शरणम्) शरण में (व्रज) जा। (अहम्) मैं (त्वा) तेरे को (सर्व पापेभ्यः) सब पापों से (मोक्षयिष्यामि) मुक्त कर दूँगा (मा शुचः) शोक न कर।

विशेष :- इस श्लोक में एकम् = एक शब्द है। इसका अर्थ एक यानि अद्वितीय परमेश्वर है। गीता अध्याय 13 श्लोक 30 में भी ''एकस्थ'' शब्द है जिसका अर्थ ''उस एक परमात्मा में स्थित'' किया है। जो गीता ज्ञान दाता से अन्य है। गीता अध्याय 13 श्लोक 27-28 तथा 30 में भी गीता ज्ञान देने वाले काल ब्रह्म ने अपने से अन्य परमेश्वर की जानकारी दी है।

कहा है कि :-

गीता अध्याय 13 श्लोक 27 :- (यः) जो साधक (विनश्यत्सु) नष्ट होते हुए (सर्वेषु भूतेषु) सब प्राणियों में (परमेश्वरम्) परमेश्वर यानि परम अक्षर ब्रह्म को (अविनश्यन्तम्) अविनाशी तथा (समम्) समभाव से (पश्यति) देखता है, (सः) वह परमेश्वर को (पश्यति) सही रूप में देखता है यानि वह उस परमेश्वर को ठीक से समझा है।

गीता अध्याय 13 श्लोक 28 में कहा है कि :- (हि) क्योंकि जो साधक (सर्वत्र) सब स्थान पर (समवस्थितम्) समान भाव से स्थित (ईश्वरम्) परमेश्वर

को (समम्) समान (पश्यन्) देखता हुआ (आत्मना) अपने द्वारा (आत्मानम्) अपने को (न हिनस्ति) नष्ट नहीं करता यानि सत्य भाव से उस गीता ज्ञान दाता काल ब्रह्म से अन्य परम अक्षर ब्रह्म को जानकर उसी की भक्ति करके (पराम्) गीता ज्ञान देने वाले काल ब्रह्म से मिलने वाली गति यानि मोक्ष जो गीता अध्याय 8 श्लोक 13 में बताई है, उससे अन्य (गतिम्) परम गति को (याति) प्राप्त होता है। यही प्रसंग गीता अध्याय 13 श्लोक 30 में चला है। कहा है (यदा) ''जिस समय साधक (भूतपृथग्भावम्) प्राणियों के पृथक-पृथक भाव को (एकस्थम्) उस अद्वितीय एक परमात्मा से (एव) ही (विस्तारम्) सब प्राणियों का विस्तार यानि उत्पत्ति (अनुपश्यति) होना देखता है यानि जानता है। (तदा) उस समय (ब्रह्म) उस परमेश्वर को (सम्पद्यते) पूजकर उसी को प्राप्त हो जाता है। इससे सिद्ध हो जाता है कि गीता अध्याय 18 श्लोक 66 में ''एकम् शरणं व्रज'' का अर्थ भी उस परम अक्षर ब्रह्म की शरण में जाओ ही सही है।

''पेश हैं गीता अध्याय 18 श्लोक 66 की अन्य अनुवादकों की फोटोकॉपियाँ''

''श्री रामसुख दास की गीता अनुवाद में गलती''

पेश है गीता अध्याय 18 श्लोक 66 की फोटोकॉपी श्री रामसुखदास जी महाराज के अनुवाद की :-

1562

॥ ॐ श्रीपरमात्मने नमः ॥

गीता-प्रबोधनी

(मोटा टाइप)

स्वामी रामसुखदास

प्रकाशक एवं मुद्रक—

गीताप्रेस, गोरखपुर—२७३००५

(गोबिन्दभवन-कार्यालय, कोलकाता का संस्थान)

फोन : (०५५१) २३३४७२१, २३३१२५०, २३३३०३०

web : gitapress.org e-mail : booksales@gitapress.org

गीताप्रेस प्रकाशन gitapressbookshop. in से online खरीदें।

४३० * गीता-प्रबोधनी *

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥ ६६ ॥

सम्पूर्ण धर्मोंका आश्रय छोड़कर तू केवल मेरी शरणमें आ जा। मैं तुझे सम्पूर्ण पापोंसे मुक्त कर दूँगा, चिन्ता मत कर।

''श्री ज्ञानानंद जी महाराज की गीता अनुवाद में गलती''

पेश है गीता अध्याय 18 श्लोक 66 की फोटोकॉपी श्री ज्ञानानंद महाराज जी के अनुवाद की :-

श्री कृष्ण कृपा

श्रीमद्भगवद्गीता

(पद्यानुवाद सहित)

(गीता ज्ञान सुधा)

(सप्तम संस्करण - 10,000 प्रतियाँ)

निमित्तमात्र :

गीता मनीषी

स्वामी श्री ज्ञानानन्द जी महाराज

पंजीकृत कार्यालय जीओ गीता

GIEO GITA 479 कोहाट एन्कलेव, पीतमपुरा, दिल्ली–34

gieogita@gmail.com, www.gieogita.com

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ।।

सम्पूर्ण धर्मों का आश्रय छोड़कर तू केवल मेरी शरण में आ जा। मैं तुझे सम्पूर्ण पापों से मुक्त कर दूँगा, तू शोक मत कर।

आरोपित धर्म छोड़कर तूँ ये सब,
आ, एक मेरी ही ले शरण अब।
तुझे पापों से मुक्त कर दूँगा मैं,
चिन्ता न कर तूँ किसी भी तरह ।। ६६।।

(192)

''श्री सुधांशु जी महाराज की गीता अनुवाद में गलती''

पेश है गीता अध्याय 18 श्लोक 66 की फोटोकॉपी श्री सुधांशु जी महाराज के अनुवाद की :-

गीतामृत प्रवचन - परम पूज्य श्री सुधांशु जी महाराज

संपादक: डॉ. आशा किरण
सह-संपादक: आचार्य अनिल शास्त्री

मुद्रक: पी. पी. स.,
फोन: 9811671022

प्रकाशक:
विश्व जागृति मिशन
आनंदधाम आश्रम, नांगलोई-नजफगढ़ रोड,
बक्करवाला मार्ग, दिली-110041
दूरभाष: 011-28345656, 28344767
ईमेल: info@sudhanshujimaharaj.net
वेबसाइट: www.sudhanshujimaharaj.net

अध्याय 18 | मोक्षसंन्यासयोग

**सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः॥६६॥**

सभी धर्मों को छोड़कर तू केवल मेरी शरण में आ जा। मैं तुझे सभी पापों से मुक्त कर दूंगा। चिंता मत कर।

श्रीमद्भगवद्गीता | 375

''श्री आशाराम जी महाराज की गीता अनुवाद में गलती''

पेश है गीता अध्याय 18 श्लोक 66 की फोटोकॉपी श्री आशाराम जी महाराज के अनुवाद की :-

श्रीमद् भगवद्गीता

(माहात्म्य–श्लोक–अनुवाद)

महिला उत्थान ट्रस्ट
संत श्री आशारामजी आश्रम
संत श्री आशारामजी बापू आश्रम मार्ग, अहमदाबाद-३८०००५.
फोन : (०७९) २७५०५०१०-११.
आश्रम रोड, जहाँगीरपुरा, सूरत-३९५००५. फोन : (०२६१) २७७२२०१-२.
वन्दे मातरम् रोड, रवीन्द्र रंगशाला के सामने, नई दिल्ली-६०.
फोन : (०११) २५७२९३३८, २५७६४१६१.

अठारहवाँ अध्याय : मोक्षसंन्यासयोग २७३

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥६६॥

सम्पूर्ण धर्मों को अर्थात् सम्पूर्ण कर्तव्यकर्मों को मुझमें त्यागकर तू केवल एक मुझ सर्वशक्तिमान सर्वाधार परमेश्वर की ही शरण में आ जा। मैं तुझे सम्पूर्ण पापों से मुक्त कर दूँगा, तू शोक मत कर। (६६)

''श्री अड़गड़ानंद जी महाराज की गीता अनुवाद में गलती''

पेश है गीता अध्याय 18 श्लोक 66 की फोटोकॉपी श्री अड़गड़ानंद जी महाराज के अनुवाद की :-

।। श्रीमद्भगवद्गीता ।।

।। यथार्थ गीता ।।

मानव-धर्मशास्त्र
प्रत्यक्षानुभूत व्याख्या :
परमपूज्य श्री परमहंस महाराज का कृपा-प्रसाद
स्वामी श्री अड़गड़ानन्द जी
श्री परमहंस आश्रम
ग्राम-पत्रालय- शक्तेषगढ़, जिला-मिर्जापुर, उ०प्र०, भारत
फोन : (०५४४३) २३८०४०
प्रकाशक :
श्री परमहंस स्वामी अड़गड़ानन्दजी आश्रम ट्रस्ट
न्यू अपोलो स्टेट, गाला नं- ५, मोगरा लेन (रेलवे सब वे के पास)
अंधेरी (पूर्व), मुम्बई - ४०००६९

अष्टादश अध्याय ३५३

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः।।६६।।

सम्पूर्ण धर्मों को त्यागकर (अर्थात् मैं ब्राह्मण श्रेणी का कर्त्ता हूँ या शूद्र श्रेणी का, क्षत्रिय हूँ अथवा वैश्य- इसके विचार को त्यागकर) केवल एक मेरी अनन्य शरण को प्राप्त हो। मैं तुझे सम्पूर्ण पापों से मुक्त कर दूँगा। तू शोक मत कर।

''हंसादेश पंथ वालों की गीता अनुवाद में गलती''

पेश है हंसादेश वाले पंथ (श्री सतपाल जी महाराज व श्री प्रेम रावत जी महाराज के आश्रम) से अनुवादित गीता अध्याय 18 श्लोक 66 की फोटोकॉपी :-

श्रीमद्भगवद्गीता

भाव प्रबोधिनि भाषा टीका सहित
अनुवादक
ब्रह्मलीन महात्मा सत्यानन्द (म० सर्वाज्ञानंद)
आदि सम्पादक–हंसादेश
प्रकाशक
मानव उत्थान सेवा समिति
२/१२, पंजाबी बाग नई दिल्ली–११००२६
फोन : ५४३५७३६
मुद्रक–राजेश्वरी फोटो सेटर्स (प्रा.) लि., नई दिल्ली–२६

अथ अष्टादशोऽध्यायः] [१६७

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥

सर्वधर्मों के कर्मों को छोड़कर केवल मेरी ही शरण में आ। मेरी शरणागत रूप धर्म में लग, मैं तुझे सम्पूर्ण पापों से मुक्त कर दूंगा।
।। अ० १८ श्लोक ६६ ।।

विशेष :- उपरोक्त प्रमाणों से स्पष्ट है कि मेरे (लेखक के) अतिरिक्त किसी को भी गीता का ज्ञान नहीं है। सब ने शब्दों के अर्थों का अनर्थ करके ज्ञान का अज्ञान बनाकर जनता को भ्रमित कर रखा है।

➢ उपरोक्त श्लोकों से प्रमाणित हुआ कि गीता ज्ञान देने वाले से अन्य परमेश्वर है जो सृष्टि की उत्पत्तिकर्ता व धारण-पोषणकर्ता परम शांति प्रदान करने वाला है। उसी की शरण में जाने के लिए कहा है। कृपया अन्य गलती जो अनुवादकों ने की है, प्रमाण के लिए देखें गीता अध्याय 8 श्लोक 16 तथा गीता अध्याय 6 श्लोक 23 की फोटोकॉपी :-

(गीता अध्याय 8 श्लोक 16 की फोटोकॉपी)

आब्रह्मभुवनात्, लोकाः, पुनरावर्तिनः, अर्जुन,
माम्, उपेत्य, तु, कौन्तेय, पुनर्जन्म, न, विद्यते॥ १६ ॥

क्योंकि—

अर्जुन	= हे अर्जुन!	**माम्**	= मुझको
आब्रह्मभुवनात्	= ब्रह्मलोकपर्यन्त	**उपेत्य**	= प्राप्त होकर
लोकाः	= सब लोक		
पुनरावर्तिनः	= पुनरावर्ती* हैं,	**पुनर्जन्म**	= पुनर्जन्म
तु	= परंतु	**न**	= नहीं
कौन्तेय	= हे कुन्तीपुत्र!	**विद्यते**	= होता;

गीता अध्याय 6 श्लोक 23 में इसी अनुवादक ने ''विद्यात्'' शब्द का अर्थ ''जानना'' किया है। यदि गीता अध्याय 8 श्लोक 16 में विद्यते का अर्थ जानना कर दिया जाए तो सरलार्थ सही हो जाता है।

(गीता अध्याय 6 श्लोक 23 की फोटोकॉपी)

तम्, विद्यात्, दुःखसंयोगवियोगम्, योगसञ्ज्ञितम्,
सः, निश्चयेन, योक्तव्यः, योगः, अनिर्विण्णचेतसा ॥ २३ ॥

और जो—

दुःखसंयोग-वियोगम्	= दुःखरूप संसारके संयोगसे रहित है (तथा)	**योगः**	= योग
योगसञ्ज्ञितम्	= जिसका नाम योग है,	**अनिर्विण्णचेतसा**	= न उकताये हुए अर्थात् धैर्य और उत्साहयुक्त चित्तसे
तम्	= उसको		
विद्यात्	= जानना चाहिये।	**निश्चयेन**	= निश्चयपूर्वक
सः	= वह	**योक्तव्यः**	= करना कर्तव्य है।

गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में उसी परम अक्षर ब्रह्म का वर्णन है।

गीता ज्ञान दाता ने कहा है :-

(उत्तमः पुरूषः तु अन्यः) पुरूषोत्तम यानि सर्वश्रेष्ठ प्रभु तो मेरे से अन्य ही है, (यः) जो (परमात्मा इति उदाहृतः) परमात्मा इस प्रकार कहा गया है कि (यः) जो (लोकत्रयम्) तीनों लोक में (आविश्य) प्रवेश करके (बिभर्ति) सबका धारण-पोषण करता है तथा (अव्ययः) अविनाशी (ईश्वरः) परमेश्वर है।

{ध्यान रहे :- गीता अध्याय 8 श्लोक 8, 9, 10, 20-23 में तथा गीता अध्याय 18 श्लोक 61, 62 तथा 66 में भी इसी परम अक्षर ब्रह्म की महिमा है। कहा कि जो परम अक्षर ब्रह्म (सर्वस्य धातारम्) सबका धारण-पोषण करने वाला है, उस (परमम् दिव्यम् पुरूषम्) परम दिव्य पुरूष यानि सच्चिदानंद घन ब्रह्म (परमेश्वर) को भजता है, उसी को प्राप्त होता है। ''जो गीता ज्ञान दाता से उत्तम है यानि पुरूषोत्तम है। वह तो अन्य है।''}

❖ गीता ज्ञान देने वाले ने गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में उसी परम अक्षर ब्रह्म की शरण में जाने को कहा है।

❖ उस (परम अक्षर ब्रह्म) की भक्ति का मंत्र गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में बताया है :-

कहा है कि :- ॐ, तत्, सत्, इति, निर्देशः, ब्रह्मणः, त्रिविद्यः स्मृतः।
ब्राह्मणाः, तेन वेदाः, च यज्ञाः च विहिता पुराः।।

अर्थात् सच्चिदानंदघन ब्रह्म यानि परम अक्षर ब्रह्म की भक्ति का ॐ तत् सत् यह मंत्र है, इसका तीन विधि से स्मरण कहा है। सृष्टि के आदि में यानि सत्ययुग के आदि (शुरू) में विद्वान पुरूष (जो ज्ञान मैं अब गीता रूप में बता रहा हूँ) इसी आधार से अपनी धार्मिक क्रिया किया करते थे। उसी

परमेश्वर ने वेद व यज्ञ तथा ब्राह्मणों की उत्पत्ति की यानि (यज्ञों) धार्मिक अनुष्ठानों का यथार्थ ज्ञान यानि तत्त्वज्ञान उस (ब्रह्मणः) सच्चिदानंदघन ब्रह्म ने बताया है।

जिसका विशेष प्रमाण :- गीता अध्याय 4 श्लोक 32 :-

एवम् बहुविधाः यज्ञाः वितताः ब्रह्मणः मुखे।
कर्मजान् विद्धि तान् सर्वान् एवम् ज्ञात्वा, विमोक्ष्यसे।।

अर्थात् (ब्रह्मणः) सच्चिदानंदघन ब्रह्म यानि परम अक्षर ब्रह्म ने (मुखे) अपने मुख कमल से जो वाणी बोली, उस वाणी में बहुत प्रकार के (यज्ञाः) धार्मिक अनुष्ठानों की जानकारी दी है। जो साधना बताई है, वह कर्म करते-करते की जा सकती है, वह सूक्ष्मवेद यानि तत्त्वज्ञान है। उसको जानकर तू कर्म बंधन से सर्वथा मुक्त हो जाएगा यानि पूर्ण मोक्ष प्राप्त करेगा।

{सावधान :- गीता अध्याय 4 श्लोक 32 में ''ब्रह्मणः'' शब्द है, इसका अर्थ मेरे अतिरिक्त सब अनुवादकों ने गलत किया है। ब्रह्मणः का अर्थ वेद किया है, जबकि इन्हीं अनुवादकों ने गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में ''ब्रह्मण'' का अर्थ सच्चिदानंदघन ब्रह्म यानि परम अक्षर ब्रह्म किया है जो सही है।}

☛ इससे सिद्ध हुआ कि सूक्ष्मवेद यानि सम्पूर्ण अध्यात्म ज्ञान जिसे तत्त्वज्ञान कहा जाता है। वह परम अक्षर ब्रह्म ने कहा है।

☛ ध्यान रहे :- गीता ज्ञान देने वाले को उस तत्त्वज्ञान की जानकारी नहीं है। इसीलिए तो गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में किसी तत्त्वदर्शी संत से जानने को कहा है। सूक्ष्मवेद मुझ दास (रामपाल दास) के पास है। जिसमें लिखा है कि परम अक्षर ब्रह्म यानि सत्यपुरूष ने यह तत्त्वज्ञान (सूक्ष्मवेद) गीता ज्ञान दाता क्षर पुरूष यानि क्षर ब्रह्म जिसे काल ब्रह्म भी कहा जाता है, के अन्तःकरण (आत्मा) में भेजा था। (E-mail किया था।) उसने अपने श्वासों द्वारा बाहर निकालकर पढ़ा। इसने देखा कि इसमें परम अक्षर ब्रह्म का ज्ञान है वहाँ का सुख तथा यहाँ काल लोक का दुःख लिखा है। इसने विचार किया कि यदि मेरे इक्कीस ब्रह्मंडों में रहने वाले प्राणियों को सत्यलोक के सुख का तथा उसमें जाने वाली भक्ति का पता चला तो सब भाग जाएँगे। मेरी क्षुधा कैसे शांत होगी। इस डर से इसने वह ज्ञान सूक्ष्मवेद से निकाल दिया, शेष ज्ञान समुद्र में छुपा दिया।

सूक्ष्मवेद के अनुसार :- सागर मंथन के समय चार वेद निकले, वे ब्रह्मा जी ने पढ़े। फिर यही वेद ज्ञान काल ब्रह्म ने ब्रह्मा का रूप धारण करके सूर्यदेव को बताया। सूर्य ने अपने पुत्र ऋषि स्वंभू मनु को चारों वेदों वाला ज्ञान बताया। वह सत्ययुग का समय था। फिर इस काल ने ब्रह्मा रूप धारण करके सूर्य ऋषि को बताया। गीता अनुसार गीता ज्ञान देने वाले काल ब्रह्म ने वेद ज्ञान सूर्य से कहा। सूर्य ने अपने पुत्र मनु को बताया, मनु ने अपने

पुत्र इक्ष्वाकू को बताया। फिर कुछ राज ऋषियों ने सुना।

☛ चार युग :- 1. सत्ययुग जो 17 लाख 28 हजार वर्ष का समय है।

2. त्रेता युग जो 12 लाख 96 हजार वर्ष का समय है।

3. द्वापर युग जो 8 लाख 64 हजार वर्ष का समय है।

4. कलयुग जो 4 लाख 32 हजार वर्ष का समय है।

❖ विशेष :- इससे दास यह सिद्ध करना चाहता है कि जिस समय श्रीमद्भगवत गीता का ज्ञान अर्जुन को बताया, उस समय सत्ययुग, त्रेतायुग पूरे जा चुके थे तथा द्वापर युग मात्र सौ वर्ष शेष था। वेद ज्ञान काल ब्रह्म ने सूर्य देव को दिया। सूर्य ने (अपने पुत्र वैवस्वत) मनु जी को सत्ययुग के प्रारंभ में दिया। उस समय पुराणों की रचना नहीं हुई थी। केवल वेदों के ज्ञान के आधार से ऋषिजन साधना करते थे जिसका प्रमाण गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में भी है। कहा है कि सच्चिदानंदघन ब्रह्म के स्मरण का ॐ, तत् व सत् तीन मंत्र का जाप है जो तीन प्रकार से किया जाता है। सृष्टि की आदि में ब्राह्मण यानि भक्तजन इसी ज्ञान के अनुसार यज्ञ आदि अनुष्ठान किया करते।

कृपया ध्यान दें :- गीता का ज्ञान वेद ज्ञान से सत्ययुग के शुरू में ब्रह्मा व मनु को मिला था। उससे 38 लाख 87 हजार 9 सौ वर्ष पश्चात् कहा गया जो लगभग एक लाख वर्ष तक यथारूप में रहा। उसके पश्चात् मनमाना आचरण प्रारंभ हो गया था। (प्रमाण आगे बताया है।)

❖ यह भी याद रखें कि गीता अध्याय 4 श्लोक 1-2 में गीता ज्ञान दाता ने कहा कि हे अर्जुन! यह अविनाशी योग यानि यथार्थ भक्ति की जानकारी वाला ज्ञान अर्थात् वेद ज्ञान मैंने सूर्य से कहा था। सूर्य ने अपने पुत्र मनु से कहा, मनु ने अपने पुत्र इक्ष्वाकू राजा से कहा। उसके बाद यह ज्ञान राज ऋषियों ने परंपरा से जाना, किंतु बाद में वह योग यानि भक्ति का ज्ञान (नष्ट:) नष्ट हो गया था यानि लुप्त प्रायः हो गया था। इससे स्पष्ट होता है कि सत्ययुग में लगभग एक लाख वर्ष तक (जो वर्तमान में गीता ज्ञान है) वेद ज्ञान के आधार से साधना की जाती रही।

उसके पश्चात् मनमाना आचरण शुरू हो गया था क्योंकि राजा इक्ष्वाकू का परपौत्र नाभी राज हुआ जो अयोध्या का राजा था तथा अंतिम कुलकर यानि कुल की मर्यादा का पालन करने वाला अर्थात् वेद ज्ञान अनुसार साधक था। उसके बाद नाभी राज का पुत्र राजा ऋषभदेव हुआ जो जैन धर्म का प्रथम तीर्थकर हुआ जिसने शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण करके साधना की।

प्रश्न 6 :- पुराण कैसे बने?

उत्तर :- कृपया ध्यान दें! यह वेद ज्ञान यानि जो गीता में बताया गया है। सत्ययुग के प्रारंभ में यानि लगभग एक लाख वर्ष सत्ययुग बीत जाने के बाद ही समाप्त हो गया था।

प्रमाण :- ''जैन संस्कृति कोष'' नामक पुस्तक जिसके लेखक हैं :- प्रोफेसर भागचन्द्र जैन भास्कर, सन्मति प्राच्य शोध संस्थान, नागपुर कला एवं धर्म शोध संस्थान, वाराणसी। प्रकाशक - डॉ प्रेमशंकर द्विवेदी, डॉ भागचन्द्र जैन भास्कर के पृष्ठ 176 पर लिखा है कि इक्ष्वाकू के वंश में राजा नाभी राज हुए, उनके पुत्र ऋषभ देव जी हुए जो अयोध्या के राजा थे। ऋषभदेव राज त्यागकर एक वर्ष तक निराहार रहे यानि कुछ नहीं खाया। फिर जंगल में चले गए, एक हजार वर्ष तक घोर तप किया जो जैन धर्म के प्रथम तीर्थकर हुए। इसके पश्चात् धर्मदेशना (नाम-दीक्षा) देने लगे। प्रथम धर्मदेशना (दीक्षा) अपने पौत्र (भरत के पुत्र) मरीचि को दी। इसी मरीचि को वैदिक धर्म का प्रवर्तक माना जाता है। यही आत्मा आगे चलकर जैन धर्म का 24वां तीर्थकर महाबीर जैन बना। जिस साधना को श्री ऋषभदेव जी करते थे, वही साधना अपने प्रथम शिष्य मरीचि को दी।

आगे पढ़ोगे मरीचि यानि महाबीर जैन की दुर्गति का प्रमाण। इससे स्पष्ट है कि मनु के पुत्र इक्ष्वाकू, इक्ष्वाकू के परपौत्र नाभी राज, नाभी राज के पुत्र ऋषभ देव। ऋषभ देव जी ने सब साधना वेद विरूद्ध की यानि वेद ज्ञान की कमी स्पष्ट है। गीता चारों वेदों का सार है। गीता अध्याय 17 श्लोक 1-6 में घोर तप को मनमाना शास्त्र विरूद्ध साधना कहा है। ऐसे व्यक्तियों को जो मन कल्पित घोर तप को तपते हैं, असुर स्वभाव के जान। उनको घोर नरक में डाला जाता है। फिर और नीची योनियों भूत-पित्तर की, पशु-पक्षियों की योनि में जाता है।

गीता अध्याय 17 श्लोक 5 :- जो मनुष्य शास्त्रविधि से रहित (केवल मनमाना जो वेदों व गीता शास्त्रों में नहीं कहा है, उस) घोर तप को तपते हैं तथा दंभ और अहंकार से युक्त कामना, आसक्ति बल के अभिमान से भी युक्त हैं।

गीता अध्याय 17 श्लोक 6 :- शरीर रूप से स्थित भूत समुदाय को शरीर में असँख्यों सूक्ष्म जीव हैं, उन प्राणियों को और अन्तःकरण में स्थित मुझको कृश करने वाले यानि अधिक कष्ट देने वाले हैं। उन अज्ञानियों को तू आसूर (राक्षस) स्वभाव वाले जान।

ऋषियों ने मनमाना आचरण तथा कुछ वेद के आधार से ओम् का जाप किया तथा हठ योग, घोर तप किया, समाधियाँ लगाई। अपनी-अपनी साधना का अनुभव बताना शुरू किया। शिष्य बनाने लगे। उनको जो ज्ञान ब्रह्मा जी से सुना था, वह तथा कुछ अपना अनुभव हुआ, उसको मिलाकर पुराणों की रचना की। जो महाभारत युद्ध के बाद व्यास जी ने चारों वेदों, अठारह पुराणों वाला ज्ञान, महाभारत ग्रन्थ, जिसमें श्रीमद्भगवत गीता भी लिखी है तथा श्रीमद्भागवत यानि सुधा सागर (जो राजा परीक्षित को ऋषि सुखदेव ने सात दिन कथा सुनाई थी, वह ज्ञान श्रीमद्भागवत नाम से जाना जाता है) इन

सबको लिपिबद्ध किया (कागज पर लिखा)। जो आज आपके कर कमलों में हैं।

विशेष :- ऋषियों ने एक-दूसरे से सुना ज्ञान बताया, जिससे पवित्र पुराणों की रचना हुई। इसका प्रमाण आप देखें व पढ़ेंगे इसी पुस्तक के पृष्ठ 192 पर जहाँ शिव महापुराण की विद्यवेश्वर संहिता के अध्याय 12 श्लोक 1-54 की फोटोकॉपी लगी है। वक्ता ऋषि सूत जी हैं जो व्यास ऋषि का शिष्य है। कहा है कि मैंने जैसा व्यास जी से सुना, वैसा कहता हूँ। इससे सिद्ध है कि पुराणों का ज्ञान लोक वेद है, कहा-सुना यानि दंत कथा है।

प्रश्न 7 :- वेद, गीता तथा अठारह पुराणों का ज्ञान एक समान हुआ, क्योंकि ऋषियों ने भी वेदों को पढ़ा, फिर भक्ति की। अपना अनुभव बताया जो पुराण कहे जाते हैं।

उत्तर :- वेदों व पुराणों का ज्ञान एक समान नहीं है। पुराणों में कुछ ज्ञान वेदों का है, शेष ऋषियों के घर का है जो व्यर्थ है।

उदाहरण :- मार्कण्डेय पुराण :- अध्याय ''रौच्य ऋषि की उत्पत्ति कथा'' पृष्ठ 250 पर कहा है कि :-

एक रूची ऋषि था जो वेदों को पढ़ता था। उसने विचार किया कि मनुष्य जीवन मोक्ष प्राप्ति के लिए मिला है। इसलिए उसने न विवाह करवाया, न आश्रम का निर्माण किया। वेदों को जैसा समझा, उसी अनुसार साधना करता था। उसकी आयु 40 वर्ष हो गई थी। एक दिन उस रूची ऋषि के पिता, पितामह तथा परपितामह तथा परपितामह का पिता यानि तीन दादा जी एक पिता आकाश में दिखाई दिए। बोले बेटा रूची! तूने विवाह क्यों नहीं करवाया? हमारे श्राद्ध कर्म, पिण्डदान क्यों नहीं कराया। बेटा! हम पित्तर बने हैं। हमारे कर्मकांड करो।

रूची ऋषि बोला! हे पिता, पितामहे! वेद में कर्मकांड को अविद्या कहा है यानि मूर्खों का कर्म बताया है, यह नहीं करना चाहिए।

पित्तर बोले बेटा! यह सत्य है कि वेदों में कर्मकांड (भूत पूजा, पित्तर पूजा, देव पूजा) को अविद्या कहा है। आप जिस मार्ग पर लगे हो, यह मोक्ष मार्ग है। बेटा! हम बहुत दुःखी हैं, हमारा कर्मकांड कर, विवाह करवाओ। चारों पित्तर भी ऋषि थे। इन्होंने वेद विरूद्ध भक्ति की। जिस कारण से पित्तर योनि में कष्ट उठा रहे थे। अपना जीवन नष्ट किया, अपने बच्चे को सुमार्ग छुड़वाकर कुमार्ग में धकेल दिया। रूची ऋषि ने विवाह करवाया। एक पुत्र हुआ, उसका ''रौच्य'' नाम रखा।

सार :- रूची ऋषि ने कहा कि कर्मकांड यानि पित्तर पूजा, भूत पूजा, देव पूजा को वेद में गलत बताया है। पित्तर भी ऋषि थे। वेद याद कर रखे थे, पढ़ते थे। वे तुरंत मान गए कि वेद में ऐसा ही लिखा है।

यह जो वेद ज्ञान है, यह वेदों से लिया सत्य है, परंतु कर्मकांड ऋषियों के घर का है। नरक का मार्ग है। यह हमने नहीं करना है।

गीता अध्याय 9 श्लोक 25 में वेद ज्ञान इस प्रकार है :- देवताओं को पूजने वाले देवताओं को प्राप्त होते हैं। पित्तरों को पूजने वाले (श्राद्ध, पिंडदान आदि करना) पित्तरों को प्राप्त होते हैं यानि पित्तर बनते हैं। भूतों को पूजने वाले (तेरहवीं, महीना वाली क्रिया, अस्थि उठाकर गंगा में प्रवाह करना, श्राद्ध आदि करना) भूतों को प्राप्त होते हैं यानि प्रेत बनते हैं। मेरा पूजन करने वाले मुझे ही प्राप्त होते हैं। (गीता अध्याय 9 श्लोक 25)

जैन संस्कृति कोष पुस्तक के पृष्ठ 176 पर लिखा है कि राजा नाभी राज अंतिम कुलकर थे। कुलकर का अर्थ है जो अपने कुल की मर्यादा के अनुसार धर्म करता है। नाभि राज इक्ष्वाकू वंशी था। वेदों अनुसार साधना करता था। वह अंतिम था। उसके पश्चात् उनके पुत्र ऋषभदेव जी ने वेद के विरूद्ध मनमाना आचरण प्रारंभ किया। एक वर्ष तक निराहार रहा तथा एक हजार वर्ष तक घोर तप किया। इससे सिद्ध हुआ कि ऋषिजन नाभी राज के पश्चात् उसी इक्ष्वाकू कुल में ऋषभदेव हुए जो नाभी राज के पुत्र थे। वे उसी समय से ही शास्त्र विधि त्यागकर मनमाना आचरण करने लगे थे।

इस पुस्तक के लेखक प्रोफेसर भागचन्द्र जैन भास्कर जी हैं तथा प्रकाशक डॉ. प्रेमशंकर द्विवेदी व डॉ. भागचन्द्र भास्कर हैं।

इस पुस्तक के पेज नं. 175 से कुछ अंश इस प्रकार है :-

इस तरह ऋषभदेव के विषय में निष्कर्ष रूप कह सकते हैं :- ऋषभ के पौत्र मरीचि (भरत के पुत्र) को पुराण में वैदिक धर्म का प्रवर्तक माना गया है। यही मरीचि जैन परंपरा में आगे चलकर महावीर वर्धमान बना।

पेज नं. 175-177 से कुछ अंश जो इस प्रकार है :-

जैन धर्म का विकास-इतिहास

तीर्थंकर ऋषभदेव की जीवन घटनाएँ :- तीर्थंकर ऋषभदेव अंतिम कुलकर नाभिराज के पुत्र थे। उनकी माता मरूदेवी थी। वे इक्ष्वाकूवंशी नाभिराज अयोध्या के एक लोकप्रिय राजा थे। तरूण होने पर नाभिराज ने ऋषभदेव का विवाह सुनंदा और सुमंगला से कर दिया। सुनंदा ने तेजस्वी पुत्र बाहुबली और पुत्री सुंदरी को जन्म दिया और सुमंगला ने भरत सहित 99 पुत्रों और ब्राह्मी पुत्री को जन्म दिया।

समय आने पर ऋषभदेव ने भरत को अयोध्या का, बाहुबली को तक्षशिला का और शेष युवराजों को उनकी योग्यतानुसार राज्य सौंपकर संसार त्याग दिया और दीक्षा लेकर साधना में लीन हो गये। साधना काल में पाणि पात्री ऋषभदेव एक वर्ष तक निराहार रहे। बाद में बाहुबली के पौत्र श्रेयांस कुमार ने इक्षुरस देकर उनकी इस निराहार-वृत्ति को तोड़ा। लगातार एक हजार वर्ष तक तपस्या करने वाले मुनि ऋषभदेव ने अंत में केवलज्ञान प्राप्त किया

और धर्मदेशना प्रारंभ की। प्रथम धर्मदेशना भरत के पुत्र मरीचि को दी जो बाद में चौबीसवें तीर्थंकर महावीर बने।

प्रमाण के लिए पेश है जैन संस्कृति कोश के मुख्य पृष्ठ तथा पृष्ठ 175-177 की फोटोकॉपी :-

Encyclopaedia of Jainism

जैन संस्कृति कोश

प्रथम भाग

जैन इतिहास, संस्कृति, कला एवं पुरातत्त्व

प्रो० भागचन्द्र जैन 'भास्कर'

प्रकाशक

डॉ. प्रेमशंकर द्विवेदी
(मानद निदेशक)
कला एवं धर्म शोध संस्थान
बी. ३३/३३, ए-१, न्यू साकेत कालोनी
बी. एच. यू., वाराणसी -२२१००५
फोन नं. ०५४२-३१०६८२

डॉ. भागचन्द्र जैन भास्कर
(मानद निदेशक)
सन्मति प्राच्य शोध संस्थान
न्यू एक्स्टेंशन एरिया, १३, तुकाराम चाल,
सदर, नागपुर -४४०००१
फोन नं. ०७१२-५४१७२६

प्राप्ति स्थान

कला प्रकाशन
बी. ३३/३३, ए-१, न्यू साकेत कालोनी
बी. एच. यू., वाराणसी -२२१००५
फोन नं. ०५४२-३१०६८२

आलोक प्रकाशन
न्यू एक्स्टेंशन एरिया, १३, तुकाराम चाल,
सदर, नागपुर -४४०००१
फोन नं. ०७१२-५४१७२६

सम्यग्ज्ञान और ब्रह्मचर्य, वीतराग, परिमोक्ष, यति आदि शब्द उस समय के दिगम्बर यति मुनियों का आभास दे रहे हैं।

रामायण में श्रमण शब्द का प्रयोग अनेक बार हुआ है जो स्पष्ट रूप से जैनों के लिए दिखाई देता है (रामा. ४.१८.३३; २.६३.४८; २.६३.५)। महाभारत (शान्तिपर्व. ३४.७) में ही शालावृक नामक जैन यति के ६६००० अनुयायियों को इन्द्र द्वारा मारे जाने का उल्लेख है। उस संघ में से मात्र तीन यति बच गये थे-- पृथुरश्मि, वृहद्गिरा और रायोवाज। उसी समय एक लौक्य वृहस्पति जिन यति का भी उल्लेख है। यहां यह उल्लेखनीय है कि इस काल तक वातरशना जैन मुनियों का उल्लेख ''यति'' रूप में भी होने लगा था।

पुराणों में कहा गया है कि बारहवें देवासुर संग्राम के बाद ''नहुषानुज'' रजि देवेन्द्र हुआ। इन्द्र रजि को पितृतुल्य मानता था। रजिपुत्रों को यह सह्य नहीं हुआ। दोनों के बीच संघर्ष चला। इन्द्र ने लौक्य वृहस्पति के माध्यम से रजि को जिनधर्म में दीक्षित किया। इस घटना का उल्लेख हरिवंश पुराण (१.२८.३०-३२), मत्स्यपुराण (२४.४२-४८), विष्णुपुराण (३.१७.४१-४२; ३.१८.७.१२) और देवी भागवत पुराण (४.१३.५२-५६) में भी आया है। विष्णुपुराण में अर्हत् को महामोह और नग्न बताया गया है।

महाभारत के कपिलस्यूयरश्मि संवाद (शान्तिपर्व, २६८-२७०) से उक्त घटना की पुष्टि होती है। यहां कपिल संज्ञक विद्वान जैनधर्म के निवृत्ति मार्ग का उपदेश देते हुए दिखाई देते हैं। वहीं इन्द्र के हिंसामय यज्ञ की चर्चा हुई और वसु द्वारा उसके समर्थ का उल्लेख मिला। बाद में अहिंसा धर्म का प्रचारक भी विष्णु को माना गया। इसी संदर्भ में वृहस्पति अंगिरस, वसु का अहिंसामय यज्ञ (महाभारत ३३७ शान्तिपर्व.) का उल्लेख मिलता है (तीर्थंकर का इतिहास-डॉ० कुंवरलाल जैन, दिल्ली १९९३)।

इस तरह ऋषभदेव के विषय में निष्कर्ष रूप कह सकते हैं--

१) ऋषभ के पौत्र मरीचि (भरत के पुत्र) को पुराण में वैदिक धर्म का प्रवर्तक माना गया है। यही मरीचि जैन परम्परा में आगे चलकर महावीर वर्धमान बना।

२) प्रवृत्ति से निवृत्ति की ओर दृष्टि थी। निवृत्ति लक्ष्य रहता था। जैनों ने निवृत्ति प्रधान बना लिया और वैदिको ने प्रवृत्ति में अधिक समरसता दिखाई।

३) निवृत्ति का चरम लक्ष्य वीतरागत्व था जिसे दिगम्बरों ने बनाये रखा। श्वे. परम्परा प्रवृत्ति के प्रति उन्मुख रही।

४) जीवन के ये दो मार्ग हैं जो वैदिक और श्रमण संस्कृति के प्रतीक हैं। ये दोनों एक दूसरे के परिपूरक हैं।

५) दोनों परम्पराओं में आदान-प्रदान भी बना रहा। जैन पुराणों में वर्णित क्षत्रिय वसु (उपरिचर) के आख्यान से स्पष्ट है कि उसने हिंसामय यज्ञ का समर्थन किया और उसी तरह वैदिक ब्राह्मण नारद ने हिंसा का विरोध किया तथा अन्य ब्राह्मण ऋषि पर्वत ने हिंसा का समर्थन किया।

६) आर्य वस्तुतः किसी जाति का नाम नहीं था। वह तो एक विशेषण था।

पौराणिक परम्परा में प्रतिबिम्बित तीर्थंकर ऋषभदेव की परम्परा को जैन परम्परा के साथ रखा जा सकता है। जैन पुराणकारों में आचार्य जिनसेन एक सशक्त हस्ताक्षर हैं। उन्होंने आदिपुराण के द्वितीय अध्याय में तीर्थंकर ऋषभदेव को प्रणामकर उनकी परम्परा का आख्यान किया है और इस परम्परा को तीर्थंकर महावीर और उनके गणधर गौतम स्वामी, उनसे प्रश्नकर्ता श्रेणिक और श्रेणिक की प्रशंसा करने वाले ऋषिगणों से जोड़ा है। ऋषिगण ने जो गणधर स्तोत्र कहा है उसमें और उसके पूर्व 'इमे तपोधना दीप्ततवसो वातवल्कलाः (२.१८) 'तथा मुनयो वातरशनाः' (२.६४) जैसे पद्यों का उल्लेख किया जा सकता है जो वेदों और पुराणों में प्रयुक्त हुए हैं। ये पद निस्सन्देह हमारी जैन परम्परा को समाहित किये हुए हैं। इस सन्दर्भ में आदिपुराण का विशेष अध्ययन किया जाना अपेक्षित है।

२. जैनधर्म का विकास-इतिहास

पिछले अध्याय में हमने जैनधर्म की मूल विशेषताओं की ओर संकेत करते हुए उसके उद्भव का उल्लेख किया था और उसके आद्य तीर्थंकर ऋषभदेव के योगदान की चर्चा की थी। यहां हम संक्षेप में जैनधर्म के विकासात्मक इतिहास की चर्चा करेंगे। इस क्रम में सर्वप्रथम हम तीर्थंकर ऋषभदेव और अरिष्टनेमि के जीवन वृत्तान्त पर दृष्टिपात कर लें।

तीर्थंकर ऋषभदेव की जीवन घटनाएँ

तीर्थङ्कर ऋषभदेव अन्तिम कुलकर नाभिराज के पुत्र थे। उनकी माता मरुदेवी थीं। वे ईक्ष्वाकुवंशी नाभिराज अयोध्या के एक लोकप्रिय राजा थे। तरुण होने पर नाभिराज ने ऋषभदेव का विवाह सुनन्दा और सुमंगला से कर दिया। सुनन्दा ने तेजस्वी पुत्र बाहुबली और पुत्री सुन्दरी को जन्म दिया और सुमंगला ने भरत सहित ९९ पुत्रों और ब्राह्मी पुत्री को जन्म दिया।

समय आने पर ऋषभदेव ने भरत को अयोध्या का, बाहुबली को तक्षशिला का और शेष युवराजों को उनकी योग्यतानुसार राज्य सौंपकर संसार त्याग दिया और दीक्षा लेकर साधना में लीन हो गये। साधनाकाल में पाणिपात्री ऋषभदेव एक वर्ष तक निराहार रहे। बाद में बाहुबली के पौत्र श्रेयांस कुमार ने इक्षुरस देकर उनकी इस

निराहारवृत्ति को तोड़ा। लगातार एक हजार वर्ष तक तपस्या करनेवाले मुनि ऋषभदेव ने अन्त में केवलज्ञान प्राप्त किया और धर्मदेशना प्रारम्भ की। प्रथम धर्मदेशना भरत के पुत्र मारीचि को दी, जो बाद में चौबीसवें तीर्थङ्कर महावीर बने। इसी तरह ब्राह्मी और सुन्दरी ने भी तीर्थङ्कर ऋषभदेव से दीक्षा ले ली। भरत के अन्य ९८ भाइयों ने भी जिन दीक्षा लेकर अपना आत्मकल्याण किया।

इधर भरत चक्रवर्ती में सम्राट बनने की प्रबल आकांक्षा जागी। उन्होंने आत्मसमर्पित होने के लिए सभी नरेशों के पास दूत भेजे। महाबली बाहुबली को छोड़कर सभी नरेशों ने भरत का आधिपत्य स्वीकार कर लिया। व्यर्थ में प्राणीहिंसा न हो इस दृष्टि से दोनों भाइयों के बीच जलयुद्ध, दृष्टियुद्ध और मल्लयुद्ध हुआ। उनमें बाहुबली विजयी हुए। भरत ने अपनी पराजय से क्रुद्ध होकर बाहुबली के ऊपर चक्र चलाया, पर वह बाहुबली का घात किये बिना ही वापिस आ गया। सगोत्रज और चरम शरीरी का वह वध नहीं करता। यह देखकर भरत लज्जित हुए तथा बाहुबली को साम्राज्य-लिप्सा से ग्लानि हुई। फलतः उन्होंने राज्य त्यागकर जिन दीक्षा ले ली और कठोर तप किया। बाद में केवलज्ञान प्राप्त कर निर्वाण भी प्राप्त किया।

भरत-बाहुबली युद्ध की ये सारी घटनायें पोदनपुर में हुई थीं जिसकी अवस्थिति आज भी विवादास्पद बनी हुई है। अधिक सम्भावना यही है कि यह पोदनपुर उत्तर में होना चाहिए।

जहाँ तक आदिनाथ ऋषभदेव के सांस्कृतिक अवदान का प्रश्न है, वे एक संस्कृति विशेष के पुरोधा तो थे ही, साथ ही उन्होंने मानव को सामाजिकता का पाठ भी पढ़ाया। भोगभूमि से कर्मभूमि की ओर आने का समय एक संक्रान्ति काल था और संक्रान्ति काल के वातावरण को अपने अनुरूप बनाना सरल नहीं था। ऋषभदेव ने इस दुरूह कार्य को सरल बना दिया। असि, मसि, कृषि, वाणिज्य-विद्या और शिल्प की शिक्षा के साथ ही चौसठ या बहत्तर कलाओं का अध्ययन भी उनके योगदान के साथ जुड़ा हुआ है। समाज ने इन सारी कलाओं को समरसतापूर्वक आत्मसात किया और परस्परोपग्रहो जीवानाम् के आधार पर अहिंसा और अपरिग्रह की चेतना को नया स्वर दिया। अस्तित्व के प्रश्न को जितनी सुदृढ़ता के साथ यहाँ समाधानित किया गया है वह अपने आप में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। सह-अस्तित्व और सहभागिता पर आधारित जैनधर्म को प्रस्थापित करने का श्रेय तीर्थङ्कर ऋषभदेव को ही जाता हैं। उनके द्वारा प्रवेदित सूत्र ही उत्तरकालीन जैनधर्म की आधारशिला रहे है। दण्ड-व्यवस्था, राज-व्यवस्था, विवाह-प्रथा, व्यवसाय, खाद्य समस्या का हल, शिक्षा, कला और शिल्प आदि क्षेत्रों में उन्होंने नयी व्यवस्था को जन्म दिया।

''हिन्दू साहेबान! नहीं समझे गीता, वेद, पुराण''

वेदों वाली साधना यानि जो श्रीमद्भगवत गीता के रूप में द्वापर के अंत में बताई है, यह सत्ययुग के लगभग एक लाख वर्ष बीत जाने पर नष्ट हो गई थी यानि लुप्त हो गई थी। ऋषिजन व अन्य साधक मनमाना आचरण करने लग गए थे जो गीता अध्याय 16 श्लोक 23 में व्यर्थ कहा है।

प्रमाण :- राजा ऋषभ देव व मरीचि।

राजा नाभि राज के पुत्र राजा ऋषभ देव राज त्यागकर मनमाना आचरण करने लगे। एक वर्ष तक निराहार रहे। (भूखे रहे यानि बिल्कुल खाना नहीं खाया)। उनके पुत्र बाहुबली के पौत्र (Grandson) श्रेयांस ने उनका व्रत खुलवाया। फिर एक हजार वर्ष तक घोर तप किया। उसके पश्चात् धर्मदेशना (दीक्षा) देनी प्रारंभ की। प्रथम धर्मदेशना अपने पौत्र (भरत के पुत्र) मरीचि को दी। यही मरीचि वाली आत्मा जैन धर्म के चौबीसवें तीर्थंकर महावीर वर्धमान हुए। ऋषभदेव जी एक वर्ष निराहार रहे। फिर जंगल में जाकर एक हजार वर्ष तक तप किया। मरीचि ने वही साधना की जो उनके गुरू व दादा जी ऋषभ देव ने स्वयं की थी तथा वही मरीचि को बताई थी। गीता अध्याय 6 श्लोक 16 में कहा है कि हे भारत! योग यानि साधना न तो बिल्कुल न खाने वाले की, न अधिक खाने वाले की, न अधिक जागने वाले की, न अधिक सोने वाले की सफल होती है यानि निराहार रहने वाले की भक्ति व्यर्थ है।

गीता अध्याय 17 श्लोक 5-6 में कहा है कि जो मन कल्पित घोर तप को तपते हैं। वे शरीर में स्थान-स्थान पर विराजमान शक्तियों व अन्य जीवों को, जो शरीर में जीवाणु हैं, उनको तथा मुझे क्रश करने वाले (पीड़ा देने वाले) हैं, उनको असुर स्वभाव के जान।(गीता अध्याय 17 श्लोक 5-6)

निष्कर्ष :- श्री ऋषभदेव जी उसके पौत्र व शिष्य मरीचि ने भी ऐसी साधना की। जिस कारण से मरीचि के जीव ने महाबीर जैन तक के जीवन के बीच के जन्मों में जो लाभ व हानि हुई, वह संक्षिप्त में इस प्रकार है :-

कभी भीलों के राजा का जन्म जीया। कभी देवता बना, कभी स्वर्ग में गया, कभी नरक में गिरा। 60 करोड़ बार गधा बना, 30 करोड़ बार कुत्ता बना, 20 करोड़ बार बिल्ली का जीवन पाया। स्त्री बना, नपुसंक हजारों बार बना, फिर महाबीर वर्धमान (जैन) का जन्म हुआ। महाबीर वर्धमान ने 363 पाखंड मत चलाए, जिनका पालन वर्तमान में जैन समाज कर रहा है। अधिक जानकारी के लिए पढ़ें फोटोकॉपी में निम्न पुस्तक का आंशिक लेख :-

पुस्तक ''आओ जैन धर्म को जाने'' जिसके लेखक हैं प्रवीण कुमार जैन (एम. ए. शास्त्री) जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर, प्रकाशक श्रीमती सुनीता जैन

जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर- 250404 (मेरठ) उत्तर प्रदेश, मुद्रक :- धिनेन्द्र जैन, न्यू ऋषभ आफसेट प्रिन्टर्स मेरठ।

कृपया पढ़ें इस पुस्तक के पृष्ठ नं. 293-296 की फोटोकॉपी।

विशेष प्रकरण

प्रश्न ३३४३—श्री महावीर भगवान के अन्य कौन-कौन से नाम हैं?

उत्तर—*अन्य पांच नाम हैं—१. वीर २. अतिवीर ३. सन्मति ४. महावीर ५. एवं वर्धमान।*

प्रश्न ३३४४—श्री महावीर भगवान के पाँच नामों को बताने वाली पद्य बताइये?

उत्तर— *श्री वीर महाअतिवीर सन्मति नायक हो।*
जय वर्धमान गुणधीर सन्मति दायक हों।

प्रश्न ३३४५—श्री महावीर भगवान के बचपन में कौन-कौन से नाम थे?

उत्तर—*वीर एवं वर्धमान।*

प्रश्न ३३४६—श्री महावीर भगवान का सन्मति नाम कैसे पड़ा?

उत्तर—*एक समय जब महावीर भगवान पालने में झूल रहे थे संजय विजय चारण ऋषियों को तत्वों में कुछ शंका थी भगवान के दर्शन करते ही उनकी शंका दूर हो गई अतः उन्होने उनका नाम सन्मति रखा।*

प्रश्न ३३४७—श्री महावीर भगवान के बचपन का नाम वर्धमान कैसे पड़ा?

उत्तर—*श्री महावीर भगवान को बचपन में शुक्ल पक्ष के चन्द्रमा के समान बढ़ते हुए देखकर इन्द्र ने उनका नाम वर्धमान रखा।*

प्रश्न ३३४८—श्री महावीर भगवान का नाम महावीर कैसे पड़ा?

उत्तर—*एक बार महावीर भगवान बच्चों के साथ खेल रहे थे संगम नामक देव नाग का रूप बनाकर पेड़ से लिपट गया सारे बच्चे भाग गये लेकिन महावीर भगवान ने उसके फन पर चढ़ कर क्रीड़ा की। भक्तिवश उस देव ने प्रकट होकर उनका नाम महावीर रखा।*

प्रश्न ३३४९—श्री महावीर भगवान का अतिवीर नाम कैसे पड़ा?

उत्तर—*राजा श्री सिद्धार्थ के पागल हाथी को वश में करने से उनका नाम अतिवीर पड़ा।*

प्रश्न ३३५०—श्री महावीर भगवान का महतिवीर नाम कैसे पड़ा?

उत्तर—*भगवान श्री महावीर उज्जैयनी नगरी अतिमुक्तक नाम शमशान में प्रतिमायोग से विराजमान थे महादेव नामक रुद्र ने उपसर्ग करके परीक्षा की भगवान अपने ध्यान से चलायमान नहीं हुए तब उसने उनका महतिवीर नाम रखा।*

प्रश्न ३३५१—श्री महावीर भगवान के जीवन का कथन कहाँ से प्रारम्भ होता है ?

उत्तर—*पुरुरवा नामक भील की पर्याय से।*

प्रश्न ३३५२—पुरुरवा भील कौन था और उसने क्या किया ?

उत्तर—*पुष्कलावती देश की पुंडरीकिणी नगरी में वह भीलों का राजा था उसने सागर सेन मुनिराज से मद्यमांस मधु का त्याग वृत लिया था जिसे जीवन पर्यंत पालन किया।*

प्रश्न ३३५३—श्री महावीर भगवान का जीव पुरुरवा भील की पर्याय से कहाँ गया ?

उत्तर—*पहले सौधर्म स्वर्ग में एक सागर की आयु वाला देव हुआ।*

प्रश्न ३३५४—पहले स्वर्ग के बाद श्री महावीर भगवान का जीव किस पर्याय में गया ?

उत्तर—*भरत चक्रवर्ती की रानी अनंतमती से मारीचि नामक ज्येष्ठ पुत्र हुआ।*

प्रश्न ३३५५—मारीचि की पर्याय से महावीर भगवान का जीव किस पर्याय में गया ?

उत्तर—*ब्रह्म स्वर्ग में देव हुआ।*

प्रश्न ३३५६—ब्रहम स्वर्ग के बाद श्री महावीर भगवान का जीव किस पर्याय में गया ?

उत्तर—*अयोध्या नगरी में कपिल ब्राहमण की काली स्त्री से जटिल नाम का पुत्र हुआ।*

प्रश्न ३३५७—जटिल की पर्याय से श्री महावीर भगवान का जीव किस पर्याय में गया ?

उत्तर—*सौधर्म स्वर्ग में एक सागर की आयु वाला देव हुआ।*

प्रश्न ३३५८—सौधर्म स्वर्ग से निकलकर श्री महावीर भगवान का जीव किस पर्याय में गया ?

उत्तर—*इसी भरत क्षेत्र में सूतिका नामक गाँव में अग्निभूत ब्राहमण की गौतम स्त्री से अग्निसह नामक पुत्र।*

प्रश्न ३३५९—अग्निसह की पर्याय से श्री महावीर भगवान का जीव किस पर्याय में गया ?

उत्तर—*स्वर्ग में गया।*

प्रश्न ३३६०—स्वर्ग की पर्याय से श्री महावीर भगवान का जीव किस पर्याय में गया ?

उत्तर—*भरत क्षेत्र के मन्दिर नामक ग्राम में गौतम ब्राहमण की कौशिकी पत्नी से अग्निमित्र नाम का पुत्र हुआ।*

प्रश्न ३३६१—अग्निमित्र की पर्याय से श्री महावीर भगवान का जीव कहाँ गया।

उत्तर—*माहेन्द्र स्वर्ग में।*

प्रश्न ३३६२—माहेन्द्र स्वर्ग से श्री महावीर भगवान का जीव कहाँ गया ?

उत्तर—*मंदिर नगर में शालकाय ब्राहमण की पत्नी से भारद्वाज़ नामका पुत्र।*

प्रश्न ३३६३—भारद्वाज़ की पर्याय से महावीर भगवान का जीव कहाँ गया?

उत्तर—*माह्लेन्द्र स्वर्ग में देव।*

प्रश्न ३३६४—माहेन्द्र स्वर्ग से महावीर भगवान का जीव कहाँ गया?

उत्तर—*इतर निगोद में एक सागर की आयु वाला निगोदिया जीव।*

प्रश्न ३३६५—निगोद से निकल कर श्री महावीर भगवान का जीव कहाँ गया?

उत्तर—*अनेकों भव धारण किये जो इस प्रकार है—*

एक हजार आक वृक्ष के भव, अस्सी हजार सीप केभव, बीस हजार नीम वृक्ष के भव, नब्बे हजार बार केलि वृक्ष के भव, तीन हजार बार चंदन वृक्ष के भव, पांच करोड़ बार कनेर वृक्ष के भव, साठ हजार वार वेश्या के भव, पांच करोड बार शिकारी के भव, बीस करोड़ बार हाथी के भव, साठ करोड़ बार गधे के भव, तीस करोड़ बार कुत्ते के भव, साठ करोड बार नपुसंक के भव, बीस करोढ बार स्त्री के भव, नब्बे लाख बार धोबी के भव, आठ करोड़ बार घोड़े के भव, बीस करोड़ बार बिल्ली के भव, साठ लाख बार गर्भ पात से मरण, अस्सी लाख बार देव पर्याय को प्राप्त किया।

प्रश्न ३३६६—उपरोक्त भवों को प्राप्त करने के बाद श्री महावीर भगवान ने किस पर्याय को प्राप्त किया?

उत्तर—*राजग्रह नगर में स्थावर नाम का ब्राह्मण।*

प्रश्न ३३६७—स्थावर की पर्याय से श्री महावीर भगवान का जीव कहाँ गया?

उत्तर—*माहेन्द्र स्वर्ग में सात सागर की आयु वाला देव हुआ।*

प्रश्न ३३६८—मार्हेन्द्र स्वर्ग से महावीर भगवान का जीव कहाँ गया?

उत्तर—*राजग्रह में विश्वभूति राजा की जैनी रानी से विश्वनंदी नाम का पुत्र हो गया।*

प्रश्न ३३६९—विश्वनंदी पर्याय से निकलकर श्री महावीर भगवान का जीव कहाँ गया?

उत्तर—*महाशुक्र स्वर्ग में देव हुआ।*

प्रश्न ३३७०—महाशुक्र स्वर्ग से निकल कर महावीर भगवान का जीव कहाँ गया?

उत्तर—*त्रिपृष्ठ नामक नारायण हुआ।*

प्रश्न ३३७१—त्रिपृष्ठ नारायण से श्री महावीर भगवान का जीव कहाँ गया?

उत्तर—*सातवें नरक में गया।*

प्रश्न ३३७२—सातवें नरक से श्री महावीर भगवान का जीव कहाँ गया?

उत्तर—*सिंहगिरि पर्वत पर सिंह हुआ पुनः प्रथम नरक में गया।*

प्रश्न ३३७३—प्रथम नरक से निकल कर श्री भगवान महावीर का जीव कहाँ गया?

उत्तर— *हिमवान पर्वत शिखर पर सिंह हुआ।यहाँ पर उसे अजिंतजय एवं अमित गुण नामक मुनिराज ने संबोधित किया।*

प्रश्न ३३७४—सिंह का जीव किस पर्याय में गया?

उत्तर—*सौधर्म स्वर्ग में सिंह केतु नाम का देव हुआ।*

प्रश्न ३३७५—सिंह केतू का जीव किस पर्याय में गया?

उत्तर—*कनक प्रभ नगर में राजा नकपुंख विद्याधर और रानी कनकमाला से कन्कोज्वल नाम का पुत्र हुआ।*

प्रश्न ३३७६—कनकोज्वल आगे किस पर्याय में गया?

उत्तर—*सांतवे स्वर्ग में देव हुआ।*

प्रश्न ३३७७—सातवें स्वर्ग से श्री भगवान महावीर का जीव कहाँ गया?

उत्तर—*अयोध्या नगरी में राजा वज्रसेन की शीलवती रानी से हरिषेण नाम का पुत्र।*

प्रश्न ३३७८—हरिषेण का जीव आगे किस पर्याय में गया?

उत्तर—*महाशुकु स्वर्ग में देव हुआ।*

प्रश्न ३३७९—महाशुकु स्वर्ग से श्री महावीर भगवान का जीव कहाँ गया?

उत्तर—*धातकी खंड की पूर्व विदेह की पुष्कलावती देश की पुंडारीकिणी नगरी में राजा सुमित्र रानी मनोरमा से प्रिय मित्र नाम का चक्रवर्ती हुआ।*

प्रश्न ३३८०—प्रिय मित्र नाम का चक्रवर्ती आगे किस पर्याय में गया?

उत्तर—*सहस्त्रार स्वर्ग में देव हुआ।*

प्रश्न ३३८१—सहस्त्रार स्वर्ग से श्री महावीर भगवान का जीव किस पर्याय में गया?

उत्तर—*जम्बूद्वीप के छत्रपुर नगर में नंदीवर्धन राजा की वीरमति रानी से नंद नाम का पुत्र हुआ।*

प्रश्न ३३८२—नंद का जीव आगे किस पर्याय में गया?

उत्तर—*पुष्पोत्तर विमान में देव हुआ तनंनतर २४वें तीर्थंकर श्री महावीर भगवान हुए।*

प्रश्न ३३८३—श्री महावीर भगवान के जीव ने कितने पाखंडमत चलाये?

उत्तर—*तीन सौ तेरसठ पाखंड मत चलाये।* □

ऊपर लगी फोटोकॉपी पुस्तक ''आओ जैन धर्म को जानें'' की हैं।

''तीसरा अध्याय''

पवित्र हिन्दू समाज में प्रचलित गीता तथा वेदों के विपरीत साधना कैसे प्रवेश हुई?

चारों वेदों (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद) को हिन्दू समाज दिल से मानता है कि इनमें परमात्मा की महिमा की जानकारी तथा साधना की जानकारी भी सत्य है। यह भी मानता है कि श्रीमद्भगवत गीता चारों वेदों का सार है, संक्षिप्त रूप है। वेदों को ठीक से हिन्दू नहीं समझ सके। कारण यह था कि वेदों का ज्ञान राजा नाभी राज (ऋषभ देव के पिता) के बाद नष्ट हो चुका था। उस समय सत्ययुग लगभग एक लाख वर्ष ही बीता था। ऋषिजन एक-दूसरे से सुनकर या देखकर शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण करने लगे जिसका प्रत्यक्ष प्रमाण ऊपर ऋषभ देव जी तथा मरीचि (महाबीर जैन) की क्रियाओं और उपलब्धि व दुर्गति के प्रकरण में है।

गीता अध्याय 6 श्लोक 16 में कहा है :- हे अर्जुन! यह योग यानि साधना न तो बहुत खाने वाले का और न बिल्कुल न खाने वाले का यानि निराहार (भूखा) रहने वाले का, न अधिक सोने वाले का तथा न अधिक जागने वाले का सिद्ध होता है। इससे सिद्ध हो जाता है कि ऋषभ देव जी ने व मरीचि जी ने शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण किया। जिस कारण से उनकी साधना व्यर्थ थी। यही साधना (व्रत करना, तप करना, हठयोग करना, तीर्थ भ्रमण करना, भूत पूजा, पित्तर पूजा यानि अस्थियाँ चुनना, तेरहवीं, महीना व वर्षी मनाना, श्राद्ध करना, पिंड दान करना, देवी-देवताओं की पूजा करना, प्रभी लेना, चारों धामों की यात्रा करना, श्री रामचन्द्र, श्री कृष्ण चन्द्र, श्री शंकर जी तथा श्री विष्णु जी आदि-आदि देवताओं की पूजा) वर्तमान में सर्व हिन्दू समाज करता है जो शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण होने से पूर्ण रूप से व्यर्थ है।

गीता अध्याय 4 श्लोक 1-2 को फिर पढ़ते हैं :-

गीता ज्ञान देने वाले ने कहा है मैंने यह योग यानि गीता वाला ज्ञान जो वेद ज्ञान है, कश्यप के पुत्र सूर्य को दिया था। सूर्य ने अपने पुत्र मनु को दिया। मनु ने अपने पुत्र इक्ष्वाकू को दिया। इक्ष्वाकू ने अपने वंशजों राजाओं को दिया। फिर इक्ष्वाकू वंशी अंतिम कुलकर राजा नाभी राज तक वेद ज्ञान के आधार से भक्ति रही। राजा नाभी राज का पुत्र ऋषभदेव हुआ। ऋषभदेव ने वेद विधि त्यागकर मनमाना आचरण करना शुरू किया। उसी समय से सब ऋषियों ने एक-दूसरे को देख व सुनकर हठ योग, घोर तप किए जो शास्त्र विरूद्ध थे। उसी अनुभव से 18 पुराणों की रचना की गई।

गीता अध्याय 4 श्लोक 1-2 में यह भी स्पष्ट किया है :- हे परन्तप अर्जुन! यह (योग) गीता वाला ज्ञान बहुत काल से (नष्टः) नष्ट हो चुका है। लुप्त प्रायः हो गया।

निष्कर्ष :- वेद ज्ञान का अभाव नाभी राज के बाद सत्ययुग में हो गया था। यह ऊपर प्रमाणित कर दिया है। ऋषियों ने शास्त्र विधि त्यागकर अपनी इच्छा से मनमाना आचरण किया। वह अनुभव पुराणों में लिखा है।

❖ गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में स्पष्ट किया है।

गीता अध्याय 16 श्लोक 23 :- जो व्यक्ति शास्त्र विधि को त्यागकर जो अपनी इच्छा से मनमाना आचरण करता है, उसको न तो सुख प्राप्त होता, न सिद्धि प्राप्त होती है जो कार्य सिद्ध करती है, मोक्ष में सहयोगी होती है तथा न उसकी गति (मोक्ष) होती है। (गीता अध्याय 16 श्लोक 23)

❖ गीता अध्याय 16 श्लोक 24 :- इससे तेरे लिए अर्जुन कर्तव्य (जो भक्ति कर्म करने योग्य हैं) और अकर्तव्य (जो भक्ति कर्म न करने योग्य हैं) के लिए शास्त्र ही प्रमाण हैं। तू शास्त्रोक्त साधना कर।(गीता अध्याय 16 श्लोक 24)

विशेष :- जब गीता का ज्ञान बताया गया, उस समय द्वापर मात्र सौ वर्ष शेष था। गणित की रीति से समझते हैं। चार युग हैं। सत्ययुग 1728000 वर्ष का समय + त्रेता युग 1296000 वर्ष का समय + द्वापर 864000 वर्ष का समय। इनका योग = 3888000 वर्ष।

जब गीता का ज्ञान बताया गया, तब द्वापर 100 वर्ष शेष था। इसलिए सत्ययुग के प्रारंभ से (3888000-100 = 3887900 वर्ष) 38 लाख 87 हजार 9 सौ वर्ष पश्चात् गीता का ज्ञान बताया गया।

नाभी राज राजा का समय सत्ययुग के प्रारंभ में रहा है क्योंकि वह इक्ष्वाकू जी का परपौत्र था। मनु का जीवन काल सत्ययुग के प्रारंभ में रहा है। राजा इक्ष्वाकू, मनु जी का पुत्र था। यदि नाभी राज तक एक लाख वर्ष सत्ययुग बीत गया, माना जाए तो गीता का ज्ञान राजा नाभी राज जी से 37 लाख 87 हजार 9 सौ (3787900) वर्ष बाद कहा गया।

सत्ययुग के एक लाख वर्ष के बाद से जो शास्त्र विधि त्यागकर मनमाना आचरण ऋषियों ने किया, वह अनुभव पुराणों में भरा हुआ है।

इसलिए गीता ज्ञान देने वाले ने कहा है कि यह यथार्थ वेद ज्ञान लुप्त प्रायः हो गया। इससे यह सिद्ध हुआ कि सत्ययुग के शुरू से एक लाख वर्ष बाद से गीता ज्ञान देने तक वेद ज्ञान लुप्त था और शास्त्र विरूद्ध साधना व कर्मकांड जो ऋषि करते-करवाते थे, वह पुराणों तथा उपनिषदों में भरा हुआ है। वह है हठ करके कठोर तप करना, तीर्थों का भ्रमण, पित्तर, भूत पूजा, कर्मकांड, देवताओं की पूजा, मूर्ति पूजा, शिव लिंग पूजा, व्रत करना, श्राद्ध करना, पिंड दान करना तथा प्रभी नहाना आदि-आदि जो गीता में नहीं कहा

है, अपितु मना किया है।

आश्चर्य है कि गीता का ज्ञान पढ़कर भी पहले वाला अज्ञान घसीटा जा रहा है। फिर गीता व वेदों को किसलिए पढ़ते हैं? पढ़ते ''श्रीमद्भगवत गीता'' हैं, भक्ति कर्म गीता यानि वेदों के विपरीत करते हैं। गीता का ज्ञान प्राप्त होने के पश्चात् तो पुराणों तथा उपनिषदों में बताई शास्त्रविधि विरूद्ध साधना त्यागनी चाहिए थी, सो नहीं त्यागी है। इससे यह स्वसिद्ध है कि हिन्दू समाज हिन्दू शास्त्रों में बताई साधना त्यागकर ऋषियों के अनुभव का अनुसरण करते हैं जो गीता अध्याय 16 श्लोक 23 में व्यर्थ कहा है।

प्रश्न 8 :- आप ने रूची ऋषि वाले प्रसंग में यह कहा है कि रूची वेद पढ़ता था, उसके चारों पूर्वज ऋषि थे। वे भी वेद पढ़ते थे। आप यह भी कहते हो कि उनको वेद ज्ञान नहीं था। जो वेद पढ़ते हैं, उसे वेद ज्ञान न हो, बात जची नहीं।

उत्तर :- दास ने यह कहा है कि ऋषिजन वेद पढ़ते थे, परंतु उनको वेदों का ज्ञान नहीं था। वे वेदों को ठीक से समझे नहीं थे।

कबीर, गुरू बिन वेद पढ़े जो प्राणी, समझे ना सार रहे अज्ञानी।
गुरू बिन काहू न पाया ज्ञाना, ज्यों थोथा भूष छड़े मूढ़ किसाना।।

अर्थात् जो पूर्ण गुरू के बिना स्वयं वेदों को पढ़ता है, वह वेदों का सार ज्ञान नहीं समझ सकता, वह अज्ञानी ही रहता है।

उदाहरण :- जैसे विद्यार्थी पाठ्यक्रम की पुस्तकों को स्वयं पढ़ते रहें तो उन पुस्तकों के गूढ़ शब्दों को ठीक से नहीं समझ सकते। यदि ऋषियों को पूर्ण गुरू मिला होता तो वे शास्त्र विरूद्ध साधना नहीं करते, जैसे उनके द्वारा बताया ज्ञान पुराणों तथा उपनिषदों में लिखा है। गुरू के बिना ग्रन्थ यानि वेद पढ़ना तो ऐसा है जैसे कोई किसान थोथे भुस को कूट रहा हो जिसमें कणक प्राप्त नहीं होती।

वर्तमान तक ऋषिजन शास्त्रविरूद्ध साधना करके अपना जीवन नष्ट कर गए। उनका अनुसरण वर्तमान तक चल रहा है। रूची ऋषि ने वेद ज्ञान ठीक से समझा नहीं था। यदि समझा होता तो पित्तरों की बात को मानकर अपना जीवन नष्ट नहीं करता। उसके पित्तरों ने भी वेद पढ़े थे, समझे नहीं थे। इसलिए ऋषियों ने भी वेद ज्ञान समझा नहीं था। पूरा हिन्दू समाज उसी पुराणों वाले अज्ञान के अनुसार भक्ति करके अनमोल मनुष्य जीवन नष्ट कर रहा है। गीता पढ़कर तो अज्ञान छोड़ देना चाहिए था। वह भी नहीं छोड़ा क्योंकि हिन्दुओं को अपने शास्त्रों का ठीक से ज्ञान नहीं है।

प्रश्न 9 :- आप कैसी बात कर रहे हो? कह रहे हो कि ऋषिजन, पंडितजन (ब्राह्मणगण) वेद पढ़ते थे, समझे नहीं। बिना सिर-पैर की बात है। क्या प्रमाण है आपके पास?

उत्तर :- प्रमाण :- हिन्दू समाज जो परमात्मा में सच्ची श्रद्धा रखता है, वह श्रीमद्भगवत गीता को पूरा सम्मान देता है तथा बहुत सारे हिन्दू भक्त/भक्तमति प्रतिदिन गीता का पाठ भी करते हैं। प्रत्येक हिन्दू गीता को विशेष सम्मान की दृष्टि से देखता है। समय लगे तो पढ़ता भी है। मूल रूप से गीता व वेद तथा पुराण आदि सब संस्कृत भाषा में लिखे हैं। बहुत सारे हिन्दू विद्वानों ने गीता, वेद तथा पुराणों का हिन्दी या अन्य भाषा में अनुवाद भी किया हुआ है। जो अनुवाद करता है, वह तो उस शास्त्र के एक-एक शब्द को ध्यान से पढ़ता है। उनके द्वारा किये अनुवाद को अन्य हिन्दू समाज सत्य अनुवाद मानकर पूर्ण विश्वास के साथ पढ़ता है। परंतु इन शास्त्रों में क्या कहा है? न अनुवादक विद्वान समझे, न अन्य हिन्दू समझे जो प्रतिदिन उस अनुवाद को पढ़ते हैं।

प्रमाण के लिए :- गीता अध्याय 9 श्लोक 25 में लिखा है :-

पित्तरों को पूजने वाले पित्तरों को प्राप्त होते हैं यानि पित्तर योनि प्राप्त करते हैं। भूतों को पूजने वाले भूतों को प्राप्त होते हैं यानि प्रेत योनि प्राप्त करते हैं। देवताओं को पूजने वाले देवताओं को प्राप्त होते हैं यानि देव लोक में चले जाते हैं। मेरी पूजा करने वाले मुझे (गीता ज्ञान देने वाले को) प्राप्त होते हैं यानि ब्रह्म लोक को प्राप्त होते हैं।

पित्तर व भूत पूजा :- मृत्यु के पश्चात् मृतक की आत्मा की गति करवाने के नाम पर किया जाने वाला कर्मकांड पित्तर व भूत पूजा कहा जाता है। जैसे चिता से अस्थियाँ उठाकर गंगा आदि दरिया में पंडित के द्वारा पूजा करवाकर जल प्रवाह करना।

❖ फिर तेरहवीं या सतरहवीं के दिन पूजा पाठ पंडित से करवाते हैं।

❖ फिर वर्षी मनाते हैं यानि जिस दिन मृत्यु हुई थी, एक वर्ष पश्चात् उस तिथि को कर्मकांड पूजा करवाना।

❖ गरूड़ पुराण का पाठ करवाना।

❖ श्राद्ध करवाना।

❖ पिंड दान करवाना आदि-आदि पित्तर व भूत पूजा है।

जिनको करना वेद में अविद्या बताया है यानि मूर्खों की पूजा कहा है जो पित्तर + भूत योनि प्राप्त करवाती है। यह गीता भी प्रमाणित करती है कि पित्तर पूजने से पित्तर बनते हैं। भूत पूजा से भूत बनते हैं।

❖ इससे स्वसिद्ध है कि हिन्दू समाज ने अपने धर्म शास्त्रों को पढ़ा है, समझा नहीं। यदि पुराण ठीक से समझी होती तो इसमें श्राद्ध करने की एक विधि यह भी है जो विष्णु पुराण में इस प्रकार बताई है जो वेद ज्ञान है।

<u>श्री विष्णु पुराण तृतीय अंश के अध्याय 15 श्लोक 55-56 में कहा है कि हे भूपाल! पितृगण का आधार चंद्रमा और चंद्रमा का आधार योग है। इसलिए</u>

श्राद्ध में योगीजन को नियुक्त करना अति उत्तम है।(55)

हे राजन! यदि श्राद्ध भोजी एक हजार ब्राह्मणों के सम्मुख एक योगी भी हो तो वह यजमानों सहित उन सबका उद्धार कर देता है।(56)

विचार करने की बात है कि पुराण का यह ज्ञान सत्य है। यह वेद ज्ञान है जो सूक्ष्मवेद से लिया गया है। जिसे स्वयं सच्चिदानंदघन ब्रह्म यानि सत्यपुरूष स्वयं अपने मुख से वाणी बोलकर बताता है। उस तत्त्वज्ञान को पढ़ने से भाँति-भाँति के भ्रमित ज्ञान से हटकर मानव की बुद्धि कर्मकांड त्यागकर परमात्मा में निश्चल होकर स्थिर हो जाती है। ऐसा साधक योगी यानि सच्चा शास्त्रोक्त ज्ञान के अनुसार साधना करने वाला साधक कहा जाता है।

❖ **योगी की पहचान :- गीता अध्याय 2 श्लोक 53 में कहा है कि :- हे भारत! भाँति-भाँति के वचनों को सुनने से विचलित हुई तेरी बुद्धि जब परमात्मा में निश्चल होकर स्थिर हो जाएगी, तब तू योग को प्राप्त होगा यानि योगी बनेगा।**

भावार्थ :- तत्त्वज्ञान सुनने के पश्चात् भक्त/भक्तमति का अन्य लोक वेद से मन हट जाता है। केवल तत्त्वज्ञान अनुसार साधना करता है। उस समय भक्त की बुद्धि एक परम अक्षर ब्रह्म यानि पूर्ण ब्रह्म परमात्मा में स्थिर हो जाती है, तब वह योग को प्राप्त होता है। अर्थात् वह योगी बनता है यानि शास्त्र अनुकूल भक्ति करने से वह योगी हो जाता है। सच्ची साधना करने वाला भक्त बन जाता है। मैं (रामपाल दास) शास्त्रोक्त साधना करता तथा अनुयाईयों से करवाता हूँ। हम सब योगी हैं। एक परम अक्षर ब्रह्म यानि सत्यपुरूष को ईष्ट मानकर शास्त्रोक्त भक्ति निश्चल मन से करते हैं। हम आश्रमों में पाठ का आयोजन करते हैं। सब अनुयाई दान करते हैं। उसका भोजन बनाया जाता है। परम अक्षर ब्रह्म को यज्ञों में प्रतिष्ठित करते हैं, उनको भोग लगाते हैं। उसे सब योगी (भक्त तथा भक्तमति) खाते हैं। दानकर्ता का तथा सारे परिवार का तथा पित्तरों का उद्धार हो जाता है तथा मोक्ष भी मिलता है। हम श्राद्ध रूप में भोजन नहीं बनाते, हम प्रसाद रूप में भोजन बनाते हैं।

कबीर एकै साधै सब सधै, सब साधैं सब जाय।
माली सीचें मूल कूँ, फलै फूलै अघाय।।

अर्थात् जैसे पौधे की जड़ों (Roots) में सिंचाई की जाए तो पूरा पौधा तृप्त हो जाता है तथा खूब फलता-फूलता है। यदि पौधे को उल्टा शाखाओं की ओर से जमीन में दबाकर मूल (Roots) को ऊपर को कर दें और सब शाखाओं की सिंचाई करें यानि सब साधै तो सब जाये यानि पौधा नष्ट हो जाएगा। गीता अध्याय 15 श्लोक 1-3 में यह प्रकरण विस्तार से बताया है, पढ़ें इसी पुस्तक के पृष्ठ 115 पर।

यह दास (रामपाल दास) भी धार्मिक अनुष्ठान (श्रद्धा से पूजा) करता और करवाता है जिसके करने से साधक पित्तर, भूत नहीं बनता, अपितु पूर्ण मोक्ष प्राप्त करता है तथा जो पूर्वज गलत साधना (शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण अर्थात् पूजा) करके पित्तर भूत बने हैं, उनका भी छुटकारा हो जाता है। यही प्रमाण इसी विष्णु पुराण पृष्ठ 209 पर इसी तृतीय अंश के अध्याय 14 श्लोक 20 से 31 में भी लिखा है कि जिसके पास श्राद्ध करने के लिए धन नहीं है तो वह यह कहे '' हे पित्तर गणों! आप मेरी भक्ति से तृप्ति लाभ प्राप्त करें क्योंकि मेरे पास श्राद्ध करने के लिए वित्त नहीं है।''

कृप्या पाठक जन विचार करें कि जब भक्ति (मंत्र जाप की कमाई) से पित्तर तृप्त हो जाते हैं तो फिर अन्य कर्मकाण्ड की क्या आवश्यकता है? यह सर्व प्रपंच ज्ञानहीन गुरू लोगों ने अपने उदर पोषण के लिए ही किया है क्योंकि गीता अध्याय 4 श्लोक 33 में भी लिखा है द्रव्य (धन द्वारा किया) यज्ञ (धार्मिक अनुष्ठान) से ज्ञान यज्ञ (तत्वज्ञान सुन-समझकर की गई साधना) श्रेष्ठ है।

एक और विशेष विचारणीय विषय है कि विष्णु पुराण में पित्तर व देव पूजने का आदेश एक ऋषि का है तथा वेदों व गीता जी में पित्तरों व देवताओं की पूजा का निषेध है जो आदेश ब्रह्म (काल रूपी ब्रह्म) भगवान का है। यदि पुराणों के अनुसार साधना करते हैं तो प्रभु के आदेश की अवहेलना होती है। जिस कारण से साधक दण्ड का भागी होता है।

हम पित्तर व भूत पूजा नहीं करते। हम शास्त्रोक्त साधना करते हैं जो गीता अध्याय 3 श्लोक 10-15 तक वर्णित है। हम सूक्ष्मवेद का पाठ करते हैं। उसमें पाँच यज्ञ होती हैं।

❖ <u>देवताओं की पूजा करने वालों के विषय में</u> :- गीता अध्याय 7 श्लोक 12-15 में तीनों गुणों यानि रजगुण श्री ब्रह्मा जी, सतगुण श्री विष्णु जी तथा तमगुण श्री शिव जी की भक्ति करने वालों के विषय में लिखा है कि जिनका ज्ञान त्रिगुणमयी माया (यानि तीनों गुणों युक्त तीनों देवताओं से मिलने वाले लाभ तक स्थिर हो चुके हैं। जो इनसे ऊपर मेरी साधना नहीं करते) द्वारा हरा जा चुका है। <u>राक्षस स्वभाव को धारण करने वाले मनुष्यों में नीच दूषित कर्म करने वाले, मूर्ख मेरी भक्ति नहीं करते</u>।

फिर गीता अध्याय 7 के ही श्लोक 20-23 में इन तीन प्रधान देवताओं (रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी तथा तमगुण शिव जी) से अन्य देवताओं की साधना करने वालों को अल्पबुद्धि यानि मंदबुद्धि (मूर्ख) कहा है। अन्य देवताओं को मैंने (गीता ज्ञान बताने वाले ने) कुछ शक्ति दे रखी है, परंतु उन मंदबुद्धि वालों का वह फल नाशवान है। देवताओं को पूजने वाले देवताओं

को प्राप्त होते हैं। मेरे भक्त मुझे प्राप्त होते हैं। (गीता अध्याय 9 श्लोक 25 का समर्थन है।)

निष्कर्ष :- यदि गीता पढने वालों ने गीता को समझा होता तो क्या पित्तर पूजा, भूत पूजा या अन्य देवताओं की पूजा करते? इससे सिद्ध हो जाता है कि हिन्दू गीता पढ़ते हैं, परंतु समझे नहीं हैं।

प्रश्न 10 :- सनातन धर्म, वैदिक धर्म तथा हिन्दू धर्म एक है या भिन्न-भिन्न हैं।

उत्तर :- एक है। चतुर्युग की आदि में आदि सनातन धर्म को स्वयं परम अक्षर ब्रह्म ने स्थापित किया था तथा अपने मुख कमल से तत्त्वज्ञान बोलकर वाणी द्वारा जनता को समझाया। बहुत सारे व्यक्तियों ने स्वीकारा। मनु जी ऋषि ने पढ़ा, अच्छा लगा, परंतु काल प्रेरणा से सूक्ष्मवेद त्यागकर चारों वेदों पर आधारित साधना करते रहे। उसे वे सनातन धर्म (पंथ) कहते थे यानि पूर्व में हिन्दू धर्म (पंथ) को सनातन धर्म कहा जाता था। सत्ययुग में लगभग एक लाख वर्षों तक सनातन धर्म के सब ऋषि-मुनि वेदों को आधार मानकर धार्मिक क्रिया करते थे। उसके पश्चात् साधक यानि ऋषिजन शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण करने लगे। इसी को मरीचि ऋषि ने (जो ऋषभदेव का पौत्र तथा भरत का पुत्र था) वैदिक धर्म नाम दिया। आदि शंकराचार्य ने इसे हिन्दू नाम दिया तथा देवी-देवताओं की मूर्ति पूजा, कर्मकाण्ड प्रवेश किया। पुराणों को द्वापर युग के अंत में राजा जनमेजय के समय में श्री व्यास जी ने लिखा था जो ऋषियों द्वारा बताया अनुभव है। {श्री देवी महापुराण में राजा जनमेजय का भी वर्णन है जो पांडव राजा परीक्षित का पुत्र था। परीक्षित राजा की सर्प के डसने से मृत्यु हुई थी। ऋषि सुखदेव जी ने स्वर्ग से आकर सात दिन राजा परीक्षित को कथा सुनाई थी। उसका नाम श्रीमद्भागवत (सुधा सागर) है जिसको भी लिपिबद्ध व्यास ऋषि जी ने किया है। इससे सिद्ध है कि द्वापर युग के अंत में तथा कलयुग की आदि में पुराण, वेद, महाभारत आदि-आदि शास्त्र लिपिबद्ध व्यास जी द्वारा किए गए थे।} श्री व्यास जी तो केवल लेखक हैं, ज्ञान अन्य ऋषियों का है। कुछ ऋषि व्यास जी का अपना ज्ञान भी है। इससे पहले कोई पुराण पुस्तक रूप में नहीं थी। वेदों को ताड़ वृक्ष के पत्तों पर लिखा गया था जिनको ऋषियों ने मौखिक याद कर लिया था। ऋषियों ने वेदों को पढ़ा, पंरतु समझ नहीं सके। उनका अर्थ अपनी बुद्धि अनुसार करके साधना करते थे। अपना-अपना अनुभव अपने शिष्यों को सुनाते थे। इन्हीं ऋषियों के अज्ञान की देन है तीर्थों का भ्रमण, धामों पर जाना। पित्तर पूजा, भूत पूजा, देवताओं की पूजा यानि अस्थियाँ उठाकर गंगा में जल प्रवाह करना, तेरहवीं करना, महीना करना, वर्षी करना, श्राद्ध करना, पिंड भरवाना, गरूड़ पुराण का पाठ मृत्यु के

पश्चात् करना आदि-आदि यह शास्त्र विधि त्यागकर मनमाना आचरण शुरू हुआ जो वर्तमान सन् 2013 तक चल रहा है। जो सत्ययुग के एक लाख वर्ष बीत जाने के बाद से प्रारंभ हुआ था। जिस शास्त्रविधि को त्यागकर अपनी इच्छा से मनमाना आचरण करने वालों को कोई लाभ नहीं मिलता। जिसका प्रमाण श्रीमद्भगवत गीता शास्त्र में अध्याय 16 श्लोक 23-24 में प्रमाण है जो पहले कई स्थानों पर लिख दिया है।

श्रीमद्भगवत गीता चारों वेदों का सार है यानि संक्षिप्त रूप है।

❖ प्रश्न 11 :- सनातन धर्म (पंथ) को वैदिक धर्म तथा हिन्दू धर्म कब से कहा जाने लगा?

उत्तर :- जैन संस्कृति कोष पुस्तक में कहा है कि जो राजा ऋषभदेव जी का पौत्र, भरत का पुत्र यानि ऋषभदेव जी का पौत्र मरीचि हुए हैं। उनको ऋषभदेव जी ने धर्मदेशना (दीक्षा) दी थी। मरीचि ने अपने अनुभव से तथा अपने गुरू जी तथा दादा जी ऋषभदेव से प्राप्त मनमाने आचरण के आधार से अपनी साधना की। उसी मरीचि ऋषि ने वैदिक धर्म की स्थापना की। उसी को ईशा पूर्व 508 वर्ष से हिन्दू धर्म कहा जाने लगा। हिन्दू समाज अपने धर्म को सनातन धर्म तथा वैदिक धर्म भी कहता है। हिन्दू धर्म नाम आदि शंकराचार्य के पश्चात् प्रचलित हुआ। श्री आदि शंकराचार्य जी के द्वारा चलाए भक्ति मार्ग को स्वीकार करने वाले हिन्दू कहलाए जो सब सनातन धर्म को मानते थे। वर्तमान में भी हिन्दू अपने को कभी-कभी सनातनी यानि सनातन धर्म को मानने वाले भी कहते हैं। अपने हिन्दू धर्म को सनातन धर्म भी कहते हैं। आदि शंकराचार्य जी का जन्म हजरत ईशा जी से 508 वर्ष पूर्व हुआ। उस समय कलयुग 3000 (तीन हजार वर्ष बीत चुका था।) यानि सन् 2013 से गिनती करें तो आदि शंकराचार्य जी का जन्म 2521 वर्ष पूर्व हुआ तथा सन् 2013 तक कलयुग (3000+2521 = 5521) वर्ष बीत चुका है। श्री आदि शंकराचार्य जी ने भारत देश की चारों दिशाओं में चार मठों (आश्रमों) की स्थापना की थी जिनके नाम हैं 1. शारदा मठ, 2. गोवर्धन मठ, 3. ज्योतिर्मठ, 4. श्रृंगेरी मठ।

''मठों की संख्या तथा उनमें की जाने वाली पूजा''

''चार मठों का वर्णन'' पुस्तक मठाम्नाय-महानुशासनम् में है। आद्यश्रीशंकराचार्यविरचित है (जो आदि श्री शंकराचार्य द्वारा लिखी गई है।)

श्रीकाशी विद्वत्परिषद्-न्यास-ग्रन्थमालायाः प्रथम-पुष्पम्

आद्यश्रीशङ्कराचार्यविरचितम्

मठाम्नाय-महानुशासनम्

सम्पादक तथा भाषान्तरकर्त्ता

डा० कामेश्वरनाथ मिश्र

आचार्य-अध्यक्ष : संस्कृत-विभाग
अध्यक्ष : शब्दविद्यासङ्काय

केन्द्रीय उच्चतिब्बतीशिक्षा संस्थान
सारनाथ, वाराणसी (उ० प्र०)

श्रीकाशी विद्वत्परिषद् न्यास
केदारघाट, वाराणसी

''आदि शंकराचार्य का बोया बीज''

पुस्तक का नाम :- मठाम्नाय-महानुशासनम्, सम्पादक तथा भाषान्तरकर्त्ता :- डॉ. कामेश्वरनाथ मिश्र आचार्य-अध्यक्ष संस्कृत-विभाग अध्यक्ष शब्दविद्यासकाय, केन्द्रीय उच्चतिब्बतीशिक्षा संस्थान सारनाथ, वाराणसी (उत्तर प्रदेश), श्री काशी विद्वत्परिषद् न्यास, केदारघाट वाराणसी।

इस पवित्र पुस्तक के अनुवादक ने अपने अनुवाद में पृष्ठ संख्या 12 पर लिखा है कि मठों की कुल संख्या 7 बताई है जिनमें से चार पृथ्वी पर हैं, तीन ऊपर आकाश में बताए हैं जो काल्पनिक हैं।

विशेष :- यह पुस्तक आदि श्री शंकराचार्य जी द्वारा लिखी गई है। अनुवादक :- डॉ. कामेश्वर नाथ मिश्र जी हैं।

जिसने लिखा है कि मैं इस पवित्र पुस्तक के लेख को जितना समझ सका, अपनी बुद्धि अनुसार बता रहा हूँ। कहा है कि चार मठ (1. शारदामठ, 2. गोवर्धनमठ, 3. ज्योतिर्मठ, 4. श्रृंगेरीमठ) तो धरातल (पृथ्वी) पर हैं। परंतु तीन और बताए हैं, वे ऊपर आकाश में बताए हैं। ऊपर आकाश में स्वर्ग अथवा अन्य लोकों में यह मठ नहीं हो सकते। ये केवल भावनालोक में हैं,

भूलोक में नहीं हैं यानि तीन मठ काल्पनिक समझो (अनुवादकर्ता के विचार में)। वास्तविकता तो पुस्तक के लेखक को ज्ञात होती है।

फिर वेदों की गणना लिखी है :- आदि शंकराचार्य जी ने पाँच वेद बताए हैं :- 1. ऋग्वेद, 2. यजुर्वेद, 3. सामवेद, 4. अथर्ववेद, 5. सूक्ष्मवेद।

अनुवादक की टिप्पणी :- चारों मठों का एक-एक वेद बताया है तथा ऋग, यजुः आदि चार वेद बताए हैं। परंतु सूक्ष्मवेद भी बताया है। श्लोक 42 में चारों वेदों के अतिरिक्त इस (सूक्ष्मवेद) नाम का कोई वेद सनातनी जगत् में नहीं है। {यह अनुवादकर्ता डॉ. कामेश्वर नाथ मिश्र ने लिखा है। अनुवादक को सूक्ष्मवेद का ज्ञान ही नहीं है, इसलिए अनुवाद भी अधूरा है।}

इसी पुस्तक के पृष्ठ 33-47 पर निम्न वर्णन है :-

चारों मठों का विस्तृत उल्लेख है।

1. शारदा - मठाम्नाय :- इस मठ की देवी = भद्र काली, देवता = सिद्धेश्वर, महावाक्य = तत्त्वमसि है {जिसका अर्थ है तत् = वह परमात्मा, त्वम = तू यानि जीवात्मा ही, असि = है। यानि जीव ही परमात्मा है।}

यह वाक्य यानि तत् त्वम् असि = तत्त्वमसि किसी वेद से नहीं लिया गया है। यह तो छान्दोग्य उपनिषद के 6/8 के श्लोक से लिया है। इस शारदा मठ में सामवेद पढ़ा जाता है।

2. गोवर्धन - मठाम्नाय :- (गोवर्धन मठ)।

इस मठ की देवी - विमला, देवता - जगन्नाथ, पढ़ा जाने वाला वेद - ऋग्वेद।

महा वाक्य :- प्रज्ञानं ब्रह्म = ज्ञान ही परमात्मा है। यह वाक्य किसी वेद से नहीं लिया है। यह महावाक्य एतरेय उपनिष्द का 5/3 है।

3. ज्योतिर्मठाम्नाय -

इस मठ की देवी - पूर्णगिरी, देवता - नारायण है, पढ़ा जाने वाला वेद - अथर्ववेद है।

महा वाक्य :- अयमात्मा ब्रह्म (यह जीवात्मा ही परमात्मा है। यह अर्थ है।) यह महावाक्य किसी वेद का नहीं है। यह माण्डूक्य उपनिष्द के अध्याय उपनिषद 2 (उप पर्व-2) से लिया है।

4. श्रृंगेरी-मठाम्नायः।

इस मठ की देवी - कामाक्षी है, देवता - आदि वाराह है, इसमें पढ़ा जाने वाला वेद - यजुर्वेद है।

महा वाक्य :- अहम् ब्रह्मस्मि है जिसका अर्थ है मैं (जीवात्मा) ही ब्रह्म (परमात्मा) हूँ। यह महावाक्य किसी वेद से नहीं लिया गया है। यह वृहत उपनषिद के (उप पूर्व) उ० 1/4/10 से लिया है।

{यह प्रकरण पुस्तक मठाम्नाय महानुशासनम् के पृष्ठ 33-47 पर लिखा है। इस पुस्तक का प्रकाशक :- श्रीकाशी विद्वत्परिषद् न्यास केदारघाट, वाराणसी।

मुद्रक :- श्रीमाता कम्प्यूसिस प्रा. लि. बी, 7/125, बागहाड़ा (केदारघाट) वाराणसी - 221001 (उत्तर प्रदेश), दूरभाष :- 0542-2275274, 72 लेखक आद्य श्री शंकराचार्य विरचितम्।}

सन् 2013 में कलयुग वर्तमान में कितना बीत चुका है?

हिन्दू धर्म में आदि शंकराचार्य जी का विशेष स्थान है। दूसरे शब्दों में कहें तो हिन्दू धर्म के सरंक्षक तथा संजीवन दाता भी आदि शंकराचार्य जी हैं। उनके पश्चात् जो प्रचार उनके शिष्यों ने किया, उसके परिणामस्वरूप हिन्दु देवताओं की पूजा की क्रान्ति-सी आई है। उनके ईष्ट देव श्री शंकर भगवान हैं। उनकी पूज्य देवी पार्वती जी हैं। इसके साथ श्री विष्णु जी तथा अन्य देवताओं के वे पुजारी हैं। विशेषकर ''पंच देव पूजा'' का विधान है :- 1. श्री ब्रह्मा जी 2. श्री विष्णु जी 3. श्री शंकर जी 4. श्री परासर ऋषि जी 5. श्री कृष्ण द्वैपायन उर्फ श्री वेद व्यास जी पूज्य हैं।

पुस्तक ''हिमालय तीर्थ'' {लेखक :- जे.पी. नम्बूरी उप मुख्य कार्य अधिकारी श्री बदरीनाथ-केदारनाथ मंदिर समिति, प्रकाशक :- रनज चक्रवर्ती 76A/1, बामाचरण राय रोड, कलकता, मुद्रक :- गिरि प्रिन्ट सर्विस कलकता} में शिव रहस्य नामक पुस्तक के श्लोक का हवाला देकर भविष्यवाणी की थी जो आदि शंकराचार्य जी के जन्म से पूर्व की है। कहा है कि आदि शंकराचार्य जी का जन्म कलयुग के तीन हजार वर्ष बीत जाने के पश्चात् होगा।

अब गणित की रीति से जाँच करके देखते हैं, वर्तमान में यानि 2013 में कलयुग कितना बीत चुका है?

जन्म प्रमाण :-

पुस्तक का नाम = ज्योतिर्मय ज्योतिर्मठ

लेखक = शंकराचार्य श्री स्वरूपानंद जी महाराज, संपादक एवं संकलनकर्ता विष्णुदत्त शर्मा, अध्यक्ष आध्यात्मिक उत्थान मंडल (दिल्ली), मुद्रक = फाईन प्रिंट एंड पैक्स, प्रकाशक :- अखिल भारतीय आध्यात्मिक उत्थान मंडल 1/3234, गली नं. 2 राम नगर विस्तार, मण्डौली रोड, शाहदरा दिल्ली 110032। इस पुस्तक के पृष्ठ नं. 11 पर लिखा है :- आद्य गुरू शंकराचार्य संक्षिप्त जीवन परिचय। गुरू परम्परागत मठों के अनुसार आदि श्री शंकराचार्य जी का जन्म ईशा पूर्व 508 वर्ष है, वे 32 वर्ष जीवित रहे। उनका जीवन काल ईशा पूर्व 508/476 वर्ष है। इनका जन्म केरल प्रांत में पूर्णा नदी के तट पर कालड़ी ग्राम में धर्म निष्ट नम्बूदरी शैव ब्राह्मण श्री शिव गुरू व धर्म परायण सुभद्रा के घर हुआ था।

{नोट :- जो 508/476 लिखा है, इसका अर्थ है कि आदि शंकराचार्य जी का जन्म ईशा जी के जन्म से 508 वर्ष पूर्व हुआ तथा उनकी मृत्यु 32 वर्ष

की आयु में ईशा जी के जन्म से 476 वर्ष पूर्व हुई।}

गणित की रीति से जानते हैं कि सन् 2013 में कलयुग कितना व्यतीत हुआ है? :- आदि शंकराचार्य जी का जन्म ईशा जी के जन्म से 508 वर्ष पूर्व हुआ। ईशा जी के जन्म को हो गए = 2013 वर्ष।

शंकराचार्य जी को कितने वर्ष हो गए =2013 + 508 = 2521 वर्ष।

ऊपर से हिसाब लगाएँ तो शंकराचार्य जी का जन्म हुआ = कलयुग 3000 वर्ष बीत जाने पर।

सन् वर्ष 2013 में कलयुग कितना बीत चुका है = 3000 + 2521 = 5521 वर्ष।

अब देखते हैं कि 5505 वर्ष कलयुग कौन-से सन् में पूरा होता है =

5521 - 5505 = 16 वर्ष सन् 2013 से पहले।

2013-16 = 1997 ई. को कलयुग 5505 वर्ष पूरा हो जाता है। संवत् के हिसाब से स्वदेशी वर्ष फाल्गुन महीने यानि फरवरी-मार्च में पूरा हो जाता है।

शंकराचार्य का अर्थ है शंकर जी तमगुण देवता का ज्ञान बताने वाला अध्यापक। जैसे कहते हैं Hindi Teacher यानि हिन्दी पढ़ाने वाला अध्यापक। इसी प्रकार शंकर आचार्य का अर्थ है शंकर यानि तमगुण शिव का ज्ञान बताने वाला गुरू। शंकराचार्य = शंकर गुरू, आदि शंकराचार्य का अर्थ है पहले वाला शंकर गुरू। शुरू वाला शंकराचार्य।

यहाँ से देवी-देवताओं की पूजा प्रारंभ हो गई थी तथा मूर्ति पूजा व कर्मकांड में इजाफा हुआ और इस पूजा को करने वाले हिन्दू कहे जाने लगे। आदि शंकराचार्य जी ने भारत देश की चारों दिशाओं में चार मठों की स्थापना की। चारों को उपरोक्त चार वाक्यों में से एक-एक दिया। प्रत्येक मठ की देवी तथा देवता भी भिन्न-भिन्न हैं। इनके वाक्य (मंत्र) भी भिन्न-भिन्न हैं, जैसे ऊपर लिखे हैं। वे इनकी पूजा करते तथा करवाते हैं। इसके साथ-साथ पित्तर पूजा, भूत पूजा, पिंड दान करना, तीर्थों पर जाना, चारों धामों की यात्रा करना, मूर्ति पूजा करना, व्रत रखना हिन्दुओं की विशेष पूजा है जो शास्त्रविधि त्यागकर अपनी इच्छा से मनमाना आचरण है। इसके करने से साधक को न तो सुख प्राप्त होता है, न सिद्धि प्राप्त होती है। जिससे कार्यों में न सफलता मिलती है तथा न गति होती है यानि उसका मोक्ष नहीं होता।

विचारणीय विषय है कि इन तीन वस्तुओं के लिए ही तो भक्ति की जाती है। ये तीनों उपरोक्त शास्त्र विरूद्ध साधना से प्राप्त नहीं हुई, अपितु पित्तर पूजा से पित्तर बन गए। भूत पूजा से भूत बन गए। देवताओं की पूजा से कुछ समय उनके पास उनके लोक में चले गए। फिर पृथ्वी पर पशु-पक्षियों की योनियों में कष्ट उठाया।

आदि शंकराचार्य परमात्मा की खोज में बचपन से ही लग गए थे। इनको पता चला कि एक संत गुफा में तपस्या करता है। कई-कई दिन बाहर नहीं

निकलता, पहुँचा हुआ संत है। आदि शंकराचार्य जी उनसे मिले, गुरू बनाया। उस संत जी ने आदि शंकराचार्य जी को बताया कि जीव ही ब्रह्म है यानि जीव ही कर्ता है। शिष्य तो जिज्ञासु होता है। जो गुरू बताता है, उसी पर विश्वास करता है। आदि शंकराचार्य जी ने भी यही प्रचार करना प्रारंभ कर दिया। परमात्मा की भक्ति करनी चाहिए। मनुष्य जीवन भक्ति करके आत्म कल्याण करवाने के लिए मिलता है। जीव ही कर्ता है। यह प्रचार सनातन धर्म के व्यक्तियों में प्रारंभ किया। लोगों ने प्रश्न किए कि हे महात्मा जी! यदि जीव ही कर्ता (परमात्मा) है तो फिर भक्ति-साधना की क्या आवश्यक्ता है? आदि शंकराचार्य जी भी विचार करने लगे कि बात तो सही है। फिर वे कहने लगे कि शंकर भगवान तथा पार्वती माता की भक्ति करो। राम, कृष्ण का नाम जपो। विष्णु जी, ब्रह्मा जी की भक्ति करो। पाँच देवों की भक्ति करो। पाँच देवता बताए हैं जिनके नाम इस प्रकार हैं :- 1. श्री ब्रह्मा जी, 2. श्री विष्णु जी, 3. श्री शिव जी, 4. श्री परासर ऋषि जी, 5. श्री कृष्ण द्वैपायन यानि व्यास जी। इनकी भक्ति करो। इसे पंचदेव उपासना कहा है।

''आदि शंकराचार्य जी का बताया ज्ञान'' :- 1. यह जीवात्मा ही ब्रह्म है यानि परमात्मा है। पुस्तक - शांकर पंचकम् 1. लेखक :- आदि शंकराचार्य, अनुवादकः- स्वामी स्वरूपानंद सरस्वती महाराज, ज्योतिर्द्वारकेतिशांकरपीठद्वयाधीश्वराः, श्री शारदा पीठ - प्रकाशनम् :- श्री द्वारका। पृष्ठ नं. 8, श्लोक नं. 24 पर लिखा है कि वह ब्रह्म मैं ही हूँ यानि परमात्मा मैं (जीवात्मा) ही हूँ अर्थात् जीव ही ब्रह्म है।

पृष्ठ 62 पर श्लोक 41 में कहा है कि :-

प्रश्न 12 :- प्रारब्ध कर्म क्या है?

उत्तर (आदि शंकराचार्य जी का) :- इस शरीर को उत्पन्न कर इस लोक में इस प्रकार सुख-दुःख आदि भोग को देने वाले जो कर्म हैं, वे प्रारब्ध कर्म माने जाते हैं जो भोग से ही नष्ट होते हैं। प्रारब्ध कर्मों का नाश भोग से ही होता है, चाहे वो कर्म धर्ममय (पुण्य) हो या अधर्ममय यानि पाप कर्म हो, उनका फल भोगना पड़ेगा।

पृष्ठ नं. 62 पर ही श्लोक नं. 42 में कहा है कि ''मैं ब्रह्म ही हूँ।'' ऐसे निश्चयात्मक ज्ञान के द्वारा संचित (पूर्व जन्मों के शुभ + अशुभ किए कर्म) नष्ट हो जाते हैं।

भावार्थ है कि भक्ति की आवश्यक्ता नहीं मानते।

पाठको! इसे कहते हैं ऊवा बाई का ज्ञान।

''शंकराचार्यों की शास्त्र विरूद्ध पूजा पर एक नजर''

आदि शंकराचार्य के ज्ञान की अब एक झलक पुस्तक हिमालय तीर्थ की

दिखाता हूँ :-

पवित्र पुस्तक ''हिमालय तीर्थ'' पर विवेचन करता हूँ फिर आगे लगी फोटोकॉपी वाला लेख आपको आसानी से समझ में आएगा।

''अध्याय = उत्तराखंड के पंच केदार''

''श्री केदरानाथ'' इस पुस्तक में श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी व अन्य देवी-देवताओं की भक्ति व स्थान बताए हैं। स्कंद पुराण का हवाला देकर बताया है कि स्कंद पुराण केदार खंड 41/5-6 में श्री शंकर भगवान जी ने माता पार्बती जी के प्रश्न का स्वयं उत्तर इस प्रकार दिया है कि हे प्राणेश्वरी! यह केदार क्षेत्र उतना ही प्राचीन है जितना मैं हूँ। मैंने इसी स्थान पर ब्रह्मा का रूप धारण करके सृष्टि की रचना की थी। यह स्थान मेरा चिरप्रिय आवास है। यह केदार खंड मेरा चिरनिवास होने के कारण भू-स्वर्ग (पृथ्वी का स्वर्ग) के समान है।

(स्कंद पुराण का प्रकरण समाप्त)

श्री केदार नाथ की अन्य विशेषता बताई है कि भगवान शंकर के बारह प्रसिद्ध ज्योतिर्लिंगों में से ग्यारहवां यहाँ पर है।

अन्य विशेषता बताई है कि ''यह स्थान समुद्र तल से 11750 फुट (3500 मीटर) की ऊँचाई पर है। यह ''ज्योतिर्लिंग'' नर तथा नारायण ऋषियों द्वारा प्रतिष्ठित (स्थापित) है। इन दोनों ने भगवान शंकर को प्रसन्न करने के लिए बड़ी कठिन (घोर) तपस्या की। भगवान के प्रसन्न होने पर उनसे वर मांगा कि आप ज्योतिर्लिंग रूप में यहाँ स्थापित हों ताकि आप ज्योतिर्लिंग के दर्शन करके भक्तों पर महान उपकार हो सके। भगवान शंकर ने स्वीकार किया। उस दिन से इस केदारनाथ ज्योतिर्लिंग की पूजा शुरू हुई।

''अनोखी घटना'' पृष्ठ 19 पर :-

केदार का शाब्दिक अर्थ ऐसे स्थान से होता है जहाँ दलदल एवं अति मात्रा में जल हो। नर और नारायण ऋषियों के पश्चात् अन्य ऋषि-मुनियों व भक्तों द्वारा यह ज्योतिर्लिंग पूजित रहा है।

घटना :- पाँच केदार कैसे बने? :- पांडव हिमालय में जिंदगी के अंतिम दिन व्यतीत करने गए हुए थे। एक दिन भीम ने देखा कि एक भैंस दूर घूम रही है। भीम ने सोचा कि भैंस दूध वाली लगती है। उसको पकड़ने के लिए चला तो देखते-देखते भैंस धरती में समाने लगी। भीम उसको रोकने के लिए दौड़ा, तब तक पृष्ठ भाग (पिछला भाग) ही बाहर था। आगे का हिस्सा मुख, सिर आदि जमीन में समा चुके थे। भैंस का पिछला भाग पत्थर बन गया। फिर शिव जी ने दर्शन दिए और पांडवों को आदेश दिया कि इस भैंस के पिछले भाग (गोबर द्वार व मूत्र द्वार) की पूजा करो जिससे तुम्हारी गोत्र हत्या, गुरू हत्या पाप को समाप्त करने के रूप में पूजा-अर्चना हो जाएगी।

ऐसा आदेश देकर शिव जी अंतर्ध्यान हो गए। महिष (भैंस) का जो पिछला भाग शिला (पत्थर) रूप बन गया था, वह पांडवों द्वारा पूजित हुआ व तब से आज तक पूजित है।

1. उस महिष (भैंस) का अग्र भाग यानि सिर नेपाल में जाकर प्रकट हुआ जो पशुपतिनाथ नाम से प्रसिद्ध हुआ।

2. बाहू (अगले पैर) तुंग नाथ में 3. मुख रूद्र नाथ में 4. नाभि महेश्वर में 5. जटा कल्पेश्वर में प्रकट हुए। चार भाग केदार क्षेत्र में प्रतिष्ठित हुए। पांचवा केदारनाथ सहित पंच केदार विख्यात हैं। पशुपतिनाथ नेपाल देश में है।

उपरोक्त पूजा का फल :-

यदि कोई शुद्ध मन से विचार कर ले कि मैं केदारनाथ जाऊँगा तो इतने संकल्प मात्र से ही उसके तीन सौ कुलों के पितृगण शिव लोक को प्राप्त कर लेते हैं। (यह पृष्ठ 21 पर लिखा है।) इसी पृष्ठ 21 पर लिखा है कि ज्योतिर्लिंग के पास केदार क्षेत्र में ही एक उदक कुण्ड स्थित है। उसके जल को पीने से घोर पापी भी मरणोपरान्त शिव लोक प्राप्त कर शिव स्वरूप हो जाता है।

विचार करो :- शिव लोक में तो रहते ही भूत, पिशाच, भैरव आदि पतित जीव हैं। इसीलिए तो शिव जी को भूतनाथ भी कहा जाता है। पुराण में कथा है कि जिस समय शिव जी का विवाह पार्बती से होना था तो उसके साथ भूत, प्रेत, भैरव आदि सेना गई थी। देवता कोई नहीं साथ गया था। फिर उपरोक्त साधना, गीता व वेद शास्त्रों में न लिखी होने से शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण हुआ। जिससे न सुख मिलता है, न सिद्धि, न गति यानि मोक्ष मिलता है अर्थात् जो व्यर्थ है।

पुस्तक हिमालय तीर्थ के पृष्ठ 36-38 पर लिखा है कि शंकर भगवान स्वयं बुद्ध अवतार धारण करके धरती पर जन्में। बौद्ध धर्म चलाया। मूर्ति पूजा का विरोध किया। बौद्ध धर्म के दो समुदायों हीनयान तथा महायान के पारंपरिक संघर्ष ने बदरिकाश्रम यानि बदरीनाथ को भी अपने कब्जे में ले लिया। पुजारी उस भगवान नारायण की मूर्ति को नारदकुण्ड में डालकर इस धाम से पलायन कर गए यानि भाग गए।

आगे लिखा है कि कालांतर में यानि कुछ समय पश्चात् भगवान आशुतोष यानि भगवान शंकर जी कलयुग के तीन हजार वर्ष व्यतीत होने पर आदि श्री शंकराचार्य जी के रूप में उत्पन्न हुए। फिर उस मूर्ति को नारदकुण्ड से निकलवाकर पुनः बदरिकाश्रम में स्थापित किया। तब से फिर उस मूर्ति की पूजा प्रारंभ हुई है। यह भी लिखा है कि भगवान शंकर भी इसी स्थान पर ब्रह्म हत्या से मुक्त हुए। भगवान राम तथा देवराज इंद्र को भी ब्रह्म हत्या से मुक्त होने के लिए बदरिकाश्रम धाम का सेवन (पूजन) करना पड़ा।

फिर कुछ और पूजा, परिक्रमा करना लिखा है। उसी बद्रीनाथ के आसपास के स्थान हैं। इन सब क्रियाओं से यानि उपरोक्त पूजा से विष्णु लोक प्राप्त होता है।

विचार करो :- विष्णु जी सतगुण युक्त देवता हैं। श्री शिव जी तमगुण युक्त देवता हैं। इनके लोकों में साधक चला गया तो क्या मुक्ति हो गई?

हिन्दू साहेबान आप शिक्षित हैं, कृपया अब ध्यान दें! :- गीता अध्याय 9 श्लोक 25 में क्या कहा है? अध्याय 7 श्लोक 12-15 तथा 20-23 में क्या कहा है? सुनो! पढ़ो!

गीता अध्याय 9 श्लोक 25 में कहा है :- पित्तरों को पूजने वाले पित्तरों को प्राप्त होते हैं यानि पित्तर बनते हैं। भूत पूजने वाले भूत बनते हैं। देवताओं को पूजने वाले देव लोक में जाते हैं। मेरे भक्त मुझे प्राप्त होते हैं। प्राप्त तो करना है परमात्मा को, आप शिव लोक तथा विष्णु लोक को प्राप्त करके अपने को धन्य मान बैठे हो। गीता के अमृत ज्ञान को फिर से पढ़ो। गीता अध्याय 7 श्लोक 12-15 में तीनों गुणों यानि रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी तथा तमगुण शिव जी की पूजा करते हैं। जिनका ज्ञान इस त्रिगुणमयी माया द्वारा हरा जा चुका है यानि जो इन देवताओं से ऊपर किसी को नहीं मानते। वे राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए, मनुष्यों में नीच, दूषित कर्म करने वाले मूर्ख मुझे नहीं भजते। फिर इसी अध्याय 7 श्लोक 20-23 में इन तीन प्रधान देवताओं से अन्य देवताओं की पूजा करने वालों को कहा है कि इन देवताओं को मैंने ही कुछ शक्ति दे रखी है। जो देवताओं को पूजते हैं, उन अल्पबुद्धि (अज्ञानियों) का वह फल नाशवान है। देवताओं को पूजने वाले देवताओं को प्राप्त होते हैं। मेरा भक्त मुझे प्राप्त होता है।

विचारणीय विषय है कि इस पुस्तक हिमालय तीर्थ के इस प्रकरण के अनुसार श्री शिव जी ने ब्रह्मा जी का सिर काट दिया था जो पांचवा था। वह शिव जी के हाथ से चिपक गया। उससे छुटकारा पाने के लिए शिव जी सब जगह गया, परंतु ब्रह्म हत्या का पाप नहीं छूटा। चौदह भुवन घूमे, पाप नहीं कटा। जैसे ही बदरिकाश्रम पहुँचे तो ब्रह्मा का सिर (कपाल) सहसा हाथ से छूट गया। वह ब्रह्मा का सिर बदरिकाश्रम में ब्रह्म शिला के नाम से विख्यात है। इसे ब्रह्म कपाल तीर्थ भी कहते हैं। यह भी तीर्थ बन गया। वहाँ पिंडदान करने का बहुत लाभ बताया है।

सूक्ष्मवेद में कहा है कि :-

गरीब, भूत जूनी तहाँ छूटत हैं, पिंड दान करंत।
गरीबदास जिंदा कहै, नहीं मिले भगवंत।।

अर्थात् संत गरीबदास जी ने कहा है कि पिण्ड दान करने से भूत योनि तो छूट जाती है। फिर वह जीव गधे की योनि में चला जाता है। क्या मुक्ति

हुई? वेदों में इस कर्मकाण्ड को अविद्या यानि मूर्ख साधना कहा है।

इस प्रकरण से यह सिद्ध किया है कि मूर्ति पूजा, देव पूजा आदि शंकराचार्य जी ने दृढ़ता के साथ प्रारंभ करवा दी। उसी को पूरा हिन्दू समाज घसीट रहा है। सब श्राद्ध करते हैं। सब मूर्ति पूजा, भूत पूजा करते हैं। भूत बने हैं, तभी श्राद्ध करने पड़े। यह सब प्रपंच काल ब्रह्म द्वारा किया गया है। इति सिद्धम् कि :- **''हिन्दू साहेबान नहीं समझे गीता व वेदों का ज्ञान।''**

''अद्भुत प्रसंग''

पृष्ठ 41 पर पुस्तक हिमालय तीर्थ में लिखा है कि भगवान शंकर व पार्वती कपाल मोचन में सुंदर महल बनवाकर निवास करते थे। उस स्थान की विशेषताओं से मुग्ध होकर उस मकान पर कब्जा करने के उद्देश्य से भगवान विष्णु एक बालक रूप धारण करके ऋषि गंगा के पास बुरी तरह हाथ-पैर मारकर रोने लगे। शिव भगवान व माता पार्वती जी स्नान करने जा रहे थे। पार्वती को दया आई। कहा कि कोई पत्थर हृदय स्त्री बालक को छोड़ गई। उसे उठाकर अपने मकान में छोड़ आई। शिव जी ने मना भी किया था कि यह कोई मायावई देव लगता है। पार्वती नहीं मानी। जब स्नान करके शिव जी व पार्वती जी लौटे तो तब तक उस बालक ने चतुर्भुज नारायण रूप धारण करके सारे क्षेत्र पर कब्जा कर लिया था। उसकी नारायण रूप में पूजा होती है। शिव जी विवाद से बचकर उसे छोड़कर केदार नाथ चले गए। वहाँ स्थित हो गए। वहाँ शिव का ज्योतिर्लिंग स्थापित कर दिया।

विचार करो :- इन देवताओं की कहानियों से क्या शिक्षा मिलेगी? क्या दूसरे के घर पर कब्जा करना नेक व्यक्ति का कार्य है? महादुष्ट व्यक्ति ऐसी हरकत करता है। क्या ऐसे व्यक्ति देवता माने जा सकते हैं? क्या इनकी पूजा करने को मन करेगा? क्या श्री विष्णु जी ऐसी बेहूदी हरकत कर सकते हैं? क्या वे बैकुंठ (Heaven) को छोड़कर इस कपाल मोचन पर रहना चाहेंगे? यह सब पुराणों का बोया बीज है। पाठकजन प्रमाण के लिए लगी फोटोकॉपी भी पढ़ें ताकि आपको भ्रम न रह जाए कि रामपाल ने कुछ मिलाकर लिखा है।

सन् 2013 में केदार नाथ पर लाखों श्रद्धालु पूजा के लिए गए थे। तेज बारिश हुई, बाढ़ आ गई। पर्वत गिर गए। लगभग एक लाख भक्त व भक्तमति बहनें, बच्चे मारे गए, अनर्थ हो गया। यदि भक्ति शास्त्रोक्त है तो भक्त की रक्षा परमात्मा करते हैं। यह सब लोक वेद यानि दंत कथा है जो इस हिमालय तीर्थ पुस्तक में बताई हैं। इस साधना से अनमोल मानव जीवन नष्ट हो जाता है। ये सब प्रपंच यानि षड्यंत्र काल ब्रह्म ने किए हैं जीवों से शास्त्रविधि के विपरीत फिजूल की पूजा करवाने के लिए। उनका मानव जीवन नष्ट करवाने के लिए।

पुस्तक ''हिमालय तीर्थ'' से फोटोकॉपी :-
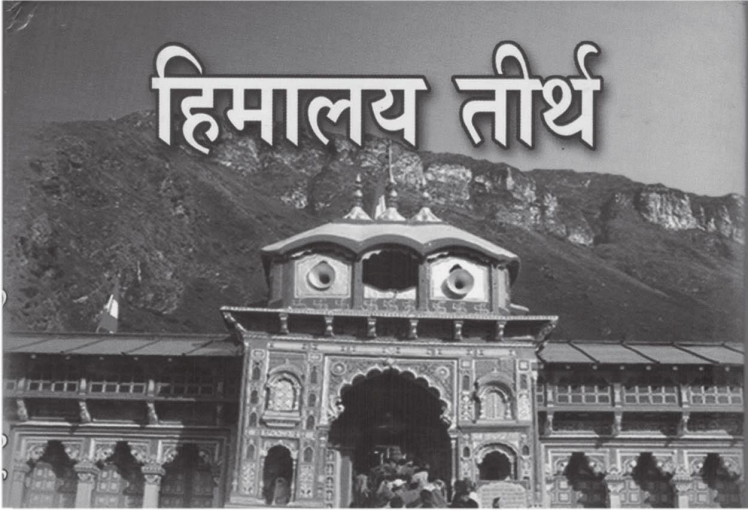
Himalaya Teertha
A Book on Pilgrimage
by J. P. Namboori
Dy. C.E.O.B.K.T.C
Rs. 80/-

पहला प्रकाश :
कलकाता पुस्तक मेला, २००९

प्रकाशक :
रन्जु चक्रवर्ती
76A/1, बामाचरण राय रोड
कलकाता-७००००८
दूरभाष : ०३३-२४०६-८५९७

ग्रन्थसत्व :
जे० पी० नम्बूरी

मुद्रक :
गिरि प्रिन्ट सर्विस
कलकाता

कीमत : अस्सी रु. 80/-

''पढ़ें फोटोकॉपी पुस्तक हिमालय तीर्थ के पृष्ठ 17-21 तथा 41-42 की''

ॐ श्री केदारेश्वरो विजयतेतराम्

उत्तराखण्ड के पंच केदार

श्री केदारनाथ

भारत के उत्तर नागाधिराज की सुरम्य उपत्यका में स्थित केदार क्षेत्र प्राचीनकाल से ही मानव मात्र के लिए पावन मोक्षदायक रहा है। इस क्षेत्र की प्राचीनता एवं पौराणिक महत्व के सम्बन्ध में स्वयं भगवान शंकर ने स्कन्द पुराण में माता पार्वती के प्रश्न का उत्तर अपने श्रीमुख से निम्नप्रकार दिया है :

पुरातनो यथाहं वै तथास्थानमिदं किल।
यदासृष्टिक्रियायांचमयावैब्रह्ममूर्तिना।।
स्थितमत्रैव सततं परब्रह्म जिगीषया।
तदादिकमिदं स्थानं देवानामपिदुर्लभम्।।

(स्क०पु० केदारखण्ड 41/5-6)

अर्थात्

हे प्राणेश्वरी! यह क्षेत्र उतना ही प्राचीन है जितना कि मैं हूँ। मैने इसी स्थान पर सृष्टि की रचना के लिए ब्रह्मा के रूप में परब्रह्मत्व प्राप्त करके सृष्टि निर्माण का शुभाराम्भ किया, तभी से यह स्थान मेरा चिरप्रिय आवास है। यह केदारखण्ड मेरा चिरनिवास होने के कारण भू-स्वर्ग के समान है।

भगवान शंकर का सुप्रसिद्ध ज्योतिर्लिग भारत के विख्यात बारह ज्योतिर्लिगों में से ग्यारहवां ज्योतिर्लिग है। सुदूर उच्च हिमालय में समुद्र तल से 11,750 फीट (3,500 मीटर) की ऊंचाई पर श्री नर और नारायण ऋषि द्वारा प्रतिष्ठित है। पुराणों के अनुसार इस पुण्य फलदायी ज्योतिर्लिंग की स्थापना के सम्बन्ध में इसप्रकार बर्णन- अनन्त रत्नों के जनक अतिशय पवित्र केदार नामक अत्यन्त शोभा से युक्त शिखर पर पूर्वकाल में महातपस्वी

ऋषि श्री नर और नारायण ने भगवान शिव को प्रसन्न करने के लिये बड़ी कठिन तपस्या की। इस तपस्या से तीनों लोकों में उनकी चर्चा होने लगी, जिसकी सभी लोकों में प्रशंसा होने लगी। फलस्वरूप भगवान शंकर भी नर-नारायण की तपस्या से प्रसन्न हुए और उन्होंने प्रत्यक्ष प्रकट होकर ऋषियों को दर्शन दिया। दोनों ऋषियों ने भगवान भोलेनाथ के दर्शन से आनन्द विभोर होकर स्तुतियों और मंत्रों से उनकी पूजा अर्चना की। भगवान शिव ने अत्यन्त प्रसन्न होकर उनसे वर मांगने को कहा। भगवान शंकर की यह बात सुनकर उन दोनों ऋषियों ने देवाधिदेव महादेव से प्रार्थना की

यदि प्रसन्नो देवेश यदि देयो बरस्त्वया।
स्थीयतां स्वेन रूपेण पूजार्थे शंकर स्वयम्।।

(शिवपुराण कोटिरूद्र संहिता 19-6)

अर्थात्

हे प्रभो! यदि आप प्रसन्न हैं और वर देना चाहते है तो अपने इसी स्वरूप में जगत् कल्याण एवं हमारी पूजा प्राप्त करने हेतु यहाँ स्थित होवें, ताकि जगत् का महान उपकार एवं भक्तों के मनोरथ आपके दर्शनों से परिपूर्ण हों। इसप्रकार भगवान शंकर नर-नारायण की भक्ति से प्रसन्न होकर वहाँ स्थित हुए।

देवाधिदेव महादेव यदि आप हम पर प्रसन्न हों तो भक्तों के कल्याण हेतु आप सदा-सदा के लिये अपने स्वरूप को इस स्थान पर स्थापित करने की कृपा करें। यहां आकर आपका दर्शन-पूजन करने वाले मनुष्यों को आपकी अविनाशी भक्ति प्राप्त होगी। ऋषियों की प्रार्थना सुनकर भगवान शिव ने ज्योर्तिर्लिंग के रूप में यहां वास करना स्वीकार किया। भगवान शिव से वर मांगते हुए नर और नारायण ऋषियों ने इस ज्योतिर्लिंग और इस पवित्र स्थान के विषय में जो कुछ कहा है वह अक्षरशः सत्य है। इस ज्योर्तिर्लिंग के दर्शन, पूजन तथा यहां स्नान, दान करने से भक्तों

के लौकिक फलों की प्राप्ति के साथ-साथ ही अचल शिवभक्ति और साथ ही मोक्ष की प्राप्ति भी सहज हो जाती है। हिमालय में केदार नामक पर्वत शिखर पर प्रतिष्ठित होने के कारण इस ज्योतिर्लिंग को श्री केदारेश्वर ज्योतिर्लिंग के नाम से जाना जाता है। केदार शब्द का शाव्दिक अर्थ ऐसे स्थान से होता है जहां दलदल एवं अति मात्रा में पानी हो। केदार क्षेत्र में यही स्थिति है, क्योंकि भगवान शंकर जलधारा प्रिया हैं।

नर और नारायण ऋषियों के पश्चात् अन्य ऋषि मुनियों व भक्तों द्वारा यह ज्योर्तिर्लिंग पूजित रहा है। तत्पश्चात् महाभारत काल में पाण्डवों द्वारा गोत्र हत्या अर्थात् महाभारत युद्ध में अपने भाई, बन्धुओं आदि की हत्या के पाप से मुक्ति हेतु यहां पर देवाधिदेव महादेव की अराधना की गयी। इसी प्रसंग में पुराणों में एक कथा आती है। भगवान वेद व्यास जी की आज्ञा से पाण्डव केदार क्षेत्र में आये। भगवान महिष (भैंस) का रूप का धारण कर केदार अंचल में विचरण करने लगे। भीम ने भगवान शिव को मायावी महिष के रूप में पहचान लिया व ऐसा जानकर भगवान शिव महिष रूप में पृथ्वी में समा ही रहे थे कि महाबली भीम ने दौड़कर उनका पिछला भाग पकड़ लिया। पाण्डवों की भक्ति एवं विश्वास को देखकर भगवान शिव ने उन्हें साक्षात् दर्शन दिये व गोत्र हत्या, गुरू हत्यापाप के फलस्वरूप प्रायश्चित् के रूप में भीम द्वारा पकड़े गये पृष्ठ भाग की पूजा अर्चना का आदेश देकर वहीं अन्तर्धान हो गये। पृष्ठ भाग ने शिला का रूप धारण किया जो पाण्डवों द्वारा पूजित हुआ व तब से आज तक पूजित है। महिष का अग्र भाग नेपाल में जाकर प्रकट हुआ जो पशुपतिनाथ के नाम से विख्यात हुआ।

महिष के अन्य चार भाग क्रमशः तुंगनाथ में बाहु, रुंद्रनाथ में मुख मद्महेश्वर में नाभि कल्पेश्वर में जटा। इसप्रकार केदारनाथ को छोड़कर महिष रूपी भगवान शंकर के अन्य चार भाग केदार क्षेत्र में प्रतिष्ठित हुए। केदारनाथ सहित ये स्थान पंच केदार के नाम से विख्यात हैं।

तद्रूपेण स्थितस्तत्र भक्तवत्सल नामभाक्।
नयपाले शिरोभागो गतस्तद्रूपतस्थितः।।

(शिव पु० 19-15)

अर्थात्

आकाशवाणी हुई कि हे पाण्डवों! मेरे इसी स्वरूप की पूजा से तुम्हारे मनोरथ पूर्ण होंगे। तदनन्तर पाण्डवों ने इसी स्वरूप की विधिवत् पूजा की व गोत्रहत्या के पाप से मुक्त हुए और पाण्डवों ने ही भगवान केदारनाथ जी के विशाल एवं भव्य मन्दिर का निर्माण किया। तब से भगवान् आशुतोष केदारनाथ में दिव्य ज्योतिर्लिंग के रूप में आसीन हो गये एवं उनका केदार क्षेत्र में निरन्तर वास है।

तत्र नित्यं हरस्साक्षात् क्षेत्रे केदार संज्ञके।
भारतीभिः प्रजाभिश्च तथैव परिपूज्यते।।

(शिव पू० 19-18)

अर्थात्

बदरिकाश्रम की यात्रा से पूर्व केदारनाथ जी के पुण्य दर्शनों का माहात्म्य है। जो स्कन्द पुराण केदारखण्ड में स्पष्ट है कि :

अकृत्वा दर्शनं पुण्यं केदारस्याऽघनाशिनः।
योगच्छेद् बदरीं तस्य, यात्रा निष्फलतांव्रजेत्।।

(केदारखण्ड)

अर्थात्

पुराणों से कल्पान्तर भेद से यह अंकित हैं कि महिष रूपी भगवान शिव का मुख भाग 'रूद्रनाथ में, भुजायें तुंगनाथ में, नाभि मद्महेश्वर में एवं जटाजूट कल्पेश्वर में प्रकट होते हैं। केदारनाथ जी सहित भगवान् शिव के कैलाश में यही पंच केदार हैं :

केदारं मध्यमं तुंगं तथा रूद्रालयं प्रियं।

कल्पर्क च महादेवी! सर्वपाप प्रणाशनम्।।

(केदारखण्ड)

अर्थात्

वेदों के आधार पर हिमालय प्रदेश पांच खण्डों में विभक्त है। केदारखण्ड उक्त पांचों खण्डों के केन्द्र में है।

खण्डाः पंच हिमालयस्य कथिता नैपाल कूर्माञ्चलौ।
केदारोऽथ जलंधरोऽथरूचिरः काश्मीरसंज्ञोन्तिमः।।

अर्थात्

केदारखण्ड के पूर्व में बौद्धांचल, पर्वत, पश्चिम में तमसा (टोन्स) नदी, दक्षिण में हरिद्वार और उत्तर में श्वेताम्बर पर्वत है। इस क्षेत्र के अन्तर्गत असंख्य तीर्थ विद्यमान हैं। जिनमें केदारनाथ सर्वश्रेष्ठ है। यह स्थान देवताओं के लिए दुर्लभ है। केदारखण्ड का प्रत्येक शिलाखण्ड शिवस्वरूप है, तथा समस्त धारायें सुरसरि समान हैं। यदि कोई शुद्ध मन से विचार करे कि मैं केदारनाथ जाऊंगा, तो इतने संकल्प मात्र से ही उसके तीन सौ कुलों के पितृगण शिवलोक को प्राप्त कर लेते हैं :

धन्यास्ते पुरूषा लोके पुण्यात्मानो महेश्वरि!
ये वन्दन्त्यपि केदारं गमिष्यामइतिक्वचित्।।
पितरस्तस्य देवेशि! त्रिशतं कुलसंयुताः।
गच्छन्ति शिवलोके तु सत्यं- सत्यं न संशयः।।

(स्क०पू० 41/9-10)

अर्थात्

श्री केदारनाथ में अनेक पावन एवं मुक्तिदायक स्थल एवं कुण्ड हैं। उदककुण्ड जो केदारनाथ ज्योतिर्लिंग के निकट ही स्थित है उस जल के पान करने से घोर पापी भी मरणोपरान्त शिवलोक प्राप्त कर शिवस्वरूप हो जाता है।

है। पुराणों में कथा आती है कि अग्निदेव सर्वहारा-सर्वभक्षी दोष से मुक्ति की आशा से यहां तपस्या कर भगवान से वर प्राप्त करते हैं व निरन्तर भगवान के दर्शनार्थ आने वाले यात्रियों की सेवा जल को ऊष्ण कर करते हैं।

आदिकेदारेश्वर मन्दिर

पुराणों में शंकर जी के कपाल मोचन सम्बन्धी प्रसंग एवं उनकी बदरी क्षेत्र में स्थित होने की कथायें विस्तार से वर्णित हैं। इसी क्रम में दूसरा मत यह भी है कि पूर्व शिव-पार्वती का ही यह निवास स्थान था, भगवान विष्णु इस क्षेत्र की विशेषताओं से मुग्ध होकर इसे अपना बनाना चाहते थे, एक दिन जव भगवान शिव-पार्वती सहित स्नान हेतु जा रहे थे तो ऋषिगंगा के दायें भाग में स्थित एक शिलाखण्ड (लीलाडुंगी) में रोते एवं हाथ-पैर पटकते बालक को देख पार्वती भगवान शिव से कहती है कि नाथ किसी पाषाण हृदया देवी ने कैसे सुन्दर बच्चे को यहाँ फेंक दिया है इसे भवन में रखें तब आगे बड़े। अन्तर्यामी भगवान शिव सारे रहस्य को जान पार्वती को सचेत करते हैं कि देवी यह कोई मायावी कुमार है। इसका चक्कर ठीक नहीं देखो छली जाओगी, परन्तु ममतामयी माता पार्वती बच्चे को उठाकर भवन में रखती हैं। जब स्नान कर लौटती हैं तो बालक ने चर्तुभुज नारायण के रूप में प्रकट होकर पूरे क्षेत्र पर अपना अधिकार कर लिया था। भगवान शिव विवाद से बचकर इस क्षेत्र को त्याग देते हैं और केदार क्षेत्र में स्थित हो जाते हैं। भगवान शिव ने अपने श्री मुख से माँ पार्वती को बताया है कि देवी :

तत्र केदार रूपेण मम लिंग प्रतिष्ठितम्।
केदार दर्शनात् स्पर्शात् नरौ वैः भक्तिभावतः।।
कोटि जन्म कृतं पापं भस्मीभवति तत्क्षणात्।
कलामात्रेण तिष्ठामि तत्र क्षेत्रे विशेषतः।।
(स्कन्ध पुराण ब०म० 2/13-14)

अर्थात आज भी बदरिकाश्रम में आदि केदार के रूप में मेरा लिंग प्रतिष्ठित है, जिसका दर्शन एवं स्पर्श यदि प्राणी भक्ति पूर्वक करता है तो करोड़ों जन्मो के पाप भस्म हो जाते हैं।

तीर्थ परम्परा में भी पूर्व केदारनाथ जी के दर्शन आवश्यक बताये गये हैं जो कार्य तीर्थ यात्री पूर्व केदारनाथ न जा पाये हों वे भी आदि केदारेश्वर दर्शन के उपरान्त पूर्ण तीर्थ फल के अधिकारी होते हैं।

शंकराचार्य

आदि केदारेश्वर के समक्ष शंकराचार्य जी की दिव्य संगमरमर की मूर्ति है। शिव रहस्य के अनुसार :

कलौगतेत्रिसाहस्त्रे वर्षाणां शंकरो यतिः।
बौद्ध मीमांसक मतं जेतुमाबिर्बभूवह।। (शिव रहस्य)

अर्थात् कलियुग के तीन हजार वर्ष व्यतीत होने पर बौद्ध मीमांसकों के मत पर विजय प्राप्ति के लिए शंकर यति के रूप में अविर्भूत होंगे। शंकराचार्य जी के दर्शनों के उपरान्त भगवान बदरीश्वर के मन्दिर में प्रवेश की परम्परा है।

इसी पुस्तक के पृष्ठ 78-85 तक जो फोटोकॉपी लगी है, इनमें कहा है कि नर तथा नारायण ऋषियों ने कठिन तप (घोर तप) किया। घोर तप करने के विषय में गीता क्या कहती है, कृपया पढ़ें निम्न प्रसंग :-

❖ विश्व में जितने धर्म (पंथ) प्रचलित हैं, उनमें सनातन धर्म (सनातन पंथ जिसे आदि शंकराचार्य के बाद उनके द्वारा बताई साधना करने वालों के जन-समूह को हिन्दू कहा जाने लगा तथा सनातन पंथ को हिन्दू धर्म के नाम से जाना जाने लगा, यह हिन्दू धर्म) सबसे पुरातन है।

हिन्दू धर्म की रीढ़ पवित्र चारों वेद (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा

अथर्ववेद) तथा पवित्र श्रीमद्भगवत गीता है। सत्ययुग के प्रारंभ में केवल चार वेदों के आधार से विश्व का मानव धर्म-कर्म किया करता था। शास्त्रोक्त साधना लगभग एक लाख वर्ष तक ठीक से चली। ये चारों वेद प्रभुदत्त (God Given) हैं। इन्हीं का सार श्रीमद्भगवत गीता है। इसलिए यह गीता शास्त्र भी प्रभुदत्त (God Given) हुआ।

ध्यान देने योग्य है कि जो ज्ञान स्वयं परमात्मा ने बताया है, वह ज्ञान पूर्ण सत्य होता है। इसलिए ये दोनों शास्त्र निःसंदेह विश्वसनीय हैं। प्रत्येक मानव को इनके अंदर बताई साधना करनी चाहिए। वह साधना शास्त्रविधि अनुसार कही जाती है। इन शास्त्रों में जो साधना नहीं करने को कहा है, उसे जो करता है तो वह शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण कर रहा है जिसके विषय में गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में इस प्रकार कहा है :-

➢ श्लोक नं. 23 :- जो पुरूष यानि साधक शास्त्रविधि को त्यागकर अपनी इच्छा से मनमाना आचरण करता है, वह न सिद्धि को प्राप्त होता है, न परम गति यानि पूर्ण मोक्ष को और न सुख को ही।(गीता अध्याय 16 श्लोक 23)

➢ श्लोक नं. 24 :- इससे तेरे लिए इस कर्तव्य यानि जो भक्ति कर्म करने योग्य हैं और अकर्तव्य यानि जो भक्ति कर्म न करने योग्य हैं, इस व्यवस्था में शास्त्र ही प्रमाण हैं। ऐसा जानकर तू शास्त्रविधि से नियत कर्म यानि जो शास्त्रों में करने को कहा है, वो भक्ति कर्म ही करने योग्य हैं।(गीता अध्याय 16 श्लोक 24)

हिन्दू साहेबान! पढ़ें फोटोकॉपी श्रीमद्भगवत गीता पदच्छेद, अन्वय के अध्याय 16 श्लोक 23-24 की प्रमाण के लिए, जो गीता प्रेस गोरखपुर से मुद्रित तथा प्रकाशित है तथा श्री जयदयाल गोयन्दका जी द्वारा अनुवादित है :-

(गीता अध्याय 16 श्लोक 23 की फोटोकॉपी)

यः, शास्त्रविधिम्, उत्सृज्य, वर्तते, कामकारतः,
न, सः, सिद्धिम्, अवाप्नोति, न, सुखम्, न, पराम्, गतिम्॥ २३॥

और—

यः	= जो पुरुष	**सिद्धिम्**	= सिद्धिको
शास्त्रविधिम्	= शास्त्रविधिको	**अवाप्नोति**	= प्राप्त होता है,
उत्सृज्य	= त्यागकर	**न**	= न
कामकारतः	= अपनी इच्छासे मनमाना	**पराम्**	= परम
वर्तते	= आचरण करता है,	**गतिम्**	= गतिको (और)
सः	= वह	**न**	= न
न	= न	**सुखम्**	= सुखको ही।

(गीता अध्याय 16 श्लोक 24 की फोटोकॉपी)

तस्मात्, शास्त्रम्, प्रमाणम्, ते, कार्याकार्यव्यवस्थितौ,
ज्ञात्वा, शास्त्रविधानोक्तम्, कर्म, कर्तुम्, इह, अर्हसि॥ २४॥

तस्मात्	= इससे	**प्रमाणम्**	= प्रमाण है।
ते	= तेरे लिये	**(एवम्)**	= ऐसा
इह	= इस	**ज्ञात्वा**	= जानकर (तू)
कार्याकार्यव्यवस्थितौ	= कर्तव्य और अकर्तव्यकी व्यवस्थामें	**शास्त्रविधानोक्तम्**	= शास्त्रविधिसे नियत
		कर्म	= कर्म (ही)
		कर्तुम्	= करने
शास्त्रम्	= शास्त्र (ही)	**अर्हसि**	= योग्य है।

''देवताओं की पूजा का लाभ''

❖ पढ़ते हैं पवित्र श्रीमद्भगवत गीता से अध्याय 17 श्लोक 1-6 :-

श्लोक 1 :- इस श्लोक में अर्जुन ने गीता ज्ञान देने वाले प्रभु से प्रश्न किया कि :-

➢ हे कृष्ण! जो मनुष्य शास्त्रविधि को त्यागकर श्रद्धा से युक्त हुए देवादि का पूजन करते हैं, उनकी स्थिति फिर कौन-सी है? सात्विक है अथवा राजसी या तामसी?(गीता अध्याय 17 श्लोक 1)

इसका उत्तर श्लोक 2-6 तक दिया है। गीता ज्ञान दाता प्रभु का उत्तर :-

➢ संक्षिप्त में इस प्रकार है :- मनुष्यों की श्रद्धा उनके पूर्व जन्म के संस्कार अनुसार सात्विक, राजसी तथा तामसी होती है। (गीता अध्याय 17 श्लोक 2)

➢ हे भारत! सभी मनुष्यों की श्रद्धा उनके अंतःकरण के अनुरूप होती है। जिसकी जैसी श्रद्धा होती है, वह स्वयं भी वही है यानि वैसे ही स्वभाव का है। (गीता अध्याय 17 श्लोक 3)

➢ शास्त्र विरूद्ध साधना करने वाले सात्विक पुरूष देवों को पूजते हैं। राजस पुरूष यक्ष और राक्षसों को तथा अन्य जो तामस मनुष्य हैं, वे प्रेत और भूतगणों को पूजते हैं। (गीता अध्याय 17 श्लोक 4)

➢ हे अर्जुन! जो मनुष्य शास्त्रविधि से रहित (केवल मनमाना/मन कल्पित) घोर तप को तपते हैं तथा दम्भ और अहंकार से युक्त कामना, आसक्ति और बल के अभिमान से भी युक्त हैं।(गीता अध्याय 17 श्लोक 5)

➢ तथा जो शरीर रूप से स्थित भूत समुदाय को तथा अंतःकरण में स्थित मुझ को (गीता ज्ञान दाता प्रभु को) भी कृश करने वाले हैं यानि कष्ट पहुँचाते हैं। उन अज्ञानियों को तू असुर स्वभाव वाले जान।(गीता अध्याय 17 श्लोक 6)

❖ यही प्रमाण गीता अध्याय 16 श्लोक 17-20 में भी है। कहा है कि :-

➢ श्लोक 17 :- वे अपने आप को ही श्रेष्ठ मानने वाले घमण्डी पुरूष धन और मान के मद से युक्त केवल नाम मात्र के यज्ञों द्वारा पाखण्ड से शास्त्रविधि रहित यजन (पूजन) करते हैं।(गीता 16 श्लोक 17)

➢ श्लोक 18 :- अहंकार, बल, घमण्ड, क्रोधादि के परायण और दूसरों की निंदा करने वाले पुरूष अपने और दूसरों के शरीर में स्थित मुझ से (गीता ज्ञान दाता से) द्वेष करने वाले होते हैं।(गीता अध्याय 16 श्लोक 18)

➢ श्लोक 19 :- उन द्वेष करने वाले पापाचारी और क्रूरकर्मी, नराधमों को (नीच मनुष्यों को) मैं संसार में बार-बार आसुरी योनियों में ही डालता हूँ।(गीता अध्याय 16 श्लोक 19)

➢ श्लोक 20 :-हे अर्जुन! वे मूढ़ (मूर्ख) मुझको न प्राप्त होकर ही जन्म-जन्म में आसुरी योनि को प्राप्त होते हैं। फिर उससे भी अति नीच गति को प्राप्त होते हैं यानि घोर नरक में गिरते हैं।

❖ उपरोक्त श्रीमद्भगवत गीता के श्लोकों का निष्कर्ष :-

गीता अध्याय 17 श्लोक 1 में अर्जुन ने पूछा है कि हे कृष्ण! जो मनुष्य शास्त्रविधि को त्यागकर श्रद्धा से युक्त हुए देवादि का पूजन करते हैं। वे स्वभाव से कैसे होते हैं? अर्जुन ने गीता अध्याय 7 श्लोक 12-15 में पहले सुना था कि तीनों गुणों यानि त्रिगुणमयी माया अर्थात् रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी तथा तमगुण शिव जी आदि देवताओं को पूजने वाले उन्हीं तक सीमित हैं। उनकी बुद्धि उनसे ऊपर मुझ गीता ज्ञान दाता की भक्ति तक नहीं जाती। जिनका ज्ञान इस त्रिगुणमयी माया द्वारा हरा जा चुका है, वे राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए मनुष्यों में नीच दूषित कर्म करने वाले मूर्ख मेरी भक्ति नहीं करते।

❖ गीता अध्याय 7 श्लोक 20-23 में इस प्रकार कहा है :-

इनमें श्लोक 12-15 को फिर दोहराया है। कहा है कि उन-उन भोगों की कामना द्वारा जिनका ज्ञान हरा जा चुका है। वे लोग अपने स्वभाव से प्रेरित होकर उस-उस नियम को धारण करके यानि लोकवेद, दंत कथाओं के आधार से अन्य देवताओं को भजते हैं अर्थात् पूजते हैं। जो गीता में निषेध है कि रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी तथा तमगुण शिव जी व अन्य देवी-देवताओं की पूजा नहीं करनी चाहिए। वे लोक वेद के आधार से किसी से सुनकर देवताओं को भजते हैं। वे देवताओं की पूजा शास्त्रविधि रहित यानि मनमाना आचरण करते हैं जिसको गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में व्यर्थ साधना बताया है। उसी के विषय में गीता अध्याय 17 श्लोक 1 में अर्जुन ने प्रश्न किया है कि हे कृष्ण! जो व्यक्ति शास्त्रविधि को त्यागकर अपनी इच्छा से अन्य देवताओं का पूजन करते हैं। उनकी निष्ठा कैसी है

यानि उनकी स्थिति राजसी है या सात्विक है या तामसी है?

भावार्थ है कि जो श्री ब्रह्मा जी रजगुण, श्री विष्णु जी सतगुण तथा श्री शिव जी तमगुण व अन्य देवताओं की पूजा करते हैं। वह पूजा है तो शास्त्रविधि रहित, परंतु जो अन्य देवताओं की जो न करने योग्य (अकर्तव्य) पूजा करते हैं, वे स्वभाव से कैसे होते हैं?

❖ गीता ज्ञान देने वाले ने गीता अध्याय 17 श्लोक 2-6 में ऊपर स्पष्ट कर दिया है कि जो सात्विक श्रद्धा वाले यानि अच्छे इंसान हैं, वे तो केवल देवताओं की पूजा करते हैं। अन्य जो राजसी स्वभाव के हैं, वे राक्षसों व यक्षों की पूजा करते हैं। जो तामसी श्रद्धामय यानि स्वभाव के हैं, वे प्रेत और भूतों की पूजा करते हैं। {ध्यान रहे कि श्राद्ध करना, पिंडदान करना, अस्थियों को गंगा में पंडित द्वारा जल प्रवाह करने की क्रिया, तेरहवीं क्रिया, वर्षी क्रिया, ये सब कर्मकांड कहलाता है जो गीता में निषेध बताया है। वेदों में इसे मूर्ख साधना कहा है। प्रमाण :- मार्कण्डेय पुराण में ''रौच्य ऋषि की उत्पत्ति'' अध्याय में :- रूचि ऋषि ने ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए एकांत में रहकर वेदों अनुसार भक्ति की। जब वे 40 वर्ष के हो गए तो उसके पूर्वज आकाश में दिखाई दिए। वे रूचि ऋषि से बोले (पिता जी, दादा जी, दूसरा दादा जी, तीसरा दादा जी जो ब्राह्मण यानि ऋषि थे। वे कर्मकांड किया करते थे। जिस कारण से उनकी गति नहीं हुई। वे प्रेत-पित्तर योनि में कष्ट उठा रहे थे। उन्होंने शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण करके जीवन नष्ट किया था, महादुःखी थे। उन्होंने रूचि ऋषि से कहा) बेटा! तूने विवाह क्यों नहीं कराया। हमारे श्राद्ध आदि क्रिया यानि कर्मकांड क्यों नहीं किया? रूचि ऋषि ने उत्तर दिया कि हे पितामहो! वेदों में कर्मकांड को अविद्या (मूर्ख साधना) कहा है। फिर आप मुझे क्यों ऐसा करने को कह रहे हो। पित्तर बोले, बेटा रूचि! यह सत्य है कि कर्मकांड को वेदों में अविद्या कहा है। आप जो साधना कर रहे हो। यह मोक्ष मार्ग है। हम महाकष्ट में हैं। हमारी गति कर यानि विवाह करवा। हमारे पिंडदान आदि कर्म करके भूत जूनी से पीछा छुड़ा। वे स्वयं तो शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण करके कर्मकांड करके प्रेत बने थे। अपने बच्चे रूचि को (जो शास्त्रोक्त भक्ति कर रहा था) सत्य साधना छुड़वाकर नरक का भागी बना दिया। रूचि ऋषि ने विवाह कराया। फिर कर्मकांड किया। फिर वह भी भूत बना। पिंडदान करने से भूत जूनी छूट जाती है। उसके बाद जीव पशु-पक्षी आदि की योनि प्राप्त करता है। क्या खाक गति कराई? सूक्ष्मवेद में कहा है कि :-

गरीब, भूत योनि छूटत है, पिंड प्रदान करंत।
गरीबदास जिंदा कह, नहीं मिले भगवंत।।

अर्थात् संत गरीबदास जी ने सूक्ष्मवेद में बताया है कि पिंड दान करने

से भूत योनि छूट जाती है। परमात्मा प्राप्ति नहीं होती। भूत-पित्तर योनि छूट गई। फिर कुत्ता या गधा बन गया। क्या खाक गति हुई?

गीता अध्याय 9 श्लोक 25 में भी स्पष्ट है।

गीता अध्याय 9 श्लोक 25 :- देवताओं को पूजने वाले देवताओं को प्राप्त होते हैं। पित्तरों को पूजने वाले पित्तरों को प्राप्त होते हैं। भूतों को पूजने वाले भूतों को प्राप्त होते हैं यानि भूत बनते हैं। मेरा (गीता ज्ञान दाता का) पूजन करने वाले मुझको प्राप्त होते हैं। इसलिए शास्त्र विधि अनुसार भक्ति करना लाभदायक है। ऐसा करो।}

❖ गीता अध्याय 17 के ही श्लोक 5-6 में स्पष्ट कर दिया है कि जो शास्त्रविधि से रहित मनमाना आचरण करते हुए घोर तप को तपते हैं। ये तथा उपरोक्त अन्य देवताओं यानि रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी तथा तमगुण शिव जी तथा अन्य देवी-देवताओं की पूजा करने वाले भूत व प्रेत पूजा (श्राद्ध आदि कर्मकाण्ड करना भूत व प्रेत पूजा है) करते हैं तथा जो यक्ष व राक्षसों की पूजा करते हैं। वे शरीर में स्थित भूतगणों (जो कमलों में विराजमान शक्तियाँ हैं, उनको) और अंतःकरण में स्थित मुझको (गीता ज्ञान दाता को) कृश करने वाले हैं। उन अज्ञानियों को असुर स्वभाव के जान। गीता अध्याय 16 श्लोक 17-20 में आप जी ने इसी विषय को पढ़ा। कहा है कि जो शास्त्रविधि रहित पूजन करते हैं, वे अपने शरीर में तथा दूसरों के शरीर में स्थित मुझ (गीता ज्ञान दाता) से द्वेष करने वाले हैं क्योंकि वे अन्य देवताओं की पूजा करते हैं। (गीता ज्ञान दाता यानि काल ब्रह्म की पूजा नहीं करते। इसलिए द्वेष करने वाले कहा है।) उन द्वेष करने वाले यानि श्री ब्रह्मा जी रजगुण, श्री विष्णु जी सतगुण तथा श्री शिव जी तमगुण जो काल ब्रह्म की तीन प्रधान शक्तियाँ हैं तथा अन्य देवी-देवताओं की पूजा करने वाले पापाचारी, क्रूरकर्मी, नराधमों को मैं बार-बार आसुरी योनियों में डालता हूँ।(गीता अध्याय 16 श्लोक 17-19)

❖ गीता अध्याय 16 श्लोक 20 में कहा है कि हे अर्जुन! वे मूढ़ (मूर्ख) मुझको न प्राप्त होकर जन्म-जन्म में आसुरी योनि को प्राप्त होते हैं। फिर उससे भी अति नीच गति को प्राप्त होते हैं यानि घोर नरक में गिरते हैं।

❖ उपरोक्त गीता के प्रकरण को समझने के लिए यानि प्रमाण के लिए कृपया पढ़ें और आँखों देखें उपरोक्त श्लोकों की फोटोकापियाँ जो श्रीमद्भगवत गीता पदच्छेद, अन्वय से हैं जो भारत की प्रसिद्ध व विश्वसनीय गीता प्रेस गोरखपुर से मुद्रित तथा प्रकाशित है तथा श्री जयदयाल गोयन्दका द्वारा अनुवादित है :-

''गीता अध्याय 17 के कुछ श्लोकों की फोटोकॉपी''

(गीता अध्याय 17 श्लोक 1 की फोटोकॉपी)

ये, शास्त्रविधिम्, उत्सृज्य, यजन्ते, श्रद्धया, अन्विताः,
तेषाम्, निष्ठा, तु, का, कृष्ण, सत्त्वम्, आहो, रजः, तमः ॥ १ ॥

इस प्रकार भगवान्‌के वचनोंको सुनकर अर्जुन बोले—

कृष्ण	= हे कृष्ण!	**तेषाम्**	= उनकी
ये	= जो मनुष्य	**निष्ठा**	= स्थिति
शास्त्रविधिम्	= शास्त्रविधिको	**तु**	= फिर
उत्सृज्य	= त्यागकर	**का**	= कौन-सी है?
श्रद्धया	= श्रद्धासे	**सत्त्वम्**	= सात्त्विकी है
अन्विताः	= युक्त हुए	**आहो**	= अथवा
यजन्ते	= देवादिका पूजन करते हैं,	**रजः**	= राजसी (किंवा)
		तमः	= तामसी?

(गीता अध्याय 17 श्लोक 2 की फोटोकॉपी)

त्रिविधा, भवति, श्रद्धा, देहिनाम्, सा, स्वभावजा,
सात्त्विकी, राजसी, च, एव, तामसी, च, इति, ताम्, शृणु ॥ २ ॥

इस प्रकार अर्जुनके पूछनेपर श्रीकृष्णभगवान् बोले—हे अर्जुन!—

देहिनाम्	= मनुष्योंकी	**च**	= तथा
सा	= वह (शास्त्रीय संस्कारोंसे रहित केवल)	**तामसी**	= तामसी—
		इति	= ऐसे
		त्रिविधा	= तीनों प्रकारकी
स्वभावजा	= स्वभावसे उत्पन्न*	**एव**	= ही
श्रद्धा	= श्रद्धा	**भवति**	= होती है।
सात्त्विकी	= सात्त्विकी	**ताम्**	= उसको (तू)
च	= और	**(मत्तः)**	= मुझसे
राजसी	= राजसी	**शृणु**	= सुन।

(गीता अध्याय 17 श्लोक 3 की फोटोकॉपी)

सत्त्वानुरूपा, सर्वस्य, श्रद्धा, भवति, भारत,
श्रद्धामयः, अयम्, पुरुषः, यः, यच्छ्रद्धः, सः, एव, सः ॥ ३ ॥

भारत	= हे भारत!	**श्रद्धामयः**	= श्रद्धामय है,
सर्वस्य	= सभी मनुष्योंकी	**(अतः)**	= इसलिये
श्रद्धा	= श्रद्धा	**यः**	= जो पुरुष
सत्त्वानुरूपा	= उनके अन्तःकरणके अनुरूप	**यच्छ्रद्धः**	= जैसी श्रद्धावाला है,
भवति	= होती है।	**सः**	= वह स्वयं
अयम्	= यह	**एव**	= भी
पुरुषः	= पुरुष	**सः**	= वही है।

(गीता अध्याय 17 श्लोक 4 की फोटोकॉपी)

यजन्ते, सात्त्विका:, देवान्, यक्षरक्षांसि, राजसा:,
प्रेतान्, भूतगणान्, च, अन्ये, यजन्ते, तामसा:, जना: ॥ ४ ॥

उनमें—

सात्त्विका:	= सात्त्विक पुरुष	**अन्ये**	= अन्य (जो)
देवान्	= देवोंको	**तामसा:**	= तामस
यजन्ते	= पूजते हैं,	**जना:**	= मनुष्य हैं, (वे)
राजसा:	= राजस पुरुष	**प्रेतान्**	= प्रेत
यक्षरक्षांसि	= यक्ष और राक्षसोंको (तथा)	**च**	= और
		भूतगणान्	= भूतगणोंको
		यजन्ते	= पूजते हैं।

(गीता अध्याय 17 श्लोक 5 की फोटोकॉपी)

अशास्त्रविहितम्, घोरम्, तप्यन्ते, ये, तप:, जना:,
दम्भाहङ्कारसंयुक्ता:, कामरागबलान्विता: ॥ ५ ॥

और हे अर्जुन!—

ये	= जो	**दम्भाहङ्कारसंयुक्ता:**	= दम्भ और अहंकारसे युक्त (एवं)
जना:	= मनुष्य		
अशास्त्रविहितम्	= शास्त्रविधिसे रहित (केवल मन:-कल्पित)		
घोरम्	= घोर	**कामरागबलान्विता:**	= कामना, आसक्ति और बलके अभिमानसे भी युक्त हैं—
तप:	= तपको		
तप्यन्ते	= तपते हैं (तथा)		

(गीता अध्याय 17 श्लोक 6 की फोटोकॉपी)

कर्शयन्त:, शरीरस्थम्, भूतग्रामम्, अचेतस:, माम्,
च, एव, अन्त:शरीरस्थम्, तान्, विद्धि, आसुरनिश्चयान्॥ ६ ॥

तथा जो—

शरीरस्थम्	= शरीररूपसे स्थित	**कर्शयन्त:**	= कृश करनेवाले हैं[२],
भूतग्रामम्	= भूत-समुदायको[१]	**तान्**	= उन
च	= और	**अचेतस:**	= अज्ञानियोंको (तू)
अन्त:शरीरस्थम्	= अन्त:करणमें स्थित	**आसुरनिश्चयान्**	= आसुर-स्वभाववाले
माम्	= मुझ परमात्माको		
एव	= भी	**विद्धि**	= जान।

''गीता अध्याय 16 के कुछ श्लोकों की फोटोकॉपी''

(गीता अध्याय 16 श्लोक 17 की फोटोकॉपी)

आत्मसम्भाविताः, स्तब्धाः, धनमानमदान्विताः,
यजन्ते, नामयज्ञैः, ते, दम्भेन, अविधिपूर्वकम्॥ १७॥

तथा—

ते	= वे	**नामयज्ञैः**	= केवल नाममात्रके यज्ञोंद्वारा
आत्मसम्भाविताः	= अपने-आपको ही श्रेष्ठ माननेवाले	**दम्भेन**	= पाखण्डसे
स्तब्धाः	= घमण्डी पुरुष	**अविधिपूर्वकम्**	= शास्त्रविधिरहित
धनमानमदान्विताः	= धन और मानके मदसे युक्त होकर	**यजन्ते**	= यजन करते हैं।

(गीता अध्याय 16 श्लोक 18 की फोटोकॉपी)

अहङ्कारम्, बलम्, दर्पम्, कामम्, क्रोधम्, च, संश्रिताः,
माम्, आत्मपरदेहेषु, प्रद्विषन्तः, अभ्यसूयकाः॥ १८॥

तथा वे—

अहङ्कारम्	= अहंकार,	**अभ्यसूयकाः**	= दूसरोंकी निन्दा करनेवाले पुरुष
बलम्	= बल,		
दर्पम्	= घमण्ड,	**आत्मपरदेहेषु**	= अपने और दूसरोंके शरीरमें (स्थित)
कामम्	= कामना, (और)		
क्रोधम्	= क्रोधादिके	**माम्**	= मुझ अन्तर्यामीसे
संश्रिताः	= परायण	**प्रद्विषन्तः**	= द्वेष करनेवाले होते हैं।
च	= और		

(गीता अध्याय 16 श्लोक 19 की फोटोकॉपी)

तान्, अहम्, द्विषतः, क्रूरान्, संसारेषु, नराधमान्,
क्षिपामि, अजस्रम्, अशुभान्, आसुरीषु, एव, योनिषु॥ १९॥

ऐसे—

तान्	= उन	**संसारेषु**	= संसारमें
द्विषतः	= द्वेष करनेवाले	**अजस्रम्**	= बार-बार
अशुभान्	= पापाचारी (और)	**आसुरीषु**	= आसुरी
क्रूरान्	= क्रूरकर्मी	**योनिषु**	= योनियोंमें
नराधमान्	= नराधमोंको	**एव**	= ही
अहम्	= मैं	**क्षिपामि**	= डालता हूँ।

(गीता अध्याय 16 श्लोक 20 की फोटोकॉपी)

आसुरीम्, योनिम्, आपन्नाः, मूढाः, जन्मनि, जन्मनि,
माम्, अप्राप्य, एव, कौन्तेय, ततः, यान्ति, अधमाम्, गतिम्॥ २०॥

इसलिये—

कौन्तेय	= हे अर्जुन!	**योनिम्**	= योनिको
मूढाः	= वे मूढ	**आपन्नाः**	= प्राप्त होते हैं, (फिर)
माम्	= मुझको	**ततः**	= उससे भी
अप्राप्य	= न प्राप्त होकर	**अधमाम्**	= अति नीच
एव*	= ही	**गतिम्**	= गतिको
जन्मनि	= जन्म-	**यान्ति**	= प्राप्त होते हैं अर्थात् घोर नरकोंमें पड़ते हैं।
जन्मनि	= जन्ममें		
आसुरीम्	= आसुरी		

(गीता अध्याय 16 श्लोक 23 की फोटोकॉपी)

यः, शास्त्रविधिम्, उत्सृज्य, वर्तते, कामकारतः,
न, सः, सिद्धिम्, अवाप्नोति, न, सुखम्, न, पराम्, गतिम्॥ २३॥

और—

यः	= जो पुरुष	**सिद्धिम्**	= सिद्धिको
शास्त्रविधिम्	= शास्त्रविधिको	**अवाप्नोति**	= प्राप्त होता है,
उत्सृज्य	= त्यागकर	**न**	= न
कामकारतः	= अपनी इच्छासे मनमाना	**पराम्**	= परम
वर्तते	= आचरण करता है,	**गतिम्**	= गतिको (और)
सः	= वह	**न**	= न
न	= न	**सुखम्**	= सुखको ही।

(गीता अध्याय 16 श्लोक 24 की फोटोकॉपी)

तस्मात्, शास्त्रम्, प्रमाणम्, ते, कार्याकार्यव्यवस्थितौ,
ज्ञात्वा, शास्त्रविधानोक्तम्, कर्म, कर्तुम्, इह, अर्हसि॥ २४॥

तस्मात्	= इससे	**प्रमाणम्**	= प्रमाण है।
ते	= तेरे लिये	**(एवम्)**	= ऐसा
इह	= इस	**ज्ञात्वा**	= जानकर (तू)
कार्याकार्यव्यवस्थितौ	= कर्तव्य और अकर्तव्यकी व्यवस्थामें	**शास्त्रविधानोक्तम्**	= शास्त्रविधिसे नियत
		कर्म	= कर्म (ही)
		कर्तुम्	= करने
शास्त्रम्	= शास्त्र (ही)	**अर्हसि**	= योग्य है।

(गीता अध्याय 7 श्लोक 12 की फोटोकॉपी)

ये, च, एव, सात्त्विकाः, भावाः, राजसाः, तामसाः, च, ये,
मत्तः, एव, इति, तान्, विद्धि, न, तु, अहम्, तेषु, ते, मयि॥ १२॥

तथा—

च	= और	**तान्**	= उन सबको (तू)
एव	= भी	**मत्तः, एव**	= मुझसे ही (होनेवाले हैं)
ये	= जो		
सात्त्विकाः	= सत्त्वगुणसे उत्पन्न होनेवाले	**इति**	= ऐसा
		विद्धि	= जान
भावाः	= भाव हैं (और)	**तु**	= परंतु (वास्तवमें)[1]
ये	= जो	**तेषु**	= उनमें
राजसाः	= रजोगुणसे	**अहम्**	= मैं (और)
च	= तथा	**ते**	= वे
तामसाः	= तमोगुणसे होनेवाले भाव हैं,	**मयि**	= मुझमें
		न	= नहीं हैं।

<u>विशेष</u> :- <u>गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि रजगुण ब्रह्मा जी से उत्पत्ति, सतगुण विष्णु जी से स्थिति तथा तमगुण शिव जी से संहार होता है। यह सब मेरे लिए है। मेरा आहार बनता रहे। गीता ज्ञान दाता काल है जो स्वयं गीता अध्याय 11 श्लोक 32 में अपने को काल कहता है। यह श्रापवश एक लाख मानव को प्रतिदिन खाता है। इसलिए कहा है कि जो रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी तथा तमगुण शिव जी से हो रहा है। उसका निमित मैं हूँ। परंतु मैं इनसे (ब्रह्मा, विष्णु, महेश से) भिन्न हूँ।</u>

(गीता अध्याय 7 श्लोक 13 की फोटोकॉपी)

त्रिभिः, गुणमयैः, भावैः, एभिः, सर्वम्, इदम्, जगत्,
मोहितम्, न, अभिजानाति, माम्, एभ्यः, परम्, अव्ययम्॥ १३॥

किंतु—

गुणमयैः	= गुणोंके कार्यरूप सात्त्विक, राजस और तामस—	**मोहितम्**	= मोहित हो रहा है, (इसीलिये)
एभिः	= इन	**एभ्यः**	= इन तीनों गुणोंसे
त्रिभिः	= तीनों प्रकारके	**परम्**	= परे
भावैः	= भावोंसे[2]	**माम्**	= मुझ
इदम्	= यह	**अव्ययम्**	= अविनाशीको
सर्वम्	= सारा		
जगत्	= संसार— प्राणिसमुदाय	**न**	= नहीं
		अभिजानाति	= जानता।

(गीता अध्याय 7 श्लोक 14 की फोटोकॉपी)

दैवी, हि, एषा, गुणमयी, मम, माया, दुरत्यया,
माम्, एव, ये, प्रपद्यन्ते, मायाम्, एताम्, तरन्ति, ते ॥ १४ ॥

हि	= क्योंकि	**माम्**	= मुझको
एषा	= यह	**एव**	= ही (निरन्तर)
दैवी	= अलौकिक अर्थात् अति अद्भुत	**प्रपद्यन्ते**	= भजते हैं,
		ते	= वे
गुणमयी	= त्रिगुणमयी	**एताम्**	= इस
मम	= मेरी	**मायाम्**	= मायाको
माया	= माया	**तरन्ति**	= उल्लंघन कर जाते हैं अर्थात् संसारसे तर जाते हैं।
दुरत्यया	= बड़ी दुस्तर है; (परंतु)		
ये	= जो पुरुष (केवल)		

(गीता अध्याय 7 श्लोक 15 की फोटोकॉपी)

न, माम्, दुष्कृतिनः, मूढाः, प्रपद्यन्ते, नराधमाः,
मायया, अपहृतज्ञानाः, आसुरम्, भावम्, आश्रिताः ॥ १५ ॥

ऐसा सुगम उपाय होनेपर भी—

मायया	= मायाके द्वारा	**नराधमाः**	= मनुष्योंमें नीच,
अपहृतज्ञानाः	= जिनका ज्ञान हरा जा चुका है, (ऐसे)	**दुष्कृतिनः**	= दूषित कर्म करनेवाले
		मूढाः	= मूढ़लोग
आसुरम्, भावम्	= आसुर स्वभावको	**माम्**	= मुझको
		न	= नहीं
आश्रिताः	= धारण किये हुए,	**प्रपद्यन्ते**	= भजते

विशेष :- इस गीता अध्याय 7 श्लोक 15 में स्पष्ट किया है कि जिन साधकों की आस्था रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी तथा तमगुण शिव जी में अति दृढ़ है तथा जिनका ज्ञान लोक वेद (दंत कथा) के आधार से इस त्रिगुणमयी माया के द्वारा हरा जा चुका है। वे इन्हीं तीनों प्रधान देवताओं व अन्य देवताओं की भक्ति पर दृढ़ हैं। इनसे ऊपर मुझे (गीता ज्ञान दाता को) नहीं भजते। ऐसे व्यक्ति राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए मनुष्यों में नीच (नराधमाः) दूषित कर्म करने वाले मूर्ख हैं। ये मुझको (गीता ज्ञान देने वाले काल ब्रह्म को) नहीं भजते।

(गीता अध्याय 7 श्लोक 20 की फोटोकॉपी)

कामैः, तैः, तैः, हृतज्ञानाः, प्रपद्यन्ते, अन्यदेवताः, तम्, तम्, नियमम्, आस्थाय, प्रकृत्या, नियताः, स्वया॥ २०॥

और हे अर्जुन!—

तैः, तैः	= उन-उन	**नियताः**	= प्रेरित होकर
कामैः	= भोगोंकी कामनाद्वारा	**तम्, तम्**	= उस-उस
हृतज्ञानाः	= जिनका ज्ञान हरा जा चुका है, (वे लोग)	**नियमम्**	= नियमको
		आस्थाय	= धारण करके[2]
		अन्यदेवताः	= अन्य देवताओंको
स्वया	= अपने	**प्रपद्यन्ते**	= भजते हैं अर्थात् पूजते हैं।
प्रकृत्या	= स्वभावसे		

(गीता अध्याय 7 श्लोक 21 की फोटोकॉपी)

यः, यः, याम्, याम्, तनुम्, भक्तः, श्रद्धया, अर्चितुम्, इच्छति, तस्य, तस्य, अचलाम्, श्रद्धाम्, ताम्, एव, विदधामि, अहम्॥ २१॥

यः, यः	= जो-जो	**तस्य**	= उस-
भक्तः	= सकाम भक्त	**तस्य**	= उस भक्तकी
याम्, याम्	= जिस-जिस	**श्रद्धाम्**	= श्रद्धाको
तनुम्	= देवताके स्वरूपको	**अहम्**	= मैं
श्रद्धया	= श्रद्धासे	**ताम्, एव**	= उसी देवताके प्रति
अर्चितुम्	= पूजना	**अचलाम्**	= स्थिर
इच्छति	= चाहता है;	**विदधामि**	= करता हूँ।

(गीता अध्याय 7 श्लोक 22 की फोटोकॉपी)

सः, तया, श्रद्धया, युक्तः, तस्य, आराधनम्, ईहते, लभते, च, ततः, कामान्, मया, एव, विहितान्, हि, तान्॥ २२॥

तथा—

सः	= वह पुरुष	**ततः**	= उस देवतासे
तया	= उस	**मया**	= मेरे द्वारा
श्रद्धया	= श्रद्धासे	**एव**	= ही
युक्तः	= युक्त होकर	**विहितान्**	= विधान किये हुए
तस्य	= उस देवताका	**तान्**	= उन
आराधनम्	= पूजन	**कामान्**	= इच्छित भोगोंको
ईहते	= करता है	**हि**	= निःसन्देह
च	= और	**लभते**	= प्राप्त करता है।

(गीता अध्याय 7 श्लोक 23 की फोटोकॉपी)

अन्तवत्, तु, फलम्, तेषाम्, तत्, भवति, अल्पमेधसाम्,
देवान्, देवयजः, यान्ति, मद्भक्ताः, यान्ति, माम्, अपि॥ २३॥

तु = परंतु
तेषाम् = उन
अल्पमेधसाम् = अल्प बुद्धिवालोंका
तत् = वह
फलम् = फल
अन्तवत् = नाशवान्
भवति = है (तथा वे)
देवयजः = देवताओंको पूजनेवाले
देवान् = देवताओंको
यान्ति = प्राप्त होते हैं (और)
मद्भक्ताः = मेरे भक्त (चाहे जैसे ही भजें, अन्तमें वे)
माम् = मुझको
अपि = ही
यान्ति = प्राप्त होते हैं।

(गीता अध्याय 9 श्लोक 25 की फोटोकॉपी)

यान्ति, देवव्रताः, देवान्, पितॄन्, यान्ति, पितृव्रताः,
भूतानि, यान्ति, भूतेज्याः, यान्ति, मद्याजिनः, अपि, माम्॥ २५॥

कारण यह नियम है कि—

देवव्रताः = देवताओंको पूजनेवाले
देवान् = देवताओंको
यान्ति = प्राप्त होते हैं,
पितृव्रताः = पितरोंको पूजनेवाले
पितॄन् = पितरोंको
यान्ति = प्राप्त होते हैं,
भूतेज्याः = भूतोंको पूजनेवाले
भूतानि = भूतोंको
यान्ति = प्राप्त होते हैं (और)
मद्याजिनः = मेरा पूजन करनेवाले भक्त
माम् = मुझको
अपि = ही
यान्ति = प्राप्त होते हैं। (इसीलिये मेरे भक्तोंका पुनर्जन्म नहीं होता।*)

❖ <u>विशेष जानकारी</u> :- प्रश्न 13 :- अब हिन्दू साहेबान कहेंगे कि पुराणों में श्राद्ध करना, कर्मकाण्ड करना बताया है। तीर्थों पर जाना पुण्य बताया है। ऋषियों ने तप किए। क्या उनको भी हम गलत मानें? श्री ब्रह्मा जी ने, श्री

विष्णु जी तथा शिव जी ने भी तप किए। क्या वे भी गलत करते रहे हैं?

उत्तर :- ऊपर श्रीमद्भगवत गीता से स्पष्ट कर दिया है कि जो घोर तप करते हैं, वे मूर्ख हैं, पापाचारी क्रूरकर्मी हैं, चाहे कोई ऋषि हो या अन्य। उनको वेदों का क-ख का भी ज्ञान नहीं था, सामान्य हिन्दू को तो होगा कहाँ से? गीता में तीर्थों पर जाना कहीं नहीं लिखा है। इसलिए तीर्थ भ्रमण गलत है। शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण है जो गीता में व्यर्थ कहा है।

प्रश्न 14 :- क्या पुराण शास्त्र नहीं है?

उत्तर :- पुराणों का ज्ञान ऋषियों का अपना अनुभव है। वेद व गीता प्रभुदत्त (God Given) ज्ञान है जो सत्य है। ऋषियों ने वेदों को पढ़ा। लेकिन ठीक से नहीं समझा। जिस कारण से लोकवेद (एक-दूसरे से सुने ज्ञान के) के आधार से साधना की। कुछ ज्ञान वेदों से लिया यानि ओम् (ॐ) नाम का जाप यजुर्वेद अध्याय 40 श्लोक 15 से लिया। तप करने का ज्ञान ब्रह्मा जी से लिया। खिचड़ी ज्ञान के अनुसार साधना करके सिद्धियाँ प्राप्त करके किसी को श्राप, किसी को आशीर्वाद देकर जीवन नष्ट कर गए। गीता में कहा है कि जो मनमाना आचरण यानि शास्त्रविधि त्यागकर साधना करते हैं। उनको कोई लाभ नहीं होता। जो घोर तप को तपते हैं, वे राक्षस स्वभाव के हैं।

प्रमाण के लिए :- एक बार पांडव वनवास में थे। दुर्योधन के कहने से दुर्वासा ऋषि अठासी हजार ऋषियों को लेकर पाण्डवों के यहाँ गया। मन में दोष लेकर गया था कि पांडव मेरी मन इच्छा अनुसार भोजन करवा नहीं पाएँगे। मैं उनको श्राप दे दूँगा। वे नष्ट हो जाएँगे। क्या यह नेक व्यक्ति का कर्म है? दुष्टात्मा ऐसा करता है।

➢ विचार करो :- दुर्वासा महान तपस्वी था। उस घोर तप करने वाले पापाचारी नराधम ने क्या जुल्म करने की ठानी। दुःखियों को और दुःखी करने के उद्देश्य से गया। क्या ये राक्षसी कर्म नहीं था? क्या यह क्रूरकर्मी नराधम नहीं था?

इसी दुर्वासा ऋषि ने बच्चों के मजाक करने से क्रोधवश यादवों को श्राप दे दिया। गलती तीन-चार बच्चों ने (प्रद्यूमन पुत्र श्री कृष्ण आदि ने) की, श्राप पूरे यादव कुल का नाश होने का दे दिया। दुर्वासा के श्राप से 56 करोड़ (छप्पन करोड़) यादव आपस में लड़कर मर गए। श्री कृष्ण जी भी मारे गए। क्या ये राक्षसी कर्म दुर्वासा का नहीं था?

❖ अन्य कर्म पुराण की रचना करने वाले ऋषियों के सुनो :-

वशिष्ठ ऋषि ने एक राजा को राक्षस बनने का श्राप दे दिया। वह राक्षस बनकर दुःखी हुआ। वशिष्ठ ऋषि ने एक अन्य राजा को इसलिए मरने का श्राप दे दिया जिसने ऋषि वशिष्ठ से यज्ञ अनुष्ठान न करवाकर अन्य से करवा लिया। उस राजा ने वशिष्ठ ऋषि को मरने का श्राप दे दिया। दोनों

की मृत्यु हो गई।

वशिष्ठ जी का पुनः जन्म इस प्रकार हुआ जो पुराण कथा है :- दो ऋषि जंगल में तप कर रहे थे। एक अप्सरा स्वर्ग से आई। बहुत सुंदर थी। उसे देखने मात्र से दोनों ऋषियों का वीर्य संखलन (वीर्यपात) हो गया। दोनों ने बारी-बारी जाकर कुटिया में रखे खाली घड़े में वीर्य छोड़ दिया। उससे एक तो वशिष्ठ ऋषि वाली आत्मा का पुनर्जन्म हुआ। नाम वशिष्ठ ही रखा गया। दूसरे का कुंभज ऋषि नाम रखा जो अगस्त ऋषि कहलाया।

विश्वामित्र ऋषि के कर्म :- राज त्यागकर जंगल में गया। घोर तप किया। सिद्धियाँ प्राप्त की। वशिष्ठ ऋषि ने उसे राज-ऋषि कहा। उससे क्षुब्ध (क्रोधित) होकर वशिष्ठ जी के सौ पुत्रों को मार दिया। जब वशिष्ठ ऋषि ने उसे ब्रह्म-ऋषि कहा तो खुश हुआ क्योंकि विश्वामित्र राज-ऋषि कहने से अपना अपमान मानता था। ब्रह्म-ऋषि कहलाना चाहता था।

विचार करो! क्या ये राक्षसी कर्म नहीं हैं? ऐसे-ऐसे ऋषियों की रचनाएँ हैं अठारह पुराण।

एक समय ऋषि विश्वामित्र जंगल में कुटिया में बैठा था। एक मैनका नामक उर्वशी स्वर्ग से आकर कुटी के पास घूम रही थी। विश्वामित्र उस पर आसक्त हो गया। पति-पत्नी व्यवहार किया। एक कन्या का जन्म हुआ। उसका नाम शकुन्तला रखा। कन्या छः महीने की हुई तो उर्वशी स्वर्ग में चली गई। बोली मेरा काम हो गया। तेरी औकात का पता करने इन्द्र ने भेजी थी, वह देख ली। कहते हैं विश्वामित्र उस कन्या को कन्व ऋषि की कुटिया के सामने रखकर फिर से गहरे जंगल में तप करने गया। कन्व ऋषि ने उस कन्या को पाल-पोषकर राजा दुष्यंत से विवाह किया।

➢ विचार करो :- विश्वामित्र पहले उसी गहरे जंगल में घोर तप करके आया ही था। आते ही वशिष्ठ जी के पुत्र मार डाले। उर्वशी से उलझ गया। नाश करवाकर फिर डले ढोने गया। फिर क्या वह गीता पढ़कर गया था। उसी लोक वेद के अनुसार शास्त्रविधि रहित मनमाना आचरण किया। फिर विश्वामित्र ऋषि ने राजा हरिशचन्द्र से छल करके राज्य लिया। राजा हरिशचन्द्र, उनकी पत्नी तारावती तथा पुत्र रोहतास के साथ अत्याचार किए।

''अगस्त ऋषि का चमत्कार''

एक अगस्त ऋषि हुआ है। (जो कुंभज से जन्मा था) उसने तप करके सिद्धियाँ प्राप्त की। सातों समुन्दरों को एक घूंट में पी लिया। फिर वापिस भर दिया अपनी महिमा बनाने के लिए। क्या यही मुक्ति है?

ऐसे-ऐसे ऋषियों की अपनी विचारधारा पुराण हैं। पुराणों में जो ज्ञान वेदों व गीता से मेल नहीं करता, वह लोक वेद है। उसे त्याग देना चाहिए।

इन ऋषियों से प्राप्त लोक वेद को वर्तमान पवित्र हिन्दू धर्म के वर्तमान धर्म प्रचारक, गीता मनीषि, आचार्य तथा शंकराचार्य व महामंडलेश्वर प्रचार कर रहे हैं तथा हिन्दू धर्म के अनुयाई यानि हिन्दू उसी अज्ञान को ढो रहे हैं। जो गीता में मनमाना आचरण बताया है अर्थात् व्यर्थ साधना कही है।

अब पुनः उसी विषय पर चर्चा करता हूँ कि हिन्दू साहेबान! नहीं समझे निर्मल गीता ज्ञान :-

प्रश्न 15 (हिन्दू पक्ष) :- भक्ति व धर्म-कर्म तो लगभग सब करते हैं। आप तथा आपके अनुयाई ही नहीं करते। आप कहना क्या चाहते हैं? आपकी बातों से लग रहा है कि आपके अतिरिक्त कोई ठीक से भक्ति नहीं करते?

उत्तर :- यह सही है। दास (रामपाल दास) यही कहता है कि विश्व में कोई भी गुरू मेरे अतिरिक्त शास्त्रोक्त साधना न तो स्वयं करता और न ही अपने अनुयाईयों से करवाता है क्योंकि उनको अपने-अपने शास्त्रों का ज्ञान ही नहीं है। आप निम्न बातें नोट करो और बताओ :-

प्रश्न 16 :- क्या आप बता सकते हैं? :- गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में गीता बोलने वाले प्रभु ने अपने से अन्य किस परमेश्वर की शरण में जाने को कहा है?

उत्तर (हिन्दू पक्ष) :- श्री कृष्ण यानि श्री विष्णु जी ने अपनी शरण में आने को कहा है। श्री विष्णु जी से ऊपर कोई शक्ति यानि सत्ता अर्थात् भगवान ही नहीं है। फिर अपने से अन्य की शरण में जाने को कहने का प्रश्न ही नहीं है।

प्रश्न 17 :- आपको शास्त्रों का ज्ञान नहीं है। इसलिए आप ऐसी बातें कह रहे हो।

उत्तर (हिन्दू पक्ष) :- मैं 40 वर्ष से धार्मिक ग्रन्थों गीता व पुराणों को पढ़ता आ रहा हूँ। मुझे पूर्ण ज्ञान है।

प्रश्न 18 :- (हिन्दू पक्ष) प्रमाण दिखाओ जो बातें आप कह रहे हो कि श्री विष्णु जी से ऊपर श्री देवी जी व उससे ऊपर काल ब्रह्म है। काल ब्रह्म से ऊपर परम अक्षर ब्रह्म है?

उत्तर :- आप झूठ कह रहे हो कि श्री विष्णु जी से ऊपर कोई परमात्मा (शक्ति) नहीं है।

पेश है प्रमाण के लिए संक्षिप्त श्रीमद् देवीभागवत (पुराण) के प्रथम स्कंध के अध्याय 4 पृष्ठ 44-45 की फोटोकॉपी जिसमें श्री विष्णु जी ने कहा है कि मैं देवी दुर्गा (अष्टांगी) की भक्ति करता हूँ। इससे बड़ी शक्ति यानि भगवान कोई नहीं है :-

४४ * संक्षिप्त देवीभागवत * [पहला

ब्रह्माजीने पूछा—प्रभो! आप देवताओंके अध्यक्ष, जगत्के स्वामी और भूत, भविष्य एवं वर्तमान—सभी जीवोंके एकमात्र शासक हैं। भगवन्! फिर आप क्यों तपस्या कर रहे हैं और किस देवताकी आराधनामें ध्यानमग्न हैं? मुझे असीम आश्चर्य तो यह हो रहा है कि आप देवेश्वर एवं सारे संसारके शासक होते हुए भी समाधि लगाये बैठे हैं।

स्कन्ध] * व्यासजीका वनमें जाना, नारदजीका मिलना और देवीकी उपासनाके लिये कहना * ४५

ब्रह्माजीके ये विनीत वचन सुनकर भगवान् श्रीहरि उनसे कहने लगे—'ब्रह्मन्! सावधान होकर सुनो। मैं अपने मनका विचार व्यक्त करता हूँ। देवता, दानव और मानव—सब यही जानते हैं कि तुम सृष्टि करते हो, मैं पालन करता हूँ और शंकर संहार किया करते हैं, किंतु फिर भी वेदके पारगामी पुरुष अपनी युक्तिसे यह सिद्ध करते हैं कि रचने, पालने और संहार करनेकी यह योग्यता जो हमें मिली है, इसकी अधिष्ठात्री शक्तिदेवी हैं। वे कहते हैं कि संसारकी सृष्टि करनेके लिये तुममें राजसी शक्तिका संचार हुआ है, मुझे सात्त्विकी शक्ति मिली है और रुद्रमें तामसी शक्तिका आविर्भाव हुआ है। उस शक्तिके अभावमें तुम इस संसारकी सृष्टि नहीं कर सकते, मैं पालन करनेमें सफल नहीं हो सकता और रुद्रसे संहारकार्य होना भी सम्भव नहीं। ब्रह्माजी! हम सभी उस शक्तिके सहारे ही अपने कार्यमें सदा सफल होते आये हैं।

मैं सदा तप करनेमें लगा रहता हूँ। उस शक्तिके शासनसे कभी मुक्त नहीं रह सकता। कभी अवसर मिला तो लक्ष्मीके साथ सुखपूर्वक समय बितानेका सौभाग्य प्राप्त होता है। मैं कभी तो दानवोंके साथ युद्ध करता हूँ। अखिल जगत्को भय पहुँचानेवाले दैत्योंके विकराल शरीरोंको शान्त करना मेरा परम कर्तव्य हो जाता है।

उन्हीं भगवती शक्तिका मैं निरन्तर ध्यान किया करता हूँ। ब्रह्माजी! मेरी जानकारीमें इन भगवती शक्तिसे बढ़कर दूसरे कोई देवता नहीं हैं।

इस संक्षिप्त श्रीमद् देवीभागवत के उल्लेख से हिन्दू पक्ष का दावा गलत सिद्ध होता है कि श्री विष्णु से ऊपर कोई भगवान नहीं है क्योंकि श्रीमद् देवीभागवत (देवी पुराण) के प्रथम स्कंध के अध्याय 4 में प्रमाण है कि ''एक बार श्री ब्रह्मा जी ने श्री विष्णु जी को महान तप करते हुए देखकर प्रश्न किया कि हे प्रभो! आप देवताओं के अध्यक्ष, जगत के स्वामी तथा सर्व जीवों के शासक होते हुए भी किस देवता की अराधना में ध्यानमग्न हैं। मुझे असीम आश्चर्य तो यह हो रहा है कि आप देवेश्वर एवं सारे संसार के शासक होते हुए भी समाधि लगाए बैठे हैं। आप सर्व समर्थ पुरूष से बढ़कर कौन विशिष्ट हैं? उसे बताने की कृपा कीजिए। ब्रह्मा जी के विनीत वचन सुनकर भगवान श्री हरि उनसे कहने लगे, 'ब्रह्मन्'! सावधान होकर सुनो। मैं अपने मन का विचार व्यक्त करता हूँ। मैं भगवती अद्या शक्ति यानि अष्टांगी (देवी

दुर्गा) का ध्यान तप करके किया करता हूँ। ब्रह्मा जी! मेरी जानकारी में इन भगवती शक्ति (प्रकृति देवी- अष्टांगी देवी) से बढ़कर दूसरे कोई देवता नहीं हैं।'' इस संक्षिप्त देवी भागवत पुराण के लेख से स्पष्ट हुआ कि श्री विष्णु जी (श्री कृष्ण जी) श्री देवी दुर्गा जी की भक्ति (पूजा) करते हैं। कहा है कि इस अद्याशक्ति से बड़ा कोई (देवता) भगवान मेरी जानकारी में नहीं है।

लेखक :- हिन्दू साहेबानों की झूठ सामने है जो कहते हैं कि श्री कृष्ण जी (श्री विष्णु जी) से बढ़कर कोई देवता यानि परमेश्वर नहीं है जबकि श्री विष्णु जी ने अपने से अन्य सर्व समर्थ शक्ति श्री देवी दुर्गा को बताया है।

''ओम् नाम ब्रह्म का जाप है। इससे ब्रह्मलोक प्राप्त होता है। ब्रह्म आकाश में ब्रह्मलोक में रहता है।''

संक्षिप्त श्रीमद् देवीभागवत (पुराण) {गीताप्रेस, गोरखपुर से प्रकाशित व मुद्रित है जिसके संपादक हैं हनुमान प्रसाद पोद्दार व चिमन लाल गोस्वामी} के सातवें स्कंध के अध्याय 36 में श्री देवी जी ने राजा हिमालय से कहा कि पर्वतराज! उस ब्रह्म का क्या स्वरूप है, यह बतलाया जाता है। (श्री देवी जी ने पहले तो कहा कि मेरी भक्ति करो तो ऐसे करो जैसे अध्याय 35 में बताया है। परंतु मेरी व अन्य सबकी भक्ति छोड़कर ''उस एकमात्र परमात्मा को ही जानो''। दूसरी सब बातों को छोड़ दे। यही अमृत स्वरूप परमात्मा के पास पहुँचाने वाला पुल है। संसार समुद्र से पार होकर अमृत स्वरूप परमात्मा को प्राप्त करने का यही सुलभ साधन है।..... इस आत्मा का ''ॐ'' के जप के साथ ध्यान करो। इससे अज्ञानमय अंधकार से सर्वथा परे और संसार समुद्र से उस पार जो ब्रह्म है, उसको पा जाओगे। तुम्हारा कल्याण हो।.... वह यह सबका आत्मा ''ब्रह्म'' ब्रह्मलोक रूप दिव्य आकाश में स्थित है।)

गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में गीता ज्ञान दाता यानि ब्रह्म ने कहा है कि परमशान्ति प्राप्त करनी है अर्थात् जन्म-मरण से छुटकारा चाहता है तथा सनातन परम धाम को प्राप्त करना चाहता है तो उस परमेश्वर की शरण में जा जिसको गीता अध्याय 8 श्लोक 3 में परम अक्षर ब्रह्म कहा है तथा गीता अध्याय 8 श्लोक 8, 9, 10 में कहा है कि जो उस परम अक्षर ब्रह्म की भक्ति करता है, उसी को प्राप्त होता है। गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि (तत्वज्ञान रूपी शस्त्र से अज्ञान को काटकर) उसके पश्चात् परमेश्वर के उस परम पद की खोज करनी चाहिए जहाँ जाने के पश्चात् साधक लौटकर संसार में नहीं आते। जिसने संसार की रचना की है, उसकी भक्ति कर। गीता ज्ञान बोलने वाला क्षर ब्रह्म (काल निरंजन) है। वह परम अक्षर ब्रह्म की भक्ति करने को कह रहा है।

विचार करें :- श्री कृष्ण जी (श्री विष्णु जी) श्री देवी दुर्गा को सबसे बड़ी बता रहे हैं। श्री देवी दुर्गा ब्रह्म (क्षर पुरूष) को समर्थ बता रही है।

उसकी भक्ति के लिए कह रही है। ब्रह्म (गीता ज्ञान देने वाला काल) अपने से समर्थ सबकी उत्पत्तिकर्ता, सबके धारण-पोषणकर्ता पुरूषोत्तम अविनाशी परमेश्वर की भक्ति करने को कह रहा है। इससे सिद्ध हुआ कि हिन्दू गुरू साहेबानों को अपने सद्ग्रन्थों का ही ज्ञान नहीं है। जिस अध्यापक को अपने पाठ्यक्रम की पुस्तकों का ही ज्ञान नहीं है तो वह विद्यार्थियों का भविष्य खराब कर रहा है। उससे बचना चाहिए।

पेश है संक्षिप्त श्रीमद् देवीभागवत के सातवें स्कंध के अध्याय 36 के पृष्ठ 573-574 की फोटोकॉपी :-

स्कन्ध] * देवीके द्वारा हिमालयको ज्ञानोपदेश—ब्रह्मस्वरूपका वर्णन * ५७३

देवीके द्वारा हिमालयको ज्ञानोपदेश—ब्रह्मस्वरूपका वर्णन

श्रीदेवीजी कहने लगीं—**पर्वतराज! इस प्रकार योगयुक्त होकर मुझ ब्रह्मस्वरूपा देवीका ध्यान करे। यह ध्यान आसनपर भलीभाँति बैठकर अहैतुकी भक्तिके साथ करना चाहिये। उस ब्रह्मका क्या स्वरूप है—यह बतलाया जाता है। जो प्रकाशस्वरूप, सबके अत्यन्त समीपमें स्थित, हृदयरूप गुहामें स्थित होनेके कारण 'गुहाचर' नामसे प्रसिद्ध और महान् पद अर्थात् परम प्राप्य है—जितने भी चेष्टा करनेवाले, श्वास लेनेवाले, आँखोंको खोलने-मूँदनेवाले प्राणी हैं, सब उस ब्रह्ममें ही समर्पित हैं, उसीमें स्थित हैं। सत्, असत् सब कुछ वही है, वही सबके द्वारा वरण करनेयोग्य सर्वोत्कृष्ट है। वह समस्त प्रजाके ज्ञानसे परे है—अर्थात् किसीकी बुद्धिमें आनेवाला नहीं है। यह तुम जानो। जो परम प्रकाशरूप है, जो सूक्ष्मसे भी अत्यन्त सूक्ष्म है, जिसमें सम्पूर्ण लोक और उन लोकोंमें निवास करनेवाले प्राणी स्थित हैं,**

५७४ * संक्षिप्त देवीभागवत * [सातवाँ

वही यह 'अक्षर ब्रह्म' है, वही सबके प्राण है, वही सबकी वाणी है और वही सबके मन है। वह यह परम सत्य और अमृत—अविनाशी तत्त्व है। सौम्य! उस वेधनेयोग्य लक्ष्यका तुम वेधन करो—मन लगाकर उसमें तन्मय हो जाओ।

सौम्य! उपनिषद्में कथित महान् अस्त्ररूप धनुष लेकर उसपर उपासनाद्वारा तीक्ष्ण किया हुआ बाण संधान करो और फिर भावानुगत चित्तके द्वारा उस बाणको खींचकर उस अक्षररूप ब्रह्मको ही लक्ष्य बनाकर वेधन करो। प्रणव (ॐ) धनुष है, जीवात्मा बाण है और ब्रह्मको उसका लक्ष्य कहा जाता है। प्रमादरहित—अत्यन्त तत्परतासे साधन-संलग्न होकर उसका वेधन करना चाहिये और बाणके समान उसमें तन्मय हो जाना चाहिये। जिस ब्रह्ममें स्वर्ग, पृथ्वी, अन्तरिक्ष (स्वर्ग और पृथ्वीके बीचका आकाश), सम्पूर्ण प्राणोंके सहित इन्द्रिययुक्त मनबुद्धिरूप अन्तःकरण ओत-प्रोत है, उस एकमात्र परमात्माको ही जाने, दूसरी सब बातोंको छोड़ दे। यही अमृतरूप परमात्माके पास पहुँचानेवाला पुल है। संसार-समुद्रसे पार होकर अमृतस्वरूप परमात्माको प्राप्त करानेका यही सुलभ साधन है।

इस आत्माका 'ॐ' के जपके साथ ध्यान करो। इससे अज्ञानमय अन्धकारसे सर्वथा परे और संसार-समुद्रसे उस पार जो ब्रह्म है, उसको पा जाओगे। तुम्हारा कल्याण हो। जो सदा जाननेवाला, जो सब ओरसे सब कुछ जाननेवाला है, जिसकी जगत्में यह महिमा है, वह यह सबका आत्मा ब्रह्म ब्रह्मलोकरूप दिव्य आकाशमें स्थित है।

श्रीमद्देवीभागवत (श्री देवी पुराण) के सातवें स्कंध के अध्याय 36 पृष्ठ 573-574 के इस उल्लेख से स्पष्ट है कि श्री देवी जी ने अपनी व अन्य सबकी साधना त्यागकर ''ब्रह्म'' की साधना करने को कहा है।

हिन्दू गुरूजन कहते हैं कि श्रीमद्भगवत गीता का ज्ञान श्री कृष्ण जी (श्री विष्णु जी) ने अर्जुन को बताया। यह भी इनकी झूठ है। वास्तव में श्रीमद्भगवत गीता का ज्ञान श्री कृष्ण में प्रवेश करके ''ब्रह्म'' यानि काल ने कहा है। ब्रह्म ने यानि गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 18 श्लोक 46,61,62 व 66 में, गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में, गीता अध्याय 2 श्लोक 17 में तथा गीता अध्याय 8 श्लोक 3,8,9 तथा 10 में अपने से अन्य परमेश्वर यानि परम अक्षर ब्रह्म की भक्ति करने, उसकी शरण में जाने को कहा है। उसी को परमात्मा, सबका धारण-पोषण करने वाला, अविनाशी परमेश्वर व पुरूषोत्तम कहा है।

पढ़ें यह फोटोकॉपी गीता अध्याय 18 श्लोक 62 की जो जयदयाल गोयन्दका द्वारा अनुवादित है तथा भारत की प्रसिद्ध गीता प्रेस गोरखपुर से प्रकाशित व मुद्रित है :-

(गीता अध्याय 18 श्लोक 62 की फोटोकॉपी)

तम्, एव, शरणम्, गच्छ, सर्वभावेन, भारत,
तत्प्रसादात्, पराम्, शान्तिम्, स्थानम्, प्राप्स्यसि, शाश्वतम्॥ ६२॥

इसलिये—

भारत	= हे भारत! (तू)	**तत्प्रसादात्**	= उस परमात्माकी कृपासे (ही तू)
सर्वभावेन	= सब प्रकारसे		
तम्	= उस परमेश्वरकी	**पराम्**	= परम
एव	= ही	**शान्तिम्**	= शान्तिको (तथा)
		शाश्वतम्	= सनातन
शरणम्	= शरणमें*	**स्थानम्**	= परम धामको
गच्छ	= जा।	**प्राप्स्यसि**	= प्राप्त होगा।

लेखक :- <u>क्या आप जानते हैं?</u> :- गीता अध्याय 7 श्लोक 29 में गीता ज्ञान देने वाले प्रभु ने कहा है कि जो साधक केवल (जरा) वृद्धावस्था के दुःख से तथा मरण (मृत्यु) के दुःख से छूटने के लिए ही प्रयत्नशील हैं यानि साधना करते हैं, वे (तत् ब्रह्म) उस ब्रह्म यानि गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में बताए परमेश्वर को तथा सम्पूर्ण अध्यात्म ज्ञान यानि तत्त्वज्ञान को तथा सम्पूर्ण कर्मों को जानते हैं यानि ''एक लेवा एक देवा दूतं'' वाली कथा जानते हैं।

उत्तर (हिन्दू पक्ष) :- नहीं।

प्रश्न 19 (हिन्दू पक्ष) :- क्या आप जानते हैं कि तत् ब्रह्म कौन है? प्रमाण गीता व पुराणों से बताओ।

उत्तर (लेखक) :- हाँ। सुनो!

❖ गीता अध्याय 8 श्लोक 1 में अर्जुन ने गीता ज्ञान देने वाले से प्रश्न किया कि (किम् तत् ब्रह्म) तत् ब्रह्म क्या है जिसके विषय में आपने गीता अध्याय 7 श्लोक 29 में कहा है? इसका उतर गीता ज्ञान बताने वाले प्रभु (आपके अनुसार श्री कृष्ण जी) ने गीता 8 अध्याय श्लोक 3 में दिया। कहा कि ''वह परम अक्षर ब्रह्म है।''

फिर इसी प्रसंग को आगे बढ़ाते हुए गीता ज्ञान देने वाले ने गीता के इसी अध्याय 8 के श्लोक 5-7 तथा श्लोक 8-9-10 में स्पष्ट कर दिया है कि :-

(श्लोक 5 से 7) :- जो पुरूष अंत काल में मुझको ही स्मरण करता हुआ शरीर को त्यागकर जाता है, वह मेरे साक्षात् रूप को प्राप्त होता है। इसमें कुछ भी संशय नहीं है।(गीता अध्याय 8 श्लोक 5)

हे कुन्तीपुत्र अर्जुन! अंत काल में मनुष्य यानि साधक जिस-जिस भी भाव को यानि ईष्ट को स्मरण करता हुआ शरीर का त्याग करता है, उस-उस भाव को ही प्राप्त होता है क्योंकि वह सदा उसी के भाव से भावित हो रहा है।(गीता अध्याय 8 श्लोक 6)

❖ इसलिए (हे अर्जुन! तू) सब समय में निरंतर मेरा स्मरण कर और युद्ध भी कर। इस प्रकार मुझमें समर्पित भाव से युक्त होकर तू निःसंदेह मुझको ही प्राप्त होगा।(गीता अध्याय 8 श्लोक 7)

हे भद्र पुरूष! इन उपरोक्त श्लोकों में तो गीता ज्ञान देने वाले ने अपनी भक्ति करने को कहा है जिससे उसी को प्राप्त होता है। फिर गीता अध्याय 8 के ही श्लोक 8-9-10 तथा 20-22 में उस परम अक्षर ब्रह्म की भक्ति करने को कहा जिसके विषय में ऊपर बताया है।

गीता अध्याय 8 श्लोक 8-9-10 :-

❖ हे पार्थ! परमेश्वर के (परम अक्षर ब्रह्म के) अभ्यास रूप योग से युक्त दूसरी ओर न जाने वाले चित्त से निरंतर चिंतन करता हुआ मनुष्य परम दिव्य परमेश्वर यानि परम अक्षर ब्रह्म को ही प्राप्त होता है।(गीता अध्याय 8 श्लोक 8)

श्रीमान् जी! ध्यान देना, इस श्लोक 9 में गीता बोलने वाले प्रभु (आपके अनुसार श्री कृष्ण जी) ने यह भी स्पष्ट कर दिया है कि वही (सर्वस्य धातारम्) सबका धारण-पोषण करने वाला है जो इस प्रकार है :-

जो अनादि, सबके नियन्ता, सूक्ष्म से अति सूक्ष्म सबके धारण-पोषण करने वाले, अचिन्त्यस्वरूप, सूर्य के सदृश प्रकाशमान, अज्ञान से अति परे शुद्ध सच्चिदानंद घन परमेश्वर का स्मरण करता है।(गीता अध्याय 8 श्लोक 9)

वह भक्ति युक्त पुरूष अंत काल में योग बल से यानि भक्ति की शक्ति से प्राणों (श्वांसों) को भृकुटी के मध्य में अच्छी तरह स्थापित करके फिर निश्चल मन से स्मरण करता हुआ उस (मेरे से दूसरे) दिव्य पुरूष यानि

परम अक्षर ब्रह्म (परमेश्वर) को ही प्राप्त होता है।

{हे जैन्टलमैन! क्या आपको व आपके धर्मगुरूओं को उस परमेश्वर (परम अक्षर ब्रह्म) का पता है? वह कौन है जिसकी शरण में जाने से परम शांति तथा सनातन परम धाम (सत्यलोक) प्राप्त होता है। जैन्टलमैन ने कहा, कभी सुना ही नहीं। गीता नित्य पढ़ता हूँ। आज आँखें खुली हैं।}

पढ़ें उपरोक्त गीता के सर्व श्लोकों की फोटोकॉपी :- जिसके अनुवादक श्री जयदयाल गोयन्दका जी हैं तथा प्रकाशक व मुद्रक गीता प्रेस गोरखपुर है, ''इसी पुस्तक के पृष्ठ 20-23 पर।''

गीता बोलने वाला नाशवान है। परम अक्षर ब्रह्म अविनाशी है :- प्रमाण के लिए गीता अध्याय 4 श्लोक 5, अध्याय 2 श्लोक 12, अध्याय 10 श्लोक 2 में पढ़ें जिनमें गीता ज्ञान दाता ने अपना जन्म-मृत्यु होना स्वीकारा है तथा गीता अध्याय 2 श्लोक 17 में तथा अध्याय 15 के श्लोक 17 में अपने से अन्य यानि परम अक्षर ब्रह्म (परमेश्वर) को अविनाशी बताया है।

गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में उसी की शरण में जाने को गीता बोलने वाले (आपके अनुसार श्री विष्णु जी) ने कहा है।

कृपया पढ़ें फोटोकॉपी उपरोक्त श्लोकों की, इसी पुस्तक के पृष्ठ 24-25 पर।

➢ भ्रम निवारण :- गीता अध्याय 15 श्लोक 18 में गीता ज्ञान दाता ने बताया है कि मैं लोकवेद (दंत कथा) के आधार से पुरूषोत्तम प्रसिद्ध हूँ क्योंकि मैं अपने अंतर्गत सब प्राणियों से उत्तम हूँ।

➢ विचार करो :- गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 8 श्लोक 3 में परम अक्षर ब्रह्म (पुरूष) अपने से अन्य बताया है। श्लोक 5-7 में अपनी भक्ति करने को कहा है तथा गीता अध्याय 8 के ही श्लोक 8-9-10, 20-22 में अपने से अन्य परम अक्षर ब्रह्म यानि परम अक्षर पुरूष/सच्चिदानंद घन ब्रह्म यानि दिव्य परम पुरूष (परमेश्वर) की भक्ति करने को कहा है। गीता अध्याय 8 श्लोक 9 में भी उसी को सबका धारण-पोषण करने वाला बताया है। इसी प्रकार गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में अपने से अन्य परम अक्षर पुरूष को पुरूषोत्तम कहा है। उसी को सबका धारण-पोषण करने वाला अविनाशी कहा है। फिर गीता अध्याय 15 श्लोक 18 में अपनी स्थिति बताई है कि मैं तो लोक वेद (सुनी-सुनाई बातों/दंत कथाओं) के आधार से पुरूषोत्तम प्रसिद्ध हूँ। {वास्तव में पुरूषोत्तम तो ऊपर गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में बता दिया है।}

कुछेक व्यक्ति श्लोक 18 को पढ़कर कहते हैं कि देखो! गीता ज्ञान देने वाला अपने को पुरूषोत्तम कह रहा है। इससे अन्य कोई पुरूषोत्तम नहीं है। उसकी मूर्ख सोच का उत्तर ऊपर स्पष्ट कर दिया है।

''आदि सनातन यानि मानव धर्म की पूजा व साधना''

प्रश्न 20 :- शास्त्रों में कौन-से भक्ति कर्म (कर्तव्य) करने योग्य तथा कौन-से कर्म (अकर्तव्य) न करने योग्य हैं?

उत्तर :- श्रीमद्भगवत गीता में गीता अध्याय 8 श्लोक 13 में गीता ज्ञान देने वाले प्रभु ने अपनी भक्ति/पूजा का केवल एक अक्षर ॐ (ओम्) स्मरण करने का बताया है। इसके अतिरिक्त अन्य नाम (अकर्तव्य) न जाप करने वाले हैं।

गीता अध्याय 3 श्लोक 10-15 में यज्ञ करना (कर्तव्य) करने योग्य भक्ति कर्म कहा है। उनमें (परम अक्षर ब्रह्म) अविनाशी परमात्मा को ईष्ट रूप में प्रतिष्ठित करने को कहा है।

➢ यज्ञ पाँच प्रकार की हैं :- 1. धर्म यज्ञ 2. ध्यान यज्ञ 3. हवन यज्ञ 4. प्रणाम यज्ञ 5. ज्ञान यज्ञ।

इनको करने की विधि तत्त्वदर्शी संत बताता है। यह प्रमाण गीता अध्याय 4 श्लोक 32-33-34 में भी है।

गीता अध्याय 4 श्लोक 32 :- सच्चिदानंद घन ब्रह्म अपने मुख कमल से बोली वाणी में तत्त्वज्ञान बताता है। उससे पूर्ण मोक्ष होता है। उसको जानकर तू कर्म बंधन से सर्वथा मुक्त हो जाएगा।(गीता अध्याय 4 श्लोक 32)

गीता अध्याय 4 श्लोक 33 :- हे परंतप अर्जुन! द्रव्यमय (धन से खर्च करके की जाने वाली) यज्ञ से ज्ञान यज्ञ यानि तत्त्वदर्शी संत का सत्संग सुनना अधिक श्रेष्ठ है। क्योंकि तत्त्वदर्शी संत धर्म-कर्म व जाप आदि करने की शास्त्रोक्त विधि बताता है। जैसे बिना ज्ञान के कर्ण (छठा पांडव) ने केवल सोना (Gold) ही दान किया। उससे उसको स्वर्ग में सोने (Gold) के पर्वत पर छोड़ दिया। उसे भूख लगी तो भोजन माँगा। उसे बताया गया कि आपने अन्न दान (धर्म यज्ञ) नहीं किया। केवल सोना दान किया। इसलिए भोजन नहीं मिलेगा। यदि तत्त्वदर्शी संत मिला होता तो कर्ण पाँचों यज्ञ करके पूर्ण मोक्ष प्राप्त करता। इसलिए गीता अध्याय 4 श्लोक 33 में कहा है कि द्रव्यमय यज्ञ से ज्ञान यज्ञ श्रेष्ठ है यानि (ज्ञान यज्ञ) तत्त्वदर्शी संत का ज्ञान सुनने से पता चलता है कि शास्त्रविधि अनुसार कौन से भक्ति कर्म हैं?

गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में कहा है कि उस तत्त्वज्ञान को जो सच्चिदानंद घन परमात्मा अपने मुख से वाणी बोलकर बताता है, उस वाणी में लिखा है। उसको तत्त्वदर्शी संतों के पास जाकर समझ। उनको भली-भांति दण्डवत् प्रणाम करने से उनकी सेवा करने से और कपट छोड़कर सरलतापूर्वक प्रश्न करने से वे परमात्म तत्त्व को जानने वाले ज्ञानी महात्मा तुझे उस तत्त्वज्ञान का उपदेश करेंगे।

वह तत्त्वज्ञान मेरे (लेखक-रामपाल दास के) पास है जो सूक्ष्मवेद

(स्वसमवेद) में स्वयं सच्चिदानंद घन ब्रह्म कबीर जी ने अपने मुख कमल से बोली वाणी यानि कबीर वाणी में बोलकर बताया है जो श्री धर्मदास जी (बांधवगढ़ वाले) ने लिखा है। फिर परमेश्वर कबीर जी ने वही ज्ञान अपनी प्रिय आत्मा संत गरीबदास जी को बताया था तथा अपना सत्यलोक दिखाया था। फिर संत गरीबदास जी ने आँखों देखी महिमा कबीर जी की बताई है। सूक्ष्मवेद में सम्पूर्ण आध्यात्म ज्ञान है। चारों वेदों (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद) का ज्ञान सूक्ष्मवेद से लिया गया है। परंतु अधिक ज्ञान छोड़ा गया है। उसकी पूर्ति करने के लिए परमेश्वर स्वयं पृथ्वी पर आए थे। सम्पूर्ण आध्यात्म ज्ञान बताया था।

❖ **गूढ़ रहस्य श्रीमद्भगवत गीता का** :- हे भद्रपुरूष! हिन्दू धर्म के धर्मगुरूओं को वेदों व श्रीमद्भगवत गीता का क-ख का भी ज्ञान नहीं है। न ऋषियों, महर्षियों को ज्ञान था। सर्व धर्मों के धर्म ग्रंथों का ज्ञान मेरे गुरूदेव स्वामी रामदेवानंद जी महाराज जी के आशीर्वाद से मुझे है। गुरूदेव जी की कृपा से गीता के गूढ़ रहस्यों को ठीक से समझा है। मेरे को मूल ज्ञान (तत्त्वज्ञान) प्राप्त हुआ है जिसे सूक्ष्मवेद भी कहा है। जिसके कारण सर्व धर्म शास्त्रों को यथारूप में जानना सरल हो गया है। हिन्दू धर्म गुरूओं को तत्त्वज्ञान नहीं था। इसलिए अर्थों के अनर्थ कर रखे हैं।

प्रमाण देता हूँ, ध्यान व धीरज के साथ सुन व देख :-

गीता अध्याय 4 श्लोक 32 में कहा है :-

पहले गीताप्रेस गोरखपुर से प्रकाशित तथा मुद्रित श्री जयदयाल गोयन्दका जी द्वारा अनुवादित गीता में दिखाता हूँ जो उन्होंने अड़ंगा अनुवाद किया है।

कृपया पढ़ो गीता अध्याय 4 श्लोक 32 की फोटोकॉपी :-

एवम्, बहुविधाः, यज्ञाः, वितताः, ब्रह्मणः, मुखे,
कर्मजान्, विद्धि, तान्, सर्वान्, एवम्, ज्ञात्वा, विमोक्ष्यसे॥ ३२॥

एवम्	= इस प्रकार (और भी)	**कर्मजान्**	= मन, इन्द्रिय और शरीरकी क्रिया-द्वारा सम्पन्न होनेवाले
बहुविधाः	= बहुत तरहके	**विद्धि**	= जान,
यज्ञाः	= यज्ञ	**एवम्**	= इस प्रकार (तत्त्वसे)
ब्रह्मणः	= वेदकी	**ज्ञात्वा**	= जानकर (उनके अनुष्ठान-द्वारा तू कर्मबन्धनसे सर्वथा)
मुखे	= वाणीमें	**विमोक्ष्यसे**	= मुक्त हो जायगा।
वितताः	= विस्तारसे कहे गये हैं।		
तान्	= उन		
सर्वान्	= सबको (तू)		

इस अनुवाद में कई शब्दों के अर्थ गलत किए हैं। ब्रह्मणः का अर्थ वेद की तथा मुखे का अर्थ वाणी में किया है जो गलत है। गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में भी ''ब्रह्मणः'' शब्द है। वहाँ इसी अनुवादक ने अर्थ ठीक किया है। ब्रह्मणः का अर्थ सच्चिदानंद घन ब्रह्म किया है। यदि गीता अध्याय 4 श्लोक 32 में ब्रह्मणः का अर्थ सच्चिदानंद घन ब्रह्म किया जाए तो सही सरलार्थ हो जाता है जो इस प्रकार बनता है :-

परमेश्वर सबसे ऊपर के लोक में निवास करता है। वहाँ से चलकर पृथ्वी पर आता है। यथार्थ अध्यात्म ज्ञान (तत्त्वज्ञान) अपने मुख कमल से बोली वाणी में बताता है। (एवम्) इस प्रकार (बहुविधाः) बहुत प्रकार के (यज्ञाः) धार्मिक अनुष्ठानों यानि यज्ञों (पूजाओं) का ज्ञान (ब्रह्मणः) सच्चिदानंद घन ब्रह्म यानि परम अक्षर ब्रह्म के (मुखे) मुख से उच्चारित वाणी में यानि तत्त्वज्ञान में विस्तार से कहा है। उन सबको कार्य करते-करते किया जा सकता है, ऐसा जान। उन सब क्रियाओं को जानकर तू सर्वथा बंधन से मुक्त हो जाएगा यानि उस तत्त्वज्ञान के आधार से साधना पूजा करके पूर्ण मोक्ष (कभी जन्म-मरण नहीं हो, ऐसा मोक्ष) प्राप्त करेगा।

विशेष :- इन्ही अनुवादकों ने गीता अध्याय 16 श्लोक 1 में ''यज्ञ'' का अर्थ प्रसंगवश धार्मिक पूजा व धार्मिक अनुष्ठान किया है। इस गीता अध्याय 4 श्लोक 32 में भी ''यज्ञाः'' का अर्थ पूजाओं किया जाए तो सरलार्थ सही हो जाता है। अनुवादक ने ''यज्ञाः'' का अर्थ ''यज्ञ'' किया है। यहाँ धार्मिक पूजाओं व अनुष्ठानों करना चाहिए।

गीता अध्याय 4 श्लोक 34 का इन्हीं अनुवादकों ने अनुवाद ठीक किया है जिसमें कहा है कि ''उस तत्त्वज्ञान को तू तत्त्वदर्शी ज्ञानियों के पास जाकर समझ'', उनको भली-भांति दण्डवत् प्रणाम करने से, उनकी सेवा करने से और कपट छोड़कर सरलतापूर्वक प्रश्न करने से वे परमात्म तत्त्व को भली-भांति जानने वाले ज्ञानी महात्मा तुझे उस तत्त्वज्ञान का उपदेश करेंगे।(गीता अध्याय 4 श्लोक 34)

कृपया पढ़ें गीता अध्याय 17 श्लोक 23 की फोटोकॉपी जिसमें ''ब्रह्मणः'' का अर्थ ''सच्चिदानंद घन ब्रह्म'' किया है :-

ॐ, तत्, सत्, इति, निर्देशः, ब्रह्मणः, त्रिविधः, स्मृतः,
ब्राह्मणाः, तेन, वेदाः, च, यज्ञाः, च, विहिताः, पुरा ॥ २३ ॥

और हे अर्जुन!—

ॐ	= ॐ,	**तेन**	= उसीसे
तत्	= तत्,	**पुरा**	= सृष्टिके आदिकालमें
सत्	= सत्—		
इति	= ऐसे (यह)	**ब्राह्मणाः**	= ब्राह्मण
त्रिविधः	= तीन प्रकारका	**च**	= और
ब्रह्मणः	= सच्चिदानन्दघन ब्रह्मका	**वेदाः**	= वेद
		च	= तथा
निर्देशः	= नाम	**यज्ञाः**	= यज्ञादि
स्मृतः	= कहा है;	**विहिताः**	= रचे गये।

विशेष :- इससे यह स्पष्ट है कि वह तत्त्वज्ञान श्रीमद्भगवत गीता में नहीं है। यदि होता तो गीता बोलने वाला कह देता कि उस अध्याय में बोला है, वहाँ पढ़ ले। दूसरी बात यह स्पष्ट हो जाती है कि उस तत्त्वज्ञान (सूक्ष्मवेद) को स्वयं परम अक्षर ब्रह्म (परमेश्वर) अपने मुख कमल से बोलता है। उस तत्त्वज्ञान बताने वाले तत्त्वदर्शी संत महात्मा की पहचान गीता अध्याय 15 श्लोक 1 में बताई है। कहा है :-

आदि पुरूष परमेश्वर जिसकी मूल है, उस ऊपर को मूल वाले, नीचे को शाखा वाले जिस संसार रूप पीपल के वृक्ष को अविनाशी कहते हैं (माना जाता है), उसके सब भागों के जो तत्त्व से जानता है, वह वेद के तात्पर्य को जानने वाला (वेद वित्) तत्त्वदर्शी संत है। परमेश्वर कबीर जी सबसे ऊपर के लोक सत्यलोक से सशरीर चलकर पृथ्वी पर आये। अपने मुख से वाणी बोली जो सूक्ष्मवेद (तत्त्वज्ञान) है। उसमें कहा है :-

कबीर, अक्षर पुरूष एक पेड़ है, क्षर पुरूष (निरंजन) वाकी डार।
तीनों देवा शाखा हैं, पात रूप संसार।।

अर्थात् इस संसार रूपी वृक्ष का (जो भाग धरती से ऊपर होता है, वह) तना तो अक्षर पुरूष है। उसकी एक डार, क्षर पुरूष जानो। उस क्षर पुरूष रूप डार पर लगी तीनों देवताओं यानि रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव रूप शाखा जानों। उन शाखाओं पर लगे पत्तों को संसार के प्राणी जानों।

गीता अध्याय 15 श्लोक 1-3 का यह सारांश है।

इससे यह स्वसिद्ध है कि कबीर जी सच्चिदानंद घन ब्रह्म यानि परम अक्षर ब्रह्म हैं। उनके द्वारा बोला गया ज्ञान तत्त्वज्ञान (सूक्ष्मवेद) है। अधूरे ज्ञान के कारण आपको यह भी शंका होगी कि जड़ (मूल) कौन है तथा अक्षर पुरूष, क्षर पुरूष का कहाँ प्रमाण है?

उसके लिए सुनो :- इस संसार रूप वृक्ष की मूल परम अक्षर ब्रह्म है जिसका प्रमाण गीता अध्याय 8 श्लोक 3, 8-10 में है जो पहले इसी पुस्तिका में बताया गया है।

कहा कि (गीता अध्याय 8 श्लोक 9 में) :- जो कविर्देव अनादि है, सबका नियंता (Controller) है। सूक्ष्म से अति सूक्ष्म यानि सर्व शाक्तिमान है। (सर्वस्य धातारम्) सबका धारण-पोषण करने वाला है। अचिन्त्य स्वरूप, सूर्य के सदृश स्वप्रकाशित है। अविद्या से अति परे यानि अज्ञानियों की पहुँच से दूर, शुद्ध सच्चिदानंद घन परमेश्वर है। जो उसका स्मरण करता है, वह उसी को प्राप्त होता है।

इससे स्पष्ट हुआ है कि परम अक्षर ब्रह्म संसार रूप वृक्ष की जड़ (मूल) है क्योंकि मूल से ही पेड़ का धारण-पोषण होता है। अब आगे अध्याय 15 श्लोक 16-17 में तीन पुरूषों (प्रभुओं) का प्रमाण है।

पढ़ो इन दोनों श्लोकों की फोटोकॉपी में जिनमें कहा है कि अक्षर पुरूष व क्षर पुरूष तथा इनके लोकों के प्राणी नाशवान हैं। (गीता अध्याय 15 श्लोक16)

इन दोनों से अन्य परम अक्षर पुरूष है जो अविनाशी परमेश्वर, परमात्मा कहा जाता है। सबका धारण-पोषण करने वाला है।(गीता अध्याय 15 श्लोक 17)

(गीता अध्याय 15 श्लोक 1 की फोटोकॉपी)

ऊर्ध्वमूलम्, अधःशाखम्, अश्वत्थम्, प्राहुः, अव्ययम्,
छन्दांसि, यस्य, पर्णानि, यः, तम्, वेद, सः, वेदवित् ॥ १ ॥

उसके पश्चात् श्रीभगवान् फिर बोले, हे अर्जुन!—

ऊर्ध्वमूलम् = आदि पुरुष परमेश्वररूप मूलवाले[1] (और)
अधःशाखम् = ब्रह्मारूप मुख्य शाखावाले[2] (जिस)
अश्वत्थम् = संसाररूप पीपलके वृक्षको
अव्ययम् = अविनाशी[1]
प्राहुः = कहते हैं; (तथा)
छन्दांसि = वेद[2]
यस्य = जिसके
पर्णानि = पत्ते (कहे गये हैं—)
तम् = उस संसाररूप वृक्षको
यः = जो पुरुष (मूलसहित)
वेद = तत्त्वसे जानता है,
सः = वह
वेदवित् = वेदके तात्पर्यको जाननेवाला है[3]।

विशेष :- इस फोटोकॉपी के अनुवाद में भी गलतियाँ हैं, परंतु फिर भी सार स्पष्ट है।

गलती :- अधः शाखम् का अर्थ ब्रह्मा रूप मुख्य शाखा वाले किया है, जबकि अधः = नीचे, शाखा = शाखा अर्थ सीधा है। यह उनकी अज्ञानता की झलक है।

(गीता अध्याय 15 श्लोक 16 की फोटोकॉपी)

द्वौ, इमौ, पुरुषौ, लोके, क्षरः, च, अक्षरः, एव, च,
क्षरः, सर्वाणि, भूतानि, कूटस्थः, अक्षरः, उच्यते ॥ १६ ॥

तथा हे अर्जुन!—

लोके	= इस संसारमें	**सर्वाणि**	= सम्पूर्ण
क्षरः	= नाशवान्	**भूतानि**	= भूतप्राणियोंके शरीर (तो)
च	= और		
अक्षरः	= अविनाशी	**क्षरः**	= नाशवान्
एव	= भी—	**च**	= और
इमौ	= ये	**कूटस्थः**	= जीवात्मा
द्वौ	= दो प्रकारके*	**अक्षरः**	= अविनाशी
पुरुषौ	= पुरुष हैं।(इनमें)	**उच्यते**	= कहा जाता है।

(गीता अध्याय 15 श्लोक 17 की फोटोकॉपी)

उत्तमः, पुरुषः, तु, अन्यः, परमात्मा, इति, उदाहृतः,
यः, लोकत्रयम्, आविश्य, बिभर्ति, अव्ययः, ईश्वरः ॥ १७ ॥

तथा इन दोनोंसे—

उत्तमः	= उत्तम	**बिभर्ति**	= सबका धारण-पोषण करता है (एवं)
पुरुषः	= पुरुष		
तु	= तो	**अव्ययः**	= अविनाशी,
अन्यः	= अन्य ही है,	**ईश्वरः**	= परमेश्वर (और)
यः	= जो	**परमात्मा**	= परमात्मा
लोकत्रयम्	= तीनों लोकोंमें	**इति**	= इस प्रकार
आविश्य	= प्रवेश करके	**उदाहृतः**	= कहा गया है।

ऊपर जड़ नीचे शाखा वाला उल्टा लटका हुआ
संसार रूपी वृक्ष का चित्र

प्रश्न 21 :- आम हिन्दू के मन में यह धारणा है कि संत रामपाल जी, श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी व श्री शिव जी की भक्ति छुड़वाते हैं। आप क्या कहोगे?

उत्तर :- जैसा कि इस पुस्तिका के प्रारंभ में बताया है कि हम (मेरे अनुयाई और मैं) सब धार्मिक व समाजिक क्रियाएँ, शास्त्रविहित (शास्त्रों के अनुसार) करते हैं। गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में भी यही कहा है कि शास्त्र विधि को त्यागकर अपनी मर्जी से जो मनमाना आचरण करते हुए साधना करते हैं, उनको न सुख प्राप्त होता है, न कार्य सिद्ध करने वाली सिद्धि प्राप्त होती है, न गति (मोक्ष) होती है। इसलिए शास्त्रोक्त कर्म करो। जैसा गीता अध्याय 15 श्लोक 1-3 तथा 16-17 में संसार रूपी वृक्ष का उदाहरण बताया है। इस वृक्ष की मूल तो परम अक्षर ब्रह्म है। तना अक्षर पुरूष (अक्षर ब्रह्म) है, डार (मोटी डाली) क्षर पुरूष (क्षर ब्रह्म) है। तीनों देवता (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु, तमगुण शंकर) शाखा हैं तथा पत्ते संसार के प्राणी हैं।

दास (रामपाल दास) ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव जी व देवी-देवताओं का सम्मान करता है तथा धार्मिक कर्म शास्त्रोक्त करता व करवाता है। इसी कर्म में भक्ति की विधि शास्त्रोक्त करनी होती है। जैसे कोई आम या पीपल आदि का पौधा नर्सरी से खरीदकर लाए तो उसको अपने घर-आंगन, खेत, बाग में रोपने के लिए गढ्ढ़ा खोदा। उसमें उस पौधे को मूल की ओर से गढ्ढ़े में रखकर चारों ओर मिट्टी लगाई। फिर सिंचाई की। पौधा पेड़ बना, लाभ मिला। यदि कोई अनजान उस पौधे को शाखाओं की ओर से गढ्ढ़े में रखकर मिट्टी लगाकर सिंचाई करे, क्या वह पेड़ बनेगा? कभी नहीं, नष्ट हो जाएगा।

ठीक इसी प्रकार हम शास्त्रों में बताए अनुसार भक्ति रूपी पौधा रोपते (लगाते) हैं जो शास्त्रविधि अनुसार है, लाभदायक है यानि गीता अध्याय 3 श्लोक 14-15 में भी स्पष्ट किया है कि अविनाशी परमात्मा (परम अक्षर ब्रह्म) जो धार्मिक अनुष्ठानों में यानि यज्ञों में प्रतिष्ठित है अर्थात् उसी को ईष्ट मानकर, धार्मिक अनुष्ठान पूजाएँ (यज्ञ आदि) करने चाहिए।

कृपया देखें सीधा तथा उल्टा बीजा (रोपा) हुआ भक्ति रूपी पौधे के चित्र तथा पढ़ें गीता अध्याय 3 श्लोक 14-15 की फोटोकॉपी :-

गीता अध्याय नं. 15
श्लोक नं. 1 व 2 तथा 16-17 का आशय
पूर्ण ब्रह्म कबीर साहेब
कबीर
अक्षर पुरुष एक पेड़ है,
निरंजन (क्षर पुरुष) वाकी डार।
तीनों देवा शाखा हैं,
ये पात रूप संसार।।
मूल यानि जड़
[परम अक्षर ब्रह्म = कबीर साहेब]
तना = [अक्षर ब्रह्म अर्थात् अक्षर पुरुष (परब्रह्म)]
तना
डार = [क्षर ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरुष (कालब्रह्म)]
डार
शिव (तमगुण)
ब्रह्मा (रजगुण)
विष्णु (सतगुण)
शास्त्रविरुद्ध साधना
अर्थात् उल्टा बीजा हुआ भक्ति रूपी पौधा

गीता अध्याय नं. 15
श्लोक नं. 1 व 4 तथा 16-17 का आशय
कबीर
अक्षर पुरुष एक पेड़ है,
निरंजन (क्षर पुरुष) वाकी डार।
तीनों देवा शाखा हैं,
ये पात रूप संसार।।
ब्रह्मा (रजगुण)
शिव (तमगुण)
विष्णु (सतगुण)
डार
डार = [क्षर ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरुष (कालब्रह्म)]
तना = [अक्षर ब्रह्म अर्थात् अक्षर पुरुष (परब्रह्म)]
तना
पूर्ण ब्रह्म
कबीर साहेब
मूल यानि जड़
[परम अक्षर ब्रह्म = कबीर साहेब]
शास्त्रानुकूल साधना
अर्थात् सीधा बीजा हुआ भक्ति रूपी पौधा

(गीता अध्याय 3 श्लोक 14-15 की फोटोकॉपी)

अन्नात्, भवन्ति, भूतानि, पर्जन्यात्, अन्नसम्भवः,
यज्ञात्, भवति, पर्जन्यः, यज्ञः, कर्मसमुद्भवः ॥ १४ ॥
कर्म, ब्रह्मोद्भवम्, विद्धि, ब्रह्म, अक्षरसमुद्भवम्,
तस्मात्, सर्वगतम्, ब्रह्म, नित्यम्, यज्ञे, प्रतिष्ठितम् ॥ १५ ॥

क्योंकि—

भूतानि = सम्पूर्ण प्राणी
अन्नात् = अन्नसे
भवन्ति = उत्पन्न होते हैं,
अन्नसम्भवः = अन्नकी उत्पत्ति
पर्जन्यात् = वृष्टिसे (होती है)
पर्जन्यः = वृष्टि
यज्ञात् = यज्ञसे
भवति = होती है (और)
यज्ञः = यज्ञ
कर्मसमुद्भवः = विहित कर्मोंसे उत्पन्न होनेवाला है।
कर्म = कर्मसमुदायको (तू)
ब्रह्मोद्भवम् = वेदसे उत्पन्न (और)
ब्रह्म = वेदको
अक्षरसमुद्भवम् = अविनाशी परमात्मासे उत्पन्न हुआ
विद्धि = जान।
तस्मात् = इससे (सिद्ध होता है कि)
सर्वगतम् = सर्वव्यापी
ब्रह्म = परम अक्षर परमात्मा
नित्यम् = सदा ही
यज्ञे = यज्ञमें
प्रतिष्ठितम् = प्रतिष्ठित है।

विशेष :- गीता अनुवादकों ने इन उपरोक्त श्लोकों के अनुवाद में भी ''ब्रह्म'' शब्द का गलत अर्थ ''वेद'' किया है जबकि यहाँ पर ब्रह्म का अर्थ ब्रह्म ही रहना चाहिए। जिसका भावार्थ है कि सब प्राणी अन्न से उत्पन्न होते हैं। अन्न, वर्षा से होता है। वर्षा, शास्त्रविधि अनुसार किए जाने वाले यज्ञों (धार्मिक पूजाओं) से होती है। कर्म, ब्रह्म यानि काल ज्योति निरंजन (क्षर पुरूष) से उत्पन्न हुए तथा ब्रह्म को (काल - ज्योति निरंजन को) तू अविनाशी परमात्मा (जिसका वर्णन गीता अध्याय 2 श्लोक 17, गीता अध्याय 8 श्लोक 3, 8-10 में तथा गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में है, उस परम अक्षर ब्रह्म) से उत्पन्न हुआ जान। वही परम अक्षर परमात्मा (यानि परम अक्षर ब्रह्म जो सर्वव्यापक है) यज्ञों में प्रतिष्ठित है यानि ईष्ट रूप में मूल रूप में पूज्य है।

कबीर परमेश्वर जी ने सूक्ष्मवेद (तत्त्वज्ञान) में बताया है कि :-

कबीर, एकै साधे सब सधै, सब साधे सब जाय।
माली सींचे मूल को, फूले फले अघाय।।

अर्थात् पौधे की मूल को मिट्टी में गाड़कर सिंचाई करने से पौधे के सब

भाग (तना, डार, शाखा तथा पत्ते) विकास करेंगे। एक के साधने से सब सध जाएँगे। यदि पौधे को उल्टा बीज (रोप) कर शाखाओं की सिंचाई करेंगे तो सब नष्ट हो जाएँगे क्योंकि यह विधि गलत है। इसी प्रकार परम अक्षर ब्रह्म रूप मूल को ईष्ट रूप में मानकर पूजा करेंगे तो सब देवता प्रफुल्लित (बढ़ेंगे) होंगे यानि उनके पास हमारे धर्म-कर्म शास्त्र प्रमाणित संग्रहित (जमा) हो जाएँगे। वे फिर हमारे कर्मों का फल हमें देते रहेंगे। बिना मांगे देंगे।

गीता अध्याय 3 श्लोक 10-15 तक यही विस्तारपूर्वक बताया है कि शास्त्र अनुसार साधना-भक्ति करके देवताओं (वृक्ष की शाखा रूपी देवताओं) को बढ़ाओ। शास्त्रोक्त विधि से बढ़ाए हुए देवता तुमको बिना मांगे ही फल देंगे। जैसे पौधा पेड़ बना तो सब तना, डार, शाखा बढ़ी, विकास हुआ। फिर शाखाओं को फल लगेंगे। बिना मांगे ही लगेंगे यानि शास्त्रविधि अनुसार साधना करने से हमारे धर्म-कर्म बनेंगे।

वे इन देवताओं (ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव जी) के पास जमा होते रहेंगे। ये कर्म फल ही देते हैं। ईमानदारी से देते हैं। बिना मांगे ही देंगे क्योंकि हमारे शास्त्र अनुसार भक्ति कर्म हैं। अन्य जो शास्त्र विधि त्यागकर मनमाना आचरण करते हैं, उनके कोई धर्म-कर्म (पुण्य) नहीं बनते। उनको कोई लाभ नहीं होता। इसलिए हम परम अक्षर ब्रह्म को ईष्ट रूप में प्रतिष्ठित करके शास्त्रोक्त भक्ति करते हैं जिससे सुख भी मिलता है। सिद्धि की प्राप्ति भी होती है जिससे कार्य सिद्ध होते हैं तथा गति यानि मुक्ति भी होती है। मैं (रामपाल दास) शास्त्रविधि अनुसार भक्ति करने को कहता हूँ, भक्ति छुड़वाता नहीं हूँ।

(गीता अध्याय 3 श्लोक 10 की फोटोकॉपी)

सहयज्ञाः, प्रजाः, सृष्ट्वा, पुरा, उवाच, प्रजापतिः,
अनेन, प्रसविष्यध्वम्, एषः, वः, अस्तु, इष्टकामधुक् ॥ १० ॥

प्रजापतिः	= प्रजापति ब्रह्माने	**प्रसविष्यध्वम्**	= वृद्धिको प्राप्त होओ (और)
पुरा	= कल्पके आदिमें		
सहयज्ञाः	= यज्ञसहित	**एषः**	= यह यज्ञ
प्रजाः	= प्रजाओंको	**वः**	= तुमलोगोंको
सृष्ट्वा	= रचकर (उनसे)		
उवाच	= कहा (कि)	**इष्टकामधुक्**	= इच्छित भोग प्रदान करनेवाला
(यूयम्)	= तुमलोग		
अनेन	= इस यज्ञके द्वारा	**अस्तु**	= हो।

(गीता अध्याय 3 श्लोक 11 की फोटोकॉपी)

देवान्, भावयत, अनेन, ते, देवाः, भावयन्तु, वः, परस्परम्, भावयन्तः, श्रेयः, परम्, अवाप्स्यथ ॥ ११ ॥

तथा तुमलोग—

अनेन	= इस यज्ञके द्वारा	**(एवम्)**	= इस प्रकार (निःस्वार्थभावसे)
देवान्	= देवताओंको	**परस्परम्**	= एक-दूसरेको
भावयत	= उन्नत करो (और)	**भावयन्तः**	= उन्नत करते हुए
ते	= वे	**(यूयम्)**	= तुमलोग
देवाः	= देवता	**परम्**	= परम
वः	= तुमलोगोंको	**श्रेयः**	= कल्याणको
भावयन्तु	= उन्नत करें।	**अवाप्स्यथ**	= प्राप्त हो जाओगे।

(गीता अध्याय 3 श्लोक 12 की फोटोकॉपी)

इष्टान्, भोगान्, हि, वः, देवाः, दास्यन्ते, यज्ञभाविताः, तैः, दत्तान्, अप्रदाय, एभ्यः, यः, भुङ्क्ते, स्तेनः, एव, सः ॥ १२ ॥

यज्ञभाविताः	= यज्ञके द्वारा बढ़ाये हुए	**तैः**	= उन देवताओंके द्वारा
देवाः	= देवता	**दत्तान्**	= दिये हुए भोगोंको
वः	= तुमलोगोंको (बिना माँगे ही)	**यः**	= जो पुरुष
		एभ्यः	= इनको
इष्टान्	= इच्छित	**अप्रदाय**	= बिना दिये (स्वयम्)
भोगान्	= भोग		
हि	= निश्चय ही	**भुङ्क्ते**	= भोगता है,
		सः	= वह
दास्यन्ते	= देते रहेंगे। (इस प्रकार)	**स्तेनः**	= चोर
		एव	= ही है।

(गीता अध्याय 3 श्लोक 13 की फोटोकॉपी)

यज्ञशिष्टाशिनः, सन्तः, मुच्यन्ते, सर्वकिल्बिषैः,
भुञ्जते, ते, तु, अघम्, पापाः, ये, पचन्ति, आत्मकारणात्॥ १३ ॥

यज्ञशिष्टाशिनः	= यज्ञसे बचे हुए अन्नको खानेवाले	**आत्मकारणात्**	= अपना शरीर पोषण करनेके लिये ही
सन्तः	= श्रेष्ठ पुरुष		
सर्वकिल्बिषैः	= सब पापोंसे	**पचन्ति**	= (अन्न) पकाते हैं,
मुच्यन्ते	= मुक्त हो जाते हैं (और)	**ते**	= वे
ये	= जो	**तु**	= तो
पापाः	= पापीलोग	**अघम्**	= पापको (ही)
		भुंजते	= खाते हैं।

हे जैन्टलमैन! इस प्रकार गीता को मेरे अतिरिक्त किसी ने नहीं समझाया क्योंकि किसी को ज्ञान ही नहीं है। मैं इसलिए कहता हूँ कि मेरे अतिरिक्त कोई भी सही साधना नहीं करता-करवाता। हम अविनाशी परमेश्वर (परम अक्षर ब्रह्म) की भक्ति ईष्ट मानकर करते हैं जो सबका धारण-पोषण करने वाला है, जो गीता ज्ञान बताने वाले से अन्य है। जो पाप काटकर सुखी करता है।

उल्टे लटके संसार रूप वृक्ष के चित्र को तथा उल्टे-सीधे भक्ति रूपी पौधों के चित्रों को ध्यान से देखो, सब आसानी से समझ आ जाता है।

विश्व के मानव से अनुरोध करता हूँ कि सारा जहान इसी परमेश्वर की शरण में आए और परमशांति यानि पूर्ण मोक्ष को तथा सनातन परमधाम यानि सत्यलोक को प्राप्त करके सदा सुखी रहे।

''चौथा अध्याय''

प्रश्न 22 (लेखक का) :- क्या आप या आपके हिन्दू धर्मगुरू जानते हैं कि श्रीमद्भगवत गीता का ज्ञान किसने कहा?

उत्तर (हिन्दू श्रद्धालु का) :- श्री कृष्ण जी ने गीता का ज्ञान अर्जुन को बताया। श्री कृष्ण जी स्वयं श्री विष्णु जी के अवतार थे। वासुदेव जी के घर माता देवकी के गर्भ से जन्में थे।

लेखक (रामपाल दास) :- श्रीमान् जी! आप गलत कह रहे हो कि श्रीमद्भगवत गीता का ज्ञान श्री कृष्ण जी ने कहा।

प्रश्न 23 (हिन्दू साहेबान का) :- आपने बड़ा हास्यस्पद वक्तव्य दिया है कि गीता का ज्ञान श्री कृष्ण जी ने नहीं कहा।

आप बताओ अपनी झूठ कि गीता का ज्ञान किसने कहा?

उत्तर :- आपको यानि हिन्दू समाज को तथा अपने धर्म प्रचारक गुरूजनों को न तो अपनी पवित्र गीता का गूढ़ ज्ञान, न वेदों का गूढ़ ज्ञान, न पुराणों का गूढ़ ज्ञान है। इसी कारण से मेरा विरोध हो रहा है।

श्रीमद्भगवत गीता अध्याय 4 श्लोक 32 में कहा है कि :-

मूल पाठ :- एवम्, बहुविद्याः, यज्ञाः, वितताः, ब्रह्मणः, मुखे।
कर्मजान्, विद्धि, तान्, सर्वान्, एवम्, ज्ञात्वा, विमोक्ष्यसे।।

मेरा अनुवाद :- (एवम्) इस प्रकार और भी, (बहुविद्याः) बहुत प्रकार के (यज्ञाः) यज्ञों यानि धार्मिक अनुष्ठानों व पूजाओं का ज्ञान (ब्रह्मणः मुखेः) सच्चिदानंद घन ब्रह्म के द्वारा बोली वाणी में यानि सूक्ष्मवेद में (वितताः) विस्तार से कहे हैं। (तान्) उन (सर्वान्) सबको तू (कर्मजान्) कर्म करते-करते यानि सन्यास की आवश्यकता नहीं है, कर्म करते-करते होने वाले (विद्धि) जान। (एवम्) इस प्रकार (ज्ञात्वा) जानकर यानि उस परमात्मा-दत्त तत्त्वज्ञान को जानकर, उसके अनुसार अनुष्ठान करने से तू कर्म बंधन से सर्वथा मुक्त हो जाएगा। यह तत्त्वज्ञान है।

गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में कहा है कि उस तत्त्वज्ञान को तू तत्त्वदर्शी ज्ञानियों के पास जाकर समझ। उनको भली-भांति दण्डवत् प्रणाम करने से, उनकी सेवा करने से और कपट छोड़कर सरलतापूर्वक प्रश्न करने से वे तत्त्वदर्शी यानि परमात्मा के सम्पूर्ण अध्यात्म को जानने वाले ज्ञानी महात्मा तुझे उस तत्त्वज्ञान का उपदेश करेंगे।

आओ विचार करें :- गीता में यह ज्ञान नहीं है जो परमात्मा अपने मुख से बोलकर सुनाता है जो तत्त्वज्ञान कहा जाता है। उसको जानने के लिए तत्त्वदर्शी संत के पास जाने को कहा है यानि तत्त्वज्ञान जिसके अनुसार साधना करने से सब पाप नष्ट हो जाते हैं तथा पूर्ण मोक्ष मिलता है। यदि

गीता में बताया होता तो गीता ज्ञान देने वाला कह देता है कि हे अर्जुन! उस अध्याय में पढ़ लेना।

इसलिए हिन्दू धर्म प्रचारकों को तत्त्वदर्शी संत न मिलने से सम्पूर्ण अध्यात्म ज्ञान नहीं हुआ। वह तत्त्वज्ञान मेरे (लेखक रामपाल दास के) पास है। उस तत्त्वज्ञान के द्वारा सर्व शास्त्रों के गूढ़ रहस्यों को समझा हूँ। अब बताता हूँ कि श्रीमद्भगवत गीता का ज्ञान किसने कहा?

''पवित्र गीता का ज्ञान श्री कृष्ण में प्रवेश करके काल ब्रह्म ने कहा।''

श्री शिव महापुराण में विद्येश्वर संहिता खण्ड के अध्याय 5-10 में प्रकरण आता है कि एक समय श्री ब्रह्मा जी तथा श्री विष्णु जी अपने-अपने को जगत का कर्त्ता यानि ईश (प्रभु) बताने लगे। उन दोनों का इसी बात पर युद्ध होने लगा। उस समय सदाशिव यानि काल ब्रह्म ने उनके मध्य में एक विशाल स्तंभ खड़ा कर दिया। उनका युद्ध बंद हो गया। फिर उस काल रूप ब्रह्म ने अपने पुत्र शिव शंकर का वेश बनाकर अपनी पत्नी प्रकृति देवी (दुर्गा) को पार्वती रूप में साथ लेकर उन दोनों (ब्रह्मा जी व विष्णु जी) के पास जाकर कहा कि तुमने जो अपने को ईश (जगत का प्रभु) माना, यह बड़ा अद्भुत हुआ। यह गलतफहमी (भ्रम) दूर करने को मैं आया हूँ। तुम ईश (परमात्मा) नहीं हो। पुत्रो! मैंने तुमको तुम्हारे तप के प्रतिफल में दो कृत दिए हैं। ब्रह्मा को उत्पत्ति तथा विष्णु को स्थिति-पालन का। इसी प्रकार मेरे जैसी शक्ल वाले शंकर तथा रूद्र को भी एक-एक कृत तिरोभाव और संहार के दिए हैं।

इस प्रसंग से सिद्ध हो जाता है कि सदाशिव यानि काल ब्रह्म जो पाँचवां है। यह श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शंकर जी का पिता है। उसी काल ब्रह्म (ज्योति निरंजन) ने श्री कृष्ण जी के शरीर में प्रेतवत् प्रवेश करके गीता का ज्ञान कहा है।

पढ़िये ढेर सारे प्रमाण :-

दास प्रमाणों सहित पेश करता है, सद्ग्रंथों की सच्चाई जो इस प्रकार है :- श्रीमद्भगवत गीता का ज्ञान श्री कृष्ण जी ने नहीं कहा। उनके शरीर के अंदर प्रेतवत् प्रवेश करके काल ब्रह्म (ज्योति निरंजन) ने बोला था।

प्रमाण :- महाभारत ग्रंथ में लिखा है कि महाभारत के युद्ध के पश्चात् युद्धिष्ठिर जी को राजगद्दी पर बैठाकर श्री कृष्ण जी ने द्वारका जाने की तैयारी की तो अर्जुन ने कहा कि ''आप एक सत्संग करके जाना। मेरे को गीता वाला ज्ञान फिर से बताना जो आप जी ने युद्ध के समय बताया था। मैं भूल गया हूँ। श्री कृष्ण जी ने कहा कि अर्जुन! तू बड़ा बुद्धिहीन है, श्रद्धाहीन है। तूने उस निर्मल गीता ज्ञान को क्यों भुला दिया है। अब मुझे भी याद नहीं।'' फिर श्री कृष्ण जी ने अपने स्तर की गीता का ज्ञान बताया

<u>जिसमें श्रीमद्‌भगवत गीता वाला एक भी शब्द नहीं है</u>।

पेश है संक्षिप्त महाभारत (द्वितीय खण्ड) के अध्याय ''आश्वमेधिकपर्व'' के पृष्ठ 800-802 की फोटोकॉपी :-

अर्जुनका श्रीकृष्णसे गीताका विषय पूछना और श्रीकृष्णका अर्जुनसे सिद्ध महर्षि और काश्यपका संवाद

जनमेजयने पूछा—ब्रह्मन्! शत्रुओंका नाश हो जानेके बाद जब महात्मा श्रीकृष्ण और अर्जुन सभामें बैठकर वार्तालाप कर रहे थे, उस समय उनमें क्या-क्या बातचीत हुई?

वैशम्पायनजीने कहा—राजन्! श्रीकृष्णके सहित अर्जुनने जब अपने राज्यपर पूरा अधिकार प्राप्त कर लिया तो वे दिव्य सभाभवनमें आनन्दके साथ रहने लगे। एक दिन स्वजनोंसे घिरे हुए वे दोनों मित्र स्वेच्छासे घूमते-घूमते सभामण्डपके ऐसे भागमें पहुँचे जो स्वर्गके समान सुन्दर था। पाण्डुनन्दन अर्जुन श्रीकृष्णके साथ रहकर बहुत प्रसन्न थे। उन्होंने एक बार उस रमणीय सभाकी ओर दृष्टि डालकर भगवान्‌से यह वचन कहा—'देवकीनन्दन! जब युद्धका अवसर उपस्थित था, उस समय मुझे आपके माहात्म्यका ज्ञान और ईश्वरीय स्वरूपका दर्शन हुआ था; किंतु केशव! आपने स्नेहवश पहले मुझे जो ज्ञानका उपदेश किया था, वह सब इस समय बुद्धिके दोषसे भूल गया है। उन विषयोंको सुननेके लिये

बारंबार मेरे मनमें उत्कण्ठा होती है। इधर, आप जल्दी ही द्वारका जानेवाले हैं; अतः पुनः वह सब विषय मुझे सुना दीजिये।'

वैशम्पायनजी कहते हैं—अर्जुनके ऐसा कहनेपर वक्ताओंमें श्रेष्ठ महातेजस्वी भगवान् श्रीकृष्णने उन्हें गलेसे लगाकर इस प्रकार उत्तर दिया।

श्रीकृष्ण बोले—अर्जुन! उस समय मैंने तुम्हें अत्यन्त गोपनीय विषयका श्रवण कराया था, अपने स्वरूपभूत धर्म—सनातन पुरुषोत्तम-तत्त्वका परिचय दिया था और (शुक्ल-कृष्ण गतिका निरूपण करते हुए) नित्य लोकोंका भी वर्णन किया था; किंतु तुमने जो अपनी नासमझीके कारण उस उपदेशको याद नहीं रखा यह जानकर मुझे बड़ा खेद हुआ है। उन बातोंका अब पूरा-पूरा स्मरण होना सम्भव नहीं जान पड़ता। पाण्डुनन्दन! निश्चय ही तुम बड़े श्रद्धाहीन हो, तुम्हारी बुद्धि अच्छी नहीं जान पड़ती। अब मेरे लिये उस उपदेशको ज्यों-का-त्यों दुहरा देना कठिन है; क्योंकि उस समय योगयुक्त होकर मैंने परमात्मतत्त्वका वर्णन किया था। अब उस विषयका ज्ञान करानेके लिये मैं एक प्राचीन इतिहासका वर्णन करता हूँ। इससे तुम्हें श्रेष्ठ एवं स्थिर बुद्धि प्राप्त होगी, जिसके द्वारा तुम परम उत्तम गतिको पा जाओगे। एक दिनकी बात है, एक दुर्द्धर्ष ब्राह्मण ब्रह्मलोकसे उतरकर मेरे यहाँ आये। मैंने उनकी विधिवत् पूजा की और मोक्षधर्मके विषयमें प्रश्न किया। मेरे प्रश्नका उन्होंने बड़े अच्छे ढंगसे उत्तर दिया। वही मैं तुम्हें बतला रहा हूँ। कोई अन्यथा विचार न करके इसे ध्यान देकर सुनो।

ब्राह्मणने कहा—मधुसूदन! तुमने सब प्राणियोंपर कृपा करके उनके मोहका नाश करनेके लिये जो यह मोक्षधर्मसे सम्बन्ध रखनेवाला प्रश्न किया है, उसका मैं यथावत् उत्तर दे रहा हूँ। सावधान होकर मेरी बात श्रवण करो—प्राचीन समयमें काश्यप नामके एक धर्मात्मा और तपस्वी ब्राह्मण किसी सिद्ध ब्रह्मर्षिके पास गये; जो धर्मके विषयमें शास्त्रके सम्पूर्ण रहस्योंको जाननेवाले, भूत और भविष्यके ज्ञान-विज्ञानमें प्रवीण, लोक-तत्त्वके ज्ञानमें कुशल, सुख-दुःखके रहस्यको समझनेवाले, जन्म-मृत्युके तत्त्वज्ञ, पाप-पुण्यके ज्ञाता और ऊँच-नीच प्राणियोंको कर्मानुसार प्राप्त होनेवाली गतिके प्रत्यक्ष द्रष्टा थे। वे मुक्तकी भाँति विचरनेवाले, सिद्ध, शान्तचित्त, जितेन्द्रिय, ब्रह्मतेजसे देदीप्यमान, सर्वत्र जा सकनेवाले और अन्तर्धान होनेकी विद्याको जाननेवाले थे। अदृश्य रहनेवाले चक्रधारी सिद्धोंके साथ विचरते, बातचीत करते और उन्हींके साथ एकान्तमें बैठते थे। जैसे वायु कहीं आसक्त न होकर सर्वत्र प्रवाहित होती है, उसी प्रकार वे स्वच्छन्दतापूर्वक अनासक्त भावसे सर्वत्र विचरा करते थे। महर्षि काश्यप उनकी उपर्युक्त महिमा सुनकर ही उनके पास गये थे। निकट जाकर उन मेधावी, तपस्वी, धर्माभिलाषी और एकाग्रचित्त महर्षिने न्यायानुसार उन सिद्ध महात्माके चरणोंमें प्रणाम किया। वे ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ और बड़े अद्भुत संत थे। उनमें सब प्रकारकी योग्यता थी। वे शास्त्रके ज्ञाता और सच्चरित्र थे। उनका दर्शन करके काश्यपको बड़ा विस्मय हुआ। वे उन्हें गुरु मानकर उनकी सेवामें लग गये और अपनी विशेष शुश्रूषा, गुरुभक्ति तथा श्रद्धाभावके द्वारा उन्होंने उन सिद्ध महात्माको संतुष्ट कर लिया। जनार्दन! अपने शिष्य काश्यपके ऊपर प्रसन्न होकर उन सिद्ध महर्षिने परासिद्धिके सम्बन्धमें विचार करके जो उपदेश किया, उसे बताता हूँ, सुनो।

सिद्धने कहा—तात काश्यप! मनुष्य नाना प्रकारके शुभ कर्मोंका अनुष्ठान करके केवल पुण्यके संयोगसे इस लोकमें उत्तम फल और देवलोकमें स्थान प्राप्त करते हैं। जीवको कहीं भी अत्यन्त सुख नहीं मिलता। किसी भी लोकमें वह सदा नहीं रहने पाता। तपस्या आदिके द्वारा कितने ही कष्ट सहकर बड़े-से-बड़े स्थानको क्यों न प्राप्त किया जाय, वहाँसे भी बार-बार नीचे आना ही पड़ता है। मैंने काम-क्रोधसे युक्त और तृष्णासे मोहित होकर अनेकों बार पाप किये हैं और उनके फलस्वरूप घोर कष्ट देनेवाली अशुभ गतियोंको भोगा है। बार-बार जन्म और बार-बार मृत्युका क्लेश उठाया है। तरह-तरहके पदार्थ भोजन किये और अनेकों स्तनोंका दूध पिया है। बहुत-से पिता और भाँति-भाँतिकी माताएँ देखी हैं। विचित्र-विचित्र सुख-दु:खोंका अनुभव किया है। कितनी ही बार मुझसे प्रियजनोंका वियोग और अप्रिय मनुष्योंका संयोग हुआ है। जिस धनको मैंने बहुत कष्ट सहकर कमाया था, वह मेरे देखते-देखते नष्ट हो गया है। राजा और स्वजनोंकी ओरसे मुझे कई बार बड़े-बड़े कष्ट और अपमान उठाने पड़े हैं। अत्यन्त दु:सह शारीरिक और मानसिक वेदनाएँ सहनी पड़ी हैं। मैंने अनेकों बार घोर अपमान, प्राणान्त दण्ड और कड़ी कैदकी सजाएँ भोगी हैं। नरकमें पड़कर यमलोककी यातनाएँ सही हैं। इस लोकमें जन्म लेकर बारंबार बुढ़ापा, रोग और राग-द्वेष आदि द्वन्द्वोंके दु:खोंका अनुभव किया है। इस प्रकार बारंबार क्लेश उठानेसे एक दिन मेरे मनमें बड़ा संताप हुआ और मैंने दु:खोंसे घबराकर परमात्माकी शरण ली तथा समस्त लोक-व्यवहारका परित्याग कर दिया। इस तरह अनुभवके पश्चात् मैंने इस मार्गका आश्रय लिया है और अब परमात्माकी कृपासे मुझे यह उत्तम सिद्धि प्राप्त हुई है। अब मैं पुन: इस संसारमें नहीं आऊँगा। जबतक यह सृष्टि कायम रहेगी और जबतक मेरी मुक्ति नहीं हो जायगी, तबतक मैं अपनी और दूसरे प्राणियोंकी शुभ गतिका अवलोकन करूँगा। द्विजश्रेष्ठ! इस प्रकार मुझे यह उत्तम सिद्धि मिली है। इसके बाद मैं उत्तम-से-उत्तम सत्यलोकमें जाऊँगा और क्रमशः अव्यक्त ब्रह्मपद (मोक्ष) को प्राप्त कर लूँगा। इसमें तुम्हें तनिक भी संदेह नहीं करना चाहिये। अब मुझे मर्त्यलोकमें नहीं आना पड़ेगा। महामते! मैं तुम्हारे ऊपर बहुत प्रसन्न हूँ। बोलो, तुम्हारा कौन-सा प्रिय कार्य करूँ? तुम जिस इच्छासे मेरे पास आये हो उसके पूर्ण होनेका यह समय आ गया है। तुम्हारे आनेका उद्देश्य क्या है? इसे मैं जानता हूँ और शीघ्र ही यहाँसे जानेवाला हूँ। इसीलिये स्वयं तुम्हें प्रश्न करनेके लिये प्रेरित कर रहा हूँ। विद्वन्! तुम्हारे उत्तम आचरणसे मुझे बड़ा संतोष है। तुम अपने कल्याणकी बात पूछो, मैं तुम्हारे अभीष्ट प्रश्नका उत्तर दूँगा। काश्यप! मैं तुम्हारी बुद्धिकी सराहना करता और उसे बहुत आदर देता हूँ। तुमने मुझे पहचान लिया है, इसीसे कह रहा हूँ कि तुम बड़े बुद्धिमान् हो।

❖ इस फोटोकॉपी में श्री कृष्ण जी ने ब्रह्मलोक से उतरकर उनके पास आए ब्राह्मण दुर्द्धष से मोक्ष धर्म यानि मुक्ति कैसे हो सकती है, यह जानना चाहा। उस ब्राह्मण की विधिवत् पूजा की। उस ब्राह्मण ने एक कथा सुनाई कि एक सिद्ध पुरूष था। जो अदृश हो जाने की (गुप्त छिप जाने यानि अंतर्ध्यान होने की) सिद्धि प्राप्त थे। महर्षिकश्यप उसके पास गए, गुरू बनाया। सिद्ध ने उसे भी सिद्धि प्राप्त करने की विधि बताई। इस प्रकरण से भी स्वसिद्ध हो जाता है कि श्री कृष्ण जी को अध्यात्म ज्ञान नहीं था, न गीता का ज्ञान था। यदि गीता का ज्ञान होता तो उस ब्राह्मण से जानने की आवश्यकता ही नहीं पड़ती क्योंकि गीता में मुक्ति का ज्ञान बता रखा है। इस ऊपर लगी फोटोकॉपी के प्रकरण में गीता वाला एक भी शब्द नहीं है।

''उस दुर्द्धष ब्राह्मण के शिष्य महर्षि कश्यप की भक्ति की आध्यात्मिक उपलब्धि''

जिस समय राजा परीक्षित को तक्षक नामक सर्प ने डसना था। कश्यप ऋषि राजा परीक्षित को मिलने चले। उनका उद्देश्य था कि मेरे पास ऐसी

सिद्धि है कि मैं सर्प के काटने से मृत्यु प्राप्त को जीवित कर सकता हूँ। राजा को जीवित कर दूँगा तो राजा मुझे बहुत सारा धन देगा। तक्षक नाग को पता चला कि कश्यप ऋषि राजा को जीवित करने के उद्देश्य से जा रहा है। वह एक ब्राह्मण का वेश धारण करके मार्ग में खड़ा हो गया। कश्यप ऋषि से प्रश्न किया कि हे ऋषि जी! आप कहाँ जा रहे हो? उत्तर था कि राजा परीक्षित को तक्षक डसेगा, उसकी मृत्यु हो जाएगी। मेरे पास ऐसी सिद्धि है कि मैं सर्प के काटे से मृत को जीवित कर दूँगा। राजा मुझे बहुत धन देगा। तक्षक ने कहा कि मैं तक्षक नाग हूँ। मैं इस वृक्ष को डंक मारूँगा। यह जलकर कोयला हो जाएगा। कश्यप ऋषि बोले कि मैं इसे पुनः हरा-भरा कर दूँगा। तक्षक रूप धारकर नाग ने वृक्ष को डंक मारा। वृक्ष जलकर कोयला हो गया। ऋषि ने अपने लोटे से जल लिया। मंत्र पढ़कर जले हुए वृक्ष की राख पर छिड़क दिया। वृक्ष वैसे ही हरा-भरा हो गया। तक्षक को आश्चर्य हुआ। उसने ऋषि को बताया कि यदि राजा परीक्षित नहीं मरा तो वह ऋषि मुझे श्राप देगा जिसने राजा परीक्षित की मौत तक्षक सर्प से डसने से होने का श्राप दिया है। मेरा जीवन नरक बन जाएगा। हे कश्यप ऋषि! मैं आपको राजा से भी अधिक धन देता हूँ। यह कहकर तक्षक ने ब्राह्मण वेश धारण किया और थैले से हीरे, स्वर्ण आदि बहुत सारा धन ऋषि जी के समक्ष रख दिया। ऋषि कश्यप ने ध्यान से देखा कि राजा परीक्षित का जीवन शेष नहीं है। इसलिए राजा परीक्षित जीवित नहीं हो सकेगा। यह विचार करके ऋषि कश्यप जी धन की गठड़ी लेकर लौट गए। {पाठको! यह है ऋषियों की भक्ति का उद्देश्य। यह है उस ब्रह्मलोक के ब्राह्मण के ज्ञान का परिणाम। श्री कृष्ण जी द्वारा बताया गीता का ज्ञान यह है, यह डले ढोये ऋषियों ने।

{यह प्रकरण श्रीभागवत-सुधासागर (शुकसागर) पुराण में है जिसका प्रकाशक व मुद्रक गीता प्रेस गोरखपुर है। इस पुस्तक के स्कन्ध नं. 12 के छठे अध्याय में उपरोक्त प्रकरण है।}

❖ <u>अनेकों प्रमाण पेश हैं कि श्रीमद्भगवत् गीता का ज्ञान श्री कृष्ण ने नहीं कहा। उनके शरीर में प्रवेश करके काल ब्रह्म ने कहा था</u>।

हिन्दू पक्ष का प्रश्न नं. 24 :- गीता का ज्ञान कब तथा किसने, किसको सुनाया, किसने लिखा? विस्तार से बताएँ।

उत्तर :- श्री मद्भगवत् गीता का ज्ञान श्री कृष्ण जी के शरीर में प्रवेश करके काल भगवान ने (जिसे वेदों व गीता में "ब्रह्म" नाम से भी जाना जाता है) अर्जुन को सुनाया। जिस समय कौरव तथा पाण्डव अपनी सम्पत्ति अर्थात् दिल्ली के राज्य पर अपने-अपने हक का दावा करके युद्ध करने के लिए तैयार हो गए थे, दोनों की सेनाएँ आमने-सामने कुरूक्षेत्र के मैदान में खड़ी थी। अर्जुन ने देखा कि सामने वाली सेना में भीष्म पितामह, गुरू द्रोणाचार्य,

रिश्तेदार, कौरवों के बच्चे, दामाद, बहनोई, ससुर आदि-आदि लड़ने-मरने के लिए खड़े हैं। कौरव और पाण्डव आपस में चचेरे भाई थे। अर्जुन में साधुभाव जागृत हो गया तथा विचार किया कि जिस राज्य को प्राप्त करने के लिए हम अपने चचेरे भाईयों, भतीजों, दामादों, बहनोईयों, भीष्म पितामह जी तथा गुरूजनों को मारेंगे। यह भी नहीं पता कि हम कितने दिन संसार में रहेंगे? इसलिए इस प्रकार से प्राप्त राज्य के सुख से अच्छा तो हम भिक्षा माँगकर अपना निर्वाह कर लेंगे, परन्तु युद्ध नहीं करेंगे। यह विचार करके अर्जुन ने धनुष-बाण हाथ से छोड़ दिया तथा रथ के पिछले भाग में बैठ गया।

अर्जुन की ऐसी दशा देखकर श्री कृष्ण बोले! कि देख ले सामने किस योद्धा से आपने लड़ना है। अर्जुन ने उत्तर दिया कि हे कृष्ण! मैं किसी कीमत पर भी युद्ध नहीं करूँगा। अपने उद्देश्य तथा जो विचार मन में उठ रहे थे, उनसे भी अवगत कराया। उसी समय श्री कृष्ण जी में काल भगवान प्रवेश कर गया जैसे प्रेत किसी अन्य व्यक्ति के शरीर में प्रवेश करके बोलता है। ऐसे ही काल ने श्री कृष्ण के शरीर में प्रवेश करके श्री मद्भगवत गीता का ज्ञान युद्ध करने की प्रेरणा करने के लिए तथा कलयुग में वेदों को जानने वाले व्यक्ति नहीं रहेंगे, इसलिए चारों वेदों का संक्षिप्त वर्णन व सारांश "गीता ज्ञान" रूप में 18 अध्यायों में 584 श्लोकों में सुनाया।(श्रीमद्भगवत गीता में कुल 700 श्लोक हैं जिनमें से 584 काल ब्रह्म ने श्री कृष्ण के शरीर में प्रवेश करके बोले थे। शेष संजय, धृतराष्ट्र संवाद के श्लोक हैं।) श्री कृष्ण को तो पता भी नहीं था कि मैंने क्या बोला था गीता ज्ञान में।

❖ कुछ वर्षों के बाद वेदव्यास ऋषि ने इस अमृतज्ञान को संस्कृत भाषा में देवनागरी लिपि में लिखा। बाद में अनुवादकों ने अपनी बुद्धि के अनुसार इस पवित्र ग्रन्थ का हिन्दी तथा अन्य भाषाओं में अनुवाद किया जो वर्तमान में गीता प्रेस गोरखपुर (U.P) से प्रकाशित किया जा रहा है जो कुछ गलत, कुछ ठीक है।

पेश हैं ढेर सारे प्रमाण कि गीता शास्त्र का ज्ञान "काल" ने कहा।

सर्व प्रथम गीता से ही प्रमाणित करता हूँ :-

❖ प्रमाण नं. 1 :- गीता अध्याय 11 में प्रमाण है कि जब गीता ज्ञान दाता ने अपना विराट रूप दिखा दिया तो उसको देखकर अर्जुन भयभीत हो गया, काँपने लगा। यहाँ पर यह बताना भी अनिवार्य है कि अर्जुन का साला था श्री कृष्ण क्योंकि श्री कृष्ण की बहन सुभद्रा का विवाह अर्जुन से हुआ था।

गीता ज्ञान दाता ने जिस समय अपना भयंकर विराट रूप दिखाया जो हजार भुजाओं वाला था। तब अर्जुन ने पूछा कि हे देव! आप कौन हैं?(गीता अध्याय 11 श्लोक 31)

यदि वह विराट रूप वाला श्री कृष्ण होता तो क्या अर्जुन यह पूछता कि हे महानुभाव! आप कौन हो? क्या जीजा अपने साले को नहीं पहचानता? श्री

कृष्ण जी तो अर्जुन के साथ अधिकतर रहा करते थे। उनके सारथी भी थे।

गीता अध्याय 11 श्लोक 32 में गीता बोलने वाला स्वयं बताता है कि मैं काल हूँ। सबको मारने के लिए अब प्रवृत हुआ हूँ यानि प्रकट हुआ हूँ। श्री कृष्ण यह नहीं कहते। वे तो वहीं थे। श्री कृष्ण जी काल नहीं थे।

पेश है गीता अध्याय 11 श्लोक 31 की फोटोकॉपी :-

आख्याहि, मे, कः, भवान्, उग्ररूपः, नमः, अस्तु, ते,
देववर,प्रसीद, विज्ञातुम्, इच्छामि, भवन्तम्, आद्यम्,
न, हि, प्रजानामि, तव, प्रवृत्तिम्॥ ३१॥

हे भगवन्! कृपा करके—

मे	= मुझे	**आद्यम्**	= आदिपुरुष
आख्याहि	= बतलाइये (कि)	**भवन्तम्**	= आपको (मैं)
भवान्	= आप		
उग्ररूपः	= उग्ररूपवाले	**विज्ञातुम्**	= विशेषरूपसे जानना
कः	= कौन हैं ?	**इच्छामि**	= चाहता हूँ;
देववर	= हे देवोंमें श्रेष्ठ!	**हि**	= क्योंकि (मैं)
ते	= आपको	**तव**	= आपकी
नमः	= नमस्कार	**प्रवृत्तिम्**	= प्रवृत्तिको
अस्तु	= हो। (आप)	**न**	= नहीं
प्रसीद	= प्रसन्न होइये।	**प्रजानामि**	= जानता।

❖ विचारणीय विषय है कि क्या हम अपने साले से पूछेंगे कि हे महानुभाव! बताईए आप कौन हैं? {एक समय एक व्यक्ति में प्रेत बोलने लगा। साथ बैठे भाई ने पूछा आप कौन बोल रहे हो? उत्तर मिला कि तेरा मामा बोल रहा हूँ। मैं दुर्घटना में मरा था। क्या हम अपने भाई को नहीं जानते? ठीक इसी प्रकार श्री कृष्ण में काल बोल रहा था।}

❖ गीता अध्याय 11 श्लोक 46 :- हे सहंस्राबाहु (हजार भुजा वाले)! आप अपने चतुर्भुज रूप में दर्शन दीजिए (क्योंकि अर्जुन उन्हें विष्णु अवतार कृष्ण तो मानता ही था, परंतु उस समय श्री कृष्ण के शरीर में काल ने अपना अपार विराट रूप दिखाया था) मैं भयभीत हूँ, आपके इस रूप को सहन नहीं कर पा रहा हूँ।

ध्यान रहे :- श्री विष्णु (श्री कृष्ण) केवल चार भुजा से युक्त हैं। ये दो भुजा तो बना सकते हैं, परंतु चार से अधिक का प्रदर्शन नहीं कर सकते। काल ब्रह्म हजार (संहस्र) भुजा युक्त है। यह एक हजार तथा इन से नीचे भुजाओं का प्रदर्शन कर सकता है। हजार भुजाओं से अधिक का प्रदर्शन नहीं कर सकता। चार भुजा, दो भुजा, दस भुजा आदि-आदि बना सकता है। शरीर में बने कमल चक्रों में भी इस काल ब्रह्म के चक्र का नाम संहस्र कमल दल चक्र है।

पेश है गीता अध्याय 11 श्लोक 46 की फोटोकॉपी :-

किरीटिनम्, गदिनम्, चक्रहस्तम्, इच्छामि, त्वाम्,
द्रष्टुम्, अहम्, तथा, एव, तेन, एव, रूपेण, चतुर्भुजेन,
सहस्रबाहो, भव, विश्वमूर्ते ॥ ४६ ॥

और हे विष्णो!—

अहम्	= मैं	**इच्छामि**	= चाहता हूँ,
तथा	= वैसे	**(अतः)**	= इसलिये
एव	= ही	**विश्वमूर्ते**	= हे विश्वस्वरूप!
त्वाम्	= आपको	**सहस्रबाहो**	= हे सहस्रबाहो! (आप)
किरीटिनम्	= मुकुट धारण किये हुए (तथा)	**तेन एव**	= उसी
गदिनम्, चक्रहस्तम्	= गदा और चक्र हाथमें लिये हुए	**चतुर्भुजेन रूपेण**	= चतुर्भुजरूपसे (प्रकट)
द्रष्टुम्	= देखना	**भव**	= होइये।

❖ **प्रमाण नं. 2 :- गीता अध्याय 11 श्लोक 21 में अर्जुन ने कहा कि आप तो देवताओं के समूह के समूह को ग्रास (खा) रहे हैं जो आपकी स्तुति हाथ जोड़कर भयभीत होकर कर रहे हैं। महर्षियों तथा सिद्धों के समुदाय आप से अपने जीवन की रक्षार्थ मंगल कामना कर रहे हैं। गीता अध्याय 11 श्लोक 31 में अर्जुन पूछ रहा है अपने साले को कि आप कौन हैं? गीता अध्याय 11 श्लोक 32 में गीता ज्ञान दाता ने बताया कि हे अर्जुन! मैं बढ़ा हुआ काल हूँ। अब प्रवृत हुआ हूँ अर्थात् श्री कृष्ण के शरीर में अब प्रवेश हुआ हूँ। सर्व व्यक्तियों का नाश करूँगा। विपक्ष की सर्व सेना, तू युद्ध नहीं करेगा तो भी नष्ट हो जाएगी।**

पेश है गीता अध्याय 11 श्लोक 21, 31-32 की फोटोकॉपी :-

(गीता अध्याय 11 श्लोक 21 की फोटोकॉपी)

अमी, हि, त्वाम्, सुरसङ्घाः, विशन्ति, केचित्, भीताः,
प्राञ्जलयः, गृणन्ति, स्वस्ति, इति, उक्त्वा, महर्षिसिद्धसङ्घाः,
स्तुवन्ति, त्वाम्, स्तुतिभिः, पुष्कलाभिः ॥ २१ ॥

और हे गोविन्द!—

अमी	= वे ही	**गृणन्ति**	= उच्चारण करते हैं (तथा)
सुरसङ्घाः, हि	= देवताओंके समूह	**महर्षिसिद्धसङ्घाः**	= महर्षि और सिद्धोंके समुदाय
त्वाम्	= आपमें		
विशन्ति	= प्रवेश करते हैं (और)	**स्वस्ति**	= 'कल्याण हो'
		इति	= ऐसा
केचित्	= कुछ	**उक्त्वा**	= कहकर
भीताः	= भयभीत होकर	**पुष्कलाभिः**	= उत्तम-उत्तम
प्राञ्जलयः	= हाथ जोड़े (आपके नाम और गुणोंका)	**स्तुतिभिः**	= स्तोत्रोंद्वारा
		त्वाम्	= आपकी
		स्तुवन्ति	= स्तुति करते हैं।

(गीता अध्याय 11 श्लोक 31 की फोटोकॉपी)

आख्याहि, मे, कः, भवान्, उग्ररूपः, नमः, अस्तु, ते, देववर,प्रसीद, विज्ञातुम्, इच्छामि, भवन्तम्, आद्यम्, न, हि, प्रजानामि, तव, प्रवृत्तिम्॥ ३१ ॥

हे भगवन्! कृपा करके—

मे	= मुझे	**आद्यम्**	= आदिपुरुष
आख्याहि	= बतलाइये (कि)	**भवन्तम्**	= आपको (मैं)
भवान्	= आप		
उग्ररूपः	= उग्ररूपवाले	**विज्ञातुम्**	= विशेषरूपसे जानना
कः	= कौन हैं ?	**इच्छामि**	= चाहता हूँ;
देववर	= हे देवोंमें श्रेष्ठ!	**हि**	= क्योंकि (मैं)
ते	= आपको	**तव**	= आपकी
नमः	= नमस्कार	**प्रवृत्तिम्**	= प्रवृत्तिको
अस्तु	= हो। (आप)	**न**	= नहीं
प्रसीद	= प्रसन्न होइये।	**प्रजानामि**	= जानता।

(गीता अध्याय 11 श्लोक 32 की फोटोकॉपी)

कालः, अस्मि, लोकक्षयकृत्, प्रवृद्धः, लोकान्, समाहर्तुम्, इह, प्रवृत्तः, ऋते, अपि, त्वाम्, न, भविष्यन्ति, सर्वे, ये, अवस्थिताः, प्रत्यनीकेषु, योधाः ॥ ३२ ॥

इस प्रकार अर्जुनके पूछनेपर श्रीभगवान् बोले, हे अर्जुन! मैं—

लोकक्षयकृत्	= लोकोंका नाश करनेवाला	**अवस्थिताः**	= स्थित
प्रवृद्धः	= बढ़ा हुआ	**योधाः**	= योद्धा लोग हैं,
कालः	= महाकाल	**(ते)**	= वे
अस्मि	= हूँ।	**सर्वे**	= सब
इह	= इस समय	**त्वाम्**	= तेरे
लोकान्	= इन लोकोंको	**ऋते**	= बिना
समाहर्तुम्	= नष्ट करनेके लिये	**अपि**	= भी
प्रवृत्तः	= प्रवृत्त हुआ हूँ। (इसलिये)	**न**	= नहीं
ये	= जो	**भविष्यन्ति**	= रहेंगे अर्थात् तेरे युद्ध न करनेसे भी इन सबका नाश हो जायगा।
प्रत्यनीकेषु	= प्रतिपक्षियोंकी सेनामें		

इससे सिद्ध हुआ कि गीता का ज्ञान श्री कृष्ण जी के शरीर में प्रविष्ट होकर काल ने कहा है। श्री कृष्ण जी ने पहले कभी नहीं कहा कि मैं काल हूँ। श्री कृष्ण जी को देखकर कोई भयभीत नहीं होता था। गोप-गोपियाँ, ग्वाल-बाल, पशु-पक्षी सब दर्शन करके आनंदित होते थे। तो ''क्या श्री कृष्ण जी काल थे?'' नहीं। इसलिए गीता ज्ञान दाता ''काल'' है जिसने श्री कृष्ण जी के शरीर में प्रवेश करके गीता शास्त्र का ज्ञान दिया।

❖ प्रमाण नं.3 :- गीता अध्याय 11 श्लोक 47 में गीता ज्ञानदाता ने कहा कि हे अर्जुन! मैंने प्रसन्न होकर अपनी कृपा से तेरी दिव्य दृष्टि खोलकर यह विराट रूप दिखाया है। यह विराट रूप तेरे अतिरिक्त पहले किसी ने नहीं देखा है।

❖ विचार करें :- महाभारत ग्रन्थ में प्रकरण आता है कि जिस समय श्री कृष्ण जी कौरवों की सभा में उपस्थित थे और उनसे कह रहे थे कि आप दोनों (कौरव और पाण्डव) आपस में बातचीत करके अपनी सम्पत्ति (राज्य) का बटँवारा कर लो, युद्ध करना शोभा नहीं देता। पाण्डवों ने कहा कि हमें पाँच (5) गाँव दे दो, हम उन्हीं से निर्वाह कर लेंगे। दुर्योधन ने यह भी माँग नहीं मानी और कहा कि पाण्डवों के लिए सुई की नोक के समान भी राज्य नहीं है, युद्ध करके ले सकते हैं। इस बात से श्री कृष्ण भगवान बहुत नाराज हो गए तथा दुर्योधन से कहा कि तू पृथ्वी के नाश के लिए जन्मा है, कुलनाश करके टिकेगा। भले मानव! कहाँ आधा राज्य, कहाँ 5 गाँव। कुछ तो शर्म कर ले।

इतनी बात श्री कृष्ण जी के मुख से सुनकर अभिमानी दुर्योधन राजा आग-बबूला हो गया और सभा में उपस्थित अपने भाईयों तथा मन्त्रियों से बोला कि इस कृष्ण यादव को गिरफ्तार कर लो। उसी समय श्री कृष्ण जी ने विराट रूप दिखाया। सभा में उपस्थित सर्व सभासद उस विराट रूप को देखकर भयभीत होकर कुर्सियों के नीचे छिप गए, कुछ आँखों पर हाथ रखकर जमीन पर गिर गए। श्री कृष्ण जी सभा छोड़ कर चले गए तथा अपना विराट रूप समाप्त कर दिया।

गीता अध्याय 11 श्लोक 47 में गीता ज्ञान दाता ने कहा था कि यह मेरा विराट रूप तेरे अतिरिक्त अर्जुन! पहले किसी ने नहीं देखा था। यदि श्री कृष्ण गीता ज्ञान बोल रहे होते तो यह कभी नहीं कहते कि मेरा विराट रूप तेरे अतिरिक्त पहले किसी ने नहीं देखा था क्योंकि श्री कृष्ण जी के विराट रूप को कौरव तथा अन्य सभासद पहले देख चुके थे।

☛ इससे भी सिद्ध हुआ कि श्रीमद्भगवत गीता का ज्ञान श्री कृष्ण ने नहीं कहा, उनके शरीर में प्रेतवत प्रवेश करके काल (क्षर पुरूष) ने कहा था। (यह तीसरा प्रमाण हुआ।)

पेश है गीता अध्याय 11 श्लोक 47 की फोटोकॉपी :-

मया, प्रसन्नेन, तव, अर्जुन, इदम्, रूपम्, परम्, दर्शितम्,
आत्मयोगात्, तेजोमयम्, विश्वम्, अनन्तम्, आद्यम्,
यत्, मे, त्वदन्येन, न, दृष्टपूर्वम्॥ ४७॥

इस प्रकार अर्जुनकी प्रार्थनाको सुनकर श्रीभगवान् बोले—

अर्जुन	= हे अर्जुन!	**अनन्तम्**	= सीमारहित
प्रसन्नेन	= अनुग्रहपूर्वक	**विश्वम्**	= विराट्
मया	= मैंने	**रूपम्**	= रूप
आत्मयोगात्	= अपनी योग-शक्तिके प्रभावसे	**तव**	= तुझको
		दर्शितम्	= दिखलाया है,
इदम्	= यह	**यत्**	= जिसे
मे	= मेरा		
परम्	= परम	**त्वदन्येन**	= तेरे अतिरिक्त दूसरे किसीने
तेजोमयम्	= तेजोमय		
आद्यम्	= सबका आदि (और)	**न दृष्टपूर्वम्**	= पहले नहीं देखा था।

प्रमाण के लिए पढ़ें गीता अध्याय 7 श्लोक 24-25 की फोटोकॉपी इसी पुस्तक के पृष्ठ 139 पर जिनमें काल ब्रह्म यानि गीता का ज्ञान बताने वाले ने कहा है कि मैं कभी भी किसी के समक्ष प्रकट नहीं होता। अपनी योग माया (भक्ति की शक्ति) से छिपा रहता हूँ।

यथार्थ अनुवाद :- गीता अध्याय 7 श्लोक 24-25 का यथार्थ अनुवाद इस प्रकार है :- काल ब्रह्म ने कहा है कि मुझ अव्यक्त (गुप्त रहने वाले) को ये बुद्धिहीन जन-समुदाय मेरे (अनुतमम्) घटिया (अव्ययम्) अविनाशी यानि अटल नियम को नहीं जानते कि मैं अपने यथार्थ रूप में किसी के सामने प्रत्यक्ष नहीं होता। मुझे (व्यक्तिम्) मनुष्य रूप में यानि कृष्ण मान रहे हैं। (मैं कृष्ण नहीं हूँ।) श्लोक 25 में कहा है कि मैं अपनी योग माया से छिपा रहता हूँ। किसी के सामने प्रत्यक्ष नहीं होता। यह (मूढ़:) अज्ञानी जन समुदाय मुझको इस प्रकार नहीं जानता कि मैं कृष्ण की तरह नहीं जन्मता।

गीता अध्याय 4 श्लोक 9 में गीता बोलने वाले ने कहा है कि मेरे जन्म तथा कर्म अलौकिक (दिव्य) हैं यानि यह जन्मता-मरता तो है। वह अलग परम्परा है। उपरोक्त दोनों श्लोकों से सिद्ध हुआ कि काल गुप्त रहकर कार्य करता है।

❖ प्रमाण नं. 4 :- श्री विष्णु पुराण (गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित) के चौथे अंश के अध्याय 2 श्लोक 19-26 में प्रमाण है कि एक समय देवताओं

और राक्षसों का युद्ध हुआ। देवता पराजित होकर समुद्र के किनारे जाकर छिप गए। फिर भगवान की तपस्या स्तुति करने लगे।

काल का विधान है अर्थात् काल ने प्रतिज्ञा कर रखी है कि मैं अपने वास्तविक काल रूप में कभी किसी को दर्शन नहीं दूंगा। अपनी योग माया से छिपा रहूँगा। (प्रमाण गीता अध्याय 7 श्लोक 24-25 में) इसलिए यह काल (क्षर पुरूष) किसी को विष्णु जी के रूप में दर्शन देता है, किसी को शंकर जी के रूप में, किसी को ब्रह्मा जी के रूप में दर्शन देता है।

देवताओं को श्री विष्णु जी के रूप में दर्शन देकर कहा कि मैंने जो आप की समस्या है, वह जान ली है। आप पुरंज्य राजा को युद्ध के लिए तैयार कर लो। मैं उस राजा श्रेष्ठ के शरीर में प्रविष्ट होकर राक्षसों का नाश कर दूंगा, ऐसा ही किया गया।

पेश है श्री विष्णु पुराण के चौथे अंश के अध्याय 2 से संबंधित प्रकरण की फोटोकॉपी :-

१६८ * श्रीविष्णुपुराण * [अ० २

दिया॥ १८॥ पिताके मरनेके अनन्तर उसने इस पृथिवीका धर्मानुसार शासन किया॥ १९॥ उस शशादके पुरंजय नामक पुत्र हुआ ॥ २०॥

पुरंजयका भी यह एक दूसरा नाम पड़ा— ॥ २१॥ पूर्वकालमें त्रेतायुगमें एक बार अति भीषण देवासुरसंग्राम हुआ॥ २२॥ उसमें महाबलवान् दैत्यगणसे पराजित हुए देवताओंने भगवान् विष्णुकी आराधना की॥ २३॥ तब आदि-अन्त-शून्य, अशेष जगत्प्रतिपालक, श्रीनारायणने देवताओंसे प्रसन्न होकर कहा— ॥ २४॥ "आपलोगोंका जो कुछ अभीष्ट है वह मैंने जान लिया है। उसके विषयमें यह बात सुनिये— ॥ २५॥ राजर्षि शशादका जो पुरंजय नामक पुत्र है उस क्षत्रियश्रेष्ठके शरीरमें मैं अंशमात्रसे स्वयं अवतीर्ण होकर उन सम्पूर्ण दैत्योंका नाश करूँगा। अतः तुमलोग पुरंजयको दैत्योंके वधके लिये तैयार करो"॥ २६॥

अतः उसका नाम ककुत्स्थ पड़ा॥ ३२॥ ककुत्स्थके अनेना नामक पुत्र हुआ॥ ३३॥ अनेनाके पृथु, पृथुके विष्टराश्व, उनके चान्द्र युवनाश्व तथा उस चान्द्र युवनाश्वके शावस्त नामक पुत्र हुआ जिसने शावस्ती पुरी बसायी थी॥ ३४—३७॥ शावस्तके बृहदश्व तथा बृहदश्वके कुवलयाश्वका जन्म हुआ, जिसने वैष्णवतेजसे पूर्णता लाभ कर अपने इक्कीस सहस्र पुत्रोंके साथ मिलकर महर्षि उदकके अपकारी धुन्धु नामक दैत्यको मारा था; अतः उनका नाम धुन्धुमार हुआ॥ ३८—४०॥ उनके सभी पुत्र धुन्धुके मुखसे निकले हुए निःश्वासाग्निसे जलकर मर गये॥ ४१॥ उनमेंसे केवल दृढाश्व, चन्द्राश्व और कपिलाश्व—ये तीन ही बचे थे॥ ४२॥

दृढाश्वसे हर्यश्व, हर्यश्वसे निकुम्भ, निकुम्भसे अमिताश्व, अमिताश्वसे कृशाश्व, कृशाश्वसे प्रसेनजित् और प्रसेनजित्से युवनाश्वका जन्म हुआ॥ ४३—

इस फोटोकॉपी में स्पष्ट लिखा है कि गीता ज्ञान देने वाला काल ब्रह्म अन्य के शरीर में प्रवेश करके कार्य करता है। इसी प्रकार श्री कृष्ण जी में प्रवेश करके गीता का ज्ञान कहा है।

❖ प्रमाण नं. 5 :- श्री विष्णु पुराण के चौथे अंश के अध्याय 3 श्लोक 4-6 में प्रमाण है कि एक समय नागवंशियों तथा गंधर्वों का युद्ध हुआ। गंधर्वों ने

नागों के सर्व बहुमूल्य हीरे, लाल व खजाने लूट लिए, उनके राज्य पर भी कब्जा कर लिया। नागओं ने भगवान की स्तुति की, वही ''काल'' भगवान विष्णु रूप धारण करके प्रकट हुआ। कहा कि आप पुरूकुत्स राजा को गंधर्वों के साथ युद्ध के लिए तैयार कर लें। मैं राजा पुरूकुत्स के शरीर में प्रवेश करके दुष्ट गंधर्वों का नाश कर दूँगा, ऐसा ही हुआ।

पेश है श्री विष्णु पुराण के चौथे अंश के अध्याय 3 से संबंधित प्रकरण की फोटोकॉपी :-

अ० ३] * चौथा अंश * १७३

तीसरा अध्याय

मान्धाताकी सन्तति, त्रिशंकुका स्वर्गारोहण तथा सगरकी उत्पत्ति और विजय

अब हम मान्धाताके पुत्रोंकी सन्तानका वर्णन करते हैं॥ १॥ मान्धाताके पुत्र अम्बरीषके युवनाश्व नामक पुत्र हुआ॥ २॥ उससे हारीत हुआ जिससे अंगिरा-गोत्रीय हारीतगण हुए॥ ३॥ पूर्वकालमें रसातलमें मौनेय नामक छः करोड़ गन्धर्व रहते थे। उन्होंने समस्त नागकुलोंके प्रधान-प्रधान रत्न और अधिकार छीन लिये थे॥ ४॥ गन्धर्वोंके पराक्रमसे अपमानित उन नागेश्वरोंद्वारा स्तुति किये जानेपर उसके श्रवण करनेसे जिनकी विकसित कमलसदृश आँखें खुल गयी हैं निद्राके अन्तमें जगे हुए उन जलशायी भगवान् सर्वदेवेश्वरको प्रणाम कर उनसे नागगणने कहा—''भगवन्! इन गन्धर्वोंसे उत्पन्न हुआ हमारा भय किस प्रकार शान्त होगा?''॥ ५॥ तब आदि-अन्तरहित भगवान् पुरुषोत्तमने कहा—'युवनाश्वके पुत्र मान्धाताका जो यह पुरुकुत्स नामक पुत्र है उसमें प्रविष्ट होकर मैं उन सम्पूर्ण दुष्ट गन्धर्वोंका नाश कर दूँगा'॥ ६॥ यह सुनकर भगवान् जलशायीको प्रणाम कर समस्त नागाधिपतिगण नागलोकमें लौट आये और पुरुकुत्सको लानेके लिये [अपनी बहिन एवं पुरुकुत्सकी भार्या] नर्मदाको प्रेरित किया॥ ७॥ तदनन्तर नर्मदा पुरुकुत्सको रसातलमें ले आयी॥ ८॥

रसातलमें पहुँचनेपर पुरुकुत्सने भगवान्के तेजसे अपने शरीरका बल बढ़ जानेसे सम्पूर्ण गन्धर्वोंको मार डाला और फिर अपने नगरमें लौट आया॥ ९-१०॥ उस समय समस्त नागराजोंने

उपरोक्त विष्णु पुराण की दोनों कथाओं से प्रमाणित हुआ कि यह काल भगवान (क्षर पुरूष) इस प्रकार अव्यक्त (गुप्त) रहकर कार्य करता है। इसी प्रकार इसने श्री कृष्ण जी में प्रवेश करके गीता का ज्ञान कहा है।

ध्यान देने योग्य :- गीता ज्ञान बोलने वाले ने गीता अध्याय 4 श्लोक 9 में कहा है कि मेरे जन्म व कर्म अलौकिक हैं। इसके कर्म इस प्रकार अलौकिक हैं। यह गुप्त रहकर सब कर्म करता है, प्रत्यक्ष होकर नहीं करता। प्रमाण के लिए पढ़ें गीता अध्याय 4 श्लोक 9 की फोटोकॉपी इसी पुस्तक के पृष्ठ 140 पर।

❖ प्रमाण नं. 6 :- महाभारत ग्रन्थ में (गीता प्रैस गोरखपुर (U.P) से प्रकाशित में) भाग-2 पृष्ठ 800-802 पर लिखा है कि महाभारत के युद्ध के पश्चात् राजा युधिष्ठर को राजगद्दी पर बैठाकर श्री कृष्ण जी ने द्वारिका जाने की तैयारी

की। तब अर्जुन ने श्री कृष्ण जी से कहा कि आप वह गीता वाला ज्ञान फिर से सुनाओ, मैं उस ज्ञान को भूल गया हूँ।

श्री कृष्ण जी ने कहा कि हे अर्जुन! आप बड़े बुद्धिहीन हो, बड़े श्रद्धाहीन हो। आपने उस अनमोल ज्ञान को क्यों भुला दिया, अब मैं उस ज्ञान को नहीं सुना सकता क्योंकि मैंने उस समय योगयुक्त होकर गीता का ज्ञान सुनाया था। जब वक्ता को ज्ञान नहीं तो श्रोता को कैसे याद रह सकता है। इससे सिद्ध है कि श्री कृष्ण ने गीता का ज्ञान नहीं कहा।

☛ प्रमाण के लिए पढ़ें संक्षिप्त महाभारत ग्रन्थ (भाग-2) के पृष्ठ 800-802 की फोटोकॉपी इसी पुस्तक के पृष्ठ 124 पर।

❖ विचार करें :- युद्ध के समय योगयुक्त हुआ जा सकता है तो शान्त वातावरण में योगयुक्त होने में क्या समस्या हो सकती है? वास्तव में यह ज्ञान काल ने श्री कृष्ण में प्रवेश करके बोला था।

❖ श्री कृष्ण जी को स्वयं तो वह गीता ज्ञान याद नहीं, यदि वे वक्ता थे तो वक्ता को तो सर्व ज्ञान याद होना चाहिए। श्रोता को तो प्रथम बार में 40 प्रतिशत ज्ञान याद रहता है।

इससे सिद्ध है कि गीता का ज्ञान श्री कृष्ण जी के शरीर में प्रवेश होकर काल (क्षर पुरूष) ने बोला था। उपरोक्त प्रमाणों से स्पष्ट हुआ कि श्रीमद् भगवत गीता का ज्ञान श्री कृष्ण ने नहीं कहा। उनको तो पता ही नहीं कि क्या कहा था, श्री कृष्ण जी के शरीर में प्रवेश करके काल पुरूष (क्षर पुरूष) यानि ज्योति निरंजन ने गीता का ज्ञान बोला था।

''काल ब्रह्म का अन्य षड़यंत्र''

प्रश्न 25 :- हमने अपने गुरूओं द्वारा सुना है कि श्री विष्णु जी सर्व का सृष्टि कर्ता है, कुल का मालिक है। यही विष्णु रूप धारण करके पालन करता है। ब्रह्मा रूप बनाकर उत्पत्ति करता है तथा शिव रूप धारण करके संहार करता है। क्या यह भी ठीक नहीं है?

उत्तर :- हिन्दू धर्मगुरूओं ने पवित्र शास्त्रों को ठीक से समझा नहीं। इसलिए यह भ्रमित भाषा बोलते हैं जो गलत है।

यथार्थ ज्ञान इस प्रकार है :- इसी पुस्तक के पृष्ठ 359 पर अध्याय नं. बारहवां सृष्टि रचना अध्याय है। उसमें लिखा है कि जिस लोक में हम रह रहे हैं, यह काल ब्रह्म (क्षर पुरूष) का देश है। इसको ज्योति निरंजन भी कहा है। इसके तीन पुत्र हैं :-

1. श्री ब्रह्मा जी जो रजोगुण युक्त हैं।
2. श्री विष्णु जी जो सतोगुण युक्त हैं।
3. श्री शिव शंकर जी जो तमोगुण युक्त हैं।

काल ब्रह्म की गलती के कारण परम अक्षर ब्रह्म यानि सत्यपुरूष ने इसको एक लाख मानव शरीरधारी जीवों को खाने का श्राप दे रखा है। जिस कारण से इसने अपने तीनों पुत्रों को उत्पत्ति, स्थिति तथा संहार के कृत (काम) दे रखे हैं। इसने प्रतिज्ञा कर रखी है कि मैं कभी किसी को अपने वास्तविक रूप में दर्शन नहीं दूँगा। यह मेरा अविनाशी विधान है। यह कभी अपने पुत्र विष्णु का रूप धारण कर लेता है। कभी अपने पुत्र ब्रह्मा का रूप धारण कर लेता है। कभी अपने पुत्र शिव का रूप धारण कर लेता है। ऋषियों ने ओम् नाम का जाप किया। हठ योग करके तप किया, समाधि लगाई। इसने ऋषियों को समाधि दशा में किसी को श्री ब्रह्मा जी के रूप में दर्शन दिए। उस ऋषि ने मान लिया कि ब्रह्मा जी ही परमात्मा है। किसी ऋषि को समाधि में श्री विष्णु जी के रूप में दर्शन दिए। उसने मान लिया कि यह विष्णु देवता ही परमात्मा है। किसी ऋषि साधक को समाधि दशा में श्री शिव जी के रूप में दर्शन दिए। उसने मान लिया कि श्री शिव जी ही परमेश्वर हैं। जिस ऋषि को ब्रह्मा जी के रूप में दर्शन हुए। उसने रजगुण ब्रह्मा जी देवता के पास जाकर कहा कि आप अपने आपको छुपाए हुए हो, आप पूर्ण परमात्मा परमेश्वर हो। मुझे समाधि में आपके दर्शन हुए हैं।

इसी प्रकार अन्य कई ऋषियों ने भी जिनको ब्रह्मा जी के रूप में काल ब्रह्म दिखा था, ब्रह्मा जी को बताया। आपके दर्शन समाधि में हुए हैं। आप अपने को छुपाए हुए हो, आप पूर्ण परमात्मा हो।

इसी प्रकार कई अनेकों ऋषियों से ऐसी प्रशंसा सुनकर श्री ब्रह्मा जी को भी भ्रम हो गया और अपने आपको सृष्टि कर्ता, पूर्ण परमात्मा मान बैठा।

कुछ ऋषियों को श्री विष्णु जी देवता के रूप में दर्शन दिए। उन्होंने श्री विष्णु जी को बताया कि आप अपने को छुपाए हुए हो। हमारी समाधि दशा में आपके दर्शन हुए हैं। आप पूर्ण परमात्मा हो, परमेश्वर हो, सृष्टि कर्ता हो। इसी प्रकार कुछ ऋषियों को श्री शिव जी के रूप में समाधि दशा में दर्शन हुए। उन्होंने यही बात श्री शिव जी से कही।

उन्हीं ऋषियों ने फिर समाधि अभ्यास किया तो एक ही ऋषि को काल ब्रह्म ने कभी विष्णु के रूप में दर्शन दिए, कभी शिव के रूप में, कभी ब्रह्मा जी के रूप में। इस प्रकार उन ऋषियों में से जो श्री विष्णु जी के रूप में दर्शन प्रथम बार हुए थे, वह श्री विष्णु जी का परम भक्त बन गया। फिर उसी ऋषि को श्री ब्रह्मा जी तथा श्री शिव जी के रूप में भी समाधि दशा में दर्शन काल ब्रह्म ने दिए।

जिस कारण से उस ऋषि ने अपना अनुभव बताया कि श्री विष्णु जी पूर्ण परमात्मा हैं। अजर-अमर हैं। ये ही श्री विष्णु रूप में पालन करते हैं। श्री ब्रह्मा रूप में उत्पत्ति करते हैं तथा श्री शिव रूप में संहार करते हैं।

इसी प्रकार जिस ऋषि को सर्वप्रथम श्री ब्रह्मा जी के रूप में दर्शन हुए, वह श्री ब्रह्मा जी का परम भक्त बन गया। उसी को अन्य दो रूपों में भी काल ब्रह्म (क्षर पुरूष) ने समाधि में दर्शन दिए। उसने भी उपरोक्त उपमा श्री ब्रह्मा जी की बताई कि श्री ब्रह्मा जी ही पूर्ण परमात्मा हैं। यही अन्य रूप विष्णु व शिव का धारण करता है। यही उत्पत्ति, पालन व संहार करता है। तीनों रूपों में यही है।

इसी प्रकार जिन ऋषियों के साथ घटना हुई जिनको प्रथम बार श्री शिव जी के रूप में दर्शन हुए थे। वे श्री शिव जी के परम भक्त बन गए। फिर उनको भी ब्रह्मा जी तथा विष्णु जी रूप दर्शन दिए। उन्होंने शिव जी के विषय में भी यही बताया कि श्री शिव जी पूर्ण ब्रह्म (परमात्मा) है। ये ही तीनों रूपों को धारण करके उत्पत्ति, पालन तथा संहार करते हैं। इस प्रकार यह भ्रम सबको हो गया।

प्रमाण :- श्री शिव महापुराण में विद्येश्वर संहिता खंड के अध्याय 5-10 में लिखा है कि :- एक समय श्री ब्रह्मा जी श्री विष्णु जी के निवास पर गए। उस समय वे अपने प्रशंसकों से घिरे थे। लक्ष्मी जी उनके पास थी। श्री विष्णु जी ने श्री ब्रह्मा जी का आव-भगत (सम्मान) नहीं किया, न ही यह कहा कि आओ बैठो। जिस कारण से श्री ब्रह्मा जी क्रोध में भरकर बोले कि तेरे को अभिमान हो गया है। देख! तेरा उत्पत्ति कर्ता आया है। तूने अपने जन्म दाता का अपमान किया है। तेरा अभिमान ठीक करना होगा। इसके उत्तर में श्री विष्णु जी अंदर से क्रोध में भरकर ऊपर से शांत भाव से बोले कि मैं तेरा जनक हूँ। तेरा जन्म मेरी नाभि से हुआ है। इससे मैं तेरा पिता (जनक) हूँ। अपने पिता को कैसे बोल रहा है? तेरा अभिमान ठीक करता हूँ। ऐसा कहकर दोनों ने अपने-अपने शस्त्र उठा लिए और युद्ध करने लगे। उसी समय इनका पिता काल ब्रह्म (ज्योति निरंजन) अपने पुत्र तमगुण शिव का रूप धारण करके तथा अपनी पत्नी प्रकृति देवी (दुर्गा) को पार्बती रूप में साथ लेकर वहाँ आया। पहले उनके मध्य में एक विशाल तेजोमय स्तंभ खड़ा कर दिया। दोनों ने युद्ध बंद कर दिया।

फिर यह काल ब्रह्म बोला कि पुत्रो ब्रह्मा व विष्णु! तुम ईश यानि प्रभु (भगवान) नहीं हो। तुम्हारा यह भ्रम निवारण करने के लिए मैं रणस्थल पर आया हूँ। पुत्रो! तुम दोनों को तुम्हारे तप के प्रतिफल में मैंने दो कृत (काम) दिए हैं। ब्रह्मा को उत्पत्ति तथा विष्णु को स्थिति का। इसी प्रकार श्री शिव को मैंने संहार का कृत दिया है।

{पाठकजन इस उपरोक्त प्रकरण की फोटोकॉपी कृपया पढ़ें इसी पुस्तक के पृष्ठ 150 पर।}

निष्कर्ष :- काल ब्रह्म (ज्योति निरंजन) ही तीन रूप बनाकर सबको भ्रमित

करता है। वास्तव में श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी भिन्न-भिन्न देवता हैं। इनका एक-एक काम है :- उत्पत्ति, स्थिति तथा संहार। काल ब्रह्म ने अपना आहार तैयार करवाने के लिए इनको एक-एक कृत दे रखा है।

प्रश्न 26 :- कोई प्रमाण शास्त्रों में दिखाओ कि काल ब्रह्म ने गुप्त रहने की प्रतिज्ञा की है।

उत्तर :- गीता अध्याय 7 श्लोक 24-25 में प्रमाण है।

प्रमाण (गीता अध्याय 7 श्लोक 24) :- बुद्धिहीन पुरूष मेरे (अनुत्तमम्) अनुत्तम यानि घटिया (अव्ययम्) अटल-अविनाशी (परम् भावम्) विधान को न जानते हुए, मुझ अव्यक्त यानि गुप्त रहने वाले को (व्यक्तिम्) मनुष्यों की भांति व्यक्ति रूप में यानि कृष्ण मानते हैं।

गीता अध्याय 7 श्लोक 25 :- मैं अपनी योगमाया से छिपा हुआ हूँ। सबके सामने प्रत्यक्ष नहीं होता। इसलिए यह अज्ञानी जन-समुदाय मुझको तथा अविनाशी परमात्मा यानि परम अक्षर ब्रह्म को नहीं जानते।

विश्लेषण :- श्री कृष्ण जी तो सबके सामने प्रत्यक्ष थे। इसलिए वे यह नहीं कह सकते कि मैं किसी के सामने प्रत्यक्ष प्रकट नहीं होता।

इसी काल ब्रह्म ने गीता अध्याय 11 श्लोक 32 में कहा है कि मैं लोकों का नाश करने वाला हूँ। इस समय इन लोकों को नष्ट करने के लिए प्रवृत हुआ हूँ यानि अब प्रकट हुआ हूँ। यदि तू युद्ध नहीं करेगा तो भी मैं इन सबको नष्ट कर दूँगा। इससे स्पष्ट हो जाता है कि गीता बोलने वाला काल है जो श्री कृष्ण जी के शरीर में प्रवेश था और जब अर्जुन सीधे-सीधे युद्ध के लिए तैयार नहीं हो रहा था तो उसे डराया गया।

कृपया विचार करें :- श्री कृष्ण जी तो महाभारत के युद्ध के पक्ष में भी नहीं थे। जब बार-बार समझाने से भी दोनों पक्ष युद्ध न करने को नहीं माने तो श्री कृष्ण जी ने तो कह दिया था कि एक पक्ष की ओर मेरी सेना होगी। दूसरे पक्ष की ओर मैं अकेला रहूँगा। मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि मैं हथियार भी नहीं उठाऊँगा।

युद्ध के मैदान में जब अर्जुन में दया भाव उत्पन्न हुआ और युद्ध न करने का अपना स्पष्ट निर्णय श्री कृष्ण जी से कह दिया। काल ब्रह्म को पता था कि श्री कृष्ण युद्ध के पक्ष में नहीं है। यह तो कहेगा कि मैं तो पहले ही कह रहा था, युद्ध विनाश का कारण बनेगा। ठीक है, अब भी समझ गया तो युद्ध न करने का ऐलान कर देता हूँ। उसी समय काल ब्रह्म श्री कृष्ण जी के शरीर में प्रेतवत् प्रवेश कर गया और महाभारत का युद्ध डरा-धमकाकर करवाकर छोड़ा। श्री कृष्ण जी ने अपने जीवन काल में पहले या बाद में कभी नहीं कहा कि मैं काल हूँ। वे तो दया के सागर थे। शांति के देवता थे।

पेश है उपरोक्त गीता के श्लोकों की फोटोकॉपी जिसके अनुवादक जयदयाल गोयंदका हैं तथा प्रकाशक व मुद्रक गीता प्रेस गोरखपुर (उत्तर प्रदेश) है।

(गीता अध्याय 7 श्लोक 24 की फोटोकॉपी)

अव्यक्तम्, व्यक्तिम्, आपन्नम्, मन्यन्ते, माम्, अबुद्धयः,
परम्, भावम्, अजानन्तः, मम, अव्ययम्, अनुत्तमम्॥ २४॥

ऐसा होनेपर भी सब मनुष्य मेरा भजन नहीं करते, इसका कारण

अबुद्धयः = बुद्धिहीन पुरुष
मम = मेरे
अनुत्तमम् = अनुत्तम
अव्ययम् = अविनाशी
परम् = परम
भावम् = भावको
अजानन्तः = न जानते हुए
अव्यक्तम् = मन-इन्द्रियोंसे परे
माम् = मुझ सच्चिदानन्दघन परमात्माको (मनुष्यकी भाँति जन्मकर)
व्यक्तिम् = व्यक्ति-भावको
आपन्नम् = प्राप्त हुआ
मन्यन्ते = मानते हैं।

(गीता अध्याय 7 श्लोक 25 की फोटोकॉपी)

न, अहम्, प्रकाशः, सर्वस्य, योगमायासमावृतः,
मूढः, अयम्, न, अभिजानाति, लोकः, माम्, अजम्, अव्ययम्॥ २५॥

तथा—

योगमाया-समावृतः = अपनी योगमायासे छिपा हुआ
अहम् = मैं
सर्वस्य = सबके
प्रकाशः = प्रत्यक्ष
न = नहीं होता, (इसलिये)
अयम् = यह
मूढः = अज्ञानी
लोकः = जनसमुदाय
माम् = मुझ
अजम् = जन्मरहित
अव्ययम् = अविनाशी परमेश्वरको
न = नहीं
अभिजानाति = जानता अर्थात् मुझको जन्मने-मरनेवाला समझता है।

(गीता अध्याय 11 श्लोक 32 की फोटोकॉपी)

कालः, अस्मि, लोकक्षयकृत्, प्रवृद्धः, लोकान्, समाहर्तुम्, इह, प्रवृत्तः, ऋते, अपि, त्वाम्, न, भविष्यन्ति, सर्वे, ये, अवस्थिताः, प्रत्यनीकेषु, योधाः ॥ ३२ ॥

इस प्रकार अर्जुनके पूछनेपर श्रीभगवान् बोले, हे अर्जुन! मैं—

लोकक्षयकृत् = लोकोंका नाश करनेवाला
प्रवृद्धः = बढ़ा हुआ
कालः = महाकाल
अस्मि = हूँ।
इह = इस समय
लोकान् = इन लोकोंको
समाहर्तुम् = नष्ट करनेके लिये
प्रवृत्तः = प्रवृत्त हुआ हूँ। (इसलिये)
ये = जो
प्रत्यनीकेषु = प्रतिपक्षियोंकी सेनामें
अवस्थिताः = स्थित
योधाः = योद्धा लोग हैं,
(ते) = वे
सर्वे = सब
त्वाम् = तेरे
ऋते = बिना
अपि = भी
न = नहीं
भविष्यन्ति = रहेंगे अर्थात् तेरे युद्ध न करनेसे भी इन सबका नाश हो जायगा।

(गीता अध्याय 4 श्लोक 9 की फोटोकॉपी)

जन्म, कर्म, च, मे, दिव्यम्, एवम्, यः, वेत्ति, तत्त्वतः, त्यक्त्वा, देहम्, पुनः, जन्म, न, एति, माम्, एति, सः, अर्जुन ॥ ९ ॥

इसलिये—

अर्जुन = हे अर्जुन!
मे = मेरे
जन्म = जन्म
च = और
कर्म = कर्म
दिव्यम् = दिव्य अर्थात् निर्मल और अलौकिक हैं—
एवम् = इस प्रकार
यः = जो मनुष्य
तत्त्वतः = तत्त्वसे*
वेत्ति = जान लेता है,
सः = वह
देहम् = शरीरको
त्यक्त्वा = त्यागकर
पुनः = फिर
जन्म = जन्मको
न, एति = प्राप्त नहीं होता, (किंतु)
माम् = मुझे (ही)
एति = प्राप्त होता है।

प्रश्न 27 :- काल ब्रह्म ऐसा क्यों करता है?

उत्तर :- काल ब्रह्म ने गुप्त रहने की प्रतिज्ञा इसलिए की थी कि यदि मैं सबके सामने रहूँगा और प्रतिदिन एक लाख मानव (स्त्री-पुरूष) को खाऊँगा तो मुझे कोई परमात्मा नहीं मानेगा। यह कारण है इसका गुप्त रहने की प्रतिज्ञा करने का। यह प्रतिज्ञा इसके लिए इसके गले की फाँस बन गई। अपनी प्रतिज्ञा वश होकर यह ऐसा करता है।

जब ऋषिजनों ने हठयोग से ध्यान लगाया तो इसने ब्रह्मा जी, विष्णु जी तथा शिव जी के रूप में उनको दर्शन दिए। जिस कारण से रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी तथा तमगुण शिव जी की पूजा प्रारंभ हो गई। इसकी पूजा नहीं की। जिस कारण से यह फँस गया।

इसलिए श्रीमद्भगवत गीता अध्याय 7 श्लोक 12-15 में इसने चिड़कर (खिजकर) रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी तथा तमगुण शिव जी की पूजा करने वालों को गाली देकर कहा है कि जो इन तीनों देवताओं की भक्ति करते हैं, वे आसुर (राक्षस) स्वभाव वाले हैं। मनुष्यों में नीच हैं। दूषित कर्म करने वाले यानि दुष्ट कर्म करने वाले हैं, मूर्ख हैं। वे मेरी पूजा नहीं करते। फिर गीता अध्याय 7 श्लोक 16-18 में अपनी पूजा करने वालों के विषय में कहा है।

प्रमाण के लिए पढ़ें उपरोक्त गीता के श्लोकों की फोटोकॉपी :-

(गीता अध्याय 7 श्लोक 16 की फोटोकॉपी)

चतुर्विधाः, भजन्ते, माम्, जनाः, सुकृतिनः, अर्जुन,
आर्तः, जिज्ञासुः, अर्थार्थी, ज्ञानी, च, भरतर्षभ॥ १६ ॥

और—

भरतर्षभ अर्जुन	= हे भरतवंशियोंमें श्रेष्ठ अर्जुन!	**च**	= और
		ज्ञानी	= ज्ञानी—(ऐसे)
सुकृतिनः	= उत्तम कर्म करनेवाले	**चतुर्विधाः**	= चार प्रकारके
अर्थार्थी	= अर्थार्थी,[१]	**जनाः**	= भक्तजन
आर्तः	= आर्त,[२]	**माम्**	= मुझको
जिज्ञासुः	= जिज्ञासु[३]	**भजन्ते**	= भजते हैं।

(गीता अध्याय 7 श्लोक 17 की फोटोकॉपी)

तेषाम्, ज्ञानी, नित्ययुक्तः, एकभक्तिः, विशिष्यते,
प्रियः, हि, ज्ञानिनः, अत्यर्थम्, अहम्, सः, च, मम, प्रियः ॥ १७ ॥

तेषाम्	= उनमें		**ज्ञानिनः**	= ज्ञानीको
नित्ययुक्तः	= नित्य मुझमें एकीभावसे स्थित		**अहम्**	= मैं
एकभक्तिः	= अनन्य प्रेमभक्तिवाला		**अत्यर्थम्**	= अत्यन्त
ज्ञानी	= ज्ञानी भक्त		**प्रियः**	= प्रिय हूँ
विशिष्यते	= अति उत्तम है;		**च**	= और
हि	= क्योंकि (मुझको तत्त्वसे जाननेवाले)		**सः**	= वह ज्ञानी
			मम	= मुझे (अत्यन्त)
			प्रियः	= प्रिय है।

(गीता अध्याय 7 श्लोक 18 की फोटोकॉपी)

उदाराः, सर्वे, एव, एते, ज्ञानी, तु, आत्मा, एव, मे, मतम्,
आस्थितः, सः, हि, युक्तात्मा, माम्, एव, अनुत्तमाम्, गतिम् ॥ १८ ॥

यद्यपि—

एते	= ये		**सः**	= वह
सर्वे, एव	= सभी		**युक्तात्मा**	= मद्गत मनबुद्धिवाला (ज्ञानी भक्त)
उदाराः	= उदार हैं,		**अनुत्तमाम्**	= अति उत्तम
तु	= परंतु		**गतिम्**	= गतिस्वरूप
ज्ञानी	= ज्ञानी (तो साक्षात्)		**माम्**	= मुझमें
आत्मा	= मेरा स्वरूप		**एव**	= ही
एव	= ही है—(ऐसा)		**आस्थितः**	= अच्छी प्रकार स्थित है।
मे	= मेरा			
मतम्	= मत है;			
हि	= क्योंकि			

''पांचवां अध्याय''

''श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव के माता-पिता की जानकारी''

प्रश्न 28 :- कोई प्रमाण दिखाओ कि श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी के माता-पिता हैं?

उत्तर :- श्री देवी महापुराण (गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित) के तीसरे स्कन्ध के अध्याय 4-5 में श्री विष्णु जी ने अपनी माता दुर्गा की स्तुति करते हुए कहा है कि हे मातः! आप शुद्ध स्वरूपा हो, सारा संसार आप से ही उद्भाषित हो रहा है, हम आपकी कृपा से विद्यमान हैं, मैं, ब्रह्मा और शंकर तो जन्मते-मरते हैं, हमारा तो अविर्भाव (जन्म) तथा तिरोभाव (मृत्यु) हुआ करता है, हम अविनाशी नहीं हैं। तुम ही जगत जननी और सनातनी देवी हो और प्रकृति देवी हो। शंकर भगवान बोले, हे माता! विष्णु के बाद उत्पन्न होने वाला ब्रह्मा जब आपका पुत्र है तो क्या मैं तमोगुणी लीला करने वाला शंकर तुम्हारी सन्तान नहीं हुआ अर्थात् मुझे भी उत्पन्न करने वाली तुम ही हो। इस देवी महापुराण के उल्लेख से सिद्ध हुआ कि श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शंकर जी को जन्म देने वाली माता श्री दुर्गा देवी (अष्टंगी देवी) है और तीनों नाशवान हैं।

पेश है श्रीमद् देवीभागवत (देवी पुराण) के तीसरे स्कन्ध के अध्याय 4-5 से संबंधित प्रकरण की फोटोकॉपी :-

१३८ * संक्षिप्त देवीभागवत * [तीसरा

सूर्य जगत्‌को प्रकाशित करता है। तुम शुद्धस्वरूपा हो, यह सारा संसार तुम्हींसे उद्भासित हो रहा है। मैं, ब्रह्मा और शंकर—हम सभी तुम्हारी कृपासे ही विद्यमान हैं। हमारा आविर्भाव और तिरोभाव हुआ करता है। केवल तुम्हीं नित्य हो, जगज्जननी हो, प्रकृति और सनातनी देवी हो।

भगवान् शंकर बोले—'देवी! यदि महाभाग विष्णु तुम्हींसे प्रकट हुए हैं तो उनके बाद उत्पन्न होनेवाले ब्रह्मा भी तुम्हारे ही बालक हुए। फिर मैं तमोगुणी लीला करनेवाला शंकर क्या तुम्हारी संतान नहीं हुआ—अर्थात् मुझे भी उत्पन्न करनेवाली तुम्हीं हो। शिवे! सम्पूर्ण संसारकी सृष्टि करनेमें तुम बड़ी चतुर हो। अपनी इच्छाके अनुसार क्रीड़ा करती और शान्त भी हो जाती हो। इस संसारकी सृष्टि, स्थिति, और संहारमें तुम्हारे गुण सदा समर्थ हैं। उन्हीं तीनों गुणोंसे उत्पन्न हम ब्रह्मा, विष्णु एवं शंकर नियमानुसार कार्यमें तत्पर रहते हैं।

श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी का पिता कौन है?

श्री ब्रह्मा (रजगुण), श्री विष्णु (सतगुण) तथा श्री शिव जी (तमगुण) की माता देवी दुर्गा है तथा पिता काल ज्योति निरंजन है।

प्रमाण :- श्री शिव महापुराण (गीता प्रेस गोरखपुर से प्रकाशित) में इनके पिता का ज्ञान है, श्री शिव महापुराण के रूद्रसंहिता खण्ड में अध्याय 5 से 9 तक निम्न प्रकरण है :-

अपने पुत्र नारद जी के प्रश्न का उत्तर देते हुए श्री ब्रह्मा जी ने कहा कि हे पुत्र! आपने सृष्टि के उत्पत्तिकर्ता के विषय में जो प्रश्न किया है, उसका उत्तर सुन।

प्रारम्भ में केवल एक "सद्ब्रह्म" ही शेष था। सब स्थानों पर प्रलय था। उस निराकार परमात्मा ने अपना स्वरूप शिव जैसा बनाया। उसको "सदाशिव" कहा जाता है, उसने अपने शरीर से एक स्त्री निकाली, वह स्त्री दुर्गा, जगदम्बिका, प्रकृति देवी तथा त्रिदेव (ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव) की जननी कहलाई जिसकी आठ भुजाएं हैं, इसी को शिवा भी कहा है।

- **"श्री विष्णु जी की उत्पत्ति":- सदाशिव और शिवा (दुर्गा) ने पति-पत्नी रूप में रहकर एक पुत्र की उत्पत्ति की, उसका नाम विष्णु रखा।**
- **"श्री ब्रह्मा जी की उत्पत्ति" :- श्री ब्रह्मा जी ने बताया कि जिस प्रकार विष्णु जी की उत्पत्ति शिव तथा शिवा के संयोग (भोग-विलास) से हुई है, उसी प्रकार शिव और शिवा ने मेरी (ब्रह्मा की) भी उत्पत्ति की।**

नोट :– यहाँ पर शिव को काल ब्रह्म जानें, शिवा को दुर्गा जानें, इस रूद्र संहिता खण्ड में शंकर जी की उत्पत्ति का प्रकरण नहीं है, यह अनुवादकर्ता की गलती है। वैसे देवी पुराण में शंकर जी ने स्वयं स्वीकारा है कि मेरा जन्म दुर्गा (प्रकृति) से हुआ है।

पेश है संक्षिप्त शिवपुराण की रूद्र संहिता खंड से संबंधित प्रकरण की फोटोकॉपी :-

११८ * संक्षिप्त शिवपुराण *

अपने पुत्र नारदकी यह बात सुनकर लोक-पितामह ब्रह्मा वहाँ इस प्रकार बोले— (अध्याय ५)

महाप्रलयकालमें केवल सद्ब्रह्मकी सत्ताका प्रतिपादन, उस निर्गुण-निराकार ब्रह्मसे ईश्वरमूर्ति (सदाशिव)-का प्राकट्य, सदाशिवद्वारा स्वरूपभूता शक्ति (अम्बिका)-का प्रकटीकरण, उन दोनोंके द्वारा उत्तम क्षेत्र (काशी या आनन्दवन)-का प्रादुर्भाव, शिवके वामांगसे परम पुरुष (विष्णु)-का आविर्भाव तथा उनके सकाशसे प्राकृत तत्त्वोंकी क्रमशः उत्पत्तिका वर्णन

ब्रह्माजीने कहा—**ब्रह्मन्! देवशिरोमणे! तुम सदा समस्त जगत्‌के उपकारमें ही लगे रहते हो। तुमने लोगोंके हितकी कामनासे यह बहुत उत्तम बात पूछी है। जिसके सुननेसे सम्पूर्ण लोकोंके समस्त पापोंका क्षय हो जाता है, उस अनामय शिवतत्त्वका मैं तुमसे वर्णन करता हूँ। शिवतत्त्वका स्वरूप बड़ा ही उत्कृष्ट और अद्भुत है। जिस समय समस्त चराचर जगत् नष्ट हो गया था, सर्वत्र केवल अन्धकार-ही-अन्धकार था। न सूर्य दिखायी देते थे न चन्द्रमा। अन्यान्य ग्रहों और नक्षत्रोंका भी पता नहीं था। न दिन होता था न रात; अग्नि, पृथ्वी, वायु और जलकी भी सत्ता नहीं थी। प्रधान तत्त्व (अव्याकृत प्रकृति)-से रहित सूना आकाशमात्र शेष था, दूसरे किसी तेजकी उपलब्धि नहीं होती थी। अदृष्ट आदिका भी अस्तित्व नहीं था। शब्द और स्पर्श भी साथ छोड़ चुके थे। गन्ध और रूपकी भी अभिव्यक्ति नहीं होती थी। रसका भी अभाव हो गया था। दिशाओंका भी भान नहीं होता था। इस प्रकार सब ओर निरन्तर सूचीभेद्य घोर अन्धकार फैला हुआ था। उस समय 'तत्सद्ब्रह्म' इस श्रुतिमें जो 'सत्' सुना जाता है, एकमात्र वही शेष था। जब 'यह', 'वह', 'ऐसा', 'जो' इत्यादि रूपसे निर्दिष्ट होनेवाला भावाभावात्मक जगत् नहीं था, उस समय एकमात्र वह 'सत्' ही शेष था, जिसे योगीजन अपने हृदयाकाशके**

भीतर निरन्तर देखते हैं। वह सत्तत्त्व मनका विषय नहीं है। वाणीकी भी वहाँतक कभी

पहुँच नहीं होती। वह नाम तथा रूप-रंगसे भी शून्य है। वह न स्थूल है न कृश, न ह्रस्व है न दीर्घ तथा न लघु है न गुरु। उसमें न कभी वृद्धि होती है न ह्रास। श्रुति भी उसके विषयमें चकितभावसे 'है' इतना ही कहती है, अर्थात् उसकी सत्तामात्रका ही निरूपण कर पाती है, उसका कोई विशेष विवरण देनेमें असमर्थ हो जाती है। वह सत्य, ज्ञानस्वरूप, अनन्त, परमानन्दमय, परम ज्योतिःस्वरूप, अप्रमेय, आधाररहित, निर्विकार, निराकार, निर्गुण, योगिगम्य, सर्वव्यापी, सबका एकमात्र कारण, निर्विकल्प, निरारम्भ, मायाशून्य, उपद्रव-रहित, अद्वितीय, अनादि, अनन्त, संकोच-विकाससे शून्य तथा चिन्मय है।

जिस परब्रह्मके विषयमें ज्ञान और अज्ञानसे पूर्ण उक्तियोंद्वारा इस प्रकार (ऊपर बताये अनुसार) विकल्प किये जाते हैं; उसने कुछ कालके बाद (सृष्टिका समय आनेपर) द्वितीयकी इच्छा प्रकट की—उसके भीतर एकसे अनेक होनेका संकल्प उदित हुआ। तब उस निराकार परमात्माने अपनी लीलाशक्तिसे अपने लिये मूर्ति (आकार-की कल्पना की। वह मूर्ति सम्पूर्ण ऐश्वर्य-गुणोंसे सम्पन्न, सर्वज्ञानमयी, शुभ-स्वरूपा, सर्वव्यापिनी, सर्वरूपा, सर्वदर्शिनी, सर्वकारिणी, सबकी एकमात्र वन्दनीया, सर्वाद्या, सब कुछ देनेवाली और सम्पूर्ण संस्कृतियोंका केन्द्र थी। उस शुद्धरूपिणी ईश्वर-मूर्तिकी कल्पना करके वह अद्वितीय, अनादि, अनन्त, सर्वप्रकाशक, चिन्मय, सर्वव्यापी और अविनाशी परब्रह्म अन्तर्हित हो गया। जो मूर्तिरहित परम ब्रह्म है, उसीकी मूर्ति (चिन्मय आकार) भगवान् सदाशिव हैं। अर्वाचीन और प्राचीन विद्वान् उन्हींको ईश्वर कहते हैं। उस समय एकाकी रहकर स्वेच्छानुसार विहार करनेवाले उन सदाशिवने अपने विग्रहसे स्वयं ही एक स्वरूपभूता शक्तिकी सृष्टि की, जो उनके अपने श्रीअंगसे कभी अलग होनेवाली नहीं थी। उस पराशक्तिको प्रधान, प्रकृति, गुणवती, माया, बुद्धितत्त्वकी जननी तथा विकाररहित बताया गया है। वह शक्ति अम्बिका कही गयी है। उसीको प्रकृति, सर्वेश्वरी, त्रिदेवजननी, नित्या और मूलकारण भी कहते हैं। सदाशिवद्वारा प्रकट की गयी उस शक्तिके आठ भुजाएँ हैं। उस शुभलक्षणा देवीके मुखकी शोभा विचित्र है। वह अकेली ही अपने मुखमण्डलमें सदा एक सहस्र चन्द्रमाओंकी कान्ति धारण करती है। नाना प्रकारके आभूषण उसके श्रीअंगोंकी शोभा बढ़ाते हैं। वह देवी नाना प्रकारकी गतियोंसे सम्पन्न है और अनेक प्रकारके अस्त्र-शस्त्र धारण करती है। उसके खुले हुए नेत्र खिले हुए कमलके समान जान पड़ते हैं। वह अचिन्त्य तेजसे जगमगाती है। वह सबकी योनि है और सदा उद्यमशील रहती है। एकाकिनी होनेपर भी वह माया संयोगवशात् अनेक हो जाती है।

वे जो सदाशिव हैं, उन्हें परमपुरुष, ईश्वर, शिव, शम्भु और महेश्वर कहते हैं। वे अपने मस्तकपर आकाश-गंगाको धारण करते हैं। उनके भालदेशमें चन्द्रमा शोभा पाते हैं। उनके पाँच मुख हैं और प्रत्येक मुखमें तीन-तीन नेत्र हैं। उनका चित्त सदा प्रसन्न रहता है। वे दस भुजाओंसे युक्त और त्रिशूलधारी हैं। उनके श्रीअंगोंकी प्रभा

कर्पूरके समान श्वेत-गौर है। वे अपने सारे अंगोंमें भस्म रमाये रहते हैं। उन कालरूपी ब्रह्मने एक ही समय शक्तिके साथ 'शिवलोक' नामक क्षेत्रका निर्माण किया था। उस उत्तम क्षेत्रको ही काशी कहते हैं। वह परम निर्वाण या मोक्षका स्थान है, जो सबके ऊपर विराजमान है। वे प्रिया-प्रियतमरूप शक्ति और शिव, जो परमानन्दस्वरूप हैं, उस मनोरम क्षेत्रमें नित्य निवास करते हैं। काशीपुरी परमानन्दरूपिणी है। मुने! शिव और शिवाने प्रलयकालमें भी कभी उस क्षेत्रको अपने सांनिध्यसे मुक्त नहीं किया है। इसलिये विद्वान् पुरुष उसे 'अविमुक्त क्षेत्र' के नामसे भी जानते हैं। वह क्षेत्र आनन्दका हेतु है। इसलिये पिनाकधारी शिवने पहले उसका नाम 'आनन्दवन' रखा था। उसके बाद वह 'अविमुक्त' के नामसे प्रसिद्ध हुआ।

देवर्षे! एक समय उस आनन्दवनमें रमण करते हुए शिवा और शिवके मनमें यह इच्छा हुई कि किसी दूसरे पुरुषकी भी सृष्टि करनी चाहिये, जिसपर यह सृष्टि-संचालनका महान् भार रखकर हम दोनों केवल काशीमें रहकर इच्छानुसार विचरें और निर्वाण धारण करें। वही पुरुष हमारे अनुग्रहसे सदा सबकी सृष्टि करे, पालन करे और वही अन्तमें सबका संहार भी करे। यह चित्त एक समुद्रके समान है। इसमें चिन्ताकी उत्ताल तरंगें उठ-उठकर इसे चंचल बनाये रहती हैं। इसमें सत्त्वगुणरूपी रत्न, तमोगुणरूपी ग्राह और रजोगुणरूपी मूँगे भरे हुए हैं। इस विशाल चित्त-समुद्रको संकुचित करके हम दोनों उस पुरुषके प्रसादसे आनन्दकानन (काशी)-में सुखपूर्वक निवास करें। यह आनन्दवन वह

स्थान है, जहाँ हमारी मनोवृत्ति सब ओरसे सिमिटकर इसीमें लगी हुई है तथा जिसके बाहरका जगत् चिन्तासे आतुर प्रतीत होता है। ऐसा निश्चय करके शक्तिसहित सर्वव्यापी परमेश्वर शिवने अपने वामभागके दसवें अंगपर अमृत मल दिया। फिर तो वहाँसे एक पुरुष प्रकट हुआ, जो तीनों लोकोंमें सबसे अधिक सुन्दर था। वह शान्त था। उसमें सत्त्वगुणकी अधिकता थी तथा वह गम्भीरताका अथाह सागर था। मुने! क्षमा नामक गुणसे युक्त उस पुरुषके लिये ढूँढ़नेपर भी कहीं कोई उपमा नहीं मिलती

शिवने कहा—**वत्स! व्यापक होनेके कारण तुम्हारा विष्णु नाम विख्यात हुआ।**

(अध्याय ६)

रुद्रसंहिता १२३

भगवान् विष्णुकी नाभिसे कमलका प्रादुर्भाव, शिवेच्छावश ब्रह्माजीका उससे प्रकट होना, कमलनालके उद्गमका पता लगानेमें असमर्थ ब्रह्माका तप करना, श्रीहरिका उन्हें दर्शन देना, विवादग्रस्त ब्रह्मा-विष्णुके बीचमें अग्नि-स्तम्भका प्रकट होना तथा उसके ओर-छोरका पता न पाकर उन दोनोंका उसे प्रणाम करना

ब्रह्माजी कहते हैं—देवर्षे! तत्पश्चात् कल्याणकारी परमेश्वर साम्ब सदाशिवने पूर्ववत् प्रयत्न करके मुझे अपने दाहिने अंगसे उत्पन्न किया। मुने! उन महेश्वरने मुझे तुरंत ही अपनी मायासे मोहित करके नारायणदेवके नाभिकमलमें डाल दिया और लीलापूर्वक मुझे वहाँसे प्रकट किया। इस प्रकार उस कमलसे पुत्रके रूपमें मुझ हिरण्यगर्भका जन्म हुआ।

१३० * संक्षिप्त शिवपुराण *

इस प्रकार ब्रह्मा, विष्णु तथा रुद्र—इन तीन देवताओंमें गुण हैं, परंतु शिव गुणातीत माने गये हैं। (अध्याय ९)

❖ **श्री शकंर जी भी शिव (काल ब्रह्म) तथा शिवा (देवी दुर्गा) का पुत्र है :- श्री शिव महापुराण के विद्येश्वर संहिता के प्रथम खण्ड अध्याय 6 से 10 में प्रमाण :-**

एक समय श्री ब्रह्मा जी तथा श्री विष्णु जी का इस बात पर युद्ध हो गया कि ब्रह्मा जी ने कहा मैं तेरा पिता हूँ क्योंकि यह संसार मेरे से उत्पन्न हुआ है, मैं प्रजापिता हूँ। विष्णु जी ने कहा कि मैं तेरा पिता हूँ, तू मेरे नाभि कमल से उत्पन्न हुआ है। दोनों एक-दूसरे को मारने के लिए तत्पर हो गए। उसी समय सदाशिव अर्थात् काल ब्रह्म ने उन दोनों के बीच में एक सफेद रंग का प्रकाशमय स्तंभ खड़ा कर दिया।

उसके पश्चात् अपने पुत्र तमगुण शिव के रूप में प्रकट होकर उस स्तंभ को अपने लिंग (Private Part) का आकार दे दिया। उसी दिन से शिव जी का लिंग विख्यात हुआ। लिंग पूजा आरंभ हुई।(पाँचवें अध्याय के श्लोक 26-31 में) उस काल ब्रह्म ने स्वयं शंकर के रूप में प्रकट होकर उनको बताया कि तुम दोनों में से कोई भी कर्ता नहीं है। तुमने (ब्रह्मा व विष्णु ने) जो अज्ञानता से अपने आपको ''ईश'' माना यानि अपने को जगत का कर्ता माना,

यह बड़ा ही अद्भुत हुआ। उसी (भ्रम) को दूर करने के लिए मैं रणस्थल पर आया हूँ। अब तुम दोनों अपना अभिमान त्यागकर मुझ ईश्वर में अपनी बुद्धि लगाओ।

हे पुत्रो! मैंने तुमको तुम्हारे तप के प्रतिफल में जगत की उत्पत्ति और स्थिति रूपी दो कार्य दिए हैं। इसी प्रकार मैंने शंकर और रूद्र को दो कार्य संहार व तिरोगति दिए हैं, मुझे वेदों में ब्रह्म कहा है। मेरे पाँच मुख हैं, एक मुख से अकार (अ), दूसरे मुख से उकार (उ) तथा तीसरे मुख से मकार (म), चौथे मुख से बिन्दु (.) तथा पाँचवे मुख से नाद (शब्द) प्रकट हुए हैं, उन्हीं पाँच अववयों से एकीभूत होकर एक अक्षर ओम् (ऊँ) बना है, यह मेरा मूल मन्त्र है।

शिव पुराण के इस उल्लेख से यह भी सिद्ध हुआ कि मेरे को ब्रह्म कहते हैं। पाँच अक्षरों से बना एक ओम् (ॐ) मेरा मूल मंत्र (नाम) है जो मेरी साधना है। गीता अध्याय 8 श्लोक 13 में भी इसी ब्रह्म ने कहा है कि (माम् ब्रह्म) मुझ ब्रह्म का स्मरण करने का एक ॐ (ओम्) अक्षर है।

इससे भी स्वसिद्ध है कि गीता का ज्ञान काल रूप ब्रह्म ने श्री कृष्ण के शरीर में प्रेतवत प्रवेश करके बोला है।

लिंग व लिंगी की पूजा करने को कहना :- काल ब्रह्म ने अपने लिंग (Private Part) तथा स्त्री की लिंगी (Private Part) की पूजा करने को कहा है। जो मंदिरों में शिवलिंग स्थापित किया होता है, उसको ध्यान से देखा जाए तो पता चलता है कि पत्थर की लिंगी (स्त्री की योनि) में पत्थर का लिंग यानि शिव का लिंग (पेशाब इन्द्री) प्रविष्ट किया गया होता है।

श्री शिव पुराण के विद्येश्वर संहिता के खण्ड-1 अध्याय 5 श्लोक 26-31 तथा अध्याय 9 श्लोक 40-46 में प्रमाण है। इनकी फोटोकॉपी आगे लगाई हैं, कृपया वहाँ पर पढ़ें। विचार करें कि यह कितनी बेशर्मी की बात है। कितना अभद्र मजाक काल ब्रह्म ने किया। ब्रह्मा तथा विष्णु से कहा कि तुम इस मेरे लिंग व लिंगी (स्त्री योनि) की पूजा करो।

पेश है (श्री वैंकटेश्वर प्रेस मुम्बई से प्रकाशित, संस्कृत-हिन्दी अनुवाद वाली) शिव महापुराण के विद्येश्वर संहिता खंड के अध्याय 5, 6, 7, 8, 9 तथा 10 से संबंधित प्रकरण की फोटोकॉपी :- (अगले पृष्ठ पर)

शि०पु० ॥११॥

हे योगीन्द्र ! मैं उस लिंगाविर्भावका लक्षण सुना चाहता हूं ॥ नन्दिकेश्वर बोले हे वत्स ! सुनो मैं तुम्हारी प्रीतिसे कहता हूं ॥ २६ ॥ पूर्वकालमें जो पहला कल्प था जो लोकमें विख्यात है उस समय महात्मा ब्रह्मा और विष्णुका परस्पर युद्ध हुआ था ॥ २७॥ उनके मान दूर करनेको उनके बीचमें उन निष्कल परमात्माने स्तम्भरूप अपना स्वरूप दिखाया ॥ २८ ॥ तब जगत्के हितकी इच्छासे निर्गुण शिवने उस तेजोमयस्तंभसे अपने लिंगाकारका स्वरूप दिखाया ॥ २९ ॥ उसीदिनसे लोकमें वह निष्कल शिवजीका लिंग विख्यात हुआ, और

श्रोतुमिच्छामियोगींद्रलिंगाविर्भावलक्षणम् ॥ नंदिकेश्वरउवाच ॥ शृणुवत्सभवत्प्रीत्यावक्ष्यामिपरमार्थतः ॥२६॥ पुराकल्पेमहाकाले प्रपन्नेलोकविश्रुते॥ आयुध्येतांमहात्मानौब्रह्मविष्णूपरस्परम् ॥२७॥ तयोर्माननिराकर्तुंतन्मध्येपरमेश्वरः ॥ निष्कलस्तंभरूपेणस्वरूपंसमदर्शयत् ॥२८॥ ततःस्वलिंगचिह्नत्वात्स्तंभतोनिष्कलंशिवः ॥ स्वलिंगंदर्शयामासजगतांहितकाम्यया ॥२९॥ तदाप्रभृतिलोकेषुनिष्कलंलिंगमैश्वरम्॥सकलंचतथाबेरंशिवस्यैवप्रकल्पितम् ॥३०॥ शिवान्येषःतुदेवानांबेरमात्रंप्रकल्पितम् ॥ तत्तद्बेरंतुदेवानांतत्तद्भोगप्रदंशुभम्॥ शिवस्यलिंगबेरत्वभोगमोक्षप्रदंशुभम् ॥३१॥ इतिश्रीशिवमहापुराणेविद्येश्वरसंहितायांपंचमोऽध्यायः ॥५॥नंदिकेश्वरउवाच ॥ पुराकदाचिद्योगींद्रविष्णुर्विषधरासनः ॥ सुष्वापपरयाभूत्यास्वानुगैरपिसंवृतः ॥१॥ यदृच्छयागतस्तत्रब्रह्माब्रह्मविदांवरः ॥ अपृच्छत्पुंडरीकाक्षंशयनंसर्वसुन्दरम् ॥ २ ॥

वि०सं०१ अ० ६

सगुणरूपमें बेररूप की कल्पना की गई ॥ ३० ॥ देवताओंकी वह बेर पूजा इच्छानुसार भोगोंको देनेहारी है परन्तु शिवका लिंगबेर भोग और मोक्ष दोनोंका देनेहारा है ॥ ३१ ॥ इति श्रीशिवमहापुराणे विद्येश्वरसंहिताभाषायां पंचमोध्यायः ॥ ५ ॥ नन्दिकेश्वर बोले हे योगींद्र ! आगे एक समय विष्णु भगवान् शेषशय्यापर अपने गरुड़ादि पार्षदोंसे संयुक्त लक्ष्मीसहित शयन करते थे ॥ १ ॥ उस समय ब्रह्मज्ञानियोंमें श्रेष्ठ ब्रह्माजी अपनी इच्छासेही वहाँ आये सब प्रकार सुन्दर सेजपर शयन करते हुए कमललोचन विष्णुजीसे पूछने लगे ॥ २ ॥

तुम कौन हो जो मुझे देखकर अभिमानी पुरुषके समान शयन करते हो. हे वत्स ! उठो देखो मैं तुम्हारा स्वामी आया हूँ ॥ ३ ॥ आये हुए गुरुको देखकर जो अभिमान करता है उस द्रोही मूढका प्रायश्चित्त होना उचित है ॥ ४ ॥ यह सुनकर विष्णुजीके अंतरमें तो क्रोध हुआ परंतु बाहरसे शांत रहे, और बोले हे वत्स ! तुम्हारा मंगल हो बैठो इस आसनपर विराजो ॥ ५ ॥ इस समय तुम्हारा नेत्र कुटिल और मुख वक्र क्यों होरहा है ? ब्रह्माजी बोले हे वत्स विष्णु ! तुमको समयके प्रभावसे अभिमान है ॥ ६ ॥ हे पुत्र ! मैं तुम्हारा रक्षक और जगत्का पितामह हूँ विष्णुजी बोले यह तो सब जगत् मुझमें स्थित है तुम चोरके समान किस प्रकार अपना कहते हो ॥७॥ तुम मेरी नाभिकमलसे उत्पन्न

कस्त्वंपुरुषवच्छेषेदृष्ट्वामामपिदृप्तवत्॥उत्तिष्ठवत्समांपश्यतवनाथमिहागतम् ॥३॥ आगतंगुरुमाराध्यंदृष्ट्वायोदृप्तवच्चरेत्॥द्रोहिण स्तस्यमूढस्यप्रायश्चित्तंविधीयते ॥ ४ ॥ इतिश्रुत्वावचःक्रुद्धोबहिःशांतवदाचरत्॥स्वस्तितेस्वागतंवत्सतिष्ठपीठमितोविश ॥५॥ किमुतेव्याग्रवद्वक्त्रंविभातिविषमेक्षणम् ॥ ब्रह्मोवाच ॥ वत्सविष्णोमहामानमागतंकालवेगतः ॥६॥ पितामहश्चजगतःपाताचतव वत्सक॥विष्णुरुवाच ॥ मत्स्थंजगदिदंवत्समनुषेत्वंहिचोरवत्॥७॥मन्नाभिकमलाज्जातःपुत्रस्त्वंभाषसेवृथा॥ नंदिकेश्वरउवाच॥ एवंहिवदतोस्तत्रमुग्धयोरजयोस्तदा ॥८॥ अहमेववरोनत्वमहंप्रभुरहंप्रभुः॥परस्परंहंतुकामौचक्रतुःसमरोद्यमम् ॥९॥ युयुधातेऽम रौवीरौहंसपक्षींद्रवाहनौ ॥ वैरंच्यावैष्णवाश्चैवंमिथोयुयुधिरेतदा॥१०॥तावद्विमानगतयःसर्वावैदेवजातयः॥दिदृक्षवःसमाजग्मुःस मरतंमहाद्भुतम् ॥११॥ क्षिपंतःपुष्पवर्षाणिपश्यंतःस्वैरमंबरे ॥ सुपर्णवाहनस्तत्र क्रुद्धोवैब्रह्मवक्षसि ॥ १२ ॥

हुए हो इससे मेरे पुत्र हो मुझे पुत्र कहना वृथा है. नंदिकेश्वर बोले इस प्रकार ब्रह्मा विष्णु दोनों ही रजोगुणसे मुग्ध होकर विवाद करने लगे ॥ ८ ॥ मैं श्रेष्ठ हूँ मैं स्वामी हूँ ऐसा कहकर एक दूसरेको मारनेकी इच्छासे युद्ध करनेमें उत्सुक हुए ॥ ९ ॥ और हंस और गरुड़ वाहनपर स्थित हो यह दोनों देव युद्ध करने लगे तब ब्रह्मा और विष्णुके वाहन गण भी युद्ध करने लगे ॥ १० ॥ तब सम्पूर्ण देवता विमानोंमें बैठकर उस महाअद्भुत युद्ध देखनेको चले आये॥११॥और आकाशमें उनके ऊपर फूल वर्षाने लगे । तब विष्णुजीने क्रोधकर ब्रह्माजीकी छातीमें॥१२॥

हे कुमार ! इस प्रकार मधुरवाणीसे पार्वतीपति शंकरने उन सब देवताओंको सन्तुष्ट किया ॥३॥ तब शिवने अपने सौ गणोंको उस समरस्थानमें जानेकी आज्ञा दी जहां ब्रह्मा और विष्णु थे ॥ ४ ॥ तब शंकरके पयानसमयमें अनेक प्रकारके बाजे बजने लगे अनेक प्रकारके वाहनोंपर चढ विविध भूषण पहरे गणेश्वर चलनेको उद्यत हुए ॥ ५ ॥ प्रणवके समान आकारसे सर्वत्र व्याप्त पंचमंडलसे मंडित भद्ररथमें अम्बिकापति गिरीश चढे और पुत्र तथा गण भी संग हुए उस समय इन्द्रादि देवता उनके पीछे चलने लगे ॥ ६ ॥ सुन्दर ध्वजाव्यजन चमर पुष्प वर्षा संगीत नृत्य बाजोंसे सम्मानित हो शिवजी पार्वती सहित ब्रह्मा विष्णुके निकट समरभूमिमें सेनासहित गये ॥७॥ जाकर मेघोंके मध्यमें छिपकर

इतिसस्मितयामाध्व्याकुमारपरिभाषया॥समतोषयदंबायाःसपतिस्तत्सुरव्रजम्॥३॥अथयुद्धांगणंगंतुंहरिधात्रोरधीश्वरः॥आज्ञापयद्गणेशानांशतंतत्रैवसंसदि॥४॥ततोवाद्यंबहुविधंप्रयाणायपरेशितुः॥गणेश्वराश्वसंनद्धानानावाहनभूषणाः ॥५॥ प्रणवाकारमाद्यंतंपंचमंडलमंडितम् ॥ आरुरोहरथंभद्रमंबिकापतिरीश्वरः ॥ ससूनुगणमिंद्राद्याःसर्वेप्यनुययुःसुराः ॥६॥चित्रध्वजव्यजनचामरपुष्प वर्षसंगतिनृत्यनिवहैरपिवाद्यवर्गैः संमानितः पशुपतिःपरयाचदेव्यासाकंतयोःसमरभूमिमगात्ससैन्यः॥७॥ समीक्ष्यंतुतयोर्युद्धंनिगूढाऽभ्रंसमास्थितः॥समाप्तवाद्यनिर्घोषःशांतोरुगणनिःस्वनः ॥८॥अथब्रह्माच्युतौवीरौहंतुकामौपरस्परम्॥माहेश्वरेणचाऽस्त्रेणतथापाशुपतेनच॥९॥अस्त्रज्वालैरथोदग्धंब्रह्मविष्णवोर्जगत्त्रयम्॥ईशोपितंनिरीक्ष्याथह्यकालप्रलयंभृशम्॥१०॥महानलस्तंभविभीषणाकृतिर्बभूवतन्मध्यतलेसनिष्कलः॥११॥तेअस्त्रेचापिसज्वालेलोकसंहरणक्षमे॥निपतेतुःक्षणेनैवह्याविर्भूतेमहानले॥१२॥

उनका निरन्तर होनेवाला युद्ध देखा, उस समय बाजोंकी ध्वनि नहीं होती थी और बड़ा गणोंका भी शब्द शान्त होगया था ॥ ८ ॥ उस समय ब्रह्मा और विष्णु परस्पर एक दूसरेको मारनेकी इच्छासे माहेश्वर और पाशुपतास्त्रसे ॥ ९ ॥ तथा अस्त्रोंकी ज्वालासे मानों त्रिलोकी भस्म करने लगे तब शिवजीने वह अकाल प्रलय देखकर ॥ १० ॥ महाअग्निके स्तम्भके समान महाभयंकर आकृतिके समान उन दोनोंके बीचमें वह निर्गुण ब्रह्म स्थित हुए ॥११॥ वह लोक क्षय करनेमें समर्थ अस्त्र उस महाअग्निके प्रगट होतेही क्षणमात्रमें निपतित हो गये ॥१२॥

यह अस्त्र शांत होनेका अद्भुत चित्र देख यह अद्भुत आकार क्या है ऐसा ब्रह्मा और विष्णु परस्पर कहने लगे ॥ १३ ॥ यह इंद्रिय अगोचर स्तम्भ अग्निरूपसा क्या उठा है हम दोनोंको इसका ऊपर और नीचेका भाग देखना चाहिये कि यह कहांसे हुआ है ॥ १४ ॥ इस प्रकार कह वह दोनों वीर मानी परस्पर मिलकर उसकी परीक्षा करनेको बहुत शीघ्रतासे गये ॥ १५ ॥ हम दोनोंके मिलनेसे यह कार्य नहीं होगा ऐसा कहकर विष्णु शूकर शरीर धारण कर उसके मूल भाग देखनेको नीचे चले गये ॥ १६ ॥ और ब्रह्माजी हंसका रूप धार उसके ऊपरका

दृष्ट्वा तदद्भुतं चित्रमस्त्रशांतिकरं शुभम्॥किमेतदद्भुताकारमित्यूचुश्चपरस्परम्॥१३॥ अतींद्रियमिदंस्तंभमग्निरूपंकिमुत्थितम् ॥ अस्योर्ध्वमपिचाधश्चआवयोर्लक्ष्यमेव हि॥१४॥इतिव्यवसितौवीरौमिलितौवीरमानिनौ ॥तत्परौतत्परीक्षार्थंप्रतस्थातेऽथसत्वरम् ॥१५॥ आवयोर्मिश्रयोस्तत्रकार्यमेकंनसंभवेत् ॥ इत्युक्त्वासूकरतनुर्विष्णुस्तस्यादिमीयिवान् ॥१६॥ तथाब्रह्माहंसतनुस्तदंतंवीक्षितुंययौ ॥ भित्त्वापातालनिलयंगत्वादूरतरंहरिः ॥१७॥ नाऽपश्यत्तस्यसंस्थानंस्तंभस्यानलवर्चसः॥श्रांतःससूकरहरिःप्रापपूर्वरणांगणम् ॥१८॥ अथगच्छंस्तुव्योम्नाचविधिस्तातपितातव ॥ ददर्शकेतकीपुष्पंकिंचिद्विच्युतमद्भुतम् ॥१९॥ अतिसौरभ्यमम्लानंबहुवर्षच्युतं तथा ॥ अन्वीक्ष्य च तयोः कृत्यं भगवान्परमेश्वरः ॥ २० ॥

भाग देखनेको गये हरि पाताल स्थानको भेदकर दूरतक चले गये ॥ १७ ॥ परन्तु उस अग्निके समान प्रज्वलित स्तम्भका पार नहीं पाया और शांत होकर हरि उस युद्ध स्थानमें चले आये ॥ १८ ॥ और ब्रह्माजी आकाशमार्गमें चले गये उन्होंके वहां केतकीका किंचित् च्युत होना अद्भुत पुष्प देखा ॥ १९ ॥ यद्यपि वो बहुत वर्षोसे टूटा था परन्तु उसमें बडी सुगन्ध थी और मलीन न था ब्रह्मा और विष्णुके कृत्यको देखकर भगवान् परमेश्वरने ॥ २० ॥

स्तम्भ है सो जगत्के दर्शन और पूजनके निमित्त अणुमात्र बहुतछोटा)होजायगा ॥१९॥ यह लिंग भुक्ति और मुक्तिका साधक होगा, इसके दर्शन स्पर्शन और ध्यानसेही प्राणियोंके जन्म मरण छूट जायँगे॥२०॥जो अग्निपर्वतके समान प्रादुर्भूत हुआ है सो यह अरुणाचल नामसे जगत्में विख्यात होगा ॥२१॥ यहां बड़ा भरी तीर्थ होगा यहां प्राणियोंके निवास करने या तनु त्यागनेसे मुक्ति हो जायगी ॥२२॥ रथयात्रा उत्सव कल्याण और जनोंके निवास योग्य यह स्थान होगा. यहां किया हुआ जप तप हवन करोड़ गुणा होजायगा ॥२३॥ हमारे सब क्षेत्रोंसे यह श्रेष्ठ होगा, यहां मेरा स्मरण करतेही प्राणी मुक्त हो जाँयगे ॥२४॥ इस कारण यह क्षेत्र महान् और अत्यन्त शोभित होगा सब प्रकारके कल्याणदायक और सब

भोगावहमिदंलिंगंभुक्तिमुक्त्येकसाधनम् ॥ दर्शनस्पर्शनध्यानाज्जंतूनांजन्ममोचनम् ॥२०॥ अनलाचलसंकाशंयदिदंलिंगमुत्थितम् ॥ अरुणाचलमित्येवतदिदंख्यातिमेष्यति ॥२१॥ अत्रतीर्थंचबहुधाभविष्यतिमहत्तरम्॥मुक्तिरप्यत्रजंतूनःवासेनमरणेनच ॥२२॥रथोत्सवादिकल्याणंजनावासंतुसर्वतः॥अत्रदत्तंहुतंजप्तंसर्वंकोटिगुणंभवेत्॥२३॥मत्क्षेत्रादपिसर्वस्मात्क्षेत्रमेतन्महत्तरम्॥ अत्रसंस्मृतिमात्रेणमुक्तिर्भवतिदेहिनाम्॥२४॥तस्मान्महत्तरमिदंक्षेत्रमत्यंतशोभनम्॥सर्वकल्याणसंपूर्णंसर्वमुक्तिकरंशुभम्॥२५॥ अर्चयित्वाऽत्रमामेवलिंगेलिंगिनमीश्वरम्॥सालोक्यंचैवसामीप्यंसारूप्यंसार्ष्टिरेवच ॥२६॥ सायुज्यमितिपंचैतेक्रियादीनांफलंमतम् ॥ सर्वेपियूयंसकलंप्राप्स्यथाशुमनोरथम्॥२७॥नंदिकेश्वर उवाच ॥ इत्यनुगृह्यभगवान्विनीतौविधिमाधवौ॥ यत्पूर्वंप्रहतंयुद्धेतयोःसैन्यंपरस्परम् ॥२८॥ तदुत्थापयदत्यर्थंस्वशक्त्याऽमृतधारया ॥ तयोमाढ्यंचवैरंचव्यपनेतुमुवाचतौ ॥ २९ ॥

प्रकार मुक्तिदायक होगा ॥२५॥ जो यहां लिंगमें मुझ लिंगेश्वरकी पूजा करेंगे उन्हें सालोक्य सामीप्य सारूप्य सार्ष्टि ॥ २६ ॥ सायुज्य यह पांचों मुक्ति क्रियाके फलको प्राप्त होजाँयगी और यहां पूजन करनेसे तुमभी सब मनोरथोंको प्राप्त होंगे ॥२७॥ नंदिकेश्वर बोले इस प्रकार भगवानने उन नम्र हुए ब्रह्मा और विष्णुपर अनुग्रह करके उनके युद्धमें जो परस्पर उनकी सेना मारी गईथी॥२८॥ उस सबको अपनी शक्तिसे जिवाकर उठाया जिस शक्तिमें अमृतकी धारा रहती है और उन दोनोंकी अज्ञानता और वैरको दूर करनेके अर्थ दोनोंसे कहा ॥ २९ ॥

मेरे सकल और निष्कल भेदसे दोस्वरूप हैं परन्तु और ईश्वर नहीं इस कारण उनके दो रूप नहीं हो सकते ॥३०॥ पहला स्तम्भरूप और पीछे मूर्तिमान् रूप धारण किया इसमें ब्रह्मरूप निष्फल है और ईशरूप सगुण है ॥ ३१ ॥ मेरे यह दोनों रूप सिद्ध हैं दूसरे किसीके नहीं हो सकते. इस कारण तुम दोनोंको अथवा दूसरोंको ईश्वरत्वकी प्राप्ति नहीं हो सकती॥३२॥तुमने जो अज्ञानसे अपनेको ईश माना यह बडा अद्भुत हुआ उसके दूर करनेकोही मैं रणस्थानमें आया ॥ ३३ ॥ अब तुम अपना अभिमान त्यागकर मुझ ईश्वरमें अपनी बुद्धि लगाओ मेरे प्रसादसे लोकमें सब अर्थ प्रकाश करते हैं ॥ ३४ ॥ मुझ गुरुके वचनही तुमको वारंवार प्रमाण हैं, तुम्हारी प्रीतिसेही यह गूढ ब्रह्मत्व मैं तुमसे

सकलंनिष्कलंचेतिस्वरूपद्वयमस्तिमे ॥ नान्यस्यकस्यचित्तस्मादन्यःसर्वोप्यनीश्वरः ॥३०॥ पुरस्तात्स्तंभरूपेणपश्चाद्रूपेणचाभंकौ ॥ ब्रह्मत्वंनिष्कलंप्रोक्तमीशत्वंसकलंतथा ॥३१॥ द्वयंममैवसंसिद्धंनमदन्यस्यकस्यचित् ॥ तस्मादीशत्वमन्येषांयुवयोरपिनक्वचित् ॥३२॥ तदज्ञानेनवांवृत्तमीशमानंमहाद्भुतम्॥तन्निराकर्तुमत्रैवमुत्थितोऽहंरणक्षितौ॥३३॥ त्यजतंमानमात्मीयंमयीशेकुरुतंमतिम् ॥ मत्प्रसादेनलोकेषुसर्वोप्यर्थःप्रकाशते ॥३४॥ गुरूक्तिर्व्यंजकंतत्रप्रमाणंवापुनःपुनः॥ ब्रह्मतत्त्वमिदंगूढंभवत्प्रीत्याभणाम्यहम् ॥ ३५ ॥ अहमेवपरंब्रह्ममत्स्वरूपंकलाकलम् ॥ब्रह्मत्वादीश्वरश्चाहंकृत्यंमेनुग्रहादिकम् ॥३६॥ बृहत्त्वाद्बृंहणत्वाच्चब्रह्माहंब्रह्मकेशवौ ॥ समत्वाद्व्यापकत्वाच्चतथैवात्माहमर्भकौ ॥३७॥अनात्मानःपरेसर्वेजीवाएवनसंशयः ॥ अनुग्रहाद्यंसर्गांतंजगत्कृत्यंचपंकजम् ॥ ३८ ॥ ईशत्वादेवमेनित्यंनमदन्यस्यकस्यचित् ॥ आदौब्रह्मत्त्वबुद्ध्यर्थंनिष्कलंलिंगमुत्थितम् ॥ ३९ ॥

कहता हूं ॥ ३५ ॥ मैंही पर ब्रह्म हूं और मेराही कल अकलरूप है ब्रह्म होनेसे मैं ईश्वर हूं अनुग्रहादिकही मेरा कृत्य है ॥ ३६ ॥ सर्वव्यापी होनेसे और जगत्के वर्द्धक होनेसे मैं ब्रह्मा हूं, हे ब्रह्मकेशव ! समत्व और व्यापक होनेसे मैं आत्मा हूं ॥ ३७ ॥ और सम्पूर्ण जीव आत्मा नहीं हैं इसमें सन्देह नहीं, अनुग्रहसेही यह सर्गके अन्ततक जो जगत्का कृत्य और पंचक है ॥ ३८ ॥ मैं इस सबका ईश हूं यह मेरा है मेरे सिवाय किसी दूसरेका नहीं है. प्रथम तो ब्रह्मत्वज्ञानके निमित्त निष्कलब्रह्मका प्रादुर्भाव हुआ है ॥ ३९ ॥

शि०पु० ॥१८॥

इसीसे मैं अज्ञातस्वरूप हूं पीछे तुम्हें प्रगट दर्शन देनेके निमित्त साक्षात् ईश्वर तत्क्षणही मैं सगुणरूप हुआ हूं ॥ ४० ॥ मेरे ईशत्वरूपको सकलत्व जानो और यह निष्कलत्व स्तंभ ब्रह्मका बोधक है ॥ ४१ ॥ लिंगलक्षण होनेसे यह मेरा लिंगस्वरूप निर्गुण होगा इस कारण हे पुत्रो ! तुम नित्य इनकी अर्चना करना ॥ ४२ ॥ यह सदा मेरी आत्मारूप है और मेरी निकटताका कारण है लिंग और लिंगीके अभेदसे यह महत्व नित्य पूजनीय है ॥ ४३ ॥ जहां कहीं किसीने मेरे इस लिंगकी प्रतिष्ठा की है हे पुत्र ! वहां मैं अप्रतिष्ठित भी स्थित हूं ॥४४॥ एक लिंगके स्थापनसे मेरे समान रूपकी प्राप्ति यह फल होता है, और दूसरे लिंगके स्थापन करनेमें मेरी एकताकी प्राप्ति होती है ॥ ४५ ॥

तस्मादज्ञातमीशत्वंव्यक्तंद्योतयितुंहिवाम्॥सकलोहमतोजातःसाक्षादीशस्तुतत्क्षणात्४०सकलत्वमतोज्ञेयमीशत्वंमयिसत्वरम् ॥ यदिदंनिष्कलंस्तंभंममब्रह्मत्वबोधकम् ॥ ॥४१॥ लिंगलक्षणयुक्तत्वान्ममलिंगंभवेदिदम् ॥ तदिदंनित्यमभ्यर्च्यंयुवाभ्यामत्रपुत्रकौ ॥४२॥ मदात्मकमिदंनित्यंममसान्निध्यकारणम् ॥ महत्पूज्यमिदंनित्यमभेदाल्लिंगलिंगिनोः ॥४३॥यत्रप्रतिष्ठितंयेनमदीयं लिंगमीदृशम् ॥ तत्रप्रतिष्ठितःसोहमप्रतिष्ठोपिवत्सकौ ॥ ४४ ॥ मत्साम्यमेकलिंगस्यस्थापनेफलमीरितम् ॥ द्वितीयेस्थापितेलिंगेमदैक्यंफलमेवहि ॥४५॥ लिंगंप्राधान्यतःस्थाप्यंतथाबेरंतुगौणकम् ॥लिंगाभावेनतत्क्षेत्रंसबेरमपिसर्वतः ॥४६॥ इति श्रीशिवमहापुराणेविद्येश्वरसंहितायांनवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥ ब्रह्मविष्णूऊचतुः ॥ सर्गादिपंचकृत्यस्यलक्षणंब्रूहिनौप्रभो ॥ शिवउवाच॥ मत्कृत्यबोधनंगुह्यंकृपयाप्रब्रवीमिवाम् १सृष्टिःस्थितिश्चसंहारस्तिरोभावोऽप्यनुग्रहः॥ पंचैवमेजगत्कृत्यंनित्यसिद्धमजाच्युतौ२॥

वि०सं०१ अ० १०

वह लिंग प्रधान है और बेरलिंग गौण है लिंगके अभावसे बेर सहित भी वह स्थान क्षेत्र नहीं होता है ॥ ४६ ॥ इति श्रीशिवमहापुराणे विद्येश्वरसंहिता भाषाटीकायां नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥ ब्रह्मा और विष्णु बोले हे प्रभो ! आप हमसे सर्गादि पंचकृत्यका लक्षण कहिये शिवजी बोले हमारा कृत्य और ज्ञान दुर्लभ है मैं कृपासे तुमको कहता हूं ॥ १ ॥ हे ब्रह्मा, विष्णु सृष्टि स्थिति संहार तिरोभाव अनुग्रह यह पांच हमारे जगत्के कृत्य नित्यसिद्ध हैं ॥ २ ॥

संसारके आरंभका नाम सर्ग, उसकी वृद्धिका नाम स्थिति है, उसके नष्ट करनेका नाम मंहार उद्धारका नाम उत्क्रम है ॥ ३ ॥ उस संसारसे मोक्ष करनेका अनुग्रह है सब यही मेरे पांच कृत्य हैं और पृथ्वी आदि इस मेरे कृत्यको गोपुरके बिंबके समान मौन होकर धारण करते हैं ॥ ४ ॥ यह सर्गादि चार कृत्य तो सृष्टिके कर्म्ममें प्रवेश करते हैं और पांचवाँ मुक्तिका कारण सदा मुझमेंही स्थित रहता है ॥५॥ सो यह पंचभूतोंमें मेरे जनोंद्वारा दीखता है. पृथ्वीमें सृष्टि जलमें स्थिति अग्निमें संहार ॥ ६ ॥ पवनमें तिरोभाव आकाशमें अनुग्रह है सब कुछ पृथ्वी उत्पन्न करती है जलसे सबकी वृद्धि होती है ॥ ७ ॥ तेजसे सब नष्ट होते वायुमें सब लय होते और आकाशद्वारा सबपर अनुग्रह होता है ऐसा

सर्गः संसारसंरंभस्तत्प्रतिष्ठास्थितिर्मता ॥ संहारोमर्दनंतस्यतिरोभावस्तदुत्क्रमः॥३॥तन्मोक्षोऽनुग्रहस्तन्मेकृत्यमेवंहिपंचकम् ॥ कृत्यमेतद्वहत्यन्यस्तूष्णींगोपुरबिंबवत्॥४॥सर्गादियच्चतुष्कृत्यंसंसारपरिजृंभणम् ॥ पंचमंमुक्तिहेतुर्वैनित्यं मयि च सुस्थिरम् ॥ ५ ॥ तदिदंपंचभूतेषुदृश्यतेमामकैर्जनैः ॥सृष्टिर्भूमौस्थितिस्तोयेसंहारः पावकेतथा ॥६॥तिरोभावोऽनिलेतद्वदनुग्रहइहाम्बरे ॥ सृज्यतेधरयासर्वमद्भिः ॥ सर्वंप्रवर्द्धते ॥७॥ अर्द्यतेतेजसासर्ववायुना चापनीयते ॥ व्योम्नानुगृह्यतेसर्वंज्ञेयमेवंहिसूरिभिः ॥ ८॥ पंचकृत्यमिदंवोढुंमम्रास्तिमुखपंचकम् ॥ चतुर्दिक्षुचतुर्वक्रंतन्मध्येपंचमंमुखम् ॥९॥ युवाभ्यांतपसालब्धमेतत्कृत्यद्वयंसुतौ ॥ सृष्टिस्थित्यमिधंभाग्यंमत्तःप्रीतादतिप्रियम्॥ १० ॥ तथारुद्रमहेशाभ्यामन्यत्कृत्यद्वयंपरम् ॥ अनुग्रहाख्यंकेनापिलब्धुंनैवहि शक्यते ॥ ११ ॥ तत्सर्वंपौर्विकंकर्मयुवाभ्यांकालविस्मृतम् ॥ नतद्रुद्रमहेशाभ्यांविस्मृतंकर्मतादृशम् ॥ १२ ॥

प्राचीन कवियोंको जानना चाहिये ॥ ८ ॥ इसी पांच कृत्यके धारण करनेको मेरे पांच मुख हैं चार दिशाओंमें चार मध्यमें और पांचवाँ मुख है ॥ ९ ॥ हे पुत्रो ! यह कृत्य आपने तपसे प्राप्त किया है जोकि सृष्टिकी उत्पत्ति और पालन कहाता है सो मैंने प्रसन्न होकर तुम्हें दिया है ॥१०॥ इसी प्रकारसे दूसरे दो कृत्य रुद्र और महेशको प्रदान किये हैं परन्तु अनुग्रह कृत्य कोई भी पानेको समर्थ नहीं है ॥११॥ सो पूर्वके कर्म्म तुमने समयसे बिसार दिये रुद्र और महेशने उनको नहीं भुलाया है ॥ १२ ॥

शि०पु० ॥१९॥

रूपवेश कृत्य आसन वाहन और आयुधादिमें हमारी साम्यता थी ॥ १३ ॥ हे सौम्य ! मेरे ज्ञानके विमुख होनेसे तुम्हें अज्ञानता आगई मेरा ज्ञान होनेसे ऐसा नहीं होता ज्ञान और रूप महेशके तुल्य होजाता है ॥ १४ ॥ इस कारण उस ज्ञानकी सिद्धिके निमित्त ॐकार नामक मंत्र जप करो यह अभिमानका दूर करनेवाला है ॥ १५ ॥ सोई निज मंत्र उपदेश करते हैं यह ॐकार मेरे मुखसे उत्पन्न होनेसे मेरेही रूपका बोधक हैं और महामंगल करनेवाला है॥१६॥यह वाचकहै औरमैंवाच्यहूं. यह मंत्र मेरा आत्मा है उसके स्मरणसे मेरास्मरण होता है ॥ १७ ॥ उत्तरकी ओरके मुखसे अकार' पश्चिमके मुखसे उकार, दक्षिणके मुखसे मकार, पूर्वके मुखसे बिन्दु ॥ १८ ॥ मध्यके मुखसे नाद

रूपेवेशेचकृत्येचवाहनेचासनेतथा ॥ आयुधादौचमत्साम्यमस्माभिस्तत्कृतेकृतम् ॥ १३ ॥ मद्ध्यानविरहाद्वत्सौमौढ्यंवामेवमा गतम्मज्ज्ञानेसतिनैवंस्यान्मानंरूपेमहेशवत् ॥ १४ ॥ तस्मान्मज्ज्ञानसिद्ध्यर्थंमंत्रमोंकारनामकम् ॥ इतःपरंप्रजपतंमामकंमानभं जनम् ॥ ॥ १५ ॥ उपादिशं निजं मंत्रमोंकारमुरुमंगलम् ॥ ओंकारो मन्मुखाज्जज्ञे प्रथमं मत्प्रबोधकः ॥ १६ ॥ वाचकोऽयमहं वाच्योमंत्रोऽयंहिमदात्मकः ॥ तदनुस्मरणंनित्यंममानुस्मरणंभवेत् ॥ १७ ॥ अकारउत्तरात्पूर्वमुकारः पश्चिमाननात् ॥ मका रोदक्षिणमुखाद्बिंदुःप्राङ्मुखतस्तथा ॥ १८ ॥ नादोमध्यमुखादेवंपंचधाऽसौविजृंभितः ॥ एकीभूतःपुनस्तद्वदोमित्येकाक्षरोभवत् ॥ १९ ॥ नामरूपात्मकंसर्ववेदभूतकुलद्वयम् ॥ व्याप्तमेतेनमंत्रेणशिवशक्त्योश्चबोधकः ॥ २० ॥ अस्मात्पंचाक्षरंजज्ञेबोधकंसक लस्यतत् ॥ आकारादिक्रमेणैवनकारादियथाक्रमम् ॥ २१ ॥

वि०सं०१ अ० १०

उत्पन्न हुआ. इस प्रकार पांच प्रकारसे वह निर्गत हुआ वह सब एक होकर 'ॐ' ऐसा एकाक्षर होजाता है ॥ १९ ॥ यह सब नाम रूपात्मक वेदभूत दोनों कुल अर्थात् स्त्रीपुरुष भेदसे भौतिक शरीर वर्ग दोका भेदवाला है वह इसी मंत्रसे व्याप्त है और शिवशक्तिका बोधक है ॥ २० ॥ इसी ॐकारसे सब जगत्का बोधक प्रवण उत्पन्न हुआ है अकारादिक्रमसे अर्थात् अकारसे नकार उकारसे मकार मकारसे 'शि' बिन्दुसे 'वा' नादसे 'य' प्रगट हुआ है ॥ २१ ॥

❖ उपरोक्त शिव महापुराण के प्रकरण से सिद्ध हुआ कि श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शकंर जी की माता श्री दुर्गा देवी (अष्टंगी देवी) है तथा पिता सदाशिव अर्थात् "काल ब्रह्म" है जिसने श्रीमद्भगवत गीता का ज्ञान श्री कृष्ण जी में प्रवेश करके बोला था। इसी को क्षर पुरूष, क्षर ब्रह्म (ज्योति निरंजन) काल ब्रह्म भी कहा गया है।

यही प्रमाण श्री मद्भगवत गीता अध्याय 14 श्लोक 3 से 5 में भी है कि रज् (रजगुण ब्रह्मा), सत् (सतगुण विष्णु), तम् (तमगुण शंकर) तीनों गुण प्रकृति अर्थात् दुर्गा देवी से उत्पन्न हुए हैं। प्रकृति तो सब जीवों को उत्पन्न करने वाली माता है। मैं (गीता ज्ञान दाता) सब जीवों का पिता हूँ। मैं दुर्गा (प्रकृति) के गर्भ में बीज स्थापित करता हूँ जिससे सबकी उत्पत्ति होती है।

ये तीनों गुण (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) ही जीवात्मा को शरीर में बाँधते हैं यानि सब जीवों को काल के जाल में फसांकर रखने वाले ये ही तीनों देवता हैं।

यही प्रमाण गीता अध्याय 7 श्लोक 12-15 में है कि जिनकी बुद्धि तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) से मिलने वाले क्षणिक लाभ तक सीमित है यानि जिनका ज्ञान हरा जा चुका है, वे राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए, मनुष्यों में नीच, दूषित कर्म करने वाले मूर्ख हैं जो मुझे (गीता ज्ञान दाता को) नहीं भजते।

विशेष :- श्री शिव पुराण के विद्येश्वर संहिता खण्ड-1 अध्याय 9 के श्लोक 40-46 तथा अध्याय 5 के श्लोक 26-31 की फोटोकॉपी ऊपर लगी हैं। इनमें कहा है कि काल ब्रह्म ने कहा है कि जीवों को जन्म-मृत्यु के चक्र में रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव (ये तीनों गुण यानि तीनों देवता) डालते हैं। अपना बचाव कर रहा है। यह (काल ब्रह्म) इस प्रकार कपटयुक्त कार्य करता है।

गीता अध्याय 7 श्लोक 12 में इसी ने कहा है कि जो कुछ तीनों गुणों यानि रजगुण ब्रह्मा से उत्पत्ति, सतगुण विष्णु से स्थिति तथा तमगुण शिव से जो संहार हो रहा है, इसका निमित मैं ही हूँ। परम अक्षर ब्रह्म यानि कबीर जी ने यथार्थ ज्ञान अपनी प्रिय आत्मा संत गरीबदास (छुड़ानी वाले) को बताया। उन्होंने अपनी वाणी में उसे समझाया। कहा कि अकेले ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव इसके कारण नहीं हैं।

वाणी :- ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर, माया और धर्मराया कहिए।
इन पाँचों मिल प्रपंच बनाया, वाणी हमरी लहिए।।
इन पाँचों मिल जीव अटकाए। जुगन जुगन हम आन छुड़ाए।।

पेश है गीता अध्याय 14 श्लोक 4-5 की फोटोकॉपी :-

(गीता अध्याय 14 श्लोक 4 की फोटोकॉपी)

सर्वयोनिषु, कौन्तेय, मूर्तयः, सम्भवन्ति, याः,
तासाम्, ब्रह्म, महत्, योनिः, अहम्, बीजप्रदः, पिता ॥ ४ ॥

तथा—

कौन्तेय	= हे अर्जुन!	**तासाम्**	= उन सबकी
सर्वयोनिषु	= नाना प्रकारकी सब योनियोंमें	**योनिः**	= गर्भ धारण करनेवाली माता है (और)
याः	= जितनी		
मूर्तयः	= मूर्तियाँ अर्थात् शरीरधारी प्राणी	**अहम्**	= मैं
सम्भवन्ति	= उत्पन्न होते हैं,	**बीजप्रदः**	= बीजको स्थापन करनेवाला
महत्, ब्रह्म	= प्रकृति (तो)	**पिता**	= पिता हूँ।

(गीता अध्याय 14 श्लोक 5 की फोटोकॉपी)

सत्त्वम्, रजः, तमः, इति, गुणाः, प्रकृतिसम्भवाः,
निबध्नन्ति, महाबाहो, देहे, देहिनम्, अव्ययम् ॥ ५ ॥

तथा—

महाबाहो	= हे अर्जुन!	**गुणाः**	= तीनों गुण
सत्त्वम्	= सत्त्वगुण,	**अव्ययम्**	= अविनाशी
रजः	= रजोगुण और		
तमः	= तमोगुण—	**देहिनम्**	= जीवात्माको
इति	= ये	**देहे**	= शरीरमें
प्रकृतिसम्भवाः	= प्रकृतिसे उत्पन्न	**निबध्नन्ति**	= बाँधते हैं।

यही सच्चाई छः सौ वर्ष पूर्व कबीर जी ने बताई थी। जो आज सब ग्रन्थों से प्रमाणित हुई है। कृपया पढ़ें इसी पुस्तक के पृष्ठ 411 पर।

''छठा अध्याय''

''श्री ब्रह्मा, विष्णु व शंकर जी ही तीन देवता हैं, ये ही तीन गुण हैं।''

प्रश्न 29 :- यह कहाँ प्रमाण है कि रजगुण ब्रह्मा है, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शंकर है?

उत्तर :- प्रमाण नं. 1. श्री मार्कण्डेय पुराण (सचित्र मोटा टाईप गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित) के अध्याय 25 में 131 पृष्ठ पर कहा है कि रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शंकर, तीनों ब्रह्म की प्रधान शक्तियाँ है, ये ही तीन देवता हैं। ये ही तीन गुण हैं।

पेश है प्रमाण के लिए संक्षिप्त मार्कण्डेय पुराण से संबंधित प्रकरण की फोटोकॉपी :-

एक ही परमात्माके त्रिविध रूप, ब्रह्माजीकी आयु आदिका मान तथा सृष्टिका संक्षिप्त वर्णन १३१

भीतरसे ब्रह्माजी प्रकट होते हैं—यह बात तुम्हें बतलायी जा चुकी है। यद्यपि ब्रह्माजी सम्पूर्ण जगत्‌की उत्पत्तिके स्थान और निर्गुण हैं, तथापि रजोगुणका उपभोग करते हुए सृष्टिमें प्रवृत्त होते हैं और ब्रह्माके कर्तव्यका पालन करते हैं। फिर परमेश्वर सत्त्वगुणके उत्कर्षसे युक्त हो श्रीविष्णुका स्वरूप धारणकर धर्मपूर्वक प्रजाका पालन करते हैं। फिर तमोगुणकी अधिकतासे युक्त हो रुद्ररूप धारण करके सम्पूर्ण जगत्‌का संहार करते और निश्चिन्त सोते हैं। इस प्रकार सृष्टि, पालन और संहार—इन तीनों कालोंमें तीन गुणोंसे युक्त होकर भी वे परमेश्वर वास्तवमें निर्गुण ही हैं। इस तरह स्वयम्भू परमात्माकी तीन अवस्थाएँ होती हैं। रजोगुणप्रधान ब्रह्मा, तमोगुणप्रधान रुद्र और सत्त्वप्रधान विश्वपालक विष्णु हैं। ये ही तीन देवता हैं और ये ही तीन गुण हैं।

❖ प्रमाण नं. 2. श्री देवी महापुराण संस्कृत व हिन्दी अनुवाद {श्री वैंकटेश्वर प्रैस बम्बई (मुंबई) से प्रकाशित} में तीसरे स्कन्ध अध्याय 5 श्लोक 8 में लिखा है कि शंकर भगवान बोले, हे मातः! यदि आप हम पर दयालु हैं तो मुझे तमोगुण, ब्रह्मा रजोगुण तथा विष्णु सतोगुण युक्त क्यों किया?

पेश है प्रमाण के लिए श्री देवी महापुराण तीसरा स्कंध के अध्याय 5 से संबंधित प्रकरण की फोटोकॉपी :-

वह यथार्थ नहीं जानते, जो कहते हैं कि यह जगत् हरि हर ब्रह्माका किया हुआ है. यह अन्यथा कहते हैं यहतीनों देवता आपकेही किये हैं, और चराचर जगत् निर्माण करते हैं ॥४॥ भूमि, वायु, आकाश, अग्नि, जलादिके गुणोंसे यह जगत् होता है; यदि यह हो तो विना तुम्हारी चित्कलाके यह जगत् स्फुट कैसे होता ? ॥ ५ ॥ यह विष्णु अज शिवके द्वारा कल्पना किया हुआ होता है, हे मातः ! इसमें आप अनेक वेष और कुतूहलसे यथारुचि विलास करती हुई ॥ ६ ॥ सब लोकके सृजनकरनेकी इच्छा करनेवाले हरि ब्रह्मा और शिव यह सब तुम्हारे चरणारविंदकी भक्ति और प्रीतिको प्राप्त होकर कर सकते हैं ॥ ७ ॥ हे मातः ! यदि हमारे ऊपर सदा आप दयायुक्त हो तो हमको तमोगुणमें किस प्रकार प्रधान किया है, ब्रह्मा रजोगुण और हरि सत्त्वगुण

न च विदंति वदंति च येऽन्यथा हरिहराजकृतं निखिलं जगत् ॥ तव कृतास्त्रय एव सदैव ते विरचयंति जगत्सचराचरम् ॥ ४ ॥ अव निवायुखवह्निजलादिभिः सविषयैः सगुणैश्च जगद्भवेत् ॥ यदि तदा कथमद्य च तत्स्फुटंप्रभवतीति तवांब कलामृते ॥ ५ ॥ भवसि सर्वमिदं सचराचरं त्वमजविष्णुशिवाकृतिकल्पितम् ॥ विविधवेषविलासकुतूहलैर्विरमसे रमसेऽब यथारुचि ॥ ६ ॥ सकललोकसिसृक्षुरहं हरिः कम लभूश्च भवाम यदांबिके ॥ तव पदांबुजपांसु परिग्रहं समधिगम्य तदा ननु चक्रिम ॥ ७ ॥ यदि दयार्द्रमना न सदांऽबिके कथमहं विहितश्च तमोगुणः ॥ कमलजश्च रजोगुणसंभवः सुविहितः किमु सत्त्वगुणो हरिः ॥ ८ ॥ यदि न ते विषमा मतिरंबिके कथमिदं बहुधा विहितं जगत् ॥ सचिवभूपतिभृत्यजनावृतं बहुधनैरधनैश्च समाकुलम् ॥ ९ ॥ तव गुणास्त्रय एव सदा क्षमाः प्रकटनावनसंहरणेषु वै ॥ हरिहरद्रु हिणाश्च क्रमात्त्वया विरचितास्त्रिजगतां किल कारणम् ॥ १० ॥ परिचितानि मया हरिणा तथा कमलजेन विमानगतेन वै ॥ पथि गतैर्भु वनानि कृतानि वा कथय केन भवानि नवानि च ॥ ११ ॥

युक्त किये ॥ ८ ॥ हे मातः ! यदि आपकी विषममति नहीं है तो यह जगत् अनेकप्रकारका क्यों किया है? राजा मंत्री भूपति दासजन तथा धनी निर्धनीसे युक्त क्यों किया है ? ॥९॥ तुम्हारे तीनों गुण सृजन पालन संहारमें स्थित हैं उन्हींसे आपने हरि हर और ब्रह्माजीको जगत्के कारणरूप निर्माण किया है ॥ १० ॥ मैंने विष्णु और ब्रह्माजीने विमानमें स्थित हुए तुमको जाना मार्गमें स्थित हुए हमने अनेक लोक देखे कहो वह किसके किये हैं ? क्या नवीन हैं ? ॥ ११ ॥

इस देवीपुराण की फोटोकॉपी में स्पष्ट है कि श्री शिव जी ने अपनी माता देवी दुर्गा से दुःखी मन से कहा कि हे मातः! यदि आप हम पर दयालु हैं तो मेरे को तमगुण युक्त क्यों उत्पन्न किया, विष्णु को सतगुण तथा ब्रह्मा को रजगुण युक्त क्यों उत्पन्न किया? यह भाव व्यक्त करने का अर्थ यह है कि ये तीनों भी समझते हैं कि यहाँ सब जीव दुःखी हैं।

इनकी उत्पत्ति का कारण ब्रह्मा का रजगुण है जिससे प्रभावित होकर परवश हुए नर-मादा मिलन करते हैं। जीव उत्पन्न होते हैं। ऋषियों ने कामदेव से बचने के लिए घोर तप किए। एकांत वास किया। लेकिन अंत में हार गए। स्त्री भोग किया। विष्णु जी के सतगुण के प्रभाव से एक-दूसरे में मोह उत्पन्न होता है।

जैसे द्रोणाचार्य को पता चला कि उनका पुत्र अश्वथामा युद्ध में मर गया तो वह पुत्र मोह के कारण हथियार भी नहीं उठा सका। इतना बेहाल हो गया कि युद्ध नहीं कर सका। कितना बलवान निपुण योद्धा धनुषधारी था। कतई टूट गया।

जब श्रवण को राजा दशरथ का तीर लगा और वह मर गया। श्रवण भक्त के माता-पिता को पता चला तो रो-रो कर तड़फ-तड़फकर प्राण त्याग दिए तथा राजा दशरथ को श्राप भी दे दिया कि तुम भी हमारी तरह पुत्र वियोग में मरोगे। ऐसा ही हुआ। जब श्री रामचन्द्र पुत्र दशरथ वनवास में जाने लगे तो राजा दशरथ पुत्र मोह के कारण पुत्र को देखने के लिए महल पर चढ़ गया। कुछ दूर रामचन्द्र चला गया तो महल के ऊपर बने चौबारे के ऊपर चढ़कर देखने लगा। फिर चौबारे की तीन फुट ऊँची मंडेर पर चढ़ गया। पैर फिसलकर गिर गया। गिरते ही मर गया। यह सतगुण विष्णु से स्थिति होती है यानि एक-दूसरे से मोह बनाकर काल के जाल में फंसे रहें।

शिव जी के तमगुण से क्रोधवश जीव झगड़ा करके कत्ल कर देता है। राजा लोग आपस में लड़-मरते हैं। हजारों सैनिक मारे जाते हैं। इस प्रकार संहार का कार्य श्री शिव जी तमगुण से होता है। यह सब काल ब्रह्म करवा रहा है।

इसलिए शिव जी ने दुःखी मन से अपनी माता देवी दुर्गा से प्रश्न किया था। काल ब्रह्म ने देवी जी को सख्त हिदायत दे रखी है कि मेरा व मेरे षड़यंत्र का भेद किसी को नहीं बताएगी। अपने पुत्रों को भी नहीं बताना है। यदि पता चल गया तो जब सतपुरूष का भेजा संत आएगा तो सब उसकी शरण में जाकर सत्य साधना करके मेरे लोक से चले जाएँगे। मेरी क्षुधा (भूख) कैसे शांत होगी? काल ब्रह्म (ज्योति निरंजन) के डर से देवी किसी को यह भेद नहीं बताती। परमेश्वर कबीर जी ने आकर यह भेद बताया है। दास (रामपाल दास) ने समझाया है।

☛ उपरोक्त प्रमाणों से सिद्ध हुआ कि रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी तथा तमगुण शंकर जी हैं। ये ही तीन देवता हैं, ये ही तीन गुण हैं।

प्रश्न 30 :- परमात्मा को अजन्मा, अजर-अमर कहते हैं। उपरोक्त प्रकरण तथा प्रमाणों से सिद्ध हुआ कि श्री ब्रह्मा श्री विष्णु तथा श्री शंकर तीनों नाशवान हैं, फिर अविनाशी परमात्मा कौन है, क्या ब्रह्मा, विष्णु तथा शंकर और काल ब्रह्म परमात्मा नहीं हैं? प्रमाण सहित बताएँ :-

उत्तर :- पहले स्पष्ट करता हूँ कि श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु, श्री शंकर तथा ब्रह्म परमात्मा है या नहीं। यह तो आपने अपने प्रश्न में ही सिद्ध कर दिया कि परमात्मा तो अजन्मा अर्थात् जिसका कभी जन्म न हुआ हो, वह होता है, पूर्वोक्त विवरण तथा प्रमाणों से सिद्ध हो चुका है कि ब्रह्मा, विष्णु और शंकर के माता-पिता हैं। इनका पिता ब्रह्म भी नाशवान है, इसका भी जन्म हुआ है, इससे स्वसिद्ध हुआ कि ये परमात्मा नहीं हैं।

अब प्रश्न रहा फिर अविनाशी कौन है? इसके उत्तर में श्रीमद्भगवत गीता से ही प्रमाणित करते हैं कि अविनाशी परमात्मा गीता ज्ञान देने वाले (ब्रह्म) से अन्य है।

श्रीमद्भगवत गीता अध्याय 2 श्लोक 12, गीता अध्याय 4 श्लोक 5, गीता अध्याय 10 श्लोक 2 में गीता ज्ञान दाता ने अपनी स्थिति स्पष्ट कर दी कि मेरी उत्पत्ति हुई है, मैं जन्मता-मरता हूँ, अर्जुन मेरे और तेरे बहुत जन्म हो चुके हैं, मैं भी नाशवान हूँ।

गीता अध्याय 2 श्लोक 17 में कहा है कि अविनाशी तो उसको जान जिसको मारने में कोई भी सक्षम नहीं है और जिस परमात्मा ने सर्व की रचना की है, अविनाशी परमात्मा का यह प्रथम प्रमाण हुआ।

❖ प्रमाण नं. 2 : श्रीमद्भगवत गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में तीन पुरूष (प्रभु) कहे हैं। गीता अध्याय 15 श्लोक 16 में कहा है कि इस लोक में दो पुरूष प्रसिद्ध हैं :- क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष। ये दोनों प्रभु तथा इनके अन्तर्गत सर्व प्राणी नाशवान हैं, आत्मा तो सबकी अमर है।

गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में कहा है कि उत्तम पुरूष अर्थात् पुरूषोत्तम तो कोई अन्य ही है, जिसे परमात्मा कहा गया है जो तीनों लोकों में प्रवेश करके सबका धारण-पोषण करता है, वह वास्तव में अविनाशी है।

गीता अध्याय 7 श्लोक 29 में कहा है कि जो साधक केवल जरा (वृद्धावस्था), मरण (मृत्यु), दुःख से छूटने के लिए प्रयत्न करते हैं। वे ''तत् ब्रह्म'' को जानते हैं, सब कर्मों तथा सम्पूर्ण अध्यात्म से परिचित हैं।

गीता अध्याय 8 श्लोक 1 में अर्जुन ने पूछा कि "तत् ब्रह्म" क्या है? गीता ज्ञान दाता ने अध्याय 8 श्लोक 3 में उत्तर दिया कि वह "परम अक्षर ब्रह्म'' है अर्थात् परम अक्षर पुरूष है। (पुरूष कहो चाहे ब्रह्म) गीता अध्याय

15 श्लोक 17 में जो ''उत्तम पुरूषः तु अन्यः परमात्मा इति उदाहृतः'' कहा है, वह "परम अक्षर ब्रह्म" है, इसी को पुरूषोत्तम कहा है।

❑ **स्पष्टीकरण :- गीता अध्याय 15 श्लोक 18 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि मैं उन सर्व प्राणियों से उत्तम अर्थात् शक्तिमान हूँ जो मेरे 21 ब्रह्माण्डों में रहते हैं, इसलिए लोकवेद अर्थात् दन्त कथा के आधार से मैं पुरूषोत्तम प्रसिद्ध हूँ।**

वास्तव में पुरूषोत्तम तो गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में स्पष्ट कर दिया। उत्तम पुरूष अर्थात् पुरूषोत्तम तो क्षर पुरूष (गीता ज्ञान दाता) तथा अक्षर पुरूष (जो 7 शंख ब्रह्माण्डों का स्वामी है) से अन्य ही है, वही परमात्मा कहा जाता है। वह सर्व का धारण-पोषण करता है, वास्तव में अविनाशी है। वह "परम अक्षर ब्रह्म" है जो असंख्य ब्रह्माण्डों का मालिक है जो सर्व सृजनहार है, कुल का मालिक है अर्थात् परमात्मा है।

प्रश्न 31 :- आप पूर्ण मोक्ष किसे मानते हैं?

उत्तर :- गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में वर्णन है कि तत्वदर्शी सन्त की प्राप्ति के पश्चात् तत्वज्ञान रूपी शस्त्र से अज्ञान को काटकर अर्थात् अच्छी तरह ज्ञान समझकर उसके पश्चात् परमेश्वर के उस परमपद की (सत्यलोक की) खोज करनी चाहिए। जहाँ जाने के पश्चात् साधक फिर लौटकर संसार में कभी नहीं आते अर्थात् उनका जन्म कभी नहीं होता। जिस परमात्मा ने सर्व रचना की है, केवल उसी की भक्ति पूजा करो। पूर्ण मोक्ष उसी को कहते हैं जिसकी प्राप्ति के पश्चात् पुनः जन्म न हो। जन्म-मरण का चक्र सदा के लिए समाप्त हो जाए।

प्रश्न 32 :- क्या गीता ज्ञान दाता ब्रह्म की भक्ति से पूर्ण मोक्ष संभव है?

उत्तर :- नहीं।

प्रश्न 33 :- गीता अध्याय 8 श्लोक 16 में प्रमाण है कि गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि हे अर्जुन! मुझे प्राप्त होकर पुनर्जन्म नहीं होता। आप कैसे कहते हैं कि ब्रह्म भक्ति से पूर्ण मोक्ष संभव नहीं।

उत्तर :- श्री देवी महापुराण (सचित्र मोटा टाईप केवल हिन्दी गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित) के सातवें स्कन्ध के अध्याय 36 में प्रमाण है कि श्री देवी जी ने राजा हिमालय को उपदेश देते हुए कहा है कि हे राजन! अन्य सब बातों को छोड़कर मेरी भक्ति भी छोड़कर केवल एक ऊँ नाम का जाप कर, "ब्रह्म" प्राप्ति का यही एक मंत्र है, इससे संसार के उस पार जो ब्रह्म है, उसको पा जाओगे, तुम्हारा कल्याण हो। वह ''ब्रह्म'' ब्रह्मलोक रूपी दिव्य आकाश में रहता है।

पेश है श्रीमद्देवीभागवत (देवी पुराण) के सातवें स्कंद के अध्याय 36 से संबंधित प्रकरण की फोटोकॉपी :-

देवीके द्वारा हिमालयको ज्ञानोपदेश—ब्रह्मस्वरूपका वर्णन

श्रीदेवीजी कहने लगीं—पर्वतराज! इस प्रकार योगयुक्त होकर मुझ ब्रह्मस्वरूपा देवीका ध्यान करे। यह ध्यान आसनपर भलीभाँति बैठकर अहैतुकी भक्तिके साथ करना चाहिये। उस ब्रह्मका क्या स्वरूप है—यह बतलाया जाता है। जो प्रकाशस्वरूप, सबके अत्यन्त समीपमें स्थित, हृदयरूप गुहामें स्थित होनेके कारण 'गुहाचर' नामसे प्रसिद्ध और महान् पद अर्थात् परम प्राप्य है—जितने भी चेष्टा करनेवाले, श्वास लेनेवाले, आँखोंको खोलने-मूँदनेवाले प्राणी हैं, सब उस ब्रह्ममें ही समर्पित हैं, उसीमें स्थित हैं। सत्, असत् सब कुछ वही है, वही सबके द्वारा वरण करनेयोग्य सर्वोत्कृष्ट है। वह समस्त प्रजाके ज्ञानसे परे है—अर्थात् किसीकी बुद्धिमें आनेवाला नहीं है। यह तुम जानो। जो परम प्रकाशरूप है, जो सूक्ष्मसे भी अत्यन्त सूक्ष्म है, जिसमें सम्पूर्ण लोक और उन लोकोंमें निवास करनेवाले प्राणी स्थित हैं,

वही यह 'अक्षर ब्रह्म' है, वही सबके प्राण है, वही सबकी वाणी है और वही सबके मन है। वह यह परम सत्य और अमृत—अविनाशी तत्त्व है। सौम्य! उस वेधनेयोग्य लक्ष्यका तुम वेधन करो—मन लगाकर उसमें तन्मय हो जाओ।

सौम्य! उपनिषद्में कथित महान् अस्त्ररूप धनुष लेकर उसपर उपासनाद्वारा तीक्ष्ण किया हुआ बाण संधान करो और फिर भावानुगत चित्तके द्वारा उस बाणको खींचकर उस अक्षररूप ब्रह्मको ही लक्ष्य बनाकर वेधन करो। प्रणव (ॐ) धनुष है, जीवात्मा बाण है और ब्रह्मको उसका लक्ष्य कहा जाता है। प्रमादरहित—अत्यन्त तत्परतासे साधन-संलग्न होकर उसका वेधन करना चाहिये और बाणके समान उसमें तन्मय हो जाना चाहिये। जिस ब्रह्ममें स्वर्ग, पृथ्वी, अन्तरिक्ष (स्वर्ग और पृथ्वीके बीचका आकाश), सम्पूर्ण प्राणोंके सहित इन्द्रिययुक्त मनबुद्धिरूप अन्तःकरण ओत-प्रोत है, उस एकमात्र परमात्माको ही जाने, दूसरी सब बातोंको छोड़ दे। यही अमृतरूप परमात्माके पास पहुँचानेवाला पुल है। संसार-समुद्रसे पार होकर अमृतस्वरूप परमात्माको प्राप्त करानेका यही सुलभ साधन है।

इस आत्माका 'ॐ' के जपके साथ ध्यान करो। इससे अज्ञानमय अन्धकारसे सर्वथा परे और संसार-समुद्रसे उस पार जो ब्रह्म है, उसको पा जाओगे। तुम्हारा कल्याण हो। जो सदा जाननेवाला, जो सब ओरसे सब कुछ जाननेवाला है, जिसकी जगत्में यह महिमा है, वह यह सबका आत्मा ब्रह्म ब्रह्मलोकरूप दिव्य आकाशमें स्थित है।

भावार्थ है कि ब्रह्म साधना का केवल एक ओम् (ॐ) नाम का जाप है, इससे ब्रह्म की प्राप्ति होती है और वह साधक ब्रह्म लोक में चला जाता है। इसी गीता अध्याय 8 श्लोक 16 में कहा है कि ब्रह्म लोक सहित सर्व लोक पुनरावर्ती में हैं अर्थात् ब्रह्मलोक में गए साधक का भी पुनर्जन्म होता है। ब्रह्म की भक्ति से पूर्ण मोक्ष नहीं होता। इस गीता अध्याय 8 श्लोक 16 का अनुवाद (गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित गीता में तथा अन्य प्रकाशन की गीता में) गलत किया है।

पेश है फोटोकॉपी गीता अध्याय 8 श्लोक 16 की (गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित) :-

आब्रह्मभुवनात्, लोकाः, पुनरावर्तिनः, अर्जुन,
माम्, उपेत्य, तु, कौन्तेय, पुनर्जन्म, न, विद्यते॥ १६ ॥

क्योंकि—

अर्जुन	= हे अर्जुन!	**माम्**	= मुझको
आब्रह्मभुवनात्	= ब्रह्मलोकपर्यन्त	**उपेत्य**	= प्राप्त होकर
लोकाः	= सब लोक		
पुनरावर्तिनः	= पुनरावर्ती * हैं,	**पुनर्जन्म**	= पुनर्जन्म
तु	= परंतु	**न**	= नहीं
कौन्तेय	= हे कुन्तीपुत्र!	**विद्यते**	= होता;

❖ इसका वास्तविक अनुवाद इस प्रकार है :- ब्रह्म लोक तक सर्व लोक पुनरावर्ती में हैं अर्थात् ब्रह्म लोक में भी गए व्यक्तियों का पुनर्जन्म होता है जो यह नहीं जानते हैं। हे अर्जुन! मुझे प्राप्त होकर भी उनका पुनर्जन्म होता है, इस श्लोक में "विद्यते" शब्द का अर्थ "जानना" बनता है। गीता अध्याय 6 श्लोक 23 में ''विद्यात्'' शब्द का अर्थ जानना किया है। यहाँ इस श्लोक में भी ''विद्यते'' का अर्थ ''जानना'' बनता है। देखें इसी पुस्तक में इसी श्लोक की फोटोकापी में। अधिक स्पष्ट करने के लिए गीता अध्याय 8 श्लोक 15 पर्याप्त है।

मूल पाठ :— माम् उपेत्य पुनर्जन्म दुःखालयम् अशाश्वतम्
न आप्नुवन्ति महात्मनः संसिद्धिम परमाम् गताः।। (8/15)

अनुवाद :- (माम् उपेत्य) मुझे प्राप्त होकर (पुनर्जन्म) पुनर्जन्म होता है जो (अशाश्वतम्) नाशवान जीवन (दुःखालयम) दुखों का घर है। (परमाम्) परम (संसिद्धिम् गता) सिद्धि को प्राप्त (महात्मनः) महात्माजन (न आप्नुवन्ति) पुनर्जन्म को प्राप्त नहीं होते।(गीता अध्याय 8 श्लोक 15)

भावार्थ :- गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि मुझे प्राप्त होकर तो दुःखों का घर यह क्षणभंगुर जीवन जन्म-मरण होता है। जो महात्मा परम गति को प्राप्त हो जाते हैं, उनका पुनर्जन्म नहीं होता।

❖ विचारें :- यदि गीता अध्याय 8 श्लोक 1 से 10 तक का सारांश निकालें जो इस प्रकार है :- अर्जुन ने पूछा (गीता अध्याय 8 श्लोक 1) कि तत् ब्रह्म क्या है? गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 8 श्लोक 3 में उत्तर दिया कि वह "परम अक्षर ब्रह्म" है।

फिर गीता ज्ञान दाता ने अध्याय 8 श्लोक 5 व 7 में अपनी भक्ति करने को कहा है तथा गीता अध्याय 8 श्लोक 8, 9, 10 में "परम अक्षर ब्रह्म" की भक्ति करने को कहा है। अपनी भक्ति का मन्त्र गीता अध्याय 8 श्लोक 13 में

बताया है कि मुझ ब्रह्म का केवल एक ओम् (ऊँ) अक्षर है। उच्चारण करके स्मरण करता हुआ जो शरीर त्याग कर जाता है, वह परम गति को प्राप्त होता है। पूर्व में श्री देवी पुराण से सिद्ध कर आए हैं कि ऊँ का जाप करके ब्रह्म लोक प्राप्त होता है। गीता अध्याय 8 श्लोक 16 में स्पष्ट है कि ब्रह्म लोक में गए साधक का भी पुनर्जन्म होता है। इसलिए गीता अध्याय 8 श्लोक 13 में ऊँ नाम के जाप से होने वाली परम गति का वर्णन है, परन्तु गीता अध्याय 8 श्लोक 8, 9, 10 में जिस सच्चिदानन्द घन ब्रह्म अर्थात् परम दिव्य पुरूष की भक्ति करने को कहा है, उसका मन्त्र गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में लिखा है।

ऊँ, तत्, सत्, इति, निर्देशः, ब्रह्मणः, त्रिविधः, स्मृतः
ब्राह्मणाः, तेन, वेदाः, च, यज्ञाः, च विहिताः, पुरा।।

अनुवाद :- सचिदानन्द घन ब्रह्म की भक्ति का मन्त्र ''ऊँ तत् सत्'' है।

"ऊँ'' मन्त्र ब्रह्म यानि क्षर पुरूष का है। "तत्" यह सांकेतिक है जो अक्षर पुरूष का है। ''सत्'' मंत्र भी सांकेतिक मन्त्र है जो परम अक्षर ब्रह्म का है। इन तीनों मन्त्रों के जाप से वह परम गति प्राप्त होगी जो गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में कही है कि जहाँ जाने के पश्चात् साधक फिर लौटकर संसार में कभी नहीं आते।

यदि गीता अध्याय 8 श्लोक 16 का यह अर्थ सही मानें कि मुझे प्राप्त होने वाले का पुनर्जन्म नहीं होता तो गीता अध्याय 2 श्लोक 12, गीता अध्याय 4 श्लोक 5, गीता अध्याय 10 श्लोक 2, गलत सिद्ध हो जाते हैं जिनमें गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि अर्जुन! तेरे और मेरे बहुत जन्म हो चुके हैं, तू नहीं जानता, मैं जानता हूँ। मेरी उत्पत्ति को न देवता जानते, न महर्षिगण तथा न सिद्ध जानते। विचारणीय विषय यह है कि जब साध्य इष्ट का ही जन्म-मृत्यु होता है तो साधक को वह मोक्ष कैसे प्राप्त हो सकता है जिससे पुनर्जन्म नहीं होता है।

इसलिए गीता अध्याय 8 श्लोक 16 का अनुवाद जो मैंने (रामपाल दास ने) ऊपर किया है, वही सही है कि गीता ज्ञानदाता ने कहा है कि ब्रह्म लोक तक सब लोक पुनरावर्ती में हैं अर्थात् ब्रह्मलोक में गए प्राणी भी लौटकर संसार में जन्म को प्राप्त होते हैं। जो यह नहीं जानते, वे मेरी भक्ति करके भी पुनर्जन्म को प्राप्त होते हैं। इसीलिए तो गीता ज्ञान दाता ने अध्याय 18 श्लोक 62 में कहा है कि हे अर्जुन! तू सर्वभाव से उस परमेश्वर की शरण में जा, उस परमेश्वर की कृपा से ही तू परमशान्ति को तथा सनातन परमधाम अर्थात् सत्यलोक को प्राप्त होगा। यही प्रमाण गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में है कि तत्वदर्शी सन्त से तत्वज्ञान प्राप्त करके उस तत्वज्ञान रुपी शस्त्र से अज्ञान को काटकर उसके पश्चात् परमेश्वर के उस परमपद की खोज करनी चाहिए जहाँ जाने के पश्चात् साधक फिर लौटकर संसार में कभी नहीं आते।

जिस परमेश्वर से संसार रुपी वृक्ष की प्रवृति विस्तार को प्राप्त हुई है

अर्थात् जिस परमेश्वर ने संसार की रचना की है। गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि केवल उसी की भक्ति कर, सर्व का उसी से कल्याण सम्भव है।

❖ प्रमाणित हुआ कि ब्रह्म की भक्ति से पूर्ण मोक्ष सम्भव नहीं है। केवल पूर्ण परमात्मा (परम अक्षर ब्रह्म) की भक्ति से ही पूर्ण मोक्ष सम्भव है।

प्रश्न 34 :- ओम् (ऊँ) यह मन्त्र तो ब्रह्म का जाप हुआ, फिर यह क्यों कह रहे हो कि ब्रह्म की भक्ति से पूर्ण मोक्ष नहीं होता। आपने बताया कि गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में ''ऊँ तत् सत्'' इस मन्त्र के जाप से पूर्ण मोक्ष होता है। इस मन्त्र में भी तो ओम् (ऊँ) मन्त्र है।

उत्तर :- जैसे इन्जीनियर या डॉक्टर बनने के लिए शिक्षा की आवश्यकता होती है। पहले प्रथम कक्षा पढ़नी पड़ती है, फिर धीरे-धीरे पाँचवीं-आठवीं, इस प्रकार दसवीं कक्षा पास करनी पड़ती है। उसके पश्चात् आगे पढ़ाई करनी होती है। फिर ट्रेनिंग करके इन्जीनियर या डॉक्टर बना जाता है। ठीक इसी प्रकार श्री ब्रह्मा, विष्णु, शिव, गणेश तथा देवी की साधना करनी पड़ती है, मैं स्वयं करता हूँ तथा अपने अनुयाइयों से कराता हूँ। यह तो पाँचवी कक्षा तक की पढ़ाई अर्थात् साधना जानें, दूसरे शब्दों में पाँचों कमलों को खोलने की साधना है और ब्रह्म की साधना दसवीं कक्षा तक की पढ़ाई जानें अर्थात् ब्रह्मलोक तक की साधना है जो ''ऊँ'' (ओम्) का जाप करना है और अक्षर पुरुष की साधना को 14वीं कक्षा की पढ़ाई अर्थात् साधना जानो जो ''तत्'' मन्त्र का जाप है। ''तत्'' मन्त्र तो सांकेतिक है, वास्तविक मन्त्र तो इससे भिन्न है जो उपदेशी को ही बताया जाता है।

परम अक्षर पुरुष की साधना इन्जीनियर या डॉक्टर की पढ़ाई अर्थात् साधना जानो जो ''सत्'' शब्द से करनी होती है। यह ''सत्'' मन्त्र भी सांकेतिक है। वास्तविक मन्त्र भिन्न है जो उपदेशी को बताया जाता है। इसको सारनाम भी कहते हैं।

इसलिए अकेले ''ब्रह्म'' के नाम ओम् (ऊँ) से पूर्ण मोक्ष प्राप्त नहीं हो सकता। ''ऊँ'' नाम का जाप ब्रह्म का है। इसकी साधना से ब्रह्म लोक प्राप्त होता है जिसके विषय में गीता अध्याय 8 श्लोक 16 में कहा है कि ब्रह्म लोक में गए साधक भी पुनर्जन्म को प्राप्त होते हैं। पुनर्जन्म है तो पूर्ण मोक्ष नहीं हुआ जो गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में कहा है कि परमात्मा के उस परमपद की खोज करनी चाहिए जहाँ जाने के पश्चात् साधक कभी लौटकर पुनर्जन्म में नहीं आता। वह पूर्ण मोक्ष पूर्ण गुरु से शास्त्रानुकूल भक्ति प्राप्त करके ही संभव है। जो विश्व में वर्तमान में मेरे (संत रामपाल दास) अतिरिक्त किसी के पास नहीं है। जो ॐ, तत्, सत् का स्मरण करते हैं, वे ब्रह्मलोक में ॐ नाम का प्रतिफल प्राप्त नहीं करते। इसके स्मरण की कमाई ब्रह्म को दे देते हैं जिसके बदले में यह यानि काल ब्रह्म साधक को पाप मुक्त कर देता है।

प्रश्न 35 :- क्या रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शंकर (शिव) की पूजा (भक्ति) करनी चाहिए?

उत्तर :- नहीं।

प्रश्न 36 :- कहाँ प्रमाण है कि रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शंकर (शिव) की पूजा (भक्ति) नहीं करनी चाहिए?

उत्तर :- श्रीमद्भगवत गीता अध्याय 7 श्लोक 12 से 15, 20 से 23 तथा गीता अध्याय 9 श्लोक 23-24 में प्रमाण है कि जो व्यक्ति रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव की भक्ति करते हैं, वे राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए मनुष्यों में नीच, दूषित कर्म करने वाले मूर्ख मुझे भी नहीं भजते। (यह प्रमाण गीता अध्याय 7 श्लोक 12 से 15 में है। फिर गीता अध्याय 7 के ही श्लोक 20 से 23 तथा गीता अध्याय 9 श्लोक 23-24 में यही कहा है और क्षर पुरुष, अक्षर पुरुष तथा परम अक्षर पुरुष गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में जिनका वर्णन है), को छोड़कर श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव जी अन्य देवताओं में गिने जाते हैं। इन दोनों अध्यायों (गीता अध्याय 7 तथा अध्याय 9) में ऊपर लिखे श्लोकों में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि जो साधक जिस भी उद्देश्य को लेकर अन्य देवताओं को भजते हैं, वे भगवान समझकर भजते हैं। उन देवताओं को मैंने कुछ शक्ति प्रदान कर रखी है। देवताओं के भजने वालों को मेरे द्वारा किए विधान के अनुसार कुछ लाभ मिलता है। परन्तु उन देवताओं की पूजा करने वाले अल्प बुद्धि वालों का वह फल नाशवान होता है। देवताओं को पूजने वाले देवताओं के लोक में जाते हैं। मेरे पुजारी मुझे प्राप्त होते हैं।

''श्री ब्रह्मा, विष्णु, महेश जी के पुजारियों के कार्य''

➢ तीनों देवताओं की पूजा करने वाले कैसे कर्म करते हैं। प्रमाण के लिए पेश हैं कुछ उदाहरण :-

विचार करें :- रावण ने भगवान शिव जी को मृत्युंजय, अजर-अमर, सर्वेश्वर मान कर भक्ति की, दस बार शीश काट कर समर्पित कर दिया, जिसके बदले में युद्ध के समय दस शीश रावण को प्राप्त हुए, परन्तु मुक्ति नहीं हुई, राक्षस कहलाया। यह दोष रावण के गुरुदेव का है जिस नादान (नीम-हकीम) ने वेदों को ठीक से न समझ कर अपनी सोच से तमोगुण युक्त भगवान शिव को ही पूर्ण परमात्मा बताया तथा भोली आत्मा रावण ने झूठे गुरुदेव पर विश्वास करके जीवन व अपने कुल का नाश किया।

1. एक भस्मागिरी नाम का साधक था, जिसने शिव जी (तमोगुण) को ही ईष्ट मान कर शीर्षासन (ऊपर को पैर नीचे को शीश) करके 12 वर्ष तक साधना की, भगवान शिव को वचन बद्ध करके भस्मकण्डा ले लिया। भगवान शिव जी को ही मारने लगा। उद्देश्य यह था कि भस्मकण्डा प्राप्त करके भगवान

शिव जी को मार कर पार्वती जी को पत्नी बनाऊँगा। भगवान श्री शिव जी डर के मारे भाग गए, फिर श्री विष्णु जी रूप में (परमेश्वर कबीर जी) ने उस भस्मासुर को गंडहथ नाच नचा कर उसी भस्मकण्डे से भस्म किया। वह शिव जी (तमोगुण) का साधक राक्षस कहलाया। हरिण्यकशिपु ने भगवान ब्रह्मा जी (रजोगुण) की साधना की तथा राक्षस कहलाया।

2. एक समय आज (सन् 2013) से लगभग 342 वर्ष पूर्व हरिद्वार में हर की पैड़ियों पर (शास्त्र विधि रहित साधना करने वालों के) कुम्भ पर्व की प्रभी का संयोग हुआ। वहाँ पर सर्व (त्रिगुण उपासक) महात्मा जन स्नानार्थ पहुँचे। गिरी, पुरी, नाथ, नागा आदि भगवान श्री शिव जी (तमोगुण) के उपासक तथा वैष्णों, भगवान श्री विष्णु जी (सतोगुण) के उपासक हैं। प्रथम स्नान करने के लिए नागा तथा वैष्णों साधुओं में घोर युद्ध हो गया। लगभग 25000 (पच्चीस हजार) त्रिगुण उपासक मृत्यु को प्राप्त हुए। जो व्यक्ति जरा-सी बात पर नरसंहार (कत्ले आम) कर देता है, वह साधु है या राक्षस स्वयं विचार करें। आम व्यक्ति भी कहीं स्नान कर रहे हों और कोई व्यक्ति आ कर कहे कि मुझे भी कुछ स्थान स्नान के लिए देने की कृपा करें। शिष्टाचार के नाते कहते हैं कि आओ आप भी स्नान कर लो। इधर-उधर हो कर आने वाले को स्थान दे देते हैं।

इसलिए पवित्र गीता जी अध्याय 7 श्लोक 12 से 15 में कहा है कि मेरी त्रिगुणमई माया (रजगुण-ब्रह्मा जी, सतगुण-विष्णु जी, तमगुण-शिव जी) की पूजा के द्वारा जिनका ज्ञान हरा जा चुका है, वे केवल मान बड़ाई के भूखे राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए, मनुष्यों में नीच अर्थात् आम व्यक्ति से भी पतित स्वभाव वाले, दुष्कर्म करने वाले मूर्ख मेरी भक्ति भी नहीं करते।

प्रश्न 37 :- गीता ज्ञान दाता ने अपनी भक्ति से होने वाली गति (मुक्ति) यानि ब्रह्मलोक प्राप्ति को अनुत्तम (घटिया) क्यों कहा?

उत्तर :- गीता अध्याय 7 श्लोक 16 से 18 तक पवित्र गीता जी के बोलने वाला (ब्रह्म) प्रभु कह रहा है कि मेरी भक्ति (ब्रह्म साधना) भी चार प्रकार के साधक करते हैं। एक तो अर्थार्थी (धन लाभ चाहने वाले) जो वेद मंत्रों से ही जंत्र-मंत्र, हवन आदि करते रहते हैं। दूसरे आर्त्त (संकट निवार्ण के लिए वेदों के मंत्रों का जन्त्र-मंत्र हवन आदि करते रहते हैं) तीसरे जिज्ञासु जो परमात्मा के ज्ञान को जानने की इच्छा रखने वाले केवल ज्ञान संग्रह करके वक्ता बन जाते हैं तथा दूसरों में ज्ञान श्रेष्ठता के आधार पर उत्तम बन कर ज्ञानवान बनकर अभिमानवश भक्ति हीन हो जाते हैं, चौथे ज्ञानी। वे साधक जिनको यह ज्ञान हो गया कि मानव शरीर बार-बार नहीं मिलता, इससे प्रभु साधना नहीं बन पाई तो जीवन व्यर्थ हो जाएगा। फिर वेदों को पढ़ा, जिनसे ज्ञान हुआ कि (ब्रह्मा-विष्णु-शिवजी) तीनों गुणों व ब्रह्म (क्षर पुरुष) तथा परब्रह्म

(अक्षर पुरुष) से ऊपर पूर्ण ब्रह्म की ही भक्ति करनी चाहिए, अन्य देवताओं की नहीं। उन ज्ञानी उदार आत्माओं को मैं अच्छा लगता हूँ तथा मुझे वे इसलिए अच्छे लगते हैं कि वे तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु, तमगुण शिवजी) से ऊपर उठ कर मेरी (ब्रह्म) साधना तो करने लगे जो अन्य देवताओं से अच्छी है परन्तु वेदों में 'ओ३म्' नाम जो केवल ब्रह्म की साधना का मंत्र है उसी को वेद पढ़ने वाले विद्वानों ने अपने आप ही विचार - विमर्श करके पूर्ण ब्रह्म का मंत्र जान कर वर्षों तक साधना करते रहे। प्रभु प्राप्ति हुई नहीं। अन्य सिद्धियाँ प्राप्त हो गई क्योंकि पवित्र गीता अध्याय 4 श्लोक 34 तथा पवित्र यजुर्वेद अध्याय 40 मंत्र 10 में वर्णित तत्वदर्शी संत नहीं मिला, जो पूर्ण ब्रह्म की साधना तीन मंत्र से बताता है, इसलिए ज्ञानी भी ब्रह्म (काल) साधना करके जन्म-मृत्यु के चक्र में ही रह गए।

एक ज्ञानी उदारात्मा महर्षि चुणक जी ने वेदों को पढ़ा तथा एक पूर्ण प्रभु की भक्ति का मंत्र ओ३म् जानकर इसी नाम के जाप से वर्षों तक साधना की, घोर तप किया। एक मानधाता चक्रवर्ती राजा था। (चक्रवर्ती राजा उसे कहते हैं जिसका पूरी पृथ्वी पर शासन हो।) उसने अपने अन्तर्गत राजाओं को युद्ध के लिए ललकारा, एक घोड़े के गले में पत्र बांध कर सारे राज्य में घुमाया। शर्त थी कि जिसने राजा मानधाता की गुलामी (आधीनता) स्वीकार न हो उसे युद्ध करना पड़ेगा। वह इस घोड़े को पकड़ कर बांध ले। किसी ने घोड़ा नहीं पकड़ा। महर्षि चुणक जी को इस बात का पता चला कि राजा बहुत अभिमानी हो गया है। कहा कि मैं इस राजा के युद्ध को स्वीकार करता हूँ युद्ध शुरू हुआ। मानधाता राजा के पास 72 करोड़ सेना थी। उसके चार भाग करके एक भाग (18 करोड़) सेना से महर्षि चुणक पर आक्रमण कर दिया। दूसरी ओर महर्षि चुणक जी ने अपनी साधना की कमाई से चार पूतलियाँ (बम्ब) बनाई तथा राजा की चारों भाग सेना का विनाश कर दिया।

विशेष :- श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी, श्री शिव जी तथा ब्रह्म व परब्रह्म की भक्ति से पाप तथा पुण्य दोनों का फल भोगना पड़ता है, पुण्य स्वर्ग में तथा पाप नरक में व चौरासी लाख प्राणियों के शरीर में नाना यातनाऐं भोगनी पड़ती हैं। जैसे ज्ञानी आत्मा श्री चुणक जी ने जो ओ३म् नाम के जाप की कमाई की उससे कुछ तो सिद्धि शक्ति (चार पुतलियाँ बनाकर) में समाप्त कर दिया जिससे महर्षि कहलाया। कुछ साधना फल को महास्वर्ग में भोग कर फिर नरक में जाएगा तथा फिर चौरासी लाख प्राणियों के शरीर धारण करके कष्ट पर कष्ट सहन करेगा। जो 72 करोड़ प्राणियों (सैनिकों) का संहार वचन से किया था, उसका भोग भी भोगना होगा। चाहे कोई हथियार से हत्या करे, चाहे वचन रूपी तलवार से दोनों को समान दण्ड प्रभु देता है। जब उस महर्षि चुणक जी का जीव कुत्ते के शरीर में होगा उसके सिर में जख्म होगा, उसमें

कीड़े बनकर उन सैनिकों के जीव अपना प्रतिशोध लेंगे। कभी टांग टूटेगी, कभी पिछले पैरों से अर्धंग होकर केवल अगले पैरों से घिसड़ कर चलेगा तथा गर्मी-सर्दी का कष्ट असहनीय पीड़ा नाना प्रकार से भोगनी ही पड़ेगी।

इसलिए पवित्र गीता जी बोलने वाला ब्रह्म (काल) गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में स्वयं कह रहा है कि ये सर्व ज्ञानी आत्माएँ हैं तो उदार (नेक), परन्तु पूर्ण परमात्मा की तीन मंत्र की वास्तविक साधना बताने वाला तत्वदर्शी सन्त न मिलने के कारण ये सब मेरी ही (अनुत्तमाम्) अति अश्रेष्ठ मुक्ति (गति) की आस में ही आश्रित रहे अर्थात् मेरी साधना भी अश्रेष्ठ है। इसलिए पवित्र गीता जी अध्याय 18 श्लोक 62 में कहा है कि हे अर्जुन! तू सर्व भाव से उस पूर्ण परमात्मा की शरण में चला जा। जिसकी कृपा से ही तू परम शान्ति तथा सनातन परम धाम (सतलोक) को प्राप्त होगा। पवित्र गीता जी को श्री कृष्ण जी के शरीर में प्रेतवत प्रवेश करके ब्रह्म (काल) ने बोला, फिर कई वर्षों उपरांत पवित्र गीता जी तथा पवित्र चारों वेदों को महर्षि व्यास जी के शरीर में प्रेतवत प्रवेश करके स्वयं ब्रह्म (क्षर पुरुष) द्वारा लिपिबद्ध भी स्वयं ही किए हैं। इनमें परमात्मा कैसा है, कैसे उसकी भक्ति करनी है तथा क्या उपलब्धि होगी, ज्ञान तो पूर्ण वर्णन है। परन्तु पूजा की विधि केवल ब्रह्म (क्षर पुरुष) अर्थात् ज्योति निरंजन-काल तक की ही है।

पूर्ण ब्रह्म की भक्ति के लिए पवित्र गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में पवित्र गीता बोलने वाला (ब्रह्म) प्रभु स्वयं कह रहा है कि पूर्ण परमात्मा की भक्ति व प्राप्ति के लिए किसी तत्वज्ञानी सन्त को ढूंढ ले फिर जैसे वह विधि बताएं वैसे कर। पवित्र गीता जी को बोलने वाला प्रभु कह रहा है कि पूर्ण परमात्मा का पूर्ण ज्ञान व भक्ति विधि मैं नहीं जानता। अपनी साधना के बारे में गीता अध्याय 8 के श्लोक 13 में कहा है कि मेरी भक्ति का तो केवल एक 'ओ३म्' अक्षर है जिसका उच्चारण करके अन्तिम स्वांस (त्यजन् देहम्) तक जाप करने से मेरी वाली परमगति को प्राप्त होगा। फिर गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में कहा है कि जिन प्रभु चाहने वाली आत्माओं को तत्वदर्शी सन्त नहीं मिला जो पूर्ण ब्रह्म की साधना जानता हो, इसलिए वे उदारात्माऐं मेरे वाली (अनुत्तमाम्) अति अनुत्तम परमगति में ही आश्रित हैं। (पवित्र गीता जी बोलने वाला प्रभु स्वयं कह रहा है कि मेरी साधना से होने वाली गति अर्थात् मुक्ति भी अति अश्रेष्ठ है।)

गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में कहा है कि शास्त्रविधि को त्यागकर जो साधक मनमाना आचरण करते हैं अर्थात् जिन देवताओं, पित्तरों, यक्षों, भैरों-भूतों की भक्ति करते हैं और मनकल्पित मन्त्रों का जाप करते हैं, उनको न तो कोई सुख होता है, न कोई सिद्धि प्राप्त होती है तथा न उनकी गति अर्थात् मोक्ष होता है। इससे तेरे लिए हे अर्जुन! कर्तव्य (जो भक्ति करनी चाहिए) और अकर्त्तव्य (जो भक्ति न करनी चाहिए) की व्यवस्था में शास्त्र ही प्रमाण

हैं। गीता अध्याय 17 श्लोक 1 में अर्जुन ने पूछा कि हे कृष्ण! (क्योंकि अर्जुन मान रहा था कि श्री कृष्ण ही ज्ञान सुना रहा है, परन्तु श्री कृष्ण के शरीर में प्रेत की तरह प्रवेश करके काल (ब्रह्म) ज्ञान बोल रहा था जो पहले प्रमाणित किया जा चुका है)। जो व्यक्ति शास्त्रविधि को त्यागकर मनमाना आचरण करके अन्य देवताओं आदि की पूजा करते हैं, वे स्वभाव में कैसे होते हैं? गीता ज्ञान दाता ने उत्तर दिया कि सात्विक व्यक्ति देवताओं का पूजन करते हैं। राजसी व्यक्ति यक्षों व राक्षसों की पूजा तथा तामसी व्यक्ति प्रेत आदि की पूजा करते हैं। ये सब शास्त्रविधि रहित कर्म हैं। फिर गीता अध्याय 17 श्लोक 5-6 में कहा है कि जो मनुष्य शास्त्रविधि से रहित केवल मनकल्पित घोर तप को तपते हैं, वे दम्भी (ढोंगी) हैं और शरीर के कमलों में विराजमान शक्तियों को तथा मुझे भी क्रश करने वाले राक्षस स्वभाव के अज्ञानी जान।

सूक्ष्मवेद में भी परमेश्वर जी ने कहा है कि :-

''कबीर, माई मसानी सेढ़ शीतला भैरव भूत हनुमंत।
परमात्मा से न्यारा रहै, जो इनको पूजंत।।
राम भजै तो राम मिलै, देव भजै सो देव। भूत भजै सो भूत भवै, सुनो सकल सुर भेव।।''

स्पष्ट हुआ कि श्री ब्रह्मा जी (रजगुण), श्री विष्णु जी (सत्गुण) तथा श्री शिवजी (तमगुण) की पूजा (भक्ति) नहीं करनी चाहिए तथा इसके साथ-साथ भूतों, पित्तरों की पूजा, (श्राद्ध कर्म, तेरहवीं, पिण्डोदक क्रिया, सब प्रेत पूजा होती है) भैरव तथा हनुमान जी की पूजा भी नहीं करनी चाहिए।

प्रश्न 38 :- क्या गीता ज्ञान बताने वाले क्षर पुरुष (ब्रह्म) की पूजा (भक्ति) करनी चाहिए या नही?

उत्तर :- नहीं करनी चाहिए।

कारण :- गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में गीता ज्ञान बताने वाले ने अपनी पूजा से प्राप्त गति (मुक्ति) को अनुत्तम (अश्रेष्ठ) कहा है क्योंकि यह जन्मता-मरता है। अविनाशी नहीं है। जो स्वयं जन्मता व मरता है, उसके उपासक जन्म-मरण से मुक्त नहीं हो सकते। यदि पूर्ण मोक्ष चाहते हो जो गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में बताया है कि ''तत्वज्ञान प्राप्ति के पश्चात् परमेश्वर के उस परमपद की खोज करनी चाहिए जहाँ जाने के पश्चात् साधक लौटकर फिर कभी संसार में जन्म नहीं लेता।'' तो क्षर पुरुष (ब्रह्म) ''जो संसार रुपी वृक्ष की डार है'' की पूजा (भक्ति) नहीं करनी चाहिए। गीता अध्याय 8 श्लोक 3 में जिसे ''परम अक्षर ब्रह्म'' कहा है तथा गीता अध्याय 8 के श्लोक 8, 9, 10 में उसकी भक्ति करने वाला उसी को प्राप्त होता है। गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में जिसे गीता ज्ञान देने वाले ने अपने से अन्य तथा उत्तम पुरूष (पुरूषोत्तम) व परमात्मा तथा सबका धारण-पोषण करने वाला अविनाशी परमेश्वर कहा है।

प्रश्न 39 :- पूर्व में जितने ऋषि-महर्षि हुए हैं, वे सब ब्रह्म की पूजा करते और कराते थे। ''ओम्'' (ॐ) नाम को सबसे बड़ा तथा उत्तम मन्त्र जाप करने का बताते थे, क्या वे अज्ञानी थे? यदि ब्रह्म की भक्ति उत्तम नहीं है तो गीता में कोई प्रमाण बताएँ।

उत्तर :- पूर्व में बताया गया है कि यथार्थ अध्यात्म ज्ञान स्वयं परमेश्वर (परम अक्षर ब्रह्म) धरती पर सशरीर प्रकट होकर ठीक-ठीक बताता है। देखें प्रमाण वेद मन्त्रों में इसी पुस्तक के पृष्ठ 251 पर। परमेश्वर द्वारा बताए ज्ञान को सूक्ष्मवेद (तत्वज्ञान) कहा गया है। तत्वज्ञान में परमात्मा ने बताया है कि :-

गुरु बिन काहू न पाया ज्ञाना, ज्यों थोथा भुस छड़े मूढ़ किसाना।
गुरु बिन बेद पढ़ै जो प्राणी, समझे ना सार रहे अज्ञानी।।

जिन ऋषियों व महर्षियों को सत्गुरु नहीं मिला। उनकी यह दशा थी कि वेद पढ़ते थे परन्तु वेदों का सार नहीं समझ सके। वे ओम् नाम के साथ-साथ हठ योग यानि घोर तप भी करते थे जो उनकी असफलता का कारण रहा। उदाहरण के लिये श्री देवी पुराण (सचित्र मोटा टाईप, गीता प्रेस गोरखपुर से प्रकाशित) के छठे स्कन्ध के चौथे अध्याय में पृष्ठ 425 में लिखा है कि सत्ययुग के ब्राह्मण (महर्षि) वेद के पूर्ण विद्वान होते थे और श्री देवी (दुर्गा) की पूजा करते थे। देवी का मंदिर गाँव-गाँव बनवाते थे।

❖ **विचार किया जाए :- वेदों में तथा गीता में कहीं नहीं लिखा है कि श्री देवी (दुर्गा) जी की पूजा करो और उसके मंदिर बनवाओ। ऋषिजन पढ़ते थे वेद, कर्म सब वेद विरूद्ध करते थे। तो क्या खाक विद्वान थे?**

पेश है प्रमाण के लिए श्रीमद् देवीभागवत (देवी पुराण) के स्कंद 6 से संबंधित प्रकरण की फोटोकॉपी :-

[छठा स्कन्ध] * त्रिविध कर्म, युगधर्म, तीर्थ, चित्तशुद्धि और तीर्थकी महत्ता * ४२५

जनमेजयने पूछा—**महाभाग! किस युगमें कैसा धर्मका स्वरूप है—इस सम्पूर्ण विषयको विशेषरूपसे बतानेकी कृपा कीजिये।**

व्यासजी बोले—

राजन्! यह निश्चय है कि सत्ययुगमें ब्राह्मण वेदके पूर्ण विद्वान् थे। उनके द्वारा निरन्तर भगवती जगदम्बाकी आराधना होती थी। भगवतीका दर्शन करनेके लिये उनका मन सदा लालायित रहता था। गायत्रीके ध्यान, प्राणायाम और जपमें वे अपना सारा समय व्यतीत करते थे। मायाबीजका जप करना उनका प्रधान कार्य था। प्रत्येक गाँवमें शक्ति-मन्दिरका उद्घाटन हो—इस विषयकी उनके मनमें बड़ी उत्सुकता थी।

धर्मकी यही स्थिति त्रेतामें भी रही; परंतु कुछ ह्रास हो गया था। सत्ययुगकी जो स्थिति थी, वह द्वापरमें विशेषरूपसे कम हो गयी। राजन्! उन प्राचीन युगोंमें जो राक्षस समझे जाते थे, वे कलिमें ब्राह्मण माने जाते हैं, क्योंकि अबके ब्राह्मण प्रायः पाखण्ड करनेमें तत्पर रहते हैं। दूसरोंको ठगना, झूठ बोलना और वैदिक धर्म-कर्मोंसे अलग रहना—कलियुगी ब्राह्मणोंका स्वाभाविक गुण बन गया है। वे कभी वेद नहीं पढ़ते।

❖ विचार करें :- श्रीमद्भगवत गीता चारों वेदों का सारांश है। आप जी गीता जी को तो जानते ही हो, पढ़ते भी होंगे। क्या गीता में कहीं लिखा है कि 'श्री देवी' की पूजा करो?

इसी प्रकार चारों वेदों में कहीं नहीं लिखा है कि दुर्गा (श्री देवी) की पूजा करो और उसके मंदिर बनवाओ तो क्या समझा वेदों को उन महर्षियों ने? क्या खाक विद्वान थे सत्ययुग के महर्षि? उन्हीं महर्षियों का मनमाना विधान है कि ऊँ (ओम्) नाम सबसे बड़ा अर्थात् उत्तम है जो कहते थे कि ब्रह्म पूजा (भक्ति) सर्वश्रेष्ठ है। जो ब्रह्म की पूजा इष्ट देव मानकर करते थे, वे अज्ञानी थे। उनकी ब्रह्म साधना अनुत्तम गति देने वाली है।

{विशेष :- यह दशा तो सत्ययुग के ब्राह्मणों की थी। कलयुग के ब्राह्मणों (शंकराचार्य ब्राह्मण हैं, अन्य कर्मकांड भी अधिकतर ब्राह्मण ही करते व करवाते हैं तथा जो अन्य गुरूजन हैं, वे उन्हीं कलयुगी ब्राह्मणों से सुना अज्ञान प्रचार करते हैं।

इन कलयुग के गुरूजनों यानि ब्राह्मणों) के विषय में इसी श्री देवीभागवत पुराण की फोटोकॉपी में बताया है कि जो सत्ययुग में राक्षस माने जाते थे। वैसे कलयुग के ब्राह्मण हैं क्योंकि अब के ब्राह्मण प्रायः पाखंड करने में तत्पर रहते हैं। दूसरों को ठगना, झूठ बोलना और वैदिक धर्म-कर्म से अलग रहना कलयुगी ब्राह्मणों का स्वभाविक गुण बन गया है।}

गीता में प्रमाण :- श्रीमद्भगवत् अध्याय 7 श्लोक 12 से 15 में तो बताया है कि जो तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शंकर) की पूजा करने वाले राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए मनुष्यों में नीच दूषित कर्म करने वाले मूर्ख मुझे भी नहीं भजते। यह गीता ज्ञान दाता ने कहा है।

फिर गीता अध्याय 7 के ही श्लोक 16 से 18 तक में गीता ज्ञान दाता (ब्रह्म) ने कहा है कि मेरी भक्ति चार प्रकार से करते हैं। अर्थार्थी, आर्त, जिज्ञासु तथा ज्ञानी। फिर कहा कि ज्ञानी मुझे अच्छा लगता है, ज्ञानी को मैं अच्छा लगता हूँ। (गीता अध्याय 7 श्लोक 18) इस श्लोक में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि ये ज्ञानी आत्मा हैं तो उदार (अच्छी) परन्तु ये सब मेरी अनुत्तम गति अर्थात् घटिया गति में आश्रित हैं। इस श्लोक (गीता अध्याय 7 श्लोक 18) में गीता ज्ञान दाता ब्रह्म स्वयं स्वीकार कर रहा है कि मेरी भक्ति से होने वाली गति अनुत्तम (अश्रेष्ठ/घटिया) है।

गीता ज्ञान दाता ने अध्याय 7 श्लोक 19 में कहा है कि :-

बहुनाम्, जन्मानाम्, अन्ते, ज्ञानवान्, माम्, प्रपद्यते।
वासुदेवः, सर्वम्, इति, सः, महात्मा, सुदुर्लभः।।

अनुवाद :- गीता ज्ञान दाता ब्रह्म ने कहा है कि मेरी भक्ति बहुत-बहुत जन्मों के अन्त में कोई ज्ञानी आत्मा करता है अन्यथा अन्य देवी देवताओं

व भूत, पित्तरों की भक्ति में जीवन नाश करते रहते हैं। गीता ज्ञान दाता ने अपनी भक्ति से होने वाले लाभ अर्थात् गति को भी गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में अनुत्तम (घटिया) बता दिया है।

इसलिए गीता अध्याय 7 श्लोक 19 में कहा है कि :-

यह बताने वाला महात्मा मुश्किल से मिलता है कि ''वासुदेव'' ही सब कुछ है। यही सबका सृजनहार है। यही पापनाशक, पूर्ण मोक्षदायक है, यही पूजा के योग्य है। यही (वासुदेव ही) कुल का मालिक (परम अक्षर ब्रह्म) है। केवल इसी की भक्ति करो, अन्य की नहीं।

गीता ज्ञान दाता ने भी स्वयं कहा है कि ''हे अर्जुन! तू सर्वभाव से उस परमेश्वर की शरण में जा। उस परमेश्वर की कृपा से ही तू परमशान्ति को तथा सनातन परमधाम (सत्यलोक) को प्राप्त होगा।'' (यह गीता अध्याय 18 श्लोक 62 तथा 66 में प्रमाण है) फिर गीता अध्याय 2 श्लोक 17 में तथा अध्याय 18 श्लोक 46 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि ''जिस परमेश्वर से सम्पूर्ण प्राणियों की उत्पत्ति हुई है, जिससे यह समस्त जगत व्याप्त है। उस परमेश्वर की अपने स्वाभाविक कर्म करते-करते पूजा करके मनुष्य परम सिद्धि को प्राप्त हो जाता है।

फिर गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में कहा है कि तत्वज्ञान को समझकर उसके पश्चात् परमेश्वर के उस परमपद की खोज करनी चाहिए। जहाँ जाने के पश्चात् साधक लौटकर संसार में नहीं आता, जिस परमेश्वर से संसार रुपी वृक्ष की प्रवृत्ति विस्तार को प्राप्त हुई है अर्थात् जिस परमेश्वर ने सर्व की रचना की है, उसी की पूजा करो। इससे सिद्ध हुआ कि उन ऋषियों को वेद का गूढ़ रहस्य समझ नहीं आया। वे अज्ञानी रहे।

प्रश्न 40 :- गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में अपनी गति (मोक्ष) को अनुत्तम क्यों कहा?

उत्तर :- गीता ज्ञान दाता ने अध्याय 2 श्लोक 12 गीता अध्याय 4 श्लोक 5, गीता अध्याय 10 श्लोक 2 में कहा है कि अर्जुन! तेरे और मेरे बहुत जन्म हो चुके हैं। तू नहीं जानता, मैं जानता हूँ। मेरी उत्पत्ति को ऋषि-महर्षि तथा देवता नहीं जानते। तू और मैं तथा ये राजा व सैनिक बहुत बार पहले भी जन्मे हैं, आगे भी जन्मेंगे।

पाठकजन विचार करें! जब ब्रह्म कह रहा है कि मेरा भी जन्म-मरण होता है तो ब्रह्म के पुजारी को गीता अध्याय 15 श्लोक 4 वाली गति (मोक्ष) प्राप्त नहीं हो सकती जिसमें जन्म-मरण सदा के लिए समाप्त हो जाता है। साधक कभी लौटकर संसार में नहीं आता यानि जन्म-मरण सदा के लिए समाप्त हो जाता है। जब तक जन्म-मरण है, तब तक परमशान्ति नहीं हो सकती। उसके लिए गीता ज्ञानदाता ने अपनी भक्ति से होने वाली गति को अनुत्तम (घटिया) कहा है। गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में कहा है कि

परमशान्ति के लिए उस परमेश्वर (परम अक्षर ब्रह्म) की शरण में जा, उसी की कृपया से ही तू परमशान्ति को तथा सनातन परम धाम को प्राप्त होगा। गीता अध्याय 8 श्लोक 5 व 7 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि मेरी भक्ति करेगा तो युद्ध भी करना पड़ेगा, जहाँ युद्ध है, वहाँ शान्ति नहीं होती, परम शान्ति का घर दूर है। इसलिए गीता ज्ञान दाता ने अपनी गति को (ऊँ नाम के जाप से होने वाला लाभ) अनुत्तम (घटिया) बताया है।

विशेष :- गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में कहा है कि ज्ञानी आत्मा हैं तो उदार यानि परमात्मा प्राप्ति के लिए कुर्बान हैं, कठिन से कठिन साधना करते हैं, परंतु ये सब मेरी अनुत्तम गति में स्थित हैं।

उदाहरण :- एक ज्ञानी आत्मा चुणक ऋषि ने वेदों में पढ़ा कि मनुष्य जीवन अपने जीव का कल्याण करने के लिए मिलता है। एक पूर्ण परमात्मा की भक्ति करनी चाहिए। अन्य देवताओं की भक्ति नहीं करनी चाहिए। अन्य उपासना भी नहीं करनी चाहिए।

वेदों में महिमा तो परम अक्षर ब्रह्म की है, परंतु साधना ब्रह्म काल तक की है। फिर काल द्वारा ब्रह्मा जी को आकाशवाणी से तप करने को कहा था। जब ब्रह्मा जी को कमल के फूल पर बैठाकर सचेत किया था। ब्रह्मा जी ने उस तप करने के आदेश का पूर्ण परमात्मा का माना और हजार वर्ष तप किया। ब्रह्मा जी इन सब ऋषियों के जनक हैं। सब ऋषियों को ब्रह्मा जी से ज्ञान मिला। वेदों को भी पढ़ा। ब्रह्मा जी से तप लिया, वेदों से ओम् नाम लिया। घोर तप भी किया। ओम् (ॐ) नाम का जाप भी किया। इस साधना से मोक्ष नहीं मिलता। सिद्धियाँ मिल जाती हैं।

इसी आधार से ऋषि चुणक ने घोर तप किया, ओम् नाम का जाप किया जिससे सिद्धियाँ प्राप्त हो गई।

एक मानधाता चक्रवर्ती (सर्व पृथ्वी का) राजा था। उसने अपने अंतर्गत राजाओं को जाँचने के लिए एक घोड़ा छोड़ा जिसके गले में कागज पर लिखकर या ताड़ के पत्तों पर लिखकर पर्चा बांध रखा था। लिखा था कि जिस राजा को मानधाता राजा कि पराधीनता स्वीकार नहीं है, वह इस घोड़े को पकड़ ले और युद्ध के लिए तैयार हो जाए। सारी पृथ्वी के ऊपर घोड़ा घूम आया, किसी ने घोड़े को नहीं पकड़ा। सैनिक साथ चलते थे। जब घोड़ा वापिस आ रहा था तो चुणक ऋषि ने उन सैनिकों से पूछा जो घोड़ों पर सवार थे कि यह घोड़ा बिना आदमी के कैसे खाली चल रहा है? इसका सवार कहाँ है? सैनिकों ने सब वृत्तांत बताया कि इस घोड़े पर कोई नहीं बैठ सकता, यह राजा मानधाता चक्रवर्ती का है। इसके गले में पर्चा बंधा है कि जिस राजा को मानधाता राजा की पराधीनता स्वीकार नहीं है, वह इस घोड़े को पकड़कर बांध ले और युद्ध के लिए तैयार हो जाए। हम सारी पृथ्वी पर

घूमकर आए हैं। किसी की हिम्मत घोड़े को पकड़ने की नहीं हुई।

ऋषि के मन में काल की प्रेरणा हुई कि राजा को अभिमान है इसका गर्व तोड़ना है। ऋषि बोला कि यदि किसी ने युद्ध नहीं स्वीकारा तो मैं स्वीकारता हूँ। घोड़ा बांध दो, इस वृक्ष के साथ। सैनिक बोले अरे कंगाल! तेरे पास दाने तो खाने के लिए नहीं है। तू युद्ध करेगा, मानधाता राजा के साथ। मानधाता राजा के पास 72 अक्षौणी सेना है।

ऋषि बोला! कह दो तुम्हारे राजा को, करे युद्ध मेरे साथ। ऋषि चुणक ने अपने जीवन में जो डले ढोये थे, उनकी सिद्धियाँ उनके पास थी। चार पुतली (परमाणु बम) सिद्धि से बनाए। राजा ने अठारह-अठारह अक्षौणी सेना की चार टुकड़ी (भाग) बनाई। बारी-बारी युद्ध के लिए भेजी। चुणक ऋषि ने चारों पुतलियों से 72 अक्षौणी सेना नष्ट कर दी।

तत्त्वज्ञान में लिखा है जो संत गरीबदास जी को परम अक्षर ब्रह्म ने बताया था :-

गरीब, बहत्तर अक्षौणी खा गया, चुणक ऋषिश्वर एक।
देह धारे जौरा (मौत) फिरै, ये सभी काल के भेष।।

अर्थात् ऋषिश्वर यानि सब ऋषियों में श्रेष्ठ माना जाने वाले ऋषि श्रेष्ठ चुणक ने बहत्तर अक्षौणी (72 × 2 लाख = 144 लाख यानि एक करोड़ 44 लाख के लगभग) सेना का नाश सिद्धि से कर दिया यानि खा गया। ये चलती-फिरती मौत हैं जो शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण करते रहे हैं।

जो सैकड़ों वर्ष साधना की थी, उससे सिद्धियाँ मिली। वे सिद्धियाँ नष्ट कर दी। एक करोड़ चवालीस लाख के आस-पास सेना को नष्ट कर दिया। सैनिकों को मारने का पाप ऋषि के सिर धरा गया। उसके प्रतिफल में कुत्ता बनेगा। सिर में कीड़े पड़ेंगे। नरक में भी जाना होगा।

इसलिए गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में ज्ञानी आत्माओं को उदार बताया है कि परमात्मा प्राप्ति के लिए शरीर की भी परवाह नहीं करते, परंतु साधना शास्त्र विरूद्ध व अधूरी होने से मोक्ष नहीं मिलता। काल के लोक में जन्म-मृत्यु के चक्र में फंसे रह जाएँगे। इसलिए गीता ज्ञान दाता ने अपनी गति को अनुत्तम यानि अश्रेष्ठ (निकृष्ट) बताया है।

''पूजा तथा साधना में अंतर''

प्रश्न 41 :- यह भी कहते हो कि पूर्ण मोक्ष की प्राप्ति के लिए ब्रह्मा, विष्णु, शिव, गणेश तथा देवी और क्षर ब्रह्म व अक्षर ब्रह्म की साधना करनी पड़ती है। दूसरी ओर कह रहे हो कि ब्रह्मा, विष्णु, शिव अन्य देवता हैं, क्षर ब्रह्म भी पूजा (भक्ति) योग्य नहीं है। केवल परम अक्षर ब्रह्म की ही पूजा (भक्ति) करनी चाहिए?

उत्तर :- <u>पहले तो यह स्पष्ट करता हूँ कि पूजा तथा साधना में क्या अन्तर है</u>?

❖ प्राप्य वस्तु की चाह पूजा कही जाती है तथा उसको प्राप्त करने के प्रयत्न को साधना कहते हैं।

उदाहरण : जैसे हमें जल प्राप्त करना है। यह हमारा प्राप्य है। हमें जल की चाह है। जल की प्राप्ति के लिए हैण्डपम्प लगाना पड़ेगा। हैण्डपम्प लगाने के लिए जो-जो उपकरण प्रयोग किए जाएँगे, बोकी लगाई जाएगी, यह प्रयत्न है। इसी प्रकार परमेश्वर का वह परमपद प्राप्त करना हमारी चाह है, जहाँ जाने के पश्चात् साधक लौटकर संसार में नहीं आता।

हमारा प्राप्य परमेश्वर तथा उनका सनातन परम धाम है। उसको प्राप्त करने के लिए किया गया नाम जाप हवन-यज्ञ आदि-2 साधना है। उस साधना से पूज्य वस्तु परमात्मा प्राप्त होगा। जैसे प्रश्न 13 के उत्तर में स्पष्ट किया है, वही सटीक उदाहरण है। उस पूर्ण मोक्ष के लिए तीन बार में दीक्षा क्रम पूरा करना होता है।

1. प्रथम नाम दीक्षा = ब्रह्मा, विष्णु, शिव, गणेश, देवी के मन्त्रों की साधना दी जाती है।

2. दूसरी बार में क्षर ब्रह्म तथा अक्षर ब्रह्म के दो अक्षर मन्त्र जाप दिए जाते हैं जिसको सन्तों ने ''सत् नाम'' कहा है। गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में तीन नाम हैं, ''ओम्-तत्-सत्'' इस सतनाम में दो अक्षर होते हैं, एक ''ओम्'' (ऊँ) दूसरा ''तत्'' है। (यह सांकेतिक अर्थात् गुप्त नाम है जो उपदेश के समय उपदेशी को ही बताया जाता है)

3. तीसरी बार में सारनाम की दीक्षा दी जाती है जिस मन्त्र को गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में ''सत्'' कहा है, यह भी सांकेतिक है। उपदेश लेने वाले को दीक्षा के समय बताया जाता है। इस प्रकार पूर्ण मोक्ष प्राप्त होता है।

''श्री ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव जी ईश (परमात्मा) नहीं हैं''

लेखक :- हिन्दू धर्म गुरू साहेबान श्री विष्णु जी यानि श्री कृष्ण जी को जगदीश (जगत+ ईश) यानि सारे संसार का प्रभु बताते हैं। पुराणों को सत्य मानते हैं।

पेश है सबूत श्री शिव महापुराण से (जो गीताप्रेस गोरखपुर से प्रकाशित है) कि श्री विष्णु जी, श्री ब्रह्मा जी तथा श्री शिव जी ''ईश'' नहीं हैं। (ये जगदीश नहीं हैं।) इनका जन्म-मृत्यु होता है। इनका पिता काल ब्रह्म है।

पेश है शिव महापुराण (गीताप्रेस गोखपुर से प्रकाशित) के विद्येश्वर खंड के अध्याय 5-10 की फोटोकॉपी :-

पाँच कृत्योंका प्रतिपादन, प्रणव एवं पंचाक्षर-मन्त्रकी महत्ता, ब्रह्मा-विष्णुद्वारा भगवान् शिवकी स्तुति तथा उनका अन्तर्धान
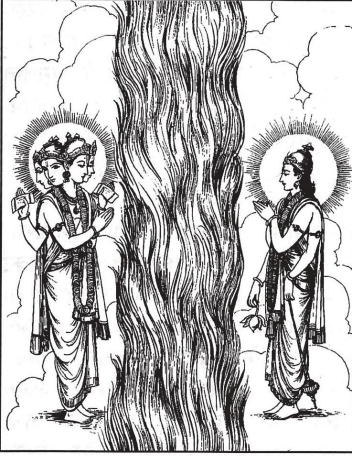
ब्रह्मा और विष्णुने पूछा—**प्रभो! सृष्टि आदि पाँच कृत्योंके लक्षण क्या हैं, यह हम दोनोंको बताइये।**

भगवान् शिव बोले—**मेरे कर्तव्योंको समझना अत्यन्त गहन है, तथापि मैं कृपापूर्वक तुम्हें उनके विषयमें बता रहा हूँ। ब्रह्मा और अच्युत! 'सृष्टि', 'पालन', 'संहार', 'तिरोभाव' और 'अनुग्रह'—ये पाँच ही मेरे जगत्-सम्बन्धी कार्य हैं, जो नित्यसिद्ध हैं। संसारकी रचनाका जो**

आरम्भ है, उसीको सर्ग या 'सृष्टि' कहते हैं। पुत्रो! तुम दोनोंने तपस्या करके प्रसन्न हुए मुझ परमेश्वरसे सृष्टि और स्थिति नामक दो कृत्य प्राप्त किये हैं। ये दोनों तुम्हें बहुत प्रिय हैं। इसी प्रकार मेरी विभूतिस्वरूप 'रुद्र' और 'महेश्वर'-में दो अन्य उत्तम कृत्य—संहार और तिरोभाव मुझसे प्राप्त किये हैं। परंतु अनुग्रह नामक कृत्य दूसरा कोई नहीं पा सकता। रुद्र और महेश्वर अपने कर्मको भूले नहीं हैं। इसलिये मैंने उनके लिये अपनी समानता प्रदान की है। वे रूप, वेष, कृत्य, वाहन, आसन और आयुध आदिमें मेरे समान ही हैं। मैंने पूर्वकालमें अपने स्वरूपभूत मन्त्रका उपदेश किया है, जो ओंकारके रूपमें प्रसिद्ध है। वह महामंगलकारी मन्त्र है। सबसे पहले मेरे मुखसे ओंकार (ॐ) प्रकट हुआ, जो मेरे स्वरूपका बोध करानेवाला है। ओंकार वाचक है और मैं वाच्य हूँ। यह मन्त्र मेरा स्वरूप ही है। प्रतिदिन ओंकारका निरन्तर स्मरण करनेसे मेरा ही सदा स्मरण होता है।

मेरे उत्तरवर्ती मुखसे अकारका, पश्चिम मुखसे उकारका, दक्षिण मुखसे मकारका, पूर्ववर्ती मुखसे विन्दुका तथा मध्यवर्ती मुखसे नादका प्राकट्य हुआ। इस प्रकार पाँच अवयवोंसे युक्त ओंकारका विस्तार हुआ है। इन सभी अवयवोंसे एकीभूत होकर वह प्रणव 'ॐ' नामक एक अक्षर हो गया।

कृपया पढ़ें प्रमाण के लिए शिव महापुराण (श्री वैकंटेश्वर प्रेस मुबंई से प्रकाशित जिसमें संस्कृत यानि मूल पाठ भी लिखा है, साथ में हिन्दी अनुवाद भी किया है) के विद्येश्वर संहिता खंड के अध्याय 5-10 की फोटोकॉपी इसी पुस्तक के पृष्ठ 150 पर।

प्रश्न 42 :- हम चारों वेदों (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद), श्रीमद्भगवत गीता, अठारह पुराणों, महाभारत ग्रंथ तथा श्रीमद्भगवत सुधा सागर को सत्य शास्त्र मानते हैं। इन्हीं सद्ग्रन्थों को आधार मानकर ज्ञान बताते हैं तथा साधना बताते हैं। श्री कृष्ण उर्फ श्री विष्णु, श्री शिव जी, श्री देवी दुर्गा की पूजा करने को कहते हैं। श्राद्ध करना बताते हैं। देव पूजा करते तथा करवाते हैं।

उत्तर :- दास (संत रामपाल दास) बताना चाहता है कि श्रीमद्भगवत गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में कहा कि :-

अध्याय 16 श्लोक 23 :- जो पुरूष यानि साधक शास्त्रविधि को त्यागकर अपनी इच्छा से मनमाना आचरण करता है। (जो शास्त्रों में वर्णित साधना नहीं है, वह साधना शास्त्रविधि त्यागकर स्वइच्छा से आचरण करना कहा है।) वह न सिद्धि को प्राप्त होता है, न परमगति को, न सुख को ही। सबूत के लिए पढ़ें गीता अध्याय 16 श्लोक 23 की फोटोकॉपी। इसी पुस्तक के पृष्ठ 86 पर।

गीता अध्याय 16 श्लोक 24 :- (हे अर्जुन!) इससे तेरे लिए कर्तव्य यानि जो साधना करनी चाहिए और अकर्तव्य यानि जो साधना नहीं करनी चाहिए, उसके लिए शास्त्र ही प्रमाण हैं। ऐसा जानकर तू शास्त्रविधि से नियत कर्म कर यानि शास्त्रों में जो नहीं लिखा, वह न कर। जो शास्त्रों में वार्णित है, वही साधना कर। पढ़ें प्रमाण के लिए गीता अध्याय 16 श्लोक 24 की फोटोकॉपी इसी पुस्तक के पृष्ठ 87 पर।

''पवित्र गीता, वेदों व पुराणों में भी पित्तर व भूत पूजा मोक्षदायक नहीं बताई है।''

प्रमाण :- हिन्दू श्रद्धालु श्राद्ध करते तथा करवाते हैं जबकि गीता अध्याय 9 श्लोक 25 में कहा है कि जो पित्तरों की पूजा करते हैं, वे पित्तरों को प्राप्त होंगे यानि पित्तर योनि प्राप्त करके पित्तर लोक में जाएँगे, मोक्ष नहीं होगा। जो भूत पूजते हैं, वे भूतों को प्राप्त होंगे यानि भूत बनेंगे। श्राद्ध करना पित्तर पूजा तथा भूत पूजा है। तेरहवीं क्रिया करना, वर्षी क्रिया करना, शमशान घाट से शेष बची हड्डियों के अवशेष उठाकर गंगा में प्रवाह करना व पुरोहितों से प्रवाह करवाना आदि-आदि सब पित्तर तथा भूत पूजा है जिससे मोक्ष नहीं दुर्गति प्राप्त होती है जिसके जिम्मेदार श्री कृष्ण जी के वकील जी हैं।

यह भी कहते है कि :- श्राद्ध कर्म तो भगवान रामचन्द्र जी ने वनवास

के दौरान भी अपने पिता श्री दशरथ जी का किया था। सीता जी ने अपने हाथों से भोजन बनाया था। जब ब्राह्मण श्राद्ध का भोजन खा रहे थे, उसी पंक्ति में सीता जी ने अपने स्वसूर दशरथ जी को भोजन खाते आँखों देखा। सीता ने घूंघट निकाला और श्री रामचन्द्र को बताया। दशरथ जी स्वर्ग से श्राद्ध खाने आए थे। इसलिए श्राद्ध कर्म करना चाहिए।

दास (लेखक) का उत्तर :- इन्होंने यानि शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण करने व करवाने वालों ने ही दशरथ जैसी नेक आत्माओं को गलत साधना करने के लिए प्रेरित करके भूत व पित्तर बनवाया। फिर वह श्राद्ध ही खाएगा। उसे स्वर्ग के पकवान कहाँ से मिलेंगे या मोक्ष कहाँ से मिलेगा?

गीता में चारों वेदों वाला ज्ञान संक्षिप्त में कहा है। गीता अध्याय 9 श्लोक 25 में श्राद्ध व पिंड आदि कर्मकांड को गलत कहा है। मार्कण्डेय पुराण में भी प्रमाण है कि वेदों में पित्तर पूजा, भूत पूजा यानि श्राद्ध करना, अविद्या यानि मूर्खों का कार्य बताया है।

पेश है प्रमाण के लिए गीता अध्याय 9 श्लोक 25 की फोटोकॉपी :-

यान्ति, देवव्रताः, देवान्, पितॄन्, यान्ति, पितृव्रताः,
भूतानि, यान्ति, भूतेज्याः, यान्ति, मद्याजिनः, अपि, माम्॥ २५॥

कारण यह नियम है कि—

देवव्रताः	= देवताओंको पूजनेवाले	**यान्ति**	= प्राप्त होते हैं (और)
देवान्	= देवताओंको	**मद्याजिनः**	= मेरा पूजन करनेवाले भक्त
यान्ति	= प्राप्त होते हैं,		
पितृव्रताः	= पितरोंको पूजनेवाले	**माम्**	= मुझको
		अपि	= ही
पितॄन्	= पितरोंको	**यान्ति**	= प्राप्त होते हैं। (इसीलिये मेरे भक्तोंका पुनर्जन्म नहीं होता।*)
यान्ति	= प्राप्त होते हैं,		
भूतेज्याः	= भूतोंको पूजनेवाले		
भूतानि	= भूतोंको		

यह अनुवाद श्री जयदयाल गोयन्दका का किया हुआ गीताप्रेस गोरखपुर से प्रकाशित है। इसमें लिखा है कि ''इसलिए मेरे भक्तों का पुनर्जन्म नहीं होता'' यह गलत लिखा है। प्रथम तो मूल पाठ में ऐसा कोई शब्द नहीं है जिसका अर्थ यह बनता हो। दूसरे गीता ज्ञान देने वाले ने गीता अध्याय 2 श्लोक 12, गीता अध्याय 4 श्लोक 5, गीता अध्याय 10 श्लोक 2 में स्पष्ट किया है कि मेरा पुनर्जन्म होता है। बार-बार जन्मता-मरता हूँ। जब गीता ज्ञान दाता स्वयं जन्मता-मरता है तो पुजारी का जन्म-मरण कैसे समाप्त हो सकता है? श्री कृष्ण के वकील साहेबानों (हिन्दू धर्मगुरूओं) ने जनता को झूठा ज्ञान बताकर भ्रमित कर रखा है। अनमोल मानव जन्म बर्बाद करवा रहे हैं।

''सातवां अध्याय''

''श्राद्ध-पिण्डदान गीता अनुसार कैसा है?''

आप (श्री कृष्ण जी के वकील) श्राद्ध व पिण्डदान करते तथा करवाते हो। गीता अध्याय 9 श्लोक 25 में स्पष्ट किया है कि भूत पूजने वाले भूतों को प्राप्त होंगे। श्राद्ध करना, पिण्डदान करना यह भूत पूजा है, यह व्यर्थ साधना है। पुराणों में कुछ वेद ज्ञान है।

''श्राद्ध-पिण्डदान के प्रति रूची ऋषि का वेदमत''

मार्कण्डेय पुराण में ''रौच्य ऋषि के जन्म'' की कथा आती है। एक रुची ऋषि था। वह ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए वेदों अनुसार साधना करता था। विवाह नहीं कराया था। रुची ऋषि के पिता, दादा, परदादा तथा तीसरे दादा सब पित्तर (भूत) योनि में भूखे-प्यासे भटक रहे थे। एक दिन उन चारों ने रुची ऋषि को दर्शन दिए तथा कहा कि बेटा! आप ने विवाह क्यों नहीं किया? विवाह करके हमारे श्राद्ध करना। रुची ऋषि ने कहा कि हे पितामहो! वेद में इस श्राद्ध आदि कर्म को अविद्या कहा है, मूर्खों का कार्य कहा है। फिर आप मुझे इस कर्म को करने को क्यों कह रहे हो?

''पित्तरों ने कहा कि यह बात सत्य है कि श्राद्ध आदि कर्म को वेदों में अविद्या अर्थात् मूर्खों का कार्य ही कहा है। तनिक भी मिथ्या नहीं है। पित्तरों ने यह भी कहा है कि बेटा! तुम जिस मार्ग पर चल रहे हो, यह मोक्ष का मार्ग है।''

❖ विचार करो :- रूची ऋषि के पूर्वज सब ब्राह्मण (ऋषि) थे। वेद पढ़ते थे। कर्मकाण्ड वेद विरूद्ध करते थे। जिस कारण से प्रेत योनि में गिरे। उन्होंने वेद तो पढ़ रखे थे। इसलिए स्वीकारा कि वेद में ऐसा ही कहा है। फिर उन पित्तरों ने वेद विरूद्ध ज्ञान बताकर रूची ऋषि को भ्रमित कर दिया क्योंकि मोह भी अज्ञान की जड़ है।

मार्कण्डेय पुराण के प्रकरण से सिद्ध हुआ कि वेदों में तथा वेदों के ही संक्षिप्त रुप गीता में श्राद्ध-पिण्डोदक आदि भूत पूजा के कर्म को निषेध बताया है, नहीं करना चाहिए। उन मूर्ख ऋषियों ने अपने पुत्र को भी श्राद्ध करने के लिए विवश किया। उसने विवाह कराया, उससे रौच्य ऋषि का जन्म हुआ, बेटा भी पाप का भागी बना लिया। पित्तर बना दिया।

आश्चर्य की बात तो यह है कि रूची ऋषि के पित्तरों ने कहा है कि बेटा! तुम जिस मार्ग पर चले हो, वह मोक्ष का मार्ग है। फिर भी रूची को भ्रमित किया कि पित्तर पूज और पित्तर बन। करवा दुर्गति जैसे उन पित्तरों की हो

रही थी। रूची सही मार्ग पर था। उसे भी नरक का भागी बना दिया।

ऐसे कर्म हैं इन हिन्दू धर्मगुरूओं के। धिक्कार है ऐसे लोगों को जो मानव जाति को भ्रमित करके उनका अनमोल मानव जीवन नष्ट करवा रहे हैं, स्वयं भी दुर्गति को प्राप्त हो रहे हैं।

पेश है प्रमाण के लिए संक्षिप्त मार्कण्डेय पुराण के अध्याय ''रौच्य मनु की उत्पत्ति-कथा'' से संबंधित प्रकरण की फोटोकॉपी :-

२५० संक्षिप्त मार्कण्डेयपुराण

रौच्य मनुकी उत्पत्ति-कथा

मार्कण्डेयजी कहते हैं— ब्रह्मन्! पूर्वकालकी बात है, प्रजापति रुचि ममता और अहङ्कारसे रहित इस पृथ्वीपर विचरते थे। उन्हें किसीसे भय नहीं था। वे बहुत कम सोते थे। उन्होंने न तो अग्निकी स्थापना की थी और न अपने लिये घर ही बना रखा था। वे एक बार भोजन करते और बिना आश्रमके ही रहते थे। उन्हें सब प्रकारकी आसक्तियोंसे रहित एवं मुनिवृत्तिसे रहते देख उनके पितरोंने उनसे कहा।

पितर बोले— बेटा! विवाह स्वर्ग और अपवर्गका हेतु* होनेके कारण एक पुण्यमय कार्य है; उसे तुमने क्यों नहीं किया? गृहस्थ पुरुष समस्त देवताओं, पितरों, ऋषियों और अतिथियोंकी पूजा करके पुण्यमय लोकोंको प्राप्त करता है। वह 'स्वाहा' के उच्चारणसे देवताओंको, 'स्वधा' शब्दसे पितरोंको तथा अन्नदान (बलिवैश्वदेव) आदिसे भूत आदि प्राणियों एवं अतिथियोंको उनका भाग समर्पित करता है। बेटा! हम ऐसा मानते हैं कि गृहस्थ आश्रमको स्वीकार न करनेपर तुम्हें इस जीवनमें क्लेश-पर-क्लेश उठाना पड़ेगा तथा मृत्युके बाद और दूसरे जन्ममें भी क्लेश ही भोगने पड़ेंगे।

रुचिने कहा— पितृगण! परिग्रहमात्र ही अत्यन्त दुःख एवं पापका कारण होता है तथा उससे मनुष्यकी अधोगति होती है, यही सोचकर मैंने पहले स्त्री-संग्रह नहीं किया। मन और इन्द्रियोंको नियन्त्रणमें रखकर जो यह आत्मसंयम किया जाता है, वह भी परिग्रह करनेपर मोक्षका साधक नहीं होता। ममतारूप कीचड़में सना हुआ होनेपर भी यह आत्मा जो परिग्रहशून्य चित्तरूपी जलसे

प्रतिदिन धोया जाता है, वह श्रेष्ठ प्रयत्न है। जितेन्द्रिय विद्वानोंको चाहिये कि वे अनेक जन्मोंद्वारा सञ्चित कर्मरूपी पङ्कमें सने हुए आत्माका सद्वासनारूपी जलसे प्रक्षालन करें।

पितर बोले— बेटा! जितेन्द्रिय होकर आत्माका प्रक्षालन करना उचित ही है; किन्तु तुम जिसपर चल रहे हो, वह मोक्षका मार्ग है। किन्तु फलेच्छारहित दान और शुभाशुभके उपभोगसे भी पूर्वकृत अशुभ कर्म दूर होता है। इसी प्रकार दयाभावसे प्रेरित होकर जो कर्म किया जाता है, वह बन्धनकारक नहीं होता। फल-कामनासे रहित कर्म भी बन्धनमें नहीं डालता। पूर्वजन्ममें किया हुआ मानवोंका शुभाशुभ कर्म सुख-दुःखमय भोगोंके रूपमें प्रतिदिन भोगनेपर ही क्षीण होता है।[1] इस प्रकार विद्वान् पुरुष आत्माका प्रक्षालन करते और उसकी बन्धनोंसे रक्षा करते हैं। ऐसा करनेसे वह अविवेकके कारण पापरूपी कीचड़में नहीं फँसता।

रुचिने पूछा— पितामहो! वेदमें कर्ममार्गको अविद्या कहा गया है, फिर क्यों आपलोग मुझे उस मार्गमें लगाते हैं?

पितर बोले— यह सत्य है कि कर्मको अविद्या ही कहा गया है, इसमें तनिक भी मिथ्या नहीं है; फिर भी इतना तो निश्चित है कि उस विद्याकी प्राप्तिमें कर्म ही कारण है। विहित कर्मका पालन न करके जो अधम मनुष्य संयम करते हैं, वह संयम अन्तमें मोक्षकी प्राप्ति नहीं कराता; अपितु अधोगतिमें ले जानेवाला होता है। वत्स! तुम तो समझते हो कि मैं आत्माका प्रक्षालन करता हूँ;

किन्तु वास्तवमें तुम शास्त्रविहित कर्मोंके न करनेके कारण पापोंसे दग्ध हो रहे हो! कर्म अविद्या होनेपर भी विधिके पालनद्वारा शोधे हुए विषकी भाँति मनुष्योंका उपकार करनेवाला ही होता है। इसके विपरीत वह विद्या भी विधिकी अवहेलनासे निश्चय ही हमारे बन्धनका कारण बन जाती है।[2] अतः वत्स! तुम विधिपूर्वक स्त्री-संग्रह करो। ऐसा न हो कि इस लोकका

आन-उपासना करना व्यर्थ है?

☛ **हिन्दू धर्म गुरूजन मूर्ति पूजा करने की राय देते हैं। यह काल ब्रह्म द्वारा दिया गलत ज्ञान है जो वेदों व गीता के विरूद्ध साधना होने से व्यर्थ है।**

सूक्ष्मवेद (तत्वज्ञान) में कबीर परमेश्वर जी ने आन-उपासना निषेध बताया है। उपासना का अर्थ है अपने ईष्ट देव के निकट जाना यानि ईष्ट को प्राप्त करने के लिए की जाने वाली तड़फ, दूसरे शब्दों में पूजा करना।

आन-उपासना वह पूजा है जो शास्त्रों में वर्णित नहीं है।

❖ **मूर्ति-पूजा आन-उपासना है :-**

इस विषय पर सूक्ष्मवेद में कबीर साहेब ने इस प्रकार स्पष्ट किया है :-

कबीर, पत्थर पूजें हरि मिले तो मैं पूजूँ पहार।
तातें तो चक्की भली, पीस खाए संसार।।

बेद पढ़ैं पर भेद ना जानें, बांचें पुराण अठारा।
पत्थर की पूजा करें, भूले सिरजनहारा।।

शब्दार्थ :- किसी देव की पत्थर की मूर्ति बनाकर उसकी पूजा करते हैं जो शास्त्रविरूद्ध है। जिससे कुछ लाभ नहीं होता। कबीर परमेश्वर ने कहा है कि यदि एक छोटे पत्थर (देव की प्रतिमा) के पूजने से परमात्मा प्राप्ति होती हो तो मैं तो पहाड़ की पूजा कर लूँ ताकि शीघ्र मोक्ष मिले। परंतु यह मूर्ति पूजा व्यर्थ है। इस (मूर्ति वाले पत्थर) से तो घर में रखी आटा पीसने वाली पत्थर की चक्की भी लाभदायक है जिससे कणक पीसकर आटा बनाकर सब भोजन बनाकर खा रहे हैं।

वेदों व पुराणों का यथार्थ ज्ञान न होने के कारण हिन्दू धर्म के धर्मगुरू पढ़ते हैं वेद, पुराण व गीता, परंतु पूजा मनमाना आचरण करके करते तथा करवाते हैं। पत्थर की मूर्ति व शिवलिंग बनवाकर पूजा करते तथा अनुयाईयों से करवाते हैं। इनको सृजनहार यानि परम अक्षर ब्रह्म का ज्ञान ही नहीं है। उसको न पूजकर अन्य देवी-देवताओं की पूजा तथा उन्हीं की काल्पनिक मूर्ति पत्थर की बनाकर पूजा का विधान लोकवेद (दंत कथा) के आधार से बनाकर यथार्थ परमात्मा को भूल गए हैं। उस परमेश्वर (तत् ब्रह्म यानि परम अक्षर ब्रह्म) की भक्ति विधि का भी ज्ञान नहीं है।

❖ विवेक से काम लेते हैं :- परमात्मा कबीर जी ने समझाने की कोशिश की है कि आप जी को आम का फल खाने की इच्छा हुई। किसी ने आपको बताया कि यह पत्थर की मूर्ति आम के फल की है। आम के फल के ढ़ेर सारे गुण बताए। आप जी उस आम के फल के गुण तो उसको खाकर प्राप्त कर सकते हैं। जो आम की मूर्ति पत्थर की बनी है, उससे आम वाला लाभ प्राप्त नहीं कर सकते। आप जी को आम का फल चाहिए। उसकी यथार्थ विधि है कि पहले मजदूरी-नौकरी करके धन प्राप्त करो। फिर बाजार में जाकर आम के फल विक्रेता को खोजो। फिर वह वांछित वस्तु मिलेगी।

इसी प्रकार जिस भी देव के गुणों से प्रभावित होकर उससे लाभ लेने के लिए आप प्रयत्नशील हैं, उससे लाभ की प्राप्ति उसकी मूर्ति से नहीं हो सकती। उसकी विधि शास्त्रों में वर्णित है। वह अपनाऐं तथा मजदूरी यानि साधना करके भक्ति धन संग्रह करें। फिर वृक्ष की शाखा रूपी देव आप जी को मन वांछित फल आपके भक्ति कर्म के आधार से देंगे।

अन्य उदाहरण :- किसी संत (बाबा) से उसके अनुयाईयों को बहुत सारे लाभ हुआ करते थे। श्रद्धालु अपनी समस्या बाबा यानि गुरू जी को बताते थे। गुरू जी उस कष्ट के निवारण की युक्ति बताते थे। अनुयाईयों को लाभ होता था। उस बाबा की मृत्यु के पश्चात् श्रद्धालुओं ने श्रद्धावश उस महात्मा की पत्थर की मूर्ति बनाकर मंदिर बनवाकर उसमें स्थापित कर दी। फिर

उसकी पूजा प्रारम्भ कर दी। उस मूर्ति को भोजन बनाकर भोग लगाने लगे। उसी के सामने अपने संकट निवारण की प्रार्थना करने लगे। उस मूर्ति में प्राण प्रतिष्ठित करने का भी आयोजन करते हैं। यह अंध श्रद्धा भक्ति है जो मानव जीवन की नाशक है।

❖ विचार करें :- एक डॉक्टर (वैद्य) था। जो भी रोगी उससे उपचार करवाता था, वह स्वस्थ हो जाता था। डॉक्टर रोगी को रोग बताता था और उसके उपचार के लिए औषधि देकर औषधि के सेवन की विधि बताता था। साथ में किन वस्तुओं का सेवन करें, किनका न करें, सब हिदायत देता था। इस प्रकार उपचार से रोगी स्वस्थ हो जाते थे। जिस कारण से वह डॉक्टर उस क्षेत्र के व्यक्तियों में आदरणीय बना था। उसकी प्रसिद्धि दूर-दूर तक थी। यदि उस डॉक्टर की मृत्यु के पश्चात् उसकी पत्थर की मूर्ति बनवाकर मंदिर बनाकर प्राण प्रतिष्ठित करवाकर स्थापित कर दी जाए। फिर उसके सामने रोगी खड़ा होकर अपने रोग के उपचार के लिए प्रार्थना करे तो क्या वह पत्थर बोलेगा? क्या पहले जीवित रहते की तरह औषधि सेवन, विधि तथा परहेज बताएगा? नहीं, बिल्कुल नहीं। उन रोगियों को उसी जैसा अनुभवी डॉक्टर खोजना होगा जो जीवित हो। पत्थर की मूर्ति से उपचार की इच्छा करने वाले अपने जीवन के साथ धोखा करेंगे। वे बिल्कुल भोले या बालक बुद्धि के हो सकते हैं।

❖ एक बात और विशेष विचारणीय है कि जो व्यक्ति कहते हैं कि मूर्ति में प्राण प्रतिष्ठित कर देने से मूर्ति सजीव मानी जाती है। यदि मूर्ति में प्राण (जीवन-श्वांस) डाल दिए हैं तो उसे आपके साथ बातें भी करनी चाहिए। भ्रमण के लिए भी जाना चाहिए। भोजन भी खाना चाहिए। ऐसा प्राण प्रतिष्ठित कोई भी मूर्ति नहीं करती है। इससे सिद्ध हुआ कि यह अंध श्रद्धा भक्ति के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है।

❖ शिव लिंग पूजा :- जो अपने धर्मगुरूओं द्वारा बताई गई धार्मिक साधना कर रहे हैं, वे पूर्ण रूप से संतुष्ट हैं कि यह साधना सही है। इसलिए वे अंधविश्वास (Blind Faith) किए हुए हैं।

इस शिव लिंग पर प्रकाश डालते हुए मुझे अत्यंत दुःख व शर्म का एहसास हो रहा है। परंतु अंधविश्वास को समाप्त करने के लिए प्रकाश डालना अनिवार्य तथा मजबूरी है। शिव लिंग (शिव जी की पेशाब इन्द्री) के चित्र में देखने से स्पष्ट होता है कि शिव का लिंग (Private Part) स्त्री की लिंगी (पेशाब इन्द्री यानि योनि) में प्रविष्ट है। इसकी पूजा हिन्दू श्रद्धालु कर रहे हैं।

शिव लिंग की पूजा कैसे प्रारम्भ हुई?

शिव महापुराण {जो वैंकटेश्वर प्रेस मुंबई से छपी है तथा जिसके प्रकाशक

हैं ''खेमराज श्री कृष्णदास प्रकाशन मुंबई (बम्बई), हिन्दी टीकाकार (अनुवादक) हैं विद्यावारिधि पंडित ज्वाला प्रसाद जी मिश्र} भाग-1 में विद्येश्वर संहिता अध्याय 5 पृष्ठ 11 पर नंदीकेश्वर यानि शिव के वाहन ने बताया कि शिव लिंग की पूजा कैसे प्रारम्भ हुई?

❖ **विद्येश्वर संहिता अध्याय 5 श्लोक 27-30 :-** पूर्व काल में जो पहला कल्प जो लोक में विख्यात है। उस समय महात्मा ब्रह्मा और विष्णु का परस्पर युद्ध हुआ।(27) उनके मान को दूर करने को उनके बीच में उन निष्कल परमात्मा ने स्तम्भरूप अपना स्वरूप दिखाया।(28) तब जगत के हित की इच्छा से निर्गुण शिव ने उस तेजोमय स्तंभ से अपने लिंग आकार का स्वरूप दिखाया।(29) उसी दिन से लोक में वह निष्कल शिव जी का लिंग विख्यात हुआ।(30)

❖ **विद्येश्वर संहिता पृष्ठ 18 अध्याय 9 श्लोक 40-43 :-** इससे मैं अज्ञात स्वरूप हूँ। पीछे तुम्हें दर्शन के निमित साक्षात् ईश्वर तत्क्षण ही मैं सगुण रूप हुआ हूँ।(40) मेरे ईश्वर रूप को सकलत्व जानों और यह निष्कल स्तंभ ब्रह्म का बोधक है।(41) लिंग लक्षण होने से यह मेरा लिंग स्वरूप निर्गुण होगा। इस कारण हे पुत्रो! तुम नित्य इसकी अर्चना करना।(42) यह सदा मेरी आत्मा रूप है और मेरी निकटता का कारण है। लिंग और लिंगी के अभेद से यह महत्व नित्य पूजनीय है।(43)

अन्य प्रमाण :- शिव लिंग शिव का जननेन्द्री - (Private Part) है तथा जिसमें यह प्रविष्ट है, वह लिंगी पार्बती की जननेन्द्री- (Private Part) है :-

उपरोक्त प्रकाशन की श्री शिव महापुराण के रूद्र सहिता में पृष्ठ 25-28 पर च. को. रू. लिंग रूप कारण वर्णन नामक द्वादश अध्याय के श्लोक नं. 1-54 में कहा है कि :- श्री व्यास जी के शिष्य श्री सूत जी से ऋषियों ने प्रश्न किया कि हे सूत जी! शिवलिंग की पूजा के विषय में जैसा आपने सुना है, वैसा बताओ? ऋषि सूत जी बोले कि मैंने जैसा सुना है, वैसा सुनो। वैसा कहता हूँ। दारूवन में शिव भक्त ऋषि रहते थे। वे निरंतर शिव जी का पूजन (भक्ति) करते थे। उनकी पत्नियाँ भी उनके साथ उसी वन में रहती थी। कुछ ऋषिजन एक दिन समिधाओं को लेने के लिए कभी दारूवन में आए। इसी अंतर में एक व्यक्ति नग्नावस्था (बिल्कुल नंगा) उस वन में आया और अपने लिंग (Private Part) को हाथ में पकड़कर कामी पुरूष (व्यभिचारी) की तरह निर्लज्ज होकर हिला-हिलाकर अश्लील हरकत करने लगा। उसे देखकर उस वन की स्त्रियाँ उसके पास आई। वे उसके लिंग को पकड़कर हिलाने लगी। उसको छूने लगी। कुछ आलिंगन करने से प्रसन्न हुई। उसी समय वे ऋषि जी आ गए। उन ऋषियों ने कहा कि तू ऐसा बेशर्म कर्म करने वाला कौन है? तेरा लिंग धरती पर गिर जाए। उस समय उसका लिंग भूमि पर गिर गया। जलने लगा। तीनों लोकों में जलता हुआ गया। उसको शांत

करने के लिए पार्बती (W/o शिव) की स्तुति की गई। उससे कहा गया कि आप योनि (लिंगी-Private Part of Women) बन जाओ। पार्बती जी ने योनि रूप धारण किया। उस जलते हुए लिंग को उस योनि में डाला गया, तब वह शांत हुआ। उसके पश्चात् उस शिवलिंग की ऐसी मूर्ति जिसमें स्त्री योनि में लिंग प्रविष्ट हो, पत्थर की बनाकर स्थान-स्थान पर रखकर पूजा शुरू हो गई। (देखो आगे चित्र लिंग व लिंगी का जिसमें स्पष्ट है, यह ऐसा है शिवलिंग। ऐसी बेशर्म पूजा भी करते हैं हिन्दू, यह तत्त्वज्ञान का टोटा है।)

पेश है शिव पुराण के विद्येश्वर संहिता के अध्याय 5 श्लोक 27-30 व अध्याय 9 श्लोक 40-43 की फोटोकॉपी :-

शि०पु० ॥११॥

हे योगीन्द्र ! मैं उस लिंगाविर्भावका लक्षण सुना चाहता हूं ॥ नन्दिकेश्वर बोले हे वत्स ! सुनो मैं तुम्हारी प्रीतिसे कहता हूं ॥ २६ ॥ पूर्वकालमें जो पहला कल्प था जो लोकमें विख्यात है उस समय महात्मा ब्रह्मा और विष्णुका परस्पर युद्ध हुआ था ॥ २७ ॥ उनके मान दूर करनेको उनके बीचमें उन निष्कल परमात्माने स्तम्भरूप अपना स्वरूप दिखाया ॥ २८ ॥ तब जगत्के हितकी इच्छासे निर्गुण शिवने उस तेजोमयस्तंभसे अपने लिंगाकारका स्वरूप दिखाया ॥ २९ ॥ उसीदिनसे लोकमें वह निष्कल शिवजीका लिंग विख्यात हुआ, और

श्रोतुमिच्छामियोगींद्रलिंगाविर्भावलक्षणम् ॥ नंदिकेश्वरउवाच ॥ शृणुवत्सभवत्प्रीत्यावक्ष्यामिपरमार्थतः ॥२६॥ पुराकल्पेमहाकाले प्रपन्नेलोकविश्रुते॥ आयुध्येतांमहात्मानौब्रह्मविष्णूपरस्परम् ॥२७॥ तयोर्मानंनिराकर्तुंतन्मध्येपरमेश्वरः ॥ निष्कलस्तंभरूपेणस्वरूपंसमदर्शयत् ॥२८॥ ततःस्वलिंगचिह्नत्वात्स्तंभतोनिष्कलंशिवः ॥ स्वलिंगंदर्शयामासजगतांहितकाम्यया ॥२९॥ तदाप्रभृतिलोकेषुनिष्कलंलिंगमैश्वरम्॥सकलंचतथाबेरंशिवस्यैवंप्रकल्पितम् ॥३०॥ शिवान्येषःतुदेवानांबेरमात्रंप्रकल्पितम् ॥ तत्तद्बेरंतुदेवानांतत्तद्भोगप्रदंशुभम्॥ शिवस्यलिंगबेरत्वभोगमोक्षप्रदंशुभम् ॥३१॥ इतिश्रीशिवमहापुराणेविद्येश्वरसंहितायांपंचमोऽध्यायः ॥५॥ नंदिकेश्वरउवाच ॥ पुराकदाचिद्योगींद्रविष्णुर्विषधरासनः ॥ सुष्वापपरयाभूत्यास्वानुगैरपिसंवृतः ॥१॥ यदृच्छयागतस्तत्रब्रह्माब्रह्मविदांवरः ॥ अपृच्छत्पुंडरीकाक्षंशयनंसर्वसुन्दरम् ॥ २ ॥

वि०सं०१ अ० ६

सगुणरूपमें बेररूप की कल्पना की गई ॥ ३० ॥ देवताओंकी वह बेर पूजा इच्छानुसार भोगोंको देनेहारी है परन्तु शिवका लिंगबेर भोग और मोक्ष दोनोंका देनेहारा है ॥ ३१ ॥ इति श्रीशिवमहापुराणे विद्येश्वरसंहिताभाषायां पंचमोध्यायः ॥ ५ ॥ नन्दिकेश्वर बोले हे योगींद्र ! आगे एक समय विष्णु भगवान् शेषशय्यापर अपने गरुड़ादि पार्षदोंसे संयुक्त लक्ष्मीसहित शयन करते थे ॥ १ ॥ उस समय ब्रह्मज्ञानियोंमें श्रेष्ठ ब्रह्माजी अपनी इच्छासेही वहाँ आये सब प्रकार सुन्दर सेजपर शयन करते हुए कमललोचन विष्णुजीसे पूछने लगे ॥ २ ॥

इसीसे मैं अज्ञातस्वरूप हूं पीछे तुम्हे प्रगट दर्शन देनेके निमित्त साक्षात् ईश्वर तत्क्षणही मैं सगुणरूप हुआ हूं ॥ ४० ॥ मेरे ईशत्वरूपका सकलत्व जानो और यह निष्कलत्व स्तंभ ब्रह्मका बोधक है ॥ ४१ ॥ लिंगलक्षण होनेसे यह मेरा लिंगस्वरूप निर्गुण होगा इस कारण हे पुत्रो ! तुम नित्य इनकी अर्चना करना ॥ ४२ ॥ यह सदा मेरी आत्मारूप है और मेरी निकटताका कारण है लिंग और लिंगीके अभेदसे यह महत्व नित्य पूजनीय है ॥ ४३ ॥ जहां कहीं किसीने मेरे इस लिंगकी प्रतिष्ठा की है हे पुत्र ! वहां मैं अप्रतिष्ठित भी स्थित हूं ॥४४॥ एक लिंगके स्थापनसे मेरे समान रूपकी प्राप्ति यह फल होता है, और दूसरे लिंगके स्थापन करनेमें मेरी एकताकी प्राप्ति होती है ॥ ४५ ॥

तस्मादज्ञातमीशत्वंव्यक्तंद्योतयितुंहिवाम्॥सकलोहमतोजातःसाक्षादीशस्तुतत्क्षणात्४०सकलत्वमतोज्ञेयमीशत्वंमयिसत्वरम्॥ यदिदंनिष्कलंस्तंभंममब्रह्मत्वबोधकम्॥ ॥४१॥ लिंगलक्षणयुक्तत्वान्ममलिंगंभवेदिदम् ॥ तदिदंनित्यमभ्यर्च्ययुवाभ्यामत्रपुत्रकौ ॥४२॥ मदात्मकमिदंनित्यंममसान्निध्यकारणम् ॥ महत्पूज्यमिदंनित्यमभेदाल्लिंगलिंगिनोः ॥४३॥यत्रप्रतिष्ठितंयेनमदीयं लिंगमीदृशम् ॥ तत्रप्रतिष्ठितःसोहमप्रतिष्ठोपिवत्सकौ ॥ ४४ ॥ मत्साम्यमेकलिंगस्यस्थापनेफलमीरितम् ॥ द्वितीयेस्थापितेलिंगेमदैक्यंफलमेवहि ॥४५॥ लिंगंप्राधान्यतःस्थाप्यंतथाबेरंतुगौणकम् ॥लिंगाभावेनतत्क्षेत्रंसबेरमपिसर्वतः ॥४६॥ इति श्रीशिवमहापुराणेविद्येश्वरसंहितायांनवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥ ब्रह्मविष्णूऊचतुः ॥ सर्गादिपंचकृत्यस्यलक्षणंब्रूहिनौप्रभो ॥ शिवउवाच॥ मत्कृत्यबोधनंगुह्यंकृपयाप्रब्रवीमिवाम् १सृष्टिःस्थितिश्चसंहारस्तिरोभावोऽप्यनुग्रहः॥ पंचैवमेजगत्कृत्यंनित्यसिद्धमजाच्युतौ२॥

वह लिंग प्रधान है और बेरलिंग गौण है लिंगके अभावसे बेर सहित भी वह स्थान क्षेत्र नहीं होता है ॥ ४६ ॥ इति श्रीशिवमहापुराणे विद्येश्वरसंहिता भाषाटीकायां नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥ ब्रह्मा और विष्णु बोले हे प्रभो ! आप हमसे सर्गादि पंचकृत्यका लक्षण कहिये शिवजी बोले हमारा कृत्य और ज्ञान दुर्लभ है मैं कृपासे तुमको कहता हूं ॥ १ ॥ हे ब्रह्मा, विष्णु सृष्टि स्थिति संहार तिरोभाव अनुग्रह यह पांच हमारे जगतके कृत्य नित्यसिद्ध हैं ॥ २ ॥

कृपया देखें अन्य प्रमाण लिंग व लिंगी का शिव महापुराण के रूद्र संहिता के अध्याय 12 श्लोक 1-54 पृष्ठ 25-28 की फोटोकॉपी।

भुक्ति मुक्ति प्राप्त होती हैं ॥ १५ ॥ हत्याहरण तीर्थपर पापनाशक पूजनीय विशेषकर कोटिहत्याओंको नाश करनेवाला शिवलिंग है ॥ १६ ॥ देव प्रयाग तीर्थमें ललितेश्वर नामक सब पापोंको दूर करनेवाले शिवलिंगकी पूजा सब पुरुषोंको करनी चाहिये ॥ १७ ॥ नयपाल नामक प्रसिद्ध पुरीमें पशुपतीश नामक प्रसिद्ध तथा सब कामनाओंको सिद्ध करनेवाला ज्योतिर्लिंग है ॥ १८ ॥ वह शिवलिंग, शिरके भाग स्वरूपसे स्थित है उसकी कथाको केदारेश्वरके इतिहासमें वर्णन करूंगा ॥ १९ ॥ उसके समीप मुक्तिनाथ नामक शिवलिंग बडा अद्भुत है उनके दर्शन तथा पूजन करनेसे भुक्ति मुक्ति प्राप्त होती है ॥ २० ॥ हे मुनिश्रेष्ठो ! यह चारों दिशाओंमें उत्तम लिंगोंका वर्णन

हत्याहरणतीर्थे तु शिवलिंगमघापहम् ॥ पूजनीयं विशेषेणहत्याकोटिविनाशनम् ॥१६॥ देवप्रयागतीर्थे तु ललितेश्वरनामकम्॥ शिवलिंगं सदा पूज्यं नरैस्सर्वाघनाशनम् ॥ १७ ॥ नयपालाख्यपुर्य्यां तु प्रसिद्धायां महीतले ॥ लिंगं पशुपतीशाख्यं सर्वकाम फलप्रदम् ॥ १८ ॥ शीरोभागस्वरूपेण शिवलिंगं तदस्ति हि ॥ तत्कथां वर्णयिष्यामि केदारेश्वरवर्णने ॥१९॥ तदारान्मुक्ति नाथाख्यं शिवलिंगं महाद्भुतम् ॥ दर्शनादर्चनात्तस्य भुक्तिर्मुक्तिश्च लभ्यते ॥२०॥ इति वश्च समाख्यातं लिंगवर्णनमुत्तमम् ॥ चतुर्दिक्षु मुनिश्रेष्ठाः किमन्यच्छ्रोतुमिच्छथ ॥२१॥ इति श्रीशिवमहापुराणे चतुर्थ्यां कोटिरुद्रसंहितायां चन्द्रभालपशुपतिनाथ लिंगमाहात्म्यवर्णनं नामैकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥ ऋषयऊचुः ॥ सूत जानासि सकलं वस्तु व्यासप्रसादतः ॥ तवाज्ञातं न विद्येत तस्मात्पृच्छामहे वयम् ॥१॥ लिंगं च पूज्यते लोके तत्त्वया कथितं च यत् ॥ तत्तथैव न चान्यद्वा कारणं विद्यते त्विह ॥ २ ॥ बाणरूपाश्रुता लोके पार्वती शिववल्लभा ॥ एतत्किं कारणं सूत कथय त्वं यथाश्रुतम् ॥ ३ ॥

आपसे कहा अब और क्या सुनना चाहते हैं ॥ २१ ॥ इति श्रीशिवमहापुराणभाषाटीकायां च० को० रु० चन्द्रभालपशुपतिनाथलिंगमाहात्म्यवर्णनं नामैकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥ ऋषि बोले, हे सूतजी ! आप व्यासजीके प्रसादसे सब वस्तुको जानते हैं आपको कुछ अज्ञात नहीं है इस कारण हम आपसे पूछते हैं ॥ १ ॥ संसारमें उन लिंगोंकी पूजा होती है जो आपने पहले बताये सो उसका कारण वही है क्या और इसका कोई कारण है ? ॥ २ ॥ हे सूतजी ! लोकमें शिवकी प्रिया पार्वती जो बाण रूपा कही है सो इसका क्या कारण है ? आपने

जैसा सुना है वैसा कहो ॥३॥ सूतजी बोले, हे ब्राह्मणो ! हे श्रेष्ठ ऋषियो ! मैंने व्यासजीसे जो कल्पभेदकी कथा सुनी है, उसीको आज तुमसे कहताहूं सो सुनो ॥४॥ पहले दारुवनमें ब्राह्मणोंका जो वृत्तान्त हुआ सो अब अच्छी प्रकार सुनो जैसा मैंने सुना है वैसा कहता हूं ॥५॥ हे ऋषिसत्तम ! जहां दारु नामक श्रेष्ठ वन है तहां नित्य शिवके ध्यानमें तत्पर हुए शिवभक्त ऋषिगण रहते थे ॥ ६ ॥ वे मुनीश्वर तीनोंकालोंमें निरन्तर शिवजीका पूजन करते, तथा अनेक प्रकारके स्तोत्रोंसे स्तुति करते थे ॥ ७ ॥ वे शिवजीके ध्यानमें परायण, शैव द्विजर्षिगण समिधाओंको लेनेके निमित्त कभी दारुवनमें आये ॥ ८ ॥ इसी अन्तरमें साक्षात् नीललोहित शंकर विकटरूप धारणकर उनकी परीक्षाके

सूत उवाच ॥ कल्पभेदकथा चैव श्रुता व्यासान्मया द्विजाः ॥ तामेव कथयाम्यद्य श्रूयतामृषिसत्तमाः ॥ ४ ॥ पुरा दारुवने जातं यद्वृत्तं तु द्विजन्मनाम् ॥ तदेव श्रूयतां सम्यक् कथयामि कथाश्रुतम् ॥ ५ ॥ दारुनामवनं श्रेष्ठं तत्रासन्नृषिसत्तमाः ॥ शिव भक्तास्सदा नित्यं शिवध्यानपरायणाः ॥ ६ ॥ त्रिकालं शिवपूजां च कुर्वंति स्म निरन्तरम् ॥ नानाविधैः स्तवैर्दिव्यैस्तुष्टुवुस्ते मुनीश्वराः ॥ ७ ॥ ते कदाचिद्वने यातास्समिधाहरणाय च ॥ सर्वे द्विजर्षभाश्शैवाश्शिवध्यानपरायणाः ॥ ८ ॥ एतस्मिन्नंतरे साक्षाच्छंकरो नीललोहितः ॥ विरूपं च समास्थाय परीक्षार्थं समागतः ॥ ९ ॥ दिगम्बरोऽतितेजस्वी भूतिभूषणभूषितः ॥ स चेष्टामकरोद्दुष्टां हस्ते लिंगं विधारयन् ॥ १० ॥ मनसा च प्रियं तेषां कर्तुं वै वनवासिनाम् ॥ जगाम तद्वनं प्रीत्या भक्तप्रीतो हरः स्वयम् ॥ ११ ॥ तं दृष्ट्वा ऋषिपत्न्यस्ताः परं त्रासमुपागताः ॥ विह्वला विस्मिताश्चान्यास्समाजग्मुस्तथा पुनः ॥१२॥ अलिलिंगुस्तथा चान्याः करं धृत्या तथापराः ॥ परस्परं तु संघर्षात्संमग्नास्ताः स्त्रियस्तदा ॥ १३ ॥

निमित्त प्राप्त हुए ॥ ९ ॥ साक्षात् दिगम्बर अति तेजस्वी विभूतिभूषणसे शोभायमान कामियोंके समान चेष्टाको किये हाथमें ज्योतिर्लिंगको धारण किये ॥ १० ॥ स्वयं भक्तोंसे प्रसन्न हुए शिवजी मनसे उन वनवासी मुनियोंकी भलाई करनेको प्रसन्नतासे उस वनमें प्राप्त हुए ॥ ११ ॥ उनको देखकर ऋषिपत्नी परम त्रासको प्राप्त हो व्याकुल हुई तथा कोई विस्मित हो वहां आई ॥ १२ ॥ तथा कोई हाथ पकडके परस्पर आलिंगन करने लगी इस प्रकार वे स्त्रियां परस्पर आलिंगन करनेसे अति प्रसन्न हुई ॥ १३ ॥

शि०पु०
॥२६॥

इसी अवसरमें वे श्रेष्ठ ऋषिभी आगये उनके विरुद्ध रूपको देखकर वे दुःखी तथा क्रोधसे व्याकुल हुए ॥ १४ ॥ उस समय दुःखित हुए, शिवजीकी मायासे मोहित हो वे ऋषि आपसमें बोले कि यह कौन है यह कौन है ? इस प्रकार कहने लगे ॥ १५ ॥ जिस समय वह अवधूत दिगंबर कुछ न बोले तो वे परम ऋषि उन भयंकर पुरुषसे कहने लगे ॥ १६ ॥ तुम वेदमार्गको लोप करनेवाले, विरुद्ध कार्यको करते हो इस कारण तुम्हारा यह लिंग भूमिपर गिर पडे ॥ १७ ॥ सूतजी बोले, ऐसा उन ऋषियोंके कहनेपर उन अवधूत

एतस्मिन्नेव समये ऋषिवर्याः समागमन्॥ विरुद्धं तं च ते दृष्ट्वा दुःखिताः क्रोधमूर्च्छिताः ॥ १४ ॥ तदा दुःखमनुप्राप्ताः कोयं कोयं तथाऽब्रुवन् ॥ समस्ता ऋषयस्ते वै शिवमायाविमोहिताः ॥ १५ ॥ यदा च नोक्तवान् किंचित्सोवधूतो दिगम्बरः ॥ ऊचुस्तं पुरुषं भीमं तदा ते परमर्षयः ॥ १६ ॥ त्वया विरुद्धं क्रियते वेदमार्गविलोपि यत् ॥ ततस्त्वदीयं तल्लिंगं पततां पृथिवीतले ॥ १७ ॥ सूत उवाच ॥ इत्युक्ते तु तदा तैश्च लिंगं च पतितं क्षणात् ॥ अवधूतस्य तस्याशु शिवस्याद्भुतरूपिणः ॥ १८ ॥ तल्लिंगं चाग्निवत्सर्वं यद्ददाह पुरा स्थितम् ॥ यत्रयत्र च तद्याति तत्रतत्र दहेत्पुनः ॥ १९ ॥ पाताले च गतं तश्च स्वर्गे चापि तथैव च ॥ भूमौ सर्वत्र तद्यातं न कुत्रापि स्थिरं हि तत् ॥२०॥ लोकाश्च व्याकुला जाता ऋषयस्तेतिदुःखिताः ॥ न शर्म लेभिरे केचिद्देवाश्च ऋषयस्तथा ॥ २१ ॥ न ज्ञातस्तु शिवो यैस्तु ते सर्वे च सुरर्षयः ॥ दुःखिता मिलिताश्शीघ्रं ब्रह्माणं शरणं ययुः ॥ २२ ॥ तत्र गत्वा च ते सर्वे नत्वा स्तुत्वा विधिं द्विजाः ॥ तत्सर्वमवदन्वृत्तं ब्रह्मणे सृष्टिकारिणे ॥ २३ ॥

को.रु.सं.४
अ०१२

अद्भुतरूपधारी शिवका वह लिंग उसी क्षण गिर पडा ॥ १८ ॥ और वह लिंग आगे स्थित हुआ अग्निके समान जलने लगा और जहां जहां वह जाता तहां तहां जलता था ॥ १९ ॥ वह लिंग पातालमें स्वर्गलोकमें भी उसी प्रकार प्रज्वलित हो भ्रमण करने लगा कहीं पर भी स्थिर न हुआ ॥ २० ॥ सम्पूर्ण लोक व्याकुल हुए तथा वे ऋषि दुःखित हुए कोई देवता तथा ऋषि कल्याणको नहीं प्राप्त हुए ॥ ॥ २१ ॥ जिन्होंने शिवजीको नहीं जाना वे संपूर्ण देवर्षि दुःखित हुए परस्पर मिलकर तत्काल ब्रह्माके शरणमें गये ॥ २२ ॥ वहां जाकर

वे सब ऋषि आदि ब्रह्माको नमस्कार कर तथा उनकी स्तुति करके सृष्टि करनेवाले ब्रह्माजीसे वह वृत्तान्त कहने लगे ॥ २३ ॥ ब्रह्माजी उनके वचनको सुनके शिवकी मायासे मोहित हुए ऋषि श्रेष्ठोंको जानकर शिवजीको प्रणाम कर उनसे बोले ॥ २४ ॥ ब्रह्माजी बोले, हे ब्राह्मणों ! जाननेवाले भी आप लोग ऐसे निन्दित कामको करते हैं यदि बिना जाननेवाले ऐसा करें तो कोई कहनेकी बात नहीं है ॥ २५ ॥ इस प्रकार. शिव देवसे विरोध करके कौन पुरुष अपनी कुशलता चाहता है, जो मनुष्य मध्याह्न समयमें प्राप्त हुये अभ्यागतका सत्कार नहीं करता है ॥ २६ ॥ तो वह अतिथि उसके पुण्यको लेकर तथा उसे अपने पापोंको देकर लौट जाता है, यदि साक्षात् शिवजी आवें तो फिर क्या

ब्रह्मा तद्वचनं श्रुत्वा शिवमायाविमोहितान् ॥ ज्ञात्वा ताञ्च्छंकरं नत्वा प्रोवाच ऋषिसत्तमान् ॥ २४ ॥ ॥ ब्रह्मोवाच ॥ ज्ञातारश्च भवन्तो वै कुर्वते गर्हितं द्विजाः ॥ अज्ञातारो यदा कुर्य्युः किं पुनः कथ्यते पुनः ॥ २५ ॥ विरुद्धचैवं शिवं देवं कुशलं कस्समीहते ॥ मध्याह्नसमये यो वै नातिथिं च परामृशेत् ॥ २६ ॥ तस्यैव सुकृतं नीत्वा स्वीयं च दुष्कृतं पुनः ॥ संस्थाप्य चातिथिर्याति किं पुनः शिवमेव वा ॥ २७ ॥ यावल्लिंगं स्थिरं नैव जगतां त्रितये शुभम् ॥ जायते न तदा क्वापि सत्यमेतद्वदाम्यहम् ॥ २८ ॥ भवद्भिश्च तथा कार्यं यथा स्वास्थ्यं भवेदिह ॥ शिवलिंगस्य ऋषयो मनसा संविचार्य्यताम् ॥ २९ ॥ सूत उवाच ॥ इत्युक्तास्ते प्रणम्योचुर्ब्रह्माणमृषयश्च वै ॥ किमस्माभिर्विधे कार्यं तत्कार्यं त्वं समादिश ॥ ३० ॥ इत्युक्तश्च मुनीस्तैस्सर्वलोकपितामहः ॥ मुनीशांस्तां स्तदा ब्रह्मा स्वयं प्रोवाच वै तदा ॥ ३१ ॥

है ? ॥२७ ॥ मैं तुमसे यह सत्य कहता हूं कि—जबतक तीनों लोकोंमें यह शुभ लिंग कहीं स्थिर नहीं होता है ॥ २८ ॥ तबतक आप ऐसे उपाय करें कि--जिससे इस लोकमें स्वास्थ्य हो, हे ऋषियो ! ! ! शिवके ज्योतिर्लिङ्गको मनसेध्यान करो ॥ २९ ॥ सूतजी बोले, इस प्रकार कहे हुए वे ऋषि ब्रह्माजीसे बोले हे ब्रह्मन् ! अब हमको क्या करना उचित है ! सो आप आज्ञा करो ॥ ३० ॥ उन मुनीश्वरोंके ऐसा कहने पर वह सब लोकोंके पितामह ब्रह्माजी उस समय उन ऋषियोंसे स्वयं बोले ॥ ३१ ॥

शि०पु० ॥२७॥

ब्रह्माजी बोले, हे देवताओ ! देवी पार्वतीकी आराधना करके पश्चात् शिवजीकी प्रार्थना करो, यदि पार्वती साक्षात् योनिरूपा होजायँ तो ज्योतिर्लिंग स्थिरताको प्राप्त हो ॥ ३२ ॥ हे ऋषिसत्तम ! मैं उस विधिको इस समय कहता हूं आप सब सुनें और इसी विधिको करो तब वह पार्वतीजी प्रसन्न होंगी ॥ ३३ ॥ एक घटको स्थापन करके उत्तम आठ दल करके दूर्वा, जौके अंकुरोंसहित उसमें तीर्थोंके जलको भरो ॥ ३४ ॥ तत्पश्चात् वेद मन्त्रोंसे उस कलशको सेचनकर शास्त्रोक्त विधिसे शिवका स्मरण करके उसकी पूजा करो ॥ ३५ ॥ हे ऋषियो ! शतरुद्रिय मन्त्रोंसे उस कलशके जलसे उस लिंगको स्नान कराय उक्त मन्त्रोंसे मार्जन करके शान्तिको प्राप्त हो ॥ ३६ ॥ फिर योनि

ब्रह्मोवाच ॥ आराध्य गिरिजां देवीं प्रार्थयन्तु सुराश्शिवम् ॥ योनिरूपा भवेच्चेद्वै तदा तत्स्थिरतां व्रजेत् ॥ ३२ ॥ तद्विधिम्प्रवदाम्यद्य सर्वे शृणुत सत्तमाः ॥ तामेव कुरुत प्रेम्णा प्रसन्ना सा भविष्यति ॥ ३३ ॥ कुम्भमेकं च संस्थाप्य कृत्वाष्टदलमुत्तमम् ॥ दूर्वायवांकुरैस्तीर्थोदकमापूरयेत्ततः ॥ ३४ ॥ वेदमंत्रैस्ततस्तं वै कुंभं चैवाभिमंत्रयेत् ॥ श्रुत्युक्तविधिना तस्य पूजां कृत्वा शिवंस्मरन् ॥ ३५ ॥ तल्लिंगं तज्जलेनाभिषेचयेत्परमर्षयः ॥ शतरुद्रियमंत्रैस्तु प्रोक्षितं शांतिमाप्नुयात् ॥ ३६ ॥ गिरिजां योनिरूपां च बाणं स्थाप्य शुभं पुनः ॥ तत्र लिंगं च तत्स्थाप्यं पुनश्चैवाभिमंत्रयेत् ॥ ३७ ॥ सुगन्धैश्चन्दनैश्चैव पुष्पधूपादिभिस्तथा ॥ नैवेद्यादिकपूजाभिस्तोषयेत्परमेश्वरम् ॥ ३८ ॥ प्रणिपातैः स्तवैः पुण्यैर्वाद्यैर्गानैस्तथा पुनः ॥ ततः स्वस्त्ययनं कृत्वा जयेतिव्याहरेत्तथा ॥ ३९ ॥ प्रसन्नो भव देवेश जगदाह्लादकारक ॥ कर्ता पालयिता त्वञ्च संहर्ता त्वं निरक्षरः ॥ ४० ॥ जगदादिर्जगद्योनिर्जगदन्तर्गतोपि च ॥ शान्तो भव महेशान सर्वांल्लोकांश्च पालय ॥ ४१ ॥

को.रु.सं.४ अ०१२

रूपवाली गिरिजा तथा बाणको स्थापन कर वहां उसी लिंगका स्थापन और मार्जन करो ॥ ३७ ॥ और सुगन्ध तथा चन्दनोंसे, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य आदि पूजासे परमेश्वर शिवको सन्तुष्ट करो ॥ ३८ ॥ प्रणाम तथा पुण्य स्तुतियोंसे बाजे गानोंसे धूमकर मंगलाचरण करो तत्पश्चात् जयका उच्चारण कर ॥ ३९ ॥ यह प्रार्थना करो कि--हे देवेश ! हे संसारको प्रसन्न करनेवाले ! आप प्रसन्न हों आप संसारके कर्ता हैं तथा पालन करनेवाले हैं आपही अविनाशी, संहार करनेवाले हैं ॥ ४० ॥ हे महेश्वर ! आप

संसारके आदि हैं तथा जगत्के उत्पन्न करनेवाले, संसारके अन्तर्यामी हैं, आप शान्त हो तथा संपूर्ण लोकोंको पालन करो ॥ ४१ ॥ इस विधिके करनेपर निस्सन्देह स्वास्थ्य होगा, तीनों लोकोंमें विकार (उत्पात) न होगा किन्तु सुख होगा ॥ ४२ ॥ सूतजी बोले, ऐसा सुनकर वे देवता तथा ऋषि ब्रह्माजीको प्रणाम करके, सब लोकोंके सुखकी इच्छासे उन शिवजीकी शरणको प्राप्त हुये ॥ ४३ ॥ उस समय परम भक्तिसे पूजित और सत्कार किये हुए शिवजी अति प्रसन्न होकर उन ऋषियोंसे बोले ॥ ४४ ॥ महादेवजी बोले, हे संपूर्ण देवताओ ! हे ऋषियो ! आप सब मेरे वचनको आदरसे सुनो यदि मेरा ज्योतिर्लिंग, योनिरूपसे धारण किया जाय तो सुख होगा ॥ ४५ ॥ विना

एवं कृते विधौ स्वास्थ्यं भविष्यति न संशय ॥ विकारो न त्रिलोकेस्मिन्भविष्यति सुखं सदा ॥४२॥ सूत उवाच॥इत्युक्तास्ते द्विजा देवाः प्रणिपत्य पितामहम् ॥ शिवं तं शरणं प्राप्तस्सर्वलोकसुखेप्सया॥४३॥ पूजितः परया भक्त्या प्रार्थितः शंकरस्तदा॥ सुप्रसन्नस्ततो भूत्वा तानुवाच महेश्वरः॥४४॥महेश्वर उवाच॥हे देवा ऋषयः सर्वे मद्वचः शृणुतादरात् ॥ योनिरूपेण मल्लिंगं धृतं चेत्स्यात्तदा सुखम् ॥४५॥ पार्वतीं च विना नान्या लिंगं धारयितुं क्षमा॥ तया धृतं च मल्लिंगं द्रुतं शान्तिं गमिष्यति ॥ ४६ ॥ सूत उवाच॥ तच्छ्रुत्वा ऋषिभिर्देवैस्सुप्रसन्नैर्मुनीश्वराः॥ गृहीत्वा चैव ब्रह्माणं गिरिजा प्रार्थिता तदा॥४७॥प्रसन्नां गिरिजांकृत्वा वृषभध्वजमेव च ॥पूर्वोक्तं च विधिं कृत्वा स्थापितं लिंगमुत्तमम् ॥४८॥ मंत्रोक्तेन विधानेन देवाश्च ऋषयस्तथा ॥चक्रुः प्रसन्नां गिरिजां शिवं च धर्महेतवे ॥४९॥ समानर्चुर्विशेषेण सर्वे देवर्षयः शिवम् ॥ब्रह्मा विष्णुः परे चैव त्रैलोक्यं सचराचरम् ॥५०॥

पार्वतीके और कोई मेरे ज्योतिर्लिंगको धारण करनेको समर्थ नहीं है उन देवि पार्वतीजीसे धारण किया हुआ मेरा लिंग शीघ्र ही शान्तिको प्राप्त होगा ॥ ४६ ॥ सूतजी बोले, हे मुनीश्वरो ! यह सुनकर देवता तथा ऋषियोंने ब्रह्माजीको ग्रहण कर उस समय, पार्वतीजीकी प्रार्थना की ॥ ४७ ॥ पार्वतीजी तथा शिवजीको प्रसन्न करके पूर्वोक्त विधिके अनुसार श्रेष्ठ ज्योतिर्लिंगकी स्थापना की ॥ ४८ ॥ मंत्रोंमें कही हुई विधिके अनुसार देवता तथा ऋषियोंने अपने धर्मके हेतु पार्वती तथा शिवजीको प्रसन्न किया ॥ ४९ ॥ ब्रह्मा विष्णु

शि०पु० ॥२८॥

तथा सब देवर्षि; त्रिलोकीके चर अचर सहित सबोंने शिवजीकी विशेष पूजा की ॥ ५० ॥ उस समय शिवजी प्रसन्न हुए और जगत्की माता पार्वतीजी सन्तुष्ट हुई और उन्होंने उस रूपसे उस लिंगको धारण किया ॥ ५१ ॥ उस योनिरूप पार्वतीमें लिंगके स्थापित होनेपर उस समय बड़ा आनंद होने लगा और हे द्विजो ! वह ज्योतिर्लिंग तीनों लोकोंमें प्रसिद्ध होगया ॥ ५२ ॥ वे पार्वती तथा शिवकी प्रतिमा हाटकेश नामसे प्रसिद्ध हुई उनके पूजन करनेसे सब प्रकार लोकोंको सुख होता है ॥ ५३ ॥ इस लोकमें संपूर्ण समृद्धि अति सुखदाई होती है और परलोकमें परम मुक्ति प्राप्त होती है इसमें कुछ सन्देह नहीं है वहां शिव पुरुष और पार्वती प्रकृति हैं ॥ ५४ ॥ इति श्रीशिवमहा

सुप्रसन्नः शिवो जातः शिवा च जगदम्बिका॥ धृतं तया च तल्लिंगं तेन रूपेण वै तदा॥५१॥ लोकानां स्थापिते लिंगे कल्याणं चाभवत्तदा॥प्रसिद्धं चैव तल्लिंगं त्रिलोक्यामभवद्द्विजाः॥५२॥हाटकेशमिति ख्यातं तच्छिवाशिवमित्यपि॥पूजनात्तस्य लोकानां सुखं भवति सर्वथा ॥५३॥ इह सर्वसमृद्धिः स्यान्नानासुखवहाधिका ॥ परत्र परमा मुक्तिर्नात्र कार्या विचारणा ॥ ५४ ॥ इति श्रीशिवमहापुराणे चतुर्थ्यां कोटिरुद्रसंहितायां लिंगस्वरूपकारणवर्णनं नाम द्वादशोऽध्यायः॥१२॥सूत उवाच॥यथाभवल्लिंगरूपः संपूज्यस्त्रिभवे शिवः॥तथोक्तं वा द्विजाःप्रीत्या किमन्यच्छ्रोतुमिच्छथ॥१॥ऋषय ऊचुः॥ अन्धकेश्वरलिंगस्य महिमानं वद प्रभो॥ तथान्यच्छिवलिंगानां प्रीत्या वक्तुमिहार्हसि ॥२॥ सूत उवाच ॥पुराब्धिगर्तमाश्रित्य वसन् दैत्योऽन्धकासुरः॥ स्ववशं कारयामास त्रैलोक्यं सुरसूदनः ॥ ३ ॥ तस्माद्गर्ताच्च निस्सृत्य पीडयित्वा पुनः प्रजाः॥प्राविशच्च तदा दैत्यस्तं गर्तं सुपराक्रमः ॥४॥

को.रु.सं.४ अ०१२

पुराणभाषा० च० को० रु० लिंगरूपकारणवर्णनं नाम द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥ सूतजी बोले, हे ब्राह्मणो ! जिस प्रकार तीनों लोकोंमें ज्योतिर्लिंगरूप शिवजी पूजनीय हुए सो तुमसे प्रीति पूर्वक कहा अब क्या तुम्हारी और सुननेकी इच्छा है ? ॥ १ ॥ ऋषि बोले, हे प्रभो ! अन्धकेश्वर नामक शिवजीकी तथा और शिवके ज्योतिर्लिंगोंकी महिमाको प्रीतिसे आप कहें ॥ २ ॥ सूतजी बोले, समुद्रके गर्तका आश्रय करके अन्धकासुर नाम दैत्यने निवास करके देवताओंको पीडा दे तीनों लोकोंको अपने वशमें कर लिया ॥३॥ बड़े पराक्रमवाले

<u>विवेचन</u> :- <u>यह ऊपर वाला विवरण श्री शिव महापुराण (खेमराज श्रीकृष्ण दास प्रकाशन मुंबई द्वारा प्रकाशित) से शब्दा-शब्द लिखा है। फोटोकॉपी भी लगाई है। इसमें स्पष्ट है कि काल ब्रह्म ने (जो ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव के</u>

पिता जी हैं) जान-बूझकर शास्त्र विरूद्ध साधना बताई है क्योंकि यह नहीं चाहता कि कोई शास्त्रों में वर्णित साधना करे। इसलिए अपने लिंग (गुप्तांग) यानि अपने Private Part को जो पत्थर का था, उसको पत्थर की लिंगी (स्त्री का गुप्तांग) यानि Private Part बनाकर उसमें प्रवेश करके उस लिंग व लिंगी की पूजा करने को कह दिया। पहले तो तेजोमय बहुत बड़ा स्तंभ ब्रह्मा तथा विष्णु के बीच में खड़ा कर दिया। फिर अपने पुत्र शिव के रूप में प्रकट होकर अपनी पत्नी दुर्गा को पार्वती रूप में प्रकट कर दिया और उस तेजोमय स्तंभ को गुप्त कर दिया और अपने लिंग (गुप्तांग) के आकार की पत्थर की मूर्ति प्रकट की तथा स्त्री के (Private Part) गुप्तांग (लिंगी) की पत्थर की मूर्ति प्रकट की। उस पत्थर के लिंग को लिंगी यानि स्त्री की योनि में प्रवेश करके ब्रह्मा तथा विष्णु से कहा कि यह लिंग तथा लिंगी अभेद रूप हैं यानि इन दोनों को ऐसे ही रखकर नित्य पूजा करना।

अन्य प्रमाण देखें विद्येश्वर संहिता के उसी प्रकाशन की फोटोकॉपी में पृष्ठ 25-28 अध्याय 12 श्लोक 1-54 में।

इसके पश्चात् यह बेशर्म पूजा सब हिन्दुओं में देखा-देखी चल रही है। आप मंदिर में शिवलिंग को देखना। उसके चारों ओर स्त्री इन्द्री का चित्र है जिसमें शिवलिंग प्रविष्ट दिखाई देता है। यह पूजा काल ब्रह्म ने प्रचलित करके मानव समाज को दिशाहीन कर दिया। वेदों तथा गीता के विपरीत साधना बता दी।

आप जी ने ऊपर शिव पुराण भाग-1 में विद्यवेश्वर संहिता के पृष्ठ 11 पर अध्याय 5 श्लोक 27-30 में तथा अध्याय 12 श्लोक 1-54 की फोटोकॉपी में पढ़ा कि शिव ने जो तेजोमय स्तंभ खड़ा किया था। फिर उस स्तंभ को गुप्त करके पत्थर को अपने लिंग (गुप्तांग) का आकार दे दिया तथा एक पत्थर की पार्बती की लिंगी (Private Part) बनाई। उसमें लिंग प्रवेश करके दे दिया और बोला कि इसकी पूजा किया करो।

दूसरा प्रमाण :- शिव नंगा होकर दारूवन में गया। अपने लिंग को हाथ में पकड़कर कामी पुरूष यानि व्यभिचारी की तरह निर्लज्ज होकर हिला-हिलाकर अश्लील हरकत करने लगा। स्त्रियाँ भी उस लिंग का आलिंगन (स्पर्श) करने लगी। ऋषिजनों ने देखा तो उसको श्राप दे दिया, तेरा लिंग पृथ्वी पर गिर जाए। वह लिंग ऋषियों के श्राप से टूटकर भूमि पर गिर गया। जलने लगा। पार्बती ने योनि (लिंगी) रूप धारा। उसमें प्रविष्ट होकर शांत हुआ। फिर उसकी पूजा हिन्दू साहेबान करने लगे।

❖ चेतावनी :- वक्त है, अब भी संभल जाओ। नहीं तो मानव जीवन का अवसर हाथ से जाने के पश्चात् रोने के अतिरिक्त कुछ नहीं रहेगा। गीता व वेदों का ज्ञान परम अक्षर ब्रह्म का बताया हुआ है। इसलिए वह शास्त्र

प्रमाणित होने से लाभदायक है।
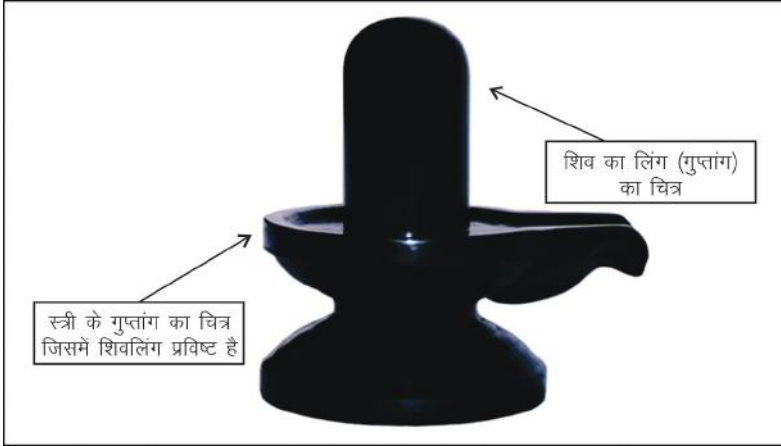
आप देखें यह शिव लिंग का चित्र :-

इस शिवलिंग की पूजा अंध श्रद्धावान करते हैं जो शर्म की बात तो है ही, परंतु धर्म के विरूद्ध भी है क्योंकि यह गीता व वेद शास्त्रों में नहीं लिखी है।

इसका खण्डन सूक्ष्मवेद में इस प्रकार किया है कि :-

(संत गरीबदास जी की वाणी)

धरैं शिव लिंगा बहु विधि रंगा, गाल बजावैं गहले।
जे लिंग पूजें शिव साहिब मिले, तो पूजो क्यों ना खैले।।

शब्दार्थ :- परमेश्वर कबीर जी ने समझाया है कि तत्वज्ञानहीन मूर्ति पूजक अपनी साधना को श्रेष्ठ बताने के लिए गहले यानि ढ़ीठ व्यक्ति गाल बजाते हैं यानि व्यर्थ की बातें बड़बड़ करते हैं जिनका कोई शास्त्र आधार नहीं होता। वे जनता को भ्रमित करने के लिए विविध प्रकार के रंग-बिरंगे पत्थर के शिवलिंग रखकर अपनी रोजी-रोटी चलाते हैं।

कबीर जी ने कहा है कि मैं उन्हें बताना चाहता हूँ कि यदि शिव जी के लिंग को पूजने से शिव जी भगवान का लाभ लेना चाहते हो तो आप धोखे में हैं। यदि ऐसी बेशर्म साधना करनी है तो खागड़ (Ox=Male Cow) के लिंग की पूजा कर लो जिससे गाय को गर्भ होता है। उससे अमृत दूध मिलता है। हल जोतने के लिए बैल व दूध पीने के लिए गाय उत्पन्न होती है जो प्रत्यक्ष लाभ दिखाई देता है। आपको पता है कि खागड़ के लिंग से कितना लाभ मिलता है। फिर भी उसकी पूजा नहीं कर सकते क्योंकि यह बेशर्मी का कार्य है।

इससे स्पष्ट है कि आप अंध श्रद्धावानों को यही नहीं पता है कि यह पत्थर का बना शिवलिंग व जिसमें यह प्रविष्ट दिखाया है, यह क्या है? यदि आपको पता होता तो इसको एक आँख भी नहीं देखते, पूजा तो बहुत दूर की कौड़ी है।

प्रश्न 43 :- गीता का ज्ञान भी काल ब्रह्म ने कहा जो वेद ज्ञान है। सत्य साधना बताई है। असत्य को निषेध कहा है। यह लिंग पूजा भी काल ब्रह्म ने प्रारंभ की है। इसने यदि मानव को भ्रमित करना था तो वेद-गीता का ज्ञान ही नहीं बताता।

उत्तर :- गीता का ज्ञान उस समय बताया जब युद्ध की पूरी तैयारी थी। सेनाएँ आमने-सामने खड़ी थी। अर्जुन ने युद्ध करने से स्पष्ट मना कर दिया था। अर्जुन को युद्ध के लिए प्रेरित करने के लिए सत्य ज्ञान सुनाना मजबूरी बन गई थी। काल ब्रह्म को पता था कि अर्जुन को कुछ याद भी नहीं रहना है। युद्ध भयंकर होगा, यह होश-हवास भूल जाएगा। काल ब्रह्म भी जीव है। परमात्मा केवल परम अक्षर ब्रह्म है। उसने इसके लिए ऐसी परिस्थिति तैयार कर दी कि इसने यह ज्ञान बताना पड़ा। परमेश्वर ने विधान बनाया है कि शब्द (बोले गए वचन) खंड नहीं होता। युद्ध के कई वर्ष पश्चात् व्यास ऋषि की दिव्य दृष्टि खोलकर परमेश्वर (परम अक्षर ब्रह्म) ने लिखवा दिया। अन्य सब शास्त्र विधि के विपरीत ज्ञान काल की देन है जो इसका षड़यंत्र है जीवों को भ्रमित करने के लिए। वेद ज्ञान परमात्मा ने इसके अंदर अपनी शक्ति से भेजा था। उस समय सब आत्माएँ परमात्मा की खोज में लग गई थी। काल ब्रह्म ने सूक्ष्मवेद का प्रारूप छोटा कर दिया। सत्य पुरूष की पूजा के मंत्र निकाल दिए। वह अधूरा ज्ञान चार वेदों वाला ब्रह्मा को दिया, उससे आगे सूर्य ऋषि को दिया। फिर अन्य मानव समाज में फैल गया।

''शास्त्र विरूद्ध साधना की प्रेरणा काल ब्रह्म ही करता है''

{नोट :- यह ऐसा क्यों करता है? इसका उत्तर जानने के लिए कृपया पढ़ें इसी पुस्तक के पृष्ठ 141 पर}

जैसे लिंग (शिवलिंग) को लिंगी में प्रवेश पत्थर की मूर्ति की पूजा काल ब्रह्म ने प्रारम्भ करवाई। इसी प्रकार शास्त्रविधि से भी भ्रमित यही करता है। प्रमाण :- श्री विष्णु पुराण तृतीय अंश अध्याय 17 श्लोक 1-44 तथा अध्याय 18 श्लोक 1-36 में।

काल के जाल का अन्य प्रमाण :- श्री विष्णु पुराण के तृतीय अंश के अध्याय 17 श्लोक 1 से 44 तथा अध्याय 18 श्लोक 1 से 36 में पृष्ठ 125 से 221 पर लिखा है कि देवता तथा दैत्य दोनों ही वैदिक धर्म अनुसार साधना करते थे। एक समय दोनों का सौ दिव्य वर्ष तक युद्ध हुआ। देवता पराजित हो गए। देवताओं ने क्षीर समुद्र के उत्तरीय तट पर जाकर तपस्या की और भगवान विष्णु की आराधना के लिए इस स्तव का गान किया। देवगण बोले- हम लोग लोक नाथ भगवान विष्णु की आराधना के लिए जिस वाणी का उच्चारण करते हैं, उससे वे आद्य-पुरूष श्री विष्णु भगवान प्रसन्न हों।(अध्याय 17/मन्त्र 11) उस ब्रह्मस्वरूप को जो निराकार है। उस ब्रह्मस्वरूप को नमस्कार है।

हे पुरूषोतम्! आप का जो क्रूरता और माया से युक्त घोर तमोमय रूप हैं, उस राक्षस स्वरूप को नमस्कार है।(20) जो कल्पान्त में समस्त भूतों अर्थात प्राणियों का भक्षण कर जाता है, आपके उस काल स्वरूप को नमस्कार है।(25) जो प्रलय काल में देवता आदि समस्त प्राणियों का भक्षण करके नृत्य करता है, आपके उस रूद्रस्वरूप को नमस्कार है।(26) विष्णु पुराण तृतीय अंश अध्याय 17 के श्लोक 11 से 34 तक स्त्रोत के समाप्त हो जाने पर देवताओं ने श्री हरि को हाथ में शंख चक्र, गदा लिए गरूड़ पर आरूढ़ समुख विराजमान देखा।(35) देवताओं की प्रार्थना सुनकर भगवान विष्णु ने अपने शरीर से (वचन शक्ति से) एक मायामोह को उत्पन्न किया तथा कहा कि वह माया मोह दैत्यों को वेद मार्ग की साधना से हटा कर मनमुखी साधना पर आरूढ़ कर देगा। जिस कारण से दैत्य भक्तिहीन हो जाऐंगें तब, तुम देवता उन्हें मार डालना। ऐसा ही हुआ, माया मोह ने सर्व दैत्यों (राक्षसों) को वैदिक मार्ग से विचलित करके मनमुखी साधना पर आरूढ़ कर दिया। कुछ समय पश्चात् देवता तपस्या करके (बैट्री चार्ज करके) दैत्यों के साथ युद्ध करने के लिए उपस्थित हुए। दैत्यों ने तपस्या करनी त्याग दी थी जिससे उनमें सिद्धि शक्ति नहीं रही। (उनकी बैट्री चार्ज नहीं हुई) इस कारण से देवताओं ने दैत्यों को मार डाला।

☛ <u>उपरोक्त श्री विष्णु पुराण के उल्लेख का निष्कर्ष</u> :-

काल ब्रह्म ने सर्व प्राणियों (देवताओं, ऋषियों, ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव तथा अन्य प्राणियों) को भ्रमित किया हुआ है। यह स्वयं ही अपने तीनों पुत्रों (ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव) का रूप धारण कर लेता है। उपरोक्त स्तोत्र में देवताओं ने श्री विष्णु की स्तूति करनी चाही है, लेकिन कर रहे हैं काल ब्रह्म की। वह काल ब्रह्म ही विष्णु रूप धारण करके गरूड़ पर बैठ कर आश्वासन दे गया। अपने वचन से एक व्यक्ति उत्पन्न कर के माया मोह नाम रख कर राक्षसों के पास भेज दिया। जो दैत्यगण तपस्या अर्थात् हठयोग करते थे, उससे सिद्धियाँ प्राप्त हो जाती थी। माया मोह ने वह साधना भी छुड़वा दी जिससे असुर गण सिद्धियों से रहित हो गए। देवता गण भी पहले दैत्यों से युद्ध करने के कारण सिद्धियाँ समाप्त कर चुके थे तथा हारकर जान बचाकर चले गए थे। फिर तपस्या की तथा सिद्धियाँ प्राप्त करके असुरों से युद्ध किया तथा विजय पाई। जब देवतागण राक्षसों से हारे थे, उस समय दैत्य भी वही साधना (तपस्या अर्थात् हठ योग) करते थे जो देवता करते थे। इससे सिद्ध हुआ कि भक्ति करने से भी देवता, दैत्यों से रद्दी (पिछड़े हुए) थे क्योंकि राक्षस वही साधना करके देवताओं पर विजय पाए थे जो देवतागण करते थे।

वास्तव में शास्त्रविधि अनुसार साधना न देवता करते थे न दैत्य। केवल

काल द्वारा बताई गई तपस्या (जो ब्रह्मा को जन्म के समय आकाशवाणी द्वारा काल ब्रह्म द्वारा कमल के फूल पर बताई थी, उस तपस्या) अर्थात् हठ योग को दोनों करते थे। दोनों ही सिद्धियाँ प्राप्त करते थे। जैसे शराब को देवता पीऐ चाहे दैत्य, दोनों को ही सरूर होगा। सिद्धियाँ प्राप्त होने पर प्राणी को अभिमान का नशा हो जाता है। फिर आपस में एक-दूसरे पर सिद्धियों का प्रयोग करके स्वयं के जीवन को नष्ट कर जाते हैं। यह सर्व काल ब्रह्म द्वारा फैलाया भयंकर जाल है जिसे तत्वज्ञान से ही समझा जा सकता है तथा इस जाल से निकला जा सकता है।

वर्तमान में कुछ पंथ हैं जो न तो देशी घी की ज्योति लगाने देते हैं, न गीता, वेद या स्वसम वेद वाणी का पाठ करने को बताते हैं, न वास्तविक नाम जाप को देते हैं। कहते हैं सन्त कुछ भी नाम जाप करने को दे दे, वही मोक्षदायक है। अढ़ाई घण्टे सुबह तथा कम से कम अढ़ाई घण्टे शाम को हठयोग करने को कहते हैं। यह मोक्ष मार्ग नहीं है। ये संत रूप में अपने दूत काल ब्रह्म द्वारा माया मोह की तरह भेजे गए हैं जिन्होंने वह साधना भी छुड़ा दी जिससे स्वर्ग तक जाने की भक्ति तो बनती थी। जैसे प्रतिदिन गीता, वेद या स्वसम वेद (कबीर वाणी या कबीर जी से परिचित सन्तों की वाणी) वाणी के पाठ से ज्ञान यज्ञ का फल मिलता है तथा देशी घी की ज्योति से हवन यज्ञ का फल मिलता है। दण्डवत् प्रणाम से प्रणाम यज्ञ का फल मिलता है। वे नकली पंथ सुना-सुनाया सतलोक-सतलोक तो कहते हैं परन्तु सतलोक में सतपुरूष निराकार बताते हैं। वहाँ प्रकाश ही प्रकाश है, आनन्द ही आनन्द है। आत्मा भी उस प्रकाश में ऐसे समा जाती है जैसे समुन्द्र में बूंद समा जाती है। ऐसा व्यर्थ ज्ञान अनुयाईयों को बता कर कहते हैं चलो सतलोक में, वहाँ आनन्द ही आनन्द है। विचार करें किसी लड़की को कोई मूर्ख कहे तेरी सगाई अमूक गाँव में कर दी है। वहाँ तेरा पति निराकार है। तेरे पति के घर में प्रकाश ही प्रकाश है, पति साकार नहीं है, वहाँ विवाह करवाकर जा, लड़की वहाँ आनन्द ही आनन्द है। उस मूर्ख से पूछे कि यदि पति ही साकार नहीं है तो उस कन्या का क्या उत्साह होगा विवाह करने व बिना पति वाले घर जाने का? कोई उमंग नहीं हो सकती।

ठीक इसी प्रकार जो गुरू जन सतपुरूष अर्थात् परमात्मा को निराकार कहते हैं तथा कहते हैं कि केवल प्रभु का प्रकाश ही देखा जा सकता है। वे भ्रमित कर रहे हैं। उनको कोई ज्ञान नहीं है। उनको परमात्मा प्राप्ति भी नहीं हुई है। उनसे कोई पूछे कि तुम कहते हो कि सतपुरूष (अविनाशी परमेश्वर) का केवल प्रकाश देखा जा सकता है क्योंकि सतपुरूष (सच्चा परमेश्वर) तो निराकार है। जैसे कोई अन्धा कहे कि सूर्य तो निराकार है, उसका केवल प्रकाश ही देखा जा सकता है। सूर्य बिना प्रकाश किसका देखा? जब सूर्य

निराकार है तो प्रकाश काहे का? इसी प्रकार जो ज्ञान नेत्रहीन सन्त, ऋषि, महर्षि परमात्मा को निराकार कहते हैं तथा परमात्मा को सूर्य तुल्य प्रकाशमान कहते हैं तथा परमात्मा का प्रकाश देखा कहते हैं, वे सनीपात के ज्वर के रोगी की तरह बरड़ा रहे हैं, उन्हें यही नहीं पता कि वे क्या बोल रहे हैं। वे सर्व काल ब्रह्म के द्वारा भेजे गए मोहमाया जैसे भ्रमित करने वाले दूत हैं जिन्होंने भोली आत्माओं को उल्टा पाठ पढ़ाकर दिशाभ्रष्ट कर दिया है।

अन्य शास्त्र विरूद्ध भक्ति पर प्रकाश

परमात्मा कबीर जी का शब्द :-

रै भोली—सी दुनिया, सतगुरू बिन कैसे सरियाँ।(टेक)
अपने लला के बाल उतरवावैं, कह कैंची ना लग जईयाँ।
एक बकरी का बच्चा लेकर, उसका गला कटईयाँ।।1।।
काचा—पाका भोजन बनाकर, माता धोकने गईयाँ।
इस मूर्ति माता पर कुत्ता मूतै, वह क्यों ना मर गईयाँ।।2।।
जीवित बाप से लठ्ठम—लठ्ठा, मूवे गंग पहुँचईयाँ।
जब आवै आसौज का महीना, कऊवा बाप बणईयाँ।।3।।
पीपल पूजै जाँडी पूजे, सिर तुलसाँ के अहोइयाँ।
दूध—पूत में खैर राखियो, न्यूं पूजूं सूं तोहियाँ।।4।।
आपै लीपै आपै पोतै, आपै बनावै होईयाँ।
उससे भौंदू पोते माँगै, अकल मूल से खोईयाँ।।5।।
पति शराबी घर पर नित ही, करत बहुत लड़ईयाँ।
पत्नी षोडष शुक्र व्रत करत है, देहि नित तुड़ईयाँ।।6।।
तज पाखण्ड सत नाम लौ लावै, सोई भवसागर से तरियाँ।
कह कबीर मिले गुरू पूरा, स्यों परिवार उधरियाँ।।7।।

शब्दार्थ :- परमेश्वर कबीर जी ने अंध श्रद्धा भक्ति करने वाले तत्वज्ञानहीन जनताजनों को उनके द्वारा की जा रही शास्त्र विरूद्ध साधना यानि उपासना को तर्क करके लाभ रहित यानि व्यर्थ सिद्ध किया है। कहा है कि :-

हे भोली जनता! गुरू के बिना आपका कोई भी अध्यात्म कार्य नहीं सरेगा यानि सिद्ध नहीं होगा।

वाणी सँख्या 1 :- अपने लला के बाल उतरवावैं, कह कैंची ना लग जईयाँ।
एक बकरी का बच्चा लेकर, उसका गला कटईयाँ।।1।।

भावार्थ :- शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण करने के लिए अज्ञानी गुरूओं द्वारा भ्रमित अंध श्रद्धालु माता अपने नवजात बच्चे को लेकर अपने ईष्ट देव-देवी के मंदिर में जाती है। आन-उपासकों द्वारा बनाए शास्त्रविरूद्ध विधान अनुसार नवजात शिशु के सिर के प्रथम बार वाले बाल उतरवाती

(कटवाती) है। उन बालों को मंदिर में अपने ईष्ट पर चढ़ाती है। यह मान रखा है कि इससे ईष्ट देव या देवी प्रसन्न होते हैं तथा बच्चे की सदा रक्षा करते हैं। बाल काटने के लिए मंदिर में मेले के समय उपस्थित नाई के पास बाल कटवाने वालों की लाईन लगी होती है। नाई शीघ्र-शीघ्र निपटाने के उद्देश्य से तेजी से कैंची चलाता है। किसी-किसी बच्चे को कैंची लग जाती है। बच्चा रोता है। अपने बच्चे के बाल कटवाने की बारी आते ही माता नाई को सतर्क करती है कि हे भाई नाई! ध्यान से कैंची चलाना, मेरे लला (बालक-बेटे) का कच्चा सिर है, कहीं कैंची न लग जाए। बच्चे के कटे हुए बालों को कपड़े में बाँधकर मंदिर में चढ़ा देती है। पुजारी उसको खोलकर एक खाली कट्टे में डालता रहता है। मेला समाप्त होने के पश्चात् उन बालों को दूर कचरे के ढ़ेर में डाल देता है। बाल मंदिर में चढ़ाने के पश्चात् ईष्ट को बकरे की बलि दी जाती है जो पहले से ही अपने होने वाले बच्चे की खैर (रक्षा) के लिए संकल्प की गई होती है।

❖ कबीर परमेश्वर जी ने इस विषय में सटीक तर्क देते हुए कहा है कि हे अंध श्रद्धावान! कुछ तो विवेक कर। अपने बच्चे को तो कैंची लगने से भी बचाती है, उसकी रक्षा (खैर) के लिए बकरी के बच्चे की गर्दन कटवाते समय कुछ भी तरस (दया) नहीं आया। परमात्मा का विधान है कि जो पाप किया (बकरे की बलि दी) वह तो तेरे को भोगना पड़ेगा। वह पत्थर की देवी या देव कुछ भी मदद न तेरी, न तेरे बच्चे की कर सकती है जो आपको भ्रम है।

विचार करें :- यदि वहाँ उस मंदिर में वास्तव में देवी या देव होता और आप उसके घर में बाल डालते तो इसी बात पर आप से नाराज होकर दण्ड देते। देवी-देवता सभ्य और शाकाहारी नेक प्रवृति के होते हैं। वे कभी माँस, मदिरा तथा अन्य नशीली वस्तुओं का सेवन नहीं करते। पुजारी उन बालों को फैंक देते हैं। क्या वे बाल बैंक में जमा करवाने के योग्य होते हैं? आप अपने बच्चों के बाल स्वयं ही किसी नाई से कटवा दो। किसी मंदिर में ले जाकर अपने कर्म व धन तथा वक्त नष्ट न करो।

पूर्ण गुरू से शिक्षा लो यानि आध्यात्मिक ज्ञान सुनो तथा दीक्षा लो यानि गुरू बनाकर शास्त्र वर्णित साधना करके पापों से मुक्ति पाओ तथा मोक्ष कराओ।

वाणी सँख्या 2 :- काचा–पाका भोजन बनाकर, माता धोकने गईयाँ।
इस मूर्ति माता पर कुत्ता मूतै, वह क्यों ना मर गईयाँ।।2।।

भावार्थ :- आन-उपासना की अन्य विधि यह भी है कि गाँव या नगर के बाहर किसी वृक्ष के नीचे तने से सटाकर या किसी ऊँचे स्थान पर बिना वृक्ष के ही दस फुट लम्बा चौड़ा या इससे भी छोटा चबूतरा (चौरा) यानि प्लेटफार्म बनाकर उसके ऊपर दो फुट या तीन-चार फुट ऊँचा तथा एक-डेढ़ फुट चौड़ा एक मंदिरनुमा घर बनाते हैं, उसे मंढ़ी कहते हैं। वर्ष में एक या

दो बार, किसी निश्चित दिन उस देई धाम पर धोक लगाने (पूजा करने) दादी माँ अपने पूरे परिवार को लेकर जाती है। उसे पता होता है कि जो भी भोजन ईष्ट के लिए बनाकर उस मंढ़ी में रखते हैं, उसे कुत्ते खाते हैं। वह वृद्धा अपनी पुत्रवधु से कहती है कि बेटी! आज माता की धोक लगाने मंढ़ी पर चलना है। उसके लिए मीठा दलिया या पूड़े-गुलगुले बना ले। पुत्रवधु माता का भोग तैयार करने लग जाती है। देर तो लगती ही है। उधर से खेत या मजदूरी के लिए जाने का समय भी हो जाता है। बुढ़िया कहती है कि बेटी! काच्चा-पाक्का बना दे, जल्दी कर। कुत्तों ने तो खाना ही है। पूरे परिवार को साथ लेकर वृद्धा उस मंढ़ी पर वह माता का भोग प्रसाद दूर से फैंक देती है तथा पूरे परिवार को कहती है कि हाथ जोड़कर चच-चच कह दो। एक लोटे में जल लेकर जाती है। उसे माता के ऊपर डाल देती है। परिवार माता की धोक लगाकर चबूतरे से नीचे भी नहीं आता, उसी समय कुत्ते जो वहीं पर भोग लगाने के लिए बेताब (उतावले) खड़े होते हैं, माता की मंढ़ी के प्लेटफार्म पर चढ़कर प्रथम तो माता का भोग चट करते हैं, चलते समय उस माता पर पेशाब कर देते हैं।

परमेश्वर कबीर जी ने इस विषय पर तर्क दिया है कि हे भोली अंध भक्ति करने वाली जनता! विचार कर, जिस मंढ़ी वाली देवी माता की आप पूजा इसलिए करती हो कि यह मंढ़ी में उपस्थित देवी हमारे परिवार की तथा खेती और पशुधन की रक्षा करती है। यदि उस मंढ़ी में देवी उपस्थित होती तो उसके भोजन को कुत्ता खा गया, उसके ऊपर मूत्र की धार लगा गया। वह कुत्ता तेरी पत्थर की माता ने मारा क्यों नहीं? यदि आप भोजन कर रहे हो और कोई कुत्ता आकर आपके भोजन को खाने लगे तो आप उसको डंडे-लाठी से मारोगे। यदि आपके ऊपर मूत दे तो उसकी हड्डी-पसली एक कर दो। परंतु आपकी पूज्य देवी तो बहुत विवश है या उसे अधरंग लगा है। उससे भक्ति लाभ की झूठी आशा त्यागकर पूर्ण गुरू से शास्त्र विधि अनुसार सत्य भक्ति की दीक्षा व शिक्षा (ज्ञान) लेकर अपना तथा परिवार का कल्याण करवाओ।

''श्राद्ध-पिण्डदान करें या न करें''

वाणी सँख्या 3 :- जीवित बाप से लठ्ठम–लठ्ठा, मूवे गंग पहुँचईयाँ।
जब आवै आसौज का महीना, कऊवा बाप बणईयाँ।।3।।

भावार्थ :- परमेश्वर कबीर जी ने लोकवेद (दंत कथा) के आधार से चल रही पित्तर तथा भूत पूजा पर शास्त्रोक्त तर्क दिया है। कहा है कि शास्त्रोक्त अध्यात्म ज्ञान के अभाव से बेटे अपने पिता से किसी न किसी बात पर विरोध करते हैं। पिता जी अपने अनुभव के आधार से बेटे से अपने व्यवसाय में टोका-टाकी कर देते हैं। पिता जी को पता होता है कि इस कार्य में पुत्र को

हानि होगी। परंतु पुत्र पिता की शिक्षा कम बाहर के व्यक्तियों की शिक्षा को अधिक महत्व देता है। उसे ज्ञान नहीं होता कि पिता जैसा पुत्र का हमदर्द कोई नहीं हो सकता। पुत्र को जवानी और अज्ञानता के नशे के कारण शिष्टाचार का टोटा हो जाता है। पिता को पता होता है कि बेटा इस कार्य में हानि उठाएगा। परंतु पुत्र पिता की बात नहीं मानता है। उल्टा पिता को भला-बुरा कहता है। पिता अपने पुत्र के नुकसान को नहीं देख सकता। वह फिर उससे आग्रह करता है कि पुत्र! ऐसा ना कर। जिस कारण से जवानी के नशे से हुई सभ्यता की कमी के कारण इतने निर्लज्ज हो जाते हैं, कई पुत्रों को देखा है जो पिता को डण्डों से पीट देते हैं। वही होता है जो पिता को अंदेशा था। पिता फिर समझाता है कि आगे से ऐसा ना करना। यह हानि तो धीरे-धीरे पूरी हो जाएगी। पिता-पिता ही होता है। वह पुत्र-पुत्री को सुखी देखना चाहता है। आगे चलकर जो पिता भक्ति नहीं कर रहा था, उसे कोई न कोई रोग वृद्ध अवस्था में अवश्य घेर लेता है। संतान बहुत कम है जो पिता को वह प्रेम दे जो माता-पिता अपने पुत्र तथा पुत्रवधु से अपेक्षा किया करते हैं। वर्तमान में वृद्धों की बेअदबी किसी से छिपी नहीं है। माता-पिता वृद्धाश्रमों या अनाथालयों में जीवन के शेष दिन पूरे कर रहे हैं या घर पर पुत्र व पुत्रवधु के कटु वचन (कड़वे बोल) पीकर जीवन के दिन गिन रहे हैं।

कबीर जी ने कहा है कि :-

वृद्ध हुआ जब पड़ै खाट में, सुनै वचन खारे।
कुत्ते तावन का सुख भी कोन्या, छाती फूकन हारे।।

शब्दार्थ :- वृद्ध अवस्था में शरीर निर्बल हो जाता है। आँखों की रोशनी कम हो जाती है। जिस कारण से वृद्ध पिता-माता अधिक समय चारपाई पर व्यतीत करते हैं। एक स्त्री अपनी सासू माँ से यह कहकर कुऐं या नल से पानी लेने चली गई कि आप ध्यान रखना। कहीं कुत्ता घर में घुसकर नुकसान न कर दे। वृद्धा को दिखाई कम देता था। कुत्ता अंदर घर में घुस गया, एक लोटा दो किलो दूध से भरा रखा था। उसको पी गया और गिरा गया। वृद्धा को दिखाई नहीं दिया। पुत्रवधु आई और कुत्ते द्वारा किए नुकसान से क्रोधित होकर बोली कि तुम्हारा (सास-ससुर का) तो इतना भी सुख नहीं रहा कि कुत्तों से घर की रक्षा कर सको। तुमने मेरी छाती जला दी यानि व्यर्थ का अनाज का खर्च पुत्रवधु को लग रहा था। जिस कारण कटी-जली बातें कही थी। सास-ससुर को अपने ऊपर व्यर्थ का भार मान रही थी। कबीर जी ने बताया है कि यह दशा उन व्यक्तियों की होती है जो परमात्मा को कभी याद नहीं करते जो गुरू धारण करके सत्य भक्ति नहीं करते।

अब वाणी सँख्या 3 का शब्दार्थ पूरा करता हूँ।

अंध श्रद्धा भक्ति वाले जब तक माता-पिता जीवित रहते हैं, तब तक तो

उनको प्यार व सम्मान के साथ कपड़ा-रोटी भी नहीं देते। झींकते रहते हैं। (सब नहीं।) मृत्यु के उपरांत श्रद्धा दिखाते हैं। उसके शरीर को चिता पर जला दिया जाता है। कुछ हड्डियाँ बिना जली छोटी-छोटी रह जाती हैं। शास्त्र नेत्रहीन गुरूओं से भ्रमित पुत्र उन अस्थियों को उठाकर हरिद्वार में हर की पौड़ियों पर अपने कुल के पुरोहित के पास ले जाता है। उस पुरोहित द्वारा शास्त्रविरूद्ध साधना के आधार से मनमाना आचरण करके उन अस्थियों को पवित्र गंगा दरिया में प्रवाह किया जाता है। जो धनराशि पुरोहित माँगे, खुशी-खुशी दे देता है। कारण यह होता है कि कहीं पिता या माता मृत्यु के उपरांत प्रेत बनकर घर में न आ जाऐं। इसलिए उनकी गति करवाने के लिए कुलगुरू पंडित जी को मुँह माँगी धनराशि देते हैं कि पक्का काम कर देना। फिर पुरोहित के कहे अनुसार अपने घर की चोखट में लोहे की मेख (मोटी कील) गाड़ दी जाती है कि कहीं पिता जी-माता जी की गति होने में कुछ त्रुटि रह जाए और वे प्रेत बनकर हमारे घर में न घुस जाऐं।

कबीर परमेश्वर जी ने बताया है कि जीवित पिता को तो समय पर टूक (रोटी) भी नहीं दिया जाता। उसका अपमान करता है। (सभी नहीं, अधिकतर) मृत्यु के पश्चात् उसको पवित्र दरिया में बहाकर आता है। कितना खर्च करता है। अपने माता-पिता की जीवित रहते प्यार से सेवा करो। उनकी आत्मा को प्रसन्न करो। उनकी वास्तविक श्रद्धा सेवा तो यह है।

कबीर जी जो स्पष्ट करना चाहते हैं कि आध्यात्मिक ज्ञान न होने के कारण अंध श्रद्धा भक्ति के आधार से सर्व हिन्दू समाज अपना अनमोल जीवन नष्ट कर रहा है। जैसे मृत्यु के उपरांत अपने पिता जी की अस्थियाँ गंगा दरिया में पुरोहित द्वारा क्रिया कराकर पिता जी की गति करवाई।

❖ फिर तेरहवीं या सतरहवीं यानि मृत्यु के 13 दिन पश्चात् की जाने वाली क्रिया को तेरहवीं कहा जाता है। सतरह दिन बाद की जाने वाली लोकवेद धार्मिक क्रिया सतरहवीं कहलाती है। महीने बाद की जाने वाली महीना क्रिया तथा छः महीने बाद की जाने वाली छःमाही तथा वर्ष बाद की जाने वाली बर्षी क्रिया (बरसौदी) कही जाती है। लोकवेद (दंत कथा) बताने वाले गुरूजन उपरोक्त सब क्रियाएँ करने को कहते हैं। ये सभी क्रियाऐं मृतक की गति के उद्देश्य से करवाई जाती हैं।

❖ सूक्ष्मवेद में इस शास्त्र विरूद्ध धार्मिक क्रियाओं यानि साधनाओं पर तर्क इस प्रकार किया है कि घर के सदस्य की मृत्यु के पश्चात् ज्ञानहीन गुरूजी क्या-क्या करते-कराते हैं :-

कुल परिवार तेरा कुटम्ब–कबीला, मसलित एक ठहराई।
बांध पींजरी (अर्थी) ऊपर धर लिया, मरघट में ले जाई।
अग्नि लगा दिया जब लम्बा, फूंक दिया उस ठांही।

पुराण उठा फिर पंडित आए, पीछे गरूड़ पढ़ाई।
प्रेत शिला पर जा विराजे, पित्तरों पिण्ड भराई।
बहुर श्राद्ध खाने कूं आए, काग भए कलि माहीं।
जै सतगुरू की संगति करते, सकल कर्म कटि जाई।
अमरपुरी पर आसन होता, जहाँ धूप न छांई।

शब्दार्थ :- कुछ व्यक्ति मृत्यु के पश्चात् उपरोक्त क्रियाऐं तो करते ही हैं, साथ में गरूड़ पुराण का पाठ भी करते हैं। परमेश्वर कबीर जी ने सूक्ष्मवेद (तत्वज्ञान) की वाणी में स्पष्ट किया है कि लोकवेद (दंत कथा) के आधार से ज्ञानहीन गुरूजन मृतक की आत्मा की शांति के लिए गरूड़ पुराण का पाठ करते हैं। गरूड़ पुराण में एक विशेष प्रकरण है कि जो व्यक्ति धर्म-कर्म ठीक से नहीं करता तथा पाप करके धन उपार्जन करता है, मृत्यु के उपरांत उसको यम के दूत घसीटकर ले जाते हैं। ताम्बे की धरती गर्म होती है, नंगे पैरों उसे ले जाते हैं। उसे बहुत पीड़ा देते हैं। जो शुभ कर्म करके गए होते हैं, वे स्वर्ग में हलवा-खीर आदि भोजन खाते दिखाई देते हैं। उस धर्म-कर्महीन व्यक्ति को भूख-प्यास सताती है। वह कहता है कि भूख लगी है, भोजन खाऊँगा। यमदूत उसको पीटते हैं। कहते हैं कि यह भोजन खाने के कर्म तो नहीं कर रखे। चल तुझे धर्मराज के पास ले चलते हैं। जैसा तेरे लिए आदेश होगा, वैसा ही करेंगे। धर्मराज उसके कर्मों का लेखा देखकर कहता है कि इसे नरक में डालो या प्रेत व पित्तर, वृक्ष या पशु-पक्षियों की योनि दी जाती हैं। पित्तर योनि भूत प्रजाति की श्रेष्ठ योनि है। यमलोक में भूखे-प्यासे रहते हैं। उनकी तृप्ति के लिए श्राद्ध निकालने की प्रथा शास्त्रविरूद्ध मनमाने आचरण के तहत शुरू की गई है। कहा जाता है कि एक वर्ष में जब आसौज (अश्विन) का महीना आता है तो भादवे (भाद्र) महीने की पूर्णमासी से आसौज महीने की अमावस्या तक सोलह श्राद्ध किए जाऐं। जिस तिथि को जिसके परिवार के सदस्य की मृत्यु होती है, उस दिन वर्ष में एक दिन श्राद्ध किया जाए। ब्राह्मणों को भोजन करवाया जाए। जिस कारण से यमलोक में पित्तरों के पास भोजन पहुँच जाता है। वे एक वर्ष तक तृप्त रहते हैं। कुछ भ्रमित करने वाले गुरूजन यह भी कहते हैं कि श्राद्ध के सोलह दिनों में यमराज उन पित्तरों को नीचे पृथ्वी पर आने की अनुमति देता है। पित्तर यमलोक (नरक) से आकर श्राद्ध के दिन भोजन करते हैं। हमें दिखाई नहीं देते या हम पहचान नहीं सकते।

❖ भ्रमित करने वाले गुरूजन अपने द्वारा बताई शास्त्रविरूद्ध साधना की सत्यता के लिए इस प्रकार के उदाहरण देते हैं कि रामायण में एक प्रकरण लिखा है कि वनवास के दिनों में श्राद्ध का समय आया तो सीता जी ने भी श्राद्ध किया। भोजन खाते समय सीता जी को श्री रामचन्द्र जी पिता दशरथ सहित रघुकुल के कई दादा-परदादा दिखाई दिए। उन्हें देखकर सीता जी

को शर्म आई। इसलिए मुख पर पर्दा (घूंघट) कर लिया।

❖ विचार करो पाठकजनो :- श्री रामचन्द्र के सर्व वंशज प्रेत-पित्तर बने हैं तो अन्य सामान्य नागरिक भी वही क्रियाऐं कर रहे हैं। वे भी नरक में पित्तर बनकर पित्तरों के पास जाऐंगे। इस कारण यह शास्त्रविधि विरूद्ध साधना है जो पूरा हिन्दू समाज कर रहा है। श्रीमद्भगवत गीता के अध्याय 9 का श्लोक 25 भी यही कहता है कि जो पित्तर पूजा (श्राद्ध आदि) करते हैं, वे मोक्ष प्राप्त नहीं कर पाते, वे यमलोक में पित्तरों को प्राप्त होते हैं।

❖ जो भूत पूजा (अस्थियाँ उठाकर पुरोहित द्वारा पूजा कराकर गंगा में बहाना, तेरहवीं, सतरहवीं, महीना, छःमाही, वर्षी आदि-आदि) करते हैं, वे प्रेत बनकर गया स्थान पर प्रेत शिला पर बैठे होते हैं।

❖ कुछ व्यक्तियों को धर्मराज जी कर्मानुसार पशु, पक्षी, वृक्ष आदि-आदि के शरीरों में भेज देता है।

❖ परमात्मा कबीर जी समझाना चाहते हैं कि हे भोले प्राणी! गरूड़ पुराण का पाठ उसे मृत्यु से पहले सुनाना चाहिए था ताकि वह परमात्मा के विधान को समझकर पाप कर्मों से बचता। पूर्ण गुरू से दीक्षा लेकर मोक्ष प्राप्त करता। जिस कारण से वह न प्रेत बनता, न पित्तर बनता, न पशु-पक्षी आदि-आदि के शरीरों में कष्ट उठाता। मृत्यु के पश्चात् गरूड़ पुराण के पाठ का कोई लाभ नहीं मिलता।

सूक्ष्मवेद (तत्वज्ञान) में तथा चारों वेदों (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद) तथा इन चारों वेदों के सारांश गीता में स्पष्ट किया है कि उपरोक्त आन-उपासना नहीं करनी चाहिए क्योंकि ये शास्त्रों में वर्णित न होने से मनमाना आचरण है जो गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में व्यर्थ बताया है। शास्त्रोक्त साधना करने का आदेश दिया है। सर्व हिन्दू समाज उपरोक्त आन-उपासना करते हैं जिससे भक्ति की सफलता नहीं होती। जिस कारण से नरकगामी होते हैं तथा प्रेत-पित्तर, पशु-पक्षी आदि के शरीरों में महाकष्ट उठाते हैं।

➢ दास (लेखक) का उद्देश्य किसी की साधना की आलोचना करना नहीं है, अपितु आप जी को सत्य साधना का ज्ञान करवाकर इन कष्टों से बचाना है।

प्रसंग चल रहा है कि जो शास्त्रविरूद्ध साधना करते हैं, उनके साथ महाधोखा हो रहा है। बताया है कि :-

1. मृतक की गति (मोक्ष) के लिए पहले तो अस्थियाँ उठाकर गुरूजी के द्वारा पूजा करवाकर गंगा दरिया में प्रवाहित की और बताया गया कि इसकी गति हो गई।

2. उसके पश्चात् तेरहवीं, सतरहवीं, महीना, छःमाही, वर्षी आदि-आदि क्रियाऐं उसकी गति करवाने के लिए कराई।

3. पिण्डदान किया गति करवाने के लिए।

4. श्राद्ध करने लगे, उसे यमलोक में तृप्त करवाने के लिए।

❖ श्राद्धों में गुरू जी भोजन बनाकर सर्वप्रथम कुछ भोजन छत पर रखता है। कौआ उस भोजन को खाता है। पुरोहित जी कहता है कि देख! तेरा पिता कौआ बनकर भोजन खा रहा है। कौए के भोग लगाने से श्राद्ध की सफलता बताते हैं।

❖ परमेश्वर कबीर जी ने यही भ्रम तोड़ा है। कहा है कि आपके तत्वज्ञान नेत्रहीन (अंधे) धर्मगुरूओं ने अपने धर्म के शास्त्रों को ठीक से नहीं समझ रखा। आप जी को लोकवेद (दन्तकथा) के आधार से मनमानी साधना कराकर आप जी का जीवन नष्ट कर रहे हैं।

कबीर जी ने कहा है कि विचार करो। उपरोक्त अनेकों पूजाऐं कराई मृतक पिता की गति कराने के लिए, अंत में कौआ बनवाकर दम लिया। अब श्राद्धों का आनंद गुरू जी ले रहे हैं। वे गुरू जी भी नरक तथा पशु-पक्षियों की योनियों को प्राप्त होंगे। यह दास (रामपाल दास) परमात्मा कबीर जी द्वारा बताए तत्वज्ञान द्वारा समझाकर सत्य साधना शास्त्रविधि अनुसार बताकर आप तथा आपके अज्ञानी धर्मगुरूओं का कल्याण करवाने के लिए यह परमार्थ कर रहा है। मेरे अनुयाई भी इसी दलदल में फँसे थे। इसी तत्वज्ञान को समझकर शास्त्रों में वर्णित सत्य साधना को अपनी आँखों देखकर अकर्तव्य साधना त्यागकर कर्तव्य शास्त्रोक्त साधना करके अपना तथा परिवार के जीवन को धन्य बना रहे हैं। ये दान देते हैं। फिर इन पुस्तकों को छपवाकर आप तक पहुँचाने के लिए पुस्तक बाँटने की सेवा निस्वार्थ निःशुल्क करते हैं। ये आपके हितैषी हैं। परंतु आप पुस्तक को ठीक से न पढ़कर इनका विरोध करते हैं, प्रचार में बाधा डालकर महापाप के भागी बनते हैं।

आप पुस्तक को पढ़ें तथा शांत मन से विचार करें तथा पुस्तकों में दिए शास्त्रों के अध्याय तथा श्लोकों का मेल करें। फिर गलत मिले तो हमें सूचित करें, आपकी शंका का समाधान किया जाएगा।

❖ श्राद्ध इत्यादि शास्त्रविरूद्ध क्रियाएँ झूठे गुरूओं के कहने से करके अपना जीवन नष्ट करते हैं। यदि सतगुरू (तत्वदर्शी संत) का सत्संग सुनते, उसकी संगति करते तो सर्व पापकर्म नष्ट हो जाते। सत्य साधना करके अमर लोक यानि गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में कहे (शाश्वतं स्थानं) सनातन परम धाम में आप जी का आसन यानि स्थाई ठिकाना होता जहाँ कोई कष्ट नहीं। वहाँ पर परम शांति है क्योंकि वहाँ पर कभी जन्म-मृत्यु नहीं होता। गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में भी इस सनातन परम धाम को प्राप्त करने को कहा है। उसके लिए गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में तत्वदर्शी संतों से शास्त्रोक्त ज्ञान व साधना प्राप्त करने को कहा है। वह तत्वदर्शी संत वर्तमान (इक्कीसवीं सदी) में यह दास (रामपाल दास) है। आओ और अपना कल्याण करवाओ।

❑ भूत पूजा तथा पित्तर पूजा क्या है? यह आप जी ने ऊपर (पहले) पढ़ा।

इन पूजाओं के निषेध का प्रमाण पवित्र गीता शास्त्र के अध्याय 9 श्लोक 25 में लिखा है जो आप जी को पहले वर्णन कर दिया है कि भूत पूजा करने वाले भूत बनकर भूतों के समूह में मृत्यु उपरांत चले जाऐंगे। पित्तर पूजा करने वाले पित्तर लोक में पित्तर योनि प्राप्त करके पित्तरों के पास चले जाऐंगे। मोक्ष प्राप्त प्राणी सदा के लिए जन्म-मरण से मुक्त हो जाता है।

➢ प्रेत (भूत) पूजा तथा पित्तर पूजा उस परमेश्वर की पूजा नहीं है। इसलिए गीता शास्त्र अनुसार व्यर्थ है।

➢ वेदों में भूत-पूजा व पित्तर पूजा यानि श्राद्ध आदि कर्मकाण्ड को मूर्खों का कार्य बताया है।

❖ पवित्र मार्कण्डेय पुराण में प्रमाण :-

‘‘श्राद्ध-पिण्डदान के प्रति रूची ऋषि का वेदमत‘‘

मार्कण्डेय पुराण में ‘‘रौच्य ऋषि के जन्म’’ की कथा आती है। एक रुची ऋषि था। वह ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए वेदों अनुसार साधना करता था। विवाह नहीं कराया था। रुची ऋषि के पिता, दादा, परदादा तथा तीसरे दादा सब पित्तर (भूत) योनि में भूखे-प्यासे भटक रहे थे। जिस समय रूची ऋषि की आयु चालीस वर्ष थी, तब उन चारों ने रुची ऋषि को दर्शन दिए तथा कहा कि बेटा! आप ने विवाह क्यों नहीं किया? विवाह करके हमारे श्राद्ध करता। रुची ऋषि ने कहा कि हे पितामहो! वेद में इस श्राद्ध-पिण्डोदक आदि कर्मों को अविद्या कहा है यानि मूर्खों का कार्य कहा है। फिर आप मुझे इस कर्म को करने को क्यों कह रहे हो?

पित्तरों ने भी माना और कहा कि यह बात सत्य है कि कर्मकांड यानि श्राद्ध आदि कर्म को वेदों में अविद्या अर्थात् मूर्खों का कार्य ही कहा है। आप जिस मार्ग पर लगे हो वह मोक्ष मार्ग है। फिर उन पित्तरों ने वेद विरूद्ध ज्ञान बताकर रूची ऋषि को भ्रमित कर दिया क्योंकि मोह ही अज्ञान की जड़ है। रूची ने विवाह करवाया। फिर श्राद्ध-पिण्डोदक क्रियाऐं करके अपना जन्म भी नष्ट किया।

मार्कण्डेय पुराण के प्रकरण से सिद्ध हुआ कि वेदों में तथा वेदों के ही संक्षिप्त रुप गीता में श्राद्ध-पिण्डोदक आदि भूत पूजा के कर्मकाण्ड को निषेध बताया है, नहीं करना चाहिए। उन मूर्ख ऋषियों ने अपने पुत्र को भी श्राद्ध करने के लिए विवश किया। उसने विवाह कराया, उससे रौच्य ऋषि का जन्म हुआ, बेटा भी पाप का भागी बना लिया।

रूची ऋषि भी ब्राह्मण थे। उन्होंने वेदों को कुछ ठीक से समझा था। अपनी आत्मा के कल्याणार्थ शास्त्र विरूद्ध सर्व मनमाना आचरण त्यागकर

शास्त्रोक्त केवल एक ब्रह्म की भक्ति कर रहा था। जो उसके पिता तथा उनके पहले तीन दादा जी शास्त्रविधि त्यागकर यही कर्मकाण्ड करते-कराते थे जिसका परिणाम गीता अध्याय 9 श्लोक 25 वाला होना ही था कि पित्तर पूजने वाले पित्तरों को प्राप्त होंगे, वही हुआ। अब वर्तमान की शिक्षित जनता को अंध श्रद्धा भक्ति त्यागकर विवेक से काम लेकर गीता अध्याय 16 श्लोक 24 में कहे आदेश का पालन करना चाहिए। जिसमें कहा है कि इससे तेरे लिए अर्जुन शास्त्र ही प्रमाण हैं यानि जो शास्त्रों में करने को कहा है, वही करें। जो शास्त्रों में प्रमाणित नहीं है, उसे त्याग दें। गीता में परमात्मा का बताया विधान है तथा पुराणों में ऋषियों का अनुभव है। यदि पुराणों में श्राद्ध आदि कर्मकाण्ड करने को लिखा है तो वह गीता विरूद्ध होने से अमान्य है।

उदाहरण :- एक व्यक्ति की दोस्ती थानेदार से थी। एक दिन उस व्यक्ति ने अपने मित्र दरोगा को बताया कि मेरे को मेरे गाँव का एक दबंग व्यक्ति परेशान करता रहता है। दरोगा ने कहा कि उसको लठ मार, मैं आप निपट लूँगा। कोई मुकदमा नहीं बनने दूँगा। उस व्यक्ति ने दरोगा के आदेशानुसार गाँव के उस व्यक्ति को लठ मारा जो सिर में लगा और व्यक्ति की मृत्यु हो गई। हत्या का मुकदमा दरोगा के मित्र पर बना। उस क्षेत्र के थाने का प्रभारी होने के कारण उसी दरोगा मित्र ने मुकदमा बनाया और हत्या के कारण उसको मृत्युदंड मिला।

❖ विचार करें :- राजा का विधान है कि किसी से झगड़ा मत करो। कानूनी कार्यवाही करो। उस व्यक्ति ने अधिकारी दरोगा का आदेश पालन किया जो राजा के संविधान के विपरीत था। जिस कारण से जीवन से हाथ धो बैठा यानि दण्ड का भागी बना। इसी प्रकार ऋषियों या पित्तरों का श्राद्ध करने, पिण्डदान आदि करने को कहने का आदेश परमात्मा के शास्त्रोक्त विधान के विरूद्ध है। उसका पालन करने से परमात्मा का विधान भंग होने के कारण मोक्ष के स्थान पर भूत-पित्तर, पशु-पक्षियों के शरीर धारण करके अनेकों कष्ट उठाते हैं।

''श्री मार्कण्डेय पुराण में पित्तरों की दुर्गति का प्रमाण''

जिन्दा महात्मा अर्थात् परमेश्वर ने धर्मदास जी से कहा कि ''हे धर्मदास जी! आपने बताया कि आप भूत पूजा (तेरहवीं, सत्तरहवीं आदि भी करते हैं तथा अस्थियाँ उठाकर गति कराते हो) पित्तर पूजा (श्राद्ध आदि करना पिण्ड भराना) तथा देवताओं विष्णु-शिव आदि की पूजा भी करते हो। जबकि गीता अध्याय 9 श्लोक 25 में गीता ज्ञानदाता ने मना किया है। संक्षिप्त मार्कण्डेय पुराण में मदालसा वाले प्रकरण में पृष्ठ 90 पर लिखा है ''जो पित्तर देवलोक में हैं, जो तिर्यग्योनि में पड़े हैं, जो मनुष्य योनि में एवं भूतवर्ग में अर्थात् प्रेत बने हैं, वे पुण्यात्मा हों या पापात्मा जब भूख–प्यास विकल (तड़फते) होते है

तो पिण्डदान तथा जलदान द्वारा तृप्त किया जाता है। **(लेख समाप्त)**

पेश है मार्कण्डेय पुराण के संबंधित प्रकरण की फोटोकॉपी :-

९० संक्षिप्त मार्कण्डेयपुराण

जो पितर देवलोकमें हैं, जो तिर्यग्योनिमें पड़े हैं, जो मनुष्ययोनिमें एवं भूतवर्गमें स्थित हैं, वे पुण्यात्मा हों या पापात्मा, जब भूख-प्याससे विकल होते हैं तो अपने कर्मोंमें लगा हुआ मनुष्य पिण्डदान तथा जलदानके द्वारा उन्हें तृप्त करता है।

❖ विचार करें :- शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण अर्थात् मनमानी पूजा (देवों की, पित्तरों की, भूतों की पूजा) करके प्राणी पित्तर व भूत (प्रेत) बने। वे देवलोक (जो देवताओं की पूजा करके देवलोक में चले गए वे अपने पुण्यों के समाप्त होने पर पित्तर रूप में रहते हैं।) में हैं चाहे यमलोक में या प्रेत बने हैं, सर्व कष्टमय जीवन व्यतीत कर रहे हैं। अब जो उनकी पूजा करेगा वह भी इसी कष्टमयी योनि को प्राप्त होगा। इसलिए सर्व मानव समाज को शास्त्रविधि अनुसार साधना करनी चाहिए। जिससे उन पित्तरों की पित्तर योनि छूट जाएगी तथा साधक भी पूर्ण मोक्ष प्राप्त करेगा।

श्री विष्णु पुराण के तृतीय अंश के अध्याय 14 के श्लोक 10 से 14 में श्राद्ध के विषय में श्री सनत्कुमार ने कहा है कि तृतीया, कार्तिक, शुक्ला नौमी, भाद्रपद कृष्णा त्रयोदशी तथा माघमास की अमावस्या ये चारों तिथियाँ अनन्त पुण्यदायिनी हैं। चन्द्रमा या सूर्य ग्रहण के समय तीन अष्टकाओं अथवा उत्तरायण या दक्षिणायन के आरम्भ में जो पुरूष एकाग्रह चित से पित्तर गणों को तिल सहित जल भी दान करता है वह मानो एक हजार वर्ष तक के लिए श्राद्ध कर लेता है। यह परम रहस्य स्वयं पित्तर गण ही बताते है।'' (लेख समाप्त)

पेश है श्री विष्णु पुराण के तृतीय अंश के अध्याय 14 के श्लोक 10-14 की फोटोकॉपी :-

अ० १४] * तीसरा अंश * १४९

जो पुरुष पितृगण और देवगणको तृप्त करना चाहते हों उनके लिये धनिष्ठा, पूर्वाभाद्रपदा अथवा शतभिषानक्षत्रयुक्त अमावास्या अति दुर्लभ है॥ ९॥ हे पृथिवीपते! जब अमावास्या इन नौ नक्षत्रोंसे युक्त होती है उस समय किया हुआ श्राद्ध पितृगणको अत्यन्त तृप्तिदायक होता है। इनके अतिरिक्त पितृभक्त इलापुत्र महात्मा पुरूरवाके अति विनीत भावसे पूछनेपर श्रीसनत्कुमारजीने जिनका वर्णन किया था वे अन्य तिथियाँ भी सुनो॥ १०-११॥

श्रीसनत्कुमारजी बोले— वैशाखमासकी शुक्ला तृतीया, कार्तिक शुक्ला नवमी, भाद्रपद कृष्णा त्रयोदशी तथा माघमासकी अमावास्या—इन चार तिथियोंको पुराणोंमें 'युगाद्या' कहा है। ये चारों तिथियाँ अनन्त पुण्यदायिनी हैं। चन्द्रमा या सूर्यके ग्रहणके समय, तीन अष्टकाओंमें अथवा उत्तरायण या दक्षिणायनके आरम्भमें जो पुरुष एकाग्रचित्तसे पितृगणको तिलसहित जल भी दान करता है वह मानो एक सहस्र वर्षके लिये श्राद्ध कर देता है—यह परम रहस्य स्वयं पितृगण ही कहते हैं॥ १२—१४॥

विचार करें उपरोक्त श्राद्ध विधि पित्तरों के द्वारा बताई गई है न की वेदोक्त या श्री मद्भगवत् गीता के आधार से है।

श्री विष्णु पुराण के तृतीय अंश के अध्याय 16 के श्लोक 11 में लिखा है ''क्षीरमेकशफाना यदौष्ट्रमाविकमेव च। मार्ग च माहिष चैव वर्जयेच्छाकर्माणि''।। **इस श्लोक का हिन्दी अनुवाद = एक खुरवालों का, ऊंटनी का, भेड़ का मृगी का तथा भैंस का दूध श्राद्धकर्म में प्रयोग न करें। (काम में न लाएँ।)**

पेश है श्री विष्णु पुराण के तृतीय अंश के अध्याय 16 के श्लोक 11 की फोटोकॉपी :-

१५४ * श्रीविष्णुपुराण * [अ० १६

श्राद्धके योग्य नहीं होता॥ १०॥ एक खुरवालोंका, ऊँटनीका, भेड़का, मृगीका तथा भैंसका दूध श्राद्धकर्ममें काममें न ले॥ ११॥

❖ **समीक्षा :- वर्तमान (सन् 2014 तक) सर्व व्यक्ति श्राद्धों में भैस के दूध का ही प्रयोग कर रहे हैं जो पुराण में वर्जित है। जिस कारण से उनके द्वारा किया श्राद्ध कर्म भी व्यर्थ हुआ। श्री विष्णु पुराण के तृतीय अंश के अध्याय 16 के श्लोक 1 से 3 में (मांस द्वारा श्राद्ध करने से पित्तर गण सदा तृप्त रहते हैं।) लिखा है** ''हविष्यमत्स्य मांसैस्तु शशस्य नकुलस्य च। सौकरछाग लैणेयरौरवैर्गवयेन च।। (1) और भ्रगव्यैश्च तथा मासवृद्धया पिता महाः।।(2) खडगमांसमतीवात्र कालशाकं तथा मधु। शस्तानि कर्मण्यत्यन्ततृप्तिदानि नरेश्वर।।(3)

हिन्दी अनुवाद :– हवि, मत्सय (मच्छली) शशंक (खरगोश) नकुल, शुकर (सुअर), छाग, कस्तूरिया मृग, काला मृग, गवय (नील गाय/वन गाय) और मेष (भेड़) के मांसों से गव्य (गौ के घी, दूध) से पित्तरगण एक–एक मास अधिक तृप्त रहते हैं और वार्ध्रीणस पक्षी के मांस से सदा तृप्त रहते हैं।(1-2) श्राद्ध कर्म में गेड़े का मांस काला शाक और मधु अत्यंत प्रशस्त और अत्यंत तृप्ती दायक है।।(3) श्री विष्णु पुराण अध्याय 2 चतुर्थ अंश पृष्ठ 233 पर भी श्राद्ध कर्म में मांस प्रयोग प्रमाण स्पष्ट है।

पेश है श्री विष्णु पुराण के तृतीय अंश के अध्याय 16 के श्लोक 1-3 की फोटोकॉपी :-

अ० १६] * तीसरा अंश * १५३

सोलहवाँ अध्याय

श्राद्ध-कर्ममें विहित और अविहित वस्तुओंका विचार

और्व बोले—हवि, मत्स्य, शशक (खरगोश), नकुल, शूकर, छाग, कस्तूरिया मृग, कृष्ण मृग, गवय (वनगाय) और मेषके मांसोंसे तथा गव्य (गौके दूध-घी आदि)-से पितृगण क्रमशः एक-एक मास अधिक तृप्ति लाभ करते हैं और वार्ध्रीणस पक्षीके मांससे सदा तृप्त रहते हैं॥ १-२॥ हे नरेश्वर! श्राद्धकर्ममें गेंडेका मांस, कालशाक और मधु अत्यन्त प्रशस्त और अत्यन्त तृप्तिदायक हैं *॥ ३॥

समीक्षा :- उपरोक्त पुराण के ज्ञान आदेशानुसार श्राद्ध कर्म करने से पुण्य के स्थान पर पाप ही प्राप्त होगा।

क्या यह उपरोक्त मांस द्वारा श्राद्ध करने का आदेश अर्थात् प्रावधान न्याय संगत है अर्थात् नहीं। इसलिए पुराणों में वर्णित भक्तिविधि तथा पुण्य साधना कर्म शास्त्रविरूद्ध है। जो लाभ के स्थान पर हानिकारक है।

❖ विशेष :- उपरोक्त श्लोक 1-2 के अनुवाद कर्ता ने कुछ अनुवाद को घुमा कर लिखा है। मूल संस्कृत भाषा में स्पष्ट गाय का मांस श्राद्ध कर्म में प्रयोग करने को कहा गया है। हिन्दी अनुवाद कर्ता ने गव्य अर्थात् गौ के मांस के स्थान पर कोष्ठ में ''गौ के घी दूध से'' लिखा है।

विचार करें :- क्या हिन्दू धर्म उपरोक्त मांस आहार को श्राद्ध कर्म में प्रयोग कर सकता है। कभी नहीं। इसलिए ऐसे श्राद्ध न करके श्रद्धापूर्वक धार्मिक अनुष्ठान पूर्ण सन्त के बताए मार्ग से करना चाहिए। वह है नाम मंत्र का जाप, पांचों यज्ञ, तीनों समय की उपासना वाणी पाठ से जो यह दास (रामपाल दास) बताता है। जिससे पित्तरों, प्रेतों आदि का भी कल्याण होकर उपासक पूर्ण मोक्ष प्राप्त करेगा तथा उसके पित्तर (पूर्वज) जो भूत या पित्तर योनियों में कष्ट उठा रहे हैं, उनकी वह योनि छूटकर तुरन्त मानव शरीर प्राप्त करके इस भक्ति को प्राप्त करेगें। जिससे उनका भी पूर्ण मोक्ष हो जाएगा।

मार्कण्डेय पुराण (गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित) में अध्याय ''श्राद्ध कर्म का वर्णन पृष्ठ 100 पर लिखा है :-

''जो प्रपितामह के ऊपर के तीन पीढ़ीयाँ जो नरक में निवास करती हैं, जो पशु–पक्षी की योनि में पड़े है, तथा जो भूत प्रेत आदि के रूप में स्थित है उन सब को विधि पूर्वक श्राद्ध करने वाला यजमान तृप्त करता है। पृथ्वी पर जो अन्न बिखेरते हैं (श्राद्ध कर्म करते समय) उससे पिशाच योनि में पड़े पित्तरों की तृप्ति होती है। स्नान के वस्त्र से जो जल पृथ्वी पर टपकता है, उससे वृक्ष योनि में पड़े हुए पित्तर तृप्त होते हैं। नहाने पर अपने शरीर से जो जल के कण पृथ्वी पर गिरते हैं उनसे उन पित्तरो की तृप्ति होती है जो देव भाव को प्राप्त हुए हैं। पिण्डों के उठाने पर जो अन्न के कण पृथ्वी पर गिरते हैं, उनसे पशु–पक्षी की योनि में पड़े हुए पित्तरों की तृप्ति होती है। अन्यायोपार्जित धन से जो श्राद्ध किया जाता है, उससे चाण्डाल आदि योनियों में पड़े हुए पित्तरों की तृप्ति होती है।

पेश है मार्कण्डेय पुराण के अध्याय श्राद्ध कर्म के वर्णन की संबंधित प्रकरण की फोटोकॉपी :-

इनसे ऊपरके सभी पितर पूर्वज कहलाते हैं। इनमेंसे जो नरकमें निवास करते हैं, जो पशु-पक्षीकी योनिमें पड़े हैं तथा जो भूत-प्रेत आदिके रूपमें स्थित हैं, उन सबको विधिपूर्वक श्राद्ध करनेवाला यजमान तृप्त करता है। किस प्रकार तृप्त करता है, यह बतलाती हूँ; सुनो। मनुष्य पृथ्वीपर जो अन्न बिखेरते हैं, उससे पिशाच-योनिमें पड़े हुए पितरोंकी तृप्ति होती है। बेटा! स्नानके वस्त्रसे जो जल पृथ्वीपर टपकता है, उससे वृक्ष-योनिमें पड़े हुए पितर तृप्त होते हैं। नहानेपर अपने शरीरसे जो जलके कण इस पृथ्वीपर गिरते हैं, उनसे उन पितरोंकी तृप्ति होती है, जो देवभावको प्राप्त हुए हैं। पिण्डोंके उठानेपर जो अन्नके कण पृथ्वीपर गिरते हैं, उनसे पशु-पक्षीकी योनिमें पड़े हुए पितरोंकी तृप्ति होती है। कुलमें जो बालक श्राद्धकर्मके योग्य होकर भी संस्कारसे वञ्चित रह गये हैं अथवा जलकर मरे हैं, वे बिखेरे हुए अन्न और सम्मार्जनके जलको ग्रहण करते हैं। ब्राह्मणलोग भोजन करके जब हाथ-मुँह धोते हैं और चरणोंका प्रक्षालन करते हैं, उस जलसे भी अन्यान्य पितरोंकी तृप्ति होती है। बेटा! उत्तम विधिसे श्राद्ध करनेवाले पुरुषोंके अन्य पितर यदि दूसरी-दूसरी योनियोंमें चले गये हों तो भी उस श्राद्धसे उन्हें बड़ी तृप्ति होती है। अन्यायोपार्जित धनसे जो श्राद्ध किया जाता है, उससे चाण्डाल आदि योनियोंमें पड़े हुए पितर तृप्त होते हैं।

❖ विचार करें :- उपरोक्त योनियों में जो अपने पूर्वज पड़े हैं। उसका मूल कारण है कि उन्होंने शास्त्रविधि अनुसार भक्ति नहीं की। पवित्र गीता जी व पवित्र वेदों में वर्णित विधि अनुसार साधना करते तो उपरोक्त महाकष्ट दायक योनियों में नहीं पड़ते। मुझ दास (लेखक-रामपाल दास) की सर्व मानव समाज से करबद्ध प्रार्थना है कि अब तो जागो, पीछे जो गलती हो चुकी है, उसकी आवृत्ति न हो।

जो साधना यह दास (रामपाल दास) बताता है उससे आपके पूर्वज (सात पीढ़ी तक के) किसी भी योनि में (पित्तर, भूत, पिशाच, पशु-पक्षी, वृक्ष आदि में) पड़े हों उन सर्व की वर्तमान योनि छूटकर तुरन्त मानव जन्म मिलेगा। फिर वे वर्तमान में मुझ दास (रामपाल दास) द्वारा भक्ति साधना प्राप्त करके यदि मर्यादा में रह कर आजीवन यह भक्ति करते रहेगें तो पूर्ण मोक्ष प्राप्त करेगें। यही प्रमाण कबीर परमेश्वर द्वारा दिए तत्वज्ञान को संत गरीबदास जी बता रहे हैं :-

अग्नि लगा दिया जद लम्बा, फूंक दिया उस ठाई।
पुराण उठाकर पण्डित आए, पीछे गरूड़ पढ़ाई।।
नर सेती फिर पशुवा किजे, गधा बैल बनाई।
छप्पन भोग कहा मन बौरे, किते कुरड़ी चरने जाई।।
प्रेत शिला पर जाय विराजे, पित्तरों पिण्ड भराई।
बहुर श्राद्ध खाने को आऐ, काग भए कलि माहीं।।

जै सतगुरू की संगत करते, सकल कर्म कट जाई।
अमर पुरी पर आसन होते, जहाँ धूप ना छांई।।

उपरोक्त वाणी पांचवें वेद (सूक्ष्म अर्थात् स्वसम वेद) की है। जिसमें स्पष्ट किया है कि पित्तरों आदि के पिण्ड दान करते हुए अर्थात् श्राद्ध कर्म करते-करते भी पशु-पक्षी व भूत प्रेत की योनियों में प्राणी पड़ते हैं तो वह श्राद्ध कर्म किस काम आया? फिर कहा है कि यदि सतगुरू (तत्वज्ञान दाता तत्वदर्शी संत) का संग करते अर्थात् उसके बताए अनुसार भक्ति साधना करते तो सर्व कर्म कट जाते। न पशु बनते, न पक्षी, न पित्तर बनते, न प्रेत। सीधे सतधाम (शाश्वत स्थान) पर चले जाते जहां जाने के पश्चात् फिर लौट कर इस संसार में किसी भी योनि में नहीं आते (प्रमाण गीता अध्याय 4 श्लोक 34 अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 तथा श्लोक 16-17 में तथा अध्याय 18 श्लोक 62 में व अध्याय 9 श्लोक 25 में)

पुराणों में लिखा है (जो ऋषि का अनुभव है) कि पित्तर धन देते हैं, पुत्र देते हैं। रोग नष्ट कर देते हैं आदि-आदि।

❖ विचार करें :- पित्तर स्वयं भूखे-प्यासे यमलोक (नरक लोक) में कष्ट उठाते हैं। अपनी भूख-प्यास शांत करने के लिए आप जी से श्राद्ध-कर्म करने को भ्रमित ज्ञान के आधार से कहते हैं तो क्या वे आपको सुखी कर सकते हैं? यह बात न्याय संगत नहीं है। अपने धर्मगुरू यह भी कहा करते हैं कि किस्मत में लिखा ही प्राणी प्राप्त करते हैं, उसमें कोई परिवर्तन नहीं हो सकता। परंतु सच्चाई यह है कि यदि साधक पूर्ण परमात्मा की सत्य साधना करता है तो परमात्मा को ही यह अधिकार है कि भाग्य से भिन्न भी दे सकता है। अन्य किसी देवी-देव तथा पित्तर आदि को यह अधिकार नहीं है।

गीता अध्याय 7 श्लोक 12-15 तथा 20-23 में तो तीनों देवताओं (श्री ब्रह्मा रजगुण, श्री विष्णु सतगुण तथा श्री शिव तमगुण) की भक्ति करना भी निषेध बताया है। हिन्दू ब्रह्म की साधना न करके अन्य उपरोक्त देवताओं या अन्य देवताओं की पूजा करते हैं। इनकी पूजा करने वालों को राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए, मनुष्यों में नीच, दूषित कर्म करने वाले मूर्ख कहा है। आप जी विचार करें कि पित्तर कौन-से खेत की मूली हैं? पित्तर साधक को धन, पुत्र आदि दे देंगे, यह दूर की कौड़ी है।

''प्रभु कबीर जी द्वारा श्राद्ध भ्रम खण्डन''

एक समय काशी नगर (बनारस) में गंगा दरिया के घाट पर कुछ पंडित जी श्राद्धों के दिनों में अपने पित्तरों को जल दान करने के उद्देश्य से गंगा के जल का लोटा भरकर पटरी पर खड़े होकर सुबह के समय सूर्य की ओर मुख करके पृथ्वी पर लोटे वाला जल गिरा रहे थे। परमात्मा कबीर जी ने यह

सब देखा तो जानना चाहा कि आप यह किस उद्देश्य से कर रहे हैं? पंडितों ने बताया कि हम अपने पूर्वजों को जो पित्तर बनकर स्वर्ग में निवास कर रहे हैं, जल दान कर रहे हैं। यह जल हमारे पित्तरों को प्राप्त हो जाएगा। यह सुनकर परमेश्वर कबीर जी उन अंध श्रद्धा भक्ति करने वालों का अंधविश्वास समाप्त करने के लिए उसी गंगा दरिया में घुटनों पानी में खड़ा होकर दोनों हाथों से गंगा दरिया का जल सूर्य की ओर पटरी पर शीघ्र-शीघ्र फैंकने लगे। उनको ऐसा करते देखकर सैंकड़ों पंडित तथा सैंकड़ों नागरिक इकट्ठे हो गए। पंडितों ने पूछा कि हे कबीर जी! आप यह कौन-सी कर्मकाण्ड की क्रिया कर रहे हो? इससे क्या लाभ होगा? यह तो कर्मकाण्ड में लिखी ही नहीं है।

कबीर जी ने उत्तर दिया कि यहाँ से एक मील (1½ कि.मी.) दूर मेरी कुटी के आगे मैंने एक बगीची लगा रखी है। उसकी सिंचाई के लिए क्रिया कर रहा हूँ। यह जल मेरी बगीची की सिंचाई कर रहा है।

यह सुनकर सर्व पंडित हँसने लगे और बोले कि यह कभी संभव नहीं हो सकता। एक मील दूर यह जल कैसे जाएगा? यह तो यहीं रेत में समा गया है। कबीर जी ने कहा कि यदि आपके द्वारा गिराया जल करोड़ों मील दूर स्वर्ग में जा सकता है तो मेरे द्वारा गिराए जल को एक मील जाने पर कौन-सी आश्चर्य की बात है?

यह बात सुनकर पंडित जी समझ गए कि हमारी क्रियाऐं व्यर्थ हैं। कबीर जी ने एक घण्टा बाहर पटरी पर खड़े होकर कर्मकाण्ड यानि श्राद्ध व अन्य क्रियाओं पर सटीक तर्क किया। कहा कि आप एक ओर तो कह रहे हो कि आपके पित्तर स्वर्ग में हैं। दूसरी ओर कह रहे हो, उनको पीने का पानी नहीं मिल रहा। वे वहाँ प्यासे हैं। उनको सूर्य को अर्ध देकर जल पार्सल करते हो। यदि स्वर्ग में पीने के पानी का ही अभाव है तो उसे स्वर्ग नहीं कह सकते। वह तो रेगिस्तान होगा।

वास्तव में वे पित्तरगण यमराज के आधीन यमलोक रूपी कारागार में अपराधी बनाकर डाले जाते हैं। वहाँ पर जो निर्धारित आहार है, वह सबको दिया जाता है। जब पृथ्वी पर बनी कारागार में कोई भी कैदी खाने बिना नहीं रहता। सबको खाना-पानी मिलता है तो यमलोक वाली कारागार जो निरंजन काल राजा ने बनाई है, उसमें भी भोजन-पानी का अभाव नहीं है।

कुछ पित्तरगण पृथ्वी पर विचरण करने के लिए यमराज से आज्ञा लेकर पृथ्वी पर पैरोल पर आते हैं। वे जीभ के चटोरे होते हैं। उनको कारागार वाला सामान्य भोजन अच्छा नहीं लगता। वे भी मानव जीवन में इसी भ्रम में अंध भक्ति करते थे कि श्राद्धों में एक दिन के श्राद्ध कर्म से पित्तरगण एक वर्ष के लिए तृप्त हो जाते हैं। उसी आधार से रूची ऋषि के चारों पूर्वज पित्तरों ने पैरोल पर आकर काल प्रेरणा से रूची ऋषि को भ्रमित करके वेदों

अनुसार शास्त्रोक्त साधना छुड़वाकर विवाह कराकर श्राद्ध आदि शास्त्रविरूद्ध कर्मकाण्ड के लिए प्रेरित किया। उस भले ब्राह्मण को भी पित्तर बनाकर छोड़ा। पृथ्वी पर आकर पित्तर रूपी भूत किसी व्यक्ति (स्त्री-पुरूष) में प्रवेश करके भोजन का आनंद लेते हैं। अन्य के शरीर में प्रवेश करके भोजन खाते हैं। भोजन की सूक्ष्म वासना से उनका सूक्ष्म शरीर तृप्त होता है। लेकिन एक वर्ष के लिए नहीं। यदि कोई पिता-दादा, दादी, माता आदि-आदि किसी पशु के शरीर को प्राप्त हैं तो उसको कैसे तृप्ति होगी? उसको दस-पंद्रह किलोग्राम चारा खाने को चाहिए। कोई श्राद्ध करने वाला गुरू-पुरोहित भूसा खाता देखा है। आवश्यक नहीं है कि सबके माता-पिता, दादा-दादी आदि-आदि पित्तर बने हों। कुछ के पशु-पक्षी आदि अन्य योनियों को भी प्राप्त होते हैं। परंतु श्राद्ध सबके करवाए जाते हैं। इसे कहते हैं शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण यानि शास्त्र विरूद्ध भक्ति।

''श्री नानक देव जी द्वारा श्राद्ध भ्रम खण्डन''

❖ **अन्य उदाहरण :-** सिक्ख धर्म के प्रवर्तक श्री नानक देव साहेब जी की जीवनी में एक घटना ऐसी है जिसका वर्णन करता हूँ जो पवित्र पुस्तक ''भाई बाले वाली जन्म साखी श्री नानक देव'' में लिखी है जिसकी हैडिंग है ''आगे साखी दुनिचंद खत्री नाल होई''।

☛ **संक्षिप्त प्रकरण इस प्रकार है :-**

श्री नानक जी को परमात्मा (परम अक्षर ब्रह्म) बेई नदी पर उस समय मिले थे, जिस समय श्री नानक जी सुलतानपुर शहर से सुबह के समय प्रतिदिन की तरह बेई नदी में स्नान करने के लिए गए थे। अन्य नगरवासी भी स्नान कर रहे थे। उस समय परमेश्वर कबीर जी बाबा जिंदा के वेश में आए और श्री नानक जी के साथ दरिया में स्नान करने के बहाने प्रवेश हुए। अन्य उपस्थित व्यक्ति देख रहे थे। दोनों ने दरिया में डुबकी लगाई, परंतु बाहर नहीं आए। दोनों को दरिया में डूबा मान लिया गया था।

परमेश्वर जी श्री नानक जी की आत्मा को लेकर (शरीर को दूर जंगल में छोड़कर) अपने साथ अपने निवास स्थान सतलोक (सच्चखण्ड) में ले गए। तीन दिन तक काल ब्रह्म के इक्कीस ब्रह्माण्डों, अक्षर पुरूष के सात शंख ब्रह्माण्डों तथा अपने सतलोक के असंख्य ब्रह्माण्डों की स्थिति को आँखों दिखाया, यथार्थ आध्यात्मिक ज्ञान बताया तथा यथार्थ मोक्ष मंत्र सतनाम (जो दो अक्षर का है जिसमें एक ॐ मंत्र है तथा दूसरा गुप्त है जो उपदेशी को बताया जाता है।) से मुक्ति होना बताया। फिर एक नाम (सारनाम) का विशेष योगदान मानव के मोक्ष की साधना में है, उससे परिचित कराया तथा सतनाम और सारनाम को कलयुग के पाँच हजार पाँच सौ पाँच (5505) वर्ष

बीत जाने तक गुप्त रखने की आज्ञा दी। श्राद्ध-पिण्डदान आदि कर्मकाण्ड को व्यर्थ बताया और स्वर्ग-नरक को दिखाया।

तीसरे दिन श्री नानक जी की आत्मा को शरीर में प्रवेश करके अंतर्ध्यान हो गए। उसके पश्चात् श्री नानक जी ने अपने दो शिष्यों ''भाई बाला तथा मर्दाना'' को साथ लेकर प्रभु से प्राप्त यथार्थ ज्ञान व आँखों देखी ऊपर के लोकों की व्यवस्था का प्रचार करने के उद्देश्य से देश-प्रदेश में बारह वर्ष भ्रमण किया। उसी दौरान लाहौर में एक धनी व्यक्ति दुनिचन्द खत्री की प्रार्थना पर उनके घर गए। उस दिन सेठ दुनिचन्द खत्री ने अपने पिता जी का श्राद्ध किया था। कई ब्राह्मणों को भोजन करवाया तथा वस्त्र व हजारों रूपये दक्षिणा दी थी। श्री नानक जी ने पूछा कि हे दुनिचन्द! आज किस उपलक्ष्य में इतने पकवान बनाऐ हैं। दुनिचन्द ने बताया कि महाराज जी! आज मेरे पिता जी का श्राद्ध किया है। श्री नानक जी ने पूछा कि आपके पिता जी कहाँ है? उत्तर दुनिचन्द का कि वे स्वर्गवासी हो चुके हैं। श्राद्ध करने से उनको एक वर्ष तक स्वर्ग में भूख नहीं लगती।

यह बात सुनकर श्री नानक जी ने कहा कि हे दुनिचन्द! आपको आपके अज्ञानी गुरूओं ने भ्रमित कर रखा है। आपका पिता जी तो बाघ (Lion) के शरीर को प्राप्त होकर उस जंगल में एक वृक्ष के नीचे भूख से व्याकुल बैठा है। यदि मेरी बात पर विश्वास नहीं है तो जाँच कर सकते हैं। तू एक व्यक्ति का भोजन तैयार कर, उस जंगल में जा, तेरी दृष्टि पड़ते ही मेरे आशीर्वाद से उस बाघ (सिंह) को मनुष्य बुद्धि आ जाएगी। उसको अपना पूर्व जन्म भी याद आ जाएगा। दुनिचन्द जी को श्री नानक जी पर पूर्ण विश्वास था कि इन्होंने जो बोल दिया, वह सिद्ध है। इस महात्मा में लोग बड़ी शक्ति बताते हैं।

दुनिचन्द सेठ एक व्यक्ति का भोजन जो श्राद्ध के बाद बचा था, लेकर उस बताए जंगल में उसी झाड़ के पास गया तो एक सिंह दिखाई दिया जो दुनिचन्द की ओर कुत्ते की तरह दुम हिला-हिलाकर भाव प्रकट करने लगा कि मैं कोई हानि नहीं करूंगा, आ जा मेरे पास। दुनिचन्द सेठ ने भोजन बाघ के सामने थाली में रख दिया। सर्व भोजन बाघ खा गया। दुनिचन्द ने पूछा कि हे पिता जी! आप तो बड़े धर्म-कर्म करते थे। आप तो सदा शाकाहारी रहे थे। आपकी यह दशा कैसे हुई?

श्री नानक महाराज जी की शक्ति से सिंह ने कहा कि बेटा! जब मेरे प्राण निकल रहे थे, उसी समय साथ वाले मकान में माँस पकाया जा रहा था। उसकी गंध मेरे तक आई, मेरे मन में माँस खाने की इच्छा हुई। उसी समय मेरे प्राण निकल गए। जिस कारण से मुझे शेर का शरीर मिला। बेटा दुनिचन्द! आप किसी पूर्ण संत से दीक्षा लेकर अपने जीव का कल्याण करा लेना। मानव जीवन बड़ी कठिनता से मिलता है। यह कहकर शेर जंगल की

ओर गहरा चला गया। दुनिचन्द ने उन अज्ञानी धर्मगुरूओं को धिक्कारा जो सबको भ्रमित कर रहे हैं। अब विश्वास हुआ कि श्राद्ध करने से कोई लाभ मृतक को नहीं मिलता। घर आकर श्री नानक जी के चरणों में गिरकर अपने कल्याण के लिए यथार्थ भक्ति का ज्ञान तथा मंत्र लेकर आजीवन स्मरण किया तथा सर्व अंधविश्वास वाली साधना त्याग दी जो शास्त्रों के विरूद्ध कर रहा था। मानव जीवन सफल किया।

❖ अन्य उदाहरण :-

''संत गरीबदास जी द्वारा श्राद्ध भ्रम खण्डन''

संत गरीबदास जी महाराज (गाँव-छुड़ानी, जिला-झज्जर, प्रांत-हरियाणा) को श्री नानक जी की तरह दस वर्ष की आयु में सन् 1727 (विक्रमी संवत् 1784) में नला नाम के खेत (जंगल) में जिंदा बाबा के वेश में परम अक्षर ब्रह्म मिले थे। उस समय छुड़ानी गाँव के दस-बारह व्यक्तियों ने बाबा जिंदा को देखा, बातें की। अन्य व्यक्ति अपने-अपने कार्य में लग गए।

बालक गरीबदास जी की आत्मा को निकालकर परमात्मा सतलोक ले गए। ऊपर के सब लोकों का अवलोकन करवाकर सर्व यथार्थ आध्यात्मिक ज्ञान बताकर लगभग 8-9 घण्टे बाद वापिस शरीर में प्रविष्ट कर दिया। बालक गरीबदास जी को मृत जानकर चिता पर रख दिया था। अग्नि लगाने वाले थे। उसी समय संत गरीबदास जी उठकर घर की ओर चल पड़े।

परमेश्वर कबीर जी ने उनको यथार्थ भक्ति ज्ञान दिया। उनके बहुत सारे शिष्य हुए। गाँव छुड़ानी के एक भक्त को संत गरीबदास जी की बात पर विश्वास नहीं था कि श्राद्ध कराया हुआ मृतक को नहीं मिलता। श्राद्धों के दिनों में उस भक्त के दोनों माता-पिता के श्राद्ध लगातार दो दिन किए गए। पहले दिन माता जी का और अगले दिन पिता जी का।

संत गरीबदास जी ने कहा कि हे भक्त! आपके माता-पिता तो तुम्हारे खेत की जोहड़ी (जिसे ग्रामीण भाषा में लेट यानि छोटा तालाब = जोहड़ी कहते हैं।) पर भूखे रो रहे हैं। आप दो व्यक्तियों का भोजन लेकर मेरे साथ चलो। वह भक्त अति शीघ्र अपने पिता के श्राद्ध से बची खीर व रोटी दो व्यक्तियों की लेकर संत गरीबदास जी के साथ गया। उनके खेत में बनी जोहड़ी से लगभग दो सौ फुट दूर खड़े होकर संत गरीबदास जी ने आवाज लगाई कि हे फतेह सिंह तथा दया कौर (काल्पनिक नाम)! आओ, आपका पुत्र आपके लिए भोजन लाया है। उसी समय गीदड़ तथा गीदड़ी झाड़ियों से बाहर निकले। पहले तो ऊपर को मुख करके चिल्लाए। फिर दौड़े-दौड़े संत गरीबदास जी के पास आए। दोनों के सामने खीर-रोटी रख दी। शीघ्र-शीघ्र खाकर दौड़ गए। उस दिन उस भ्रमित भक्त का अज्ञान भंग हुआ। वह

प्रतिदिन दो व्यक्तियों का भोजन जैसा भी घर पर बनता था, एक समय उस जोहड़ी की झाड़ियों में रख देता। प्रतिदिन वे दोनों जानवर भोजन खा जाते। कुछ वर्ष पश्चात् उनकी मृत्यु हो गई।

यह देखकर भी अन्य गाँव वाले तो उस भक्त का मजाक करते थे कि तेरे को गरीबु (संत गरीबदास जी को गाँव के लोग गरीबा-गरीबु आदि-आदि अपभ्रंस नामों से पुकारते थे) ने बहका दिया है। श्राद्ध नहीं करता, बड़ी हानि हो जाएगी। परंतु भक्त को अटल विश्वास हो चुका था। आजीवन मर्यादा में रहकर साधना करके जीवन सफल किया। जीवन में कोई हानि नहीं हुई, अपितु अद्भुत लाभ हुए। धनी हो गया। सैंकड़ों गाय मोल ले ली। बड़ी हवेली (कोठी) बना ली। कुछ वर्ष पश्चात् बच्चों ने भी दीक्षा ले ली। सुखी जीवन जीया।

❖ अन्य उदाहरण :-

''लेखक (रामपाल दास) द्वारा श्राद्ध भ्रम खण्डन''

''सत्य कथा''

मेरे पूज्य गुरुदेव स्वामी रामदेवानन्द जी गाँव-बड़ा पैंतावास, तहसील-चरखी दादरी, जिला-भिवानी (प्रान्त-हरियाणा) के निवासी थे जो लगभग सोलह वर्ष की आयु में पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति के लिए अचानक घर त्याग कर निकल गए। प्रतिदिन पहनने वाले वस्त्रों को अपने ही खेतों के निकट घने जंगल में किसी मृत पशु की अस्थियों के पास डाल गए। शाम को घर न पहुँचने के कारण घर वालों ने जंगल में तलाश की। रात्रि का समय था। कपड़े पहचान कर दुःखी मन से पशु की अस्थियों को बच्चे की अस्थियाँ जान कर उठा लाए तथा यह सोचा कि बच्चा जंगल में चला गया, किसी हिंसक जानवर ने खा लिया। अन्तिम संस्कार कर दिया। सर्व क्रियाऐं की, तेरहवीं-बरसौदी (वर्षी) आदि की तथा श्राद्ध भी निकालते रहे।

लगभग 104 वर्ष की आयु प्राप्त होने के उपरान्त स्वामी जी अचानक अपने गाँव बड़ा पैंतावास जिला भिवानी, तहसील-चरखी दादरी, हरियाणा में पहुँच गए। स्वामी जी का बचपन का नाम श्री हरिद्वारी जी था तथा पवित्र ब्राह्मण कुल में जन्म था। मुझ दास को पता चला तो मैं भी दर्शनार्थ पहुँच गया। स्वामी जी की भाभी जी जो लगभग 92 वर्ष की आयु की थी। मैंने उस वृद्धा से पूछा कि हमारे गुरु जी के घर त्याग जाने के उपरान्त क्या महसूस किया? उस वृद्धा ने बताया कि मेरा विवाह हुआ तब मुझे बताया गया कि इनका एक भाई हरिद्वारी था जो किसी हिंसक जानवर ने जंगल में खा लिया था। उसके श्राद्ध निकाले जा रहे हैं। मुझे भी इनके श्राद्ध निकालने को कहा गया। वृद्धा ने बताया कि 70 श्राद्ध तो मैं अपने हाथों निकाल चुकी हूँ।

जब कभी फसल अच्छी नहीं होती या कोई घर का सदस्य बीमार हो जाता तो अपने पुरोहित (गुरु जी) से कारण पूछते तो वह कहा करता कि हरद्वारी पित्तर बना है, वह तुम्हें दुःखी कर रहा है।

श्राद्धों के निकालने में कोई अशुद्धि रही है। अब की बार सर्व क्रिया मैं स्वयं अपने हाथों से करूँगा। पहले मुझे समय नहीं मिला था क्योंकि एक ही दिन में कई जगह श्राद्ध क्रियाऐं करने जाना पड़ा। इसलिए बच्चे को भेजा था। तब तक कुछ भेंट चढ़ाओ ताकि उसे शान्त किया जाए। तब उसे 21 या 51 रूपये जो भी कहता था, डरते भेंट करते थे। फिर श्राद्धों के समय गुरु जी स्वयं श्राद्ध करते थे। तब मैंने कहा माता जी अब तो छोड़ दो इस गीता जी विरुद्ध साधना को, नहीं तो आप भी प्रेत बनोगी।

गीता अध्याय 9 श्लोक 25 सुनाया। तब वह वृद्धा कहने लगी गीता जी मैं भी पढती हूँ। दास ने कहा आपने पढ़ा है, समझा नहीं। आगे से तो बन्द कर दो इस साधना को। वृद्धा ने उत्तर दिया न भाई, कैसे छोड़ दें श्राद्ध निकालना, यह तो सदियों पुरानी (लाग) परम्परा है। हे पाठको! यह दोष भोली आत्माओं का नहीं है। यह दोष मूर्ख गुरुओं (नीम हकीमों) का है जिन्होंने अपने पवित्र शास्त्रों को समझे बिना मनमाना आचरण (पूजा का मार्ग) बता दिया। जिस कारण न तो कोई कार्य सिद्ध होता है, न परमगति तथा न कोई सुख ही प्राप्त होता है। (प्रमाण :- पवित्र गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24)

<u>शंका प्रश्न</u> 44 :- यदि किसी के माता-पिता भूखे हों, वे दिखाई देकर कहें तो वह पुत्र नहीं जो उनकी इच्छा पूरी न करे।

❖ उत्तर शंका समाधान :- यदि किसी का बच्चा कुएं में गिरा हो वह तो चिल्लाएगा कि मुझे बचा लो। पिता जी आ जाओ। मैं मर रहा हूँ। वह पिता मूर्ख होगा जो भावुक होकर कूएं में छलाँग लगाकर बच्चे को बचाने की कोशिश करके स्वयं भी डूबकर मर जाएगा। बच्चे को भी नही बचा पाएगा। उसको चाहिए कि लम्बी रस्सी का प्रबन्ध करे। फिर उस कुएं में छोड़े। बच्चा उसे पकड़ ले। फिर बाहर खींचकर बच्चे को कुएं से निकाले।

इसी प्रकार पूर्वज तो शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण (पूजा) करके पित्तर बन चुके हैं। संतान को भी पित्तर बनाने के लिए पुकार रहे हैं। तत्वज्ञान को समझकर अपना कल्याण करवाएँ तथा मुझ दास (रामपाल दास) के पास परमेश्वर कबीर बंदी छोड़ जी की प्रदान की हुई वह विधि है जो साधक का तो कल्याण करेगी ही, उसके पित्तरों की भी पित्तर योनि छूटकर मानव जन्म प्राप्त होगा तथा भक्ति युग में जन्म होकर सत्य भक्ति करके एक या दो जन्म में पूर्ण मोक्ष प्राप्त करेगें।

❖ विचार करें :- जैसा कि उपरोक्त रूची ऋषि की कथा में पित्तर डर रहे हैं कि यदि हमारे श्राद्ध नहीं किए गए तो हम पतन को प्राप्त होगें अर्थात्

हमारा पतन (मृत्यु) हो जाएगा। अब उनको पित्तर योनि जो अत्यंत कष्टमय है, अच्छी लग रही है। उसे त्यागना नहीं चाह रहे।

यह तो वही कहानी वाली बात है कि ''एक समय एक ऋषि को अपने भविष्य के जन्म का ज्ञान हुआ। उसने अपने पुत्रों को बताया कि मेरा अगला जन्म अमूक व्यक्ति के घर एक सूअरी से होगा। मैं सूअर का जन्म पाऊंगा। उस सूअरी के गले में गांठ है। यह उसकी पहचान है। उसके उदर से मेरा जन्म होगा। मेरी पहचान यह होगी कि मेरे सिर पर गांठ होगी जो दूर से दिखाई देगी। मेरे बच्चो! उस व्यक्ति से मुझे मोल ले लेना तथा मुझे मार देना, मेरी गति कर देना।

बच्चों ने कहा बहुत अच्छा पिता जी। ऋषि ने फिर आँखों में पानी भरकर कहा कि बच्चो! कहीं लालचवश मुझे मोल न लो और मुझे तुम मारो नहीं, यह कार्य तुम अवश्य करना, नहीं तो मैं सूअर योनि में महाकष्ट उठाऊंगा। बच्चों ने पूर्ण विश्वास दिलाया।

उसके पश्चात् कुछ दिनों में उस ऋषि का देहांत हो गया। उसी व्यक्ति के घर पर उसी गले में गांठ वाली सूअरी के वहीं सिर पर गांठ वाला बच्चा भी अन्य बच्चों के साथ उत्पन्न हुआ। उस ऋषि के बच्चों ने वह सूअरी का बच्चा मोल ले लिया। तब उसे मारने लगे। उसी समय वह बच्चा बोला, बेटा! मुझे मत मारो। मेरा जीवन नष्ट करके तुम्हें क्या मिलेगा?

तब उस ऋषि के पूर्व जन्म के बेटों ने कहा, पिता जी! आपने ही तो कहा था। तब वह सूअर के बच्चे रूप में ऋषि बोला कि मैं आपके सामने हाथ जोड़ता हूँ। मुझे मत मारो, मेरे भाईयों (अन्य सूअर के बच्चों) के साथ मेरा दिल लगा है। मुझे बख्श दो। बच्चों ने वह बच्चा छोड़ दिया, मारा नहीं।

इस प्रकार यह जीव जिस भी योनि में उत्पन्न हो जाता है, उसे त्यागना नहीं चाहता। जबकि यह शरीर एक दिन सर्व का जाएगा। इसलिए भावुकता में न बहकर विवेक से कार्य करना चाहिए। यह दास (रामपाल दास) जो साधना बताएगा, उससे आम के आम और गुठलियों के दाम भी मिलेगें।

इसी विष्णु पुराण में तृतीय अंश के अध्याय 15 श्लोक 55-56 पृष्ठ 153 पर लिखा है कि ''(और्व ऋषि सगर राजा को बता रहा है)'' हे राजन् श्राद्ध करने वाले पुरूष से पित्तरगण, विश्वदेव गण आदि सर्व संतुष्ट हो जाते हैं। हे भूपाल! पित्तरगण का आधार चन्द्रमा है और चन्द्रमा का आधार योग (शास्त्रअनुकूल भक्ति) है। इसलिए श्राद्ध में योगी जन (तत्व ज्ञान अनुसार शास्त्रविधि अनुसार साधक जन) को अवश्य बुलाए यदि श्राद्ध में एक हजार ब्राह्मण भोजन कर रहे हों उनके सामने एक योगी (शास्त्रअनुकूल साधक) भी हो तो वह उन एक हजार ब्राह्मणों का भी उद्धार कर देता है तथा यजमान का भी उद्धार कर देता है। **(पित्तरों का उद्धार का अर्थ है कि पित्तरों की योनि छूटकर मानव शरीर**

मिलेगा। यजमान तथा ब्राह्मणों के उद्धार से तात्पर्य यह है कि उनको सत्य साधना का उपदेश करके मोक्ष का अधिकारी बनाएगा)

पेश है प्रमाण के लिए श्री विष्णु पुराण के तृतीय अंश के अध्याय 15 श्लोक 55-56 की फोटोकॉपी :-

अ० १५] * तीसरा अंश * १५३

हे भूपाल! पितृगणका आधार चन्द्रमा है और चन्द्रमाका आधार योग है, इसलिये श्राद्धमें योगिजनको नियुक्त करना अति उत्तम है॥ ५५॥ हे राजन्! यदि श्राद्धभोजी एक सहस्र ब्राह्मणोंके सम्मुख एक योगी भी हो तो वह यजमानके सहित उन सबका उद्धार कर देता है॥ ५६॥

❖ योगी की परिभाषा :- गीता अध्याय 2 श्लोक 53 में कहा है कि हे अर्जुन! जिस समय आप की बुद्धि भिन्न-2 प्रकार के भ्रमित करने वाले ज्ञान से हटकर एक तत्व ज्ञान पर स्थिर हो जाएगी, तब तू योगी बनेगा अर्थात् भक्त बनेगा। (योग का प्राप्त होगा) भावार्थ है कि तत्व ज्ञान आधार से साधना करने वाला ही मोक्ष का अधिकारी बनता है। उसी में नाम साधना (भक्ति) का धन होता है। वह राम नाम की कमाई का धनी होता है।

इसलिए यह दास (रामपाल दास) आपको वह शास्त्रानुकूल साधना प्रदान करेगा जिससे आप योगी (सत्य साधक) हो जाओगे। आपका कल्याण तथा आपके पित्तरों का भी कल्याण हो जाएगा।

जैसा कि विष्णु पुराण तृतीय अंश अध्याय 15 श्लोक 13 से 17 पृष्ठ 210 पर लिखा है कि देवताओं के निमित्त श्राद्ध (पूजा) में अयुग्म संख्या (3,5,7,9 की संख्या) में ब्राह्मणों को एक साथ भोजन कराए तथा उनका मुँह पूर्व की ओर बैठाकर भोजन कराए तथा पित्तरों के लिए श्राद्ध (पूजा) करने के समय युग्म संख्या (दो, चार, छः, आठ की संख्या) में उत्तर की ओर मुख करके बैठाए तथा भोजन कराए।

विचार करने की बात यह है कि इसी विष्णु पुराण, इसी तृतीय अंश के अध्याय 15 में श्लोक 55-56 पृष्ठ 153 पर यह भी तो लिखा है कि एक योगी (शास्त्रानुकूल सत्य साधक) अकेला ही पित्तरों तथा एक हजार ब्राह्मणों तथा यजमान सहित सर्व का उद्धार कर देगा। क्यों न हम एक योगी की खोज करें जिससे सर्व लाभ प्राप्त हो जाएगा।

कबीर परमेश्वर जी ने कहा है कि :-

एकै साधे सब सधै, सब साधै सब जाय।
माली सीचें मूल को, फलै फूलै अघाय।।

यह दास (रामपाल दास) भी धार्मिक अनुष्ठान (श्रद्धा से पूजा) करता और कराता है। जिसके करने से साधक पित्तर, भूत नहीं बनता अपितु पूर्ण

मोक्ष प्राप्त करता है तथा जो पूर्वज गलत साधना (शास्त्रविधि त्याग कर मनमाना आचरण अर्थात् पूजा) करके पित्तर भूत बने हैं, उनका भी छुटकारा हो जाता है।

यही प्रमाण इसी विष्णु पुराण पृष्ठ 209 पर इसी तृतीय अंश के अध्याय 14 श्लोक 20 से 31 में भी लिखा है कि जिसके पास श्राद्ध करने के लिए धन नहीं है तो वह यह कहे '' हे पित्तर गणों! आप मेरी भक्ति से तृप्ति लाभ प्राप्त करें क्योंकि मेरे पास श्राद्ध करने के लिए वित्त नहीं है।''

कृपया पाठक जन विचार करें कि जब भक्ति (मन्त्र जाप की कमाई) से पित्तर तृप्त हो जाते हैं तो फिर अन्य कर्मकाण्ड की क्या आवश्यकता है? यह सर्व प्रपंच ज्ञानहीन गुरू लोगों ने अपने उदर पोषण के लिए ही किया है क्योंकि गीता अध्याय 4 श्लोक 33 में भी लिखा है द्रव्य (धन द्वारा किया) यज्ञ (धार्मिक अनुष्ठान) से ज्ञान यज्ञ (तत्वज्ञान आधार पर नाम जाप साधना) श्रेष्ठ है।

एक और विशेष विचारणीय विषय है कि विष्णु पुराण में पित्तर व देव पूजने का आदेश एक ऋषि का है तथा वेदों व गीता जी में पित्तरों वे देवताओं की पूजा का निषेध है जो आदेश ब्रह्म (काल रूपी ब्रह्म) भगवान का है। यदि पुराणों के अनुसार साधना करते हैं तो प्रभु के आदेश की अवहेलना होती है। जिस कारण से साधक दण्ड का भागी होता है।

''श्राद्ध करने की श्रेष्ठ विधि''

श्री विष्णु पुराण के तीसरे अंश में अध्याय 15 श्लोक 55-56 पृष्ठ 153 पर लिखा है कि श्राद्ध के भोज में यदि एक योगी यानि शास्त्रोक्त साधक को भोजन करवाया जाए तो श्राद्ध भोज में आए हजार ब्राह्मणों तथा यजमान के पूरे परिवार सहित तथा सर्व पित्तरों का उद्धार कर देता है।

❖ विवेचन :- मेरे (लेखक के) तत्वज्ञान को सुन-समझकर भक्त दीक्षा लेकर साधना करते हैं। ये योगी यानि शास्त्रोक्त साधक हैं। हम सत्संग समागम करते हैं। उसमें भोजन-भण्डारा (लंगर) भी चलाते हैं। जो व्यक्ति उस भोजन-भण्डारे में दान करता है। उससे बने भोजन को योगी यानि मेरे शिष्य तथा यह दास (लेखक) सब खाते हैं। यह दास (लेखक) सत्संग सुनाकर नए व्यक्तियों को यथार्थ भक्ति ज्ञान बताता है। शास्त्रों के प्रमाण प्रोजेक्टर पर दिखाता है। जिस कारण से श्रोता शास्त्र विरूद्ध साधना त्यागकर शास्त्रोक्त साधना करते हैं। इस प्रकार उस परिवार का उद्धार हुआ। उनके द्वारा दिए दान से बने भोजन को भक्तों ने खाया। इससे पित्तरों का उद्धार हुआ। पित्तर जूनी छूटकर अन्य जन्म मिल जाता है। सत्संग में यदि हजार ब्राह्मण भी उपस्थित हों तो वे भी सत्संग सुनकर शास्त्र विरूद्ध साधना त्यागकर अपना

कल्याण करवा लेंगे। जैसे आप जी ने पहले पढ़ा कि कबीर जी ने गंगा के तट पर ब्राह्मणों को ज्ञान देकर उनकी शास्त्र विरूद्ध साधना को गलत सिद्ध करके सत्य साधना के लिए प्रेरित किया। उन ब्राह्मणों ने सतगुरू कबीर जी से दीक्षा लेकर अपना कल्याण करवाया। अन्य साधना जो शास्त्रों के विरूद्ध थी, त्याग दी। सुखी हुए।

दास की प्रार्थना है कि वर्तमान में मानव समाज शिक्षित है, वह अवश्य ध्यान दे तथा शास्त्र विधि अनुसार साधना करके पूर्ण परमात्मा के सनातन परमधाम (शाश्वतम् स्थानम्) अर्थात् सतलोक को प्राप्त करे जिससे पूर्ण मोक्ष तथा परम शान्ति प्राप्त होती है।(गीता अध्याय 15 श्लोक 4 तथा अध्याय 18 श्लोक 62 में जिसको प्राप्त करने के लिए कहा है।) इसके लिए तत्वदर्शी संत की तलाश करो। (गीता अध्याय 4 श्लोक 34)

एक श्रद्धालु ने कहा कि मैं आप से उपदेश लेकर आप द्वारा बताई साधना भी करता रहूँगा तथा श्राद्ध भी निकालता रहूँगा तथा अपने घरेलू देवी-देवताओं को भी उपरले मन से पूजता रहूँगा। इसमें क्या दोष है?

➢ मुझ दास की प्रार्थना :- संविधान की किसी भी धारा का उल्लंघन कर देने पर सजा अवश्य मिलेगी।

इसलिए पवित्र गीता जी व पवित्र चारों वेदों में वर्णित व वर्जित विधि के विपरीत साधना करना व्यर्थ है। (प्रमाण पवित्र गीता जी अध्याय 16 श्लोक 23-24 में) यदि कोई कहे कि मैं कार में पैंचर उपरले मन से कर दूंगा। नहीं, राम नाम की गाड़ी में पैंचर करना मना है। ठीक इसी प्रकार शास्त्र विरुद्ध साधना हानिकारक ही है।

''आठवां अध्याय''

''तीर्थ तथा धाम क्या हैं?''

प्रश्न 45 :- तीर्थों, धामों पर श्रद्धा से दर्शनार्थ तथा पूजा करने से हिन्दू गुरुजन बहुत पुण्य बताते हैं। यह साधना लाभदायक है या नहीं? कृप्या शास्त्रों के अनुसार बताएँ।

उत्तर :- तीर्थ या धाम वे पवित्र स्थान हैं जहाँ पर या तो किसी महापुरूष का जन्म हुआ था या निर्वाण (परलोक वास) हुआ था या किसी साधक ने साधना की थी या कोई अन्य ऋषि या देवी-देव की कथा से जुड़ी यादगारें हैं।

विचार करें :- पवित्र तीर्थ तथा पवित्र धाम तो यादगारें हैं कि यहाँ पर ऐसी घटना घटी थी ताकि उनका प्रमाण बना रहे।

उदाहरण :- जैसे अमरनाथ धाम है। उसकी कथा का सर्व हिन्दुओं को ज्ञान है कि उस एकान्त स्थान पर श्री शिव जी ने अपनी पत्नी पार्वती जी को नाम दीक्षा दी थी जिसका देवी जी जाप कर रही हैं। जिस मन्त्र की साधना के प्रभाव से उनको अमरत्व प्राप्त हुआ है।

वर्तमान में वह एक यादगार के अतिरिक्त कुछ नहीं है। वह प्रमाण है कि यहाँ पर वास्तव में देवी जी को श्री शिव भगवान ने अमर होने का मन्त्र दिया था। यदि किसी को विश्वास नहीं हो रहा हो तो वहाँ जाकर देखकर भ्रम मिटा सकता है। परन्तु कोई यह कहे कि उस स्थान के दर्शन करने तथा वहाँ दान, धर्म करने से मुक्ति मिलेगी या भक्ति लाभ होगा, ऐसा कुछ नहीं है। रही बात दान धर्म करने की, आप कहीं पर भी धर्म का कार्य करो, आपको उसका फल मिलेगा क्योंकि वह आपके शुभ कर्मों में परमात्मा उसी समय लिख देता है। जैसे कोई व्यक्ति एकान्त स्थान पर कोई हत्या या अन्य अपराध करता है तो उसके अशुभ कर्मों में लिखा जाता है, उसका फल अवश्य मिलता है।

इसलिए पुण्य का कार्य कहीं पर करो। उसका फल तो मिलेगा। पुण्य करने के लिए दूर स्थान तीर्थ पर जाना बुद्धिमता नहीं। यही प्रश्न एक समय जिंदा साधु के रूप में मथुरा में प्रकट परमेश्वर कबीर जी से एक तीर्थ यात्री श्री धर्मदास सेठ द्वारा किया गया था जो मथुरा तीर्थ पर स्नानार्थ तथा दान-धर्म करने के लिए अपने गुरू रूपदास वैष्णव के बताए भक्ति कर्म को करने 'बांधवगढ़' नामक नगर (मध्य प्रदेश) से आया था। परमात्मा ने उसे समझाया था कि यहाँ मथुरा-वृन्दावन में वर्तमान में श्री कृष्ण जी नहीं हैं और विचार कर कि जब श्री कृष्ण जी ही इस स्थान को त्यागकर हजारों कि. मी. दूर द्वारिका में सपरिवार तथा सर्व यादवों को लेकर चले गए थे तो इस स्थान का महत्व ही क्या रह गया? यह तो एक यादगार है कि कभी श्री कृष्ण

जी ने कुछ समय यहाँ बिताया था। कंस, केशी तथा चाणूर अन्यायियों को मारा था। परमात्मा ने कहा कि हे धर्मदास! आप गीता शास्त्र को साथ लिए हो, इसका नित्य पाठ भी करते हो। इसमें कहीं वर्णन है कि तीर्थ जाया कर अर्जुन, बेड़ा पार हो जाएगा। धर्मदास जी ने कहा, नहीं प्रभु! गीता में कहीं पर भी प्रभु का आदेश ऐसा नहीं लिखा है। परमेश्वर जी ने कहा कि गीता अध्याय 16 श्लोक 23 को पढ़। उसके अनुसार तो यह तीर्थ यात्रा शास्त्र में वर्णित न होने से व्यर्थ साधना है।

❑ यदि आपके तत्वज्ञानहीन गुरूओं की मानें कि तीर्थ पर जाने से पुण्य लगता है। फिर पुण्य तो एक लगा और पाप लगे करोड़ों-अरबों-खरबों। यह सुनकर सेठ धर्मदास अंध श्रद्धा भक्ति करने वाला काँप गया और उसका गला सूख गया। बोला कि हे जिंदा! इतने पाप कैसे लगे? कृपा समझाईये।

❖ परमेश्वर कबीर जी (जिंदा वेशधारी प्रभु) ने समाधान इस प्रकार किया:-

➢ कहा कि हे धर्मदास! आप बांधवगढ़ से मथुरा नगरी में वृंदावन में आए हो। बांधवगढ़ यहाँ से लगभग दो सौ पचास कोस (लगभग सात सौ पचास कि.मी.) है। वहाँ से यहाँ तक पैरों चलकर आने से आपके द्वारा अनेकों जीव हिंसा हो गई है। आपने इस मथुरा तीर्थ के जल में स्नान किया। करोड़ों सूक्ष्म जीव भी तीर्थ के जल में थे जो आपके स्नान करने से रगड़ लगने से मारे गए तथा आप जी ने भोजन बनाने से पहले जो चौंका गॉरा तथा गाय के गोबर से लीपा, उसमें उसी जल का प्रयोग किया तथा पृथ्वी पर उपस्थित जीव चौंका लीपते समय करोड़ों जीव मारे गए। यह सब पाप आपको लगे। आप बताओ कि आप लाभ का सौदा कर रहे हो या घाटे का? धर्मदास जी के मुख से कोई बात नहीं निकली, उत्तर नहीं आया क्योंकि वह भय के कारण स्तब्ध हो गया था। कुछ क्षण के पश्चात् परमात्मा जिंदा वेशधारी के चरणों में गिर गया तथा यथार्थ शास्त्रोक्त भक्ति बताने की याचना की। परमात्मा कबीर जी ने शास्त्रों में वर्णित साधना करने को बताई तथा अन्य सब आन-उपासना यानि पाखण्ड पूजा त्यागने को कहा। धर्मदास जी विवेकी थे। ढ़ेर सारे प्रश्न-उत्तर करके समझ गए। अपने कल्याण का मार्ग जान लिया ओर अपनी पत्नी को समझाकर सतगुरू कबीर जी से दीक्षा दिलाकर अपना तथा अपने परिवार को शास्त्रोक्त साधना पर लगाया। भक्ति का पूर्ण लाभ प्राप्त किया।

❖ धर्मदास जी को कबीर परमेश्वर जी एक साधु (जिंदा बाबा) के वेश में मिले थे। जो तीर्थों पर भ्रमण कर रहा था तथा सब देवी-देवताओं की पूजा किया करता था। उसे परमेश्वर जी ने समझाया कि हे धर्मदास! तेरी साधना गलत है। धर्मदास जी ने अनेकों शंकाओं का समाधान जाना।

उनमें से एक यह भी थी कि :-

''वैष्णों देवी, नैना देवी, ज्वाला देवी तथा अन्नपूर्णा देवी के मंदिरों की स्थापना''

प्रश्न 46 :- वैष्णों देवी, नैना देवी, ज्वाला देवी तथा अन्नपूर्णा देवी आदि पवित्र स्थानों पर अनेकों हिन्दू जाते हैं। क्या वहाँ जाने से भी भक्ति लाभ नहीं है?

उत्तर (कबीर जी जिंदा महात्मा का) :- हे धर्मदास! अभी बताया था कि तीर्थों-धामों पर जाने से क्या लाभ-हानि होती है। फिर भी सुन।

पूरा हिन्दू समाज जानता है कि ये पवित्र धर्म स्थान कैसे बने। आप अनजान मत बनो। जिस समय दक्ष पुत्री सती जी अपने पति श्री शिव जी से रूठकर पिता दक्ष जी के पास अपने घर आई। राजा दक्ष ने सती जी का अनादर किया। राजा दक्ष उस समय यज्ञ कर रहे थे। बहुत बड़े हवन कुण्ड में हवन चल रहा था। सती जी अपने पिता की बातों का दुःख मानकर हवन कुण्ड की अग्नि में गिरकर जल मरी। भगवान शिव को पता चला तो उन्होंने उसके बचे हुए नर कंकाल को उठाया तथा पत्नी के वियोग में उसे उठाए फिरते रहे। पत्नी के मोहवश महादुःखी थे। आपके पुराण में लिखा है कि दस हजार वर्षों तक सती पार्वती जी के कंकाल को लिए घूमते रहे। फिर श्री विष्णु जी ने सुदर्शन चक्र से उस कंकाल (अस्थि पिंजर) के टुकड़े-टुकड़े कर दिए। उस समय श्री शिव जी का मोह भंग हुआ। सती जी के शरीर के भाग कहीं-कहीं गिरे।

➢ वैष्णों देवी मंदिर की स्थापना :-

जहाँ पर देवी जी का धड़ वाला भाग गिरा। वहाँ पर यादगार बनाए रखने के लिए श्रद्धालुओं ने धड़ को श्रद्धा के साथ पृथ्वी में दफनाकर उसके ऊपर एक छोटी-सी मंदिरनुमा यादगार बना दी। बाद में समय अनुसार इसका विस्तार होता रहा।

इस यादगार को देखने और वहाँ पर पूजा करने जाने से कोई पुण्य नहीं, अपितु पाप लगता है जो आने-जाने में जीव हिंसा होती है।

➢ नैना देवी के मंदिर की स्थापना :-

जिस स्थान पर सती पार्वती जी की आँखों वाला शरीर का भाग गिरा, वहाँ पर भी उसी प्रकार जमीन मे दफनाकर मंदिर बना दिया ताकि घटना का प्रमाण रहे। कोई पुराण कथा को गलत न बताए।

➢ ज्वाला जी की स्थापना :-

जिस स्थान पर कांगड़ा जिले (हिमाचल प्रदेश) में देवी जी की अधजली जीभ वाला भाग गिरा, उसको श्रद्धा से उस स्थान पर पृथ्वी में उस जीभ को श्रद्धा से दबाकर यादगार रूप में छोटा मंदिर बना दिया। बाद में बहुत बड़ा मंदिर बनाया गया। वह ज्वाला देवी जी का मंदिर है।

➢ अन्नपूर्णा देवी मंदिर की स्थापना :-

जिस स्थान पर सती पार्वती जी के शरीर का नाभि वाला भाग गिरा। उसको श्रद्धा से पृथ्वी में दबाकर उसके ऊपर यादगार रूप में छोटा-सा मंदिर बना दिया था। बाद में उसका बहुत विस्तार किया गया और शास्त्र विरूद्ध साधना शुरू कर दी गई है।

यह सब प्रमाण रूप हैं।

❖ विचार करो :- ऐसे स्थानों पर भक्ति व पूजा तथा पुण्य प्राप्त करने के लिए जाना शास्त्रविरूद्ध होने से हानिकारक है। इसलिए यह व्यर्थ है।

यदि किसी को पुराणों में लिखी घटना पर विश्वास न हो तो देखने जाओ तो जाओ, लेकिन पुण्य के स्थान पर जीव हिंसा का पाप ही प्राप्त होगा। जो आने-जाने के दौरान पैरों या गाड़ी-घोड़े के नीचे दबकर मरेंगे। इसी प्रकार अन्य दर्शनीय स्थलों (आदि बद्रीनाथ, केदारनाथ, जगन्नाथपुरी, द्वारकापुरी आदि-आदि) पर किसी आध्यात्मिक लाभ के लिए जाना अंध श्रद्धा भक्ति के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है।

''केदारनाथ मंदिर भारत में तथा पशुपति मंदिर नेपाल में कैसे बना?''

(केदार का अर्थ दलदल है)

महाभारत में कथा है कि पाँचों पाण्डव (युद्धिष्ठर, अर्जुन, भीम, नकुल व सहदेव) जीवन के अंतिम समय में हिमालय पर्वत पर तप कर रहे थे। एक दिन सदाशिव यानि काल ब्रह्म ने दुधारू भैंस का रूप बनाया और उस क्षेत्र में घूमने लगा। भीम दूध प्राप्ति के उद्देश्य से उसे पकड़ने के लिए दौड़ा तो भैंस पृथ्वी में समाने लगी। भीम ने भैंस का पिछला भाग दृढ़ता से पकड़ लिया जो पृथ्वी से बाहर शेष था। वह पत्थर का हो गया और बाहर ही रह गया, वह केदारनाथ बना। भैंस के शरीर के अन्य भाग जैसे अगले पैर, पिछले पैर आदि-आदि जहाँ-जहाँ निकले, वहाँ-वहाँ पर अन्य केदार बने। ऐसे-ऐसे सात केदार हिमालय में बने हैं। उस भैंस का सिर वाला भाग काठमाण्डू में निकला जिसको पशुपति कहा गया। उसके ऊपर मंदिर बना दिया गया। उस भैंस के पिछले भाग पर तथा अन्य अंग जहाँ-जहाँ निकले, उनको केदार नाम देकर यादगार बनाई गई थी कि यह पौराणिक घटना सत्य है। ये साक्षी हैं। सब मंदिर किसी न किसी कथा के साक्षी हैं। परंतु पूजा करना गलत है, व्यर्थ है।

लगभग सौ वर्ष पूर्व केदारनाथ पर अधिक वर्षा के कारण दलदल अधिक हो गई थी। लगभग साठ (60) वर्ष तक वहाँ कोई पूजा-आरती नहीं की गई। न कोई दर्शन करने गया था। बाद में तीस-चालीस वर्ष से पुनः दर्शनार्थी जाने लगे हैं।

सन् 2012 में केदारनाथ धाम के दर्शनार्थ व पूजार्थ गए लाखों व्यक्ति बाढ़

में बह गए। परिवार के परिवार अंध श्रद्धा भक्ति करने वाले मारे गए। यदि यह साधना पवित्र गीता में वर्णित होती तो वहाँ जाने वाले श्रद्धालु मर भी जाते तो भी पुण्यों के साथ परमात्मा के दरबार में जाते। परंतु शास्त्रविरूद्ध भक्ति करते हुए ऐसे मरते हैं तो व्यर्थ जीवन गया।

"तीर्थ तथा धाम की अन्य जानकारी"

किसी साधक ऋषि जी ने किसी स्थान या जलाशय पर बैठ कर साधना की या अपनी आध्यात्मिक शक्ति का प्रदर्शन किया। वह अपनी भक्ति कमाई करके साथ ले गया तथा अपने ईष्ट लोक को प्राप्त हुआ। उस साधना स्थल का बाद में तीर्थ या धाम नाम पड़ा। अब कोई उस स्थान को देखने जाए कि यहां कोई साधक रहा करता था। उसने बहुतों का कल्याण किया। अब न तो वहाँ संत जी है, जो उपदेश दे। वह तो अपनी कमाई करके चला गया।

❖ विचार करें :- कृप्या तीर्थ व धाम को हमोमदस्ता (हमामदस्ता) जानें। (एक फुट का लोहे का गोल पात्र लगभग नौ इंच परिधि का उखल जैसा होता है तथा डेढ़ फुट लम्बा तथा दो इन्च परिधि का गोल लोहे का डंडा-सा मूसल जैसा होता है जो सामग्री व दवाईयाँ आदि कूटने के काम आता है, उसे हमोमदस्ता (हमामदस्ता) कहते हैं।) एक व्यक्ति अपने पड़ौसी का हमोम दस्ता मांग कर लाया। उसने हवन की सामग्री कूटी तथा मांज-धौकर लौटा दिया। जिस कमरे में हमोम दस्ता रखा था उस कमरे में सुगंध आने लगी। घर के सदस्यों ने देखा कि यह सुगन्ध कहां से आ रही है तो पता चला कि हमोम दस्ते से आ रही है। वे समझ गए कि पड़ौसी ले गया था, उसने कोई सुगंध युक्त वस्तु कूटी है। कुछ दिन बाद वह सुगंध भी आनी बंद हो गई।

इसी प्रकार तीर्थ व धाम को एक हमोमदस्ता (हमामदस्ता) जानों। जैसे सामग्री कूटने वाले ने अपनी सर्व वस्तु पोंछ कर रख ली। खाली हमोम दस्ता लौटा दिया। अब कोई उस हमोम दस्ते को सूंघकर ही कृत्यार्थ माने तो नादानी है। उसको भी सामग्री लानी पड़ेगी, तब पूर्ण लाभ होगा।

ठीक इसी प्रकार किसी धाम व तीर्थ पर रहने वाला पवित्र आत्मा तो राम नाम की सामग्री कूट कर झाड़-पौंछ कर अपनी सर्व भक्ति साधना की कमाई को साथ ले गया। बाद में अनजान श्रद्धालु, उस स्थान पर जाने मात्र से कल्याण समझें तो उनके मार्ग दर्शकों (गुरुओं) की शास्त्र विधि रहित बताई साधना का ही परिणाम है। उस महान आत्मा सन्त की तरह प्रभु साधना करने से ही कल्याण सम्भव है। उसके लिए तत्वदर्शी संत की खोज करके उससे उपदेश लेकर आजीवन भक्ति करके मोक्ष प्राप्त करना चाहिए। शास्त्र विधि अनुकूल सत साधना मुझ दास (रामपाल दास) के पास उपलब्ध है कृप्या निःशुल्क प्राप्त करें।

''तीर्थ स्थापना के प्रमाण''

1. शुक्र तीर्थ कैसे बना? :- श्री ब्रह्मा पुराण लेखक कृष्णद्वेपायन अर्थात व्यास जी प्रकाशक गीता प्रेस गोरखपुर पृष्ठ 167-168 पर भृगु ऋषि का पुत्र कवि अर्थात शुक्र ने गौतमी नदी के उत्तर तट पर जहाँ भगवान महेश्वर की आराधना करके विद्या पायी थी, वह स्थान शुक्र तीर्थ कहलाता है।

2. ➽ सरस्वती संगम तीर्थ तथा पुरूरव तीर्थ :- श्री ब्रह्मा पुराण पृष्ठ 172-173 पर वर्णन :– एक दिन राजा पुरूरवा, ब्रह्मा जी की सभा में गये, वहाँ ब्रह्मा जी की पुत्री सरस्वती को देखकर उससे मिलने की इच्छा प्रकट की। सरस्वती ने हाँ कर दी। सरस्वती नदी के तट पर सरस्वती तथा पुरूरवा ने अनेक वर्षों तक संभोग (सैक्स) किया। एक दिन ब्रह्मा ने उनको विलास करते देख लिया। अपनी बेटी को शाप दे दिया। वह नदी रूप में समा गई। जहाँ पर पुरूरवा तथा सरस्वती ने संभोग किया था। वह पवित्र तीर्थ सरस्वती संगम नाम से विख्यात हुआ। जहाँ पर पुरूरवा ने महादेव की भक्ति की वह स्थान पुरूरवा तीर्थ नाम से विख्यात हुआ।

3. वृद्धा संगम तीर्थ :- श्री ब्रह्मा पुराण पृष्ठ 173 से 175 पर वर्णन :– एक गौतम ऋषि थे। उनका एक हजार वर्ष की आयु तक विवाह नहीं हुआ। वह वेद ज्ञान भी नहीं पढ़ा था केवल गायत्री मंत्र याद था। उसी का जाप करता था। एक दिन वह एक पर्वत पर एक गुफा में गया। वहाँ पर नब्बे हजार वर्ष की आयु की एक वृद्धा स्त्री मिली। दोनों ने विवाह किया। एक दिन वशिष्ठ ऋषि तथा वाम देव ऋषि वहाँ गुफा में अन्य ऋषियों के साथ आए। उन्होंने गौतम ऋषि का उपहास किया कहा हे गौतम जी! यह वृद्धा आप की माँ है या दादी माँ? उनके जाने के पश्चात् दोनों बहुत दुःखी हुए। अगस्त ऋषि की राय से गोदावरी नदी के गौतमी तट पर गये और कठोर तपस्या करने लगे। उन्होंने भगवान शंकर और विष्णु का स्तवन किया तथा पत्नी के लिए गंगा जी को भी खुश किया। गंगा ने उनके तप से प्रसन्न होकर कहा :– ब्राह्मण आप मन्त्र पढ़ते हुए मेरे जल से अपनी पत्नी का अभिषेक करो। इससे वह रूपवती हो जाएगी। गंगा जी के आदेश से दोनों ने एक–दूसरे के लिए ऐसा ही किया। दोनों पति–पत्नी सुन्दर रूप वाले हो गये। वह जल जो मन्त्रों का था। उससे वृद्धा नाम नदी बह चली। उसी स्थान पर गौतम ऋषि ने उस वृद्धा के साथ जो युवती हो गई थी। मन भरकर संभोग किया। तब से उस स्थान का नाम ''वृद्धा संगम'' तीर्थ हो गया। वहीं पर गौतम ऋषि ने साधनार्थ एक शिवलिंग स्थापित किया था। वह भी वृद्धा के नाम पर वृद्वेश्वर कहलाया। इस वृद्धा संगम तीर्थ की कथा सब पापों का नाश करने वाली है। वहाँ किया हुआ स्नान–दान सब मनोरथों को सिद्ध करने वाला है।

4. अश्वतीर्थ अर्थात् भानु तीर्थ तथा पंचवटी आश्रम की स्थापना :- श्री ब्रह्मा पुराण पृष्ठ 162-163 तथा श्री मार्कण्डेय पुराण पृष्ठ 173 से 175 पर वर्णन :– ''महर्षि कश्यप के ज्येष्ठ पुत्र आदित्य (सूर्य) है, उनकी पत्नी का नाम उषा है (मार्कण्डेय पुराण में सूर्य की पत्नी का नाम संज्ञा लिखा है जो महर्षि विश्वकर्मा की बेटी है) सूर्य की पत्नी अपने पति सूर्य के तेज को सहन न कर सकने के कारण दुःखी रहती थी। एक दिन अपनी सिद्धि शक्ति से अन्य स्त्री अपनी ही स्वरूप की उत्पन्न की उसे कहा आप मेरे पति की पत्नी बन कर रहो तेरी तथा मेरी शक्ल समान है। आप यह भेद मेरी सन्तान तथा पति को भी नहीं बताना यह कह कर संज्ञा (उषा) तप करने के उद्देश्य से उत्तर कुरूक्षेत्र में चली गई वहाँ घोड़ी का रूप धारण करके तपस्या करने लगी। भेद खुलने पर सूर्य भी घोड़े का रूप धारण करके वहाँ गया जहाँ संज्ञा (उषा) घोड़ी रूप में तपस्या कर रही थी। घोड़े रूप में सूर्य ने घोड़ी रूप धारी संज्ञा से संभोग करना चाहा। उषा (संज्ञा) घोड़ी रूप में वहाँ से भाग कर गौतमी नदी के तट पर आई घोड़ा रूप धारी सूर्य ने भी पीछा किया। वहाँ आकर घोड़ी रूप में अपने पतिव्रत धर्म की रक्षा के लिए घोड़ा रूप धारी पति को न पहचान कर उस की ओर अपना पृष्ठ भाग न करके मुख की ओर से ही सामना किया। दोनों की नासिका मिली। सूर्य वासना के वेग को रोक नहीं सके तथा घोड़ी रूप धारी उषा (संज्ञा) के मुख ओर ही संभोग करने के उद्देश्य से प्रयत्न किया। नासिका द्वारा वीर्य प्रवेश से घोड़ी रूप धारी उषा के मुख से दो पुत्र अश्वनी कुमार (नासत्य तथा दस्र) उत्पन्न हुए तथा शेष वीर्य जमीन पर गिरने से रेवन्त नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। वह स्थान अश्व तीर्थ भानु तीर्थ तथा पंचवटी आश्रम नाम से विख्यात हुआ। उसी स्थान पर सूर्य की बेटियों का अरूणा तथा वरूणा नामक नदियों के रूप में समागम हुआ। उसमें भिन्न–2 देवताओं और तीर्थों का पृथक–पृथक समागम हुआ है। उक्त संगम में सताईस हजार तीर्थों का समुदाय है। वहाँ किया हुआ स्नान व दान अक्षय पुण्य देने वाला है। नारद! उस तीर्थ के स्मरण से कीर्तन और श्रवण से भी मनुष्य सब पापों से मुक्त हो धर्मवान् और सुखी होता है।

5. जन स्थान तीर्थ की स्थापना :- श्री ब्रह्म पुराण (गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित) पृष्ठ 161-162 पर :– ऋषि याज्ञवल्क्य से राजा जनक ने पूछा कि हे द्विजश्रेष्ठ! बड़े–2 मुनियों ने निर्णय किया है कि भोग और मोक्ष दोनों श्रेष्ठ हैं। आप बताऐं! भोग से भी मुक्ति प्राप्त कैसे होती है? ऋषि याज्ञवल्क्य जी ने कहा इस प्रश्न का उत्तर आप श्वशुर वरूण जी ठीक–2 बता सकते हैं। चलो उनसे पूछते हैं। दोनों भगवान वरूण के पास गए तथा वरूण ने बताया कि ''वेद में यह मार्ग निश्चित किया है कि कर्म न करने की उपेक्षा कर्म करना श्रेष्ठ है। धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष ये चारों पुरूषार्थ कर्म से बंधे हुए हैं। नृप

श्रेष्ठ! कर्म द्वारा सब प्रकार से साध्यों की सिद्धी होती है, इसलिए मनुष्यों को सब तरह से वैदिक कर्म का अनुष्ठान करना चाहिए। इससे वे इस लोक में भोग तथा मोक्ष दोनों प्राप्त करते हैं। अकर्म से कर्म पवित्र है। इसके पश्चात् राजा जनक ने ऋषि याज्ञवल्क्य को पुरोहित बनाकर गंगा के तट पर अनेकों यज्ञ किए। इसलिए उस स्थान का नाम ''जन स्थान'' तीर्थ के नाम से विख्यात हुआ। उस तीर्थ का चिन्तन करने, वहाँ जाने और भक्ति पूर्वक उसका सेवन (पूजन) करने से मनुष्य सब अभिलाषित वस्तुओं को पाता है और मोक्ष का भोगी होता है।

उपरोक्त पुराणों के लेखों का निष्कर्ष :-

प्रमाण संख्या 1 में कहा है कि भृगु ऋषि के पुत्र शुक्र ने गौतमी नदी के उत्तर तट पर साधना की थी जिस कारण से वह स्थान शुक्र तीर्थ नाम से विख्यात हुआ।

यदि कोई उस शुक्र तीर्थ में केवल स्नान व वहाँ पर बैठे कामचोर व्यक्तियों को दान करने से ही मोक्ष मानता है वह ज्ञानहीन व्यक्ति है। परमात्मा की साधना जैसे शुक्राचार्य ने की थी। वैसी ही साधना किसी भी स्थान पर कोई साधक करेगा तो शुक्राचार्य को जो लाभ हुआ था वह प्राप्त होगा।

यही स्थिति प्रमाण संख्या 5 की समझें की गंगा के तट पर जिस स्थान पर राजा जनक ने अनेकों अश्वमेघ यज्ञ किए। एक अश्वमेघ यज्ञ में करोंड़ों रूपये (वर्तमान में अरबों रूपये) खर्च हुए थे।

तब राजा जनक को स्वर्ग प्राप्ति हुई थी। यदि कोई अज्ञानी कहे कि उस जन स्थान तीर्थ पर जाने व स्नान करने तथा वहाँ उपस्थित ऐबी (शराब, तम्बाकू व मांस सेवन करने वाले) व्यक्तियों कों दान करने से राजा जनक वाला लाभ मिलेगा। क्या यह बात न्याय संगत है? इतना कुछ करने के पश्चात् भी राजा जनक मुक्त नहीं हो सका। वही आत्मा कलयुग में सन्त नानक जी के रूप में श्री कालु राम महता के घर जन्मा। फिर पूर्ण परमात्मा की भक्ति पूर्ण गुरु कबीर परमेश्वर से नाम प्राप्त करके की तब मोक्ष प्राप्त हुआ।

प्रमाण संख्या 2 में ब्रह्मा की बेटी सरस्वती ने पूरूरवा नामक राजा के साथ अपने पिता से छुपकर सैक्स (संभोग) किया। जब पिता जी ने उन्हें ऐसा करते देखा तो श्राप दे दिया। वह स्थान जहाँ पर सरस्वती ने तथा राजा पुरूरवा ने दुराचार किया उस स्थान का नाम सरस्वती संगत तीर्थ विख्यात हुआ।

❖ विचार करें :- क्या ऐसे स्थान पर जाने व स्नान करने से कोई लाभ हो सकता है? प्रमाण संख्या 3 में कहा है कि एक गौतम नामक ऋषि ने एक हजार वर्ष की आयु में नब्बे हजार वर्ष की आयु की वृद्धा से विवाह किया।

अपने को युवा बनाने के उद्देश्य से दोनों ने गोदावरी नदी के गौतमी तट पर कठोर तप किया। पश्चात् मन्त्रों से जल मन्त्रित करके एक-दूसरे पर डाला। दोनों युवा हो गये। तत्पश्चात् उस स्थान पर दोनों ने मन भर कर संभोग अर्थात् विलास (सेक्स) किया। वह स्थान वृद्धा संगम तीर्थ कहलाया।

विचार करने योग्य बात है कि ऐसे स्थानों पर जाने से आत्म कल्याण के स्थान पर पतन ही होगा। आत्म उद्धार नहीं।

प्रमाण संख्या 4 में कहा है कि सूर्य की पत्नी घोड़ी का रूप धारण करके तपस्या कर रही थी। सूर्य काम वासना (Sex Pressure) के वश होकर घोड़ा रूप धारण करके घोड़ी रूप धारी अपनी पत्नी के पास गया। घोड़ी ने उसे अपने पृष्ठ भाग (पीछे) की ओर नहीं जाने दिया। सूर्य इतना Sex Pressure (काम वासना के दबाव) में था कि उसने घोड़ी के मुख की ओर ही संभोग क्रिया प्रारम्भ की जिस कारण से उन्हें तीन पुत्र प्राप्त हुए। वह स्थान अश्व तीर्थ नाम से विख्यात हुआ।

वहीं पर सूर्य की दो बेटियाँ जाकर नदी बन कर बहने लगी। जिस कारण से वही स्थान पंचवटी आश्रम नाम से भी प्रसिद्ध हुआ। उसी स्थान को भानू तीर्थ भी कहा जाता है। इस तीर्थ का लाभ लिखा है कि इसके स्मरण से तथा कीर्तन करने से तथा इसकी कथा श्रवण करने से सब पापों से मुक्त होकर धर्मवान और सुखी होता है।

विचार करो पुण्यात्माओं! क्या ऐसी कथाओं को सुनने तथा ऐसे स्थान पर जाने से आत्म कल्याण सम्भव है? इसलिए शास्त्रों (पाचों वेदों, गीता जी) के अनुसार भक्ति करने से सर्व पापों से मुक्त होकर पूर्ण मोक्ष सम्भव है।

''सर्व श्रेष्ठ तीर्थ''

प्रश्न 47 :- सर्वश्रेष्ठ तीर्थ कौन-सा है जिससे सर्व तीर्थों से अधिक लाभ मिलता है?

उत्तर :- सर्व श्रेष्ठ चित्तशुद्धि तीर्थ है।

चित्तशुद्धि तीर्थ अर्थात् तत्त्वदर्शी सन्त का सत्संग सर्व तीर्थों से श्रेष्ठ :- श्री देवी पुराण छठा स्कन्द अध्याय 10 पृष्ठ 417 पर लिखा है व्यास जी ने राजा जनमेजय से कहा राजन्! यह निश्चय है कि तीर्थ देह सम्बन्धी मैल को साफ कर देते हैं, किन्तु मन के मैल को धोने की शक्ति तीर्थों में नहीं है। चित्तशुद्धि तीर्थ गंगा आदि तीर्थों से भी अधिक पवित्र माना जाता है। यदि भाग्यवश चित्तशुद्धि तीर्थ सुलभ हो जाए तो अर्थात् तत्वदर्शी संतों का सत्संग रूपी तीर्थ प्राप्त हो जाए तो मानसिक मैल के धुल जाने में कोई संदेह नहीं। परन्तु राजन्! इस चित्तशुद्धि तीर्थ को प्राप्त करने के लिए ज्ञानी पुरूषों अर्थात् तत्त्वदर्शी सन्तों के सत्संग की विशेष आवश्यकता है। वेद, शास्त्र, व्रत, तप,

यज्ञ और दान से चित्तशुद्धि होना बहुत कठिन है। वशिष्ठ जी ब्रह्मा जी के पुत्र थे। उन्होंने वेद और विद्या का सम्यक प्रकार से अध्ययन किया था। गंगा के तट पर निवास करते थे। तथापि द्वेष के कारण उनका विश्वामित्र के साथ वैमनस्य हो गया और दोनों ने परस्पर श्राप दे दिए तथा उनमें भयंकर युद्ध होने लगा। इससे सिद्ध हुआ कि संतों के सत्संग से चित्तशुद्धि कर लेना अति आवश्यक है अन्यथा वेद ज्ञान, तप, व्रत, तीर्थ, दान तथा धर्म के जितने साधन है वे सबके सब कोई विशेष प्रयोजन सिद्ध नहीं कर सकते (श्री देवी पुराण से लेख समाप्त)

❖ **विशेष विचार :- उपरोक्त श्री देवी पुराण के लेख से स्पष्ट है कि तत्त्वदर्शी सन्तों के सत्संग से श्रेष्ठ कोई भी तीर्थ नहीं है तथा तत्त्वदृष्टा सन्त के बताए मार्ग से साधना करने से कल्याण सम्भव है। तीर्थ, व्रत, तप, दान आदि व्यर्थ प्रयत्न है। तत्त्वदर्शी सन्त के अभाव के कारण केवल चारों वेदों में वर्णित भक्ति विधि से पूर्ण मोक्ष लाभ नहीं है।**

परमेश्वर कबीर जी ने कहा है :-

सतगुरु बिन वेद पढ़ें जो प्राणी, समझे ना सार रहे अज्ञानी।।
सतगुरु बिन काहू न पाया ज्ञाना, ज्यों थोथा भुष छिड़ै मूढ किसाना।।
अड़सठ तीर्थ भ्रम–भ्रम आवै सर्व फल सतगुरू चरणा पावै।।
कबीर तीर्थ करि–करि जग मुआ, उड़ै पानी नहाय।
सतनाम जपा नहीं, काल घसीटें जाय।।

सूक्ष्मवेद (तत्त्वज्ञान) में कहा है कि :-

अड़सठ तीर्थ भ्रम–भ्रम आवै। सो फल सतगुरू चरणों पावै।।
गंगा, यमुना, बद्री समेते। जगन्नाथ धाम है जेते।।
भ्रमें फल प्राप्त होय न जेतो। गुरू सेवा में फल पावै तेतो।।
कोटिक तीर्थ सब कर आवै। गुरू चरणां फल तुरंत ही पावै।।
सतगुरू मिलै तो अगम बतावै। जम की आंच ताहि नहीं आवै।।
भक्ति मुक्ति को पंथ बतावै। बुरा होन को पंथ छुड़ावै।।
सतगुरू भक्ति मुक्ति के दानी। सतगुरू बिना ना छूटै खानी।।
सतगुरू सुर तरू सुर धेनु समाना। पावै चरणन मुक्ति प्रवाना।।

सरलार्थ :- पूर्ण परमात्मा द्वारा दिए तत्त्वज्ञान यानि सूक्ष्मवेद में कहा है कि तीर्थों और धामों पर जाने से कोई पुण्य लाभ नहीं। असली तीर्थ सतगुरू (तत्त्वदर्शी संत) का सत्संग सुनने जाना है। जहाँ तत्त्वदर्शी संत का सत्संग होता है, वह सर्व श्रेष्ठ तीर्थ तथा धाम है।

इसी कथन का साक्षी संक्षिप्त श्रीमद्देवीभागवत महापुराण भी है। उसमें छठे स्कंद के अध्याय 10 में लिखा है कि सर्व श्रेष्ठ तीर्थ तो चित शुद्ध तीर्थ है। जहाँ तत्वदर्शी संत का सत्संग चल रहा है। उसके अध्यात्म ज्ञान से चित

की शुद्धि होती है। शास्त्रोक्त अध्यात्म ज्ञान तथा शास्त्रोक्त भक्ति विधि का ज्ञान होता है जिससे जीव का कल्याण होता है। अन्य तीर्थ मात्र भ्रम हैं। इसी पुराण में लिखा है कि सतगुरू रूप तीर्थ मिलना अति दुर्लभ है।

सूक्ष्मवेद में बताया है कि सतगुरू तो कल्पवृक्ष तथा कामधेनू के समान है। जैसे पुराणों में कहा है कि स्वर्ग में कल्पवृक्ष तथा कामधेनु हैं। उनसे जो भी माँगो, सब सुविधाएँ प्रदान कर देते हैं।

इसी प्रकार सतगुरू जी सत्य साधना बताकर सर्व लाभ साधक को प्रदान करवा देते हैं तथा अपने आशीर्वाद से भी अनेकों लाभ देते हैं। भक्ति करवाकर मुक्ति की राह आसान कर देते हैं। इसलिए कहा है कि :-

एकै साधै सब सधै, सब साधैं सब जाय।
माली सींचै मूल को, फलै फूलै अघाय।।

शब्दार्थ :- एक सतगुरू रूप तीर्थ पर जाने से सब लाभ मिल जाता है। सब तीर्थों-धामों व अन्य अंध श्रद्धा भक्ति से सब लाभ समाप्त हो जाते हैं। जैसे आम के पौधे की एक जड़ की सिंचाई करने से पौधा विकसित होकर पेड़ बनकर बहुत फल देता है।

यदि पौधे को उल्टा करके जमीन में गढ्ढ़े में शाखाओं की ओर से रोपकर शाखाओं की सिंचाई करेंगे तो पौधा नष्ट हो जाता है। कोई लाभ नहीं मिलता। इसलिए एक सतगुरू रूप तीर्थ पर जाने से सर्व लाभ मिल जाता है।

जैसा कि संक्षिप्त श्रीमद्देवीभागवत महापुराण में लिखा है कि सतगुरू रूप तीर्थ मिलना अति दुर्लभ है, परंतु आप जी को सतगुरू रूप तीर्थ अति शुलभ है। यह दास (लेखक रामपाल दास) विश्व में एकमात्र सतगुरू तीर्थ यानि तत्वज्ञानी है। आओ और सत्य भक्ति प्राप्त करके जीवन सफल बनाओ।

''वृंदावन में गोवर्धन पर्वत की परिक्रमा से लाभ''

प्रश्न 48 (हिन्दू पक्ष) :- मैं गिरिराज (गोवर्धन) पर्वत की परिक्रमा करने जाता हूँ। हजारों की संख्या में श्रद्धालु परिक्रमा करने जाते हैं। हम को लाभ भी होते हैं। क्या यह भी व्यर्थ साधना है?

उत्तर :- पहले तो यह स्पष्ट करता हूँ कि गिरिराज (गोवर्धन) पर्वत की कथा क्या है। ब्रजवासी यानि श्री कृष्ण जी के कुल के व्यक्ति देवी-देवताओं की पूजा किया करते थे। श्री कृष्ण ने उनसे कहा कि हम देवी-देवताओं की पूजा नहीं करेंगे, न देवताओं के राजा इन्द्र की पूजा करेंगे।

हम परमात्मा की पूजा करेंगे। देवताओं के राजा इन्द्र की भी पूजा बंद कर दी। इन्द्र ने प्रतिशोध लेने के लिए मूसलाधार बारिश करनी शुरू कर दी ब्रज नगरी को डुबोने के उद्देश्य से। श्री कृष्ण जी ने गोवर्धन पर्वत को

एक हाथ की ऊंगली पर रख लिया तथा उसको पूरे ब्रज नगरी के ऊपर फैला दिया। सब ब्रजवासियों से कहा कि अपने पशुओं सहित पर्वत के नीचे आ जाओ। वर्षा का सारा पानी गिरिराज पर्वत ने सोख लिया। इन्द्र की हार हुई। देवी-देवताओं की पूजा बंद कर दी। उस गोवर्धन पर्वत को पुनः यथास्थान पर रख दिया।

विचार करो :- हिन्दू समाज गोवर्धन (गिरिराज) की परिक्रमा करते हैं और पूजा देवी-देवताओं की करते हैं। इससे तो भगवान विष्णु उर्फ श्री कृष्ण जी सख्त नाराज होता है।

यह परिक्रमा व गोवर्धन पूजा करके तो आप भगवान श्री कृष्ण जी को चिढ़ाने (खिजाने) यानि अपमान करने जाते हो। शास्त्रोक्त साधना न होने के कारण लाभ तो मिलता नहीं, परिक्रमा के समय (चक्र लगाते समय) पैरों के नीचे असँख्यों कीड़े-मकोड़े जीव-जन्तु मरते हैं। वह पाप अवश्य लगता है यानि उनका पाप आपके भाग्य में लिखा जाता है।

प्रश्न 49 :- श्री विष्णु जी स्वयं श्री कृष्ण जी व श्री राम रूप में जन्में थे। ये समर्थ परमात्मा हैं। जैसे श्री कृष्ण जी ने गिरिराज (गोवर्धन) पर्वत को हाथ पर धारण करके ब्रज नगरी को इन्द्र के प्रकोप से बचाया।

श्री रामचन्द्र रूप में समुद्र के ऊपर पुल बनाया। सेना को लंका में लेकर गए। राक्षस रावण को मारा, तेतीस करोड़ देवताओं की बंद छुड़वाई जो रावण ने कैद कर रखे थे। क्या श्री विष्णु जी पूर्ण ब्रह्म परमात्मा नहीं है?

उत्तर :- इसका उत्तर सूक्ष्मवेद में इस प्रकार दिया है कि :-

कबीर, समुद्र पाट लंका गयो, सीता का भरतार।
अगस्त ऋषि ने सातों पीये, इनमें कौन करतार?।।1।।
कबीर, काटे बंधन विपत्ति में, कठिन किया संग्राम।
चिन्हों रे नर प्राणियाँ, गरूड़ बड़ो के राम?।।2।।
कबीर, गोवर्धन श्री कृष्ण ने धार्यो, द्रौणगिरि हनुमंत।
शेषनाग सब सृष्टि उठायो, इनमें कौन भगवंत?।।3।।

अर्थात् वाणी नं. 1 कबीर जी ने कहा है कि समुद्र के ऊपर पुल बनाने से श्री रामचन्द्र जी जो सीता के पति को आप करतार यानि सृष्टिकर्ता मानते हैं, तो अगस्त ऋषि ने सातों समुद्रों को एक घूंट में पी लिया था। इनमें किसको कर्ता माना जाए?

वाणी नं. 2 :- आप कहते हो कि श्री राम ने रावण को मारकर 33 करोड़ देवताओं का बंधन छुड़वा दिया। जिस समय नागफास शस्त्र से श्री रामचन्द्र समेत सारी सेना रावण ने बांध दी थी। तब श्री रामचन्द्र जी व सेना की बंद गरूड़ ने छुड़वाई। सर्पों को काटा। इनमें अब बता! गरूड़ समर्थ है या श्री राम।

वाणी नं. 3 :- श्री कृष्ण जी को आप इसीलिए परमात्मा (ईश) मानते हो कि उन्होंने गोवर्धन पर्वत उठा लिया था। हनुमान जी ने द्रोणागिरी पर्वत को उठाया था तथा आप लोकवेद के आधार से कहते हो कि शेषनाग सारी सृष्टि को उठाए हुए है। इनमें कौन परमात्मा है? इन प्रमाणों से श्री विष्णु जी को परमात्मा नहीं माना जा सकता। शास्त्रों व आँखों देखने वाले संतों से पता चलता है कि पूर्ण परमात्मा कौन है।

प्रश्न 50 :- जो नाम हिन्दू जाप करते हैं, क्या वे मोक्षदायक व लाभदायक नहीं हैं?

उत्तर :- हिन्दू समाज में जो नाम जाप किए जाते हैं, वे मनमाना आचरण हैं। जैसे हरे कृष्ण, हरे राम, ओम् नमः शिवाय, ओम् भगवते वासुदेवाय नमः, राधे श्याम, सीता राम, राधे-राधे श्याम मिलादे, जय माता दी, बम्ब-बम्ब महादेव, ओम् आदि। ओम् नाम को छोड़कर शेष नाम मनमाना आचरण है जो शास्त्रों में नहीं है। इसलिए इनके जाप से साधक को कोई लाभ नहीं होता।

गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में स्पष्ट है। श्री रामचन्द्र जी का जन्म त्रेतायुग के अंत में हुआ, तब तक सत्ययुग 17 लाख 28 हजार वर्ष तथा त्रेतायुग 12 लाख 96 हजार वर्ष का समय भी लगभग व्यतीत हो चुका था। लगभग 30 लाख वर्ष चतुर्युग के पूरे हो चुके थे। उस दौरान हरे राम, हरे कृष्ण, सीता राम, राधे + श्याम का जन्म भी नहीं हुआ था। उस समय के व्यक्ति इनका जाप नहीं करते थे। वे ओम् नाम + मनमाना आचरण तप करते थे।

एक लाख वर्ष तक सनातनी साधना की जाती थी। उसके पश्चात् मनमाना आचरण का दौर चला जो आज तक जारी है।

मोक्ष होगा तत्त्वदर्शी संत द्वारा बताए सूक्ष्मवेद में वर्णित भक्ति विधि से। हिन्दू समाज पुराणों को आगे अड़ाता है कि पुराणों में यह साधना करना लिखा है।

विचार करो :- पुराण तो मनमाना आचरण करने वालों का अपना अनुभव है जो वेदों गीता तथा सूक्ष्मवेद से मेल नहीं करता। इसलिए ये साधना व्यर्थ है। तत्त्वदर्शी संत बताएगा कि परमात्मा कौन है? सत्य साधना कौन-सी है, गलत कौन सी है? गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में स्पष्ट है कि गीता ज्ञान भी पूर्ण नहीं है, परंतु गलत भी नहीं। इसलिए तत्त्वदर्शी संत से जानने को कहा है। तत्त्वदर्शी संत बताएगा। अब वह ज्ञान पढ़ते हैं :-

''नौवां अध्याय''

''हिन्दू साहेबान! नहीं समझे निर्मल वेद ज्ञान''

अब वेदों से प्रमाणित करता हूँ कि पूर्ण परमात्मा कौन है? :-

चारों वेद (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद) हिन्दू धर्म की रीढ़ माने जाते हैं। इन्हीं का सारांश श्रीमद्भगवत गीता है। चारों वेद परमात्मा की जानकारी रखते हैं। उसके लक्षण बताते हैं। परमात्मा कौन है? कैसा है? निराकार है या साकार है? कैसी लीला करता है? निवास स्थान कहाँ है? जिस किसी की लीलाएँ वेदों के अनुसार हैं, वह परमात्मा है।

वेदों का ज्ञान कबीर जी पर खरा उतरता है :-

हिन्दू धर्म के व्यक्ति चारों वेदों (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद) के ज्ञान को सत्य मानते हैं। वेदों में परमेश्वर की महिमा बताई है। परमेश्वर की पहचान भी बताई है। बताया है कि सृष्टि की उत्पत्ति करने वाला परमेश्वर साकार यानि नराकार है जो इस प्रकार है :-

परमात्मा आसमान में बने लोक (सतलोक = ऋतधाम) में निवास करता है। वहाँ से सशरीर चलकर पृथ्वी आदि लोक-लोकान्तरों में आता है। सतलोक में परमेश्वर के शरीर का तेज असंख्यों सूर्यों के तेज (प्रकाश) से भी अधिक है। यदि उसी तेजोमय शरीर में यहाँ आए तो सबकी आँखें बंद हो जाएँ। कोई भी नहीं देख सकेगा। इसलिए परमेश्वर अपने शरीर को सरल करके यानि हल्के तेज का करके पृथ्वी आदि लोकों में आता है। अच्छी आत्माओं को मिलता है। उनको यथार्थ अध्यात्म ज्ञान बताता है। सत्य भक्ति के नामों का आविष्कार करता है। अपने मुख से वाणी बोलकर मानव को भक्ति की प्रेरणा करता है। अपने मुख कमल से सम्पूर्ण अध्यात्म ज्ञान कवित्व से ये सब लीला कबीर जी ने की थी। वेद भी प्रमाणित करते हैं कि कबीर जी परमेश्वर हैं।

''पवित्र वेदों से जानते हैं परम अक्षर ब्रह्म कौन है?''

यहाँ पर वेदों के मंत्रों की कुछ फोटोकॉपी लगाई हैं जिनका अनुवाद आर्य समाज के आचार्यों, शास्त्रियों ने किया है। जो कुछ ठीक, कुछ गलत है। परंतु सत्य फिर भी स्पष्ट है।

वेद मंत्रों में कहा है कि सृष्टि का उत्पत्तिकर्ता ''परम अक्षर ब्रह्म'' यानि ''सत्यपुरूष'' आकाश में बने सनातन परम धाम यानि सत्यलोक में निवास करता है। एक सिंहासन पर विराजमान है। उसके सिर के ऊपर मुकट तथा छत्र लगे हैं। परमेश्वर देखने में राजा के समान है। परमेश्वर वहाँ से चलकर नीचे के लोक में पृथ्वी आदि पर चलकर (गति करके) आता है। अच्छी

आत्माओं को मिलता है। उनको यथार्थ अध्यात्म ज्ञान बताता है। अपने मुख से वाणी बोल-बोलकर भक्ति करने की प्रेरणा करता है। साधना के सत्य नामों का आविष्कार करता है। प्रत्येक युग में एक बार ऐसी लीला करते हुए शिशु रूप धारण करके कमल के फूल पर निवास करता है। वहाँ से बाल परमेश्वर को निःसंतान दम्पति उठा ले जाते हैं। बाल भगवान की परवरीश कंवारी गायों द्वारा होती है। बड़ा होकर तत्त्वज्ञान का प्रचार करता है। अपने मुख से वाणी उच्चारण करता है। दोहों, चौपाईयों, शब्दों के माध्यम से अपनी जानकारी की वाणी उच्चारण करता है जिसको (कविर्गिर्भीः) कबीर वाणी कहा जाता है तथा इसी कारण से प्रसिद्ध कवि की भी पदवी प्राप्त करता है यानि उसको कवि कहा जाता है। ध्यान देने योग्य बात है कि जिस पर वेदों में कहे लक्षण खरे उतरते हैं। वही सृष्टि का उत्पत्ति कर्ता तथा सबका धारण-पोषण कर्ता है। अन्य नहीं हो सकता। ये लक्षण केवल कबीर जुलाहे (काशी वाले) पर खरे उतरते हैं। इसलिए परम अक्षर ब्रह्म कबीर जी हैं। इन वेद मंत्रों के बाद चारों युगों में परमेश्वर कबीर जी का लीला करने आने का संक्षिप्त वर्णन है। इनको पढ़कर जान जाओगे कि वेदों में कबीर परमेश्वर जी का वर्णन है।

कबीर परमेश्वर जी ने भी कहा है :-

बेद मेरा भेद है, मैं ना बेदन के मांही। जौन बेद से मैं मिलूं, बेद जानते नांही।।

अर्थात् कबीर जी ने स्पष्ट किया है कि चारों वेद मेरी महिमा बताते हैं। परंतु इन वेदों में मेरी प्राप्ति की भक्ति विधि नहीं क्योंकि काल ब्रह्म ने वह यथार्थ भक्ति के मंत्र निकाल दिए थे। मेरी प्राप्ति का ज्ञान जिस सूक्ष्म वेद में है, उसका ज्ञान वेदों में अंकित नहीं है।

''पवित्र वेदों में कविर्देव अर्थात् कबीर परमेश्वर का प्रमाण''

(पवित्र वेदों में प्रवेश से पहले)

प्रभु जानकारी के लिए पवित्र चारों वेद प्रमाणित शास्त्र हैं। पवित्र वेदों की रचना उस समय हुई थी जब कोई अन्य धर्म नहीं था। इसलिए पवित्र वेदवाणी किसी धर्म से सम्बन्धित नहीं है, केवल आत्म कल्याण के लिए है। इनको जानने के लिए निम्न व्याख्या बहुत ध्यान तथा विवेक के साथ पढ़नी तथा विचारनी होगी।

प्रभु की विस्तृत तथा सत्य महिमा वेद बताते हैं। (अन्य शास्त्र''श्री गीता जी व चारों वेदों तथा पूर्वोक्त प्रभु प्राप्त महान संतों तथा स्वयं कबीर साहेब(कविर्देव) जी की अपनी पूर्ण परमात्मा की अमृत वाणी के अतिरिक्त'' अन्य किसी ऋषि साधक की अपनी उपलब्धि है। जैसे छः शास्त्र ग्यारह उपनिषद् तथा सत्यार्थ प्रकाश आदि। यदि ये वेदों की कसौटी में खरे नहीं उतरते हैं तो यह सम्पूर्ण ज्ञान नहीं है।)

पवित्र वेद तथा गीता जी स्वयं काल प्रभु(ब्रह्म) दत्त हैं। जिन में भक्ति विधि तथा उपलब्धि दोनों सही तौर पर वर्णित हैं। इनके अतिरिक्त जो पूजा विधि तथा अनुभव हैं वह अधूरा समझें। यदि इन्हीं के अनुसार कोई साधक अनुभव बताए तो सत्य जानें। क्योंकि कोई भी प्राणी प्रभु से अधिक नहीं जान सकता।

वेदों के ज्ञान से पूर्वोक्त महात्माओं का विवरण सही मिलता है। इससे सिद्ध हुआ कि वे सर्व महात्मा पूर्ण थे। पूर्ण परमात्मा का साक्षात्कार हुआ है तथा बताया है वह परमात्मा कबीर साहेब(कविर् देव) है।

वही ज्ञान चारों पवित्र वेद तथा पवित्र गीता जी भी बताते हैं।

कलियुगी ऋषियों ने वेदों का टीका (भाषा भाष्य) ऐसे कर दिया जैसे कहीं दूध की महिमा कही गई हो और जिसने कभी जीवन में दूध देखा ही न हो और वह अनुवाद कर रहा हो, वह ऐसे करता है :-

पोष्टिकाहार असि। पेय पदार्थ असि। श्वेदसि।
अमृत उपमा सर्वा मनुषानाम पेय्याम् सः दूग्धः असिः।

(पौष्टिकाहार असि)=कोई शरीर पुष्ट कर ने वाला आहार है (पेय पदार्थ) पीने का तरल पदार्थ (असि) है। (श्वेत्) सफेद (असि) है। (अमृत उपमा) अमृत सदृश है (सर्व) सब (मनुषानाम्) मनुष्यों के (पेय्याम्) पीने योग्य (सः) वह (दूग्धः) पौष्टिक तरल (असि) है।

भावार्थ किया :- कोई सफेद पीने का तरल पदार्थ है जो अमृत समान है, बहुत पौष्टिक है, सब मनुष्यों के पीने योग्य है, वह स्वयं तरल है। फिर कोई पूछे कि वह तरल पदार्थ कहाँ है? उत्तर मिले वह तो निराकार है। प्राप्त नहीं हो सकता। यहाँ पर दूग्धः को तरल पदार्थ लिख दिया जाए तो उस वस्तु ''दूध'' को कैसे पाया व जाना जाए जिसकी उपमा ऊपर की है? यहाँ पर (दूग्धः) को दूध लिखना था जिससे पता चले कि वह पौष्टिक आहार दूध है। फिर व्यक्ति दूध नाम से उसे प्राप्त कर सकता है।

विचार :- यदि कोई कहे दुग्धः को दूध कैसे लिख दिया? यह तो वाद-विवाद का प्रत्यक्ष प्रमाण ही हो सकता है। जैसे दुग्ध का दूध अर्थ गलत नहीं है। भाषा भिन्न होने से हिन्दी में दूध तथा क्षेत्रीय भाषा में दूधू लिखना भी संस्कृत भाषा में लिखे दुग्ध का ही बोध है। जैसे पलवल शहर के आसपास के ग्रामीण परवर कहते हैं। यदि कोई कहे कि परवर को पलवल कैसे सिद्ध कर दिया, मैं नहीं मानता। यह तो व्यर्थ का वाद विवाद है। ठीक इसी प्रकार कोई कहे कि कविर्देव को कबीर परमेश्वर कैसे सिद्ध कर दिया यह तो व्यर्थ का वाद-विवाद ही है। जैसे ''यजुर्वेद'' है यह एक धार्मिक पवित्र पुस्तक है जिसमें प्रभु की यज्ञिय स्तुतियों की ऋचाऐं लिखी हैं तथा प्रभु कैसा है? कैसे पाया जाता है? सब विस्तृत वर्णन है।

अब पवित्र यजुर्वेद की महिमा कहें कि प्रभु की यज्ञीय स्तूतियों की ऋचाओं

का भण्डार है। बहुत अच्छी विधि वर्णित है। एक अनमोल जानकारी है और यह लिखें नहीं कि वह ''यजुर्वेद'' है अपितु यजुर्वेद का अर्थ लिख दें कि यज्ञीय स्तुतियों का ज्ञान है। तो उस वस्तु(पवित्र पुस्तक) को कैसे पाया जा सके? उसके लिए लिखना होगा कि वह पवित्र पुस्तक ''यजुर्वेद'' है जिसमें यज्ञीय ऋचाऐं हैं।
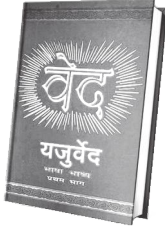
अब यजुर्वेद की सन्धिच्छेद करके लिखें। यजुर्+वेद, भी वही पवित्र पुस्तक यजुर्वेद का ही बोध है। यजुः+वेद भी वही पवित्र पुस्तक यजुर्वेद का ही बोध है। जिसमें यज्ञीय स्तुति की ऋचाऐं हैं। उस धार्मिक पुस्तक को यजुर्वेद कहते हैं। ठीक इसी प्रकार चारों पवित्र वेदों में लिखा है कि वह कविर्देव(कबीर परमेश्वर) है। जो सर्व शक्तिमान, जगत्पिता, सर्व सृष्टि रचनहार, कुल मालिक तथा पाप विनाशक व काल की कारागार से छुटवाने वाला अर्थात् बंदी छोड़ है।

इसको कविर्+देव लिखें तो भी कबीर परमेश्वर का बोध है। कविः+देव लिखें तो भी कबीर परमेश्वर अर्थात् कविर् प्रभु का ही बोध है।

इसलिए कविर्देव उसी कबीर साहेब का ही बोध करवाता है :- सर्व शक्तिमान, अजर-अमर, सर्व ब्रह्मण्डों का रचनहार कुल मालिक है क्योंकि पूर्वोक्त प्रभु प्राप्त सन्तों ने अपनी-अपनी मातृभाषा में 'कविर्' को 'कबीर' बोला है तथा 'वेद' को 'बेद' बोला है। इसलिए 'व' और 'ब' के अंतर हो जाने पर भी पवित्र शास्त्र वेद का ही बोध है।

विचार :- जैसे कोई अंग्रेजी भाषा में लिखें कि **God (Kavir) Kaveer is all mighty** इसका हिन्दी अनुवाद करके लिखें कविर या कवीर परमेश्वर सर्व शक्तिमान है।

अब अंग्रेजी भाषा में तो हलन्त (्) की व्यवस्था ही नहीं है। फिर मात्र भाषा में इसी को कबीर कहने तथा लिखने लगे।

यही परमात्मा कविर्देव(कबीर परमेश्वर) तीन युगों में नामान्तर करके आते हैं जिनमें इनके नाम रहते हैं - सतयुग में सत सुकृत, त्रेतायुग में मुनिन्द्र, द्वापरयुग में करुणामय तथा कलयुग में कबीर देव (कविर्देव)। वास्तविक नाम उस पूर्ण ब्रह्म का कविर् देव ही है। जो सृष्टि रचना से पहले भी अनामी लोक में विद्यमान थे। इन्हीं के उपमात्मक नाम सतपुरुष, अकाल मूर्त, पूर्ण ब्रह्म, अलख पुरुष, अगम पुरुष, परम अक्षर ब्रह्म आदि हैं। उसी परमात्मा को चारों पवित्र वेदों में ''कविरमितौजा'', ''कविरघांरि'', ''कविरग्नि'' तथा ''कविर्देव'', कहा है तथा सर्वशक्तिमान, सर्व सृष्टि रचनहार बताया है। पवित्र कुरान शरीफ में सुरत फुर्कानी नं. 25 आयत नं. 19,21,52,58,59 में भी प्रमाण है।

कई एक का विरोध है कि जो शब्द कविर्देव' है इसको सन्धिच्छेद करने

से कविः+देवः बन जाता है यह कबिर् परमेश्वर या कबीर साहेब कैसे सिद्ध किया? व को ब तथा छोटी इ (ि) की मात्रा को बड़ी ई (ी) की मात्रा करना बेसमझी है।

विचार :- एक ग्रामीण लड़के की सरकारी नौकरी लगी। जिसका नाम कर्मवीर पुत्र श्री धर्मवीर सरकारी कागजों में तथा करमबिर पुत्र श्री धरमबिर पुत्र परताप गाँव के चौकीदार की डायरी में जन्म के समय का लिखा था। सरकार की तरफ से नौकरी लगने के बाद जाँच पड़ताल कराई जाती है। एक सरकारी कर्मचारी जाँच के लिए आया। उसने पूछा कर्मवीर पुत्र श्री धर्मवीर का मकान कौन-सा है, उसकी अमूक विभाग में नौकरी लगी है। गाँव में कर्मवीर को कर्मा तथा उसके पिता जी को धर्मा तथा दादा जी को प्रता आदि उर्फ नामों से जानते थे। व्यक्तियों ने कहा इस नाम का लड़का इस गाँव में नहीं है। काफी पूछताछ के बाद एक लड़का जो कर्मवीर का सहपाठी था, उसने बताया यह कर्मा की नौकरी के बारे में है। तब उस बच्चे ने बताया यही कर्मबीर उर्फ कर्मा तथा धर्मबीर उर्फ धर्मा ही है। फिर उस कर्मचारी को शंका उत्पन्न हुई कि कर्मबीर नहीं कर्मवीर है। उसने कहा चौकीदार की डायरी लाओ, उसमें भी लिखा था - ''करमबिर पुत्र धरमबिर पुत्र परताप'' पूरा ''र'' ''व'' के स्थान पर ''ब'' तथा छोटी ''ि'' की मात्रा लगी थी। तो भी वही बच्चा कर्मवीर ही सिद्ध हुआ, क्योंकि गाँव के नम्बरदारों तथा प्रधानों ने भी गवाही दी कि बेशक मात्रा छोटी बड़ी या ''र'' आधा या पूरा है, लड़का सही इसी गाँव का है। सरकारी कर्मचारी ने कहा नम्बरदार अपने हाथ से लिख दे। नम्बरदार ने लिख दिया मैं करमविर पूतर धरमविर को जानता हूँ जो इस गाम का बासी है और हस्ताक्षर कर दिए। बेशक नम्बरदार ने विर में छोटी ई(ि) की मात्रा का तथा करम में बड़े ''र'' का प्रयोग किया है, परन्तु हस्ताक्षर करने वाला गाँव का गणमान्य व्यक्ति है। किसी को कोई आपत्ति नहीं हो सकती, क्योंकि नाम की स्पेलिंग गलत नहीं होती।

ठीक इसी प्रकार पूर्ण परमात्मा का नाम सरकारी दस्तावेज(वेदों) में कविर्देव है, परन्तु गाँव(पृथ्वी) पर अपनी-2 मातृ भाषा में कबीर, कबिर, कबीरा, कबीरन् आदि नामों से जाना जाता है। इसी को नम्बरदारों (आँखों देखा विवरण अपनी पवित्र वाणी में ठोक कर गवाही देते हुए आदरणीय पूर्वोक्त सन्तों) ने कविर्देव को हक्का कबीर, सत् कबीर, कबीरा, कबीरन्, खबीरा, खबीरन् आदि लिख कर हस्ताक्षर कर रखे हैं।

वर्तमान (सन् 2006) से लगभग 600 वर्ष पूर्व जब परमात्मा कबीर जी (कविर्देव जी) स्वयं प्रकट हुए थे उस समय सर्व सद्ग्रन्थों का वास्तविक ज्ञान लोकोक्तियों (दोहों, चोपाईयों, शब्दों अर्थात् कविताओं) के माध्यम से साधारण भाषा में जन साधारण को बताया था। उस तत्त्व ज्ञान को उस समय

के संस्कृत भाषा व हिन्दी भाषा के ज्ञाताओं ने यह कह कर ठुकरा दिया कि कबीर जी तो अशिक्षित है। इस के द्वारा कहा गया ज्ञान व उस में उपयोग की गई भाषा व्याकरण दृष्टिकोण से ठीक नहीं है।

जैसे कबीर जी ने कहा है :-

कबीर बेद मेरा भेद है, मैं ना बेदों माहीं।
जौण बेद से मैं मिलु ये बेद जानते नाहीं।।

भावार्थ :- परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ जी ने कहा है कि जो चार वेद हैं ये मेरे विषय में ही ज्ञान बता रहे हैं परन्तु इन चारों वेदों में वर्णित विधि द्वारा मैं (पूर्ण ब्रह्म) प्राप्त नहीं हो सकता। जिस वेद (स्वसम अर्थात् सूक्ष्म वेद) में मेरी प्राप्ति का ज्ञान है। उस को चारों वेदों के ज्ञाता नहीं जानते। इस वचन को सुनकर। उस समय के आचार्यजन कहते थे कि कबीर जी को भाषा का ज्ञान नहीं है। देखो वेद का बेद कहा है। नहीं का नाहीं कहा है। ऐसे व्यक्ति को शास्त्रों का क्या ज्ञान हो सकता है? इसलिए कबीर जी मिथ्या भाषण करते हैं। इस की बातों पर विश्वास नहीं करना। स्वामी दयानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश समुल्लास ग्यारह पृष्ठ 306 पर कबीर जी के विषय में यही कहा है। वर्तमान में मुझ दास (संत रामपाल दास) के विषय में विज्ञापनों में लिखे लेख पर आर्य समाज के आचार्यों ने यही आपत्ति व्यक्त की थी कि रामपाल को हिन्दी भाषा भी सही नहीं लिखनी आती व को ब लिखता है छोटी-बड़ी मात्राओं को गलत लिखता है। कोमा व हलन्त भी नहीं लगाता। इसका ज्ञान कैसे सही माना जाए।

विचार :- किसी लड़के का विवाह एक सुन्दर सुशील युवती से हो गया। उसने साधारण वस्त्र पहने थे। मेकअप (हार, सिंगार) नहीं कर रखा था। उस के विषय में कोई कहे कि ''यह भी कोई विवाह है। वधु ने मेकअप (हार, सिंगार-आभूषण आदि नहीं पहने) नहीं किया है। विचार करें विवाह का अर्थ है पुरूष को पत्नी प्राप्ति। यदि मेकअप (श्रृंगार) नहीं कर रखा तो भी वांच्छित वस्तु प्राप्त है। यदि श्रृंगार कर रखा है लड़की ने तो भी बुरा नहीं। परन्तु एक श्रृंगार के अभाव से विवाह को ही नकार देना कौन सी बुद्धिमता है। ठीक इसी प्रकार परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ तथा संत रामपाल दास जी महाराज द्वारा दिया तत्त्व ज्ञान है। वास्तविक ज्ञान प्राप्त है। यदि भाषा में श्रृंगार का अभाव अर्थात् मात्राओं व हलन्तों की कमी है तो विद्वान पुरूष कृप्या ठीक करके पढ़ें।

इस तरह इस उलझी हुई ज्ञानगुत्थी को सुलझाया जाएगा। इसमें भाषा तथा व्याकरण की भूमिका क्या है?

स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने अपने द्वारा रचे पवित्र उपनिषद् ''सत्यार्थ प्रकाश'' के सातवें समुलास में (पृष्ठ नं. 217, 212 अजमेर से प्रकाशित

तथा पृष्ठ संख्या 173 दीनानगर दयानन्द मठ पंजाब से प्रकाशित) लिखा है, उसका भावार्थ है कि ब्रह्म ने वेद वाणी चार ऋषियों में जीवस्थ रूप से बोले। जैसे लग रहा था कि ऋषि वेद बोल रहे थे, परन्तु ब्रह्म बोल रहा था तथा ऋषियों का मुख प्रयोग कर रहा था। (''जीवस्थ रूप'' का भावार्थ है जैसे ऋषियों के अन्दर कोई और जीव स्थापित होकर बोल रहा हो) बाद में उन ऋषियों को कुछ मालूम नहीं कि क्या बोला, क्या लिखा?

(जैसे कोई प्रेतात्मा किसी के शरीर में प्रवेश करके बोलती है। उस समय लग रहा होता है कि शरीर वाला जीव ही बोल रहा है, परन्तु प्रेत के निकल जाने के बाद उस शरीर वाले जीव को कुछ मालूम नहीं होता, मैंने क्या बोला था)।

इसी प्रकार बाद में ऋषियों ने वेद भाषा को जानने के लिए व्याकरण निघटु आदि की रचना की। जो स्वामी दयानन्द जी के शब्दों में सत्यार्थ प्रकाश तीसरे समुल्लास (पृष्ठ नं. 80, अजमेर से प्रकाशित तथा पृष्ठ संख्या 64 दीनानगर पंजाब से प्रकाशित) में पवित्र चारों वेद ईश्वर कृत होने से निभ्रात हैं, वेदों का प्रमाण वेद ही हैं। चारों ब्राह्मण, व्याकरण, निघटु आदि ऋषियों कृत होने से त्रुटि युक्त हो सकते हैं। (उपरोक्त विचार स्वामी दयानन्द जी के हैं।)

विचार करें वेद पढ़ने वाले ऋषियों के अपने विचारों से रचे उपनिषद् एक दूसरे के विपरीत व्याख्या कर रहे हैं। इसलिए वेद ज्ञान को तत्त्वज्ञान से ही समझा जा सकता है। सूक्ष्मवेद यानि तत्त्वज्ञान (स्वसम वेद) पूर्ण ब्रह्म कविर्देव ने स्वयं आकर बताया है तथा चारों वेदों का ज्ञान ब्रह्म द्वारा बताया गया है और वेदों को बोलने वाला ब्रह्म स्वयं पवित्र यजुर्वेद अध्याय नं. 40 मन्त्र नं. 10 में कह रहा है कि उस पूर्ण ब्रह्म को कोई तो (सम्भवात्) जन्म लेकर प्रकट होने वाला अर्थात् आकार में (आहुः) कहता है तथा कोई (असम्भवात्) जन्म न लेने वाला अर्थात् व निराकार (आहुः) कहता है। परन्तु इसका वास्तविक ज्ञान तो(धीराणाम्) पूर्ण ज्ञानी अर्थात् तत्त्वदर्शी संतजन (विचचक्षिरे) पूर्ण निर्णायक भिन्न भिन्न बताते हैं (शुश्रुम्) उसको ध्यानपूर्वक सुनो।

इससे स्वसिद्ध है कि वेद बोलने वाला ब्रह्म भी स्वयं कह रहा है कि उस पूर्ण ब्रह्म के बारे में मैं भी पूर्ण ज्ञान नहीं रखता। उसको तो कोई तत्त्वदर्शी संत ही बता सकता है। इसी प्रकार इसी अध्याय के मन्त्र नं. 13 में कहा है कि कोई तो (विद्याया) अक्षर ज्ञानी एक भाषा के जानने वाले को ही विद्वान कहते हैं, दूसरे (अविद्याया) निरक्षर को अज्ञानी कहते हैं, यह जानकारी भी (धीराणाम्) तत्त्वदर्शी संतजन ही (विचचक्षिरे) विस्तृत व्याख्या ब्यान करते हैं (तत्) उस तत्त्वज्ञान को उन्हीं से (शुश्रुम्) ध्यानपूर्वक सुनो अर्थात् वही तत्त्वदर्शी संत ही बताएगा कि विद्वान अर्थात् ज्ञानी कौन है तथा अज्ञानी अर्थात् अविद्वान कौन है।

विशेष :- उपरोक्त प्रमाणों को विवेचन करके सद्भावना पूर्वक पुनर्विचार करें तथा व को ब तथा छोटी बड़ी मात्राओं की शुद्धि-अशुद्धि से ही ज्ञानी व अज्ञानी की पहचान नहीं होती, वह तो तत्त्वज्ञान से ही होती है।

(कविर् देव) = कबीर परमेश्वर के विषय में 'व' को 'ब' कैसे सिद्ध किया है? छोटी इ(ि) की मात्रा बड़ी ई(ी) की मात्रा कैसे सिद्ध हो सकती है? इस वाद-विवाद में न पड़कर तत्त्वज्ञान को समझना है।

जैसे यजुर्वेद है, यह एक पवित्र पुस्तक है। इसके विषय में कहीं संस्कृत भाषा में विवरण किया हो जहां यजुः या यजुम् आदि शब्द लिखें हो तो भी पवित्र पुस्तक यजुर्वेद का ही बोध समझा जाता है। इसी प्रकार पूर्ण परमात्मा का वास्तविक नाम कविर्देव है। इसी को भिन्न-भिन्न भाषा में कबीर साहेब, कबीर परमेश्वर कहने लगे। कई श्रद्धालु शंका व्यक्त करते हैं कि कविर् को कबीर कैसे सिद्ध कर दिया। व्याकरण दृष्टिकोण से कविः का अर्थ सर्वज्ञ होता है। दास की प्रार्थना है कि प्रत्येक शब्द का कोई न कोई अर्थ तो बनता ही है। रही बात व्याकरण की। भाषा प्रथम बनी क्योंकि वेद वाणी प्रभु द्वारा कही है, तथा व्याकरण बाद में ऋषियों द्वारा बनाई है। यह त्रुटियुक्त हो सकती है। वेद के अनुवाद (भाषा-भाष्य) में व्याकरण व्यक्त है अर्थात् असंगत तथा विरोध भाव है। क्योंकि वेद वाणी मंत्रों द्वारा पदों में है। जैसे पलवल शहर के आस-पास के व्यक्ति पलवल को परवर बोलते हैं। यदि कोई कहे कि पलवल को कैसे परवर सिद्ध कर दिया। यही कविर् को कबीर कैसे सिद्ध कर दिया कहना मात्र है। जैसे क्षेत्रीय भाषा में पलवल शहर को परवर कहते हैं। इसी प्रकार कविर् को कबीर बोलते हैं, प्रभु वही है। महर्षि दयानन्द जी ने ''सत्यार्थ प्रकाश'' समुल्लास 4 पृष्ठ 100 पर (दयानन्द मठ दीनानगर पंजाब से प्रकाशित पर) ''देवृकामा''का अर्थ ''देवर की कामना करने'' किया है देवृ को पूरा '' र '' लिख कर देवर किया है। कविर् को कविर फिर भाषा भिन्न कबीर लिखने व बोलने में कोई आपत्ति या व्याकरण की त्रुटि नहीं है। पूर्ण परमात्मा कविर्देव है, यह प्रमाण यजुर्वेद अध्याय 29 मंत्र 25 तथा सामवेद संख्या 1400 में भी है जो निम्न है :-

यजुर्वेद के अध्याय नं. 29 के श्लोक नं. 25 **(संत रामपाल दास द्वारा भाषा-भाष्य) :-**

समिद्धोऽद्य मनुषो दुरोणे देवो देवान्यजसि जातवेदः।
आ च वह मित्रमहश्चिकित्वान्त्वं दूतः कविरसि प्रचेताः।।25।।

समिद्धः—अद्य—मनुषः—दुरोणे—देवः—देवान्—यज्—असि—जातवेदः— आ—च—वह— मित्रमहः—चिकित्वान्—त्वम्—दूतः—कविर्—असि—प्रचेताः

अनुवाद :— (अद्य) आज अर्थात् वर्तमान में (दुरोणे) शरीर रूप महल में दुराचार पूर्वक (मनुषः) झूठी पूजा में लीन मननशील व्यक्तियों को (समिद्धः)

लगाई हुई आग अर्थात् शास्त्र विधि रहित वर्तमान पूजा जो हानिकारक होती है, उसके स्थान पर (देवान्) देवताओं के (देवः) देवता (जातवेदः) पूर्ण परमात्मा सतपुरूष की वास्तविक (यज्) पूजा (असि) है। (आ) दयालु (मित्रमहः) जीव का वास्तविक साथी पूर्ण परमात्मा ही अपने (चिकित्वान्) स्वस्थ ज्ञान अर्थात यथार्थ भक्ति को (दूतः) संदेशवाहक रूप में (वह) लेकर आने वाला (च) तथा (प्रचेताः) बोध कराने वाला (त्वम्) आप (कविरसि) कविर्देव है अर्थात् कबीर परमेश्वर हैं।

भावार्थ :- जिस समय पूर्ण परमात्मा प्रकट होता है उस समय सर्व ऋषि व सन्त जन शास्त्र विधि त्याग कर मनमाना आचरण अर्थात् पूजा द्वारा सर्व भक्त समाज को मार्ग दर्शन कर रहे होते हैं। तब अपने तत्त्वज्ञान अर्थात् स्वस्थ ज्ञान का संदेशवाहक बन कर स्वयं ही कविर्देव अर्थात् कबीर प्रभु ही आता है।

संख्या नं. 1400 सामवेद उतार्चिक अध्याय नं. 12 खण्ड नं. 3 श्लोक नं. 5 **(संत रामपाल दास द्वारा भाषा-भाष्य):-**

भद्रा वस्त्रा समन्या३वसानो महान् कविर्निवचनानि शंसन्।
आ वच्यस्व चम्वोः पूयमानो विचक्षणो जागृविर्देववीतौ।।5।।

भद्रा—वस्त्रा—समन्या—वसानः—महान्—कविर्—निवचनानि—शंसन्—आवच्यस्व—चम्वोः— पूयमानः—विचक्षणः— जागृविः—देव—वीतौ

अनुवाद :— (सम् अन्या) अपने शरीर जैसा अन्य (भद्रा वस्त्रा) सुन्दर चोला यानि शरीर (वसानः) धारण करके (महान् कविर्) समर्थ कविर्देव यानि कबीर परमेश्वर (निवचनानि शंसन्) अपने मुख कमल से वाणी बोलकर यथार्थ अध्यात्म ज्ञान बताता है, यथार्थ वर्णन करता है। जिस कारण से (देव) परमेश्वर की (वितौ) भक्ति के लाभ को (जागृविः) जागृत यानि प्रकाशित करता है। (विचक्षणः) कथित विद्वान सत्य साधना के स्थान पर (आ वच्यस्व) अपने वचनों से (पूयमानः) आन–उपासना रूपी मवाद (चम्वोः) आचमन करा रखा होता है यानि गलत ज्ञान बता रखा होता है।

भावार्थ :- जैसे यजुर्वेद अध्याय 5 मंत्र एक में कहा है कि 'अग्नेः तनुः असि = परमेश्वर सशरीर है। विष्णवे त्वा सोमस्य तनुः असि = उस अमर प्रभु का पालन पोषण करने के लिए अन्य शरीर है जो अतिथि रूप में कुछ दिन संसार में आता है। तत्त्व ज्ञान से अज्ञान निंद्रा में सोए प्रभु प्रेमियों को जगाता है। वही प्रमाण इस मंत्र में है कि कुछ समय के लिए पूर्ण परमात्मा कविर्देव अर्थात् कबीर प्रभु अपना रूप बदलकर सामान्य व्यक्ति जैसा रूप बनाकर पृथ्वी मण्डल पर प्रकट होता है तथा कविर्निवचनानि शंसन् अर्थात् कविर्वाणी बोलता है। जिसके माध्यम से तत्त्वज्ञान को जगाता है तथा उस समय महर्षि कहलाने वाले चतुर प्राणी मिथ्याज्ञान के आधार पर शास्त्र विधि अनुसार सत्य साधना रूपी अमृत के स्थान पर शास्त्र विधि रहित पूजा रूपी मवाद को श्रद्धा के साथ आचमन अर्थात् पूजा करा रहे होते हैं। उस समय पूर्ण परमात्मा स्वयं प्रकट होकर तत्त्वज्ञान द्वारा शास्त्र विधि अनुसार साधना

का ज्ञान प्रदान करता है।

पवित्र ऋग्वेद के निम्न मंत्रों में भी पहचान बताई है कि जब वह पूर्ण परमात्मा कुछ समय संसार में लीला करने आता है तो शिशु रूप धारण करता है। उस पूर्ण परमात्मा की परवरिश (अध्न्य धेनवः) कंवारी गाय द्वारा होती है। फिर लीलावत् बड़ा होता है तो अपने पाने व सतलोक जाने अर्थात् पूर्ण मोक्ष मार्ग का तत्त्वज्ञान (कविर्गिभिः) कबीर बाणी द्वारा कविताओं द्वारा बोलता है, जिस कारण से प्रसिद्ध कवि कहलाता है, परन्तु वह स्वयं कविर्देव पूर्ण परमात्मा ही होता है जो तीसरे मुक्ति धाम सतलोक में रहता है।

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 1 मंत्र 9 तथा सूक्त 96 मंत्र 17 से 20 :-

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 1 मंत्र 9

अभी इमं अध्न्या उत श्रीणन्ति धेनवः शिशुम्। सोममिन्द्राय पातवे।।9।।

अभी इमम्–अध्न्या उत श्रीणन्ति धेनवः शिशुम् सोमम् इन्द्राय पातवे।

अनुवाद :– (उत) विशेष कर (इमम्) इस (शिशुम्) बालक रूप में प्रकट (सोमम्) पूर्ण परमात्मा अमर प्रभु की (इन्द्राय) सुख सुविधाओं द्वारा अर्थात् खाने–पीने द्वारा जो शरीर वृद्धि को प्राप्त होता है उसे (पातवे) वृद्धि के लिए (अभी) पूर्ण तरह (अध्न्या धेनवः) जो गाय, सांड द्वारा कभी भी परेशान न की गई हो अर्थात् कंवारी गाय द्वारा (श्रीणन्ति) परवरिश की जाती है।

भावार्थ :- पूर्ण परमात्मा अमर पुरुष जब लीला करता हुआ बालक रूप धारण करके स्वयं प्रकट होता है उस समय कंवारी गाय अपने आप दूध देती है जिससे उस पूर्ण प्रभु की परवरिश होती है।

<u>कृपया पढ़ें वेद मंत्रों की फोटोकॉपी तथा दास (रामपाल दास) के द्वारा किया गया विश्लेषण, इनके बाद परमेश्वर कबीर जी का चारों युगों में सतलोक सिंहासन से गति करके आने का प्रकरण</u>।

(देखें फोटोकॉपी वेदमन्त्रों की)

संत गरीबदास जी {गाँव-छुड़ानी, जिला-झज्जर हरियाणा (भारत)} ने अपनी अमृत वाणी में कहा है कि :-

गरीब, ऐसा निर्मल नाम है, निर्मल करे शरीर।
और ज्ञान मंडलीक है, चकवै ज्ञान कबीर।।

अर्थात् संत गरीबदास जी ने कहा है कि सच्चा नाम ऐसा कारगर है जो आत्मा को निर्मल कर देता है। अध्यात्म ज्ञान शरीर के कष्ट भी दूर करता है। कबीर साहेब का अध्यात्म ज्ञान (चकवै) चक्रवर्ती (All rounder) है। अन्य ज्ञान (मंडलीक) क्षेत्रिय यानि लोक वेद है।

<u>संत गरीबदास जी को दस वर्ष की आयु में परमात्मा सर्वोपरि लोक यानि सत्यलोक से आकर मिले थे। उनकी आत्मा को ऊपर ले गए जहाँ परमात्मा</u>

रहता है।

प्रमाण :- ऋग्वेद मंडल 9 सूक्त 54 मंत्र 3 में कहा है कि परमेश्वर सबसे ऊपर लोक में विराजमान है :-

प्रमाण के लिए देखें यह फोटोकॉपी इस मंत्र की जिसका अनुवाद आर्यसमाज के अनुवादकों ने किया है :-

(प्रमाण ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सुक्त 54 मन्त्र 3)

अयं विश्वानि तिष्ठति पुनानो भुवनोपरि ।
सोमो देवो न सूर्यः ॥३॥

पदार्थः—(सूर्यः, न) सूर्य के समान जगत्प्रेरक (अयम्) यह परमात्मा (सोमः, देवः) सौम्य स्वभाव वाला और जगत्प्रकाशक है और (विश्वानि, पुनानः) सब लोकों को पवित्र करता हुआ (भुवनोपरि, तिष्ठति) सम्पूर्ण ब्रह्माण्डों के ऊर्ध्व भाग में भी वर्तमान है ॥३॥

विवेचन :- ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 54 मन्त्र 3 की फोटोकापी में आप देखें, इसका अनुवाद आर्यसमाज के विद्वानों ने किया है। उनके अनुवाद में भी स्पष्ट है कि वह परमात्मा (भुवनोपरि) सम्पूर्ण ब्रह्माण्डों के ऊर्ध्व अर्थात् ऊपर (तिष्ठति) विराजमान है, ऊपर बैठा है।

इसका यथार्थ अनुवाद इस प्रकार है :-

(अयं) यह (सोमः देव) अमर परमेश्वर (सूर्यः) सूर्य के (न) समान (विश्वानि) सर्व को (पुनानः) पवित्र करता हुआ (भुवनोपरि) सर्व ब्रह्माण्डों के ऊर्ध्व अर्थात् ऊपर (तिष्ठति) बैठा है।

भावार्थ :- जैसे सूर्य ऊपर है और अपना प्रकाश तथा उष्णता से सर्व को लाभ दे रहा है। इसी प्रकार यह अमर परमेश्वर जिसका ऊपर के मंत्र में वर्णन किया है, सर्व ब्रह्माण्डों के ऊपर बैठा है।

(प्रमाण ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सुक्त 86 मन्त्र 26)

इन्दुः पुनानो अति गाहते मृधो विश्वानि कृण्वन्त्सुपथानि यज्यवे ।
गाः कृण्वानो निर्णिजं हर्यतः कविरत्यो न क्रीळन्परि वारमर्षति ॥२६॥

पदार्थः—(यज्वे) यज्ञ करने वाले यजमानों के लिए परमात्मा (विश्वानि सुपथानि) सब रास्तों को (कृण्वन्) सुगम करता हुआ (मृधः) उनके विघ्नों को (अतिगाहते) मर्दन करता है और (पुनानः) उनको पवित्र करता हुआ और (निर्निजं) अपने रूप को (गाः कृण्वानः) सरल करता हुआ (हर्य्यतः) वह कान्तिमय परमात्मा (कविः) सर्वज्ञ (अत्योन) विद्युत् के समान (क्रीळन्) क्रीड़ा करता हुआ (वारं) वरणीय पुरुष को (पर्य्यर्षति) प्राप्त होता है ॥२६॥

❖ विवेचन :- यह फोटोकापी ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 86 मन्त्र 26 की है जो

आर्यसमाज के आचार्यों व महर्षि दयानन्द के चेलों द्वारा अनुवादित है जिसमें स्पष्ट है कि यज्ञ करने वाले अर्थात् धार्मिक अनुष्ठान करने वाले यजमानों अर्थात् भक्तों के लिए परमात्मा, सब रास्तों को सुगम करता हुआ अर्थात् जीवन रूपी सफर के मार्ग को दुःखों रहित करके सुगम बनाता हुआ। उनके विघ्नों अर्थात् संकटों का मर्दन करता है अर्थात् समाप्त करता है। भक्तों को पवित्र अर्थात् पाप रहित, विकार रहित करता है। जैसा की अगले मन्त्र 27 में कहा है कि ''जो परमात्मा द्यूलोक अर्थात् सत्यलोक के तीसरे पृष्ठ पर विराजमान है, वहाँ पर परमात्मा के शरीर का प्रकाश बहुत अधिक है।''

उदाहरण के लिए परमात्मा के एक रोम (शरीर के बाल) का प्रकाश करोड़ सूर्य तथा इतने ही चन्द्रमाओं के मिले-जुले प्रकाश से भी अधिक है। यदि वह परमात्मा उसी प्रकाश युक्त शरीर से पृथ्वी पर प्रकट हो जाए तो हमारी चर्म दृष्टि उन्हें देख नहीं सकती। जैसे उल्लु पक्षी दिन में सूर्य के प्रकाश के कारण कुछ भी नहीं देख पाता है। यही दशा मनुष्यों की हो जाए। इसलिए वह परमात्मा अपने रूप अर्थात् शरीर के प्रकाश को सरल करता हुआ उस स्थान से जहाँ परमात्मा ऊपर रहता है, वहाँ से गति करके बिजली के समान क्रीड़ा अर्थात् लीला करता हुआ चलकर आता है, श्रेष्ठ पुरूषों को मिलता है।

यह भी स्पष्ट है कि आप कविः अर्थात् कविर्देव हैं। हम उन्हें कबीर साहेब कहते हैं।

(प्रमाण ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सुक्त 86 मन्त्र 27)

असश्चतः शतधारा अभिश्रियो हरिं नवन्तेऽव ता उदन्युवः।
क्षिपो मृजन्ति परि गोभिरावृतं तृतीये पृष्ठे अधि रोचने दिवः ॥२७॥

पदार्थः—(**उदन्युवः**) प्रेम की (**ताः**) वे (**शतधाराः**) सैंकड़ों धाराए (**असश्चतः**) जो नानारूपों में (**अभिश्रियः**) स्थिति को लाभ कर रही हैं। वे (**हरिं**) परमात्मा को (**अवनवन्ते**) प्राप्त होती हैं। (**गोभिरावृतं**) प्रकाशपुञ्ज परमात्मा को (**क्षिपः**) बुद्धिवृत्तियां (**मृजन्ति**) विषय करती हैं। जो परमात्मा (**दिवस्तृतीये पृष्ठे**) द्युलोक के तीसरे पृष्ठ पर विराजमान है और (**रोचने**) प्रकाशस्वरूप है उसको बुद्धिवृत्तियाँ प्रकाशित करती हैं ॥२७॥

❖ विवेचन :- यह फोटोकापी ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 86 के मन्त्र 27 की है। इसमें स्पष्ट है कि ''परमात्मा द्यूलोक अर्थात् अमर लोक के तीसरे पृष्ठ अर्थात् भाग पर विराजमान है। सत्यलोक अर्थात् शाश्वत् स्थान के तीन भाग हैं। एक भाग में वन-पहाड़-झरने, बाग-बगीचे आदि हैं। यह बाह्य भाग है अर्थात् बाहरी भाग है। (जैसे भारत की राजधानी दिल्ली भी तीन भागों में बँटी है। बाहरी दिल्ली जिसमें गाँव खेत-खलिहान और नहरें हैं, दूसरा बाजार बना है। तीसरा संसद भवन तथा कार्यालय हैं।)

इसके पश्चात् द्यूलोक में बस्तियाँ हैं। सपरिवार मोक्ष प्राप्त हंसात्माऐं रहती हैं। (पृथ्वी पर जैसे भक्त को भक्तात्मा कहते हैं, इसी प्रकार सत्यलोक में हंसात्मा कहलाते हैं।) (3) तीसरे भाग में सर्वोपरि परमात्मा का सिंहासन है। उसके आस-पास केवल नर आत्माऐं रहती हैं, वहाँ स्त्री-पुरूष का जोड़ा नहीं है। वे यदि अपना परिवार चाहते हैं तो शब्द (वचन) से केवल पुत्र उत्पन्न कर लेते हैं।

इस प्रकार शाश्वत् स्थान अर्थात् सत्यलोक तीन भागों में परमात्मा ने बाँट रखा है। वहाँ यानि सत्यलोक में प्रत्येक स्थान पर रहने वालों में वृद्धावस्था नहीं है, वहाँ मृत्यु नहीं है। इसीलिए गीता अध्याय 7 श्लोक 29 में कहा है कि जो जरा अर्थात् वृद्ध अवस्था तथा मरण अर्थात् मृत्यु से छूटने का प्रयत्न करते हैं, वे तत् ब्रह्म अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म को जानते हैं। सत्यलोक में सत्यपुरूष रहता है, वहाँ पर जरा-मरण नहीं है, बच्चे युवा होकर सदा युवा रहते हैं।

(प्रमाण ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सुक्त 82 मन्त्र 1-2)

असावि सोमो अरुषो वृषा हरी राजेव दस्मो अभि गा अचिक्रदत्।
पुनानो वारं पर्येत्यव्ययं श्येनो न योनिं घृतवन्तमासदम् ॥१॥

पदार्थः—(सोमः) जो सर्वोत्पादक प्रभु(अरुषः) प्रकाशस्वरूप (वृषा) सद्गुणों की वृष्टि करने वाला (हरिः) पापों के हरण करने वाला है, वह (राजेव) राजा के समान (दस्मः) दर्शनीय है। और वह (गाः) पृथिव्यादि लोक-लोकान्तरों के चारों ओर (अभि अचिक्रदत्) शब्दायमान हो रहा है। वह (वारं) वरणीय पुरुष को जो (अव्ययं) दृढ़भक्त है उसको (पुनानः) पवित्र करता हुआ (पर्येति) प्राप्त होता है। (न) जिस प्रकार (श्येनः) विद्युत् (घृतवन्तं) स्नेहवाले (आसदं) स्थानों को (योनिं) आधार बनाकर प्राप्त होता है। इसी प्रकार उक्त गुण वाले परमात्मा ने (असावि) इस ब्रह्माण्ड को उत्पन्न किया ॥१॥

कविर्वेधस्या पर्येषि माहिनमत्यो न मृष्टो अभि वाजमर्षसि।
अपसेधन्दुरिता सोम मृळय घृतं वसानः परि यासि निर्णिजम् ॥२॥

पदार्थ—हे परमात्मन्! (वेधस्या) उपदेश करने की इच्छा से आप (माहिनं) महापुरुषों को (पर्येषि) प्राप्त होते हैं और आप (अत्यः) अत्यन्त गतिशील पदार्थ के (न) समान (अभिवाजं) हमारे आध्यात्मिक यज्ञ को (अभ्यर्षसि) प्राप्त होते हैं। आप (कविः) सर्वज्ञ हैं (मृष्टः) शुद्ध स्वरूप हैं (दुरिता) हमारे पापों को (अपसेधन्) दूर करके (सोम) हे सोम! (मृळय) आप हमको सुख दें और (घृतं वसानः) प्रेमभाव को उत्पन्न करते हुए (निर्णिजं) पवित्रता को (परियासि) उत्पन्न करें ॥२॥

❖ विवेचन :- ऊपर ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 82 मन्त्र 1-2 की फोटोकापी हैं,

यह अनुवाद महर्षि दयानन्द जी के दिशा-निर्देश से उन्हीं के चेलों ने किया है और सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली से प्रकाशित है।

इनमें स्पष्ट है कि :- मन्त्र 1 में कहा है ''सर्व की उत्पत्ति करने वाला परमात्मा तेजोमय शरीर युक्त है, पापों को नाश करने वाला और सुखों की वर्षा करने वाला अर्थात् सुखों की झड़ी लगाने वाला है, वह ऊपर सत्यलोक में सिंहासन पर बैठा है जो देखने में राजा के समान है।

यही प्रमाण सूक्ष्मवेद में है कि :-

अर्श कुर्श पर सफेद गुमट है, जहाँ परमेश्वर का डेरा।
श्वेत छत्र सिर मुकुट विराजे, देखत न उस चेहरे नूं।।

यही प्रमाण बाईबल ग्रन्थ तथा कुर्आन् शरीफ में है कि परमात्मा ने छः दिन में सृष्टि रची और सातवें दिन ऊपर आकाश में तख्त अर्थात् सिंहासन पर जा विराजा। (बाईबल के उत्पत्ति ग्रन्थ 2/26-30 तथा कुर्आन् शरीफ की सुर्त ''फुर्कानि 25 आयत 52 से 59 में है।)

वह परमात्मा अपने अमर धाम से चलकर पृथ्वी पर शब्द वाणी से ज्ञान सुनाता है। वह वर्णीय अर्थात् आदरणीय श्रेष्ठ व्यक्तियों को प्राप्त होता है, उनको मिलता है। {जैसे 1. सन्त धर्मदास जी बांधवगढ (मध्य प्रदेश वाले को मिले) 2. सन्त मलूक दास जी को मिले, 3. सन्त दादू दास जी को आमेर (राजस्थान) में मिले 4. सन्त नानक देव जी को मिले 5. सन्त गरीब दास जी गाँव छुड़ानी जिला झज्जर हरियाणा वाले को मिले 6. सन्त घीसा दास जी गाँव खेखड़ा जिला बागपत (उत्तर प्रदेश) वाले को मिले 7. सन्त जम्भेश्वर जी (बिश्नोई धर्म के प्रवर्तक) को गाँव समराथल राजस्थान वाले को मिले}

वह परमात्मा अच्छी आत्माओं को मिलते हैं। जो परमात्मा के दृढ़ भक्त होते हैं, उन पर परमात्मा का विशेष आकर्षण होता है। उदाहरण भी बताया है कि जैसे विद्युत अर्थात् आकाशीय बिजली स्नेह वाले स्थानों को आधार बनाकर गिरती है। जैसे कांसी धातु पर बिजली गिरती है, पहले कांसी धातु के कटोरे, गिलास-थाली, बेले आदि-आदि होते थे। वर्षा के समय तुरन्त उठाकर घर के अन्दर रखा करते थे। वृद्ध कहते थे कि कांसी के बर्तन पर बिजली अमूमन गिरती है, इसी प्रकार परमात्मा अपने प्रिय भक्तों पर आकर्षित होकर मिलते हैं।

मन्त्र नं. 2 में तो यह भी स्पष्ट किया है कि परमात्मा उन अच्छी आत्माओं को उपदेश करने की इच्छा से स्वयं महापुरूषों को मिलते हैं। उपदेश का भावार्थ है कि परमात्मा तत्वज्ञान बताकर उनको दीक्षा भी देते हैं। उनके सतगुरू भी स्वयं परमात्मा होते हैं। यह भी स्पष्ट किया है कि परमात्मा अत्यन्त गतिशील पदार्थ अर्थात् बिजली के समान तीव्रगामी होकर हमारे धार्मिक अनुष्ठानों में आप पहुँचते हैं। सन्त धर्मदास जी को परमात्मा ने यही कहा था कि मैं वहाँ पर अवश्य जाता हूँ जहाँ धार्मिक अनुष्ठान होते हैं क्योंकि मेरी अनुपस्थिति

में काल कुछ भी उपद्रव कर देता है। जिससे साधकों की आस्था परमात्मा से छूट जाती है। मेरे रहते वह ऐसी गड़बड़ नहीं कर सकता। इसीलिए गीता अध्याय 3 श्लोक 15 में कहा है कि वह अविनाशी परमात्मा जिसने ब्रह्म को भी उत्पन्न किया, सदा ही यज्ञों में प्रतिष्ठित है अर्थात् धार्मिक अनुष्ठानों में उसी को इष्ट रूप में मानकर आरती स्तुति करनी चाहिए।

इस ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 82 मन्त्र 2 में यह भी स्पष्ट किया है कि आप (कविर्वेधस्य) कविर्देव है जो सर्व को उपदेश देने की इच्छा से आते हो, आप पवित्र परमात्मा हैं। हमारे पापों को छुड़वाकर अर्थात् नाश करके हे अमर परमात्मा! आप हम को सुःख दें और (द्युतम् वसानः निर्निजम् परियसि) हम आप की सन्तान हैं। हमारे प्रति वह वात्सल्य वाला प्रेम भाव उत्पन्न करते हुए उसी (निर्निजम्) सुन्दर रूप को (परियासि) उत्पन्न करें अर्थात् हमारे को अपने बच्चे जानकर जैसे पहले और जब चाहें तब आप अपनी प्यारी आत्माओं को प्रकट होकर मिलते हैं, उसी तरह हमें भी दर्शन दें।

(प्रमाण ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सुक्त 96 मन्त्र 16 से 20)

स्वायुधः सोतृभिः पूयमानोऽभ्यर्ष गुह्यं चारु नाम।
अभि वाजं सप्तिरिव श्रवस्याभि वायुमभि गा देव सोम ॥१६॥

पदार्थः—हे परमात्मन्! (**गुह्यम्**) सर्वोपरि रहस्य (**चारु**) श्रेष्ठ (**नाम**) जो तुम्हारी संज्ञा है। (**अभ्यर्ष**) उसका ज्ञान करायें। आप (**सोतृभिः, पूयमानः**) उपासक लोगों से स्तूयमान हैं। (**स्वायुधः**) स्वाभाविक शक्ति से युक्त हैं और (**सप्तिरिव**) विद्युत् के समान (**श्रवस्याभि**) ऐश्वर्य के सम्मुख प्राप्त कराइये और (**वायुमभि**) हमको प्राणों की विद्या का वेत्ता बनाइये। (**देव**) हे सर्वशक्ति-सम्पन्न परमेश्वर! हमको (**गाः**) इन्द्रियों के (**अभिगमय**) नियमन का ज्ञाता बनाइये ॥१६॥

शिशुं जज्ञानं हर्यतं मृजन्ति शुम्भन्ति वह्निं मरुतो गणेन।
कविर्गीर्भिः काव्येना कविः सन्त्सोमः पवित्रमत्येति रेभन् ॥१७॥

पदार्थः—(**शिशुम्**) "श्यति सूक्ष्मं करोति प्रलयकाले जगदिति शिशुः परमात्मा" उस परमात्मा को (**जज्ञानम्**) जो सदा प्रकट है, (**हर्यतः**) जो अत्यन्त कमनीय है, उसको उपासक लोग (**मृजन्ति**) बुद्धिविषय करते हैं और (**शुंभन्ति**) उसकी स्तुति द्वारा उसके गुणों का वर्णन करते हैं और (**मरुतः**) विद्वान् लोग (**वह्निम्**) उस गतिशील परमात्मा का (**गणेन**) गुणों के गणों द्वारा वर्णन करते हैं और (**कविः**) कवि लोग (**गीर्भिः**) वाणी द्वारा और (**काव्येन**) कवित्व से उसकी स्तुति करते हैं। (**सोमः**) सोमस्वरूप (**पवित्रम्**) पवित्र वह परमात्मा कारणावस्था में अतिसूक्ष्म प्रकृति को (**रेभन्, सन्**) गर्जता हुआ (**अत्येति**) अति-क्रमण करता है ॥१७॥

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 के मंत्र 16 में कहा है कि हे परमात्मन्! आप

अपने श्रेष्ठ गुप्त नाम का ज्ञान कराऐं। उस नाम को मंत्र 17 में बताया है कि वह कविः यानि कविर्देव है।

मंत्र 17 की केवल हिन्दी :- (शिशुम् जज्ञानम् हर्यन्तम्) परमेश्वर जान-बूझकर तत्वज्ञान बताने के उद्देश्य से शिशु रूप में प्रकट होता है, उनके ज्ञान को सुनकर (मरूतो गणेन) भक्तों का बहुत बड़ा समूह उस परमात्मा का अनुयाई बन जाता है। (मृजन्ति शुम्यन्ति वहिन्)

वह ज्ञान बुद्धिजीवी लोगों को समझ आता है, वे उस परमेश्वर की स्तुति भक्ति तत्वज्ञान के आधार से करते हैं, वह भक्ति (वहिन्) शीघ्र लाभ देने वाली होती है। वह परमात्मा अपने तत्वज्ञान को (काव्येना) कवित्व से अर्थात् कवियों की तरह दोहों, शब्दों, लोकोक्तियों, चौपाईयों द्वारा (कविर् गीर्भिः) कविर् वाणी द्वारा अर्थात् कबीर वाणी द्वारा (पवित्रम् अतिरेभन्) शुद्ध ज्ञान को उच्चे स्वर में गर्ज-गर्जकर बोलते हैं। वह (कविः) कवि की तरह आचरण करने वाला कविर्देव (सन्त्) सन्त रूप में प्रकट (सोम) अमर परमात्मा होता है। (ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 17)

❖ विशेष :- इस मन्त्र के मूल पाठ में दो बार ''कविः'' शब्द है, आर्य समाज के अनुवादकर्ताओं ने एक (कविः) का अर्थ ही नहीं किया है।

ऋषिमना य ऋषिकृत्स्वर्षाः सहस्रंणीथः पदवीः कवीनाम् ।
तृतीयं धाम महिषः सिषासन्त्सोमो विराजमनु राजति ष्टुप् ।।१८।।

पदार्थः—(**सोमः**) सोमस्वरूप परमात्मा (**सिषासन्**) पालन की इच्छा करता हुआ (**महिषः**) जो महान् है वह परमात्मा (**तृतीयं, धाम**) देवयान और पितृयान इन दोनों से पृथक तीसरा जो मुक्तिधाम है । उसमें (**विराजम्**) विराज-मान जो ज्ञानयोगी है उसको (**अनुराजति**) प्रकाश करने वाला है और (**स्तुप**) स्तूयमान है । (**कवीनाम्, पदवीः**) जो क्रान्तदर्शियों की पदवी अर्थात् मुख्य स्थान है और (**सहस्रनीथः**) अनन्त प्रकार से स्तवनीय है, (**ऋषिमनाः**) सर्वज्ञान के साधनरूप मनवाला वह परमात्मा (**यः**) जो (**ऋषिकृत्**) सब ज्ञानों का प्रदाता (**स्वर्षाः**) सूर्यादिकों को प्रकाशक है । वह जिज्ञासु के लिए उपासनीय है ।।१८।।

❖ विवेचन :- यह ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 18 की फोटोकापी है जिसका अनुवाद महर्षि दयानन्द जी के अनुयाईयों ने किया है। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली द्वारा अनुवादित है। इस पर विवेचन करते हैं। इसके अनुवाद में भी बहुत-सी गलतियाँ हैं जो आर्यसमाज के आचार्यों ने की है। हम संस्कृत भी समझ सकते हैं, विवेचन करता हूँ तथा यथार्थ अनुवाद व भावार्थ स्पष्ट करता हूँ। मन्त्र 17 में कहा है कि ऋषि या सन्त रूप में प्रकट होकर परमात्मा अमृतवाणी अपने मुख कमल से बोलता है और उस ज्ञान को समझकर अनेकों अनुयाईयों का समूह बन जाता है। (य) जो

वाणी परमात्मा तत्वज्ञान की सुनाता है, वे (ऋषिकृत्) ऋषि रूप में प्रकट परमात्मा कृत (सहंस्रणीयः) हजारों वाणियाँ अर्थात् कबीर वाणियाँ (ऋषिमना) ऋषि स्वभाव वाले भक्तों के लिए (स्वर्षाः) आनन्ददायक होती हैं। (कविनाम पदवीः) कवित्व से दोहों, चौपाईयों में वाणी बोलने के कारण वह परमात्मा प्रसिद्ध कवियों में से एक कवि की भी पदवी प्राप्त करता है। वह (सोम) अमर परमात्मा (सिषासन्) सर्व की पालन की इच्छा करता हुआ प्रथम स्थिति में (महिषः) बड़ी पृथ्वी अर्थात् ऊपर के लोकों में (तृतीयम् धाम) तीसरे धाम अर्थात् सत्यलोक के तीसरे पृष्ठ पर (अनुराजति) तेजोमय शरीर युक्त (स्तुप) गुम्बज में (विराजम्) विराजमान है, वहाँ बैठा है।

यही प्रमाण ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 54 मन्त्र 3 में है कि परमात्मा सर्व लोकों के ऊपर के लोक में विराजमान है, (तिष्ठन्ति) बैठा है।

चमूषच्छ्येनः शकुनो विभृत्वा गोविन्दुर्द्रप्स आयुधानि बिभ्रत् ।
अपामूर्मिं सचमानः समुद्रं तुरीयं धाम महिषो विवक्ति ॥१९॥

पदार्थः—(**अपामूर्मिम्**) प्रकृति की सूक्ष्म मे सू म शक्तियों के साथ (**सच-मानः**) जो संगत है और (**समुद्रम्**) "सम्यक् द्रवन्ति भूतानि यस्मात् स समुद्रः" जिससे सब भूतों की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय होता है। वह (**तुरीयम्**) चौथा (**धाम**) परमपद परमात्मा है। उसको (**महिषः**) मह्यते इति महिषः महिष इति महन्नामसु पठितम् नि० ३—१३। महापुरुष उक्त तुरीय परमात्मा का (**विवक्ति**) वर्णन करता है। वह परमात्मा (**चमूसत्**) जो प्रत्येक बल में स्थित है (**श्येनः**) सर्वोपरि प्रशंसनीय है और (**शकुनः**) सर्वशक्तिमान् है। (**गोविन्दुः**) यजमानों को तृप्त करके जो (**द्रप्सः**) शीघ्रगति वाला है (**आयुधानि, बिभ्रत्**) अनन्त शक्तियों को धारण करता हुआ इस सम्पूर्ण संसार का उत्पादक है ॥१९॥

❖ विवेचन :- ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 19 का भी आर्य समाज के विद्वानों ने अनुवाद किया है। इसमें भी बहुत सारी गलतियाँ है। पुस्तक विस्तार के कारण केवल अपने मतलब की जानकारी प्राप्त करते हैं।

इस मन्त्र में चौथे धाम का वर्णन है जो आप जी सृष्टि रचना में पढ़ेंगे, उससे पूर्ण जानकारी होगी पढ़ें इसी पुस्तक के पृष्ठ 359 पर।

परमात्मा ने ऊपर के चार लोक अजर-अमर रचे हैं। 1. अनामी लोक जो सबसे ऊपर है। 2. अगम लोक 3. अलख लोक 4. सत्यलोक।

हम पृथ्वी लोक पर हैं, यहाँ से ऊपर के लोकों की गिनती करेंगे तो 1. सत्यलोक 2. अलख लोक 3. अगम लोक तथा 4. अनामी लोक गिना जाता है। उस चौथे धाम में बैठकर परमात्मा ने सर्व ब्रह्माण्डों व लोकों की रचना की। शेष रचना सत्यलोक में बैठकर की थी। आर्य समाज के अनुवादकों ने तुरिया परमात्मा अर्थात् चौथे परमात्मा का वर्णन किया है। यह चौथा धाम है। उसमें मूल पाठ मन्त्र 19 का भावार्थ है कि तत्वदर्शी सन्त चौथे धाम तथा

चौथे परमात्मा का (विवक्ति) भिन्न-भिन्न वर्णन करता है। पाठक जन कृपया पढ़ें सृष्टि रचना इसी पुस्तक के पृष्ठ 359 पर जिससे आप जी को ज्ञान होगा कि लेखक (संत रामपाल दास) ही वह तत्वदर्शी संत है जो तत्वज्ञान से परिचित है।

मर्यो न शुभ्रस्तन्वं मृजानोऽत्यो न सृत्वा सनये धनानाम् ।
वृषेव यूथा परि कोशमर्षन्कनिक्रदच्चम्वोरा विवेश ।।२०।।

पदार्थः—वह परमात्मा (**यूथा, वृषेव**) जिस प्रकार एक संघ को उसका सेनापति प्राप्त होता है, इसी प्रकार (**कोशम्**) इस ब्रह्माण्डरूपी कोश को (**अर्षन्**) प्राप्त होकर (**कनिक्रदत्**) उच्च स्वर से गर्जता हुआ (**चम्वोः**) इस ब्रह्माण्ड रूपी विस्तृत प्रकृति-खण्ड में (**पर्याविवेश**) भली-भांति प्रविष्ट होता है और (**न**) जैसे कि (**मर्यः**) मनुष्य (**शुभ्रस्तन्वं, मृजानः**) शुभ्र शरीर को धारण करता हुआ (**अत्योन**) अत्यन्त गतिशील पदार्थों के समान (**सनये**) प्राप्ति के लिए (**सृत्वा**) गतिशील होता हुआ (**धनानाम्**) धनों के लिए कटिबद्ध होता है; इसी प्रकार प्रकृति-रूपी ऐश्वर्य को धारण करने के लिए परमात्मा सदैव उद्यत है ।।२०।।

❖ **विवेचन :- ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 20 का यथार्थ ज्ञान जानते हैं :-**

इस मन्त्र का अनुवाद महर्षि दयानन्द के चेलों द्वारा किया गया है, इनका दृष्टिकोण यह रहा है कि परमात्मा निराकार है क्योंकि महर्षि दयानन्द जी ने यह बात दृढ़ की है कि परमात्मा निराकार है। इसलिए अनुवादक ने सीधे मन्त्र का अनुवाद घुमा-फिराकर किया है।

जैसे मूल पाठ में लिखा है :-

मर्य न शुभ्रः तन्वा मृजानः अत्यः न सृत्वा सनये धनानाम्।
वृर्षेव यूथा परि कोशम अर्षन् कनिक्रदत् चम्वोः आविवेश।।

अनुवाद :- जैसे (मर्यः न) मनुष्य सुन्दर वस्त्र धारण करता है, ऐसे परमात्मा मनुष्य के समान (शुभ्रः तन्व) सुन्दर शरीर (मृजानः) धारण करके (अत्यः) अत्यन्त गति से चलता हुआ (सनये धनानाम्) भक्ति धन के धनियों अर्थात् पुण्यात्माओं को प्राप्ति के लिए आता है। (यूथा वृषेव) जैसे एक समुदाय को उसका सेनापति प्राप्त होता है, ऐसे वह परमात्मा संत व ऋषि रूप में प्रकट होता है तो उसके बहुत सँख्या में अनुयाई बन जाते हैं और परमात्मा उनका गुरू रूप में मुखिया होता है। वह परमात्मा (परि कोशम्) प्रथम ब्रह्माण्ड में (अर्षन्) प्राप्त होकर अर्थात् आकर (कनिक्रदत्) ऊँचे स्वर में सत्यज्ञान उच्चारण करता हुआ (चम्वोः) पृथ्वी खण्ड में (अविवेश) प्रविष्ट होता है।

भावार्थ :- जैसे पूर्व में वेद मन्त्रों में कहा है कि परमात्मा ऊपर के लोक में रहता है, वहाँ से गति करके अपने रूप को अर्थात् शरीर के तेज को सरल करके पृथ्वी पर आता है। इस ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 20 में

उसी की पुष्टि की है। कहा है कि जैसे मनुष्य वस्त्र धारण करता है, ऐसे अन्य शरीर धारण करके परमात्मा मानव रूप में पृथ्वी पर आता है और (धनानाम्) दृढ़ भक्तों (अच्छी पुण्यात्माओं) को प्राप्त होता है, उनको वाणी उच्चारण करके तत्वज्ञान सुनाता है।

❖ विवेचन :- ये ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 16 से 20 की फोटोकापियाँ हैं, जिनका हिन्दी अनुवाद महर्षि दयानन्द सरस्वती आर्यसमाज प्रवर्तक के दिशा-निर्देश से उनके आर्यसमाजी चेलों ने किया है। यह अनुवाद कुछ-कुछ ठीक है, अधिक गलत है। पहले अधिक ठीक या कुछ-कुछ गलत था जो मेरे द्वारा शुद्ध करके विवेचन में लिख दिया है।

अब अधिक गलत को शुद्ध करके लिखता हूँ।

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 16 में कहा है कि :-

हे परमात्मा! आपका जो गुप्त वास्तविक (चारू) श्रेष्ठ (नाम) नाम है, उसका ज्ञान कराएँ। प्रिय पाठको! जैसे भारत के राजा को प्रधानमन्त्री कहते हैं, यह उनकी पदवी का प्रतीक है। उनका वास्तविक नाम कोई अन्य ही होता है। जैसे पहले प्रधानमन्त्री जी पंडित जवाहर लाल नेहरू जी थे। ''जवाहरलाल'' उनका वास्तविक नाम है। इस मंत्र 16 में कहा है कि हे परमात्मा! आपका जो वास्तविक नाम है वह (सोतृमिः) उपासना करने का (स्व आयुधः) स्वचालित शस्त्र के समान (पूयमानः) अज्ञान रूपी गन्द को नाश करके जो पापनाशक है। आप अपने उस सत्य मन्त्र का हमें ज्ञान कराऐं। (देव सोम) हे अमर परमेश्वर! आपका वह मन्त्र श्वांसों द्वारा नाक आदि (गाः) इन्द्रियों से (वासुम् अभि) श्वांस-उश्वांस से जपने से (सप्तिरिव = सप्तिः इव) विद्युत् जैसी गति से अर्थात् शीघ्रता से (अभिवाजं) भक्ति धन से परिपूर्ण करके (श्रवस्यामी) ऐश्वर्य को तथा मोक्ष को प्राप्त कराईये।

प्रिय पाठकों से निवेदन है कि इस ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 16 के अनुवाद में बहुत-सी गलतियाँ थी जो शुद्ध कर दी हैं। प्रमाण के लिए मूल पाठ मे ''अभिवाजं'' शब्द है इसका अनुवाद नहीं किया गया है। इसके स्थान पर ''अभिगमय'' शब्द का अर्थ जोड़ा है जो मूल पाठ में नहीं है।

❖ विवेचन :- ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 17 के अनुवाद में भी बहुत गलतियाँ हैं जो आर्यसमाजियों द्वारा अनुवादित है। अब शुद्ध करके लिखता हूँः-

जैसा कि पूर्वोक्त ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 86 तथा 82 के मन्त्रों में प्रमाण है कि परमात्मा अपने शाश्वत् स्थान से जो द्यूलोक के तीसरे स्थान पर विराजमान है, वहाँ से चलकर पृथ्वी पर जान-बूझकर किसी खास उद्देश्य से प्रकट होता है। परमात्मा सर्व ब्रह्माण्डों में बसे प्राणियों की परवरिश तीन स्थिति में करते हैं। 1. परमात्मा ऊपर सत्यलोक अर्थात् अविनाशी धाम में सिंहासन (तख्त) पर बैठकर सर्व ब्रह्माण्डों का संचालन करते हैं। 2. जब

चाहें साधु सन्त के रूप में अपने शरीर का तेज सरल करके अच्छी आत्माओं को मिलते हैं। 3. प्रत्येक युग में किसी जलाशय में खिले कमल के फूल पर नवजात शिशु का रूप बनाकर प्रकट होते हैं, वहाँ से निःसन्तान दम्पति अपने घर ले जाते हैं। बचपन से ही वह परमात्मा अपना वास्तविक भक्ति ज्ञान जिसे तत्वज्ञान भी कहते हैं, चौपाइयों, दोहों, साखियों व कविताओं के रूप में सुनाते हैं। जैसे सन् 1398 वि.सं. 1455 में परमात्मा अपने निज स्थान से चलकर भारत वर्ष के काशी शहर के बाहर लहरतारा नामक जलाशय में कमल के फूल पर शिशु रूप धारकर प्रकट हुए थे। वहाँ से नीरू-नीमा जुलाहा दम्पति अपने घर ले गए थे। धीरे-धीरे परमात्मा बड़े हुए। कबीर वाणी बोलकर ज्ञान सुनाया करते थे।

इसका प्रमाण ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 1 मन्त्र 9 में है जो आर्य समाज के आचार्यों द्वारा अनुवादित है। उसमें भी कुछ गलती है, अधिक नहीं।

कृपया पढ़ें यह ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 1 मन्त्र 9 की फोटोकापी :-

अभी३ममघ्न्यां उत श्रीणन्ति धेनवः शिशुम् ।
सोममिन्द्राय पातवे ॥९॥

पदार्थः—(इमं) उस (सोमं) सौम्यस्वभाव वाले श्रद्धालु पुरुष को (शिशुं) कुमारावस्था में ही (अभि) सब प्रकार से (अघ्न्याः) अहिंसनीय (धेनवः) गौवें (श्रीणन्ति) तृप्त करती हैं (इन्द्राय) ऐश्वर्य्य की (पातवे) वृद्धि के लिये । (उत) अथवा उक्त श्रद्धालु पुरुष को अहिंसनीय वाणियें ऐश्वर्य्य की प्राप्ति के लिये संस्कृत करती हैं ॥९॥

❖ विवेचन :- यह फोटो कापी ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 1 मन्त्र 9 की है इसमें स्पष्ट है कि (सोम) अमर परमात्मा जब शिशु रूप में प्रकट होता है तो उसकी परवरिश की लीला कुंवारी गायों (अभि अध्न्याः धेनवः) द्वारा होती है। यही प्रमाण कबीर सागर के अध्याय ''ज्ञान प्रकाश'' में है कि जिस परमेश्वर कबीर जी को नीरू-नीमा अपने घर ले गए। तब शिशु रूपधारी परमात्मा ने न अन्न खाया, न दूध पीया। फिर स्वामी रामानन्द जी के बताने पर एक कुंवारी गाय अर्थात् एक बछिया नीरू लाया, उसने तत्काल दूध दिया। उस कुंवारी गाय के दूध से परमेश्वर की परवरिश की लीला हुई थी। कबीर सागर लगभग 600 (छः सौ) वर्ष पहले का लिखा हुआ है।

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 1 मन्त्र 9 के अनुवाद में कुछ गलती की है। जैसे (अभि अध्न्याः) का अर्थ अहिंसनीय कर दिया जो गलत है। हरियाणा प्रान्त के जिला रोहतक में गाँव धनाना में लेखक का जन्म हुआ जो वर्तमान में जिला सोनीपत में है। इस क्षेत्र में जिस गाय ने गर्भ धारण न किया हो तो कहते हैं कि यह धनाई नहीं है, यह बिना धनाई है। यह अपभ्रंस शब्द है।

एक गाय के लिए ''अध्नि'' शब्द है। बहुवचन के लिए ''अध्न्या'' शब्द है। ''अध्न्या'' का अर्थ है बिना धनाई गौवें तथा अभिध्न्या का अर्थ है पूर्ण रूप से बिना धनायी अर्थात् कुंवारी गायें अर्थात् बछियाँ।

अब ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 17 का शुद्ध अनुवाद करता हूँ :-

केवल हिन्दी :- (शिशुम् जज्ञानम् हर्यन्तम्) परमेश्वर जान-बूझकर तत्वज्ञान बताने के उद्देश्य से शिशु रूप में प्रकट होता है, उनके ज्ञान को सुनकर (मरूतो गणेन) भक्तों का बहुत बड़ा समूह उस परमात्मा का अनुयाई बन जाता है। (मृजन्ति शुम्यन्ति वहिन्)

वह ज्ञान बुद्धिजीवी लोगों को समझ आता है। वे उस परमेश्वर की स्तुति-भक्ति तत्वज्ञान के आधार से करते हैं, वह भक्ति (वहिन्) शीघ्र लाभ देने वाली होती है। वे परमात्मा अपने तत्वज्ञान को (काव्येना) कवित्व से अर्थात् कवियों की तरह दोहों, शब्दों, लोकोक्तियों, चौपाईयों द्वारा (कविर् गीर्भिः) कविर् वाणी द्वारा अर्थात् कबीर वाणी द्वारा (पवित्रम् अतिरेभन्) शुद्ध ज्ञान को ऊँचे स्वर में गर्ज-गर्जकर बोलते हैं। वह (कविः) कवि की तरह आचरण करने वाला कविर्देव (सन्त्) सन्त रूप में प्रकट (सोम) अमर परमात्मा होता है। (ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 17)

विशेष :- इस मन्त्र के मूल पाठ में दो बार ''कविः'' शब्द है, आर्य समाज के अनुवादकर्ताओं ने एक (कविः) का अर्थ ही नहीं किया है।

❖ विवेचन :- ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 18 पर विवेचन करते हैं। इसके अनुवाद में भी बहुत-सी गलतियाँ है। हम संस्कृत भी समझ सकते हैं। विवेचन करता हूँ तथा यथार्थ अनुवाद व भावार्थ स्पष्ट करता हूँ। मन्त्र 17 में कहा कि ऋषि या सन्त रूप में प्रकट होकर परमात्मा अमृतवाणी अपने मुख कमल से बोलता है और उस ज्ञान को समझकर अनेकों अनुयाईयों का समूह बन जाता है। (य) जो वाणी परमात्मा तत्वज्ञान की सुनाता है। वे (ऋषिकृत्) ऋषि रूप में प्रकट परमात्मा कृत (सहंस्रणीथः) हजारों वाणियाँ अर्थात् कबीर वाणियाँ (ऋषिमना) ऋषि स्वभाव वाले भक्तों के लिए (स्वर्षाः) आनन्ददायक होती हैं। (कविनाम पदवीः) कवित्व से दोहों, चौपाईयों में वाणी बोलने के कारण वह परमात्मा कवियों में से एक प्रसिद्ध कवि की पदवी भी प्राप्त करता है। वह (सोम) अमर परमात्मा (सिषासन्) सर्व की पालन की इच्छा करता हुआ प्रथम स्थिति में (महिषः) बड़ी पृथ्वी अर्थात् ऊपर के लोकों में (तृतीयम् धाम) तीसरे धाम अर्थात् सत्यलोक के तीसरे पृष्ठ पर (अनुराजति) तेजोमय शरीर युक्त (स्तुप) गुम्बज में (विराजम्) विराजमान है, वहाँ बैठा है। यही प्रमाण ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 54 मन्त्र 3 में है कि परमात्मा सर्व लोकों के ऊपर के लोक में विराजमान है, (तिष्ठन्ति) बैठा है।

❖ विवेचन :- ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 19 का भी आर्यसमाज के

विद्वानों ने अनुवाद किया है। इसमें भी बहुत सारी गलतियाँ हैं। पुस्तक विस्तार के कारण केवल अपने मतलब की जानकारी प्राप्त करते हैं।

इस मन्त्र में चौथे धाम का वर्णन है। आप जी सृष्टि रचना में पढ़ेंगे, उससे पूर्ण जानकारी होगी। पढ़ें इसी पुस्तक के पृष्ठ 359 पर।

परमात्मा ने ऊपर के चार लोक अजर-अमर रचे हैं। 1. अनामी लोक जो सबसे ऊपर है 2. अगम लोक 3. अलख लोक 4. सत्य लोक।

हम पृथ्वी लोक पर हैं, यहाँ से ऊपर के लोकों की गिनती करेंगे तो 1. सत्यलोक 2. अलख लोक 3. अगम लोक तथा चौथा अनामी लोक उस चौथे धाम में बैठकर परमात्मा ने सर्व ब्रह्माण्डों व लोकों की रचना की। शेष रचना सत्यलोक में बैठकर की थी। आर्यसमाज के अनुवादकों ने तुरिया परमात्मा अर्थात् चौथे परमात्मा का वर्णन किया है। यह चौथा धाम है। उसमें मूल पाठ मन्त्र 19 का भावार्थ है कि तत्वदर्शी सन्त चौथे धाम तथा चौथे परमात्मा का (विवक्ति) भिन्न-भिन्न वर्णन करता है। पाठकजन कृपया पढ़ें सृष्टि रचना इसी पुस्तक के पृष्ठ 359 पर जिससे आप जी को ज्ञान होगा कि लेखक (संत रामपाल दास) ही वह तत्वदर्शी संत है जो तत्वज्ञान से परिचित है।

❖ विवेचन :- ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 20 का यथार्थ जानते हैं :-

इस मन्त्र का अनुवाद महर्षि दयानन्द के चेलों द्वारा किया गया है। इनका दृष्टिकोण यह रहा है कि परमात्मा निराकार है क्योंकि महर्षि दयानन्द जी ने यह बात दृढ़ की है कि परमात्मा निराकार है। इसलिए अनुवादक ने सीधे मन्त्र का अनुवाद घुमा-फिराकर किया है।

जैसे मंत्र 20 के मूल पाठ में लिखा है :-

मर्य न शुभ्रः तन्वा मृजानः अत्यः न सृत्वा सनये धनानाम्।
वृर्षेव यूथा परि कोशम अर्षन् कनिक्रदत् चम्वोः आविवेश।।

अनुवाद :- (मर्यः) मनुष्य (न) जैसे सुन्दर वस्त्र धारण करता है, ऐसे परमात्मा (शुभ्रः तन्व) सुन्दर शरीर (मृजानः) धारण करके (अत्यः) अत्यन्त गति से (सृत्वा) चलता हुआ (धनानाम्) भक्ति धन के धनियों अर्थात् पुण्यात्माओं को (सनये) प्राप्ति के लिए आता है (यूथा वृषेव) जैसे एक समुदाय को उसका सेनापति प्राप्त होता है। ऐसे वह परमात्मा संत व ऋषि रूप में प्रकट होता है तो उसके बहुत सँख्या में अनुयाई बन जाते हैं और परमात्मा उनका गुरू रूप में मुखिया होता है। वह परमात्मा (परि कोशम्) प्रथम ब्रह्माण्ड में (अर्षन्) प्राप्त होकर अर्थात् आकर (कनिक्रदत्) ऊँचे स्वर में सत्यज्ञान उच्चारण करता हुआ (चम्वौ) पृथ्वी खण्ड में (अविवेश) प्रविष्ट होता है।

भावार्थ :- जैसे पूर्व में वेद मन्त्रों में कहा है कि परमात्मा ऊपर के लोक में रहता है, वहाँ से गति करके पृथ्वी पर आता है, अपने रूप को अर्थात् शरीर के तेज को सरल करके आता है। इस ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र

20 में उसी की पुष्टि की है। कहा है कि परमात्मा ऐसे अन्य शरीर धारण करके पृथ्वी पर आता है। जैसे मनुष्य वस्त्र धारण करता है और (धनानाम्) दृढ़ भक्तों (अच्छी पुण्यात्माओं) को प्राप्त होता है, उनको वाणी उच्चारण करके तत्वज्ञान सुनाता है।

(प्रमाण ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सुक्त 95 मन्त्र 2)

हरिः सृजानः पथ्यांमृतस्येयर्ति वाचमरितेव नावम् ।
देवो देवानां गुह्यानि नामाविष्कृणोति बर्हिषि प्रवाचे ॥२॥

पदार्थः—(हरिः) वह पूर्वोक्त परमात्मा (सृजानः) साक्षात्कार को प्राप्त हुआ (ऋतस्य पथ्यां) वाक् द्वारा मुक्ति मार्ग की (इयर्ति) प्रेरणा करता है। (अरितेव नावम्) जैसा कि नौका के पार लगाने के समय में नाविक प्रेरणा करता है और (देवानां देवः) सब देवों का देव (गुह्यानि) गुप्त (नामाविष्कृणोति) संज्ञाओं को प्रकट करता है (बर्हिषि प्रवाचे) वाणीरूप यज्ञ के लिए ॥२॥

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 95 मन्त्र 2 का अनुवाद महर्षि दयानन्द के चेलों ने किया है जो बहुत ठीक किया है।

इसका भावार्थ है कि पूर्वोक्त परमात्मा अर्थात् जिस परमात्मा के विषय में पहले वाले मन्त्रों में ऊपर कहा गया है, वह (सृजानः) अपना शरीर धारण करके (ऋतस्य पथ्यां) सत्यभक्ति का मार्ग अर्थात् यथार्थ आध्यात्मिक ज्ञान अपनी अमृतमयी वाक् अर्थात् वाणी द्वारा मुक्ति मार्ग की प्रेरणा करता है।

वह मन्त्र ऐसा है जैसे (अरितेव नावम्) नाविक नौका में बैठाकर पार कर देता है, ऐसे ही परमात्मा सत्यभक्ति मार्ग रूपी नौका के द्वारा साधक को संसार रूपी दरिया के पार करता है। वह (देवानाम् देवः) सब देवों का देव अर्थात् सब प्रभुओं का प्रभु परमेश्वर (बर्हिषि प्रवाचे) वाणी रूपी ज्ञान यज्ञ के लिए (गुह्यानि) गुप्त (नामा आविष्कृणोति) नामों का अविष्कार करता है अर्थात् जैसे गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में ''ॐ तत् सत्'' में तत् तथा सत् ये गुप्त मन्त्र हैं जो उसी परमेश्वर ने मुझे (संत रामपाल दास) को बताऐ हैं। उनसे ही पूर्ण मोक्ष सम्भव है।

सूक्ष्म वेद में परमेश्वर ने कहा है कि :-

''सोहं'' शब्द हम जग में लाए, सारशब्द हम गुप्त छिपाए।

भावार्थ :- परमेश्वर ने स्वयं ''सोहं'' शब्द भक्ति के लिए बताया है। यह सोहं मन्त्र किसी भी प्राचीन ग्रन्थ (वेद, गीता, कुर्आन, पुराण तथा बाईबल) में नहीं है। फिर सूक्ष्म वेद में कहा है कि :-

सोहं ऊपर और है, सत्य सुकृत एक नाम।
सब हंसो का जहाँ बास है, बस्ती है बिन ठाम।।

भावार्थ :- ''सोहं'' नाम तो परमात्मा ने प्रकट कर दिया, अविष्कार कर

दिया परन्तु सार शब्द को गुप्त रखा था। अब मुझे (लेखक संत रामपाल को) बताया है जो साधकों को दीक्षा के समय बताया जाता है। इसका गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में कहे ''ॐ तत् सत्'' से सम्बन्ध है।

(प्रमाण ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सुक्त 94 मन्त्र 1)

अधि यदस्मिन्वाजिनीव शुभः स्पर्धन्ते धियः सूर्ये न विशः ।
अपो वृणानः पवते कवीयन्व्रजं न पशुवर्धनाय मन्म ।।१।।

पदार्थः—(सूर्य्ये) सूर्य के विषय में (न) जैसे (विशः) रश्मियां प्रकाशित करती हैं। उसी प्रकार (धियः) मनुष्यों की बुद्धियां (स्पर्धन्ते) अपनी-अपनी उत्कट शक्ति से विषय करती हैं। (अस्मिन् अधि) जिस परमात्मा में (वाजिनीव) सर्वोपरि बलों के समान (शुभः) शुभ बल है वह परमात्मा (अपोवृणानः) कर्मों का अध्यक्ष होता हुआ (पवते) सबको पवित्र करता हैं। (कवीयन्) कवियों की तरह आचरण करता हुआ (पशुवर्धनाय) सर्वद्रष्टृत्व पद के लिए (व्रजं, न) इन्द्रियों के अधिकरण मन के समान 'व्रजन्ति इन्द्रियाणि यस्मिन् तद् व्रजम्' (मन्म) जो अधिकरणरूप है वही श्रेय का धाम है ।।१।।

❖ विवेचन :- ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 94 मन्त्र 1 का अनुवाद भी आर्यसमाज के विद्वानों द्वारा किया गया है। पुस्तक विस्तार को ध्यान में रखते हुए उन्हीं के अनुवाद से अपना मत सिद्ध करते हैं। जैसे पूर्व में लिखे वेदमन्त्रों में बताया गया है कि परमात्मा अपने मुख कमल से वाणी उच्चारण करके तत्वज्ञान बोलता है, लोकोक्तियों के माध्यम से, कवित्व से दोहों, शब्दों, साखियों, चौपाईयों के द्वारा वाणी बोलने से प्रसिद्ध कवियों में से भी एक कवि की उपाधि प्राप्त करता है। उसका नाम कविर्देव अर्थात् कबीर साहेब है।

इस ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 94 मन्त्र 1 में भी यही स्पष्ट है कि जो सर्वशक्तिमान परमेश्वर है, वह (कवियन् व्रजम् न) कवियों की तरह आचरण करता हुआ पृथ्वी पर विचरण करता है।

(प्रमाण ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सुक्त 20 मन्त्र 1)

प्र कविर्देववीतयेऽव्यो वारेभिरर्षति ।
साह्वान्विश्वा अभि स्पृधः ।।१।।

पदार्थः—वह परमात्मा (कविः) मेधावी है और (अव्यः) सबका रक्षक है (देववीतये) विद्वानों की तृप्ति के लिये (अर्षति) ज्ञान देता है (साह्वान्) सहनशील है (विश्वाः, स्पृधः) सम्पूर्ण दुष्टों को संग्रामों में (अभि) तिरस्कृत करता है ।।१।।

विवेचन :- ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 20 मन्त्र 1 का अनुवाद भी आर्यसमाज के विद्वानों ने किया है। इसका अनुवाद ठीक कम, गलत अधिक है। इसमें मूल पाठ में लिखा है :-

'प्र कविर्देव वीतये अव्यः वारेभिः अर्षति साह्वान् बिश्वाः अभि स्पृस्धः

सरलार्थ :- (प्र) वेद ज्ञान दाता से जो दूसरा (कविर्देव) कविर्देव कबीर परमेश्वर है, वह विद्वानों अर्थात् जिज्ञासुओं को, (वीतये) ज्ञान धन की तृप्ति के लिए (वारेभिः) श्रेष्ठ आत्माओं को (अर्षति) ज्ञान देता है। वह (अव्यः) अविनाशी है, रक्षक है, (साह्वान्) सहनशील (विश्वाः) तत्वज्ञान हीन सर्व दुष्टों को (स्पृधः) अध्यात्म ज्ञान की कृपा स्पर्धा अर्थात् ज्ञान गोष्ठी रूपी वाक् युद्ध में (अभि) पूर्ण रूप से तिरस्कृत करता है, उनको फिट्टे मुँह कर देता है।

विशेष :- (क) इस मन्त्र के अनुवाद में आप फोटोकापी में देखेंगे तो पता चलेगा कि कई शब्दों के अर्थ आर्य विद्वानों ने छोड़ रखे हैं जैसे = ''प्र'' ''वारेभिः'' जिस कारण से वेदों का यथार्थ भाव सामने नहीं आ सका।

(ख) मेरे अनुवाद से स्पष्ट है कि वह परमात्मा अच्छी आत्माओं (दृढ़ भक्तों) को ज्ञान देता है, उस परमात्मा का नाम भी लिखा है :- ''कविर्देव''। हम कबीर परमेश्वर कहते हैं।

(प्रमाण ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सुक्त 54 मन्त्र 3)

अयं विश्वानि तिष्ठति पुनानो भुवनोपरि ।
सोमो देवो न सूर्यः ॥३॥

पदार्थः—(सूर्यः, न) सूर्य के समान जगत्प्रेरक (अयम्) यह परमात्मा (सोमः, देवः) सौम्य स्वभाव वाला और जगत्प्रकाशक है और (विश्वानि, पुनानः) सब लोकों को पवित्र करता हुआ (भुवनोपरि, तिष्ठति) सम्पूर्ण ब्रह्माण्डों के ऊर्ध्व भाग में भी वर्तमान है ॥३॥

विवेचन :- ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 54 मन्त्र 3 की फोटोकापी में आप देखें, इसका अनुवाद आर्यसमाज के विद्वानों ने किया है। उनके अनुवाद में भी स्पष्ट है कि वह परमात्मा (भूवनोपरि) सम्पूर्ण ब्रह्माण्डों के ऊर्ध्व अर्थात् ऊपर (तिष्ठति) विराजमान है, ऊपर बैठा है:-

इसका यथार्थ अनुवाद इस प्रकार है :-

(अयं) यह (सोमः देव) अमर परमेश्वर (सूर्यः) सूर्य के (न) समान (विश्वानि) सर्व को (पुनानः) पवित्र करता हुआ (भूवनोपरि) सर्व ब्रह्माण्डों के ऊर्ध्व अर्थात् ऊपर (तिष्ठति) बैठा है।

भावार्थ :- जैसे सूर्य ऊपर है और अपना प्रकाश तथा उष्णता से सर्व को लाभ दे रहा है। इसी प्रकार यह अमर परमेश्वर जिसका ऊपर के मन्त्रों में वर्णन किया है। सर्व ब्रह्माण्डों के ऊपर बैठकर अपनी निराकार शक्ति से सर्व प्राणियों को लाभ दे रहा है तथा सर्व ब्रह्माण्डों का संचालन कर रहा है।

तर्क :- महर्षि दयानन्द का अर्थात् आर्यसमाजियों का मत है कि परमात्मा किसी एक स्थान पर किसी लोक विशेष में नहीं रहता।

प्रमाण :- सत्यार्थ प्रकाश समुल्लास (Chapter) नं. 7 पृष्ठ 148 पर (आर्य साहित्य प्रचार ट्रस्ट 427 गली मन्दिर वाली नया बांस दिल्ली-78वां संस्करण)

किसी ने प्रश्न किया :- ईश्वर व्यापक है वा किसी देश विशेष में रहता है?

उत्तर (महर्षि दयानन्द जी का) :- व्यापक है क्योंकि जो एक देश में रहता तो सर्व अन्तर्यामी, सर्वज्ञ, सर्वनियन्ता, सब का सृष्टा, सब का धर्ता और प्रलयकर्ता नहीं हो सकता। अप्राप्त देश में कर्ता की क्रिया का होना असम्भव है। (सत्यार्थ प्रकाश से लेख समाप्त)

महर्षि दयानन्द जी नहीं मानते थे कि परमात्मा किसी देश अर्थात् स्थान विशेष पर रहता है। महर्षि दयानन्द जी वेद ज्ञान को सत्य ज्ञान मानते थे।

आप जी ने अनेकों वेदमन्त्रों में अपनी आँखों पढ़ा कि परमेश्वर ऊपर एक स्थान पर रहता है। वहाँ से गति करके यहाँ भी प्रकट होता है। महर्षि दयानन्द तथा आर्यसमाजी परमात्मा को निराकार मानते हैं।

प्रमाण :- सत्यार्थ प्रकाश के समुल्लास नं. 9 पृष्ठ 176, समुल्लास 7 पृष्ठ 149 समुल्लास 11 पृष्ठ 251 पर कहा है कि परमात्मा निराकार है।

प्रिय पाठकों ने अनेकों वेदमंत्रों में पढ़ा कि परमात्मा साकार है, वह मनुष्य जैसा है। ऊपर के लोक में रहता है, वहाँ से गति करके चलकर आता है, पृथ्वी पर प्रकट होता है। अच्छी आत्माओं को जो दृढ़ भक्त होते हैं, उनको मिलता है। उनको तत्वज्ञान अपने मुख कमल से बोलकर सुनाता है, कवियों की तरह आचरण करता है। पृथ्वी पर विचरण करके परमात्मा अपना अध्यात्म ज्ञान ऊँचे स्वर में उच्चारण करके सुनाता है।

गीता अध्याय 4 श्लोक 32 में भी यही प्रमाण है।

प्रिय पाठको! आप स्वंय निर्णय करें किसको कितना अध्यात्म ज्ञान था। विशेष आश्चर्य यह है कि वेद मन्त्रों का अनुवाद भी महर्षि दयानन्द जी तथा उनके चेलों आर्यसमाजियों ने किया हुआ है। जिसमें उनके मत का विरोध है।

➢ निवेदन :- वेद मन्त्रों की फोटोकापियाँ लगाने का उद्देश्य यह है कि यदि मैं (लेखक) अनुवाद करके पुस्तक में लगाता तो अन्य व्यक्ति यह कह देते कि संत रामपाल को संस्कृत भाषा का ज्ञान नहीं है। इसलिए इनके अनुवाद पर विश्वास नहीं किया जा सकता। अब यह शंका उत्पन्न नहीं हो सकती। अब तो यह दृढ़ता आएगी कि संत रामपाल दास ने जो वेद मन्त्रों का अनुवाद किया है, वह यथार्थ है।

''दसवां अध्याय''

<u>प्रत्यक्ष दृष्टा संतों ने बताया कबीर काशी वाला (धाणक) जुलाहा परम अक्षर ब्रह्म यानि सत्यपुरूष हैं</u> :-

प्रमाण :-

''कबीर परमेश्वर सृजनकर्ता है, पेश हैं छः गवाह''

❖ कलयुग में परमात्मा अन्य निम्न अच्छी आत्माओं (दृढ़ भक्तों) को मिले :-

प्रश्न 51 :- इस बात का कहाँ प्रमाण है कि कबीर जी जुलाहा (काशी-भारत वाले) ही समर्थ परमेश्वर है जिसने सब रचना की है।

उत्तर :- पहले यह सिद्ध करता हूँ कि काशी (बनारस) शहर में जो कबीर नामक जुलाहा रहा करता था, वह सब सृष्टि का रचने वाला परम अक्षर ब्रह्म है। इसके लिए अनेकों चश्मदीद गवाह (Eye Witness) हैं जिन्होंने उस समर्थ परमेश्वर को ऊपर (तख्त) सिंहासन पर बैठे देखा तथा बताया कि जो कबीर काशी शहर (भारत देश) में जुलाहे की भूमिका किया करता, वही समर्थ परमेश्वर है।

➢ गवाह नं. 1 :- संत गरीबदास जी गाँव-छुड़ानी, जिला-झज्जर, प्रांत - हरियाणा (देश-भारत) :- संत गरीबदास जी दस वर्ष के बालक अपने खेतों में गाँव के अन्य ग्वालों के साथ प्रतिदिन की तरह गाय चराने गए हुए थे। विक्रमी संवत् 1774 (सन् 1717) फाल्गुन महीने की शुदी (चांदनी) द्वादशी को दिन के लगभग दस बजे ग्वाले तथा बालक गरीबदास जी एक जांडी के वृक्ष के नीचे छाया में बैठकर भोजन खा रहे थे।

परमेश्वर जी जिंदा बाबा (अल-खिज्र) के वेश में ऊपर आसमान वाले तख्त (सिंहासन) से चलकर कुछ दूरी पर धरती के ऊपर उतरे तथा ग्वालों के पास गए। वह जांडी का पेड़ गाँव-कबलाना से गाँव-छुड़ानी को जाने वाले कच्चे रास्ते पर था तथा कबलाना की सीमा के सटे संत गरीबदास जी के खेत में था। {संत गरीबदास के पिता जी के पास गाँव में एक हजार तीन सौ पचहत्तर (1375) एकड़ जमीन थी। उसी जमीन पर चरागाह बना रखी थी जिसमें गाँव छुड़ानी के अन्य निर्धन व्यक्ति भी अपनी गायों को चराने के लिए ले जाया करते थे।} बाबा जिंदा यानि साधु को देखकर बड़ी आयु के ग्वालों (पालियों) में से एक ने कहा कि बाबा जी भोजन खाओ।

साधु ने कहा, ''भोजन तो मैं अपने डेरे से खाकर आया हूँ।'' कई ग्वाले एक साथ बोले, ''यदि भोजन नहीं खाते तो दूध पी लो।'' परमेश्वर ने कहा कि दूध पिला दो, परंतु दूध उसका पिलाओ जिसको कभी बच्चा उत्पन्न न हुआ हो यानि कंवारी गाय का। पालियों ने उसे मजाक समझा।

बालक गरीबदास जी उठे तथा एक अपनी प्रिय बछिया को लाए और बोले, हे बाबा जी! यह कंवारी गाय दूध कैसे दे सकती है? तब बाबा जी ने कहा कि यह दूध देगी, तुम स्वच्छ बर्तन लेकर इसके थनों के नीचे रखो। संत गरीबदास जी ने एक मिट्टी का बर्तन (छोटा घड़ा 3-4 किलोग्राम की क्षमता का) लिया और उसे हाथों से पकड़कर बछिया के थनों के नीचे करके बैठ गया। बाबा जिंदा (अल-खिज्र) ने गाय की बछड़ी की पीठ के ऊपर हाथ से थपकी मारी। उसी समय थन लंबे व कुछ मोटे हो गए तथा दूध निकलने लगा। जब वह तीन-चार किलोग्राम का बर्तन भर गया तो थनों से दूध आना बंद हो गया। बालक गरीबदास जी ने वह दूध से भरा बर्तन बाबा जी को दे दिया तथा कहा कि यह तो आपकी दया से मिला है, पी लो। बाबा जिंदा ने उस बर्तन को मुख लगाकर कुछ दूध पीया। शेष उन पालियों की ओर किया कि पी लो, यह प्रसाद है। अन्य ग्वाले उठकर चल दिए। कहने लगे कि यह दूध जादू-जंत्र करके कंवारी बछड़ी से निकाला है। हमारे को कोई भूत-प्रेत की बाधा हो जाएगी। यह कोई सेवड़ा (भूत-प्रेत निकालने वाला) लगता है। कंवारी गाय का दूध पाप का दूध है। यह बाबा पता नहीं किस छोटी जाति का है। इसका झूठा दूध हम नहीं पीएँगे।

बालक गरीबदास जी ने बाबा से बर्तन लिया और पालियों के देखते-देखते उसमें से कुछ दूध पीया। वे बड़ी आयु के ग्वाले बालक को दूध न पीने के लिए कहते रहे। बालक नहीं माना। सब दूर चले गए। बाबा जिंदा तथा बालक गरीबदास जी रह गए। तब कुछ ज्ञान सुनाया। बालक ने सतलोक और समर्थ परमात्मा (जो ब्रह्मा जी, विष्णु जी तथा शिव जी से भी शक्तिशाली जो बाबा ने बताया था) आँखों देखने की इच्छा की। जिंदा बाबा बालक गरीबदास के जीव को शरीर से निकालकर आसमान में ले गया। ब्रह्मा जी, विष्णु जी तथा शिव जी के लोक दिखाए। स्वर्ग तथा नरक दिखाए। ब्रह्मलोक काल ब्रह्म का दिखाया। फिर और ऊपर अपने अमरलोक में ले गए। जो बाबा जिंदा बालक के साथ गया था, वह ऊपर बने (तख्त) सिंहासन के ऊपर बैठ गया। उस समय परमात्मा रूप बन गए। परमात्मा के एक रोम (शरीर के बाल) का प्रकाश करोड़ सूर्यों के प्रकाश से भी अधिक था। अमरलोक प्रकाशित था। बालक गरीबदास जी का भी अन्य शरीर बन गया जिसका प्रकाश सोलह सूर्यों के समान था। अमरलोक के सब भक्त/भक्तमति (हँस/हँसनी) अपने परमेश्वर को दंडवत् करने लगे। जय हो कबीर सतपुरूष की बुलाने लगे। सबने कहा कि ये अनंत करोड़ ब्रह्मंड का सृजनहार समर्थ परमेश्वर है। इसका नाम कबीर है। फिर परमात्मा ने सब ज्ञान अपने नबी गरीबदास जी की आत्मा में डाल दिया। सारा सतलोक तथा नीचे के सब लोक दिखाकर बालक की आत्मा को शरीर में प्रवेश करा दिया। उस समय बालक गरीबदास

जी के शरीर को अंतिम संस्कार के लिए चिता (लकड़ियों के ढ़ेर) पर रखा था। अग्नि लगाने ही वाले थे, उसी समय गरीबदास जी उठ लिए। गाँव में खुशी की लहर दौड़ गई। संत गरीबदास जी को उसी जिंदा बाबा वेशधारी परमेश्वर जी ने दीक्षा दी। संत गरीबदास जी ने आँखों देखा तथा परमेश्वर के मुख कमल से सुना सम्पूर्ण अध्यात्म ज्ञान दोहों, चौपाईयों, शब्दों के रूप में बोला जो एक दादू जी के पंथ से दीक्षित गोपाल दास नाम के महात्मा जी ने लिखा। लेखन कार्य में लगभग छः महीने लगे।

संत गरीबदास जी ने बताया :-

गरीब, हम सुल्तानी नानक तारे, दादू कूं उपदेश दिया।
जाति जुलाहा भेद ना पाया, काशी मांही कबीर हुआ।।

अर्थात् संत गरीबदास जी ने बताया है कि हम सब (मैं गरीबदास, सुल्तान इब्राहिम इब्न अधम, सिख धर्म प्रवर्तक नानक जी तथा संत दादू जी) को उस कबीर सतगुरू परमेश्वर ने पार किया जो काशी शहर में जुलाहे जाति में हुआ है। फिर कहा है कि :-

गरीब, अनंत कोटि ब्रह्मंड का, एक रति नहीं भार।
सतगुरू पुरूष कबीर हैं, कुल के सृजनहार।।

अर्थात् सर्व ब्रह्मंडों के उत्पत्तिकर्ता यानि सारी कायनात के सृजनकर्ता मेरे सतगुरू तथा परमेश्वर कबीर जी हैं। उन्होंने सब लोकों, तारागण तथा सब नक्षत्रों (सूर्य, चाँद, ग्रहों) को बनाकर अपनी शक्ति से रोका हुआ है जिसे विज्ञान की भाषा में गुरूत्वाकर्षण शक्ति कहते हैं। उस सृजनहार कबीर के ऊपर इस सारी रचना (अनंत करोड़ ब्रह्मंडों) का कोई भार नहीं है। जैसे वैज्ञानिक ने वायुयान (Aeroplane) बनाकर उड़ा लिया। स्वयं भी उसमें सवार हो गया। जिस प्रकार उस वायुयान का वैज्ञानिक के ऊपर कोई भार नहीं है, उल्टा उसके ऊपर सवार है। इसी प्रकार कबीर कादिर अल्लाह सब लोकों की रचना करके उनके ऊपर सवार है तथा सारे जीव सवार कर रखे हैं। इससे सिद्ध हुआ कि अल-खिज्र ही अल कबीर है।

➢ गवाह नं. 2 (संत दादू दास जी) :- संत दादू दास जी ग्यारह वर्ष के बालक थे। तब गाँव के बाहर जंगल में दादू जी को अल्लाह कबीर एक जिंदा बाबा के वेश में मिला। उनको भी सतलोक लेकर गए। आत्मा को निकालकर ऊपर अपने सतलोक में ले गए। दादू जी तीन दिन-रात अचेत रहे। ऊपर अपना तख्त (सिंहासन) दिखाया। अपना परिचय करवाया कि मैं पूर्ण ब्रह्म (परमेश्वर) हूँ। सारी सृष्टि मैंने रची है। सब ब्रह्मंडों की सैर करवाकर तीसरे दिन आत्मा शरीर में प्रवेश कर दी। संत दादू दास जी सचेत हो गए। तब लोगों ने पूछा कि आपको क्या हो गया था? दादू जी ने बताया कि मेरे को एक बाबा के वेश में अल्लाह कबीर मिले थे और मुझे दीक्षा दी।

ऊपर आसमानों पर लेकर गए थे। दादू जी के साथ उस समय कुछ अन्य हमउम्र बच्चे भी थे। उन्होंने भी बताया था कि एक बाबा ने जंत्र-मंत्र का जल बनाकर स्वयं पीया तथा पान के पत्ते को कटोरे रूप में बनाकर उसमें अपना झूठा पानी दादू को पिलाया था। फिर बाबा दिखाई नहीं दिया। दादू बालक बेहोश हो गया।

संत गरीबदास जी ने अपनी वाणी में परमेश्वर कबीर जी से प्राप्त ज्ञान को इस प्रकार बताया है कि :-

गरीब, दादू कूँ सतगुरू मिले, देई पान का पीक।
बूढ़ा बाबा जिसे कहें, यह दादू की नहीं सीख।।

अर्थात् संत दादू जी को सतगुरू रूप में कबीर अल्लाह मिले थे जो एक जिंदा बाबा के वेश में थे। उन्होंने दादू जी को पान के पत्ते के ऊपर अपने मुख से निकाला जल डालकर दीक्षा के समय पिलाया था।

जो व्यक्ति यह कहते हैं कि दादू को वृद्ध बाबा मिला था जो जंत्र-तंत्र विद्या को जानने वाला था, यह दादू ने नहीं बताया। दादू जी ने उसके विषय में जो बताया है, वह इस प्रकार है जो दादू जी के द्वारा बोली वाणी से बने दादू ग्रंथ में लिखा है। वाणी :-

जिन मोकूं निज नाम दिया, सोई सतगुरू हमार।
दादू दूसरा कोई नहीं, कबीर सिरजनहार।।
दादू नाम कबीर का, सुनकर कांपे काल।
नाम भरोसै जो चले, होवे ना बांका बाल।।
केहरी नाम कबीर है, विषम काल गजराज।
दादू भजन प्रताप से, भागे सुनत आवाज।।

अर्थात् दादू जी ने कहा है कि मेरे को जिसने (निजनाम) यथार्थ भक्ति का मंत्र दिया, वह मेरा सतगुरू है। उसका नाम कबीर है। यही कबीर सारी कायनात (सृष्टि) का (सृजनहार) उत्पत्तिकर्ता है।

❖ संत दादू जी ने कहा है कि ''कबीर'' नाम सुनते ही ज्योति निरंजन (काल) कांपने लग जाता है। कबीर नाम इतना शक्तिशाली है। जो भक्त कबीर जी के बताए नाम पर पूर्ण विश्वास करके जीवन यात्रा करता है तो काल ब्रह्म उसका कुछ भी बिगाड़ नहीं कर सकता।

❖ संत दादू जी ने कबीर अल्लाह की समर्थता एक उदाहरण के माध्यम से बताई है कि काल भी बहुत ताकतवर है, परंतु कबीर अल्लाह के सामने वह भी कमजोर पड़ जाता है। काल (गजराज) हाथियों के राजा के समान बलवान है। कबीर जी का भक्ति करने को दिया नाम भी बहुत शक्तिशाली है। वह केहरी यानि बब्बर शेर (Biggest Lion) के समान ताकतवर है। उस नाम का जाप (भजन) करने से उस नाम रूपी केहरी की शक्ति के आगे

काल टिक नहीं पाता यानि नाम की सूक्ष्म (गाज) दहाड़ सुनकर काल रूप गजराज भाग जाता है। संत दादू दास जी ने स्पष्ट कर दिया है कि कबीर ही सारी सृष्टि (कायनात) को उत्पन्न करने वाला परमेश्वर है।

➢ गवाह नं. 3 {संत धर्मदास जी बांधवगढ़ (मध्य प्रदेश, भारत) वाले}:- धर्मदास जी का हिन्दू धर्म में जन्म होने के कारण हिन्दू धर्मगुरूओं द्वारा बताए अधूरे ज्ञान के आधार से साधना किया करते थे। उसी को करते हुए तीर्थ भ्रमण करते हुए मथुरा (श्री कृष्ण की नगरी) में गए हुए थे।

पत्थर व पीतल की देवी-देवताओं (श्री विष्णु, श्री शंकर आदि) की मूर्तियों को थैले में डालकर साथ लिए हुए था। सुबह तीर्थ में (जिस तालाब में श्री कृष्ण स्नान किया करते थे, उसमें) स्नान करके मूर्तियों की पूजा करने लगा।

उस समय कबीर अल्लाह भारत देश के काशी शहर में जुलाहे की भूमिका करने संसार में प्रकट थे। धर्मदास जी ने मूर्तियों की उपासना के पश्चात् श्रीमद्भगवत गीता का पाठ किया। खुदा कबीर धर्मदास जी की सब क्रियाओं को ध्यान से देख व सुन रहा था। धर्मदास जी अपनी दैनिक भक्ति की क्रियाओं से फारिक हुआ। तब परमेश्वर कबीर जी ने उससे ज्ञान चर्चा की। ज्ञान चर्चा का दौर कई दिनों तक चला।

धर्मदास जी की आत्मा को अल्लाह कबीर जी अपने सतलोक में बने तख्त के पास लेकर गए, अपना सतलोक दिखाया। ऊपर के सब लोक दिखाए। पृथ्वी पर धर्मदास जी तीन दिन तक बेहोश रहे। सम्पूर्ण अध्यात्म ज्ञान समझाकर पुनः शरीर में प्रवेश कर दिया। उसके पश्चात् संत धर्मदास जी ने अपनी पहले वाली इबादत (भक्ति) त्याग दी तथा अपने नबी स्वयं बनकर आए अल्लाह कबीर द्वारा बताई सच्ची इबादत की और पूर्ण मोक्ष प्राप्त किया।

धर्मदास जी ने अल्लाह कबीर की महिमा में अनेकों वाणी बोली :-

आज मोहे दर्शन दियो, जी कबीर।।
अमरलोक से चलकर आए, काटन जम की जंजीर।
हिन्दू के तुम देव कहाए, मुसलमान के पीर।।
दोनों दीन का झगड़ा छिड़ गया, टोहा ना पाया शरीर।।
धर्मदास की अर्ज गुंसाई, खेवा लंघाइयो परले तीर।।

अर्थात् धर्मदास जी ने सतलोक देखने के बाद माना कि काशी वाला जुलाहा कबीर सारी कायनात को उत्पन्न करने वाला कादिर अल्लाह है। उनकी महिमा विस्तार के साथ बताई जो आँखों देखी थी।

➢ गवाह नं. 4 (संत मलूक दास जी) :- संत मलूक दास जी को भी कबीर जी सतलोक लेकर गए। सब व्यवस्था दिखाकर वापिस शरीर में छोड़ा था। पहले मलूक दास जी श्री कृष्ण तथा श्री रामचन्द्र (श्री विष्णु जी) के परम

भक्त थे। उसके पश्चात् पहले वाली पूजा त्यागकर कबीर जी द्वारा बताई भक्ति की। मोक्ष प्राप्त किया। संत मलूक दास जी ने कहा :-

जपो रे मन साहेब नाम कबीर, जपो रे मन परमेश्वर नाम कबीर।।
एक समय गुरू बंसी बजाई, कालंद्री के तीर।
सुर नर मुनिजन थकत भये, रूक गया जमना नीर।
अमृत भोजन म्हारे सतगुरू जीमें, शब्द दूध की खीर।
दास मलूक सलूक कहत है, खोजो खसम कबीर।।

अर्थात् संत मलूक दास जी ने स्पष्ट किया है कि परमात्मा कबीर जी का नाम जपा करो। उस (खसम) सर्व के मालिक कबीर जी की खोज करो, उसे पहचानो। सत्य साधना करके सतलोक में कबीर खुदा के पास जाओ। जैसे श्री कृष्ण के विषय में बताया जाता है कि वे बांसुरी मधुर बजाते थे। उसको सुनकर गोपियाँ व गायें खींची चली आती थी।

मलूक दास ने बताया है कि एक समय मेरे सतगुरू कबीर जी ने (कालंद्री) जमना दरिया के किनारे बांसुरी बजाई थी जिसको सुनकर स्वर्ग लोक के देवता, ऋषिजन तथा आस-पास के गाँव के व्यक्ति खींचे चले आए थे। और क्या बताऊँ! जमना दरिया का जल भी रूक गया था। मेरे सतगुरू शब्द की खीर खाते हैं यानि अमृत भोजन के साथ-साथ अमर आनंद भी भोगते हैं। संत मलूक दास जी ने आँखों देखा बताया कि कबीर पूर्ण ब्रह्म (कादिर अल्लाह) है।

➢ गवाह नं. 5 :- संत नानक देव जी को सुल्तानपुर शहर के पास बह रही बेई नदी पर मिले जहाँ गुरूद्वारा ''सच्चखण्ड साहेब'' यादगार रूप में बना है :-

'' श्री नानक देव जी का संक्षिप्त यथार्थ परिचय''

आदरणीय श्री नानक जी प्रभु कबीर (धाणक) जुलाहा के साक्षी :- श्री नानक देव का जन्म विक्रमी संवत् 1526 (सन् 1469) कार्तिक शुक्ल पूर्णिमा को हिन्दू परिवार में श्री कालूराम मेहत्ता (खत्री) के घर माता श्रीमती तृप्ता देवी की पवित्र कोख (गर्भ) से पश्चिमी पाकिस्तान के जिला लाहौर के तलवंडी नामक गाँव में हुआ। इस स्थान को अब ''ननकाना साहब'' कहते हैं।

इन्होंने फारसी, पंजाबी, संस्कृत भाषा पढ़ी हुई थी। श्रीमद् भगवत गीता जी को श्री बृजलाल पांडे से पढ़ा करते थे। श्री नानक देव जी के श्री चन्द तथा लखमी चन्द दो लड़के थे।

श्री नानक जी चौदह वर्ष की आयु में अपनी बहन नानकी की ससुराल शहर सुल्तानपुर लोधी में चले गए थे। अपने बहनोई श्री जयराम जी की कृपा से सुल्तानपुर के नवाब के यहाँ मोदी खाने की नौकरी किया करते थे। प्रभु में असीम प्रेम था क्योंकि यह पुण्यात्मा युगों-युगों से पवित्र भक्ति ब्रह्म

भगवान(काल) की करते हुए आ रहे थे। सत्ययुग में यही नानक जी राजा अम्ब्रीष थे तथा ब्रह्म भक्ति विष्णु जी को ईष्ट मानकर किया करते थे। दुर्वासा जैसे महान तपस्वी भी इनके दरबार में हार मानकर क्षमा याचना करके गए थे।

त्रेता युग में श्री नानक जी ही राजा जनक विदेही बने। जो सीता जी के पिता कहलाए। एक सुखदेव ऋषि जो महर्षि वेदव्यास के पुत्र थे जो अपनी सिद्धि से आकाश में उड़ जाते थे। परन्तु गुरु से उपदेश नहीं ले रखा था।

जब सुखदेव विष्णुलोक के स्वर्ग में गए तो गुरु न होने के कारण वापिस आना पड़ा। विष्णु जी के आदेश से राजा जनक को गुरु बनाया तब स्वर्ग में स्थान प्राप्त हुआ। फिर कलयुग में यही राजा जनक की आत्मा एक हिन्दू परिवार में श्री कालुराम महत्ता (खत्री) के घर उत्पन्न हुए तथा श्री नानक नाम रखा गया।

''श्री नानक देव जी तथा परमेश्वर कबीर जी की ज्ञान चर्चा''

बाबा नानक देव जी प्रातःकाल प्रतिदिन सुल्तानपुर लोधी के पास बह रही बेई दरिया में स्नान करने जाया करते थे तथा घण्टों प्रभु चिन्तन में बैठे रहते थे।

एक दिन परमेश्वर कबीर जी जिन्दा फकीर के वेश में बेई दरिया पर मिले तथा नानक जी के साथ दरिया में गोता लगाया। कबीर साहेब जी श्री नानक जी की पुण्यात्मा को सत्यलोक ले गए।

सच्चखण्ड में श्री नानक जी ने देखा कि एक असीम तेजोमय मानव सदृश शरीर युक्त प्रभु तख्त पर बैठे थे। अपने ही दूसरे स्वरूप पर कबीर साहेब जिन्दा महात्मा के रूप में चंवर करने लगे। तब श्री नानक जी ने सोचा कि अकाल मूर्त तो यह रब है जो गद्दी पर बैठा है। कबीर तो यहाँ का सेवक होगा।

उसी समय जिन्दा रूप में परमेश्वर कबीर साहेब उस गद्दी पर विराजमान हो गए तथा जो तेजोमय शरीर युक्त प्रभु का दूसरा रूप था वह खड़ा होकर तख्त पर बैठे जिन्दा वाले रूप पर चंवर करने लगा। फिर वह तेजोमय रूप नीचे से गये जिन्दा (कबीर) रूप में समा गया तथा गद्दी पर अकेले कबीर परमेश्वर जिन्दा रूप में बैठे थे और चंवर अपने आप ढुरने लगा।

तब श्री नानक जी ने कहा कि वाहे गुरु, सत्यनाम से प्राप्ति तेरी। इस प्रक्रिया में तीन दिन लग गए। नानक जी की आत्मा को साहेब कबीर जी ने वापिस शरीर में प्रवेश कर दिया। तीसरे दिन श्री नानक जी होश में आए।

उधर श्री जयराम जी ने (जो श्री नानक जी का बहनोई था) श्री नानक जी को दरिया में डूबा जान कर दूर-दूर तक गोताखोरों से तथा जाल डलवा कर खोज करवाई। परन्तु कोशिश निष्फल रही और मान लिया कि श्री नानक

जी दरिया के अथाह वेग में बह कर मिट्टी के नीचे दब गए। तीसरे दिन जब श्री नानक जी उसी नदी के किनारे सुबह-सुबह दिखाई दिए तो बहुत व्यक्ति एकत्रित हो गए, बहन नानकी तथा बहनोई श्री जयराम भी दौड़े गए, खुशी का ठिकाना नहीं रहा तथा घर ले आए।

श्री नानक जी अपनी नौकरी पर चले गए। मोदी खाने का दरवाजा खोल दिया तथा कहा जिसको जितना चाहिए, ले जाओ। तेरा-तेरा कहकर पूरा खजाना लुटा कर शमशान घाट पर बैठ गए।

जब नवाब को पता चला कि श्री नानक जी खजाना समाप्त करके शमशान घाट पर बैठा है। तब नवाब ने श्री जयराम जी की उपस्थिति में खजाने का हिसाब करवाया तो सात सौ साठ रूपये श्री नानक जी के अधिक मिले। नवाब ने क्षमा याचना की तथा कहा कि नानक जी आप सात सौ साठ रूपये जो आपके सरकार की ओर अधिक हैं ले लो तथा फिर से नौकरी पर आ जाओ।

तब श्री नानक जी ने कहा कि अब सच्ची सरकार की नौकरी करूँगा। उस पूर्ण परमात्मा के आदेशानुसार अपना जीवन सफल करूँगा। वह कबीर पूर्ण परमात्मा है जो मुझे बेई नदी पर मिला था।

नवाब ने पूछा वह पूर्ण परमात्मा कहाँ रहता है तथा यह आदेश आपको कब हुआ?

श्री नानक जी ने कहा वह सच्चखण्ड में रहता है। बेई नदी के किनारे से मुझे स्वयं आकर वही पूर्ण परमात्मा सचखण्ड (सत्यलोक) लेकर गया था। वह इस पृथ्वी पर भी आकार में आया हुआ है। उसकी खोज करके अपना आत्म कल्याण करवाऊँगा। उस दिन के बाद श्री नानक जी घर त्याग कर पूर्ण परमात्मा की खोज पृथ्वी पर करने के लिए चल पड़े। प्रथम उदासी में बनारस गए।

श्री नानक जी सतनाम तथा वाहे गुरु की रटना लगाते हुए बनारस पहुँचे। इसीलिए अब पवित्र सिक्ख समाज के श्रद्धालु केवल सत्यनाम श्री वाहे गुरु कहते रहते हैं। सत्यनाम क्या है तथा वाहे गुरु कौन है? यह मालूम नहीं है। जबकि सत्यनाम(सच्चानाम) गुरु ग्रन्थ साहेब में लिखा है, जो अन्य मंत्र है।

जैसा कि कबीर साहेब ने बताया था कि मैं बनारस (काशी) में रहता हूँ। धाणक (जुलाहे) का कार्य करता हूँ। मेरे गुरु जी काशी में सर्व प्रसिद्ध पंडित रामानन्द जी हैं। इस बात को आधार रखकर श्री नानक जी ने संसार से उदास होकर पहली उदासी यात्रा बनारस (काशी) के लिए प्रारम्भ की (प्रमाण के लिए देखें ''जीवन दस गुरु साहिब'' (लेखक :- सोढ़ी तेजा सिंह जी, प्रकाशक = चतर सिंघ, जीवन सिंघ) पृष्ठ न. 50 पर।)।

परमेश्वर कबीर साहेब जी स्वामी रामानन्द जी के आश्रम में प्रतिदिन

जाया करते थे। जिस दिन श्री नानक जी ने काशी पहुँचना था उससे पहले दिन कबीर साहेब ने अपने पूज्य गुरुदेव रामानन्द जी से कहा कि स्वामी जी कल मैं आश्रम में नहीं आ पाऊँगा क्योंकि कपड़ा बुनने का कार्य अधिक है। कल सारा दिन लगा कर कार्य निपटा कर फिर आपके दर्शन करने आऊँगा।

काशी (बनारस) में जाकर श्री नानक जी ने पूछा कोई रामानन्द जी महाराज है। सबने कहा वे आज के दिन सर्व ज्ञान सम्पन्न ऋषि हैं। उनका आश्रम पंचगंगा घाट के पास है।

श्री नानक जी ने श्री रामानन्द जी से वार्ता की तथा सच्चखण्ड का वर्णन शुरू किया। तब श्री रामानन्द स्वामी ने कहा यह पहले मुझे किसी शास्त्र में नहीं मिला परन्तु अब मैं आँखों देख चुका हूँ, क्योंकि वही परमेश्वर स्वयं कबीर नाम से आया हुआ है तथा मर्यादा बनाए रखने के लिए मुझे गुरु कहता है परन्तु मेरे लिए प्राण प्रिय प्रभु है। पूर्ण विवरण चाहिए तो मेरे व्यवहारिक शिष्य परन्तु वास्तविक गुरु कबीर जी से पूछो, वही आपकी शंका का निवारण कर सकता है।

श्री नानक जी ने पूछा कि कहाँ हैं कबीर साहेब जी? मुझे शीघ्र मिलवा दो। तब श्री रामानन्द जी ने एक सेवक को श्री नानक जी के साथ कबीर साहेब जी की झोपड़ी पर भेजा। उस सेवक से भी सच्चखण्ड के विषय में वार्ता करते हुए श्री नानक जी चले तो उस कबीर साहेब के सेवक ने भी सच्चखण्ड व सृष्टि रचना जो परमेश्वर कबीर साहेब जी से सुन रखी थी सुनाई। तब श्री नानक जी को आश्चर्य हुआ कि मेरे से तो कबीर साहेब के चाकर (सेवक) भी अधिक ज्ञान रखते हैं।

इसीलिए गुरुग्रन्थ साहेब पृष्ठ 721 पर अपनी अमृतवाणी महला 1 में श्री नानक जी ने कहा है कि :-

"हक्का कबीर करीम तू, बेएब परवरदीगार।
नानक बुगोयद जनु तुरा, तेरे चाकरां पाखाक।।"

जिसका भावार्थ है कि हे कबीर परमेश्वर जी मैं नानक कह रहा हूँ कि मेरा उद्धार हो गया, मैं तो आपके सेवकों के चरणों की धूर तुल्य हूँ।

गुरू ग्रन्थ साहेब के पृष्ठ 731 पर कहा है कि :-

नीच जाति प्रदेशी मेरा, खिन आवै तिल जावै।
जाकि संगत नानक रहेंदा, क्यूंकर मौंडा पावै।।

जब श्री नानक जी ने देखा यह धाणक (जुलाहा) वही परमेश्वर है जिसके दर्शन सत्यलोक (सच्चखण्ड) में किए तथा बेई नदी पर हुए थे। वहाँ यह जिन्दा महात्मा के वेश में थे यहाँ धाणक (जुलाहे) के वेश में हैं। यह स्थान अनुसार अपना वेश बदल लेते हैं परन्तु स्वरूप (चेहरा) तो वही है।

वही मोहिनी सूरत जो सच्चखण्ड में भी विराजमान था। वही करतार

आज धाणक रूप में बैठा है। श्री नानक जी की खुशी का ठिकाना नहीं रहा। आँखों में आँसू भर गए।

तब श्री नानक जी ने अपने सच्चे स्वामी अकाल मूर्ति को पाकर चरणों में गिरकर सत्यनाम (सच्चानाम) प्राप्त किया। तब शान्ति पाई तथा अपने प्रभु की महिमा देश-विदेश में गाई।

पहले श्री नानकदेव जी एक ओंकार (ओम) मन्त्र का जाप करते थे तथा उसी को सत मान कर कहा करते थे एक ओंकार। उन्हें बेई नदी पर कबीर साहेब ने दर्शन देकर सतलोक (सच्चखण्ड) दिखाया तथा अपने सतपुरुष रूप को दिखाया। जब सतनाम का जाप दिया तब श्री नानक जी की काल लोक से मुक्ति हुई। श्री नानक जी ने कहा कि :

इसी का प्रमाण श्री गुरु ग्रन्थ साहिब के राग ''सिरी'' महला 1 पृष्ठ नं. 24 पर शब्द नं. 29

शब्द – एक सुआन दुई सुआनी नाल, भलके भौंकही सदा बिआल।
कुड़ छुरा मुठा मुरदार, धाणक रूप रहा करतार।।1।।
मै पति की पंदि न करनी की कार। उह बिगड़ै रूप रहा बिकराल।।
तेरा एक नाम तारे संसार, मैं ऐहो आस एहो आधार।
मुख निंदा आखा दिन रात, पर घर जोही नीच मनाति।।
काम क्रोध तन वसह चंडाल, धाणक रूप रहा करतार।।2।।
फाही सुरत मलूकी वेस, उह ठगवाड़ा ठगी देस।।
खरा सिआणां बहुता भार, धाणक रूप रहा करतार।।3।।
मैं कीता न जाता हरामखोर, उह किआ मुह देसा दुष्ट चोर।
नानक नीच कह बिचार, धाणक रूप रहा करतार।।4।।

इसमें स्पष्ट लिखा है कि एक(मन रूपी) कुत्ता तथा इसके साथ दो (आशा-तृष्णा रूपी) कुतिया अनावश्यक भौंकती(उमंग उठती) रहती हैं तथा सदा नई-नई आशाएँ उत्पन्न (ब्याती हैं) होती हैं। इनको मारने का तरीका (जो सत्यनाम तथा तत्त्व ज्ञान बिना) झूठा (कुड़) साधन (मुठ मुरदार) था। मुझे धाणक के रूप में हक्का कबीर (सत कबीर) परमात्मा मिला। उन्होनें मुझे वास्तविक उपासना बताई।

श्री नानक जी ने कहा कि उस परमेश्वर (कबीर साहेब) की साधना बिना न तो पति(साख) रहनी थी और न ही कोई अच्छी करनी (भक्ति की कमाई) बन रही थी। जिससे काल का भयंकर रूप जो अब महसूस हुआ है उससे केवल कबीर साहेब तेरा एक (सत्यनाम) नाम पूर्ण संसार को पार (काल लोक से निकाल सकता है) कर सकता है।

मुझे (नानक जी कहते हैं) भी एही एक तेरे नाम की आशा है व यही नाम मेरा आधार है। पहले अनजाने में बहुत निंदा भी की होगी क्योंकि काम

क्रोध इस तन में चंडाल रहते हैं।

मुझे धाणक (जुलाहे का कार्य करने वाले कबीर साहेब) रूपी भगवान ने आकर सतमार्ग बताया तथा काल से छुटवाया। जिसकी सुरति (स्वरूप) बहुत प्यारी है मन को फंसाने वाली अर्थात् मन मोहिनी है तथा सुन्दर वेश-भूषा में (जिन्दा रूप में) मुझे मिले उसको कोई नहीं पहचान सकता। जिसने काल को भी ठग लिया अर्थात् दिखाई देता है धाणक (जुलाहा) फिर बन गया जिन्दा। काल भगवान भी भ्रम में पड़ गया भगवान (पूर्णब्रह्म) नहीं हो सकता।

इसी प्रकार परमेश्वर कबीर साहेब अपना वास्तविक अस्तित्व छुपा कर एक सेवक बन कर आते हैं। काल या आम व्यक्ति पहचान नहीं सकता। इसलिए नानक जी ने उसे प्यार में ठगवाड़ा कहा है और साथ में कहा है कि वह धाणक (जुलाहा कबीर) बहुत समझदार है। दिखाई देता है कुछ परन्तु है बहुत महिमा (बहुता भार) वाला जो धाणक जुलाहा रूप में स्वयं परमात्मा पूर्ण ब्रह्म (सतपुरुष) आया है। प्रत्येक जीव को आधीनी समझाने के लिए अपनी भूल को स्वीकार करते हुए कि मैंने (नानक जी ने) पूर्णब्रह्म के साथ बहस (वाद-विवाद) की तथा उन्होनें (कबीर साहेब ने) अपने आपको भी (एक लीला करके) सेवक रूप में दर्शन दे कर तथा (नानक जी को) मुझको स्वामी नाम से सम्बोधित किया।

इसलिए उनकी महानता तथा अपनी नादानी का पश्चाताप करते हुए श्री नानक जी ने कहा कि मैं (नानक जी) कुछ करने कराने योग्य नहीं था। फिर भी अपनी साधना को उत्तम मान कर भगवान से सम्मुख हुआ (ज्ञान संवाद किया)। मेरे जैसा नीच दुष्ट, हरामखोर कौन हो सकता है जो अपने मालिक पूर्ण परमात्मा धाणक रूप (जुलाहा रूप में आए करतार कबीर साहेब) को नहीं पहचान पाया? श्री नानक जी कहते हैं कि यह सब मैं पूर्ण सोच समझ से कह रहा हूँ कि परमात्मा यही धाणक (जुलाहा कबीर) रूप में है।

भावार्थ :- श्री नानक साहेब जी कह रहे हैं कि यह फाँसने वाली अर्थात् मनमोहिनी शक्ल सूरत में तथा जिस देश में जाता है वैसा ही वेश बना लेता है, जैसे जिंदा महात्मा रूप में बेई नदी पर मिले, सतलोक में पूर्ण परमात्मा वाले वेश में तथा यहाँ उत्तर प्रदेश में धाणक (जुलाहे) रूप में स्वयं करतार (पूर्ण प्रभु) विराजमान है।

आपसी वार्ता के दौरान हुई नोंक-झोंक को याद करके क्षमा याचना करते हुए अधिक भाव से कह रहे हैं कि मैं अपने सत्भाव से कह रहा हूँ कि यही धाणक (जुलाहे) रूप में सत्पुरुष अर्थात् अकाल मूर्त ही है।

दूसरा प्रमाण :- नीचे प्रमाण है जिसमें कबीर परमेश्वर का नाम स्पष्ट लिखा है। श्री गु.ग्र.पृष्ठ नं. 721 राग तिलंग महला पहला में है।

और अधिक प्रमाण के लिए प्रस्तुत है ''राग तिलंग महला 1'' पंजाबी श्री गुरु ग्रन्थ साहेब पृष्ठ नं. 721 :-

यक अर्ज गुफतम पेश तो दर गोश कुन करतार।
हक्का कबीर करीम तू बेएब परवरदिगार।।
दूनियाँ मुकामे फानी तहकीक दिलदानी।
मम सर मुई अजराईल गिरफ्त दिल हेच न दानी।।
जन पिसर पदर बिरादराँ कस नेस्त दस्तं गीर।
आखिर बयफ्तम कस नदारद चूँ शब्द तकबीर।।
शबरोज गशतम दरहवा करदेम बदी ख्याल।
गाहे न नेकी कार करदम मम ई चिनी अहवाल।।
बदबख्त हम चु बखील गाफिल बेनजर बेबाक।
नानक बुगोयद जनु तुरा तेरे चाकरा पाखाक।।

सरलार्थ :- (कुन करतार) हे शब्द स्वरूपी कर्ता अर्थात् शब्द से सर्व सृष्टि के रचनहार (गोश) निर्गुणी संत रूप में आए (करीम) दयालु (हक्का कबीर) सत कबीर (तू) आप (बेएब परवरदिगार) निर्विकार परमेश्वर हैं। (पेश तोदर) आपके समक्ष अर्थात् आपके द्वार पर (तहकीक) पूरी तरह जान कर (यक अर्ज गुफतम) एक हृदय से विशेष प्रार्थना है कि (दिलदानी) हे महबूब (दुनियां मुकामे) यह संसार रूपी ठिकाना (फानी) नाशवान है (मम सर मूई) जीव के शरीर त्यागने के पश्चात् (अजराईल) अजराईल नामक फरिश्ता यमदूत (गिरफ्त दिल हेच न दानी) बेरहमी के साथ पकड़ कर ले जाता है। उस समय (कस) कोई (दस्तं गीर) साथी (जन) व्यक्ति जैसे (पिसर) बेटा (पदर) पिता (बिरादरां) भाई चारा (नेस्तं) साथ नहीं देता। (आखिर बेफ्तम) अन्त में सर्व उपाय (तकबीर) फर्ज अर्थात् (कस) कोई क्रिया काम नहीं आती (नदारद चूं शब्द) तथा आवाज भी बंद हो जाती है (शबरोज) प्रतिदिन (गशतम) गसत की तरह न रूकने वाली (दर हवा) चलती हुई वायु की तरह (बदी ख्याल) बुरे विचार (करदेम) करते रहते हैं (नेकी कार करदम) शुभ कर्म करने का (मम ई चिनी) मुझे कोई (अहवाल) जरीया अर्थात् साधन (गाहे न) नहीं मिला (बदबख्त) ऐसे बुरे समय में (हम चु) हमारे जैसे (बखील) नादान (गाफील) ला परवाह (बेनजर बेबाक) भक्ति और भगवान का वास्तविक ज्ञान न होने के कारण ज्ञान नेत्र हीन था तथा ऊवा-बाई का ज्ञान कहता था। (नानक बुगोयद) नानक जी कह रहे हैं कि हे कबीर परमेश्वर आपकी कृपा से (तेरे चाकरां पाखाक) आपके सेवकों के चरणों की धूर डूबता हुआ (जनु तुरा) बंदा पार हो गया।

केवल हिन्दी अनुवाद :- हे शब्द स्वरूपी राम अर्थात् शब्द से सर्व सृष्टि रचनहार दयालु ''सतकबीर'' आप निर्विकार परमात्मा हैं। आपके समक्ष एक

हृदय से विनती है कि यह पूरी तरह जान लिया है, हे महबूब! यह संसार रूपी ठिकाना नाशवान है।

हे दाता! इस जीव के मरने पर अजराईल नामक यम दूत बेरहमी से पकड़ कर ले जाता है कोई साथी जन जैसे बेटा पिता भाईचारा साथ नहीं देता। अन्त में सभी उपाय और फर्ज कोई क्रिया काम नहीं आता। प्रतिदिन गश्त की तरह न रूकने वाली चलती हुई वायु की तरह बुरे विचार करते रहते हैं। शुभ कर्म करने का मुझे कोई जरीया या साधन नहीं मिला। ऐसे बुरे समय कलियुग में हमारे जैसे नादान लापरवाह, सत मार्ग का ज्ञान न होने से ज्ञान नेत्र हीन था तथा लोकवेद के आधार से अनाप-सनाप ज्ञान कहता रहता था।

श्री नानक जी कहते हैं कि मैं आपके सेवकों के चरणों की धूर डूबता हुआ बन्दा नानक पार हो गया।

भावार्थ - श्री गुरु नानक साहेब जी कह रहे हैं कि हे हक्का कबीर (सत् कबीर)! आप निर्विकार दयालु परमेश्वर हो। आप से मेरी एक अर्ज है कि मैं तो सत्यज्ञान वाली नजर रहित तथा आपके सत्यज्ञान के सामने तो निरूत्तर अर्थात् जुबान रहित हो गया हूँ। हे कुल मालिक! मैं तो आपके दासों के चरणों की धूल हूँ, मुझे शरण में रखना।

इसके पश्चात् जब श्री नानक जी को पूर्ण विश्वास हो गया कि पूर्ण परमात्मा तो गीता ज्ञान दाता प्रभु से अन्य ही है। वही पूजा के योग्य है। पूर्ण परमात्मा की भक्ति तथा ज्ञान के विषय में गीता ज्ञान दाता प्रभु भी अनभिज्ञ है।

परमेश्वर स्वयं ही तत्त्वदर्शी संत रूप से प्रकट होकर तत्त्वज्ञान को जन-जन को सुनाता है। जिस ज्ञान को वेद भी नहीं जानते वह तत्त्वज्ञान केवल पूर्ण परमेश्वर (सतपुरुष) ही स्वयं आकर ज्ञान करवाता है।

फिर प्रमाण है :- ''राग बसंत महला पहला'' पौड़ी नं. 3 आदि ग्रन्थ (पंजाबी) पृष्ठ नं. 1188 :-

नानक हवमों शब्द जलाईया, सतगुरु साचे दरस दिखाईया।।

इस वाणी से भी अति स्पष्ट है कि श्री नानक जी कह रहे हैं कि सत्यनाम (सत्यशब्द) से विकार-अहम् (अभिमान) जल गया तथा मुझे सच्चे सतगुरु ने दर्शन दिए अर्थात् मेरे गुरुदेव के दर्शन हुए।

स्पष्ट है कि श्री नानक जी को कोई सतगुरु आकार रूप में अवश्य मिला था। वह ऊपर तथा नीचे पूर्ण प्रमाणित है। स्वयं कबीर साहेब पूर्ण परमात्मा(अकाल मूर्त) ने स्वयं सच्चखण्ड से तथा दूसरे रूप में काशी बनारस से आकर प्रत्यक्ष दर्शन देकर सच्चखण्ड (सत्यलोक) भ्रमण करवा के सच्चा नाम उपदेश काशी (बनारस) में प्रदान किया।

आदरणीय गरीबदास जी महाराज {गाँव-छुड़ानी, जिला-झज्जर (हरियाणा)}

को भी परमेश्वर कबीर जिन्दा महात्मा के रूप में जंगल में मिले थे। इसी प्रकार सतलोक दिखा कर वापिस छोड़ा था।

परमेश्वर ने बताया कि मैंने ही श्री नानक जी तथा श्री दादू जी को पार किया था। जब श्री नानक जी ने पूर्ण परमात्मा को सतलोक में देखा तथा फिर बनारस (काशी) में जुलाहे का कार्य करते हुए भी देखा तब उमंग में भरकर कहा था ''वाहेगुरु सत्यनाम'' वाहेगुरु-वाहेगुरु तथा इसी उपरोक्त वाक्य का उच्चारण करते हुए काशी से वापिस आए। जिसको श्री नानक जी के अनुयाईयों ने जाप मंत्र रूप में जाप करना शुरु कर दिया कि यह पवित्र मंत्र श्री नानक देव जी के मुख कमल से निकला था, परन्तु वास्तविकता को न समझ सके।

अब उनसे कौन छुटाए, इस नाम के जाप को जो सही नहीं है क्योंकि वास्तविक मंत्र को बोलकर नहीं सुनाया जाता। उसका सांकेतिक मंत्र 'सत्यनाम' है तथा वाहे गुरु कबीर परमेश्वर को कहा है।

इसी का प्रमाण संत गरीबदास साहेब ने अपने अमरग्रन्थ साहेब में फुटकर साखी का अंग पृष्ठ न. 386 पर दिया है :-

गरीब, झांखी देख कबीर की, नानक कीती वाह।
वाह सिक्खों के गल पड़ी, कौन छुटावै ताह।।
गरीब, हम सुलतानी नानक तारे, दादू कुं उपदेश दिया।
जाति जुलाहा भेद ना पाया, कांशी माहे कबीर हुआ।।

प्रमाण के लिए पुस्तक ''जीवन दस गुरु साहिबान'' के पृष्ठ न. 42 से 44 तक (लेखक - सोढी तेजा सिंघ जी) - (प्रकाशक - चतर सिंघ जीवन सिंघ)

बेई नदी में प्रवेश

"जीवन दस गुरु साहिबान से ज्यों का त्यों सहाभार"

गुरु जी प्रत्येक प्रातः बेई नदी में जो कि शहर सुलतानपुर के पास ही बहती है, स्नान करने के लिए जाते थे। एक दिन जब आपने पानी में डुबकी लगाई तो फिर बाहर न आए। कुछ समय ऊपरान्त आप जी के सेवक ने, जो कपड़े पकड़ कर नदी के किनारे बैठा था, घर जाकर जै राम जी को खबर सुनाई कि नानक जी डूब गए हैं तो जै राम जी तैराकों को साथ लेकर नदी पर गए। आप जी को बहुत ढूंढा किन्तु आप नहीं मिले। बहुत देखने के पश्चात् सब लोग अपने घर चले गए।

भाई जैराम जी के घर बहुत चिन्ता और दुःख प्रकट किया जा रहा था कि तीसरे दिन सवेरे ही एक स्नान करने वाले भक्त ने घर आकर बहिन जी को बताया कि आपका भाई नदी के किनारे बैठा है। यह सुनकर भाई जैराम जी बेई की तरफ दौड़ पड़े और जब जब पता चलता गया और बहुत से लोग भी वहाँ पहुँच गए। जब इस तरह आपके चारों तरफ लोगों की भीड़ लग गई आप जी चुपचाप अपनी दुकान

पहुँच गए। आप जी के साथ स्त्री और पुरूषों की भीड़ दुकान पर आने लगी। लोगों की भीड़ देख कर गुरु जी ने मोदीखाने का दरवाजा खोल दिया और कहा जिसको जिस चीज की जरूरत है वह उसे ले जाए। मोदीखाना लुटाने के पश्चात् गुरु जी फकीरी चोला पहन कर शमशानघाट में जा बैठे। मोदीखाना लुटाने और गुरु जी के चले जाने की खबर जब नवाब को लगी तो उसने मुंशी द्वारा मोदीखाने की किताबों का हिसाब जैराम को बुलाकर पड़ताल करवाया। हिसाब देखने के पश्चात् मुंशी ने बताया कि गुरु जी के सात सौ साठ रूपये सरकार की तरफ अधिक हैं। इस बात को सुनकर नवाब बहुत खुश हुआ। उसने गुरु जी को बुलाकर कहा कि उदास न हो। अपना फालतू पैसा और मेरे पास से ले कर मोदीखाने का काम जारी रखें। पर गुरु जी ने कहा अब हमने यह काम नहीं करना हमें कुछ और काम करने का भगवान् की तरफ से आदेश हुआ है। नवाब ने पूछा क्या आदेश हुआ है? तब गुरु जी ने मूल–मंत्र उच्चारण किया।

1 ओंकार सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरू
अकाल मूरति अजूनी सब गुरप्रसादि।

नवाब ने पूछा कि यह आदेश आपके भगवान् ने कब दिया? गुरु जी ने बताया कि जब हम बेई में स्नान करने गए थे तो वहाँ से हम सच्चखण्ड अपने स्वामी के पास चले गए थे वहाँ हमें आदेश हुआ कि नानक जी यह मंत्र आप जपो और बाकियों को जपा कर कलयुग के लोगों को पार लगाओ। इसलिए अब हमें अपने मालिक के इस हुक्म की पालना करनी है। इस सन्दर्भ को भाई गुरदास जी वार 1 पउड़ी 24 में लिखते हैं–

बाबा पैधा सचखण्ड नउनिधि नाम गरीबी पाई।।

अर्थात्–बाबा नानक जी सचखण्ड गए। वहाँ आप को नौनिधियों का खजाना नाम और निर्भयता प्राप्त हुई। यहाँ बेई किनारे जहाँ गुरु जी बेई से बाहर निकल कर प्रकट हुए थे, गुरु द्वारा संत घाट अथवा गुरुद्वारा बेर साहिब, बहुत सुन्दर बना हुआ है। इस स्थान पर ही गुरु जी प्रातः स्नान करके कुछ समय के लिए भगवान् की तरफ ध्यान करके बैठते थे।

जीवन दस गुरु साहेब नामक पुस्तक से लेख समाप्त

''भाई बाले वाली जन्म साखी में अद्भुत प्रमाण''

भाई बाले वाली ''जन्म साखी'' एक मान्य ग्रन्थ है जो गुरू ग्रन्थ की तरह ही सत्यज्ञान का प्रतीक माना जाता है जिसके ज्ञान को सिक्ख समाज परम सत्य मानता है क्योंकि यह जन्म साखी भाई बाला जी द्वारा आँखों देखा कानों सुना ज्ञान है जो श्री नानक देव साहेब जी ने बोला था तथा बाला जी ने बताया तथा दूसरे गुरू श्री अंगद जी ने लिखा था।

जन्म साखी के पृष्ठ 299-300 पर ''साखी कूना पर्वत की चली'' में

''गोष्टि सिद्धां नाल होई'' है। इसमें प्रकरण है कि श्री गुरू नानक जी कूना पर्वत पर गए। उनके साथ भाई बाला जी तथा मर्दाना जी थे। कूना पर्वत की गुफा में कुछ सिद्ध पुरूष नाथ पंथ के रहते थे। उनके साथ ज्ञान गोष्ठी में श्री नानक जी ने प्रश्न के उत्तर में कहा था कि ''ऐकंकार हमारा नाबं अपने गुरू की बलि जाऊँ।'' **(मर्दाने ने पूछा कि हे गुरू जी! क्या आपका भी कोई गुरू जी है?) तब नानक जी ने कहा कि हे मर्दाना! मेरा इतना बड़ा गुरू है जो बिना करतार की कृपा के अपनी दृष्टि में नहीं आता।**

इससे आगे ''साखी और चली'' मीना पर्वत चले गए। तब मर्दाने ने पूछा कि हे गुरू जी! हम तो आपके साथ ही रहे हैं। आप जी को वह गुरू जी कब मिला था? गुरू नानक जी ने उत्तर दिया कि उस समय तक तुम मेरे पास नहीं आए थे। जब हम मिलने गए थे। तब मर्दाने ने कहा कि जी! कब मिलने गए थे? तब श्री नानक जी ने कहा कि जब सुल्तानपुर में बेई नदी में डुबकी लगाई थी। तब तीन दिन उसी के साथ रहे थे। हे मर्दाना! भाई बाला जानता है।

हे मर्दाना! ऐसा गुरू है जिसकी सत्ता संपूर्ण संसार को आश्रय दे रही है। उसको जिन्दा बाबा कहते हैं। हे मर्दाना! जिन्दा उसी को कहते हैं जो काल के आधीन न आवै। अपितु काल उसके आधीन है।

श्री नानक देव जी का गुरू था, अन्य प्रमाण :-

''साखी कंधार देश की चली'' जन्म साखी के पृष्ठ 470-471 पर :-

एक मुगल पठान ने पूछा कि आपका गुरू कौन है? श्री नानक जी ने उत्तर दिया कि जिन्दा पीर है। वह परमेश्वर ही गुरू रूप में आया था। उसका शिष्य सारा जहाँ है। फिर ''साखी रूकनदीन काजी के साथ होई'' जन्म साखी के पृष्ठ 183 पर कुछ वाणी इस प्रकार हैं :-

नानके आखे रूकनदीन सच्चा सुणहू जवाब।
खालक आदम सिरजिया आलम बड़ा कबीर।
कायम दायम कुदरती सिर पिरां दे पीर।
सजदे करे खुदाई नू आलम बड़ा कबीर।।

भावार्थ :- श्री नानक जी ने कहा है कि रूकनदीन काजी! जिस खुदा ने आदम जी की उत्पत्ति की है। वह बड़ा परमात्मा कबीर है। वह ही पृथ्वी पर सतगुरू की भूमिका करता है। वह सिर पीरां दे पीर यानि सब गुरूओं का सिरताज है। सब से उत्तम ज्ञान रखता है। वह कायम यानि श्रेष्ठ दायम यानि समर्थ परमात्मा (कुदरती) है।

मुसलमान जिसे अल्लाह कबीर कहते हैं। कबीर का अर्थ बड़ा करके बड़ा अल्लाह अर्थ करते हैं। श्री नानक जी ने यह भी स्पष्ट कर दिया है कि

वह बड़ा आलम कबीर है। मुसलमान जिसे अल्लाह कबीर कहते हैं यानि बड़ा अल्लाह कहते हैं। जन्म साखी में कबीर तथा बड़ा दोनों शब्द लिखे हैं जिससे कबीर का अर्थ कबीर ही रहेगा तथा बड़ा शब्द भी रहेगा। इसलिए स्पष्ट हुआ कि बड़ा परमात्मा कबीर है। वह बड़ा आलम कबीर है जो धाणक रूप में काशी में लीला करके गया है जिसका प्रमाण श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के पृष्ठ 24, 721, 731 पर पूर्व में लिख दिया है।

उसमें स्पष्ट है तथा कबीर सागर पवित्र ग्रन्थ भी भाई बाला जी ने जैसे प्रत्यक्ष सुना लिखा है, ऐसे ही धनी धर्मदास जी ने परमेश्वर कबीर जी से सुना ज्ञान लिखा है।

"पवित्र कबीर सागर में प्रमाण"

❖ विशेष विचार :- पूरे श्री गुरु ग्रन्थ साहेब में कहीं प्रमाण नहीं है कि श्री नानक जी, परमेश्वर कबीर जी के गुरु जी थे। जैसे श्री गुरु ग्रन्थ साहेब आदरणीय तथा प्रमाणित है, ऐसे ही पवित्र कबीर सागर भी आदरणीय तथा प्रमाणित सद्ग्रन्थ है तथा श्री गुरुग्रन्थ साहेब से पहले का है। इसीलिए तो सैंकड़ों वाणी 'कबीर सागर' सद्ग्रन्थ से श्री गुरु ग्रन्थ साहिब में ली गई हैं।

पवित्र कबीर सागर में विस्तृत विवरण है नानक जी तथा परमेश्वर कबीर साहेब जी की वार्ता का तथा श्री नानक जी के पूज्य गुरुदेव कबीर परमेश्वर जी थे। कृपया निम्न पढ़ें।

विशेष प्रमाण के लिए कबीर सागर (स्वसमबेदबोध) पृष्ठ न. 158 से 159 से सहाभार :-

नानकशाह कीन्हा तप भारी। सब विधि भये ज्ञान अधिकारी।।
भक्ति भाव ताको समिझाया। ता पर सतगुरु कीनो दाया।।
जिंदा रूप धरयो तब भाई। हम पंजाब देश चलि आई।।
अनहद बानी कियौ पुकारा। सुनि कै नानक दरश निहारा।।
सुनि के अमर लोक की बानी। जानि परा निज समरथ ज्ञानी।।

नानक वचन

आवा पुरूष महागुरु ज्ञानी। अमरलोकी सुनी न बानी।।
अर्ज सुनो प्रभु जिंदा स्वामी। कहँ अमरलोक रहा निजधामी।।
काहु न कही अमर निजबानी। धन्य कबीर परमगुरु ज्ञानी।।
कोई न पावै तुमरो भेदा। खोज थके ब्रह्मा चहुँ वेदा।।

जिन्दा वचन

नानक तुम बहुतै तप कीना। निरंकार बहुते दिन चीन्हा।।
निरंकारते पुरूष निनारा। अजर द्वीप ताकी टकसारा।।
पुरूष बिछोह भयौ तव(त्व) जबते। काल कठिन मग रोंक्यौ तबते।।

इत तव(त्व) सरिस भक्त नहिं होई। क्यों कि परमपुरूष न भेटेंउ कोई।।
जबते हमते बिछुरे भाई। साठि हजार जन्म भक्त तुम पाई।।
धरि धरि जन्म भक्ति भलकीना। फिर काल चक्र निरंजन दीना।।
गहु मम शब्द तो उतरो पारा। बिन सत शब्द लहै यम द्वारा।।
तुम बड़ भक्त भवसागर आवा। और जीवकी कौन चलावा।।
निरंकार सब सृष्टि भुलावा। तुम करि भक्तिलौटि क्यों आवा।।

नानक वचन

धन्य पुरूष तुम यह पद भाखी। यह पद हमसे गुप्त कह राखी।।
जबलों हम तुमको नहिं पावा। अगम अपार भर्म फैलावा।।
कहो गोसाँई हमते ज्ञाना। परमपुरूष हम तुमको जाना।।
धनि जिंदा प्रभु पुरूष पुराना। बिरले जन तुमको पहिचाना।।

जिन्दा वचन

भये दयाल पुरूष गुरु ज्ञानी। दियो पान परवाना बानी।।
भली भई तुम हमको पावा। सकलो पंथ काल को ध्यावा।।
तुम इतने अब भये निनारा। फेरि जन्म ना होय तुम्हारा।।
भली सुरति तुम हमको चीन्हा। अमर मंत्र हम तुमको दीन्हा।।
स्वसमवेद हम कहि निज बानी। परमपुरूष गति तुम्हैं बखानी।।

नानक वचन

धन्य पुरूष ज्ञानी करतारा। जीवकाज प्रकटे संसारा।।
धनि (धन्य) करता तुम बंदी छोरा। ज्ञान तुम्हार महाबल जोरा।।
दिया नाम दान किया उबारा। नानक अमरलोक पग धारा।।

भावार्थ :- परम पूज्य कबीर प्रभु एक जिन्दा महात्मा का रूप बना कर श्री नानक जी से मिलने पंजाब में गए तब श्री नानक साहेब जी से वार्ता हुई। तब परमेश्वर कबीर जी ने कहा कि आप जैसी पुण्यात्मा जन्म-मृत्यु का कष्ट भोग रहे हो फिर आम जीव का कहाँ ठिकाना है?

जिस निरंकार को आप प्रभु मान कर पूज रहे हो पूर्ण परमात्मा तो इससे भी भिन्न है। वह मैं ही हूँ। जब से आप मेरे से बिछुड़े हो साठ हजार जन्म तो अच्छे-2 उच्च पद भी प्राप्त कर चुके हो (जैसे सतयुग में यही पवित्र आत्मा राजा अम्ब्रीष तथा त्रेतायुग में राजा जनक(जो सीता जी के पिता जी थे) हुए तथा कलियुग में श्री नानक साहेब जी हुए।) फिर भी जन्म मृत्यु के चक्र में ही हो।

मैं आपको सतशब्द अर्थात् सच्चा नाम जाप मन्त्र बताऊँगा उससे आप अमर हो जाओगे। श्री नानक साहेब जी ने प्रभु कबीर से कहा कि आप बन्दी छोड़ भगवान हो, आपको कोई बिरला सौभाग्यशाली व्यक्ति ही पहचान सकता है।

कबीर सागर के अध्याय ''अगम निगम बोध'' में पृष्ठ नं. 44 पर शब्द है :-

।।नानक वचन।।

।।शब्द।।

वाह वाह कबीर गुरु पूरा है।
पूरे गुरु की मैं बलि जावाँ जाका सकल जहूरा है।।
अधर दुलिच परे है गुरुनके शिव ब्रह्मा जह शूरा है।।
श्वेत ध्वजा फहरात गुरुनकी बाजत अनहद तूरा है।।
पूर्ण कबीर सकल घट दरशै हरदम हाल हजूरा है।।
नाम कबीर जपै बड़भागी नानक चरण को धूरा है।।

❖ विशेष विवेचन :- बाबा नानक जी ने उस कबीर जुलाहे (धाणक) काशी वाले को सत्यलोक (सच्चखण्ड) में आँखों देखा तथा फिर काशी में धाणक (जुलाहे) का कार्य करते हुए देखा तथा बताया कि वही धाणक रूप (जुलाहा) सत्यलोक में सत्यपुरुष रूप में भी रहता है तथा यहाँ भी वही है।

आदरणीय श्री नानक साहेब जी का आविर्भाव (जन्म) सन् 1469 तथा सतलोक वास सन् 1539 ''पवित्र पुस्तक जीवनी दस गुरु साहिबान''। आदरणीय कबीर साहेब जी धाणक रूप में मृतमण्डल में सन् 1398 में सशरीर प्रकट हुए तथा सशरीर सतलोक गमन सन् 1518 में ''पवित्र कबीर सागर''। दोनों महापुरुष 49 वर्ष तक समकालीन रहे।

श्री गुरु नानक साहेब जी का जन्म पवित्र हिन्दू धर्म में हुआ। प्रभु प्राप्ति के बाद कहा कि ''न कोई हिन्दू न मुसलमाना'' अर्थात् अज्ञानतावश दो धर्म बना बैठे। सर्व एक परमात्मा सतपुरुष के बच्चे हैं। श्री नानक देव जी ने कोई धर्म नहीं बनाया, बल्कि धर्म की बनावटी जंजीरों से मानव को मुक्त किया तथा शिष्य परम्परा चलाई। जैसे गुरुदेव से नाम दीक्षा लेने वाले भक्तों को शिष्य बोला जाता है, उन्हें पंजाबी भाषा में सिक्ख कहने लगे। जैसे आज इस दास के लाखों शिष्य हैं, परन्तु यह धर्म नहीं है। सर्व पवित्र धर्मों की पुण्यात्माएँ आत्म कल्याण करवा रही हैं। यदि आने वाले समय में कोई धर्म बना बैठे तो वह दुर्भाग्य ही होगा। भेदभाव तथा संघर्ष की नई दीवार ही बनेगी, परन्तु लाभ कुछ नहीं होगा।

गवाह नं 6 :- संत घीसा दास जी गाँव-खेखड़ा जिला-बागपत, उत्तर प्रदेश (भारत) :- इनको छः वर्ष की आयु में कबीर परमेश्वर जी मिले थे। पूरा गाँव खेखड़ा गवाह है। संत घीसा जी ने बताया कि मैंने परमेश्वर कबीर जी के साथ ऊपर सतलोक में जाकर देखा था। जो काशी में जुलाहे का कार्य करता था, वह पूर्ण परमात्मा है। सारी सृष्टि का सृजनकर्ता है। असंख्य ब्रह्मण्डों का मालिक है।

''ग्यारहवां अध्याय''

''कबीर परमेश्वर जी (कविर्देव जी) चारों युगों में धरती पर सतलोक से चलकर आते हैं''

पवित्र ऋग्वेद के निम्न मंत्रों में भी पहचान बताई है कि जब वह पूर्ण परमात्मा कुछ समय संसार में लीला करने आता है तो शिशु रूप धारण करता है। उस पूर्ण परमात्मा की परवरिश (अध्न्य धेनवः) कंवारी गाय द्वारा होती है। फिर लीलावत् बड़ा होता है तो अपने पाने व सतलोक जाने अर्थात् पूर्ण मोक्ष मार्ग का तत्त्वज्ञान (कविर्गिभिः) कबीर बाणी द्वारा कविताओं द्वारा बोलता है, जिस कारण से प्रसिद्ध कवि कहलाता है, परन्तु वह स्वयं कविर्देव पूर्ण परमात्मा ही होता है जो तीसरे मुक्ति धाम सतलोक में रहता है।

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 1 मंत्र 9 तथा सूक्त 96 मंत्र 17 से 20 :-

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 1 मंत्र 9

अभी इमं अध्न्या उत श्रीणन्ति धेनवः शिशुम्। सोममिन्द्राय पातवे।।9।।

अभी इमम्–अध्न्या उत श्रीणन्ति धेनवः शिशुम् सोमम् इन्द्राय पातवे।

अनुवाद : –(उत) विशेष कर (इमम्) इस (शिशुम्) बालक रूप में प्रकट (सोमम्) पूर्ण परमात्मा अमर प्रभु की (इन्द्राय) सुख सुविधाओं द्वारा अर्थात् खाने–पीने द्वारा जो शरीर वृद्धि को प्राप्त होता है उसे (पातवे) वृद्धि के लिए (अभी) पूर्ण तरह (अध्न्या धेनवः) जो गाय, सांड द्वारा कभी भी परेशान न की गई हो अर्थात् कंवारी गाय द्वारा (श्रीणन्ति) परवरिश की जाती है।

भावार्थ :- पूर्ण परमात्मा अमर पुरुष जब लीला करता हुआ बालक रूप धारण करके स्वयं प्रकट होता है उस समय कंवारी गाय अपने आप दूध देती है जिससे उस पूर्ण प्रभु की परवरिश होती है।

''त्रेतायुग में कबीर परमेश्वर जी का प्रकट होना''

प्रश्न 52 :- धर्मदास जी ने पूछा हे बन्दी छोड़ आप त्रेता युग में मुनिन्द्र ऋषि के नाम से अवतरित हुए थे। उस युग में किन-2 पुण्यात्माओं ने आप की शरण ग्रहण की थी?

उत्तर :- हे धर्मदास! त्रेता युग में मैं मुनिन्द्र ऋषि के नाम से प्रकट हुआ। त्रेता युग में भी मैं एक शिशु रूप धारण करके कमल के फूल पर प्रकट हुआ था। एक वेदविज्ञ नामक ऋषि तथा सूर्या नामक उसकी साधवी पत्नी थी। वे प्रतिदिन सरोवर पर स्नान करने जाते थे। उनकी आयु आधी से अधिक हो चुकी थी। वह निःसन्तान दम्पति मुझे अपने साथ ले गए तथा सन्तान रूप में पालन किया। प्रत्येक युग में जिस समय मैं एक पूरे जीवन रहने की

लीला करने आता हूँ। मेरी परवरिश कंवारी गायों से होती है। बाल्यकाल से ही मैं तत्त्वज्ञान की वाणी उच्चारण करता हूँ। जिस कारण से मुझे प्रसिद्ध कवि की उपाधि प्राप्त होती है। परन्तु ज्ञानहीन ऋषियों द्वारा भ्रमित जनता मुझे न पहचान कर एक कवि की उपाधि प्रदान कर देती है। केवल मुझ से परिचित श्रद्धालु ही मुझे समझ पाते हैं तथा वे अपना कल्याण करवा लेते हैं। त्रेता युग में कविर्देव का ''ऋषि मुनिन्द्र नाम से प्राकाट्य'' लेखक के शब्दों में निम्न पढ़ें :-

"त्रेतायुग में कविर्देव (कबीर परमेश्वर) का मुनिन्द्र नाम से प्राकाट्य"

"नल तथा नील को शरण में लेना"

त्रेतायुग में स्वयंभु कविर्देव(कबीर परमेश्वर) रूपान्तर करके मुनिन्द्र ऋषि के नाम से आए हुए थे। एक दिन अनल अर्थात् नल तथा अनील अर्थात् नील ने मुनिन्द्र साहेब का सत्संग सुना। दोनों भक्त आपस में मौसी के पुत्र थे। माता-पिता का देहान्त हो चुका था। नल तथा नील दोनों शारीरिक व मानसिक रोग से अत्यधिक पीड़ित थे। सर्व ऋषियों व सन्तों से कष्ट निवारण की प्रार्थना कर चुके थे। सर्व ऋषियों व सन्तों ने बताया था कि यह आप का प्रारब्ध का पाप कर्म का दण्ड है, यह आपको भोगना ही पड़ेगा। इसका कोई समाधान नहीं है। दोनों दोस्त जीवन से निराश होकर मृत्यु की प्रतीक्षा कर रहे थे।

सत्संग के उपरांत ज्यों ही दोनों ने परमेश्वर कविर्देव (कबीर परमेश्वर) उर्फ मुनिन्द्र ऋषि जी के चरण छुए तथा परमेश्वर मुनिन्द्र जी ने सिर पर हाथ रखा तो दोनों का असाध्य रोग छू मन्त्र हो गया अर्थात् दोनों नल तथा नील स्वस्थ हो गए। इस अद्भुत चमत्कार को देख कर प्रभु के चरणों में गिर कर घण्टों रोते रहे तथा कहा आज हमें प्रभु मिल गया। जिसकी हमें वर्षों से खोज थी उससे प्रभावित होकर ऋषि मुनिन्द्र जी से नाम (दीक्षा) ले लिया मुनिन्द्र साहेब जी के साथ ही सेवा में रहने लगे। पहले ऋषियों व संतों का समागम पानी की व्यवस्था देख कर नदी के किनारे होता था। नल और नील दोनों बहुत प्रभु प्रेमी तथा भोली आत्माएँ थी। परमात्मा में श्रद्धा बहुत हो गई थी। सेवा बहुत किया करते थे। समागमों में रोगी व वृद्ध व विकलांग भक्तजन आते तो उनके कपड़े धोते तथा बर्तन साफ करते। उनके लोटे और गिलास साफ कर देते थे। परंतु थे भोले से दिमाग के। कपड़े धोने लग जाते तो सत्संग में जो प्रभु की कथा सुनी होती उसकी चर्चा करने लग जाते। दोनों भक्त प्रभु चर्चा में बहुत मस्त हो जाते और वस्तुएँ दरिया के जल में कब डूब जाती उनको पता भी नहीं चलता। किसी की चार वस्तु ले कर जाते तो दो वस्तु वापिस ला कर देते थे। भक्तजन

कहते कि भाई आप सेवा तो बहुत करते हो, परंतु हमारा तो बहुत काम बिगाड़ देते हो। अब वे खोई हुई वस्तुएँ हम कहाँ से ले कर आयें? आप हमारी सेवा ही करनी छोड़ दो। हम अपनी सेवा आप ही कर लेंगे। नल तथा नील रोने लग जाते थे कि हमारी सेवा न छीनों। अब की बार नहीं खोएँगे। परन्तु फिर वही काम करते। प्रभु की चर्चा में लग जाते और वस्तुएँ डूब जाती। भक्तजनों ने मुनिन्द्र जी से प्रार्थना की कि कृप्या आप नल तथा नील को समझाओ। ये न तो मानते हैं और कहते हैं तो रोने लग जाते हैं। हमारी तो आधी भी वस्तुएँ वापिस नहीं लाते। बर्तन व वस्त्र धोते समय वे दोनों भगवान की चर्चा में मस्त हो जाते हैं और वस्तुएँ डूब जाती हैं। मुनिन्द्र साहेब ने एक दो बार नल-नील को समझाया। वे रोने लग जाते थे कि साहेब हमारी ये सेवा न छीनों। सतगुरु मुनिन्द्र साहेब ने आशीर्वाद देते हुए कहा बेटा नल तथा नील खूब सेवा करो, आज के बाद आपके हाथ से कोई भी वस्तु चाहे पत्थर या लोहा भी क्यों न हो जल में नहीं डूबेगी।

''समुन्द्र पर रामचन्द्र के पुल के लिए पत्थर तैराना''

एक समय की बात है कि सीता जी को रावण उठा कर ले गया। भगवान राम को तो पता भी नहीं था कि सीता जी को कौन उठा ले गया? श्री रामचन्द्र जी इधर-उधर खोज रहे थे। तब हनुमान जी ने खोज करके बताया कि सीता माता लंकापति रावण की कैद में है। पता लगने के बाद भगवान राम ने रावण के पास शान्ति दूत भेजे तथा प्रार्थना की कि सीता को लौटा दे। परन्तु रावण नहीं माना। युद्ध की तैयारी हुई। तब समस्या यह आई कि समुद्र से सेना कैसे पार करें?

भगवान श्री रामचन्द्र ने तीन दिन तक घुटनों पानी में खड़ा होकर हाथ जोड़कर समुद्र से प्रार्थना की कि रास्ता दे। परन्तु समुद्र टस से मस न हुआ। जब समुद्र नहीं माना तब श्री राम ने उसे अग्नि बाण से जलाना चाहा। भयभीत समुद्र एक ब्राह्मण का रूप बनाकर सामने आया और कहा कि भगवन् सबकी अपनी-अपनी मर्यादाएँ हैं। मुझे जलाओ मत। मेरे अंदर न जाने कितने जीव-जंतु वसे हैं। अगर आप मुझे जला भी दोगे तो भी आप मुझे पार नहीं कर सकते, क्योंकि यहाँ पर बहुत गहरा गड्डा बन जायेगा, जिसको आप कभी भी पार नहीं कर सकते।

समुद्र ने कहा भगवन ऐसा काम करो कि सर्प भी मर जाए और लाठी भी न टूटे। मेरी मर्यादा भी रह जाए और आपका पुल भी बन जाए। तब भगवान श्री राम ने समुद्र से पूछा कि वह क्या है? ब्राह्मण रूप में खड़े समुद्र ने कहा कि आपकी सेना में नल और नील नाम के दो सैनिक हैं। उनके पास उनके गुरुदेव से प्राप्त एक ऐसी शक्ति है कि उनके हाथ से पत्थर भी

तैर जाते हैं। हर वस्तु चाहे वह लोहे की हो, तैर जाती है। श्री रामचन्द्र ने नल तथा नील को बुलाया और उनसे पूछा कि क्या आपके पास कोई ऐसी शक्ति है? तो नल तथा नील ने कहा कि हाँ जी, हमारे हाथ से पत्थर भी नहीं डूबेंगे। तो श्रीराम ने कहा कि परीक्षण करवाओ।

उन नादानों(नल-नील) ने सोचा कि आज सब के सामने तुम्हारी बहुत महिमा होगी। उस दिन उन्होंने अपने गुरुदेव मुनिन्द्र जी (कबीर परमेश्वर जी) को यह सोचकर याद नहीं किया कि अगर हम उनको याद करेंगे तो कहीं श्रीराम ये न सोच लें कि इनके पास शक्ति नहीं है, यह तो कहीं और से मांगते हैं। उन्होंने पत्थर उठाकर समुद्र के जल में डाला तो वह पत्थर डूब गया। नल तथा नील ने बहुत कोशिश की, परन्तु उनसे पत्थर नहीं तैरे। तब भगवान राम ने समुद्र की ओर देखा मानो कहना चाह रहे हों कि आप तो झूठ बोल रहे थे। इनमें तो कोई शक्ति नहीं है। समुद्र ने कहा कि नल-नील आज तुमने अपने गुरुदेव को याद नहीं किया। कृप्या अपने गुरुदेव को याद करो। वे दोनों समझ गए कि आज तो हमने गलती कर दी। उन्होंने सतगुरु मुनिन्द्र साहेब जी को याद किया। सतगुरु मुनिन्द्र (कबीर परमेश्वर) वहाँ पर पहुँच गए। भगवान रामचन्द्र जी ने कहा कि हे ऋषिवर! मेरा दुर्भाग्य है कि आपके सेवकों से पत्थर नहीं तैर रहे हैं। मुनिन्द्र साहेब ने कहा कि अब इनके हाथ से कभी तैरेंगे भी नहीं, क्योंकि इनको अभिमान हो गया है।

सतगुरु की वाणी प्रमाण करती है कि:-

गरीब, जैसे माता गर्भ को, राखे जतन बनाय।
ठेस लगे तो क्षीण होवे, तेरी ऐसे भक्ति जाय।

उस दिन के बाद नल तथा नील की वह शक्ति समाप्त हो गई। श्री रामचन्द्र जी ने परमेश्वर मुनिन्द्र साहेब जी से कहा कि हे ऋषिवर! मुझ पर बहुत आपत्ति पड़ी हुई है। दया करो किसी प्रकार सेना परले पार हो जाए। जब आप अपने सेवकों को शक्ति दे सकते हो तो प्रभु! मुझ पर भी कुछ रजा करो। मुनिन्द्र साहेब जी ने कहा कि यह जो सामने वाला पहाड़ है, मैंने उसके चारों तरफ एक रेखा खींच दी है। इसके बीच-बीच के पत्थर उठा लाओ, वे नहीं डूबेंगे। श्री राम ने परीक्षण के लिए पत्थर मंगवाया। उसको पानी पर रखा तो वह तैरने लग गया। नल तथा नील कारीगर(शिल्पकार) भी थे। हनुमान जी प्रतिदिन भगवान याद किया करते थे।उसने अपनी दैनिक क्रिया भी करते रहने के लिए राम राम भी लिखता रहा और पहाड़ के पहाड़ उठा कर ले आता था। नल नील उनको जोड़-तोड़ कर पुल में लगा देते थे। इस प्रकार पुल बना था।

धर्मदास जी कहते हैं :-

रहे नल नील जतन कर हार, तब सतगुरू से करी पुकार।

जा सत रेखा लिखी अपार, सिन्धु पर शिला तिराने वाले।
धन–धन सतगुरु सत कबीर, भक्त की पीर मिटाने वाले।

कोई कहता था कि हनुमान जी ने पत्थर पर राम का नाम लिख दिया था इसलिए पत्थर तैर गये। कोई कहता था कि नल-नील ने पुल बनाया था। कोई कहता था कि श्रीराम ने पुल बनाया था। परन्तु यह सतकथा ऐसे है, जो ऊपर लिखी है।

(सत कबीर की साखी - पृष्ठ 179 से 182 तक)

-: पीव पिछान को अंग :-

कबीर– तीन देव को सब कोई ध्यावै, चौथे देव का मरम न पावै।
चौथा छाड़ पंचम को ध्यावै, कहै कबीर सो हम पर आवै।।3।।

कबीर– ओंकार निश्चय भया, यह कर्ता मत जान।
साचा शब्द कबीर का, परदे मांही पहचान।।5।।

कबीर– राम कृष्ण अवतार हैं, इनका नांही संसार।
जिन साहेब संसार किया, सो किन्हूं न जन्म्या नार।।17।।

कबीर – चार भुजा के भजन में, भूलि परे सब संत।
कबिरा सुमिरो तासु को, जाके भुजा अनंत।।23।।

कबीर – समुद्र पाट लंका गये, सीता को भरतार।
ताहि अगस्त मुनि पीय गयो, इनमें को करतार।।26।।

कबीर – गिरवर धारयो कृष्ण जी, द्रोणागिरि हनुमंत।
शेष नाग सब सृष्टि सहारी, इनमें को भगवंत।।27।।

कबीर – काटे बंधन विपति में, कठिन किया संग्राम।
चिन्हों रे नर प्राणियां, गरुड बड़ो की राम।।28।।

कबीर – कह कबीर चित चेतहूं, शब्द करौ निरूवार।
श्रीरामहि कर्ता कहत हैं, भूलि परयो संसार।।29।।

कबीर – जिन राम कृष्ण व निरंजन कियो, सो तो करता न्यार।
अंधा ज्ञान न बूझई, कहै कबीर विचार।।30।।

"कबीर परमेश्वर द्वारा विभीषण तथा मंदोदरी को शरण में लेना"

परमेश्वर मुनिन्द्र जी अनल अर्थात् नल तथा अनील अर्थात् नील को शरण में लेने के उपरान्त श्री लंका में गए। वहाँ पर एक परम भक्त विचित्र चन्द्रविजय जी का सोलह सदस्यों का परिवार रहता था। वे भाट जाति में उत्पन्न पुण्यकर्मी प्राणी थे। परमेश्वर मुनिन्द्र(कविर्देव) जी का उपदेश सुन कर पूरे परिवार ने नाम दान प्राप्त किया। परम भक्त विचित्र चन्द्रविजय जी की पत्नी भक्तमति कर्मवती लंका के राजा रावण की रानी मन्दोदरी के पास नौकरी(सेवा) करती थी। रानी मंदोदरी को हँसी-मजाक अच्छे-मंदे चुटकुले

सुना कर उसका मनोरंजन कराती थी। भक्त चन्द्रविजय, राजा रावण के पास दरबार में नौकरी(सेवा) करता था। राजा की बड़ाई के गाने सुना कर उसे प्रसन्न करता था। भक्त विचित्र चन्द्रविजय की पत्नी भक्तमति कर्मवती परमेश्वर से उपदेश प्राप्त करने के उपरान्त रानी मंदोदरी को प्रभु चर्चा जो सृष्टि रचना अपने सतगुरुदेव मुनिन्द्र जी से सुनी थी प्रतिदिन सुनाने लगी।

भक्तमति मंदोदरी रानी को अति आनन्द आने लगा। कई-कई घण्टों तक प्रभु की सत कथा को भक्तमति कर्मवती सुनाती रहती तथा मंदोदरी की आँखों से आँसू बहते रहते। एक दिन रानी मंदोदरी ने कर्मवती से पूछा आपने यह ज्ञान किससे सुना? आप तो बहुत अनाप-शनाप बातें किया करती थी। इतना बदलाव परमात्मा तुल्य संत बिना नहीं हो सकता। तब कर्मवती ने बताया कि हमने एक परम संत से अभी-अभी उपदेश लिया है। रानी मंदोदरी ने संत के दर्शन की अभिलाषा व्यक्त करते हुए कहा, आप के गुरु अब की बार आयें तो उन्हें हमारे घर बुला कर लाना। अपनी मालकिन का आदेश प्राप्त करके शीश झुकाकर सत्कार पूर्वक कहा कि जो आप की आज्ञा, आप की नौकरानी वही करेगी। लेकिन मेरी एक विनती है, कहते हैं कि संत को आदेशपूर्वक नहीं बुलाना चाहिए। स्वयं जा कर दर्शन करना श्रेयकर होता है और जैसे आप की आज्ञा वैसा ही होगा। महारानी मंदोदरी ने कहा कि अब के आपके गुरुदेव जी आयें तो मुझे बताना मैं स्वयं उनके पास जाकर दर्शन करूंगी। परमेश्वर ने फिर श्री लंका में कृपा की। मंदोदरी रानी ने उपदेश प्राप्त किया। कुछ समय उपरान्त अपने प्रिय देवर भक्त विभीषण जी को उपदेश दिलाया। भक्तमति मंदोदरी उपदेश प्राप्त करके अहर्निश प्रभु स्मरण में लीन रहने लगी। अपने पति रावण को भी सतगुरु मुनिन्द्र जी से उपदेश प्राप्त करने की कई बार प्रार्थना की परन्तु रावण नहीं माना तथा कहा करता था कि मैंने परम शक्ति महेश्वर मृत्युंजय शिव जी की भक्ति की है। इसके तुल्य कोई शक्ति नहीं है। आपको किसी ने बहका लिया है।

कुछ ही समय उपरान्त वनवास प्राप्त श्री सीता जी का अपहरण करके रावण ने अपने नौ लखा बाग में कैद कर लिया। भक्तमति मंदोदरी के बार-बार प्रार्थना करने से भी रावण ने माता सीता जी को वापिस छोड़ कर आना स्वीकार नहीं किया। तब भक्तमति मंदोदरी जी ने अपने गुरुदेव मुनिन्द्र जी से कहा महाराज जी, मेरे पति ने किसी की औरत का अपहरण कर लिया है। मुझ से सहन नहीं हो रहा है। वह उसे वापिस छोड़ कर आना किसी कीमत पर भी स्वीकार नहीं कर रहा है। आप दया करो मेरे प्रभु। आज तक जीवन में मैंने ऐसा दुःख नहीं देखा था।

परमेश्वर मुनिन्द्र जी ने कहा कि बेटी मंदोदरी यह औरत कोई साधारण स्त्री नहीं है। श्री विष्णु जी को शापवश पृथ्वी पर आना पड़ा है, वे अयोध्या

के राजा दशरथ के पुत्र रामचन्द्र नाम से जन्में हैं। इनको 14 वर्ष का वनवास प्राप्त है तथा लक्ष्मी जी स्वयं सीता रूप में इनकी पत्नी रूप में वनवास में श्री राम के साथ थी। उसे रावण एक साधु वेश बना कर धोखा देकर उठा लाया है। यह स्वयं लक्ष्मी ही सीता जी है। इसे शीघ्र वापिस करके क्षमा याचना करके अपने जीवन की भिक्षा याचना रावण करें तो इसी में इसका शुभ है।

भक्तमति मंदोदरी के अनेकों बार प्रार्थना करने से रावण नहीं माना तथा कहा कि वे दो मसखरे जंगल में घूमने वाले मेरा क्या बिगाड़ सकते हैं। मेरे पास अनीगनत सेना है। मेरे एक लाख पुत्र तथा सवा लाख नाती हैं। मेरे पुत्र मेघनाद ने स्वर्ग राज इन्द्र को पराजित कर उसकी पुत्री से विवाह कर रखा है। तेतीस करोड़ देवताओं को हमने कैद कर रखा है। तू मुझे उन दो बेसहारा बन में बिचर रहे बनवासियों को भगवान बता कर डराना चाहती है। इस स्त्री को वापिस नहीं करूँगा। मंदोदरी ने भक्ति मार्ग का ज्ञान जो अपने पूज्य गुरुदेव से सुना था, रावण को बहुत समझाया। विभीषण ने भी अपने बड़े भाई को समझाया। रावण ने अपने भाई विभीषण को पीटा तथा कहा कि तू ज्यादा श्री रामचन्द्र का पक्षपात कर रहा है, उसी के पास चला जा।

एक दिन भक्तमति मंदोदरी ने अपने पूज्य गुरुदेव से प्रार्थना की कि हे गुरुदेव मेरा सुहाग उजड़ रहा है। एक बार आप भी मेरे पति को समझा दो। यदि वह आप की बात को नहीं मानेगा तो मुझे विधवा होने का दुःख नहीं होगा।

अपनी वचन की बेटी मंदोदरी की प्रार्थना स्वीकार करके राजा रावण के दरबार के समक्ष खड़े होकर परमेश्वर मुनिन्द्र जी ने द्वारपालों से राजा रावण से मिलने की प्रार्थना की। द्वारपालों ने कहा ऋषि जी इस समय हमारे राजा जी अपना दरबार लगाए हुए हैं। इस समय अन्दर का संदेश बाहर आ सकता है, बाहर का संदेश अन्दर नहीं जा सकता। हम विवश हैं। तब पूर्ण प्रभु अंतर्ध्यान हुए तथा राजा रावण के दरबार में प्रकट हो गए। रावण की दृष्टि ऋषि पर गई तो गरज कर पूछा कि इस ऋषि को मेरी आज्ञा बिना किसने अन्दर आने दिया है उन द्वारपालों को लाकर मेरे सामने कत्ल कर दो। तब परमेश्वर ने कहा राजन् आप के द्वारपालों ने स्पष्ट मना किया था। उन्हें पता नहीं कि मैं कैसे अन्दर आ गया। रावण ने पूछा कि तू अन्दर कैसे आया? तब पूर्ण प्रभु मुनिन्द्र वेश में अदृश होकर पुनर् प्रकट हो गए तथा कहा कि मैं ऐसे आ गया। रावण ने पूछा कि आने का कारण बताओ। तब प्रभु ने कहा कि आप योद्धा हो कर एक अबला का अपहरण कर लाए हो। यह आप की शान व शूरवीरता के विपरीत है। सीता कोई साधारण औरत नहीं है यह स्वयं लक्ष्मी जी का अवतार है। श्री रामचन्द्र जी जो इसके पति हैं वे स्वयं विष्णु हैं। इसे वापिस करके अपने जीवन की भिक्षा माँगो। इसी में आप का श्रेय है। इतना सुन कर तमोगुण (भगवान शिव) का उपासक रावण

क्रोधित होकर नंगी तलवार लेकर सिंहासन से दहाड़ता हुआ कूदा तथा उस नादान प्राणी ने तलवार के अंधाधुँध सत्तर वार ऋषि जी को मारने के लिए किए। परमेश्वर मुनिन्द्र जी ने एक झाडू की सींक हाथ में पकड़ी हुई थी। उसको ढाल की तरह आगे कर दिया। रावण के सत्तर वार उस नाजुक सींक पर लगे। ऐसे आवाज हुई जैसे लोहे के खम्बे (पीलर) पर तलवार लग रही हो। सींक टस से मस नहीं हुई। रावण को पसीने आ गए। फिर भी अपने अहंकारवश नहीं माना। यह तो जान लिया कि यह कोई साधारण ऋषि नहीं है। रावण ने अभिमान वश कहा कि मैंने आप की एक भी बात नहीं सुननी, आप जा सकते हैं। परमेश्वर अंतर्ध्यान हो गए तथा मंदोदरी को सर्व वृतान्त सुनाकर प्रस्थान किया। रानी मंदोदरी ने कहा गुरुदेव अब मुझे विधवा होने में कोई कष्ट नहीं होगा।

श्री रामचन्द्र व रावण का युद्ध हुआ। रावण का वध हुआ। जिस लंका के राज्य को रावण ने तमोगुण भगवान शिव की कठिन साधना करके, दस बार शीश न्यौछावर करके प्राप्त किया था। वह क्षणिक सुख भी रावण का चला गया तथा नरक का भागी हुआ। इसके विपरीत पूर्ण परमात्मा के सतनाम साधक विभीषण को बिना कठिन साधना किए पूर्ण प्रभु की सत्य साधना व कृपा से लंकादेश का राज्य भी प्राप्त हुआ। हजारों वर्षों तक विभीषण ने लंका का राज्य का सुख भोगा तथा प्रभु कृपा से राज्य में पूर्ण शान्ति रही। सभी राक्षस वृति के व्यक्ति विनाश को प्राप्त हो चुके थे। भक्तमति मंदोदरी तथा भक्त विभीषण तथा परम भक्त चन्द्रविजय जी के परिवार के पूरे सोलह सदस्य तथा अन्य जिन्होंने पूर्ण परमेश्वर का उपदेश प्राप्त करके आजीवन मर्यादावत् सतभक्ति की वे सर्व साधक यहाँ पृथ्वी पर भी सुखी रहे तथा अन्त समय में परमेश्वर के विमान में बैठ कर सतलोक (शाश्वतम् स्थानम्) में चले गए। इसीलिए पवित्र गीता अध्याय 7 मंत्र 12 से 15 में कहा है कि तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिव जी) की साधना से मिलने वाली क्षणिक सुविधाओं के द्वारा जिनका ज्ञान हरा जा चुका है, वे राक्षस स्वभाव वाले, मनुष्यों में नीच, दुष्कर्म करने वाले मूर्ख मुझ (काल-ब्रह्म) को भी नहीं भजते।

फिर गीता अध्याय 7 मंत्र 18 में गीता बोलने वाला (काल-ब्रह्म) प्रभु कह रहा है कि कोई एक उदार आत्मा मेरी (ब्रह्म की) ही साधना करता है क्योंकि उनको तत्त्वदर्शी संत नहीं मिला। वे भी नेक आत्माऐं मेरी (अनुत्तमाम्) अति अश्रेष्ठ (गतिम्) गति में आश्रित रह गए। वे भी पूर्ण मुक्त नहीं हैं। इसलिए पवित्र गीता अध्याय 18 मंत्र 62 में कहा है कि हे अर्जुन तू सर्व भाव से उस परमेश्वर (पूर्ण परमात्मा अर्थात् तत् ब्रह्म) की शरण में जा। उसकी कृपा से ही तू परम शान्ति तथा सतलोक अर्थात् सनातन परम धाम को प्राप्त होगा।

इसलिए पुण्यात्माओं से निवेदन है कि आज इस दासन् के भी दास (रामपाल दास) के पास पूर्ण परमात्मा प्राप्ति की वास्तविक विधि प्राप्त है। निःशुल्क उपदेश लेकर लाभ उठाएँ।

प्रश्न 53 :- धर्मदास जी ने प्रश्न किया हे प्रभु कुछ श्रद्धालु श्री हनुमान जी की पूजा करते हैं। यह शास्त्रविरूद्ध है या अनुकूल।

उत्तर :- कबीर देव ने कहा हे धर्मदास! अर्जुन को काल ब्रह्म ने श्रीमदभगवत् गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में कहा है कि हे अर्जुन! जो व्यक्ति शास्त्रविधि को त्याग कर अपनी इच्छा से मनमाना आचरण (पूजा) करता है। वह न सिद्धि को प्राप्त होता है न परमगति को न सुख को ही (गीता अ.16/मं.23) इस से तेरे लिए कर्तव्य अर्थात् करने योग्य भक्ति कर्म तथा अकर्त्तव्य अर्थात् न करने योग्य जो त्यागने योग्य कर्म हैं उनकी व्यवस्था में शास्त्र में लिखा उल्लेख ही प्रमाण है। ऐसा जानकर तू शास्त्रविधि से नियत भक्ति कर्म अर्थात् साधना ही करने योग्य है। (गीता अ.16/ श्लोक 24)

हे धर्मदास जी! गीता अध्याय 7 श्लोक 12 से 15 व 20 से 23 तथा गीता अध्याय 9 श्लोक 20 से 23 तथा 25 में गीता ज्ञान दाता काल ब्रह्म ने तीनों देवताओं (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) की पूजा करना भी व्यर्थ कहा है, भूतों की पूजा, पित्तरों की पूजा व अन्य सर्व देवताओं की पूजा को भी अविधिपूर्वक (शास्त्रविधि विरूद्ध) बताया है। हनुमान तो रामभक्त थे। वे स्वयं भी भक्ति करते थे तथा अन्य को भी राम की भक्ति करने को ही कहते थे। यदि कोई भक्त दूसरे भक्त की पूजा करता है तो वह शास्त्रविधि विरूद्ध होने से व्यर्थ है। त्रेता युग में मैंने हनुमान को भी शरण में लिया था।

''पूर्ण परमात्मा कबीर जी का द्वापर युग में प्रकट होना''

प्रश्न 54 :- हे परमेश्वर! अपने दास धर्मदास पर कृपा करके द्वापर युग में प्रकट होने की कथा सुनाऐं जिस से तत्त्वज्ञान प्राप्त हो?

उत्तर :- कबीर परमेश्वर (कबिर्देव) ने कहा हे धर्मदास! द्वापर युग में भी मैं रामनगर नामक नगरी में एक सरोवर में कमल के फूल पर शिशु रूप में प्रकट हुआ। एक निःसन्तान वाल्मिकी (कालू तथा गोदावरी) दम्पति अपने घर ले गया। एक ऋषि से मेरा नामकरण करवाया। उसने भगवान विष्णु की कृपा से प्राप्त होने के आधार से मेरा नाम करूणामय रखा। मैंने 25 दिन तक कोई आहार नहीं किया मेरी पालक माता अति दुःखी हुई। पिता जी भी कई साधु सन्तों के पास गए मेरे ऊपर झाड़-फूंक भी कराई। वे विष्णु के पुजारी थे। उनको अति दुःखी देखकर मैंने विष्णु को प्रेरणा दी। विष्णु भगवान एक ऋषि रूप में वहाँ आए तथा पिता कालू से कुशल मंगल पूछा। पिता कालू तथा माता गोदावरी (कलयुग में सम्मन तथा नेकी रूप में दिल्ली में जन्में थे)

ने अपना दुःख ऋषि जी को बताया कि हमें वृद्ध अवस्था में एक पुत्र रत्न भगवान विष्णु की कृपा से सरोवर में कमल के फूल पर प्राप्त हुआ है। यह बच्चा 25 दिन से भूखा है कुछ भी नहीं खाया है। अब इसका अन्त निकट है। परमात्मा विष्णु ने हमें अपार खुशी प्रदान की है। अब उसे छीन रहे हैं। हम प्रार्थना करते हैं कि हे विष्णु भगवान यह खिलौना दे कर मत छीनों। हम अपराधियों से ऐसा क्या अपराध हो गया? इस बच्चे में हमारा इतना मोह हो गया है कि यदि इसकी मृत्यु हो गई तो हम दोनों उसी सरोवर में डूब कर मरेंगे जहाँ पर यह बालक रत्न हमें मिला था।

हे धर्मदास! ऋषि रूप में उपस्थित विष्णु भगवान ने मेरी ओर देखा। मैं पालने में झूल रहा था। मेरे अति स्वस्थ शरीर को देखकर विष्णु भगवान आश्चर्य चकित हुए तथा बोले हे कालू भक्त! यह बच्चा तो पूर्ण रूप से स्वस्थ है। आप कह रहे हो यह कुछ भी आहार नहीं करता। यह बालक तो ऐसा स्वस्थ है जैसे एक सेर दूध प्रतिदिन पीता हो। यह नहीं मरने वाला। इतना कह कर विष्णु मेरे पास आया। मैंने विष्णु से बात की तथा कहा हे विष्णु भगवान! आप मेरे माता पिता से कहो एक कुँवारी गाय लाऐं उस गाय को आप आशीर्वाद देना व कंवारी गाय दूध देने लगेगी उस गाय का दूध मैं पीऊंगा। मेरे द्वारा अपना परिचय जान कर विष्णु भगवान समझ गए यह कोई सिद्ध आत्मा है जिसने मुझे पहचान लिया है। मुझे ऋषि के साथ बातें करते हुए मेरे पालक माता-पिता हैरान रह गए। अन्दर ही अन्दर खुशी की लहर दौड़ गई। ऋषि ने कहा कालू एक कुंवारी गाय लाओ। वह दूध देगी उस दूध को यह होनहार बच्चा पीएगा। कालू पिता तुरन्त एक गाय ले आया। भगवान विष्णु ने मेरी प्रार्थना पर उस कुंवारी गाय की कमर पर हाथ रख दिया।

उसी समय उस गाय की बछिया के थनों से दूध की धार बहने लगी तथा वह तीन सेर का पात्र भरने के पश्चात् रूक गई। वह दूध मैंने पीया।

मेरी तथा विष्णु जी की वार्ता की भाषा को कालू व गोदावरी समझ नही सके। वे मुझ पच्चीस दिन के बालक को बोलते देखकर उस ऋषि रूप विष्णु का ही चमत्कार मान रहे थे तथा कुंवारी गाय द्वारा दूध देना भी उस ऋषि की कृपा जानकर दोनों ऋषि के चरणों में लिपट गए। मेरी पालक माता ने मुझे पालने से उठाया तथा उस ऋषि रूप में विराजमान विष्णु के चरणों में डालना चाहा लेकिन मैं जमीन पर नहीं गिरा। माता के हाथों से निकल कर जमीन से चार फुट ऊपर हवा में पालने की तरह स्थित हो गया। जब गोदावरी ने मुझे ऋषि के चरणों की ओर किया भगवान विष्णु तीन कदम पीछे हट गए तथा बोले माई! यह बालक परम शक्ति युक्त है, बड़ा होकर जनता का उपकार करेगा। इतना कह कर ऋषि रूप धारी विष्णु अपने लोक

को चल दिए। मैं पुनः पालने में विराजमान हो गया।

उस वाल्मीकि दम्पति (कालू तथा गोदावरी) ने मेरा हवा में स्थित होना भी ऋषि का ही करिश्मा जाना इस कारण से मुझे कोई अवतारी पुरूष नहीं समझ सके मैं भी यही चाहता था, कि ये मुझे एक साधारण बालक ही समझें जिससे इनकी वृद्ध अवस्था का समय मेरे लालन-पालन में बीत जाए। मैं शिशु काल में ही तत्त्वज्ञान की वाणी उच्चारण करने लगा। उस नगरी में अकाल गिर गया। मेरे माता पिता मुझे लेकर बनारस (काशी) आए तथा वहाँ रहने लगे। कलयुग में कालू का जन्म सम्मन रूप में तथा गोदावरी का जन्म नेकी रूप में दिल्ली में हुआ जो कबीर जी की शरण में आए। उनका एक पुत्र सेऊ (शिव) भी परमात्मा की शरण में आया था।

काशी नगर में एक सुदर्शन नाम का वाल्मीकि जाति का पुण्यात्मा मेरी वाणी सुनकर बहुत प्रभावित हुआ। मैंने सुदर्शन भक्त को सृष्टि रचना सुनाई। सुदर्शन मेरी हम उमर था। उस समय मेरी लीलामय आयु 12 वर्ष थी। जब काशी के विद्वानों से ज्ञान चर्चा होती थी, सुदर्शन भी मेरे साथ जाता था। एक दिन सुदर्शन ने कहा हे करूणामय! आप जो ज्ञान सुनाते हो इसका समर्थन कोई भी ऋषि नहीं करता। आप के ज्ञान पर कैसे विश्वास हो? हे करूणामय! आप ऐसी कृपा करो जिससे मेरा भ्रम दूर हो जाए। हे धर्मदास मैंने उस प्यासी आत्मा सुदर्शन को सत्यलोक के दर्शन कराए आप की तरह उसको भी तीन दिन तक ऊपर के सर्व लोकों में ले गया। सुदर्शन का पंच भौतिक शरीर अचेत हो गया। सुदर्शन भी अपने माता-पिता का इकलौता पुत्र था। अपने इकलौते पुत्र को मृत तुल्य देखकर उसके माता-पिता विलाप करने लगे तथा हमारे घर आकर मेरे मात-पिता से झगड़ा करने लगे। कहा कि तुम्हारे करूण ने हमारे बच्चे को जादू-जन्त्र कर दिया। वह सेवड़ा है। हमारा पुत्र मर गया तो हम आप के विरूद्ध राजा को शिकायत करेगें। मेरे माता-पिता ने मेरे से उन्ही के सामने पूछा हे करूण ! सच बता तूने क्या कर दिया उस सुदर्शन को। मैंने कहा वह सतलोक देखना चाहता था। इसलिए उसे सतलोक दर्शन के लिए भेजा है। शीघ्र ही लौट आएगा। कई वैद्य बुलाएं कई झाड़-फूँक करने वाले बुलाए कोई लाभ नहीं हुआ। तीसरे दिन सुदर्शन के मात-पिता रोते हुए मेरे पास आए बोले बेटा करूण! हमारे पुत्र को ठीक कर दे हम तेरे आगे हाथ जोड़ते हैं। मैंने कहा माई तुम्हारा पुत्र नहीं मरेगा।

मेरे (परमेश्वर कबीर साहेब) को अपने साथ अपने घर ले गए। मेरे माता-पिता भी साथ गए आस-पास के व्यक्ति भी वहाँ उपस्थित थे। मैंने सुदर्शन के शीश को पकड़ कर हिलाया तथा कहा हे सुदर्शन! वापिस आ जा तेरे माता-पिता बहुत व्याकुल हैं। इतना कहते ही सुदर्शन ने आँखें खोली चारों ओर देखा, अपने सिर की ओर मुझे नहीं देख सका। उठ-बैठकर

बोला परमेश्वर करूणामय कहाँ हैं? रोने लगा-कहाँ गए परमेश्वर करूणामय। उपस्थित व्यक्तियों ने पूछा, क्या करूण को ढूँढ़ रहा है? देख यह बैठा तेरे पीछे। मुझे देखते ही चरणों में शीश रख कर विलाप करने लगा तथा रोता हुआ बोला हे काशी के रहने वालों। यह पूर्ण परमात्मा है। यह सर्व सृष्टि रचनहार अपने शहर में विराजमान है। आप इसे नहीं पहचान सके। यह मेरे साथ ऊपर के लोक में गया। ऊपर के लोक में यह पूर्ण परमात्मा के रूप में एक सफेद गुबन्द में विराजमान है। यही दोनों रूपों में लीला कर रहा है। सर्व व्यक्ति कहने लगे इस कालू के पुत्र ने भीखू के पुत्र पर जादू जन्त्र किया है। जिस कारण से इसका दिमाग चल गया है। इस करूण को ही परमात्मा कह रहा है। भला हो भगवान का भीखू का बेटा जीवित हो गया नहीं तो बेचारों का कोई और बूढ़ापे का सहारा भी नहीं था। यह कह कर सर्व अपने-2 घर चले गए।

भीखू तथा उसकी पत्नी सुखी (सुखवन्ती) अपने पुत्र को जीवित देखकर अति प्रसन्न हुए भगवान विष्णु का प्रसाद बनाया पूरे मौहल्ले (कॉलोनी) में प्रसाद बांटा। सुदर्शन ने मुझसे उपदेश लिया। अपने माता-पिता भीखू तथा सुखी को भी मेरे से उपदेश लेने को कहा। दोनों ने बहुत विरोध किया तथा कहा यह कालू का पुत्र पूर्ण परमात्मा नहीं है बेटा! इसने तेरे ऊपर जादू-जन्त्र करके मूर्ख बनाया हुआ है। भगवान विष्णु से बड़ा कोई नहीं है। सुदर्शन ने मुझ से कहा हे प्रभु! कृप्या मुझे अपनी शरण में रखना। मेरे माता-पिता का कोई दोष नहीं है सर्व मानव समाज इसी ज्ञान पर अटका है। जिस पर आपकी कृपा होगी केवल वही आप को जान व मान सकता है। इस काल-ब्रह्म ने तो पूरे विश्व (ब्रह्मा-विष्णु-शिव सहित) को भ्रमित किया हुआ है। हे धर्मदास! सुदर्शन भक्त ने काल के जाल को समझ कर सच्चे मन से मेरी भक्ति की तथा मेरा साक्षी बना कि पूर्ण परमात्मा कोई अन्य है जो ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव से भिन्न तथा अधिक शक्तिशाली है। हे धर्मदास! पाण्डवों की अश्वमेघ यज्ञ को जिस सुदर्शन द्वारा सम्पूर्ण की गई आप सुनते हो यह वही सुदर्शन वाल्मीकि मेरा शिष्य था। द्वापर युग में मैं 404 वर्ष तक करूणामय शरीर में लीला करता रहा तथा सशरीर सतलोक चला गया।

प्रश्न 55 :- धर्मदास ने प्रश्न किया हे प्रभु आपकी कृपा द्वापर युग में और किस पुण्यात्मा पर हुई?

उत्तर :- कबीर परमेश्वर (कविर्देव) ने कहा द्वापर युग में एक चन्द्रविजय नामक राजा की रानी इन्द्रमती को पार किया तथा राजा चन्द्रविजय पर भी कृपा की। परमेश्वर कबीर जी द्वारा बताई ''रानी इन्द्रमती को पार करने वाली कथा'' लेखक (संत रामपाल दास जी महाराज) के शब्दों में :-

"द्वापर युग में इन्द्रमती को शरण में लेना"

द्वापरयुग में चन्द्रविजय नाम का एक राजा था। उसकी पत्नी इन्द्रमती बहुत ही धार्मिक प्रवृति की औरत थी। संत-महात्माओं का बहुत आदर किया करती थी। उसने एक गुरुदेव भी बना रखा था। उनके गुरुदेव ने बताया था कि बेटी साधु-संतों की सेवा करनी चाहिए। संतों को भोजन खिलाने से बहुत लाभ होता है। एकादशी का व्रत, मन्त्र के जाप आदि साधनायें जो गुरुदेव ने बताई थी। उस भगवत् भक्ति में रानी बहुत दृढ़ता से लगी हुई थी। गुरुदेव ने बताया था कि संतों को भोजन खिलाया करेगी तो तू आगे भी रानी बन जाएगी और तुझे स्वर्ग प्राप्ति होगी। रानी ने सोचा कि प्रतिदिन एक संत को भोजन अवश्य खिलाया करूँगी। उसने यह प्रतिज्ञा मन में ठान ली कि मैं खाना बाद में खाया करूँगी, पहले संत को खिलाया करूँगी। इससे मुझे याद बनी रहेगी, कहीं मुझे भूल न पड़ जाये। रानी प्रतिदिन पहले एक संत को भोजन खिलाती फिर स्वयं खाती। वर्षों तक ये क्रम चलता रहा।

एक समय हरिद्वार में कुम्भ के मेले का संयोग हुआ। जितने भी त्रिगुण माया के उपासक संत थे सभी गंगा में स्नान के लिए (प्रभी लेने के लिए) प्रस्थान कर गये। इस कारण से कई दिन रानी को भोजन कराने के लिए कोई संत नहीं मिला। रानी इन्द्रमती ने स्वयं भी भोजन नहीं किया। चौथे दिन अपनी बांदी से कहा कि बांदी देख ले कोई संत मिल जाए तो, नहीं तो आज तेरी मालकिन जीवित नहीं रहेगी। चाहे मेरे प्राण निकल जाएँ परन्तु मैं खाना नहीं खाऊँगी। वह दीन दयाल कबीर परमेश्वर अपने पूर्व वाले भक्त को शरण में लेने के लिए न जाने क्या कारण बना देता है? बांदी ने ऊपर अटारी पर चढ़कर देखा कि सामने से सफेद कपड़े पहने एक संत आ रहा था। द्वापर युग में परमेश्वर कबीर करूणामय नाम से आये थे। बांदी नीचे आई और रानी से कहा कि एक व्यक्ति है जो साधु जैसा नजर आता है। रानी ने कहा कि जल्दी से बुला ला। बांदी महल से बाहर गई तथा प्रार्थना की कि साहेब आपको हमारी रानी ने याद किया है। करूणामय साहेब ने कहा कि रानी ने मुझे क्यों याद किया है, मेरा और रानी का क्या सम्बन्ध? नौकरानी ने सारी बात बताई।

करूणामय (कबीर) साहेब ने कहा कि रानी को आवश्यकता पड़े तो यहाँ आ जाए, मैं यहाँ खड़ा हूँ। तू बांदी और वह रानी। मैं वहाँ जाऊँ और यदि वह कह दे कि तुझे किसने बुलाया था या उसका राजा ही कुछ कह दे बेटी संतों का अनादर बहुत पापदायक होता है। बांदी फिर वापिस आई और रानी से सब वार्ता कह सुनाई। तब रानी ने कहा कि बांदी मेरा हाथ पकड़ और चल। जाते ही रानी ने दण्डवत् प्रणाम करके प्रार्थना की कि हे परवरदिगार!

चाहती तो ये हूँ कि आपको कंधे पर बैठा लूं। करूणामय साहेब ने कहा बेटी! मैं यही देखना चाहता था कि तेरे में कोई श्रद्धा भी है या वैसे ही भूखी मर रही है। रानी ने अपने हाथों खाना बनाया। करूणामय रूप में आए कविर्देव ने कहा कि मैं खाना नहीं खाता। मेरा शरीर खाना खाने का नहीं है। तो रानी ने कहा कि मैं भी खाना नहीं खाऊँगी। करूणामय साहेब जी ने कहा कि ठीक है बेटी लाओ खाना खाते हैं, क्योंकि समर्थ उसी को कहते हैं जो, जो चाहे, सो करे। करूणामय साहेब ने खाना खा लिया, फिर रानी से पूछा कि जो यह तू साधना कर रही है यह तेरे को किसने बताई है? रानी ने कहा कि मेरे गुरुदेव ने आदेश दिया है? कबीर साहेब ने पूछा क्या आदेश दिया है तेरे गुरुदेव ने? इन्द्रमती ने कहा कि विष्णु-महेश की पूजा, एकादशी का व्रत, तीर्थ भ्रमण, देवी पूजा, श्राद्ध निकालना, मन्दिर में जाना, संतों की सेवा करना। करूणामय (कबीर) साहेब ने कहा कि जो साधना तेरे गुरुदेव ने दी है तेरे को जन्म और मृत्यु तथा स्वर्ग-नरक व चौरासी लाख योनियों के कष्ट से मुक्ति प्रदान नहीं करा सकती। रानी ने कहा कि महाराज जी जितने भी संत हैं, अपनी-अपनी प्रभुता आप ही बनाने आते हैं। मेरे गुरुदेव के बारे में कुछ नहीं कहोगे। मैं चाहे मुक्त होऊँ या न होऊँ।

करूणामय (कबीर) साहेब ने सोचा कि इस भोले जीव को कैसे समझाऐं? इन्होंने जो पूंछ पकड़ ली उसको छोड़ नहीं सकते, मर सकते हैं। करूणामय साहेब ने कहा कि बेटी वैसे तो तेरी इच्छा है, मैं निंदा नहीं कर रहा। क्या मैंने आपके गुरुदेव को गाली दी है या कोई बुरा कहा है? मैं तो भक्तिमार्ग बता रहा हूँ कि यह भक्ति शास्त्र विरूद्ध है। तुझे पार नहीं होने देगी और न ही तेरा कोई आने वाला कर्म दण्ड कटेगा और सुन ले आज से तीसरे दिन तेरी मृत्यु हो जाएगी। न तेरा गुरु बचा सकेगा और न तेरी यह नकली साधना बचा सकेगी। (जब मरने की बारी आती है फिर जीव को डर लगता है। वैसे तो नहीं मानता) रानी ने सोचा कि संत झूठ नहीं बोलते। कहीं ऐसा न हो कि मैं तीसरे दिन ही मर जाऊँ। इस डर से करूणामय साहेब से पूछा कि साहेब क्या मेरी जान बच सकती है? कबीर साहेब (करूणामय) ने कहा कि बच सकती है। अगर तू मेरे से उपदेश लेगी, मेरी शिष्या बनेगी, पिछली पूजाएँ त्यागेगी, तब तेरी जान बचेगी। इन्द्रमती ने कहा मैंने सुना है कि गुरुदेव नहीं बदलना चाहिए, पाप लगता है।

कबीर साहेब (करूणामय) ने कहा कि नहीं पुत्री यह भी तेरा भ्रम है। एक वैद्य (डाक्टर) से औषधि न लगे तो क्या दूसरे से नहीं लेते? एक पाँचवीं कक्षा का अध्यापक होता है। फिर एक उच्च कक्षा का अध्यापक होता है। बेटी अगली कक्षा में जाना होगा। क्या सारी उम्र पाँचवीं कक्षा में ही लगी रहेगी? इसको छोड़ना पड़ेगा। तू अब आगे की पढ़ाई पढ़, मैं पढ़ाने आया हूँ। वैसे

तो नहीं मानती परन्तु मृत्यु दिखने लगी कि संत कह रहा है तो कहीं बात न बिगड़ जाए। ऐसा विचार करके इन्द्रमती ने कहा कि जैसे आप कहोगे मैं वैसे ही करूँगी। करूणामय (कबीर) साहेब ने उपदेश दिया। कहा कि तीसरे दिन मेरे रूप में काल आयेगा, तू उससे बोलना मत। जो मैंने नाम दिया है दो मिनट तक इसका जाप करना। दो मिनट के बाद उसको देखना है। उसके बाद सत्कार करना है। वैसे तो गुरुदेव आए तो अति शीघ्र चरणों में गिर जाना चाहिए। ये मेरा केवल इस बार आदेश है। रानी ने कहा ठीक है जी।

रानी को तो चिंता बनी हुई थी। श्रद्धा से जाप कर रही थी। (कबीर साहेब) करूणामय साहेब का रूप बना कर गुरुदेव रूप में काल आया, आवाज लगाई इन्द्रमती, इन्द्रमती। उसको तो पहले ही डर था, स्मरण करती रही। काल की तरफ नहीं देखा। दो मिनट के बाद जब देखा तो काल का स्वरूप बदल गया। काल का ज्यों का त्यों चेहरा दिखाई देने लगा। करूणामय साहेब का स्वरूप नहीं रहा। जब काल ने देखा कि तेरा तो स्वरूप बदल गया। वह जान गया कि इसके पास कोई शक्ति युक्त मंत्र है। यह कहकर चला गया कि तुझे फिर देखूँगा। अब तो बच गई। रानी बहुत खुश हुई, फूली नहीं समाई। कभी अपनी बांदियों को कहने लगी कि मेरी मृत्यु होनी थी, मेरे गुरुदेव ने मुझे बचा दिया। राजा के पास गई तथा कहा कि आज मेरी मृत्यु होनी थी, मेरे गुरुदेव ने रक्षा कर दी। मुझे लेने के लिए काल आया था। राजा ने कहा कि तू ऐसे ही ड्रामें करती रहती है, काल आता तो क्या तुझे छोड़ जाता? ये संत वैसे बहका देते हैं। अब इस बात को वह कैसे माने? खुशी-खुशी में रानी लेट गई। कुछ देर के बाद सर्प बनकर काल फिर आया और रानी को डस लिया। ज्यों ही सर्प ने डसा रानी को पता चल गया। रानी जोर से चिल्लाई। मुझे साँप ने डंस लिया। नौकर भागे। देखते ही देखते एक मोरी (पानी निकलने का छोटा छिद्र) में से वह सर्प घर से बाहर निकल गया। अपने गुरुदेव को पुकार कर रानी बेहोश हो गई।

करूणामय (कबीर) साहेब वहाँ प्रकट हो गए। लोगों को दिखाने के लिए मंत्र बोला और (वे तो बिना मंत्र भी जीवित कर सकते हैं, किसी जंत्र-मंत्र की आवश्यकता नहीं) इन्द्रमती को जीवित कर दिया। रानी ने बड़ा शुक्र मनाया कि हे बंदी छोड़! यदि आज आपकी शरण में नहीं होती तो मेरी मृत्यु हो जाती। साहेब ने कहा कि इन्द्रमती इस काल को मैं तेरे घर में घुसने भी नहीं देता और यह तेरे ऊपर यह हमला भी नहीं करता। परन्तु तुझे विश्वास नहीं होता। तू यह सोचती कि मेरे ऊपर कोई आपत्ति नहीं आनी थी। गुरुजी ने मुझे बहका कर नाम दे दिया। इसलिए तेरे को थोड़ा-सा झटका दिखाया है, नहीं तो बेटी तेरे को विश्वास नहीं होता।

धर्मदास यहाँ घना अंधेरा, बिन परचय (शक्ति प्रदर्शन) जीव जम का चेरा।।

कबीर साहेब (करूणामय) ने कहा कि अब जब मैं चाहूँगा, तब तेरी मृत्यु होगी।

गरीबदास जी कहते हैं कि :-

गरीब, काल डरै करतार से, जय जय जय जगदीश।
जौरा जौरी झाड़ती, पग रज डारे शीश।।

यह काल, कबीर परमेश्वर से डरता है और यह मौत कबीर साहेब के जूते झाड़ती है अर्थात् नौकर तुल्य है। फिर उस धूल को अपने सिर पर लगाती है कि आप जिसको मारने का आदेश दोगे उसके पास जाऊँगी, नहीं मैं नहीं जाऊँगी।

गरीब, काल जो पीसै पीसना, जौरा है पनिहार।
ये दो असल मजूर हैं, मेरे साहेब के दरबार।।

यह काल जो यहाँ का 21 ब्रह्मण्ड का भगवान (ब्रह्म) है जो ब्रह्मा, विष्णु, महेश का पिता है। ये तो मेरे कबीर साहेब का आटा पीसता है अर्थात पक्का नौकर है और जौरा (मौत) मेरे कबीर साहेब का पानी भरती है अर्थात् एक विशेष नौकरानी है। यह दो असल मजूर मेरे साहेब के दरबार में हैं।

कुछ दिनों के बाद करूणामय (कबीर जी) साहेब फिर आए। रानी इन्द्रमती को सतनाम प्रदान किया। फिर कुछ समय के उपरान्त करूणामय साहेब ने रानी इन्द्रमती की अति श्रद्धा देखकर सारनाम दिया। परम पद की उपलब्धि करवाई। परमेश्वर करूणामय रूप से रानी के घर दर्शन देने जाते रहते थे तो इन्द्रमती प्रार्थना किया करती थी कि मेरे पति राजा को समझाओ मालिक, यह भी मान जाये। आपके चरणों में आ जाये तो मेरा जीवन सफल हो जाये। चन्द्रविजय से कबीर साहेब ने प्रार्थना की कि चन्द्रविजय आप भी नाम लो, यह दो दिन का राज और ठाठ है। फिर चौरासी लाख योनियों में प्राणी चला जाएगा। चन्द्रविजय ने कहा कि भगवन मैं तो नाम लूं नहीं और आपकी शिष्या को मना करूँ नहीं, चाहे सारे खजाने को ही दान करो, चाहे किसी प्रकार का सत्संग करवाओ, मैं मना नहीं करूँगा। कबीर साहेब (करूणामय) ने पूछा आप नाम क्यों नहीं लोगे? चन्द्रविजय राजा ने कहा कि मैंने तो बड़े-बड़े राजाओं की पार्टियों में जाना पड़ता है। करूणामय (कबीर साहेब) ने कहा कि पार्टियों में जाने में नाम क्या बाधा करेगा? सभा में जाओ, वहाँ काजू खाओ, दूध पी लो, शरबत (जूस) पी लो, शराब मत प्रयोग करो। शराब पीना महापाप है। परन्तु राजा नहीं माना।

रानी की प्रार्थना पर करूणामय (कबीर) साहेब ने राजा को फिर समझाया कि नाम के बिना ये जीवन ऐसे ही व्यर्थ हो जायेगा। आप नाम ले लो। राजा ने फिर कहा कि गुरू जी मुझे नाम के लिए मत कहना। आपकी शिष्या को मैं मना नहीं करूँगा। चाहे कितना दान करे, कितना सत्संग करवाए। साहेब ने कहा कि बेटी इस दो दिन के झूठे सुख को देखकर इसकी बुद्धि भ्रष्ट

हो चुकी है। तू प्रभु के चरणों में लगी रह। अपना आत्मकल्याण करवा। मृत्यु के उपरान्त कोई किसी का पति नहीं, कोई किसी की पत्नी नहीं। दो दिन का सम्बन्ध है। अपना कर्म बना बेटी। जब इन्द्रमती 80 वर्ष की वृद्धा हुई (कहाँ 40 साल की उम्र में मर जाना था)। जब शरीर भी हिलने लगा, तब करूणामय साहेब बोले अब बोल इन्द्रमती क्या चाहती है? चलना चाहती है सतलोक? इन्द्रमती ने कहा कि प्रभु तैयार हूँ, बिल्कुल तैयार हूँ दाता! करूणामय साहेब ने कहा कि तेरी पोते या पोती या किसी अन्य सदस्य में कोई ममता तो नहीं है? रानी ने कहा बिल्कुल नहीं साहेब। आपने ज्ञान ही ऐसा निर्मल दे दिया। इस गंदे लोक की क्या इच्छा करूँ? कबीर साहेब (करूणामय) जी ने कहा कि चल बेटी। रानी प्राण त्याग गई।

परमेश्वर कबीर जी (करूणामय) रानी इन्द्रमती की आत्मा को ऊपर ले गए। इसी ब्रह्मण्ड में एक मानसरोवर है। उस मान सरोवर में इस आत्मा को स्नान कराना होता है। इन्द्रमती को वहाँ पर कुछ समय तक रखा। करूणामय रूप में कबीर परमेश्वर जी ने रानी से पूछा की तेरी कुछ इच्छा तो नहीं यदि इच्छा रही तो दुबारा जन्म लेना पड़ेगा। यदि मन में सन्तान व सम्पत्ति या पति, पत्नी आदि की इच्छा थोड़ी सी भी रह गई तो आत्मा सतलोक नहीं जा सकती। इन्द्रमती ने कहा साहेब आप तो अंतर्यामी हो, कोई इच्छा नहीं है। आपके चरणों की इच्छा है। लेकिन एक मन में शंका बनी हुई है कि मेरा जो पति था, उसने मुझे किसी भी धार्मिक कर्म के लिए कभी मना नहीं किया। नहीं तो आजकल के पति अपनी पत्नियों को बाधा कर देते हैं। यदि वह मुझे मना कर देता तो मैं आपके चरणों में नहीं लग पाती। मेरा कल्याण नहीं होता। उसका इस शुभ कर्म में सहयोग का कुछ लाभ मिलता हो तो कभी उस पर भी दया करना दाता। करूणामय जी ने देखा कि यह नादान इसके पीछे फिर अटक गई। साहेब बोले ठीक है बेटी, अभी तू दो चार वर्ष यहाँ रह।

अब दो वर्ष के बाद राजा भी मरने लगा। क्योंकि नाम ले नहीं रखा था। यम के दूत आए। राजा चौक में चक्कर खाकर गिर गया। यम के दूतों ने उसकी गर्दन को दबाया। राजा की टट्टी और पेशाब निकल गया। करूणामय (कबीर) परमेश्वर ने रानी को कहा कि देख तेरे राजा की क्या हालत हो रही है? वहाँ से कबीर परमेश्वर दिखा रहे हैं। तब रानी ने कहा कि देख लो दाता यदि उसका भक्ति में सहयोग का कोई फल बनता हो तो दया कर लो। रानी को फिर भी थोड़ी-सी ममता बनी थी। परमेश्वर कबीर (करूणामय) ने सोचा की यह फिर काल जाल में फँसेगी। यह सोचकर मानसरोवर से वहाँ गए जहाँ राजा चन्द्रविजय अपने महल में अचेत पड़ा था। यमदूत उसके प्राण निकाल रहे थे। कबीर परमेश्वर जी के आते ही यमदूत ऐसे आकाश

में उड़ गए जैसे मुर्दे से गिद्ध उड़ जाते हैं। चन्द्रविजय होश में आ गया। सामने करूणामय रूप में परमेश्वर कबीर जी खड़े थे। केवल चन्द्रविजय को दिखाई दे रहे थे, किसी अन्य को दिखाई नहीं दे रहे थे। चन्द्रविजय चरणों में गिर कर याचना करने लगा मुझे क्षमा कर दो दाता, मेरी जान बचाओ। क्योंकि उसने देखा कि तेरी जान जाने वाली है। (जब इस जीव की आँख खुलती है कि अब तो बात बिगड़ गई) राजा चन्द्र विजय गिड़गिड़ाता हुआ बोला मुझे क्षमा कर दो दाता, मेरी जान बचा लो मालिक। कबीर परमेश्वर ने कहा राजा आज भी वही बात है, उस दिन भी वही बात थी, नाम लेना होगा। राजा ने कहा मैं नाम ले लूँगा जी, अभी ले लूँगा नाम। कबीर परमेश्वर ने नाम उपदेश दिया तथा कहा कि अब मैं तुझे दो वर्ष की आयु दूँगा, यदि इसमें एक स्वांस भी खाली चला गया तो फिर कर्मदण्ड रह जाएगा।

कबीर, जीवन तो थोड़ा भला, जै सत सुमरण हो।
लाख वर्ष का जीवना, लेखे धरे ना को।।

शुभ कर्म में सहयोग दिया हुआ पिछला कर्म और साथ में श्रद्धा से दो वर्ष के स्मरण से तथा तीनों नाम प्रदान करके कबीर साहेब चन्द्रविजय को भी पार कर ले गये। बोलो सतगुरु देव की जय ''जय बन्दी छोड़।''

प्रश्न 56 :- धर्मदास जी ने कहा हे कबीर परमेश्वर! हमारे को तो ब्राह्मणों (विद्वानों) ने यही बताया था कि पाण्डवों की अश्वमेघ यज्ञ को श्री कृष्ण भक्त सुदर्शन सुपच ने सफल की थी तथा भगवान कृष्ण जी ने गीता में कहा है कि अर्जुन! युद्ध कर तुझे कोई पाप नहीं लगेगा। ये सर्व योद्धा मेरे द्वारा पहले से मार दिए गए हैं। तू निमित्त मात्र बन जा। यदि तू युद्ध में मारा गया तो स्वर्ग जाएगा, यदि युद्ध में जीत गया तो पृथ्वी के राज्य का सुख भोगेगा।

उत्तर :- कबीर परमेश्वर ने कहा धर्मदास! सुदर्शन सुपच श्री कृष्ण भक्त नहीं था वह पूर्ण ब्रह्म का उपासक था। सुन पाण्डवों के यज्ञ के सम्पूर्ण होने की कथा। कृप्या निम्न पढ़ें पाठक जन परमेश्वर कबीर जी द्वारा बताया पाण्डव यज्ञ का प्रकरण जो धर्मदास जी ने स्वसम वेद के पद्य भाग में लिखा है। (लेखक के शब्दों में निम्न :-)

।। पाण्डवों की यज्ञ में सुपच सुदर्शन द्वारा शंख बजाना।।

जैसा कि सर्व विदित है कि महाभारत के युद्ध में अर्जुन ने युद्ध करने से मना कर दिया था तथा शस्त्र त्याग कर युद्ध के मैदान में दोनों सेनाओं के बीच में खड़े रथ के पिछले हिस्से में आंखों से आँसू बहाता हुआ बैठ गया था। तब भगवान कृष्ण के अन्दर प्रवेश काल शक्ति (ब्रह्म) अर्जुन को युद्ध करने की राय देने लगा था। तब अर्जुन ने कहा था कि भगवान यह घोर पाप मैं नहीं करूंगा। इससे अच्छा तो भिक्षा का अन्न भी खा कर गुजारा कर

लेंगे। तब भगवान काल श्री कृष्ण जी के शरीर में प्रवेश करके बोला था कि अर्जुन युद्ध कर। तुझे कोई पाप नहीं लगेगा। देखें गीता जी के अध्याय 11 के श्लोक 33, अध्याय 2 के श्लोक 37, 38 में।

महाभारत में लेख (प्रकरण) आता है कि कृष्ण जी के कहने से अर्जुन ने युद्ध करना स्वीकार कर लिया। घमासान युद्ध हुआ। करोड़ों व्यक्ति व सर्व कौरव युद्ध में मारे गए और पाण्डव विजयी हुए। तब पाण्डव प्रमुख युधिष्ठिर को राज्य सिंहासन पर बैठाने के लिए स्वयं भगवान कृष्ण ने कहा तो युधिष्ठिर ने यह कहते हुए गद्दी पर बैठने से मना कर दिया कि मैं ऐसे पाप युक्त राज्य को नहीं करूंगा। जिसमें करोड़ों व्यक्ति मारे गए थे। उनकी पत्नियाँ विधवा हो गई, करोड़ों बच्चे अनाथ हो गए, अभी तक उनके आँसू भी नहीं सूखे हैं। किसी प्रकार भी बात बनती न देख कर श्री कृष्ण जी ने कहा कि आप भीष्म जी से राय लो। क्योंकि जब व्यक्ति स्वयं फैसला लेने में असफल रहे तब किसी स्वजन से विचार कर लेना चाहिए। युधिष्ठिर ने यह बात स्वीकार कर ली। तब श्री कृष्ण जी युधिष्ठिर को साथ लेकर वहाँ पहुँचे जहाँ पर श्री भीष्म शर (तीरों की) शैय्या (चारपाई) पर अंतिम स्वांस गिन रहे थे, वहाँ जा कर श्री कृष्ण जी ने भीष्म से कहा कि युधिष्ठिर राज्य गद्दी पर बैठने से मना कर रहे हैं। कृपा आप इन्हें राजनीति की शिक्षा दें।

भीष्म जी ने बहुत समझाया परंतु युधिष्ठिर अपने उद्देश्य से विचलित नहीं हुआ। यही कहता रहा कि इस पाप से युक्त रूधिर से सने राज्य को भोग कर मैं नरक प्राप्ति नहीं चाहूँगा। श्री कृष्ण जी ने कहा कि आप एक धर्म यज्ञ करो। जिससे आपको युद्ध में हुई हत्याओं का पाप नहीं लगेगा। इस बात पर युधिष्ठिर सहमत हो गया और एक धर्म यज्ञ की। फिर राज गद्दी पर बैठ गया। हस्तिनापुर का राजा बन गया।

प्रमाण सुखसागर के पहले स्कन्ध के आठवें तथा नौवें अध्याय से सहाभार पृष्ठ नं. 48 से 53)

कुछ वर्षो पर्यन्त युधिष्ठिर को भयानक स्वपन आने शुरु हो गए। जैसे बहुत सी औरतें रोती-बिलखती हुई अपनी चूड़ियाँ तोड़ रहीं हैं तथा उनके मासूम बच्चे अपनी माँ के पास खड़े कुछ बैठे पिता-पिता कह कर रो रहे हैं मानों कह रहे हो हे राजन्! हमें भी मरवा दे, भेज दे हमारे पिता के पास। कई बार बिना शीश के धड़ दिखाई देते है। किसी की गर्दन कहीं पड़ी है, धड़ कहीं पड़ा है, हा-हा कार मची हुई है। युधिष्ठिर की नींद उचट जाती, घबरा कर बिस्तर पर बैठ कर हाँफने लग जाता। सारी-2 रात बैठ कर या महल में घूम कर व्यतीत करता है। एक दिन द्रौपदी ने बड़े पति की यह दशा देखी और परेशानी का कारण पूछा तो युधिष्ठिर कुछ नहीं- कुछ नहीं कह कर टाल गए। जब द्रौपदी ने कई रात्रियों में युधिष्ठिर की यह दुर्दशा

देखी तो एक दिन चारों (अर्जुन, भीम, नकुल, सहदेव) को बताया कि आपका बड़ा भाई बहुत परेशान है। कारण पूछो। तब चारों भाईयों ने बड़े भईया से प्रार्थना करके पूछा कि कृप्या परेशानी का कारण बताओ। ज्यादा आग्रह करने पर अपनी सर्व कहानी सुनाई। पाँचों भाई इस परेशानी का कारण जानने के लिए भगवान श्रीकृष्णजी के पास गए तथा बताया कि बड़े भईया युधिष्ठिर जी को भयानक स्वपन आ रहे हैं। जिनके कारण उनकी रात्रि की नींद व दिन का चैन व भूख समाप्त हो गई। कृप्या कारण व समाधान बताएँ। सारी बात सुनकर श्री कृष्ण जी बोले युद्ध में किए हुए पाप परेशान कर रहे हैं। इन पापों का निवारण यज्ञ से होता है।

गीता जी के अध्याय 3 के श्लोक 13 का हिन्दी अनुवाद : यज्ञ में प्रतिष्ठित ईष्ट (पूर्ण परमात्मा) को भोग लगाने के बाद बने प्रसाद को खाने वाले श्रेष्ठ पुरुष सब पापों से मुक्त हो जाते हैं जो पापी लोग अपना शरीर पोषण करने के लिये ही अन्न पकाते हैं वे तो पाप को ही खाते हैं अर्थात् यज्ञ करके सर्व पापों से मुक्त हो जाते हैं। और कोई चारा न देख कर पाण्डवों ने श्री कृष्ण जी की सलाह स्वीकार कर ली। यज्ञ की तैयारी की गई। सर्व पृथ्वी के मानव, ऋषि, सिद्ध, साधु व स्वर्ग लोक के देव भी आमन्त्रित करने को, श्री कृष्ण जी ने कहा कि जितने अधिक व्यक्ति भोजन पाएंगें उतना ही अधिक पुण्य होगा। परंतु संतों व भक्तों से विशेष लाभ होता है उनमें भी कोई परम शक्ति युक्त संत होगा वह पूर्ण लाभ दे सकता है तथा यज्ञ पूर्ण होने का साक्षी एक पांच मुख वाला (पंचजन्य) शंख एक सुसज्जित ऊँचे आसन पर रख दिया जाएगा तथा जब इस यज्ञ में कोई परम शक्ति युक्त संत भोजन खाएगा तो यह शंख स्वयं आवाज करेगा। इतनी गूँज होगी की पूरी पृथ्वी पर तथा स्वर्ग लोक तक आवाज सुनाई देगी।

यज्ञ की तैयारी हुई। निश्चित दिन को सर्व आदरणीय आमन्त्रित भक्तगण, अठासी हजार ऋषि, तेतीस करोड़ देवता, नौ नाथ, चौरासी सिद्ध, ब्रह्मा, विष्णु, शिव आदि पहुँच गए। यज्ञ कार्य शुरु हुआ। बाद में सब ने यज्ञ का बचा प्रसाद (भण्डारा) सर्व उपस्थित महानुभावों व भक्तों तथा जनसाधारण को बरताया (खिलाया)। स्वयं भगवान कृष्ण जी ने भी भोजन खा लिया। परंतु शंख नहीं बजा। शंख नहीं बजा तो यज्ञ सम्पूर्ण नहीं हुई। उस समय युधिष्ठिर ने श्री कृष्ण जी से पूछा - हे मधुसूदन! शंख नहीं बजा। सर्व महापुरुषों व आगन्तुकों ने भोजन पा लिया। कारण क्या है? श्री कृष्ण जी ने कहा कि इनमें कोई पूर्ण सन्त (सतनाम व सारनाम उपासक) नहीं है। तब युधिष्ठिर को बड़ा आश्चर्य हुआ कि इतने महा मण्डलेश्वर जिसमें वशिष्ठ मुनि, मार्कण्डेय, लोमष ऋषि, नौ नाथ (गोरखनाथ जैसे), चौरासी सिद्ध आदि-2 व स्वयं भगवान श्री कृष्ण जी ने भी भोजन खा लिया। परंतु शंख नहीं बजा। इस पर कृष्ण

जी ने कहा ये सर्व मान बड़ाई के भूखे हैं। परमात्मा चाहने वाला कोई नहीं तथा अपनी मनमुखी साधना करके सिद्धि दिखा कर दुनियाँ को आकर्षित करते हैं। भोले लोग इनकी वाह-2 करते हैं तथा इनके इर्द-गिर्द मण्डराते हैं। ये स्वयं भी पशु जूनी में जाएंगे तथा अपने अनुयाईयों को नरक ले जाएंगे।

गरीब, साहिब के दरबार में, गाहक कोटि अनन्त।
चार चीज चाहै हैं, रिद्धि सिद्धि मान महंत।।
गरीब, ब्रह्म रन्द्र के घाट को, खोलत है कोई एक।
द्वारे से फिर जाते हैं, ऐसे बहुत अनेक।।
गरीब, बीजक की बातां कहैं, बीजक नाहीं हाथ।
पृथ्वी डोबन उतरे, कह–कह मीठी बात।।
गरीब, बीजक की बातां कहैं, बीजक नाहीं पास।
ओरों को प्रमोदही, अपन चले निरास।।

।।प्रमाण के लिए गीता जी के कुछ श्लोक।।

अध्याय 9 का श्लोक 20

त्रैविद्याः, माम्, सोमपाः, पूतपापाः, पूतपापाः, यज्ञैः, इष्टवा, स्वर्गतिम्, प्रार्थयन्ते,
ते, पुण्यम्, आसाद्य, सुरेन्द्रलोकम्, अश्नन्ति, दिव्यान्, दिवि, देवभोगान्।।20।।

अनुवाद :– (त्रैविद्याः) तीनों वेदों में विधान (सोमपाः) सोमरस को पीने वाले (पूतपापाः) पाप रहित पुरुष (माम्) मुझको (यज्ञैः) यज्ञोंके द्वारा (इष्टवा) पूज्य देव के रूप में पूज कर (स्वर्गतिम्) स्वर्ग की प्राप्ति (प्रार्थयन्ते) चाहते हैं (ते) वे पुरुष (पुण्यम्) अपने पुण्यों के फलरूप (सुरेन्द्रलोकम्) स्वर्ग लोक को (आसाद्य) प्राप्त होकर (दिवि) स्वर्ग में (दिव्यान्) दिव्य (देवभोगान्) देवताओं के भोगों को (अश्नन्ति) भोगते हैं।

केवल हिन्दी अनुवाद : तीनों वेदों में विधान सोम रस को पीने वाले पाप रहित पुरुष मुझको यज्ञों के द्वारा पूज्य देव के रूप में पूज कर स्वर्ग की प्राप्ति चाहते हैं। वे पुरुष अपने पुण्यों के फलरूप स्वर्ग लोक को प्राप्त होकर स्वर्ग में दिव्य देवताओं के भोगों को भोगते हैं।

अध्याय 9 का श्लोक 21

ते, तम्, भुक्त्वा, स्वर्गलोकम्, विशालम्, क्षीणे, पुण्ये, मर्त्यलोकम्, विशन्ति,
एवम्, त्रयीधर्मम्, अनुप्रपन्नाः, गतागतम्, कामकामाः, लभन्ते।।21।।

अनुवाद :– (ते) वे (तम्) उस (विशालम्) विशाल (स्वर्गलोकम्) स्वर्गलोकको (भुक्त्वा) भोगकर (पुण्ये) पुण्य (क्षीणे) क्षीण होनेपर (मर्त्यलोकम्) मृत्युलोकको (विशन्ति) प्राप्त होते हैं। (एवम्) इस प्रकार (त्रयीधर्मम्) तीनों वेदों में कहे हुए पूजा कर्मों का (अनुप्रपन्नाः) आश्रय लेने वाले और (कामकामाः) भोगों की कामनावस (गतागतम्) बार–बार आवागमन को (लभन्ते) प्राप्त होते हैं।

केवल हिन्दी अनुवाद : वे उस विशाल स्वर्ग लोक को भोगकर पुण्य क्षीण होने पर मृत्युलोक को प्राप्त होते हैं। इस प्रकार तीनों वेदों में कहे हुए पूजा कर्मों का आश्रय लेने वाले और भोगों की कामनावश बार-बार आवागमन को प्राप्त होते हैं।

अध्याय 16 का श्लोक 17

आत्सम्भाविताः, स्तब्धाः, धनमानमदान्विताः, यजन्ते,
नामयज्ञैः, ते, दम्भेन, अविधिपूर्वकम् ।।17।।

अनुवाद :– (ते) वे (आत्मसम्भाविताः) अपने आपको ही श्रेष्ठ मानने वाले (स्तब्धाः) घमण्डी पुरुष (धनमानमदान्विताः) धन और मान के मद से युक्त होकर (नामयज्ञैः) केवल नाममात्र के यज्ञों द्वारा (दम्भेन) पाखण्ड से (अविधिपूर्वकम्) शास्त्रविधि रहित पूजन करते हैं।

केवल हिन्दी अनुवाद :- वे अपने आपको ही श्रेष्ठ मानने वाले घमण्डी पुरुष धन और मान के मद से युक्त होकर केवल नाममात्र के यज्ञों द्वारा पाखण्ड से शास्त्रविधि रहित पूजन करते हैं।

अध्याय 16 का श्लोक 18

अहंकारम्, बलम्, दर्पम्, कामम्, क्रोधम्, च, संश्रिताः,
माम्, आत्मपरदेहेषु, प्रद्विषन्तः, अभ्यसूयकाः ।।18।।

अनुवाद :– (अहंकारम्) अहंकार (बलम्) बल (दर्पम्) घमण्ड (कामम्) कामना और (क्रोधम्) क्रोधादि के (संश्रिताः) परायण (च) और (अभ्यसूयकाः) दूसरों की निन्दा करने वाले पुरुष (आत्मपरदेहेषु) प्रत्येक शरीर में परमात्मा आत्मा सहित तथा (माम्) मुझसे (प्रद्विषन्तः) द्वेष करने वाले होते हैं।

केवल हिन्दी अनुवाद : अहंकार बल घमण्ड कामना और क्रोधादि के परायण और दूसरों की निन्दा करने वाले पुरुष प्रत्येक शरीर में परमात्मा आत्मा सहित तथा मुझसे द्वेष करने वाले होते हैं।

अध्याय 16 का श्लोक 19

तान् अहम्, द्विषतः, क्रूरान्, संसारेषु, नराधमान्,
क्षिपामि, अजस्त्रम्, अशुभान्, आसुरीषु, एव, योनिषु ।।19।।

अनुवाद :– (तान्) उन (द्विषतः) द्वेष करने वाले (अशुभान्) पापाचारी और (क्रूरान्) क्रूरकर्मी (नराधमान्) नराधमों को (अहम्) मैं (संसारेषु) संसार में (अजस्त्रम्) बार–बार (आसुरीषु) आसुरी (योनिषु) योनियों में (एव) ही (क्षिपामि) डालता हूँ।

केवल हिन्दी अनुवाद : उन द्वेष करने वाले पापाचारी और क्रूरकर्मी नराधमों को मैं संसार में बार-बार आसुरी योनियों में ही डालता हूँ।

अध्याय 16 का श्लोक 20

आसुरीम्, योनिम्, आपन्नाः, मूढाः, जन्मनि, जन्मनि,

माम् अप्राप्य, एव, कौन्तेय, ततः, यान्ति, अधमाम्, गतिम्।।20।।

अनुवाद :– (कौन्तेय) हे अर्जुन! (मूढाः) वे मूर्ख (माम्) मुझको (अप्राप्य) न प्राप्त होकर (एव) ही (जन्मनि) जन्म (जन्मनि) जन्म में (आसुरीम्) आसुरी (योनिम्) योनि को (आपन्नाः) प्राप्त होते हैं फिर (ततः) उससे भी (अधमाम्) अति नीच (गतिम्) गति को (यान्ति) प्राप्त होते हैं अर्थात् घोर नरकों में पड़ते हैं।

केवल हिन्दी अनुवाद : हे अर्जुन! वे मूर्ख मुझको न प्राप्त होकर ही जन्म जन्म में आसुरी योनि को प्राप्त होते हैं फिर उससे भी अति नीच गति को प्राप्त होते हैं अर्थात् घोर नरकों में पड़ते हैं।

अध्याय 16 का श्लोक 23

यः, शास्त्रविधिम्, उत्सृज्य, वर्तते, कामकारतः,
न, सः, सिद्धिम्, अवाप्नोति, न, सुखम्, न, पराम्, गतिम्।।23।।

अनुवाद : (यः) जो पुरुष (शास्त्रविधिम्) शास्त्र विधि को (उत्सृज्य) त्यागकर (कामकारतः) अपनी इच्छा से मनमाना (वर्तते) आचरण करता है (सः) वह (न) न (सिद्धिम्) सिद्धि को (अवाप्नोति) प्राप्त होता है (न) न (पराम्) परम (गतिम्) गति को और (न) न (सुखम्) सुख को ही।

केवल हिन्दी अनुवाद :- जो पुरुष शास्त्रविधि को त्यागकर अपनी इच्छा से मनमाना आचरण करता है, वह न सिद्धि को प्राप्त होता है, न परम गति को और न सुख को ही।

''शेष कथा''

श्री कृष्ण भगवान ने अपनी शक्ति से युधिष्ठिर को उन सर्व महा मण्डलेश्वरों के आगे होने वाले जन्म दिखाए जिसमें किसी ने कैंचवे का, किसी ने भेड़-बकरी, भैंस व शेर आदि के रूप धारण किए थे।

यह सब देख कर युधिष्ठिर ने कहा - हे भगवन! फिर तो पृथ्वी संत रहित हो गई है। भगवान कृष्ण जी ने कहा जब पृथ्वी संत रहित हो जाएगी तो यहाँ आग लग जाएगी। सर्व जीव-जन्तु आपस में लड़ मरेंगे। यह तो पूरे संत की शक्ति से सन्तुलन बना रहता है। समय-समय पर मैं (भगवान विष्णु) पृथ्वी पर आ कर राक्षस वृत्ति के लोगों को समाप्त करता हूँ जिससे संत सुखी हो जाते है। जिस प्रकार जमींदार अपनी फसल से हानि पहुँचने वाले अन्य पौधों को जो झाड़-खरपतवार आदि को काट-काट कर बाहर डाल देता है तब वह फसल स्वतन्त्रता पूर्वक फलती-फूलती है। यानी ये संत उस फसल में सिचांई का सुख प्रदान करते हैं। पूर्ण संत सबको समान सुख देते हैं। जिस प्रकार वर्षा व सिंचाई का जल दोनों प्रकार के पौधों (फसल व खरपतवार) का पोषण करते हैं। उनमें सर्व जीव के प्रति दया भाव होता है। अब मैं आपको पूर्ण संत के दर्शन करवाता हूँ। एक महात्मा काशी में रहते हैं। उसको बुलवाना है। तब

युधिष्ठिर ने कहा कि उस ओर संतों को आमन्त्रित करने का कार्य भीमसेन को सौंपा था। पूछते हैं कि वह उन महात्मा तक पहुँचा या नहीं। भीमसेन को बुलाकर पूछा तो उसने बताया कि मैं उस से मिला था। उनका नाम स्वपच सुदर्शन है। बाल्मीकि जाति में गृहस्थी संत हैं। एक झौंपड़ी में रहता है। उन्होंने यज्ञ में आने से मना कर दिया। इस पर श्री कृष्ण जी ने कहा कि संत मना नहीं किया करते। सर्व वार्ता जो उनके साथ हुई है वह बताओ।

तब भीम सेन ने आगे बताया कि मैंने उनको आमन्त्रित करते हुए कहा कि हे संत परवर! हमारी यज्ञ में आने का कष्ट करना। उनको पूरा पता बताया। उसी समय वे (सुदर्शन संत जी) कहने लगे भीम सेन आप के पाप के अन्न को खाने से संतों को दोष लगेगा। करोड़ों सैनिकों की हत्या करके आपने तो घोर पाप कर रखा है। आज आप राज्य का आनन्द ले रहे हो। युद्ध में वीरगति को प्राप्त सैनिकों की विधवा पत्नी व अनाथ बच्चे रह-रह कर अपने पति व पिता को याद करके फूट-फूट कर घंटों रोते हैं। बच्चे अपनी माँ से लिपट कर पूछ रहे हैं - माँ, पापा छुट्टी नहीं आए? कब आएंगे? हमारे लिए नए वस्त्र लाएंगे। दूसरी लड़की कहती है कि मेरे लिए नई साड़ी लाएंगे। बड़ी होने पर जब मेरी शादी होगी तब मैं उसे बाँधकर ससुराल जाऊँगी। वह लड़का (जो दस वर्ष की आयु का है) कहता है कि मैं अब की बार पापा (पिता जी) से कहूँगा कि आप नौकरी पर मत जाना। मेरी माँ तथा भाई-बहन आपके बिना बहुत दुःख पाते हैं। माँ तो सारा दिन-रात आपकी याद करके जब देखो एकांत स्थान पर रो रही होती है। या तो हम सबको अपने पास बुला लो या आप हमारे पास रहो। छोड़ दो नौकरी को। मैं जवान हो गया हूँ। आपकी जगह मैं फौज में जा कर देश सेवा करूँगा। आप अपने परिवार में रहो। आने दो पिता जी को, बिल्कुल नहीं जाने दूँगा। (उन बच्चों को दुःखी होने से बचाने के लिए उनकी माँ ने उन्हें यह नहीं बताया कि आपके पिता जी युद्ध में मर चुके हैं क्योंकि उस समय वे बच्चे अपने मामा के घर गए हुए थे। केवल छोटा बच्चा जो डेढ़ वर्ष की आयु का था वही घर पर था। अन्य बच्चों को जान बूझ कर नहीं बुलाया था।)

इस प्रकार उन मासूम बच्चों की आपसी वार्ता से दुःखी होकर उनकी माता का हृदय पति की याद के दुःख से भर आया। उसे हल्का करने के लिए (रोने के लिए) दूसरे कमरे में जा कर फूट-फूट कर रोने लगी। तब सारे बच्चे माँ के ऊपर गिरकर रोने लगे। सम्बन्धियों ने आकर शांत करवाया। कहा कि बच्चों को स्पष्ट बताओ कि आपके पिता जी युद्ध में वीरगति को प्राप्त हो गए। जब बच्चों को पता चला कि हमारे पापा (पिता जी) अब कभी नहीं आएंगे तब उस स्वार्थी राजा को कोसने लगे जिसने अपने भाई बटवारे के लिए दुनियाँ के लालों का खून पी लिया। यह कोई देश रक्षा की लड़ाई भी

नहीं थी जिसमें हम संतोष कर लेते कि देश के हित में प्राण त्याग दिए हैं। इस खूनी राजा ने अपने ऐशो-आराम के लिए खून की नदी बहा दी। अब उस पर मौज कर रहा है। आगे संत सुदर्शन (सुपच) बता रहे हैं कि भीम ऐसे-2 करोड़ों प्राणी युद्ध की पीड़ा से पीड़ित हैं। उनकी हाय आपको चैन नहीं लेने देगी चाहे करोड़ यज्ञ करो। ऐसे दुष्ट अन्न को कौन खाए? यदि मुझे बुलाना चाहते हो तो मुझे पहले किए हुए सौ (100) यज्ञों का फल देने का संकल्प करो अर्थात् एक सौ यज्ञों का फल मुझे दो तब मैं आपके भोजन पाऊँ।

सुदर्शन जी के मुख से इस बात को सुन कर भीम ने बताया कि मैं बोला आप तो कमाल के व्यक्ति हो, सौ यज्ञों का फल मांग रहे हो। यह हमारी दूसरी यज्ञ है। आपको सौ का फल कैसे दें? इससे अच्छा तो आप मत आना। आपके बिना कौन सी यज्ञ सम्पूर्ण नहीं होगी। जब स्वयं भगवान कृष्ण जी हमारे साथ हैं। तो तेरे न आने से क्या यज्ञ पूर्ण नहीं होगा। सर्व वार्ता सुन कर श्री कृष्ण जी ने कहा भीम संतों के साथ ऐसा आपत्तिजनक व्यवहार नहीं करना चाहिए। सात समुद्रों का अंत पाया जा सकता है परंतु सतगुरु (कबीर साहेब) के संत का पार नहीं पा सकते। उस महात्मा सुदर्शन वाल्मीकि के एक बाल के समान तीन लोक भी नहीं हैं। मेरे साथ चलो, उस परमपिता परमात्मा के प्यारे हंस को लाने के लिए। तब पाँचों पाण्डव व श्री कृष्ण भगवान सुपच सुदर्शन की झोंपड़ी की ओर रथ में बैठकर चले। एक योजन अर्थात् 12 किलोमीटर पहले रथ से उतरकर नंगे पैरों चले तथा रथ को खाली लेकर रथवान पीछे-पीछे चला।

उस समय स्वयं कबीर साहेब सुदर्शन सुपच का रूप बना कर झोपड़ी में बैठ गए व सुदर्शन को अपनी गुप्त प्रेरणा से मन में संकल्प उठा कर कहीं दूर के संत या भक्त से मिलने भेज दिया जिसमें आने व जाने में कई रोज लगने थे। तब सुदर्शन के रूप में सतगुरु की चमक व शक्ति देख कर सर्व पाण्डव बहुत प्रभावित हुए। स्वयं श्रीकृष्णजी ने लम्बी दण्डवत् प्रणाम की। तब देखा देखी सर्व पाण्डवों ने भी ऐसा ही किया। कृष्ण जी की तरफ नजर करके सुपच सुदर्शन ने आदर पूर्वक कहा कि - हे त्रिभुवननाथ! आज इस दीन के द्वार पर कैसे? मेरा अहोभाग्य है कि आज दीनानाथ विश्वम्भरनाथ मुझ तुच्छ को दर्शन देने स्वयं चल कर आए हैं। सबको आदर पूर्वक बैठा दिया तथा आने का कारण पूछा। उस समय श्री कृष्ण जी ने कहा कि हे जानी-जान! आप सर्व गति (स्थिति) से परिचित हैं। पाण्डवों ने यज्ञ की है। वह आपके बिना सम्पूर्ण नहीं हो रही है। कृपा इन्हें कृतार्थ करें। उसी समय वहां उपस्थित भीम की ओर संकेत करते हुए सुदर्शन रूप धारी परमेश्वर जी ने कहा कि यह वीर मेरे पास आया था तथा अपनी मजबूरी से इसे अवगत करवाया था। उस समय श्री कृष्ण जी ने कहा कि - हे पूर्णब्रह्म! आपने स्वयं

अपनी वाणी में कहा है कि :-

''संत मिलन को चालिए, तज माया अभिमान।
जो–जो पग आगे धरै, सो–सो यज्ञ समान।।''

आज पांचों पाण्डव राजा हैं तथा मैं स्वयं द्वारिकाधीश आपके दरबार में राजा होते हुए भी नंगे पैरों उपस्थित हूँ। अभिमान का नामों निशान भी नहीं है तथा स्वयं भीम ने भी खड़ा हो कर उस दिन कहे हुए अपशब्दों की चरणों में पड़ कर क्षमा याचना की। श्री कृष्ण जी ने कहा हे नाथ! आज यहाँ आपके दर्शनार्थ आए आपके छः सेवकों के कदमों के यज्ञ समान फल को स्वीकार करते हुए सौ आप रखो तथा शेष हम भिक्षुकों को दान दीजिए ताकि हमारा भी कल्याण हो। इतना आधीन भाव सर्व उपस्थित जनों में देख कर जगतगुरु साहेब करूणामय सुदर्शन रूप में अति प्रसन्न हुए।

कबीर, साधू भूखा भाव का, धन का भूखा नाहिं।
जो कोई धन का भूखा, वो तो साधू नाहिं।।

उठ कर उनके साथ चल पड़े। जब सुदर्शन जी यज्ञशाला में पहुँचे तो चारों ओर एक से एक ऊँचे सुसज्जित आसनों पर विराजमान महा मण्डलेश्वर सुदर्शन जी के रूप व वेश (दोहरी धोती घुटनों से थोड़ी नीचे तक, छोटी-2 दाड़ी, सिर के बिखरे केश न बड़े न छोटे, टूटी-फूटी जूती। मैले से कपड़े, तेजोमय शरीर) को देखकर अपने मन में सोच रहे हैं कि ऐसे अपवित्र व्यक्ति से शंख सात जन्म भी नहीं बज सकता है। यह तो हमारे सामने ऐसे है जैसे सूर्य के सामने दीपक। श्रीकृष्ण जी ने स्वयं उस महात्मा का आसन अपने हाथों लगाया (बिछाया) क्योंकि श्री कृष्ण जी श्रेष्ठ आत्मा हैं। फिर द्रोपदी से कहा कि हे बहन! सुदर्शन महात्मा जी आए हैं, भोजन तैयार करो। बहुत पहुँचे हुए संत हैं। द्रोपदी देख रही है कि संत लक्षण तो एक भी नहीं दिखाई देते हैं। यह तो एक दरिद्र गृहस्थी व्यक्ति है। न तो वस्त्र भगवां, न गले में माला, न तिलक, न सिर पर बड़ी जटा, न मुण्ड ही मुण्डवा रखा और न ही कोई चिमटा, झोली, कमण्डल लिए हुए था। श्री कृष्ण जी के कहते ही स्वादिष्ट भोजन कई प्रकार का बनाकर एक सुन्दर थाल (चांदी का) में परोस कर सुदर्शन जी के सामने रख कर द्रोपदी ने मन में विचार किया कि आज तो यह भक्त भोजन को खाएगा तो ऊँगली चाटता रह जाएगा। जिन्दगी में ऐसा भोजन कभी नहीं खाया होगा।

सुदर्शन जी ने नाना प्रकार के भोजन को थाली में इक्ट्ठा किया तथा खिचड़ी सी बनाई। उस समय द्रौपदी ने देखा कि इसने तो सारा भोजन (खीर, खांड, हलुवा, सब्जी, दही, दही-बड़े आदि) घोल कर एक कर लिया। तब मन में दुर्भावना पूर्वक विचार किया कि इस मूर्ख हब्शी ने तो खाना खाने का भी ज्ञान नहीं। यह काहे का संत? कैसा शंख बजाएगा। (क्योंकि खाना बनाने वाली

स्त्री की यह भावना होती है कि मैं ऐसा स्वादिष्ट भोजन बनाऊँ कि खाने वाला मेरे भोजन की प्रशंसा कई जगह करे)। प्रत्येक बहन की यही आशा होती है।

{वह बेचारी एक घंटे तक धुएँ से आँखें खराब करे और मेरे जैसा कह दे कि नमक तो है ही नहीं, तब उसका मन बहुत दुःखी होता है। इसलिए संत जैसा मिल जाए उसे खा कर सराहना ही करते हैं। यदि कोई न खा सके तो नमक कह कर 'संत' नहीं मांगता। संतों ने नमक का नाम राम–रस रखा हुआ है। कोई ज्यादा नमक खाने का अभ्यस्त हो तो कहेगा कि भईया– रामरस लाना। घर वालों को पता ही न चले कि क्या मांग रहा है? क्योंकि सतसंग में सेवा में अन्य सेवक ही होते हैं। न ही भोजन बनाने वालों को दुःख हो। एक समय एक नया भक्त किसी सतसंग में पहली बार गया। उसमें किसी ने कहा कि भक्त जी रामरस लाना। दूसरे ने भी कहा कि रामरस लाना तथा थोड़ा रामरस अपनी हथेली पर रखवा लिया। उस नए भक्त ने खाना खा लिया था। परंतु पंक्ति में बैठा अन्य भक्तों के भोजन पाने का इंतजार कर रहा था कि इकट्ठे ही उठेंगे। यह भी एक औपचारिकता सतसंग में होती है। उसने सोचा रामरस कोई खास मीठा खाद्य पदार्थ होगा। यह सोच कर कहा मुझे भी रामरस देना। तब सेवक ने थोड़ा सा रामरस (नमक) उसके हाथ पर रख दिया। तब वह नया भक्त बोला – ये के कान कै लाना है, चौखा सा (ज्यादा) रखदे। तब उस सेवक ने दो तीन चमच्च रख दिया। उस नए भक्त ने उस बारीक नमक को कोई खास मीठा खाद्य प्रसाद समझ कर फांका मारा। तब चुपचाप उठा तथा बाहर जा कर कुल्ला किया। फिर किसी भक्त से पूछा रामरस किसे कहते हैं? तब उस भक्त ने बताया कि नमक को रामरस कहते हैं। तब वह नया भक्त कहने लगा कि मैं भी सोच रहा था कि कहें तो रामरस परंतु है बहुत खारा। फिर विचार आया कि हो सकता है नए भक्तों पर परमात्मा प्रसन्न नहीं हुए हों। इसलिए खारा लगता हो। मैं एक बार फिर कोशिश करता, अच्छा हुआ जो मैंने आपसे स्पष्ट कर लिया। फिर उसे बताया गया कि नमक को रामरस किस लिए कहते हैं?}

सुपच सुदर्शन जी ने थाली वाले मिले हुए उस सारे भोजन को पाँच ग्रास बना कर खा लिया। पाँच बार शंख ने आवाज की। उसके पश्चात् शंख ने आवाज नहीं की।

व्यंजन छतीसों परोसिया जहाँ द्रौपदी रानी। बिन आदर सतकार के, कही शंख न बानी।।
पंच गिरासी वाल्मीकि, पंचै बर बोले। आगे शंख पंचायन, कपाट न खोले।।
बोले कृष्ण महाबली, त्रिभुवन के साजा। बाल्मिक प्रसाद से, कण कण क्यों न बाजा।।
द्रोपदी सेती कृष्ण देव, जब ऐसे भाखा। बाल्मिक के चरणों की, तेरे न अभिलाषा।।
प्रेम पंचायन भूख है, अन्न जग का खाजा। ऊँच नीच द्रोपदी कहा, शंख कण कण यूँ नहीं बाजा।।
बाल्मिक के चरणों की, लई द्रोपदी धारा। शंख पंचायन बाजीया, कण–कण झनकारा।।

युधिष्ठिर जी श्री कृष्ण जी के पास आए तथा कहा हे भगवन्! आप की

कृपा से शंख ने आवाज की है हमारा कार्य पूर्ण हुआ। श्री कृष्ण जी ने सोचा कि इन महात्मा सुदर्शन के भोजन खा लेने से भी शंख अखण्ड क्यों नहीं बजा? फिर अपनी दिव्य दृष्टि से देखा? तो पाया कि द्रोपदी के मन में दोष है जिस कारण से शंख ने अखण्ड आवाज नहीं की केवल पांच बार आवाज करके मौन हो गया है। श्री कृष्ण जी ने कहा युधिष्ठिर यह शंख बहुत देर तक बजना चाहिए तब यज्ञ पूर्ण होगी। युधिष्ठिर ने कहा भगवन्! अब कौन संत शेष है जिसे लाना होगा। श्री कृष्ण जी ने कहा युधिष्ठिर इस सुदर्शन संत से बढ़कर कोई भी सत्यभक्ति युक्त संत नहीं है। इसके एक बाल समान तीनों लोक भी नहीं हैं। अपने घर में ही दोष है उसे शुद्ध करते हैं। श्री कृष्ण जी ने द्रौपदी से कहा - द्रौपदी, भोजन सब प्राणी अपने-2 घर पर रूखा-सूखा खा कर ही सोते हैं। आपने बढ़िया भोजन बना कर अपने मन में अभिमान पैदा कर लिया। बिना आदर सत्कार के किया हुआ धार्मिक अनुष्ठान (यज्ञ, हवन, पाठ) सफल नहीं होता। आपने इस साधारण से व्यक्ति को क्या समझ रखा है? यह पूर्णब्रह्म हैं। इसके एक बाल के समान तीनों लोक भी नहीं हैं। आपने अपने मन में इस महापुरुष के बारे में गलत विचार किए हैं उनसे आपका अन्तःकरण मैला (मलिन) हो गया है। इनके भोजन ग्रहण कर लेने से तो यह शंख की स्वर्ग तक आवाज जाती तथा सारा ब्रह्मण्ड गूंज उठता। यह केवल पांच बार बोला है। इसलिए कि आपका भ्रम दूर हो जाए क्योंकि और किसी ऋषि के भोजन पाने से तो यह टस से मस भी नहीं हुआ। आप अपना मन साफ करके इन्हें पूर्ण परमात्मा समझकर इनके चरणों को धो कर पीओ, ताकि तेरे हृदय का मैल (पाप) साफ हो जाए।

उसी समय द्रौपदी ने अपनी गलती को स्वीकार करते हुए संत से क्षमा याचना की और सुपच सुदर्शन के चरण अपने हाथों धो कर चरणामृत बनाया। रज भरे (धूलि युक्त) जल को पीने लगी। जब आधा पी लिया तब भगवान कृष्ण जी ने कहा द्रौपदी कुछ अमृत मुझे भी दे दो ताकि मेरा भी कल्याण हो। यह कह कर कृष्ण जी ने द्रौपदी से आधा बचा हुआ चरणामृत पीया। उसी समय वही पंचायन शंख इतने जोरदार आवाज से बजा कि स्वर्ग तक ध्वनि सुनि। तब पाण्डवों की वह यज्ञ सफल हुई।

प्रमाण के लिए अमृत वाणी (पारख का अंग)

गरीब, सुपच शंक सब करत हैं, नीच जाति बिश चूक।
पौहमी बिगसी स्वर्ग सब, खिले जो पर्वत रूंख।।
गरीब, करि द्रौपदी दिलमंजना, सुपच चरण पी धोय।
बाजे शंख सर्व कला, रहे अवाजं गोय।।
गरीब, द्रौपदी चरणामृत लिये, सुपच शंक नहीं कीन।
बाज्या शंख अखंड धुनि, गण गंधर्व ल्यौलीन।।

गरीब, फिर पंडौं की यज्ञ में, शंख पचायन टेर।
द्वादश कोटि पंडित जहां, पड़ी सभन की मेर।।
गरीब, करी कृष्ण भगवान कूं, चरणामृत स्यौं प्रीत।
शंख पंचायन जब बज्या, लिया द्रोपदी सीत।।
गरीब, द्वादश कोटि पंडित जहां, और ब्रह्मा विष्णु महेश।
चरण लिये जगदीश कूं, जिस कूं रटता शेष।।
गरीब, वाल्मीकि के बाल समि, नाहीं तीनौं लोक।
सुर नर मुनि जन कृष्ण सुधि, पंडौं पाई पोष।।
गरीब, वाल्मीकि बैंकुठ परि, स्वर्ग लगाई लात।
शंख पचायन घुरत हैं, गण गंर्धव ऋषि मात।।
गरीब, स्वर्ग लोक के देवता, किन्हैं न पूर्या नाद।
सुपच सिंहासन बैठतैं, बाज्या अगम अगाध।।
गरीब, पंडित द्वादश कोटि थे, सहिदे से सुर बीन।
संहस अठासी देव में, कोई न पद में लीन।
गरीब, बाज्या शंख स्वर्ग सुन्या, चौदह भवन उचार।
तेतीसौं तत्त न लह्या, किन्हैं न पाया पार।।

।। अचला का अंग।।

गरीब, पांचौं पंडौं संग हैं, छठ्ठे कृष्ण मुरारि।
चलिये हमरी यज्ञ में, समर्थ सिरजनहार।।97।।
गरीब, सहंस अठासी ऋषि जहां, देवा तेतीस कोटि।
शंख न बाज्या तास तैं, रहे चरण में लोटि।।98।।
गरीब, सुपच रूप धरि आईया, सतगुरु पुरुष कबीर।
तीन लोक की मेदनी, सुर नर मुनिजन भीर।।99।।
गरीब, पंडित द्वादश कोटि हैं, और चौरासी सिद्ध।
शंख न बाज्या तास तैं, पिये मान का मध।।100।।
गरीब, पंडौं यज्ञ अश्वमेघ में, सतगुरु किया पियान।
पांचौं पंडौं संग चलैं, और छठा भगवान।।101।।
गरीब, सुपच रूप धरि आईया, सब देवन का देव।
कृष्णचन्द्र पग धोईया, करी तास की सेव।।102।।
गरीब, सुपच रूप को देखि करि, द्रौपदी मानी शंक।
जानि गये जगदीश गुरु, बाजत नाहीं शंख।।103।।
गरीब, छप्पन भोग संजोग करि, कीनें पांच गिरास।
द्रौपदी के दिल दुई हैं, नाहीं दृढ़ विश्वास।।104।।
गरीब, पांचौं पंडौं यज्ञ करी, कल्पवृक्ष की छांहिं।
द्रौपदी दिल बंक हैं, कण कण बाज्या नांहि।।105।।

गरीब, छप्पन भोग न भोगिया, कीन्हें पंच गिरास।
खड़ी द्रौपदी उनमुनी, हरदम घालत श्वास।।107।।
गरीब, बोलै कृष्ण महाबली, क्यूं बाज्या नहीं शंख।
जानराय जगदीश गुरु, काढत है मन बंक।।108।।
गरीब, द्रौपदी दिल कूं साफ करि, चरण कमल ल्यौ लाय।
वाल्मीकि के बाल सम, त्रिलोकी नहीं पाय।।109।।
गरीब, चरण कमल कूं धोय करि, ले द्रौपदी प्रसाद।
अंतर सीना साफ होय, जरैं सकल अपराध।।110।।
गरीब, बाज्या शंख सुभान गति, कण कण भई अवाज।
स्वर्ग लोक बानी सुनी, त्रिलोकी में गाज।।111।।
गरीब, पंडौं यज्ञ अश्वमेघ में, आये नजर निहाल।
जम राजा की बंधि में, खल हल पर्‌या कमाल।।113।।

''अन्य वाणी सतग्रन्थ से''

तेतीस कोटि यज्ञ में आए सहंस अठासी सारे।
द्वादश कोटि वेद के वक्ता, सुपच का शंख बज्या रे।।

''अर्जुन सहित पाण्डवों को युद्ध में की गई हिंसा के पाप लगे''

परमेश्वर कबीर जी ने धर्मदास जी को बताया कि उपरोक्त विवरण से सिद्ध हुआ कि पाण्डवों को युद्ध की हत्याओं का पाप लगा। आगे सुन और सुनाता हूँ :-

दुर्वासा ऋषि के शाप वश यादव कुल आपस में लड़कर प्रभास क्षेत्र में यमुना नदी के किनारे नष्ट हो गया। श्री कृष्ण जी भगवान को एक शिकारी ने पैर में विषाक्त तीर मार कर घायल कर दिया था। उस समय श्री कृष्ण जी ने उस शिकारी को बताया कि आप त्रेता युग में सुग्रीव के बड़े भाई बाली थे तथा मैं रामचन्द्र था। आप को मैंने धोखा करके वृक्ष की ओट लेकर मारा था। आज आपने वह बदला (प्रतिशोध) चुकाया है। पाँचों पाण्डवों को पता चला कि यादव आपस में लड़ मरे हैं वे द्वारिका पहुँचे। वहाँ गए जहाँ पर श्री कृष्ण जी तीर से घायल तड़फ रहे थे। पाँचों पाण्डवों के धार्मिक गुरू श्री कृष्ण जी थे। श्री कृष्ण जी ने पाण्डवों से कहा! आप मेरे अतिप्रिय हो। मेरा अन्त समय आ चुका है। मैं कुछ ही समय का मेहमान हूँ। मैं आपको अन्तिम उपदेश देना चाहता हूँ कृप्या ध्यान पूर्वक सुनों। यह कह कर श्री कृष्ण जी ने कहा (1) आप द्वारिका की स्त्रियों को इन्द्रप्रस्थ ले जाना। यहाँ कोई नर यादव शेष नहीं बचा है (2) आप अति शीघ्र राज्य त्याग कर हिमालय चले जाओ वहाँ अपने शरीर के नष्ट होने तक तपस्या करते रहो। इस प्रकार हिमालय की बर्फ में गल कर नष्ट हो जाओ। युधिष्ठर ने पूछा हे भगवन्!

हे गुरूदेव श्री कृष्ण! क्या हम हिमालय में गल कर मरने का कारण जान सकते हैं? यदि आप उचित समझें तो बताने की कृपा करें। श्री कृष्ण ने कहा युधिष्ठर! आप ने युद्ध में जो प्राणियों की हिंसा करके पाप किया है। उस पाप का प्रायश्चित् करने के लिए ऐसा करना अनिवार्य है। इस प्रकार तपस्या करके प्राण त्यागने से आप के महाभारत युद्ध में किए पाप नष्ट हो जाएँगे।

कबीर जी बोले हे धर्मदास! श्री कृष्ण जी के श्री मुख से उपरोक्त वचन सुन कर अर्जुन आश्चर्य में पड़ गया। सोचने लगा श्री कृष्ण जी आज फिर कह रहे हैं कि युद्ध में किए पाप नष्ट इस विधि से होगें। अर्जुन अपने आपको नहीं रोक सका। उसने श्री कृष्ण जी से कहा हे भगवन्! क्या मैं आप से अपनी शंका का समाधान करा सकता हूँ। वैसे तो गुरूदेव! यह मेरी गुस्ताखी है, क्षमा करना क्योंकि आप ऐसी स्थिति में हैं कि आप से ऐसी-वैसी बातें करना उचित नहीं जान पड़ता। यदि प्रभु! मेरी शंका का समाधान नहीं हुआ तो यह शंका रूपी कांटा आयु पर्यन्त खटकता रहेगा। मैं चैन से जी नहीं सकूंगा। श्री कृष्ण ने कहा हे अर्जून! तू जो पूछना चाहता है निःसंकोच होकर पूछ। मैं अन्तिम स्वांस गिन रहा हूँ जो कहूंगा सत्य कहूंगा। अर्जुन बोला हे श्री कृष्ण! आपने श्री मद्भगवत् गीता का ज्ञान देते समय कहा था कि अर्जुन! तू युद्ध कर तुझे युद्ध में मारे जाने वालों का पाप नहीं लगेगा तू केवल निमित्त मात्र बन जा ये सर्व योद्धा मेरे द्वारा पहले ही मारे जा चुके हैं (प्रमाण गीता अध्याय 11 श्लोक 32-33) आपने यह भी कहा कि अर्जुन युद्ध में मारा गया तो स्वर्ग को चला जाएगा, यदि युद्ध जीत गया तो पृथ्वी के राज्य का सुख भोगेगा। तेरे दोनों हाथों में लड्डू हैं। (प्रमाण श्री मदभगवत् गीता अध्याय 2 श्लोक 37) तू युद्ध के लिए खड़ा हो जो जय-पराजय की चिन्ता छोड़कर युद्ध कर इस प्रकार तू पाप को प्राप्त नहीं होगा (गीता अध्याय 2 श्लोक 38)

जिस समय बड़े भईया को बुरे-2 स्वपन आने लगे हम आप के पास कष्ट निवारण के लिए विधि जानने गए तो आपने बताया कि जो युद्ध में बन्धुघात अर्थात् अपने नातियों (राजाओं, सैनिकों, चाचा, भतीजा आदि) की हत्या का पाप दुःखी कर रहा है। मैं (अर्जुन) उस समय भी आश्चर्य में पड़ गया था कि भगवन् गीता ज्ञान में कह रहे थे कि तुम्हें कोई पाप नहीं लगेगा युद्ध करो। आज कह रहे है कि युद्ध में की गई हिंसा का पाप दुःखी कर रहा है। आपने पाप नाश होने का समाधान बताया ''अश्वमेघ यज्ञ'' करना जिसमें करोड़ों रूपये का खर्च हुआ। उस समय मैं अपने मन को मार कर यह सोच कर चुप रहा कि यदि मैं आप (श्री कृष्ण जी) से वाद-विवाद करूँगा कि आप तो कह रहे थे तुम्हें युद्ध में होने वाली हत्याओं का कोई पाप नहीं लगेगा। आज कह रहे हो तुम्हें महाभारत युद्ध में की हत्याओं का पाप दुःख दे रहा है। कहाँ गया आप का वह गीता वाला ज्ञान। किसलिए हमारे साथ धोखा

किया, गुरू होकर विश्वासघात किया। तो बड़े भईया (युधिष्ठर जी) यह न सोच लें कि मेरी चिकित्सा में धन लगना है। इस कारण अर्जुन वाद-विवाद कर रहा है। यह (अर्जुन) मेरे कष्ट निवारण में होने वाले खर्च के कारण विवाद कर रहा है यह नहीं चाहता कि मैं (युधिष्ठर) कष्ट मुक्त हो जाऊं। अर्जुन को भाई के जीवन से धन अधिक प्रिय है। उपरोक्त विचारों को ध्यान में रखकर मैंने सोचा था कि यदि युधिष्ठर भईया को थोड़ा सा भी यह आभास हो गया कि अर्जुन! इस दृष्टि कोण से विवाद कर रहा है तो भईया! अपना समाधान नहीं कराएगा। आजीवन कष्ट को गले लगाए रहेगा। हे कृष्ण! आप के कहे अनुसार हमने यज्ञ किया। आज फिर आप कह रहे हो कि तुम्हें युद्ध की हत्याओं का पाप लगा है उसे नष्ट करने के लिए शीघ्र राज्य त्याग कर हिमालय में तपस्या करके गल मरो। आपने हमारे साथ यह विश्वास घात किसलिए किया? यदि आप जैसे सम्बन्धी व गुरू हों तो शत्रुओं की आवश्यकता ही नहीं। हे कृष्ण हमारे हाथ में तो एक भी लड्डू नहीं रहा न तो युद्ध में मर कर स्वर्ग गए न पृथ्वी के राज्य का सुख भोग सके। क्योंकि आप कह रहे हो कि राज्य त्याग कर हिमालय में गल मरो।

आँसू टपकाते हुए अर्जुन के मुख से उपरोक्त वचन सुनकर युधिष्ठर बोला, अर्जुन! जिस परिस्थिति में भगवान है। इस समय ये शब्द बोलना शोभा नहीं देता। श्री कृष्ण जी बोले हे अर्जुन! सुन मैं आप को सत्य-2 बताता हूँ। गीता के ज्ञान में मैंने क्या कहा था मुझे कुछ भी ज्ञान नहीं। यह जो कुछ भी हुआ है यह होना था इसे टालना मेरे वश नहीं था। कोई अन्य शक्ति है जो आप और हम को कठपुतली की तरह नचा रही है। वह तेरे वश न मेरे वश। परन्तु जो मैं आपको हिमालय में तपस्या करके शरीर अन्त करने की राय दे रहा हूँ। यह आप को लाभदायक है। आप मेरे इस वचन का पालन अवश्य करना। यह कह कर श्री कृष्ण जी शरीर त्याग गए। जहाँ पर उनका अन्तिम संस्कार किया गया। उस स्थान पर यादगार रूप में श्री कृष्ण जी के नाम पर द्वारिका में द्वारिकाधीश मन्दिर बना है।

श्री कृष्ण ने पाण्डवों से कहा था कि मेरे शरीर का संस्कार करके राख तथा अधजली अस्थियों को एक काष्ठ के संदूक (Box) में डालकर उसको पूरी तरह से बंद करके यमुना में प्रवाह कर देना। पाण्डवों ने वैसा ही किया। वह संदूक बहता हुआ समुद्र में उस स्थान पर चला गया जिस स्थान पर उड़ीसा प्रान्त में जगन्नाथ का मंदिर बना है। एक समय उड़ीसा का राजा इन्द्रदमन था जो श्री कृष्ण जी का परम भक्त था। स्वपन में श्री कृष्ण जी ने बताया कि एक काष्ठ के संदूक में मेरे कृष्ण वाले शरीर की अस्थियाँ हैं। उस स्थान पर वह संदूक बहकर आ चुका है। उसी स्थान पर उनको जमीन में दबाकर एक मंदिर बनवा दें। राजा ने स्वपन अपनी धार्मिक पत्नी

तथा मंत्रियों के साथ साझा किया और उस स्थान पर गए तो वास्तव में एक लकड़ी का संदूक मिला। उसको जमीन में दबाकर जगन्नाथ नाम से मंदिर बनवाया। संपूर्ण जानकारी पढ़ें इसी पुस्तक ''हिन्दू साहेबान! नहीं समझे गीता, वेद, पुराण'' में पृष्ठ 56 पर।

धर्मदास जी को परमेश्वर कबीर जी ने बताया। हे धर्मदास! सर्व (छप्पन करोड़) यादव का जो आपस में लड़कर मर गए थे, अन्तिम संस्कार करके अर्जुन को द्वारिका में छोड़ कर चारों भाई इन्द्रप्रस्थ चले गए। अकेला अर्जुन द्वारिका की स्त्रियों तथा श्री कृष्ण जी की गोपियों को लेकर आ रहे थे। रास्ते में जंगली लोगों ने अर्जुन को पकड़ कर पीटा। अर्जुन के पास अपना गांडीव धनुष भी था जिस से महाभारत का युद्ध जीता था। परन्तु उस समय अर्जुन से वही धनुष नहीं चला। अपने आप को शक्तिहीन जानकर अर्जुन कायरों की तरह सब देखता रहा। वे जंगली व्यक्ति स्त्रियों के गहने लूट ले गए तथा कुछ स्त्रियों को भी अपने साथ ले गए। शेष स्त्रियों को साथ लेकर अर्जुन ने इन्द्रप्रस्थ को प्रस्थान किया तथा मन में विचार किया कि श्री कृष्ण जी महाधोखेबाज (विश्वासघाती) था। जिस समय मेरे से युद्ध कराना था तो शक्ति प्रदान कर दी। उसी धनुष से मैंने लाखों व्यक्तियों को मौत के घाट उतार दिया। आज मेरा बल छीन लिया, मैं कायरों की तरह पिटता रहा मेरे से वही धनुष नहीं चला। कबीर परमेश्वर जी ने बताया धर्मदास! श्री कृष्ण जी छलिया नहीं था। वह सर्व कपट काल ब्रह्म ने किया है जो ब्रह्मा-विष्णु व शिव का पिता है। जिसके समक्ष श्री विष्णु (कृष्ण) तथा श्री शिव आदि की कुछ पेश नहीं चलती।

उपरोक्त कथा सुनकर धर्मदास जी ने प्रश्न किया :- धर्मदास ने कहा हे परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ जी! आप ने तो मेरी आँखे खोल दी हे प्रभु! हिमालय में तपस्या कर युधिष्ठर का तो केवल एक पैर का पंजा ही बर्फ से नष्ट हुआ तथा अन्य के शरीर गल गए थे। सुना है वे सर्व पापमुक्त होकर स्वर्ग चले गए?

उत्तर :- परमेश्वर कबीर जी ने कहा हे धर्मदास! हिमालय में जो तप पाण्डवों ने किया वह शास्त्र विधि त्याग कर मनमाना आचरण (पूजा) होने के कारण व्यर्थ प्रयत्न था। (प्रमाण-गीता अध्याय 16 श्लोक 23 तथा गीता अध्याय 17 श्लोक 5-6 में कहा है कि जो मनुष्य शास्त्रविधि से रहित केवल कल्पित घोर तप को तपते हैं वे शरीरस्थ परमात्मा को कृश करने वाले हैं उन अज्ञानियों को नष्ट हुए जान।) क्योंकि जैसी तपस्या पाण्डवों ने की वह गीता जी व वेदों में वर्णित नहीं है अपितु ऐसे शरीर को पीड़ा देकर साधना करना व्यर्थ बताया है। यजुर्वेद अध्याय 40 मन्त्र 15 में कहा है ओम् (ॐ) नाम का जाप कार्य करते-2 कर, विशेष कसक के साथ कर मनुष्य जन्म का मुख्य

कर्त्तव्य जान के कर। यही प्रमाण गीता अध्याय 8 श्लोक 7 व 13 में कहा है कि मेरा तो केवल ॐ नाम है इस का जाप अन्तिम सांस तक करने से लाभ होता है इसलिए अर्जुन! तू युद्ध भी कर तथा स्मरण (भक्ति जाप) भी कर अतः हे धर्मदास! जैसी तपस्या पाण्डवों ने की वह व्यर्थ सिद्ध हुई।

गीता अध्याय 3 श्लोक 6 से 8 में कहा है कि जो मूढ़ बुद्धि मनुष्य समस्त कर्म इन्द्रयों को रोककर अर्थात् हठ योग द्वारा एक स्थान पर बैठ कर या खड़ा होकर साधना करता है। वह मन से इन्द्रियों का चिन्तन करता रहता है। जैसे सर्दी लगी तो शरीर की चिन्ता, सर्दी का चिन्तन, भूख लगी तो भूख का चिन्तन आदि होता रहता है। वह हठ से तप करने वाला मिथ्याचारी अर्थात् दम्भी कहा जाता है। कार्य न करने अर्थात् एक स्थान पर बैठ या खड़ा होकर साधना करने की अपेक्षा कर्म करना तथा भक्ति भी करना श्रेष्ठ है। यदि कर्म नहीं करेगा तो तेरा शरीर निर्वाह भी नहीं सिद्ध होगा।

विशेष विचार :- श्री मद्भगवत गीता में ज्ञान दो प्रकार का है। एक तो वेदों वाला तथा दूसरा काल ब्रह्म द्वारा सुनाया लोक वेद वाला। यह ज्ञान (गीता अध्याय 3 श्लोक 6 से 8 वाला ज्ञान) वेदों वाला ज्ञान ब्रह्म काल ने बताया है। श्री कृष्ण जी द्वारा भी काल ब्रह्म ने पाण्डवों को लोक वेद सुनाया जिस से तप हो जाता है। तप से फिर कभी राजा बन जाता है कुछ सिद्धियाँ प्राप्त हो जाती हैं। मोक्ष नहीं होता तथा न पाप ही नष्ट होते हैं।

हे धर्मदास! पाँचों पाण्डवों ने विचार करके अभिमन्यु के पुत्र परीक्षित को राज तिलक कर दिया। द्रोपदी, कुन्ती (अर्जुन, भीम व युधिष्ठर की माता) तथा पाँचों पाण्डव श्री कृष्ण जी के आदेशानुसार हिमालय पर्वत पर जाकर तप करने लगे कुछ ही दिनों में आहार अभाव से उनके शरीर समाप्त हो गए। केवल युधिष्ठर का शरीर शेष रहा। उसके पैर का एक पंजा बर्फ में गल पाया था। युधिष्ठर ने देखा कि उस के परिजन मर चुके है। उनके शरीर की आत्माऐं निकल चुकी हैं सूक्ष्म शरीर युक्त आकाश को जाने लगी। तब युधिष्ठर ने भी अपना शरीर त्याग दिया तथा सूक्ष्म शरीर युक्त युधिष्ठर कर्मों के संस्कार वश अपने पिता धर्मराज के लोक में गया। धर्मराज ने अपने पुत्र को बहुत प्यार किया तथा उसको रहने का मकान बताया। कुछ समय पश्चात् काल ब्रह्म ने युधिष्ठर में प्रेरणा की। उसे अपने भाईयों व पत्नी द्रोपदी तथा माता कुन्ती की याद सताने लगी। युधिष्ठर ने अपने पिता धर्मराज से कहा हे धर्मराज! मुझे मेरे परिजनों से मिलाईए मुझे उनकी बहुत याद सता रही है। धर्मराज ने कहा युधिष्ठर! वह तेरा परिवार नहीं था। तेरा परिवार तो यह है। तू मेरा पुत्र है। अर्जुन-स्वर्ग के राजा इन्द्र का पुत्र है, भीम-पवन देव का पुत्र है, नकुल-नासत्य का पुत्र है तथा सहदेव-दस्र का पुत्र है। {नासत्य तथा दस्र ये दोनों अश्वनी कुमार हैं जो अश्व रूप धारी सूर्य देव तथा अश्वी (घोड़ी)

रूप धारी सूर्य की पत्नी संज्ञा के सम्भोग से उत्पन्न हुए थे। सूर्य को घोड़े रूप में न पहचान कर सूर्य पत्नी जो घोड़ी रूप धार कर जंगल में तप कर रही थी अपने धर्म की रक्षा के लिए घोड़ा रूपधारी सूर्य को पृष्ठ भाग (पीछे) की ओर नहीं जाने दिया वह उस घोड़े से अभिमुख रही। कामवासना वश घोड़ा रूपधारी सूर्य घोड़ी रूपधारी अपनी पत्नी (विश्वकर्मा की पुत्री) के मुख की ओर चढ़कर सम्भोग करने के कारण वीर्य का कुछ अंश घोड़ी रूपधारी सूर्य की पत्नी के पेट में मुख द्वारा प्रवेश कर गया जिससे दो लड़कों (नासत्य तथा दस्र) का जन्म घोड़ी रूपी सूर्य पत्नी के मुख से हुआ जिस कारण ये दोनों बच्चे अश्विनी कुमार कहलाए। यह पुराण कथा है।}

धर्मराज ने अपने पुत्र युधिष्ठर को बताया कि आप सब का वहाँ पृथ्वी लोक में इतना ही संयोग था। वह समाप्त हो चुका है। वे सर्व युद्ध में किए पाप कर्मों तथा अन्य जीवन में किए पाप कर्मों का फल भोगने के लिए नरक में डाल रखे हैं। आप के पुण्य अधिक है इसलिए आप नरक में नहीं डाल रखे हैं। अतः आप उन से नहीं मिल सकते काल ब्रह्म कि प्रबल प्रेरणा वश होकर युधिष्ठर ने उन सर्व (भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव, द्रोपदी तथा कुन्ती) को मिलने का हठ किया। धर्मराज ने एक यमदूत से कहा आप युधिष्ठर को इसके परिवार से मिला कर शीघ्र लौटा लाना। यमदूत युधिष्ठर को लेकर नरक में प्रवेश हुआ। वहाँ पर आत्माऐं हा-हाकार मचा रहे थे, कह रहे थे, हे युधिष्ठर हमें नरक से निकलवा दो। मैं अर्जुन हूँ ,कोई कह रहा था, मैं भीम हूँ, मैं नकुल, मैं सहदेव हूँ, मैं कुन्ती, मैं द्रोपदी हूँ। इतने में यमदूत ने कहा हे युधिष्ठिर अब आप लौट चलिए। युधिष्ठर ने कहा मैं भी अपने परिवार जनों के साथ यहीं नरक में ही रहूँगा। तब धर्मराज ने आवाज लगाई युधिष्ठिर यहाँ आओ मैं तेरे को एक युक्ति बताता हूँ। यह आवाज सुन कर युधिष्ठिर अपने पिता धर्मराज के पास लौट आया।

धर्मराज ने युधिष्ठिर को समझाया कि बेटा आपने एक झूठ बोला था कि अश्वथामा मर गया फिर दबी आवाज में कहा था पता नहीं मनुष्य था या हाथी। जबकि आप को पता था कि हाथी मरा है। उस झूठ बोलने के पाप का कर्मदण्ड देने के लिए आप को कुछ समय इसी बहाने नरक में रखना पड़ा नहीं तो वह युक्ति मैं पहले ही आप को बता देता। युधिष्ठर ने कहा कृप्या आप वह विधि बताईए जिस से मेरे परिजन नरक से निकल सकें। धर्मराज ने कहा उनको एक शर्त पर नरक से निकाला जा सकता है कि आप अपने कुछ पुण्य उनको संकल्प कर दो। युधिष्ठर ने कहा मुझे स्वीकार है। यह कह कर युधिष्ठर ने अपने आधे पुण्य उन छः के निमित्त संकल्प कर दिए। वे छःओं नरक से बाहर आकर धर्मराज के पास जहाँ युधिष्ठर खड़ा था, उपस्थित हो गए। उसी समय इन्द्र देव आया अपने पुत्र अर्जुन को साथ

लेकर चला गया, पवन देवता आया अपने पुत्र भीम को साथ लेकर चला गया। इसी प्रकार अश्विनी कुमार (नासत्य, दस्र) आए नकुल व सहदेव को लेकर चले गए। कुन्ती स्वर्ग में चली गई तथा देखते-2 द्रोपदी ने दुर्गा रूप धारण किया तथा आकाश को उड़ चली कुछ ही समय में सर्व की आँखों से ओझल हो गई। वहाँ अकेला युधिष्ठर अपने पिता धर्मराज के पास रह गया। परमेश्वर कबीर जी ने अपने शिष्य धर्मदास जी को उपरोक्त कथा सुनाई तत्पश्चात् इस सर्व काल के जाल को समझाया।

कबीर परमेश्वर जी ने बताया हे धर्मदास! काल ब्रह्मकी प्रेरणा से इक्कीस ब्रह्मण्डों के प्राणी कर्म करते हैं। जैसा आपने सुना युधिष्ठर पुत्र धर्मराज, अर्जुन पुत्र इन्द्र, भीम पुत्र पवन देव, नकुल पुत्र नासत्य तथा सहदेव पुत्र दस्र थे। द्रोपदी शापवश दुर्गा की अवतार थी जो अपना कर्म भोगने आई थी तथा कुन्ती भी दुर्गा लोक की पुण्यात्मा थी। ये सर्व काल प्रेरणा से पृथ्वी पर एक फिल्म (चलचित्र) बनाने गए थे। जैसे एक करोड़पति का पुत्र किसी फिल्म में रिक्शा चालक का अभिनय करता है। फिल्म निर्माण के पश्चात् अपनी 20 लाख की कार गाड़ी में बैठ कर आनन्द करता है। भोले-भाले सिनेमा दर्शक उसे रिक्शा चालक मान कर उस पर दया करते हैं। उसके बनावटी अभिनय को देखने के लिए अपना बहुमूल्य समय तथा धन नष्ट करते हैं। ठीक इसी प्रकार उपरोक्त पात्रों (युधिष्ठर, भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव, द्रोपदी तथा कुन्ती) द्वारा बनाई फिल्म महाभारत के इतिहास को पढ़-पढ़कर पृथ्वी लोक के प्राणी अपना समय व्यर्थ करते हैं। तत्त्वज्ञान को न सुनकर मानव शरीर को व्यर्थ कर जाते हैं। काल ब्रह्म यही चाहता है कि मेरे अन्तर्गत जितने भी जीव हैं। वे तत्त्वज्ञान से अपरिचित रहे तथा मेरी प्रेरणा से मेरे द्वारा भेजे गुरूओं द्वारा शास्त्रविधि विरुद्ध साधना प्राप्त करके जन्म-मृत्यु के चक्र में पड़े रहे। काल ब्रह्म की प्रेरणा से तत्त्वज्ञान हीन सन्तजन व ऋषिजन कुछ वेद ज्ञान अधिक लोक वेद के आधार से ही सत्संग वचन श्रद्धालुओं को सुनाते हैं। जिस कारण से साधक पूर्ण मोक्ष प्राप्त न करके काल के जाल में ही रह जाते हैं।

हे धर्मदास! मैं पूर्ण परमात्मा की आज्ञा लेकर तत्त्वज्ञान बताने के लिए काल लोक में कलयुग में आया हूँ।

धर्मदास जी ने बन्दी छोड़ कबीर परमेश्वर जी के चरण पकड़ कर कहा हे परमेश्वर! आप स्वयं सत्यपुरूष हो धर्मदास जी ने अति विनम्र होकर आधीन भाव से प्रश्न किया।

‘‘क्या पाण्डव सदा स्वर्ग में ही रहेंगे?’’

प्रश्न 56 :- हे बन्दी छोड़ कबीर परमेश्वर जी! क्या पाण्डव अब सदा

स्वर्ग में ही रहेगें?

उत्तर :- नहीं धर्मदास! जो पुण्य युधिष्ठर ने उनको प्रदान किए हैं। उन पुण्यों का तथा स्वयं किए यज्ञ आदि धार्मिक अनुष्ठानों का पुण्य जब स्वर्ग में समाप्त हो जाएगा तब सर्व पुनः नरक में डाले जाऐंगे। युद्ध में किए पाप कर्म तथा उस जीवन में किए पाप कर्म तथा संचित पाप कर्मों के फल को भोगने के लिए नरक में अवश्य गिरना होगा। युधिष्ठर भी अपने आधे पुण्य दान करके पुण्यहीन हो गया है। वह भी शेष पुण्यों को स्वर्ग में समाप्त करके संचित पाप कर्मों के आधार से अवश्य नरक में डाला जाएगा भले ही पाप कर्म कम होने के कारण नरक समय थोड़ा ही भोगना पड़े परन्तु नरक में अवश्य जाना पड़ेगा। जैसे युधिष्ठर ने अश्वथामा मरने की झूठ बोली थी उसका भी पाप कर्मदण्ड भोगने के लिए नरक में कुछ समय के लिए उसी समय ही जाना पड़ा।

इसी प्रकार पूर्व जन्मों के संचित पाप कर्मों का दण्ड नरक में भोगना पड़ेगा। इसके पश्चात् पृथ्वी पर सर्व को अन्य प्राणियों की योनियों में भी जाना होगा। यह काल ब्रह्म का अटल विद्यान है। परन्तु हे धर्मदास! जो साधक पूर्ण परमात्मा की भक्ति पूर्ण गुरू से उपदेश प्राप्त करके आजीवन मर्यादा में रह कर करता है उसके सर्व पाप कर्म ऐसे नष्ट हो जाते है जैसे सुखे घास के बहुत बड़े ढेर को अग्नि की छोटी सी चिंगारी जला कर भस्म कर देती है। उसकी राख को हवा उड़ा कर इधर-उधर कर देती है ठीक इसी प्रकार पूर्ण परमात्मा की भक्ति का सत्यनाम मन्त्र रूपी अग्नि घास के ढेर रूपी पाप कर्मों को भस्म कर देता है।

कबीर, जब ही सत्यनाम हृदय धरा, भयो पाप का नाश।
मानो चिंगारी अग्नि की, पड़ी पुराने घास।।

''क्या द्रोपदी भी नरक जाएगी तथा अन्य प्राणियों के शरीर धारण करेगी?''

प्रश्न 57 :- हे सद्गुरू! क्या द्रोपदी भी पुनः नरक व अन्य योनियों में जाएगी (धर्मदास जी ने परमेश्वर कबीर जी से प्रश्न किया)?

उत्तर :- हाँ धर्मदास! द्रोपदी, दुर्गा का अंश है। अंश का अर्थ है कि दुर्गा के शब्द से शरीर धारण करने वाली आत्मा, द्रोपदी, दुर्गा से अन्य आत्मा है परन्तु जो कष्ट द्रोपदी को होता है उसका प्रभाव दुर्गा को भी होता है। जैसे किसी की बेटी दुःखी होती है तो माता अत्यधिक दुःखी होती है। इस प्रकार द्रोपदी अब दुर्गा लोक में विशेष स्थान पर है। पुण्य समाप्त होने पर फिर नरक तथा अन्य प्राणियों के शरीर अवश्य धारण करेगी। यही दशा कुन्ती वाली आत्मा की होगी।

''कबीर परमेश्वर जी का कलयुग में अवतरण''

लेखक (अनुवादक) के शब्दों में :- बन्दी छोड़ कबीर परमेश्वर जी ने द्वापर युग में अपने प्रिय शिष्य सुदर्शन बाल्मिकि जी को शरण में लिया था। भक्त सुदर्शन जी के माता-पिता ने परमेश्वर कबीर जी के ज्ञान को स्वीकार नहीं किया था जिनके नाम थे पिता जी का नाम ''भीखू राम'' तथा माता जी का नाम ''सुखवन्ती''। जिस समय दोनों (माता तथा पिता) शरीर त्याग गए तो भक्त सुदर्शन जी अत्यन्त व्याकुल रहने लगे। भक्ति भी कम करते थे। अन्तर्यामी करूणामय जी (द्वापर युग में कबीर परमेश्वर करूणामय नाम से लीला कर रहे थे) ने अपने भक्त के मन की बात जान कर पूछा हे भक्त सुदर्शन! आप को कौन सी चिन्ता सता रही है। क्या माता-पिता का वियोग सता रहा है? या कोई अन्य पारिवारिक परेशानी है? मुझे बताईए।

भक्त सुदर्शन जी ने कहा हे बन्दी छोड़! हे अन्तर्यामी! आप सर्वज्ञ हैं आप बाहर-भीतर की सर्व स्थिति से परिचित है। हे प्रभु! मुझे मेरे माता-पिता के निधन का दुःख नहीं है क्योंकि वे बहुत वृद्ध हो चुके थे। आप ने बताया है कि यह पाँच तत्त्व का पुतला एक दिन नष्ट होना है। मुझे चिन्ता सता रही है कि मेरे माता-पिता अत्यन्त पुण्यात्मा, दयालु तथा धर्मात्मा थे। उन्होंने अपनी भक्ति लोकवेद अनुसार की थी। जो शास्त्रविधि के विरूद्ध थी। जिस कारण से उनका मानव जीवन व्यर्थ गया। अब पता नहीं किस प्राणी की योनि में कष्ट उठा रहे होंगे? आप से नम्र निवेदन आप का दास करता है कि कभी मेरे माता-पिता मानव शरीर प्राप्त करें तो उन्हें अपनी शरण में लेना परमेश्वर तथा उन्हें भी भवसागर से (काल ब्रह्म के लोक से) पार करना मेरे दाता! मुझे यही चिन्ता सता रही है। परमेश्वर कबीर जी ने सोचा कि यह भोला भक्त सुदर्शन माता-पिता के मोह में फंस कर काल जाल में ही रहेगा। काल ब्रह्म ने मोह रूपी पाश बहुत दृढ़ बना रखा है। यह विचार कर परमेश्वर कबीर जी ने कहा हे भक्त सुदर्शन! आप चिन्ता मत करो। मैं आप के माता-पिता को अवश्य शरण में लूंगा तथा पार करके ही दम लूंगा। आप सत्य लोक जाओ। यह चिन्ता छोड़ो। परमेश्वर कबीर जी के आश्वासन के पश्चात् भक्त सुदर्शन जी सत्य साधना करके सत्यलोक को गया। पूर्ण मोक्ष प्राप्त किया।

''भक्त सुदर्शन के माता-पिता वाले जीवों के कलयुग के अन्य मानव जन्मों की जानकारी''

प्रथम बार कुलपति ब्राह्मण (पिता) तथा महेश्वरी (माता) रूप में जन्में। दोनों का विवाह हुआ। संतान नहीं हुई। एक दिन महेश्वरी जी सूर्य की उपासना करते हुए हाथ फैलाकर पुत्र माँग रही थी। उसी समय कबीर परमेश्वर जी

उसके हाथों में बालक रूप बनाकर प्रकट हो गए। सूर्य का पारितोष (तोहफा) जानकर बालक को घर ले गई। वे बहुत निर्धन थे। उनको प्रतिदिन एक तोला सोना परमात्मा के बिछौने के नीचे मिलने लगा। यह भी उन्होंने सूर्यदेव की कृपा माना। पाँच वर्ष की आयु का होने पर उनको भक्ति बताई, परंतु बालक जानकर उनको परमात्मा की एक बात पर भी विश्वास नहीं हुआ। उस जन्म में उन्होंने परमात्मा को नहीं पहचाना। जिस कारण से परमेश्वर कबीर जी बालक रूप अंतर्ध्यान हो गए। दोनों पति-पत्नी पुत्र मोह में व्याकुल हुए।

❖ परमात्मा की सेवा के फलस्वरूप उनको अगला जन्म भी मानव का मिला। चन्दवारा शहर में पुरूष का नाम चंदन तथा स्त्री का नाम उद्धा था। ब्राह्मण कुल में जन्म हुआ। दोनों निःसंतान थे। एक दिन उद्धा सरोवर पर स्नान करने गई। वहाँ कबीर परमेश्वर जी कमल के फूल पर शिशु रूप धारण करके विराजमान हुए। उद्धा बालक कबीर जी को उठाकर घर ले गई। लोकलाज के कारण चन्दन ने पत्नी से कहा कि इस बालक को जहाँ से लाई थी, वहीं छोड़कर आ। कुल के लोग मजाक करेंगे। दोनों पति-पत्नी परमात्मा को लेकर जल में डालने चले तो परमात्मा उनके हाथों से गायब हो गए। दोनों बहुत व्याकुल हुए। परमात्मा का पारितोष न लेने के भय से सारी आयु रोते रहे। अगला जन्म भी मानव का हुआ।

कथा इस प्रकार है :-

भक्त सुदर्शन वाल्मीकि के माता-पिता वाले जीवों को कलयुग में तीसरा भी मानव शरीर प्राप्त हुआ। भारत वर्ष के काशी शहर में सुदर्शन के पिता वाले जीव ने एक ब्राह्मण के घर जन्म लिया तथा गौरीशंकर नाम रखा गया तथा सुदर्शन जी की माता वाले जीव ने भी एक ब्राह्मण के घर कन्या रूप में जन्म लिया तथा सरस्वती नाम रखा। युवा होने पर दोनों का विवाह हुआ। गौरी शंकर ब्राह्मण भगवान शिव का उपासक था तथा शिव पुराण की कथा करके भगवान शिव की महिमा का गुणगान किया करता। गौरीशंकर निर्लोभी था। कथा करने से जो धन प्राप्त होता था उसे धर्म में ही लगाया करता था। जो व्यक्ति कथा कराते थे तथा सुनते थे सर्व गौरी शंकर ब्राह्मण के त्याग की प्रसंशा करते थे।

जिस कारण से पूरी काशी में गौरी शंकर की प्रसिद्धि हो रही थी। अन्य स्वार्थी ब्राह्मणों का कथा करके धन इकत्रित करने का धंधा बन्द हो गया। इस कारण से वे ब्राह्मण उस गौरीशंकर ब्राह्मण से ईर्ष्या रखते थे। इस बात का पता मुसलमानों को लगा कि एक गौरीशंकर ब्राह्मण काशी में हिन्दू धर्म के प्रचार को जोर-शोर से कर रहा है। इसको किस तरह बन्द करें। मुसलमानों को पता चला कि काशी के सर्व ब्राह्मण गौरीशंकर से ईर्ष्या रखते हैं। इस बात का लाभ मुसलमानों ने उठाया। गौरीशंकर व सरस्वती के घर

के अन्दर अपना पानी छिड़क दिया। अपना झूठा पानी उनके मुख पर लगा दिया। कपड़ों पर भी छिड़क दिया तथा आवाज लगा दी कि गौरीशंकर तथा सरस्वती मुसलमान बन गए हैं। पुरूष का नाम नूरअली उर्फ नीरू तथा स्त्री का नाम नियामत उर्फ नीमा रखा। अन्य स्वार्थी ब्राह्मणों को पता चला तो उनका दाव लग गया। उन्होंने तुरन्त ही ब्राह्मणों की पंचायत बुलाई तथा फैसला कर दिया कि गौरीशंकर तथा सरस्वती मुसलमान बन गए हैं अब इनका ब्राह्मण समाज से कोई नाता नहीं रहा है। इनका गंगा में स्नान करने, मन्दिर में जाने तथा हिन्दू ग्रन्थों को पढ़ने पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया है।

गौरीशंकर (नीरू) जी कुछ दिन तो बहुत परेशान रहे। जो कथा करके धन आता था उसी से घर का निर्वाह चलता था। उसके बन्द होने से रोटी के भी लाले पड़ गए। नीरू ने विचार करके अपने निर्वाह के लिए कपड़ा बुनने का कार्य प्रारम्भ किया। जिस कारण से जुलाहा कहलाया। कपड़ा बुनने से जो मजदूरी मिलती थी उससे अपना तथा अपनी पत्नी का पेट पालता था। जिस समय धन अधिक आ जाता तो उसको धर्म में लगा देता था। विवाह को कई वर्ष बीत गए थे। उनको कोई सन्तान नहीं हुई। दोनों पति-पत्नी ने बच्चे होने के लिए बहुत अनुष्ठान किए। साधु सन्तों का आशीर्वाद भी लिया परन्तु कोई सन्तान नहीं हुई। हिन्दुओं द्वारा उन दोनों का गंगा नदी में स्नान करना बन्द कर दिया गया था। उनके निवास स्थान से लगभग चार कि.मी. दूर एक लहर तारा नामक सरोवर था जिस में गंगा नदी का ही जल लहरों के द्वारा नीची पटरी के ऊपर से उछल कर आता था। इसलिए उस सरोवर का नाम लहरतारा पड़ा। उस तालाब में बड़े-2 कमल के फूल उगे हुए थे। मुसलमानों ने गौरीशंकर का नाम नूर अल्ली रखा जो उर्फ नाम से नीरू कहलाया तथा पत्नी का नाम नियामत रखा जो उर्फ नाम से नीमा कहलाई। नीरू-नीमा भले ही मुसलमान बन गए थे परन्तु अपने हृदय से साधना भगवान शंकर जी की ही करते थे तथा प्रतिदिन सवेरे सूर्योदय से पूर्व लहरतारा तालाब में स्नान करने जाते थे।

''नीरू-नीमा को कबीर परमात्मा की लहरतारा सरोवर में प्राप्ति''

ज्येष्ठ मास की शुक्ल पूर्णमासी विक्रमी संवत् 1455 (सन् 1398) सोमवार को भी ब्रह्म मुहूर्त (ब्रह्म मुहूर्त का समय सूर्योदय से लगभग डेढ़ घण्टा पहले होता है) में स्नान करने के लिए जा रहे थे। नीमा रास्ते में भगवान शंकर से प्रार्थना कर रही थी कि हे दीनानाथ! आप अपने दासों को भी एक बच्चा-बालक दे दो आप के घर में क्या कमी है प्रभु ! हमारा भी जीवन सफल हो जाएगा। दुनिया के व्यंग्य सुन-2 कर आत्मा दुःखी हो जाती है। मुझ पापिन से ऐसी कौन सी गलती किस जन्म में हुई है जिस कारण मुझे बच्चे का मुख देखने को

तरसना पड़ रहा है। हमारे पापों को क्षमा करो प्रभु! हमें भी एक बालक दे दो।

यह कह कर नीमा फूट-2 कर रोने लगी तब नीरू ने धैर्य दिलाते हुए कहा हे नीमा! हमारे भाग्य में सन्तान नहीं है यदि भाग्य में सन्तान होती तो प्रभु शिव अवश्य प्रदान कर देते। आप रो-2 कर आँखे खराब कर लोगी। बालक भाग्य में है नहीं जो वृद्ध अवस्था में ऊंगली पकड़ लेता। आप मत रोओ आप का बार-2 रोना मेरे से देखा नहीं जाता। यह कह कर नीरू की आँखे भी भर आई। इसी तरह प्रभु की चर्चा व बालक प्राप्ति की याचना करते हुए उसी लहरतारा तालाब पर पहुँच गए। प्रथम नीमा ने प्रवेश किया, पश्चात् नीरू ने स्नान करने को तालाब में प्रवेश किया। सुबह का अंधेरा शीघ्र ही उजाले में बदल जाता है। जिस समय नीमा ने स्नान किया था उस समय तक तो अंधेरा था। जब कपड़े बदल कर पुनः तालाब पर उस कपड़े को धोने के लिए गई, जिसे पहन कर स्नान किया था, उस समय नीरू तालाब में प्रवेश करके गोते लगा-2 कर मल मल कर स्नान कर रहा था।

नीमा की दृष्टि एक कमल के फूल पर पड़ी जिस पर कोई वस्तु हिल रही थी। प्रथम नीमा ने जाना कोई सर्प है जो कमल के फूल पर बैठा अपने फन को उठा कर हिला रहा है। उसने सोचा कहीं यह सर्प मेरे पति को न डस ले नीमा ने उसको ध्यानपूर्वक देखा वह सर्प नहीं है कोई बालक था। जिसने एक पैर अपने मुख में ले रखा था तथा दूसरे को हिला रहा था। नीमा ने अपने पति से ऊँची आवाज में कहा देखियो जी! एक छोटा बच्चा कमल के फूल पर लेटा है। वह जल में डूब न जाए।

नीरू स्नान करते-2 उस की ओर न देख कर बोला नीमा! बच्चों की चाह ने तुझे पागल बना दिया है। अब तुझे जल में भी बच्चे दिखाई देने लगे हैं। नीमा ने अधिक तेज आवाज में कहा मैं सच कह रही हूँ, देखो सचमुच एक बच्चा कमल के फूल पर, वह रहा, देखो! देखो--- नीमा की आवाज में परिवर्तन व अधिक कसक देखकर नीरू ने उस ओर देखा जिस ओर नीमा हाथ से संकेत कर रही थी। कमल के फूल पर नवजात शिशु को देखकर नीरू ने आव देखा न ताव झपट कर कमल के फूल सहित बच्चा उठाकर अपनी पत्नी को दे दिया।

नीमा ने परमेश्वर कबीर जी को सीने से लगाया, मुख चूमा, पुत्रवत् प्यार किया जिस परमेश्वर की खोज में ऋषि-मुनियों ने जीवन भर शास्त्रविधि विरूद्ध साधना की उन्हें नहीं मिला। वही परमेश्वर भक्तमति नीमा की गोद में खेल रहा था। जिस शान्तिदायक परमेश्वर को आनंद की प्राप्ति के लिए प्राप्त करने की इच्छा से साधना की जाती है वही परमेश्वर नीमा के हाथों में सीने से लगा हुआ था। उस समय जो शीतलता व आनन्द का अनुभव भक्तमति नीमा को हो रहा होगा उस की कल्पना ही की जा सकती है। नीरू स्नान

करके जल से बाहर आया। नीरू ने सोचा यदि हम इस बच्चे को नगर में ले जाऐंगे तो शहर वासी हम पर शक करेंगे सोचेंगे कि ये किसी के बच्चे को चुरा कर लाए हैं। कहीं हमें नगर से निकाल दें। इस डर से नीरू ने अपनी पत्नी से कहा नीमा! इस बच्चे को यहीं छोड़ दे इसी में अपना हित है। नीमा बोली हे पति देव! यह भगवान शंकर का दिया खिलौना है। इस बच्चे ने पता नहीं मुझ पर क्या जादू कर दिया है कि मेरा मन इस बच्चे के वश हो गया है। मैं इस बच्चे को नहीं त्याग सकती। नीरू ने नीमा को अपने मन की बात से अवगत करवाया। बताया कि यह बच्चा नगर वासी हम से छीन लेगें, पूछेंगे कहाँ से लाए हो? हम कहेंगे लहरतारा तालाब में कमल के फूल पर मिला है। हमारी बात पर कोई भी विश्वास नहीं करेगा। हो सकता है वे हमें नगर से भी निकाल दें। तब नीमा ने कहा मैं इस बालक के साथ देश निकाला भी स्वीकार कर लूँगी। परन्तु इस बच्चे को नहीं त्याग सकती। मैं अपनी मृत्यु को भी स्वीकार कर लूँगी। परन्तु इस बच्चे से भिन्न नहीं रह सकूँगी।

नीमा का हठ देख कर नीरू को क्रोध आ गया तथा अपने हाथ को थप्पड़ मारने की स्थिति में उठा कर आँखों में आँसू भरकर करूणाभरी आवाज में बोला नीमा मैंने आज तक तेरी किसी भी बात को नहीं ठुकरवाया। यह जान कर कि हमारे कोई बच्चा नहीं है मैंने तुझे पति तथा पिता दोनों का प्यार दिया है। तू मेरे नम्र स्वभाव का अनुचित लाभ उठा रही है। आज मेरी स्थिति को न समझ कर अपने हठी स्वभाव से मुझे कष्ट दे रही है। विवाहित जीवन में नीरू ने प्रथम बार अपनी पत्नी की ओर थप्पड़ मारने के लिए हाथ उठाया था तथा कहा कि या तो इस बच्चे को यहीं रख दे वरना आज मैं तेरी बहुत पिटाई करूँगा।

उसी समय नीमा के सीने से चिपके बालक रूपधारी परमेश्वर बोले हे नीरू! आप मुझे अपने घर ले चलो आप पर कोई आपत्ति नहीं आएगी। मैं सतलोक से चलकर तुम्हारे हित के लिए यहाँ आया हूँ। नवजात शिशु के मुख से उपरोक्त वचन सुनकर नीरू (नूर अल्ली) डर गया कहीं यह कोई देव या पित्तर या कोई सिद्ध पुरूष न हो और मुझे शाप न दे दे। इस डर से नीरू कुछ नहीं बोला घर की ओर चल पड़ा। पीछे-2 उसकी पत्नी परमेश्वर को प्यार करती हुई चल पड़ी।

''कबीर जी के सशरीर सत्यलोक से आने का साक्षी''

प्रतिदिन की तरह ज्येष्ठ मास की पूर्णमासी विक्रमी संवत् 1455 (1398ई.) सोमवार को भी एक अष्टानन्द नामक ऋषि, जो स्वामी रामानन्द ऋषि जी के शिष्य थे काशी शहर से बाहर बने लहरतारा तालाब के स्वच्छ जल में स्नान

करने के लिए प्रतिदिन की तरह गए। ब्रह्म मुहूर्त का समय था (ब्रह्म मुहूर्त का समय सूर्योदय से लगभग डेढ़ घण्टा पूर्व का होता है) ऋषि अष्टानन्द जी ने लहरतारा तालाब में स्नान किया। वे प्रतिदिन वहीं बैठ कर कुछ समय अपनी पाठ पूजा किया करते थे। ऋषि अष्टानन्द जी ध्यान मग्न होने की चेष्टा कर ही रहे थे उसी समय आकाश से एक प्रकाश पुंज नीचे की ओर आता दिखाई दिया। वह इतना तेज प्रकाश था उसे ऋषि जी की चर्म दृष्टि सहन नहीं कर सकी। जिस प्रकार आँखें सूर्य की रोशनी को सहन नहीं कर पाती। सूर्य के प्रकाश को देखने के पश्चात् आँखे बन्द करने पर सूर्य का आकार दिखाई देता है उसमें प्रकाश अधिक नहीं होता।

इसी प्रकार प्रथम बार परमेश्वर के प्रकाश को देखने से ऋषि जी की आँखे बन्द हो गई बन्द आँखों में शिशु को देख कर फिर से आँखे खोली। ऋषि अष्टानन्द जी ने देखा कि वह प्रकाश लहरतारा तालाब पर उतर गया। जिससे पूरा सरोवर प्रकाश मान हो गया तथा देखते ही देखते वह प्रकाश जलाशय के एक कोने में सिमट गया। ऋषि अष्टानन्द जी ने सोचा यह कैसा दृश्य मैंने देखा? यह मेरी भक्ति की उपलब्धि है या मेरा दृष्टिदोष है? इस के विषय में गुरूदेव, स्वामी रामानन्द जी से पूछूँगा। यह विचार करके ऋषि अष्टानन्द जी अपनी शेष साधना को छोड़ कर अपने पूज्य गुरूदेव के पास गए। स्वामी रामानन्द जी को सर्व घटनाक्रम बताकर पूछा हे गुरूदेव! यह मेरी भक्ति की उपलब्धि है या मेरी भ्रमणा है? मैंने प्रकाश आकाश से नीचे की ओर आते देखा जिसे मेरी आँखे सहन नहीं कर सकी। आँखे बन्द हुई तो नवजात शिशु दिखाई दिया। पुनः आँखें खोली तो उस प्रकाश से पूरा जलाशय ही जगमगा गया, पश्चात् वह प्रकाश उस तालाब के एक कोने में सिमट गया। मैं आप से कारण जानने की इच्छा से अपनी साधना बीच में ही छोड़ कर आया हूँ। कृपया मेरी शंका का समाधान कीजिए।

ऋषि रामानन्द स्वामी जी ने अपने शिष्य अष्टानन्द से कहा हे ब्राह्मण! यह न तो तेरी भक्ति की उपलब्धि है न आप का दृष्टिदोष ही है। इस प्रकार की घटनाऐं उस समय होती हैं। जिस समय ऊपर के लोकों से कोई देव पृथ्वी पर अवतार धारण करने के लिए आते हैं। वह किसी स्त्री के गर्भ में निवास करता है। फिर बालक रूप धारण करके नर लीला करके अपना अपेक्षित कार्य पूर्ण करता है। कोई देव ऊपर के लोकों से आया है। वह काशी नगर में किसी के घर जन्म लेकर अपना प्रारब्ध पूरा करेगा। उपरोक्त वचनों द्वारा ऋषि रामानन्द स्वामी जी ने अपने शिष्य अष्टानन्द की शंका का समाधान किया। उन ऋषियों की यही धारणा थी की सर्व अवतार गण माता के गर्भ से ही जन्म लेते हैं।

बालक को लेकर नीरू तथा नीमा अपने घर जुलाहा मोहल्ला (कॉलोनी) में आए। जिस भी नर व नारी ने नवजात शिशु रूप में परमेश्वर कबीर

जी को देखा वह देखता ही रह गया। परमेश्वर का शरीर अति सुन्दर था। आँख जैसे कमल का फूल हो, घुँघराले बाल, लम्बे हाथ। लम्बी-2 अँगुलियाँ शरीर से मानो नूर झलक रहा हो। पूरी काशी नगरी में ऐसा अद्भुत बालक नहीं था। जो भी देखता वहीं अन्य को बताता कि नूर अली को एक बालक तालाब पर मिला है आज ही उत्पन्न हुआ शिशु है। डर के मारे लोक लाज के कारण किसी विधवा ने डाला होगा। बालक को देखने के पश्चात् उसके चेहरे से दृष्टि हटाने को दिल नहीं करता, आत्मा अपने आप खिंची जाती है। पता नहीं बालक के मुख पर कैसा जादू है? पूरी काशी परमेश्वर के बालक रूप को देखने को उमड़ पड़ी। स्त्री-पुरूष झुण्ड के झुण्ड बना कर मंगल गान गाते हुए, नीरू के घर बच्चे को देखने को आए।

बच्चे (कबीर परमेश्वर) को देखकर कोई कह रहा था, यह बालक तो कोई देवता का अवतार है, कोई कह रहा था। यह तो साक्षात् विष्णु जी ही आए लगते हैं। कोई कह रहा था यह भगवान शिव ही अपनी काशी नगरी को कृत्तार्थ करने को उत्पन्न हुए हैं। कोई कह रहा था। यह तो किन्नर का अवतार है, कोई कह रहा था। यह पित्तर नगरी से आया है। यह सर्व वार्ता सुनकर नीमा अप्रसन्न हो कर कहती थी कि मेरे बच्चे के विषय में कुछ मत कहो। हे अल्लाह! मेरे बच्चे की इनकी नजर से रक्षा करना। तुमने कभी बच्चा देखा भी है कि नहीं। ऐसे समूह के समूह मेरे बालक को देखने आ रहे हो। आने वाले स्त्री-पुरूष बोले हे नीमा। हमने बालक तो बहुत देखे हैं परन्तु आप के बालक जैसा नहीं देखा। इसीलिए हम इसे देखने आए हैं। ऊपर अपने-2 लोकों से श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिवजी भी झांक कर देखने लगे। काशी के वासियों के मुख से अपने में से (श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा शिव में से) एक यह बालक होने की बात सुनकर बोले कि यह बालक तो किसी अन्य लोक से आया है। इस के मूल स्थान से हम भी अपरिचित हैं परन्तु है बहुत शक्ति युक्त कोई सिद्ध पुरूष है।

''शिशु कबीर परमेश्वर का नामांकन''

नीरू (नूर अल्ली) तथा नीमा पहले हिन्दू ब्राह्मण-ब्राह्मणी थे। इस कारण लालच वश ब्राह्मण लड़के का नाम रखने आए। उसी समय काजी मुसलमान अपनी पुस्तक कुर्आन शरीफ को लेकर लड़के का नाम रखने के लिए आ गए। उस समय दिल्ली में मुगल बादशाहों का शासन था जो पूरे भारतवर्ष पर शासन करते थे। जिस कारण हिन्दू समाज मुसलमानों से दबता था। काजियों ने कहा लड़के का नाम करण हम मुसलमान विधि से करेंगे अब ये मुसलमान हो चुके हैं। यह कहकर काजियों में मुख्य काजी ने कुर्आन शरीफ पुस्तक को कहीं से खोला। उस पृष्ठ पर प्रथम पंक्ति में प्रथम नाम

''कबीरन्'' लिखा था। काजियों ने सोचा ''कबीर'' नाम का अर्थ बड़ा होता है। इस छोटे जाति (जुलाहे अर्थात् धाणक) के बालक का नाम कबीर रखना शोभा नहीं देगा। यह तो उच्च घरानों के बच्चों के नाम रखने योग्य है। शिशु रूपधारी परमेश्वर काजियों के मन के दोष को जानते थे। काजियों ने पुनः पवित्र कुरान शरीफ को नाम रखने के उद्देश्य से खोला। उन दोनों पृष्ठों पर कबीर-कबीर-कबीर अखर लिखे थे अन्य लेख नहीं था। काजियों ने फिर कुर्आन शरीफ को खोला उन पृष्ठों पर भी कबीर-कबीर-कबीर अक्षर ही लिखा था। काजियों ने पूरी कुर्आन का निरीक्षण किया तो उनके द्वारा लाई गई कुर्आन शरीफ में सर्व अक्षर कबीर-कबीर-कबीर-कबीर हो गए काजी बोले इस बालक ने कोई जादू मन्त्र करके हमारी कुर्आन शरीफ को ही बदल डाला। तब कबीर परमेश्वर शिशु रूप में बोले हे काशी के काजियों। मैं कबीर अल्ला अर्थात् अल्लाहुअकबर, हूँ। मेरा नाम ''कबीर'' ही रखो। काजियों ने अपने साथ लाई कुरान को वहीं पटक दिया तथा चले गए। बोले इस बच्चे में कोई प्रेत आत्मा बोलती है।

''शिशु कबीर देव द्वारा कुँवारी गाय का दूध पीना''

बालक कबीर को दूध पिलाने की कोशिश नीमा ने की तो परमेश्वर ने मुख बन्द कर लिया। सर्व प्रयत्न करने पर भी नीमा तथा नीरू बालक को दूध पिलाने में असफल रहे। 25 दिन जब बालक को निराहार बीत गए तो माता-पिता अति चिन्तित हो गए। 24 दिन से नीमा तो रो-2 कर विलाप कर रही थी। सोच रही थी यह बच्चा कुछ भी नहीं खा रहा है। यह मरेगा, मेरे बेटे को किसी की नजर लगी है। 24 दिन से लगातार नजर उतारने की विधि भिन्न भिन्न-2 स्त्री-पुरूषों द्वारा बताई प्रयोग करके थक गई। कोई लाभ नहीं हुआ। आज पच्चीसवाँ दिन उदय हुआ। माता नीमा रात्रि भर जागती रही तथा रोती रही कि पता नहीं यह बच्चा कब मर जाएगा। मैं भी साथ ही फाँसी पर लटक जाऊँगी। मैं इस बच्चे के बिना जीवित नहीं रह सकती बालक कबीर का शरीर पूर्ण रूप से स्वस्थ था तथा ऐसे लग रहा था जैसे बच्चा प्रतिदिन एक किलो ग्राम (एक सेर) दूध पीता हो। परन्तु नीमा को डर था कि बिना कुछ खाए पीए यह बालक जीवित रह ही नहीं सकता। यह कभी भी मृत्यु को प्राप्त हो सकता है। यह सोच कर फूट-2 कर रो रही थी। भगवान शंकर के साथ-साथ निराकार प्रभु की भी उपासना तथा उससे की गई प्रार्थना जब व्यर्थ रही तो अति व्याकुल होकर रोने लगी।

भगवान शिव, एक ब्राह्मण (ऋषि) का रूप बना कर नीरू की झोंपड़ी के सामने खड़े हुए तथा नीमा से रोने का कारण जानना चाहा। नीमा रोती रही हिचकियाँ लेती रही। सन्त रूप में खड़े भगवान शिव जी के अति आग्रह

करने पर नीमा रोती-2 कहने लगी हे ब्राह्मण ! मेरे दुःख से परिचित होकर आप भी दुःखी हो जाओगे। फकीर वेशधारी शिव भगवान बोले हे माई! कहते है अपने मन का दुःख दूसरे के समक्ष कहने से मन हल्का हो जाता है। हो सकता है आप के कष्ट को निवारण करने की विधि भी प्राप्त हो जाए। आँखों में आँसू जिव्हा लड़खड़ाते हुए गहरे साँस लेते हुए नीमा ने बताया हे महात्मा जी! हम निःसन्तान थे। पच्चीस दिन पूर्व हम दोनों प्रतिदिन की तरह काशी में लहरतारा तालाब पर स्नान करने जा रहे थे। उस दिन ज्येष्ठ मास की शुक्ल पूर्णमासी की सुबह थी। रास्ते में मैंने अपने इष्ट भगवान शंकर से पुत्र प्राप्ति की हृदय से प्रार्थना की थी मेरी पुकार सुनकर दीनदयाल भगवान शंकर जी ने उसी दिन एक बालक लहरतारा तालाब में कमल के फूल पर हमें दिया। बच्चे को प्राप्त करके हमारे हर्ष का कोई ठिकाना नहीं रहा। यह हर्ष अधिक समय तक नहीं रहा। इस बच्चे ने दूध नहीं पीया। सर्व प्रयत्न करके हम थक चुके हैं। आज इस बच्चे को पच्चीसवां दिन है कुछ भी आहार नहीं किया है। यह बालक मरेगा। इसके साथ ही मैं आत्महत्या करूँगी। मैं इसकी मृत्यु की प्रतिक्षा कर रही हूँ। सर्व रात्रि बैठ कर तथा रो-2 व्यतीत की है। मैं भगवान शंकर से प्रार्थना कर रही हूँ कि हे भगवन्! इससे अच्छा तो यह बालक न देते। अब इस बच्चे में इतनी ममता हो गई है कि मैं इसके बिना जीवित नहीं रह सकूंगी।

नीमा के मुख से सर्वकथा सुनकर साधु रूपधारी भगवान शंकर ने कहा। आप का बालक मुझे दिखाईए। नीमा ने बालक को पालने से उठाकर ऋषि के समक्ष प्रस्तुत किया। दोनों प्रभुओं की आपस में दृष्टि मिली। भगवान शंकर जी ने शिशु कबीर जी को अपने हाथों में ग्रहण किया तथा मस्तिष्क की रेखाएँ व हस्त रेखाएँ देख कर बोले नीमा! आप के बेटे की लम्बी आयु है यह मरने वाला नहीं है। देख कितना स्वस्थ है। कमल जैसा चेहरा खिला है। नीमा ने कहा हे विप्रवर! बनावटी सांत्वना से मुझे सन्तोष होने वाला नहीं है। बच्चा दूध पीएगा तो मुझे सुख की साँस आएगी। पच्चीस दिन के बालक का रूप धारण किए परमेश्वर कबीर जी ने भगवान शिव जी से कहा हे भगवन्! आप इन्हें कहो एक कुँवारी गाय लाऐं। आप उस कंवारी गाय पर अपना आशीर्वाद भरा हस्त रखना, वह दूध देना प्रारम्भ कर देगी। मैं उस कुँवारी गाय का दूध पीऊँगा। वह गाय आजीवन बिना ब्याए (अर्थात् कुँवारी रह कर ही) दूध दिया करेगी उस दूध से मेरी परवरिश होगी। परमेश्वर कबीर जी तथा भगवान शंकर (शिव) जी की सात बार चर्चा हुई।

शिवजी ने नीमा से कहा आप का पति कहाँ है? नीमा ने अपने पति को पुकारा वह भीगी आँखों से उपस्थित हुआ तथा ब्राह्मण को प्रणाम किया। ब्राह्मण ने कहा नीरू! आप एक कुँवारी गाय लाओ। वह दूध देवेगी। उस

दूध को यह बालक पीएगा। नीरू कुँवारी गाय ले आया तथा साथ में कुम्हार के घर से एक ताजा छोटा घड़ा (चार कि.ग्रा. क्षमता का मिट्टी का पात्र) भी ले आया। परमेश्वर कबीर जी के आदेशानुसार विप्ररूपधारी शिव जी ने उस कंवारी गाय की पीठ पर हाथ मारा जैसे थपकी लगाते हैं। गऊ माता के थन लम्बे-2 हो गए तथा थनों से दूध की धार बह चली। नीरू को पहले ही वह पात्र थनों के नीचे रखने का आदेश दे रखा था। दूध का पात्र भरते ही थनों से दूध निकलना बन्द हो गया। वह दूध शिशु रूपधारी कबीर परमेश्वर जी ने पीया। नीरू नीमा ने ब्राह्मण रूपधारी भगवान शिव के चरण लिए तथा कहा आप तो साक्षात् भगवान शिव के रूप हो। आपको भगवान शिव ने ही हमारी पुकार सुनकर भेजा है। हम निर्धन व्यक्ति आपको क्या दक्षिणा दे सकते हैं? हे विप्र! 24 दिनों से हमने कोई कपड़ा भी नहीं बुना है। विप्र रूपधारी भगवान शंकर बोले! साधु भूखा भाव का, धन का भूखा नाहीं। जो है भूखा धन का, वह तो साधु नाहीं। यह कहकर विप्र रूपधारी शिवजी ने वहाँ से प्रस्थान किया।

विशेष वर्णन अध्याय ''ज्ञान सागर'' के पृष्ठ 74 तथा ''स्वसमबेद बोध'' के पृष्ठ 134 पर भी है जो इस प्रकार है :-

''कबीर सागर के ज्ञान सागर के पृष्ठ 74 पर''

सुत काशी को ले चले, लोग देखन तहाँ आय।
अन्न–पानी भक्ष नहीं, जुलहा शोक जनाय।।
तब जुलहा मन कीन तिवाना, रामानन्द सो कहा उत्पाना।।
मैं सुत पायो बड़ा गुणवन्ता। कारण कौण भखै नहीं सन्ता।
रामानन्द ध्यान तब धारा। जुलहा से तब बचन उच्चारा।।।
पूर्व जन्म तैं ब्राह्मण जाती। हरि सेवा किन्ही भलि भांति।।
कुछ सेवा तुम हरि की चुका। तातैं भयों जुलहा का रूपा।।
प्रति प्रभु कह तोरी मान लीन्हा। तातें उद्यान में सुत तोंह दिन्हा।।

नीरू वचन

हे प्रभु जस किन्हो तस पायो। आरत हो तव दर्शन आयो।।
सो कहिए उपाय गुसाई। बालक क्षुदावन्त कुछ खाई।।

रामानन्द वचन

रामानन्द अस युक्ति विचारा। तव सुत कोई ज्ञानी अवतारा।।
बछिया जाही बैल नहीं लागा। सो लाई ठाढ़ करो तेही आगै।।
साखी = दूध चलै तेहि थन तें, दूधहि धरो छिपाई।
क्षूदावन्त जब होवै, तबहि दियो पिलाई।।

चौपाई

जुलहा एक बछिया लै आवा। चल्यो दूत (दूध) कोई मर्म न पावा।।

चल्यो दूध, जुलहा हरषाना। राखो छिपाई काहु नहीं जाना।।।
पीवत दूध बाल कबीरा। खेलत संतों संग जो मत धीरा।।

ज्ञान सागर पृष्ठ 73 पर चौपाई

''भगवान शंकर तथा कबीर बालक की चर्चा''

{**नोटः- यह प्रकरण अधूरा लिखा है। फिर भी समझने के लिए मेरे ऊपर कृपा है परमेश्वर कबीर जी की। पहले यह वाणी पढ़ें जो ज्ञान सागर के पृष्ठ 73 पर लिखी है, फिर अन्त में सारज्ञान यह दास (रामपाल दास) बताएगा।**}

चौपाई

घर नहीं रहो पुरूष (नीरू) और नारी (नीमा)। मैं शिव सों अस वचन उचारी।।
आन के बार बदत हो योग। आपन नार करत हो भोग।।

नोटः- जो वाणी कोष्ठक { } में लिखी हैं, वे वाणी ज्ञान सागर में नहीं लिखी गई हैं जो पुरातन कबीर ग्रन्थ से ली हैं।

{ऐसा भ्रम जाल फलाया। परम पुरूष का नाम मिटाया।}
काशी मरे तो जन्म न होई। {स्वर्ग में बास तास का सोई}
{ मगहर मरे सो गधा जन्म पावा, काशी मरे तो मोक्ष करावा}
और पुन तुम सब जग ठग राखा। काशी मरे हो अमर तुम भाखा
जब शंकर होय तव काला, {ब्रह्मण्ड इक्कीस हो बेहाला}
{तुम मरो और जन्म उठाओ, ओरेन को कैसे अमर कराओ}
{सुनों शंकर एक बात हमारी, एक मंगाओ धेनु कंवारी}
{साथ कोरा घट मंगवाओ। बछिया के पीठ हाथ फिराओ}
{दूध चलैगा थनतै भाई, रूक जाएगा बर्तन भर जाई}
{सुनो बात देवी के पूता। हम आए जग जगावन सूता}
{पूर्ण पुरूष का ज्ञान बताऊँ। दिव्य मन्त्र दे अमर लोक पहुँचाऊँ}
{तब तक नीरू जुलहा आया। रामानन्द ने जो समझाया}
{रामानन्द की बात लागी खारी। दूध देवेगी गाय कंवारी}
{जब शंकर पंडित रूप में बोले, कंवारी धनु लाओ तौले}
{साथ कोरा घड़ा भी लाना, तास में धेनु दूधा भराना}
{तब जुलहा बछिया अरू बर्तन लाया, शंकर गाय पीठ हाथ लगाया}
{दूध दिया बछिया कंवारी। पीया कबीर बालक लीला धारी}
{नीरू नीमा बहुते हर्षाई। पंडित शिव की स्तुति गाई}
{कह शंकर यह बालक नाही। इनकी महिमा कही न जाई}
{मस्तक रेख देख मैं बोलूं। इनकी सम तुल काहे को तोलूं}
{ऐस नछत्र देखा नाहीं, घूम लिया मैं सब ठाहीं।}
{इतना कहा तब शंकर देवा, कबीर कहे बस कर भेवा}
{मेरा मर्म न जाने कोई। चाहे ज्योति निरंजन होई}

{हम है अमर पुरूष अवतारा, भवसैं जीव ऊतारूं पारा}
{इतना सुन चले शंकर देवा, शिश चरण धर की नीरू नीमा सेवा}
हे स्वामी मम भिक्षा लीजै, सब अपराध क्षमा (हमरे) किजै
{कह शंकर हम नहीं पंडित भिखारी, हम है शंकर त्रिपुरारी।}
{साधु संत को भोजन कराना, तुमरे घर आए रहमाना}
{ज्ञान सुन शंकर लजा आई, अद्भुत ज्ञान सुन सिर चक्राई।}
{ऐसा निर्मल ज्ञान अनोखा, सचमुच हमार है नहीं मोखा}

❖ **कबीर सागर अध्याय ''स्वसम वेद बोध'' पृष्ठ 132 से 134 तक परमेश्वर कबीर जी की प्रकट होने वाली वाणी है, परंतु इसमें भी कुछ गड़बड़ कर रखी है। कहा कि जुलाहा नीरू अपनी पत्नी का गौना (यानि विवाह के बाद प्रथम बार अपनी पत्नी को उसके घर से लाना को गौना अर्थात् मुकलावा कहते हैं।) यह गलत है। जिस समय परमात्मा कबीर जी नीरू को मिले, उस समय उनकी आयु लगभग 50 वर्ष थी। विचार करें गौने से आते समय कोई बालक मिल जाए तो कोई अपने घर नहीं रखता। वह पहले गाँव तथा सरकार को बताता है। फिर उसको किसी निःसंतान को दिया जाता है यदि कोई लेना चाहे तो। नहीं तो राजा उसको बालग्रह में रखता है या अनाथालय में छोड़ते हैं। नीमा ने तो बच्चे को छोड़ना ही नहीं चाहा था। फिर भी जो सच्चाई है वह है ही, हमने परमात्मा पाना है। उसको कैसे पाया जाता है, वह विधि सत्य है तो मोक्ष सम्भव है, ज्ञान इसलिए आवश्यक है कि विश्वास बने कि परमात्मा कौन है, कहाँ प्रमाण है? वह चेष्टा की जा रही है। अब केवल ''बालक कबीर जी ने कंवारी गाय का दूध पीया था, वे वाणी लिखता हूँ''।**

स्वसम वेद बोध पृष्ठ 134 से

पंडित निज निज भौन सिधारा। बिन भोजन बीते बहु बारा (दिन)।।
बालक रूप तासु (नीरू) ग्रह रहेता। खान पान नाहीं कुछ गहते।
जोलाहा तब मन में दुःख पाई। भोजन करो कबीर गोसांई।।
जोलाहा जोलाही दुखित निहारी। तब हम तिन तें बचन उचारी।।
कोरी (कंवारी) एक बछिया ले आवो। कोरा भाण्डा एक मंगाओ।।
तत छन जोलाहा चलि जाई। गऊ की बछिया कोरी (कंवारी) ल्याई।।
कोरा भाण्डा एक गहाई (ले आई)। भांडा बछिया शिघ्र (दोनों) आई।।
दोऊ कबीर के समुख आना। बछिया दिशा दृष्टि निज ताना।।
बछिया हेठ सो भाण्डा धरेऊ। ताके थनहि दूधते भरेऊ।
दूध हमारे आगे धरही, यहि विधि खान–पान नित करही।।

1. ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 1 मंत्र 9

अभी इमं अध्न्या उत श्रीणन्ति धेनवः शिशुम्। सोममिन्द्राय पातवे।।9।।

अभी इमम्–अध्न्या उत श्रीणन्ति धेनवः शिशुम् सोमम् इन्द्राय पातवे।

(उत) विशेष कर (इमम्) इस (शिशुम्) बालक रूप में प्रकट (सोमम्) पूर्ण परमात्मा अमर प्रभु की (इन्द्राय) सुखदायक सुविधा के लिए जो आवश्यक पदार्थ शरीर की (पातवे) वृद्धि के लिए चाहिए वह पूर्ति (अभी) पूर्ण तरह (अध्न्या धेनवः) जो गाय, सांड द्वारा कभी भी परेशान न की गई हों अर्थात् कुँवारी गायों द्वारा (श्रीणन्ति) परवरिश की जाती है।

भावार्थ - पूर्ण परमात्मा अमर पुरुष जब लीला करता हुआ बालक रूप धारण करके स्वयं प्रकट होता है सुख-सुविधा के लिए जो आवश्यक पदार्थ शरीर वृद्धि के लिए चाहिए वह पूर्ति कुँवारी गायों द्वारा की जाती है अर्थात् उस समय (अध्न्या धेनवः) कुँवारी गाय अपने आप दूध देती है जिससे उस पूर्ण प्रभु की परवरिश होती है।

''नीरू को धन की प्राप्ति''

बालक की प्राप्ति से पूर्व दोनों जने (पति-पत्नी) मिलकर कपड़ा बुनते थे। 25 दिन बच्चे की चिन्ता में कपड़ा बुनने का कोई कार्य न कर सके। जिस कारण से कुछ कर्ज नीरू को हो गया। कर्ज मांगने वाले भी उसी पच्चीसवें दिन आ गए तथा बुरी भली कह कर चले गए। कुछ दिन तक कर्ज न चुकाने पर यातना देने की धमकी सेठ ने दे डाली। दोनों पति -पत्नी अति चिन्तित हो गए। अपने बुरे कर्मों को कोसने लगे। एक चिन्ता का समाधान होता है, दूसरी तैयार हो जाती है। माता-पिता को चिन्तित देख बालक बोला हे माता-पिता! आप चिन्ता न करो। आपको प्रतिदिन एक सोने की मोहर (दस ग्राम स्वर्ण) पालने के बिछौने के नीचे मिलेगी। आप अपना कर्ज उतार कर अपना तथा गऊ का खर्च निकाल कर शेष बचे धन को धर्म कर्म में लगाना। उस दिन के पश्चात् दस ग्राम स्वर्ण प्रतिदिन नीरू के घर परमेश्वर कबीर जी की कृपा से मिलने लगा। यह क्रिया एक वर्ष तक चलती रही।

परमेश्वर कबीर जी ने मुहर (सोने का सिक्का) मिलने वाली लीला को गुप्त रखने को कहा था एक दिन नीमा की प्रिय सखी उसी समय नीरू के घर पर आई जिस समय वह कबीर जी को जगाने का प्रयत्न कर रही थी। नीमा की सखी ने वह स्वर्ण मुहर देख ली तथा बोली इतना सोना आपके पास कैसे आया। नीमा ने अपनी प्रिय सखी से सर्व गुप्त भेद कह सुनाया कि हमें तो एक वर्ष से यह मुहर प्रतिदिन प्राप्त हो रही है। हमारे घर पर भाग्यशाली लड़का कबीर जब से आया है। हम तो आनन्द से रहते हैं। अगले दिन ही सोना मिलना बंद हो गया। नीरू तथा नीमा दोनों मिलकर कपड़ा बुनकर अपने परिवार का पालन पोषण करने लगे। बड़ा होकर बालक कबीर भी पिता के काम में हाथ बटाने लगा। थोड़े ही समय में अधिक बुनाई करने

लगा।

''ऋषि रामानन्द, सेऊ, सम्मन तथा नेकी व कमाली के पूर्व जन्मों का ज्ञान''

ऋषि रामानन्द जी का जीव सत्ययुग में विद्याधर ब्राह्मण था जिसे परमेश्वर सत्य सुकृत नाम से मिले थे। त्रेता युग में वह वेदविज्ञ नामक ऋषि था जिसको परमेश्वर मुनिन्द्र नाम से शिशु रूप में प्राप्त हुए थे तथा कमाली वाली आत्मा सत्य युग में विद्याधर की पत्नी दीपिका थी। त्रेता युग में सूर्या नाम की वेदविज्ञ ऋषि की पत्नी थी। उस समय इन्होनें परमेश्वर को पुत्रवत् पाला तथा प्यार किया था। उसी पुण्य के कारण ये आत्माएँ परमात्मा को चाहने वाली थी। कलयुग में भी इनका परमेश्वर के प्रति अटूट विश्वास था। ऋषि रामानन्द व कमाली वाली आत्माऐं ही सत्ययुग में ब्राह्मण विद्याधर तथा ब्राह्मणी दीपिका वाली आत्माएँ थी जिन्हें ससुराल से आते समय कबीर परमेश्वर एक तालाब में कमल के फूल पर शिशु रूप में मिले थे। यही आत्माऐं त्रेता युग में (वेदविज्ञ तथा सूर्या) ऋषि दम्पति थे। जिन्हें परमेश्वर शिशु रूप में प्राप्त हुए थे। सम्मन तथा नेकी वाली आत्माऐं द्वापर युग में कालू वाल्मीकि तथा उसकी पत्नी गोदावरी थी। जिन्होंने द्वापर युग में परमेश्वर कबीर जी का शिशु रूप में लालन-पालन किया था। उसी पुण्य के फल स्वरूप परमेश्वर ने उन्हें अपनी शरण में लिया था। सेऊ (शिव) वाली आत्मा द्वापर में ही एक गंगेश्वर नामक ब्राह्मण का पुत्र गणेश था। जिसने अपने पिता के घोर विरोध के पश्चात् भी मेरे उपदेश को नहीं त्यागा था तथा गंगेश्वर ब्राह्मण वाली आत्मा कलयुग में शेख तकी बना। वह द्वापर युग से ही परमेश्वर का विरोधी था। गंगेश्वर वाली आत्मा शेख तकी को काल ब्रह्म ने फिर से प्रेरित किया। जिस कारण से शेख तकी (गंगेश्वर) परमेश्वर कबीर जी का शत्रु बना। भक्त श्री कालू तथा गोदावरी का गणेश माता-पिता तुल्य सम्मान करता था। रो-2 कर कहता था काश आज मेरा जन्म आप (वाल्मीकि) के घर होता। मेरे (पालक) माता-पिता (कालू तथा गोदावरी) भी गणेश से पुत्रवत् प्यार करते थे। उनका मोह भी उस बालक में अत्यधिक हो गया था। इसी कारण से वे फिर से उसी गणेश वाली आत्मा अर्थात् सेऊ के माता-पिता (नेकी तथा सम्मन) बने। सम्मन की आत्मा ही नौशेरवाँ शहर में नौशेरखाँ राजा बना। फिर बलख बुखारे का बादशाह अब्राहिम अधम सुलतान हुआ तब उसको पुनः भक्ति पर लगाया।

''शिशु कबीर की सुन्नत करने का असफल प्रयत्न''

शिशु रूपधारी कबीर देव की सुन्नत करने का समय आया तो पूरा जन

समूह सम्बन्धियों का इकट्ठा हो गया। नाई जब शिशु कबीर जी के लिंग को सुन्नत करने के लिए कैंची लेकर गया तो परमेश्वर ने अपने लिंग के साथ एक लिंग और बना लिया। फिर उस सुन्नत करने को तैयार व्यक्ति की आँखों के सामने तीन लिंग और बढ़ते दिखाए कुल पाँच लिंग एक बालक के देखकर वह सुन्नत करने वाला आश्चर्य में पड़ गया। तब कबीर जी शिशु रूप में बोले भईया एक ही लिंग की सुन्नत करने का विधान है ना मुसलमान धर्म में। बोल शेष चार की सुन्नत कहाँ करानी है? जल्दी बोल! शिशु को ऐसे बोलते सुनकर तथा पाँच लिंग बालक के देख कर नाई ने अन्य उपस्थित व्यक्तियों को बुलाकर वह अद्धभुत दृश्य दिखाया।

सर्व उपस्थित जन समूह यह देखकर अचम्भित हो गया। आपस में चर्चा करने लगे यह अल्लाह का कैसा कमाल है एक बच्चे को पाँच पुरूष लिंग। यह देखकर बिना सुन्नत किए ही चला गया। बच्चे के पाँच लिंग होने की बात जब नीरू व नीमा को पता चला तो कहने लगे आप क्या कह रहे हो। यह नहीं हो सकता। दोनों बालक के पास गए तो शिशु को केवल एक ही पुरूष लिंग था पाँच नहीं थे। तब उन दोनों ने उन उपस्थित व्यक्तियों से कहा आप क्या कह रहे थे देखो कहाँ हैं बच्चे के पाँच लिंग केवल एक ही है। उपस्थित सर्व व्यक्तियों ने पहले आँखों देखे थे पांच पुरूष लिंग तथा उस समय केवल एक ही लिंग (पेशाब इन्द्री) को देखकर आश्चर्य चकित हो गए। तब शिशु रूप धारी परमेश्वर बोले है भोले लोगो! आप लड़के का लिंग किसलिए काटते हो? क्या लड़के को बनाने में अल्लाह (परमेश्वर) से चूक रह गई जिसे आप ठीक करते हो। क्या आप परमेश्वर से भी बढ़कर हो? यदि आप लड़के के लिंग की चमड़ी आगे से काट कर (सुन्नत करके) उसे मुसलमान बनाते हो तो लड़की को मुसलमान कैसे बनाओगे। यदि मुसलमान धर्म के व्यक्ति अन्य धर्मों के व्यक्तियों से भिन्न होते तो परमात्मा ही सुन्नत करके लड़के को जन्म देता। हे भोले इन्सानों! परमेश्वर के सर्व प्राणी हैं। कोई वर्तमान में मुसलमान समुदाय में जन्मा है तो वह मृत्यु उपरान्त हिन्दू या ईसाई धर्म में भी जन्म ले सकता है। इसी प्रकार अन्य धर्मों में जन्में व्यक्ति भी मुसलमान धर्म व अन्य धर्म में जन्म लेते हैं। ये धर्म की दिवारे खड़ी करके आपसी भाई चारा नष्ट मत करो। यह सर्व काल ब्रह्म की चाल है। कलयुग से पहले अन्य धर्म नहीं थे। केवल एक मानव धर्म (मानवता धर्म) ही था। अब कलयुग में काल ब्रह्म ने भिन्न-2 धर्मों में बांट कर मानव की शान्ति समाप्त कर दी है। सुन्नत के समय उपस्थित व्यक्ति बालक मुख से सद्उपदेश सुनकर सर्व दंग रह गए। माता-नीमा ने बालक के मुख पर कपड़ा ढक दिया तथा बोली घना मत बोल। काजी सुन लेंगे तो तुझे मार डालेंगे वो बेरहम हैं बेटा। परमेश्वर कबीर जी माता के हृदय के कष्ट से

परिचित होकर सोने का बहाना बना कर खराटे भरने लगे। तब नीमा ने सुख की सांस ली तथा अपने सर्व सम्बन्धियों से प्रार्थना की आप किसी को मत बताना कि कबीर ने कुछ बोला है। कहीं मुझे बेटे से हाथ धोने पड़ें। छः महीने की आयु में परमेश्वर पैरों चलने लगे।

''ऋषि रामानन्द का उद्धार करना''

''ऋषि रामानन्द स्वामी को गुरु बना कर शरण में लेना''

स्वामी रामानन्द जी अपने समय के सुप्रसिद्ध विद्वान कहे जाते थे। वे द्राविड़ से काशी नगर में वेद व गीता ज्ञान के प्रचार हेतु आए थे। उस समय काशी में अधिकतर ब्राह्मण शास्त्रविरूद्ध भक्तिविधि के आधार से जनता को दिशा भ्रष्ट कर रहे थे। भूत-प्रेतों के झाड़े जन्त्र करके काशी शहर के ब्राह्मण अपना स्वार्थ सिद्ध कर रहे थे। स्वामी रामानन्द जी ने काशी शहर में वेद ज्ञान व गीता जी तथा पुराणों के ज्ञान को अधिक महत्त्व दिया तथा भूत-प्रेत उतारने वाली पूजा का अन्त किया अपने ज्ञान के प्रचार के लिए चौदह सौ ऋषि बना रखे थे। {स्वामी रामानन्द जी ने कबीर परमेश्वर जी की शरण में आने के पश्चात् चौरासी शिष्य और बनाए थे जिनमें रविदास जी नीरू-नीमा, गीगनौर (राजस्थान) के राजा पीपा ठाकुर आदि थे कुल शिष्यों की संख्या चौदह सौ चौरासी कही जाती है} वे चौदह सौ ऋषि विष्णु पुराण, शिव पुराण तथा देवी पुराण आदि मुख्य-2 पुराणों की कथा करते थे। प्रतिदिन बावन (52) सभाऐं ऋषि जन किया करते थे। काशी के क्षेत्र विभाजित करके मुख्य वक्ताओं को प्रवचन करने को स्वामी रामानन्द जी ने कह रखा था। स्वयं भी उन सभाओं में प्रवचन करने जाते थे। स्वामी रामानन्द जी का बोल बाला आस-पास के क्षेत्र में भी था। सर्व जनता कहती थी कि वर्तमान में महर्षि रामानन्द स्वामी तुल्य विद्वान वेदों व गीता जी तथा पुराणों का सार ज्ञाता पृथ्वी पर नहीं है। परमेश्वर कबीर जी ने अपने स्वभाव अनुसार अर्थात् नियमानुसार रामानन्द स्वामी को शरण में लेना था। कबीर जी ने सन्त गरीबदास जी को अपना सिद्धान्त बताया है जो सन्त गरीबदास जी (बारहवें पंथ प्रवर्तक, छुड़ानी धाम, हरियाणा वाले) ने अपनी वाणी में लिखा है :-

गरीब, जो जन हमरी शरण है, उसका हूँ मैं दास।
गेल–गेल लाग्या फिरूं, जब तक धरती आकाश।।
गोता मारूं स्वर्ग में जा पैठू पाताल।
गरीबदास ढूढत फिरूं, अपने हीरे माणिक लाल।।
हरदम संगी बिछुड़त नाहीं है महबूब सल्लौना वो।
एक पलक में साहेब मेरा फिरता चौदह भवना वो।।
ज्यों बच्छा गऊ की नजर में यूं साई कूँ सन्त।

भक्तों के पीछे फिरै भक्त वच्छल भगवन्त।।
कबीर कमाई आपनी, कबहूँ न निष्फल जाय।
सात समुन्दर आडे पड़ैं, मिले अगाऊ आय।।

सतयुग में विद्याधर नामक ब्राह्मण के रूप में तथा त्रेतायुग में वेदविज्ञ ऋषि के रूप में जन्में स्वामी रामानन्द जी वाले जीव ने परमेश्वर कबीर जी को बालक रूप में प्राप्त किया था। भक्तमति कमाली वाला जीव उस समय दीपिका नाम की विद्याधर ब्राह्मण की पत्नी थी। वही दीपिका वाली आत्मा वेदविज्ञ ब्राह्मण की पत्नी सूर्या थी। जो कलयुग में कमाली बनी। यही दोनों आत्माऐं त्रेता युग में ऋषि दम्पति (वेदविज्ञ तथा सूर्या) था। उस समय भी परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ जी शिशु रूप में इन्हें मिले थे। इस के पश्चात् भी इन दोनों जीवों को अनेकों जन्म व स्वर्ग प्राप्ति भी हुई थी। वही आत्माऐं कलयुग में परमेश्वर कबीर जी के समकालीन हुई थी। पूर्व जन्म के सन्त सेवा के पुण्य अनुसार परमेश्वर कबीर जी ने उन पुण्यात्माओं को शरण में लेने के लिए लीला की।

स्वामी रामानन्द जी की आयु 104 वर्ष थी उस समय कबीर देव जी के लीलामय शरीर की आयु 5 (पाँच) वर्ष थी। स्वामी रामानन्द जी महाराज का आश्रम गंगा दरिया के आधा किलो मीटर दूर स्थित था। स्वामी रामानन्द जी प्रतिदिन सूर्योदय से पूर्व गंगा नदी के तट पर बने पंचगंगा घाट पर स्नान करने जाते थे। पाँच वर्षीय कबीर देव ने अढ़ाई (दो वर्ष छः महीने) वर्ष के बच्चे का रूप धारण किया तथा पंच गंगा घाट की पौड़ियों (सीढ़ियों) में लेट गए। स्वामी रामानन्द जी प्रतिदिन की भांति स्नान करने गंगा दरिया के घाट पर गए। अंधेरा होने के कारण स्वामी रामानन्द जी बालक कबीर देव को नहीं देख सके। स्वामी रामानन्द जी के पैर की खड़ाऊ (लकड़ी का जूता) सीढ़ियों में लेटे बालक कबीर देव के सिर में लगी। बालक कबीर देव लीला करते हुए रोने लगे जैसे बच्चा रोता है। स्वामी रामानन्द जी को ज्ञान हुआ कि उनका पैर किसी बच्चे को लगा है जिस कारण से बच्चा पीड़ा से रोने लगा है। स्वामी जी बालक को उठाने तथा चुप करने के लिए शीघ्रता से झुके तो उनके गले की माला (एक तुलसी की कण्ठी माला) बालक कबीर देव के गले में डल गई। जिसे स्वामी रामानन्द जी नहीं देख सके। स्वामी रामानन्द जी ने बच्चे को प्यार से कहा बेटा राम-राम बोल राम नाम से सर्व कष्ट दूर हो जाता है। ऐसा कह कर बच्चे के सिर को सहलाया। आशीर्वाद देते हुए सिर पर हाथ रखा। बालक कबीर परमेश्वर अपना उद्देश्य पूरा होने पर चुप होकर पौड़ियों पर बैठ गए तथा एक शब्द गाया और चल पड़े :-

(यह शब्द अगम निगम बोध के पृष्ठ 34 पर लिखा है।)

गुरू रामानंद जी समझ पकड़ियो मोरी बाहीं।।

जो बालक रून झुनियां खेलत सो बालक हम नाहीं।।
हम तो लेना सत का सौद हम ना पाखण्ड पूजा चाहीं।।
बांह पकड़ो तो दृढ़ का पकड़ बहुर छुट न जाई।।
जो माता से जन्मा वह नहीं इष्ट हमारा।।
राम–कृष्ण मरै विष्णु साथै जामण हारा।।
तीन गुण हैं तीनों देवता, निरंजन चौथा कहिए।
अविनाशी प्रभु इस सब से न्यारा, मोकूं वह चाहिए।।
पांच तत्त्व की देह ना मेरी, ना कोई माता जाया।
जीव उदारन तुम को तारन, सीधा जग में आया।।
राम–राम और ओम् नाम यह सब काल कमाई।
सतनाम दो मोरे सतगुरू तब काल जाल छुटाई।।
सतनाम बिन जन्में–मरें परम शान्ति नाहीं।
सनातन धाम मिले न कबहु, भावें कोटि समाधि लाई।।
सार शब्द सरजीवन कहिए, सब मन्त्रन का सरदारा।
कह कबीर सुनो गुरू जी या विधि उतरें पारा।।

स्वामी रामानन्द जी ने विचार किया कि वह बच्चा रात्रि में रास्ता भूल जाने के कारण यहाँ आकर सो गया होगा। इसे अपने आश्रम में ले जाऊँगा। वहाँ से इसे इनके घर भिजवा दूँगा। ऐसा विचार करके स्नान करने लगे। परमेश्वर कबीर जी वहाँ से अन्तर्ध्यान हुए तथा अपनी झोंपड़ी में सो गए। कबीर परमेश्वर ने इस प्रकार स्वामी रामानन्द जी को गुरु धारण किया।

''ऋषि विवेकानन्द जी से ज्ञान चर्चा''

स्वामी रामानन्द जी का एक शिष्य ऋषि विवेकानन्द जी बहुत ही अच्छे प्रवचन कर्त्ता रूप में प्रसिद्ध था। ऋषि विवेकानन्द जी को काशी शहर के एक क्षेत्र का उपदेशक नियुक्त किया हुआ था। उस क्षेत्र के व्यक्ति ऋषि विवेकानन्द जी के धारा प्रवाह प्रवचनों को सुनकर उनकी प्रसंशा किये बिना नहीं रहते थे। उसकी कालोनी में बहुत प्रतिष्ठा बनी थी। प्रतिदिन की तरह ऋषि विवेकानन्द जी विष्णु पुराण से कथा सुना रहे थे। कह रहे थे, भगवान विष्णु सर्वेश्वर हैं, अविनाशी, अजन्मा हैं। सर्व सृष्टि रचनहार तथा पालन हार हैं। इनके कोई जन्मदाता माता-पिता नहीं है। ये स्वयंभू हैं। ये ही त्रेतायुग में अयोध्या के राजा दशरथ जी के घर माता कौशल्या देवी की पवित्र कोख से उत्पन्न हुए थे तथा श्री रामचन्द्र नाम से प्रसिद्ध हुए। समुद्र पर सेतु बनाया, जल पर पत्थर तैराए। लंकापति रावण का वध किया। श्री विष्णु भगवान ही ने द्वापर युग में श्री कृष्णचन्द्र भगवान का अवतार धार कर वासुदेव जी के रूप में माता देवकी के गर्भ से जन्म लिया तथा कंस, केशि,शिशुपाल,

जरासंध आदि दुष्टों का संहार किया। पाँच वर्षीय बालक कबीर देव जी भी उस ऋषि विवेकानन्द जी का प्रवचन सुन रहे थे तथा सैंकड़ों की संख्या में अन्य श्रोता गण भी उपस्थित थे। ऋषि विवेकानन्द जी ने अपने प्रवचनों को विराम दिया तथा उपस्थित श्रोताओं से कहा यदि किसी को कोई प्रश्न करना है तो वह निःसंकोच अपनी शंका का समाधान करा सकता है।

बालक कबीर परमेश्वर खड़े हुए तथा ऋषि विवेकानन्द जी से करबद्ध होकर प्रार्थना की कि हे ऋषि जी! आपने भगवान श्री विष्णु जी के विषय में बताया कि ये अजन्मा है, अविनाशी है। इनके कोई माता-पिता नहीं हैं। एक दिन एक ब्राह्मण श्री शिव पुराण के रूद्र संहिता अध्याय 6,7 को पढ़ कर श्रोताओं को सुना रहे थे, यह दास भी उस सत्संग में उपस्थित था। शिव पुराण में लिखा है कि निराकार परमात्मा आकार में आया वह सदाशिव, काल रूपी ब्रह्म कहलाया। उसने अपने अन्दर से एक स्त्री प्रकट की जो प्रकृति देवी, अष्टांगी, त्रिदेव जननी, शिवा आदि नामों से जानी जाती है। काल रूपी ब्रह्म ने एक काशी नामक सुन्दर स्थान बनाया वहाँ दोनों शिव तथा शिवा अर्थात् काल रूपी ब्रह्म तथा दुर्गा पति-पत्नी रूप में निवास करने लगे। कुछ समय पश्चात् दोनों के सम्भोग से एक लड़का उत्पन्न हुआ। उसका नाम विष्णु रखा। इसी प्रकार दोनों के रमण करने से एक पुत्र उत्पन्न हुआ उसका नाम ब्रह्मा रखा तथा कमल के फूल पर डाल कर अचेत कर दिया। फिर अध्याय 9 के अन्त में लिखा है कि ''ब्रह्मा रजगुण है, विष्णु सतगुण है तथा शंकर तमगुण है'' परन्तु सदा शिव इनसे भिन्न है वह गुणातीत है। यहाँ पर सदाशिव के अतिरिक्त तीन देव श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव जी भी है। इससे सिद्ध हुआ कि इन त्रिदेवों की जननी दुर्गा अर्थात् प्रकृति देवी है तथा पिता काल ब्रह्म है। इन तीनों प्रभुओं विष्णु आदि का जन्म हुआ है इनके माता-पिता भी है।

एक दिन मैंने एक ब्राह्मण द्वारा श्री देवी पुराण के तीसरे स्कंद में अध्याय 4-5 में सुना था कि जिसमें भगवान विष्णु ने कहा है इन प्रकृति देवी अर्थात् दुर्गा को मैंने पहले भी देखा था मुझे अपने बचपन की याद आई है। मैं एक वट वृक्ष के नीचे पालने में लेटा हुआ था। यह मुझे पालने में झूला रही थी। उस समय में बालक रूप में था। प्रकृति देवी के निकट जाकर तीनों देव (त्रिदेव) श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिवजी करबद्ध होकर खड़े हो गए। भगवान विष्णु ने देवी की स्तुति की तुम शुद्ध स्वरूपा हो, यह संसार तुम ही से उद्भाषित हो रहा है। हमारा अविर्भाव अर्थात् जन्म तथा तिरोभाव अर्थात् मृत्यु होती है। हम अविनाशी नहीं है। तुम अविनाशी हो। प्रकृति देवी हो। भगवान शंकर बोले, हे माता! यदि आप ही के गर्भ से भगवान विष्णु तथा भगवान ब्रह्मा का जन्म हुआ है तो क्या मैं तमोगुणी लीला करने वाला शंकर

आपका पुत्र नहीं हुआ? अर्थात् मुझे भी जन्म देने वाली तुम ही हो।

हे ऋषि विवेकानन्द जी! आप कह रहे हो कि पुराणों में लिखा है कि भगवान विष्णु के तो कोई माता-पिता नहीं। ये अविनाशी हैं। इन पुराणों का ज्ञान दाता एक श्री ब्रह्मा जी हैं तथा लेखक भी एक ही श्री व्यास जी हैं। जबकि पुराणों में तो भगवान विष्णु नाशवान लिखे हैं। इनके माता-पिता का नाम भी लिखा है। क्यों जनता को भ्रमित कर रहे हो।

कबीर, बेद पढे पर भेद ना जाने, बाचें पुराण अठारा।
जड़ को अंधा पान खिलावें, भूले सिरजनहारा।।

कबीर परमेश्वर जी के मुख कमल से उपरोक्त पुराणों में लिखा उल्लेख सुनकर ऋषि विवेकानन्द अति क्रोधित हो गया तथा उपस्थित श्रोताओं से बोले यह बालक झूठ बोल रहा है। पुराणों में ऐसा नहीं लिखा है। उपस्थित श्रोताओं ने भी सहमति व्यक्त की कि हे ऋषि जी आप सत्य कह रहे हो यह बालक क्या जाने पुराणों के गूढ़ रहस्य को? आप विद्वान पुरूष परम विवेकशील हो। आप इस बच्चे की बातों पर ध्यान न दो। ऋषि विवेकानन्द जी ने पुराणों को उसी समय देखा जिसमें सर्व विवरण विद्यमान था। परन्तु मान हानि के भय से अपने झूठे व्यक्तव्य पर ही दृढ़ रहते हुए कहा हे बालक तेरा क्या नाम है? तू किस जाति में जन्मा है। तूने तिलक लगाया है। क्या तूने कोई गुरु धारण किया है? शीघ्र बताइए।

कबीर परमेश्वर जी के बोलने से पहले ही श्रोता बोले हे ऋषि जी! इसका नाम कबीर है, यह नीरू जुलाहे का पुत्र है। कबीर जी बोले ऋषि जी मेरा यही परिचय है जो श्रोताओं ने आपको बताया। मैंने गुरु धारण कर रखा है। ऋषि विवेकानन्द जी ने पूछा क्या नाम है तेरे गुरुदेव का? परमेश्वर कबीर जी ने कहा मेरे पूज्य गुरुदेव वही हैं जो आपके गुरुदेव हैं। उनका नाम है पंडित रामानन्द स्वामी। जुलाहे के बालक कबीर परमेश्वर जी के मुख कमल से स्वामी रामानन्द जी को अपना गुरु जी बताने से ऋषि विवेकानन्द जी ने ज्ञान चर्चा का विषय बदल कर परमेश्वर कबीर जी को बहुत बुरा-भला कहा तथा श्रोताओं को भड़काने व वास्तविक विषय भूलाने के उद्देश्य से कहा देखो रे भाईयो! यह कितना झूठा बालक है। यह मेरे पूज्य गुरुदेव श्री-श्री 1008 स्वामी रामानन्द जी को अपना गुरु जी कह रहा है। मेरे गुरु जी तो इन अछूतों के दर्शन भी नहीं करते। शुद्रों का अंग भी नहीं छूते। अभी जाता हूँ गुरु जी को बताता हूँ। भाई श्रोताओ! आप सर्व कल स्वामी जी के आश्रम पर आना सुबह-2, इस झूठे की कितनी पिटाई स्वामी रामानन्द जी करेगें? इसने हमारे गुरुदेव का नाम मिट्टी में मिलाया है। सर्व श्रोता बोले यह बालक मूर्ख, झूठा, गंवार है आप विद्वान हो।

कबीर जी ने कहा :-

निरंजन धन तेरा दरबार–निरंजन धन तेरा दरबार।
जहां पर तनिक ना न्याय विचार।। (टेक)।।
वैश्या ओढे मल–मल खासा गल मोतियों का हार।
पतिव्रता को मिले न खादी सूखा निरस आहार।।
पाखण्डी की पूजा जग में सन्त को कहे लबार।
अज्ञानी को परम विवेकी, ज्ञानी को मूढ गंवार।।
कह कबीर सुनो भाई साधो सब उल्टा व्यवहार।
सच्चों को तो झूठ बतावें, इन झूठों का एतबार।।

बन्दी छोड़ कबीर परमेश्वर जी अपने घर चले गए। वह ऋषि विवेकानन्द अपने गुरु रामानन्द स्वामी जी के आश्रम में गया तथा सर्व घटना की जानकारी बताई। हे स्वामी जी! एक छोटी जाति का जुलाहे का लड़का कबीर अपने आप को बड़ा विद्वान् सिद्ध करने के लिए भगवान् विष्णु जी को नाशवान बताता है। हे ऋषि जी! उसने तो हम ब्राह्मणों का घर से निकलना भी दूभर कर दिया है। हमारी नाक काट डाली अर्थात् हमें महा शर्मिन्दा (लज्जित) होना पड़ रहा है। उसने कल भरी सभा में कहा है कि पंड़ित रामानन्द स्वामी मेरे गुरु जी हैं। मैंने उनसे दीक्षा ले रखी है। उस कबीर ने तिलक भी लगा रखा था जैसा हम वैष्णव सन्त लगाते है। अपने शिष्य विवेकानन्द की बात सुनकर स्वामी रामानन्द जी बहुत क्रोधित होकर बोले हे विवेकानन्द कल सुबह उसे मेरे सामने उपस्थित करो। देखना सर्व के समक्ष उसकी झूठ का पर्दाफाश करूँगा।

''कबीर जी द्वारा स्वामी रामानन्द के मन की बात बताना''

दूसरे दिन विवेकानन्द ऋषि अपने साथ नौ व्यक्तियों को लेकर जुलाहा कॉलोनी में नीरू के मकान के विषय में पूछने लगा कि नीरू का मकान कौन सा है? कालोनी के एक व्यक्ति को उनके हाव-भाव से लगा कि ये कोई अप्रिय घटना करने के उद्देश्य से आए हैं। उसने शीघ्रता से नीरू को जाकर बताया कि कुछ ब्राह्मण आपके घर आ रहे हैं। उनकी नीयत झगड़ा करने की है। नीमा भी वहीं खड़ी उस व्यक्ति की बातें सुन रही थी उसी समय वे ब्राह्मण गली में नीरू के मकान की ओर आते दिखाई दिए। नीमा समझ गई कि अवश्य कबीर ने इन ब्राह्मणों से ज्ञान चर्चा की है। वे ईर्ष्यालु व्यक्ति मेरे बेटे को मार डालेगें। इतना विचार करके सोए हुए बालक कबीर को जगाया तथा अपनी झोंपड़ी के पीछे ले गई वहाँ लेटा कर ऊपर रजाई डाल दी तथा कहा बेटा बोलना नहीं है। कुछ व्यक्ति झगड़ा करने के उद्देश्य से अपने घर आ रहे हैं। नीमा अपने घर के द्वार पर गली में खड़ी हो गई। तब तक वे ब्राह्मण घर के निकट आ चुके थे। उन्होंने पूछा क्या नीरू का घर

यही है ? नीमा ने उत्तर दिया हाँ ऋषि जी! यही है कहो कैसे आना हुआ। ऋषि विवेकानन्द बोला कहाँ है तुम्हारा शरारती बच्चा कबीर? कल उसने भरी सभा में मेरे गुरुदेव का अपमान किया है। आज उस की पिटाई गुरु जी सर्व के समक्ष करेंगे। इसको सबक सिखाऐंगे। नीमा बोली मेरा बेटा निर्दोष है वह किसी का अपमान नहीं कर सकता। आप मेरे बेटे से ईर्ष्या रखते हो। कभी कोई ब्राह्मण उलहाने (शिकायत) लेकर आता है कभी कोई तो कभी कोई आता है। आप मेरे बेटे की जान के शत्रु क्यों बने हो? लौट जाइए।

सर्व ब्राह्मण बलपूर्वक नीरू की झोंपड़ी में प्रवेश करके कपड़ों को उठा-2 कर बालक को खोजने लगे। चारपाइयों को भी उल्ट कर पटक दिया। जोर-2 से ऊंची आवाज में बोलने लगे। मात-पिता को दुःखी जानकर बालक रूपधारी कबीर परमेश्वर जी रजाई से निकल कर खड़े हो गए तथा कहा ऋषि जी मैं झोपड़ी के पीछे छुपा हूँ। बच्चे की आवाज सुनकर सर्व ब्राह्मण पीछे गए। वहाँ खड़े कबीर जी को पकड़ कर अपने साथ ले जाने लगे। नीमा तथा नीरू ने विरोध किया। नीमा ने बालक कबीर जी को सीने से लगाकर कहा मेरे बच्चे को मत ले जाओ। मत ले जाओ----- ऐसे कह कर रोने लगी। निर्दयों ने नीमा को धक्का मार कर जमीन पर गिरा दिया। नीमा फिर उठ कर पीछे दौड़ी तथा बालक कबीर जी का हाथ उनसे छुटवाने का प्रयत्न किया। एक व्यक्ति ने ऐसा थप्पड़ मारा नीमा के मुख व नाक से रक्त टपकने लगा। नीमा रोती हुई गली में अचेत हो गई। नीरू ने भी बच्चे को छुड़वाने की कोशिश की तो उसे भी पीट-2 कर मृत सम कर दिया। कॉलोनी वाले उठाकर उनके घर ले गए। बहुत समय पश्चात् दोनों सचेत हुए। बच्चे के वियोग में रो-2 कर दोनों का बुरा हाल था। नीरू चोट के कारण चलने-फिरने में असमर्थ जमीन पर गिर कर विलाप कर रहा था। कभी चुप होकर भयभीत हुआ गली की ओर देख रहा था। मन में सोच रहा था कि कहीं वे लौट कर ना आ जाऐं तथा मुझे जान से न मार डालें। फिर बच्चे को याद करके विलाप करने लगता। मेरे बेटे को मत मारो-मत मारो इसने क्या बिगाड़ा है तुम्हारा। ऐसे पागल जैसी स्थिति नीरू की हो गई थी। नीमा होश में आती थी फिर अपने बच्चे के साथ हो रहे अत्याचार की कल्पना कर बेहोश (अचेत) हो जाती थी। मोहल्ले (कॉलोनी) के स्त्री पुरूष उनकी दशा देखकर अति दुःखी थे।

प्रातः काल का समय था। स्वामी रामानन्द जी गंगा नदी पर स्नान करके लौटे ही थे। अपनी कुटिया (Hut) में बैठे थे। जब उन्हें पता चला कि उस बालक कबीर को पकड़ कर ऋषि विवेकानन्द जी की टीम ला रही है तो स्वामी रामानन्द जी ने अपनी कुटिया के द्वार पर कपड़े का पर्दा लगा लिया। यह दिखाने के लिए कि मैं पवित्र जाति का ब्राह्मण हूँ तथा शुद्रों को दीक्षा

देना तो दूर की बात है, सुबह-2 तो दर्शन भी नहीं करता।

ऋषि विवेकानन्द जी ने बालक कबीर देव जी को कुटिया के समक्ष खड़ा करके कहा हे गुरुदेव। यह रहा वह झूठा बच्चा कबीर जुलाहा। उस समय ऋषि विवेकानन्द जी ने अपने प्रचार क्षेत्र के व्यक्तियों को विशेष कर बुला रखा था। यह दिखाने के लिए कि यह कबीर झूठ बोलता है। स्वामी रामानन्द जी कहेंगे मैंने इसको कभी दीक्षा नहीं दी। जिससे सर्व उपस्थित व्यक्तियों को यह बात जचेगी कि कबीर पुराणों के विषय में भी झूठ बोल रहा था जिन के बारे में कबीर जी ने लिखा बताया था कि श्री विष्णु जी, श्री शिव जी तथा ब्रह्मा जी नाशवान हैं। इनका जन्म होता है तथा मृत्यु भी होती है तथा इनकी माता का नाम प्रकृति देवी (दुर्गा) है तथा पिता का नाम सदाशिव अर्थात् काल ब्रह्म है। जिन हाथों से कबीर परमेश्वर को पकड़ कर लाए थे। उन सर्व व्यक्तियों ने अपने हाथ मिट्टी से रगड़-रगड़ कर धोए तथा सर्व उपस्थित व्यक्तियों के समक्ष बाल्टी में जल भर कर स्नान किया सर्व वस्त्र जो शरीर पर पहन रखे थे वे भी कूट-2 कर धोए।

स्वामी रामानन्द जी ने अपनी कुटिया के द्वार पर खड़े पाँच वर्षीय बालक कबीर से ऊँची आवाज में प्रश्न किया। हे बालक ! आपका क्या नाम है? कौन जाति में जन्म है? आपका भक्ति पंथ (मार्ग) कौन है? उस समय लगभग हजार की संख्या में दर्शक उपस्थित थे। बालक कबीर जी ने भी आधीनता से ऊँची आवाज में उत्तर दिया :-

जाति मेरी जगत्गुरु, परमेश्वर है पंथ। गरीबदास लिखित पढे, मेरा नाम निरंजन कंत।।
हे स्वामी सृष्टा मैं सृष्टि मेरे तीर। दास गरीब अधर बसूँ अविगत सत् कबीर।
गोता मारूं स्वर्ग में जा पैठूं पाताल। गरीब दास ढूंढत फिरू हीरे माणिक लाल।

भावार्थ :- कबीर जी ने कहा हे स्वामी रामानन्द जी! परमेश्वर के घर कोई जाति नहीं है। आप विद्वान पुरूष होते हुए वर्ण भेद को महत्त्व दे रहे हो। मेरी जाति व नाम तथा भक्ति पंथ जानना चाहते हो तो सुनों। मेरा नाम वही कविर्देव है जो वेदों में लिखा है जिसे आप जी पढ़ते हो। मैं वही निरंजन (माया रहित) कंत (सर्व का पति) अर्थात् सबका स्वामी हूँ। मैं ही सर्व सृष्टि रचनहार (सृष्टा) हूँ। यह सृष्टि मेरे ही आश्रित (तीर यानि किनारे) है। मैं ऊपर सतलोक में निवास करता हूँ। मैं वह अमर अव्यक्त (अविगत सत्) कबीर हूँ। जिसका वर्णन गीता अध्याय 8 श्लोक सं.20 से 22 में है। हे स्वामी जी गीता अध्याय 7 श्लोक 24 में गीता ज्ञान दाता अर्थात् काल ब्रह्म (क्षर पुरूष) अपने विषय में बताता है कि! यह मूर्ख मनुष्य समुदाय मुझ अव्यक्त को कृष्ण रूप में व्यक्ति मान रहे हैं। मैं सबके समक्ष प्रकट नहीं होता। यह मनुष्य समुदाय मेरे इस अश्रेष्ठ अटल नियम से अपरिचित हैं (24) गीता अ. 7 श्लोक 25 में कहा है कि मैं (गीता ज्ञान दाता) अपनी योगमाया

(सिद्धिशक्ति) से छिपा हुआ अपने वास्तविक रूप में सबके समक्ष प्रत्यक्ष नहीं होता। यह अज्ञानी जन समुदाय मुझ कृष्ण व राम आदि की तरह माता से जन्म न लेने वाले प्रभु को तथा अविनाशी (जो अन्य अव्यक्त परमेश्वर है) को नहीं जानते।

हे स्वामी रामानन्द जी गीता अध्याय 7 श्लोक 24-25 में गीता ज्ञान दाता काल ब्रह्म (क्षर पुरूष) ने अपने को अव्यक्त कहा है यह प्रथम अव्यक्त प्रभु हुआ। अब सुनो दूसरे तथा तीसरे अव्यक्त प्रभुओं के विषय में। गीता अध्याय 8 श्लोक 18-19 में गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य अव्यक्त परमात्मा का वर्णन किया है कहा है :- यह सर्व चराचर प्राणी दिन के समय अव्यक्त परमात्मा से उत्पन्न होते है रात्रि के समय उसी में लीन हो जाते हैं। यह जानकारी काल ब्रह्म ने अपने से अन्य अव्यक्त प्रभु (परब्रह्म) अर्थात् अक्षर ब्रह्म के विषय में दी है। यह दूसरा अव्यक्त (अविगत) प्रभु हुआ तीसरे अव्यक्त (अविगत) परमात्मा अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म के विषय में गीता अध्याय 8 श्लोक 20 से 22 में कहा है कि जिस अव्यक्त प्रभु का गीता अध्याय 8 श्लोक 18-19 में वर्णन किया है वह पूर्ण प्रभु नहीं है। वह भी वास्तव में अविनाशी प्रभु नहीं है। परन्तु उस अव्यक्त (जिसका विवरण उपरोक्त श्लोक 18-19 में है) से भी अति परे दूसरा जो सनातन अव्यक्त भाव है वह परम दिव्य परमेश्वर सब भूतों (प्राणियों) के नष्ट होने पर भी नष्ट नहीं होता। वह अक्षर अव्यक्त अविनाशी अविगत अर्थात् वास्तव में अविनाशी अव्यक्त प्रभु इस नाम से कहा गया है। उसी अक्षर अव्यक्त की प्राप्ति को परमगति कहते हैं। जिस दिव्य परम परमात्मा को प्राप्त होकर साधक वापस लौट कर इस संसार में नहीं आते (इसी का विवरण गीता अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 तथा श्लोक 16-17 में भी है) वह धाम अर्थात् जिस लोक (धाम) में वह अविनाशी (अव्यक्त) परमात्मा रहता है वह धाम (स्थान) मेरे वाले लोक (ब्रह्मलोक) से श्रेष्ठ है। हे पार्थ! जिस अविनाशी परमात्मा के अन्तर्गत सर्व प्राणी हैं। जिस सच्चिदानन्द घन परमात्मा से यह समस्त जगत परिपूर्ण है, वह सनातन अव्यक्त परमेश्वर तो अनन्य भक्ति से प्राप्त होने योग्य है (गीता अ. 8/मं.20,21,22) हे स्वामी रामानन्द जी मैं वही तीसरी श्रेणी वाला अविगत (अव्यक्त) सत् (सनातन अविनाशी भाव वाला परमेश्वर) कबीर हूँ। जिसे वेदों में कविर्देव कहा है वही कबीर देव मैं कहलाता हूँ।

हे स्वामी रामानन्द जी! सर्व सृष्टि को रचने वाला (सृष्टा) मैं ही हूँ। मैं ही आत्मा का आधार जगतगुरु जगत् पिता, बन्धु तथा जो सत्य साधना करके सत्यलोक जा चुके हैं उनको सत्यलोक पहुँचाने वाला मैं ही हूँ। काल ब्रह्म की तरह धोखा न देने वाले स्वभाव वाला कबीर देव (कर्विदेव) मैं ही हूँ। जिसका प्रमाण अर्थववेद काण्ड 4 अनुवाक 1 मन्त्र 7 में लिखा है।

काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र 7

योऽथर्वाणं पित्तरं देवबन्धुं बृहस्पतिं नमसाव च गच्छात्।
त्वं विश्वेषां जनिता यथासः कविर्देवो न दभायत् स्वधावान्।।7।।

यः अथर्वाणम् पित्तरम् देवबन्धुम् बृहस्पतिम् नमसा अव च गच्छात् त्वम् विश्वेषाम् जनिता यथा सः कविर्देवः न दभायत् स्वधावान्

अनुवाद :– (यः) जो (अथर्वाणम्) अचल अर्थात् अविनाशी (पित्तरम्) जगत पिता (देव बन्धुम्) भक्तों का वास्तविक साथी अर्थात् आत्मा का आधार (बृहस्पतिम्) बड़ा स्वामी अर्थात् परमेश्वर व जगत्गुरु (च) तथा (नमसाव) विनम्र पुजारी अर्थात् विधिवत् साधक को सुरक्षा के साथ (गच्छात्) सतलोक गए हुओं को यानि जो मोक्ष प्राप्त कर चुके हैं, उनको सतलोक ले जाने वाला (विश्वेषाम्) सर्व ब्रह्मण्डों की (जनिता) रचना करने वाला जगदम्बा अर्थात् माता वाले गुणों से भी युक्त (न दभायत्) काल की तरह धोखा न देने वाले (स्वधावान्) स्वभाव अर्थात् गुणों वाला (यथा) ज्यों का त्यों अर्थात् वैसा ही (सः) वह (त्वम्) आप (कविर्देवः/ कविर्देवः) कविर्देव है अर्थात् भाषा भिन्न इसे कबीर परमेश्वर भी कहते हैं।

केवल हिन्दी अनुवाद :- जो अचल अर्थात् अविनाशी जगत पिता भक्तों का वास्तविक साथी अर्थात् आत्मा का आधार बड़ा स्वामी अर्थात् परमेश्वर व जगत्गुरु तथा विनम्र पुजारी अर्थात् विधिवत् साधक को सुरक्षा के साथ सतलोक गए हुओं को यानि जो मोक्ष प्राप्त कर चुके हैं, उनको सतलोक ले जाने वाला सर्व ब्रह्मंडों की रचना करने वाला जगदम्बा अर्थात् माता वाले गुणों से भी युक्त काल की तरह धोखा न देने वाले स्वभाव अर्थात् गुणों वाला ज्यों का त्यों अर्थात् वैसा ही वह आप कविर्देव है अर्थात् भाषा भिन्न इसे कबीर परमेश्वर भी कहते हैं।

भावार्थ :- इस मंत्र में यह भी स्पष्ट कर दिया कि उस परमेश्वर का नाम कविर्देव अर्थात् कबीर परमेश्वर है, जिसने सर्व रचना की है।

जो परमेश्वर अचल अर्थात् वास्तव में अविनाशी (गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में भी प्रमाण है) जगत् गुरु, परमेश्वर आत्माधार, जो पूर्ण मुक्त होकर सत्यलोक गए हैं यानि जो मोक्ष प्राप्त कर चुके हैं, उनको सतलोक ले जाने वाला, सर्व ब्रह्मण्डों का रचनहार, काल (ब्रह्म) की तरह धोखा न देने वाला ज्यों का त्यों वह स्वयं कविर्देव अर्थात् कबीर प्रभु है। यही परमेश्वर सर्व ब्रह्मण्डों व प्राणियों को अपनी शब्द शक्ति से उत्पन्न करने के कारण (जनिता) माता भी कहलाता है तथा (पित्तरम्) पिता तथा (बन्धु) भाई भी वास्तव में यही है तथा (देव) परमेश्वर भी यही है। इसलिए इसी कविर्देव (कबीर परमेश्वर) की स्तुति किया करते हैं। त्वमेव माता च पिता त्वमेव त्वमेव बन्धु च सखा त्वमेव, त्वमेव विद्या च द्रविणंम त्वमेव, त्वमेव सर्वं मम् देव देव। इसी परमेश्वर की महिमा का पवित्र ऋग्वेद मण्डल नं. 1 सूक्त नं. 24 में विस्तृत विवरण है।

पाँच वर्षीय बालक के मुख से वेदो व गीता जी के गूढ़ रहस्य को सुनकर ऋषि रामानन्द जी आश्चर्य चकित रह गए तथा क्रोधित होकर अपशब्द कहने लगे। वाणी :-

रामानंद अधिकार सुनि, जुलहा अक जगदीश।
दास गरीब बिलंब ना, ताहि नवावत शीश।।407।।
रामानंद कूं गुरु कहै, तनसैं नहीं मिलात।
दास गरीब दर्शन भये, पैडे लगी जुं लात।।408।।
पंथ चलत ठोकर लगी, रामनाम कहि दीन।
दास गरीब कसर नहीं, सीख लई प्रबीन।।409।।
आडा पड़दा लाय करि, रामानंद बूझंत।
दास गरीब कुलंग छबि, अधर डांक कूदंत।।410।।
कौन जाति कुल पंथ है, कौन तुम्हारा नाम।
दास गरीब अधीन गति, बोलत है बलि जांव।।411।।
जाति हमारी जगतगुरु, परमेश्वर पद पंथ।
दास गरीब लिखति परै, नाम निंरजन कंत।।412।।
रे बालक सुन दुर्बद्धि, घट मठ तन आकार।
दास गरीब दरद लग्या, हो बोले सिरजनहार।।413।।
तुम मोमन के पालवा, जुलहै के घर बास।
दास गरीब अज्ञान गति, एता दृढ़ विश्वास।।414।।
मान बड़ाई छाड़ि करि, बोलौ बालक बैंन।
दास गरीब अधम मुखी, एता तुम घट फैंन।।415।।
तर्क तलूसैं बोलतै, रामानंद सुर ज्ञान।
दास गरीब कुजाति है, आखर नीच निदान।।423।।

परमेश्वर कबीर जी (कविर्देव) ने प्रेमपूर्वक उत्तर दिया -

महके बदन खुलास कर, सुनि स्वामी प्रबीन।
दास गरीब मनी मरै, मैं आजिज आधीन।।428।।
मैं अविगत गति सैं परै, च्यारि बेद सैं दूर।
दास गरीब दशौं दिशा, सकल सिंध भरपूर।।429।।
सकल सिंध भरपूर हूँ, खालिक हमरा नाम।
दासगरीब अजाति हूँ, तैं जो कह्या बलि जांव।।430।।
जाति पाति मेरे नहीं, नहीं बस्ती नहीं गाम।
दासगरीब अनिन गति, नहीं हमारै चाम।।431।।
नाद बिंद मेरे नहीं, नहीं गुदा नहीं गात।
दासगरीब शब्द सजा, नहीं किसी का साथ।।432।।
सब संगी बिछरू नहीं, आदि अंत बहु जांहि।

दासगरीब सकल वंसु, बाहर भीतर माँहि।।433।।
ए स्वामी सृष्टा मैं, सृष्टि हमारै तीर।
दास गरीब अधर बसूं, अविगत सत्य कबीर।।434।।
पौहमी धरणि आकाश में, मैं व्यापक सब ठौर।
दास गरीब न दूसरा, हम समतुल नहीं और।।436।।
हम दासन के दास हैं, करता पुरुष करीम।
दासगरीब अवधूत हम, हम ब्रह्मचारी सीम।।439।।
सुनि रामानंद राम हम, मैं बावन नरसिंह।
दास गरीब कली कली, हमहीं से कृष्ण अभंग।।440।।
हमहीं से इंद्र कुबेर हैं, ब्रह्मा बिष्णु महेश।
दास गरीब धर्म ध्वजा, धरणि रसातल शेष।।447।।
सुनि स्वामी सती भाखहूँ, झूठ न हमरै रिंच।
दास गरीब हम रूप बिन, और सकल प्रपंच।।453।।
गोता लाऊं स्वर्ग सैं, फिरि पैठूं पाताल।
गरीबदास ढूंढत फिरूं, हीरे माणिक लाल।।476।।
इस दरिया कंकर बहुत, लाल कहीं कहीं ठाव।
गरीबदास माणिक चुगैं, हम मुरजीवा नांव।।477।।
मुरजीवा माणिक चुगैं, कंकर पत्थर डारि।
दास गरीब डोरी अगम, उतरो शब्द अधार।।478।।

स्वामी रामानन्द जी ने कहा :- अरे कुजात! अर्थात् शुद्र! छोटा मुंह बड़ी बात, तू अपने आपको परमात्मा कहता है। तेरा शरीर हाड़-मांस व रक्त निर्मित है। तू अपने आपको अविनाशी परमात्मा कहता है। तेरा जुलाहे के घर जन्म है फिर भी अपने आपको अजन्मा अविनाशी कहता है तू कपटी बालक है। परमेश्वर कबीर जी ने कहा :-

ना मैं जन्मु ना मरूँ, ज्यों मैं आऊँ त्यों जाऊँ।
गरीबदास सतगुरु भेद से लखो हमारा ढांव।।

सुन रामानन्द राम मैं, मुझसे ही बावन नृसिंह। दास गरीब युग–2 हम से ही हुए कृष्ण अभंग।।

भावार्थ :- कबीर जी ने उत्तर दिया हे रामानन्द जी, मैं न तो जन्म लेता हूँ, न मृत्यु को प्राप्त होता हूँ। मैं चौरासी लाख प्राणियों के शरीरों में आने (जन्म लेने) व जाने (मृत्यु होने) के चक्र से भी रहित हूँ। मेरी विशेष जानकारी किसी तत्त्वदर्शी सन्त (सतगुरु) के ज्ञान को सुनकर प्राप्त करो। गीता अध्याय 4 श्लोक 34 तथा यजुर्वेद अध्याय 40 मन्त्र 10-13 में वेद ज्ञान दाता स्वयं कह रहा है कि उस पूर्ण परमात्मा के तत्व (वास्तविक) ज्ञान से मैं अपरिचित हूँ। उस तत्त्वज्ञान को तत्त्वदर्शी सन्तों से सुनों उन्हें दण्डवत् प्रणाम करो, अति विनम्र भाव से परमात्मा के पूर्ण मोक्ष मार्ग के विषय में ज्ञान

प्राप्त करो, जैसी भक्ति विधि से तत्त्वदृष्टा सन्त बताऐं वैसे साधना करो। गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में लिखा है कि श्लोक 16 में जिन दो पुरूषों (भगवानों) 1. क्षर पुरूष अर्थात् काल ब्रह्म तथा 2. अक्षर पुरूष अर्थात् परब्रह्म का उल्लेख है, वास्तव में अविनाशी परमेश्वर तथा सर्व का पालन पोषण व धारण करने वाला परमात्मा तो उन उपरोक्त दोनों से अन्य ही है। हे स्वामी रामानन्द जी! वह उत्तम पुरूष अर्थात् सर्व श्रेष्ठ प्रभु मैं ही हूँ।

इस बात को सुनकर स्वामी रामानन्द जी बहुत क्षुब्ध हो गए तथा कहा कि रे बालक! तू निम्न जाति का और छोटा मुँह बड़ी बात कर रहा है। तू अपने आप भगवान बन बैठा। बुरी गालियाँ भी दी। कबीर साहेब बोले कि गुरुदेव! आप मेरे गुरुजी हैं। आप मुझे गाली दे रहे हो तो भी मुझे आनन्द आ रहा है। लेकिन मैं जो आपको कह रहा हूँ, मैं ज्यों का त्यों पूर्णब्रह्म ही हूँ, इसमें कोई संशय नहीं है। इस बात को सुनकर रामानन्द जी ने कहा कि ठहर जा तेरी तो लम्बी कहानी बनेगी, तू ऐसे नहीं मानेगा। मैं पहले अपनी पूजा कर लेता हूँ। रामानन्द जी ने कहा कि इसको बैठाओ। मैं पहले अपनी कुछ क्रिया रहती है वह कर लेता हूँ, बाद में इससे निपटूंगा।

स्वामी रामानन्द जी क्या क्रिया करते थे?

भगवान विष्णु जी की एक काल्पनिक मूर्ति बनाते थे। सामने मूर्ति दिखाई देने लग जाती थी (जैसे कर्मकाण्ड करते हैं, भगवान की मूर्ति के पहले वाले सारे कपड़े उतार कर, उनको जल से स्नान करवा कर, फिर स्वच्छ कपड़े भगवान ठाकुर को पहना कर गले में माला डालकर, तिलक लगा कर मुकुट रख देते हैं।) रामानन्द जी कल्पना कर रहे थे। कल्पना करके भगवान की काल्पनिक मूर्ति बनाई। श्रद्धा से जैसे नंगे पैरों जाकर आप ही गंगा जल लाए हों, ऐसी अपनी भावना बना कर ठाकुर जी की मूर्ति के कपड़े उतारे, फिर स्नान करवाया तथा नए वस्त्र पहना दिए। तिलक लगा दिया, मुकुट रख दिया और माला (कण्ठी) डालनी भूल गए। कण्ठी न डाले तो पूजा अधूरी और मुकुट रख दिया तो उस दिन मुकुट उतारा नहीं जा सकता। उस दिन मुकुट उतार दे तो पूजा खण्डित। स्वामी रामानन्द जी अपने आपको कोस रहे हैं कि इतना जीवन हो गया मेरा कभी, भी ऐसी गलती जिन्दगी में नहीं हुई थी। प्रभु आज मुझ पापी से क्या गलती हुई है? यदि मुकुट उतारूँ तो पूजा खण्डित। उसने सोचा कि मुकुट के ऊपर से कण्ठी (माला) डाल कर देखता हूँ (कल्पना से कर रहे हैं कोई सामने मूर्ति नहीं है और पर्दा लगा है कबीर साहेब दूसरी ओर बैठे हैं)। मुकुट में माला फँस गई है आगे नहीं जा रही थी। जैसे स्वपन देख रहे हों। रामानन्द जी ने सोचा अब क्या करूं? हे भगवन्! आज तो मेरा सारा दिन ही व्यर्थ गया। आज की मेरी भक्ति कमाई

व्यर्थ गई (क्योंकि जिसको परमात्मा की कसक होती है उसका एक नित्य नियम भी रह जाए तो उसको दर्द बहुत होता है। जैसे इंसान की जेब कट जाए और फिर बहुत पश्चाताप करता है। प्रभु के सच्चे भक्तों को इतनी लगन होती है।) इतने में बालक रूपधारी कबीर परमेश्वर जी ने कहा कि स्वामी जी माला की घुण्डी खोलो और माला गले में डाल दो। फिर गाँठ लगा दो, मुकुट उतारना नहीं पड़ेगा। रामानन्द जी काहे का मुकुट उतारे था, काहे की गाँठ खोले था। कुटिया के सामने लगा पर्दा भी स्वामी रामानन्द जी ने अपने हाथ से फैंक दिया और ब्राह्मण समाज के सामने उस कबीर परमेश्वर को सीने से लगा लिया। रामानन्द जी ने कहा कि हे भगवन्! आपका तो इतना कोमल शरीर है जैसे रूई हो। आपके शरीर की तुलना में मेरा तो पत्थर जैसा शरीर है। एक तरफ तो प्रभु खड़े हैं और एक तरफ जाति व धर्म की दीवार है। प्रभु चाहने वाली पुण्यात्माऐं धर्म की बनावटी दीवार को तोड़ना श्रेयकर समझते हैं। वैसा ही स्वामी रामानन्द जी ने किया। सामने पूर्ण परमात्मा को पा कर न जाति देखी न धर्म देखा, न छूआ-छात, केवल आत्म कल्याण देखा। इसे ब्राह्मण कहते हैं।

बोलत रामानंद जी, हम घर बड़ा सुकाल।
गरीबदास पूजा करैं, मुकुट फही जदि माल।।
सेवा करौं संभाल करि, सुनि स्वामी सुर ज्ञान।
गरीबदास शिर मुकुट धरि,माला अटकी जान।।
स्वामी घुंडी खोल कर, फिर माला गल डार।
गरीबदास इस भजन कूं, जानत है करतार।।
ड्यौढी पड़दा दूर कर, लीया कंठ लगाय।
गरीबदास गुजरी बौहत, बदनैं बदन मिलाय।।
मनकी पूजा तुम लखी, मुकुट माल परबेश।
गरीबदास गति को लखै, कौन वरण क्या भेष।।
यह तौ तुम शिक्षा दई, मानि लई मनमोर।
गरीबदास कोमल पुरूष, हमरा बदन कठोर।।

''कबीर देव द्वारा ऋषि रामानन्द के आश्रम में दो रूप धारण करना''

स्वामी रामानन्द जी ने परमेश्वर कबीर जी से कहा कि ''आपने झूठ क्यों बोला?'' कबीर परमेश्वर जी बोले! कैसा झूठ स्वामी जी? स्वामी रामानन्द जी ने कहा कि आप कह रहे थे कि आपने मेरे से नाम ले रखा है। आपने मेरे से उपदेश कब लिया? बालक रूपधारी कबीर परमेश्वर जी बोले एक समय आप स्नान करने के लिए पँचगंगा घाट पर गए थे। मैं वहाँ लेटा हुआ था। आपके पैरों की खड़ाऊँ मेरे सिर में लगी थी! आपने कहा था कि बेटा

राम नाम बोलो। रामानन्द जी बोले-हाँ, अब कुछ याद आया। परन्तु वह तो बहुत छोटा बच्चा था (क्योंकि उस समय पाँच वर्ष की आयु के बच्चे बहुत बड़े हो जाया करते थे तथा पाँच वर्ष के बच्चे के शरीर तथा ढ़ाई वर्ष के बच्चे के शरीर में दुगुना अन्तर हो जाता है)। **कबीर परमेश्वर जी ने कहा स्वामी जी देखो, मैं ऐसा था। स्वामी रामानन्द जी के सामने भी खड़े हैं और एक ढाई वर्षीय बच्चे का दूसरा रूप बना कर किसी सेवक की वहाँ पर चारपाई बिछी थी उसके ऊपर विराजमान हो गए।**

रामानन्द जी ने छः बार तो इधर देखा और छः बार उधर देखा। फिर आँखें मलमल कर देखा कि कहीं तेरी आँखें धोखा तो नहीं खा रही हैं। इस प्रकार देख ही रहे थे कि इतने में कबीर परमेश्वर जी का छोटे वाला रूप हवा में उड़ा और कबीर परमेश्वर जी के बड़े पाँच वर्ष वाले स्वरूप में समा गया। पाँच वर्ष वाले स्वरूप में कबीर परमेश्वर जी रह गए।

रामानन्द जी बोले कि मेरा संशय मिट गया कि आप ही पूर्ण ब्रह्म हो। हे परमेश्वर! आपको कैसे पहचान सकते हैं। आप किस जाति में उत्पन्न तथा कैसी वेश भूषा में खड़े हो। हम नादान प्राणी आप के साथ वाद-विवाद करके दोषी हो गए, क्षमा करना परमेश्वर कविर्देव, मैं आपका अनजान बच्चा हूँ। रामानन्द जी ने फिर अपनी अन्य शंकाओं का निवारण करवाया।

शंका :- हे कविर्देव! मैं राम-राम कोई मन्त्र शिष्यों को जाप करने को नहीं देता। यदि आपने मुझसे दीक्षा ली है तो वह मन्त्र बताईए जो मैं शिष्य को जाप करने को देता हूँ।

उत्तर कबीर देव का :- हे स्वामी जी! आप ओम् नाम जाप करने को देते हो तथा ओ३म् भगवते वासुदेवाय नमः का जाप तथा विष्णु स्त्रोत की आवर्ती की भी आज्ञा देते हो।

शंका :- आपने जो मन्त्र बताया यह तो सही है। एक शंका और है उसका भी निवारण कीजिए। मैं जिसे शिष्य बनाता हूँ उसे एक चिन्ह देता हूँ। वह आपके पास नहीं है।

उत्तर :- बन्दी छोड़ कबीर देव बोले हे गुरुदेव! आप तुलसी की लकड़ी के एक मणके की कण्ठी (माला) गले में पहनने के लिए देते हो। यह देखो गुरु जी उसी दिन आपने अपनी कण्ठी गले से निकाल कर मेरे गले में पहनाई थी। यह कहते हुए कविर्देव ने अपने कुर्ते के नीचे गले में पहनी वही कण्ठी (माला) सार्वजनिक कर दी। रामानन्द जी समझ गए यह कोई साधारण बच्चा नहीं है। यह प्रभु का भेजा हुआ कोई तत्त्वदर्शी आत्मा है। इस से ज्ञान चर्चा करनी चाहिए। चर्चा के विषय को आगे बढ़ाते हुए स्वामी रामानन्द जी बोले हे बालक कबीर! आप अपने आपको परमेश्वर कहते हो परमात्मा ऐसा अर्थात् मनुष्य जैसा थोड़े ही है।

हे कबीर जी! उस स्थान (परम धाम) को यदि एक बार दिखा दे तो मन शान्त हो जाएगा। मैं वर्षों से ध्यान योग अर्थात् हठयोग करता हूँ। मैं समाधिस्थ होकर आकाश में बहुत ऊपर तक सैर कर आता हूँ। परमेश्वर कबीर जी ने कहा है स्वामी जी! आप समाधिस्थ होइए।

स्वामी रामानन्द जी का हठयोग ध्यान (मैडिटेशन) करना नित्य का अभ्यास था तुरन्त ही समाधिस्थ हो गए। समाधि दशा में स्वामी जी की सूरति (ध्यान) त्रिवेणी तक जाती थी। त्रिवेणी पर तीन रास्ते हो जाते हैं। बाँया रास्ता धर्मराज के लोक तथा ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव जी के लोकों तथा स्वर्ग लोक आदि को जाता है। दायाँ रास्ता अठासी हजार खेड़ों (नगरियों) की ओर जाता है। सामने वाला रास्ता ब्रह्म लोक को जाता है। वह ब्रह्मरंद्र भी कहा जाता है। स्वामी रामानन्द जी कई जन्मों से साधना करते हुए आ रहे थे। इस कारण से इनका ध्यान तुरन्त लग जाता था। बालक रूपधारी परमेश्वर कबीर जी स्वामी रामानन्द जी को ध्यान में आगे मिले तथा वहाँ का सर्व भेद रामानन्द जी को बताया। हे स्वामी जी! आप की भक्ति साधना कई जन्मों की संचित है। जिस समय आप शरीर त्याग कर जाओगे इस बाऐं रास्ते से जाओगे इस रास्ते में स्वचालित द्वार (एटोमैटिक खुलने वाले गेट) लगे है। जिस साधक की जिस भी लोक की साधना होती है। वह धर्मराय के पास जाकर अपना लेखा (Account) करवाकर इसी रास्ते से आगे चलता है। उसी लोक का द्वार अपने आप खुल जाता है। वह द्वार तुरन्त बन्द हो जाता है। वह प्राणी पुनः उस रास्ते से लौट नहीं सकता। उस लोक में समय पूरा होने के पश्चात् पुनः उसी मार्ग से धर्मराज के पास आकर अन्य जीवन प्राप्त करता है।

धर्मराय का लोक भी उसी बाई और जाने वाले रास्ते में सर्व प्रथम है। उस धर्मराज के लोक में प्रत्येक की भक्ति अनुसार स्थान तय होता है। आप (स्वामी रामानन्द) जी की भक्ति का आधार विष्णु जी का लोक है। आप अपने पुण्यों को इस लोक में समाप्त करके पुनः पृथ्वी लोक पर शरीर धारण करोगे। यह हरहट के कूएं जैसा चक्र आपकी साधना से कभी समाप्त नहीं होगा। यह जन्म मृत्यु का चक्र तो केवल मेरे द्वारा बताए तत्त्वज्ञान द्वारा ही समाप्त होना सम्भव है। परमेश्वर कबीर जी ने फिर कहा हे स्वामी जी! जो सामने वाला द्वार है यह ब्रह्मरन्द्र है। यह वेदों में लिखे किसी भी मन्त्र जाप से नहीं खुलता यह तो मेरे द्वारा बताए सत्यनाम (जो दो मन्त्र का होता है एक ॐ मन्त्र तथा दूसरा तत् यह तत् सांकेतिक है वास्तविक नाम मन्त्र तो उपदेश लेने वाले को बताया जाएगा) के जाप से खुलता है। ऐसा कह कर परमेश्वर कबीर जी ने सत्यनाम (दो मन्त्रों के नाम) का जाप किया। तुरन्त ही सामने वाला द्वार (ब्रह्मरन्द्र) खुल गया। परमेश्वर कबीर जी अपने साथ

स्वामी रामानन्द जी की आत्मा को लेकर उस ब्रह्मरन्द्र में प्रवेश कर गए। पश्चात् वह द्वार तुरन्त बन्द हो गया। उस द्वार से निकल कर लम्बा रास्ता तय किया ब्रह्मलोक में गए आगे फिर तीन रास्ते हैं। बाई ओर एक रास्ता महास्वर्ग में जाता है। उस महास्वर्ग में नकली (Duplicate) सत्यलोक, अलख लोक, अगम लोक तथा अनामी लोकों की रचना काल ब्रह्म ने अपनी पत्नी दुर्गा से करा रखी है। प्राणियों को धोखा देने के लिए। उन सर्व नकली लोकों को दिखा कर वापस आए। दाई और सप्तपुरी, ध्रुव लोक आदि हैं। सामने वाला द्वार वहाँ जाता है जहाँ पर गीता ज्ञान दाता काल ब्रह्म अपनी योग माया से छुपा रहता है। वहाँ तीन स्थान बनाए हैं। एक रजोगुण प्रधान क्षेत्र है। जिसमें काल ब्रह्म तथा दुर्गा (प्रकृति) देवी पति-पत्नी रूप में साकार रूप में रहते हैं। उस समय जिस पुत्र का जन्म होता है वह रजोगुण युक्त होता है। उसका नाम ब्रह्मा रख देता है उस बालक को युवा होने तक अचेत रखकर परवरिश करते हैं। युवा होने पर काल ब्रह्म स्वयं विष्णु रूप धारण करके अपनी नाभी से कमल का फूल प्रकट करता है। उस कमल के फूल पर युवा अवस्था प्राप्त होने पर ब्रह्मा जी को रख कर सचेत कर देता है। इसी प्रकार एक सतोगुण प्रधान क्षेत्र बनाया है। उसमें दोनों (दुर्गा व काल ब्रह्म) पति-पत्नी रूप में रह कर अन्य पुत्र सतोगुण प्रधान उत्पन्न करते हैं। उसका नाम विष्णु रखते हैं। उसे भी युवा होने तक अचेत रखते हैं। शेष शय्या पर सचेत करते हैं। अन्य शेषनाग ब्रह्म ही अपनी शक्ति से उत्पन्न करता है। इसी प्रकार एक तमोगुण प्रधान क्षेत्र बनाया है। उस में वे दोनों (दुर्गा तथा काल ब्रह्म) पति-पत्नी व्यवहार से तमोगुण प्रधान पुत्र उत्पन्न करते हैं। उसका नाम शिव रखते हैं। उसे भी युवा अवस्था प्राप्त होने तक अचेत रखते हैं। युवा होने पर तीनों को सचेत करके इनका विवाह, प्रकृति (दुर्गा) द्वारा उत्पन्न तीनों लड़कियों से करते हैं। इस प्रकार यह काल ब्रह्म अपना सृष्टि चक्र चलाता है।

परमेश्वर कबीर जी ने स्वामी रामानन्द जी को वह रास्ता दिखाया तथा इक्कीसवें ब्रह्मण्ड में फिर तीन रास्ते है बाई ओर फिर नकली सतलोक, अलख लोक, अगम लोक तथा अनामी लोक की रचना की हुई है। दाई ओर बारह भक्तों का निवास स्थान बनाया है, जिनको अपना ज्ञान प्रचारक बनाकर जनता को शास्त्रविरूद्ध ज्ञान पर आधारित करवाता है। सामने वाला द्वार तप्त शिला की ओर जाता है। जहाँ पर यह काल ब्रह्म एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों के सुक्ष्म शरीरों को तपाकर उनसे मैल निकाल कर खाता है। उस काल ब्रह्म के उस लोक के ऊपर एक द्वार है जो परब्रह्म (अक्षर पुरूष) के सात शंख ब्रह्मण्डों में खुलता है। परब्रह्म के ब्रह्मण्डों के अन्तिम सिरे पर एक द्वार है जो सत्यपुरूष (परम अक्षर ब्रह्म) के लोक सत्यलोक की भंवर गुफा

में खुलता है। फिर आगे सत्यलोक है जो वास्तविक सत्यलोक है। सत्यलोक में पूर्ण परमात्मा कबीर जी अन्य तेजोमय मानव सदृश शरीर में एक गुबन्द (गुम्मज) में एक ऊँचे सिंहासन पर विराजमान हैं। वहाँ सत्यलोक की सर्व वस्तुऐं तथा सत्यलोक वासी सफेद प्रकाश युक्त हैं। सत्यपुरूष के शरीर का प्रकाश अत्यधिक सफेद है। सत्यपुरूष के एक रोम (शरीर के बाल) का प्रकाश एक करोड़ सूर्यों तथा इतने ही चन्द्रमाओं के मिलेजुले प्रकाश से भी अधिक है।

परमेश्वर कबीर जी स्वामी रामानन्द जी की आत्मा को साथ लेकर सत्यलोक में गए। वहाँ सर्व आत्माओं का भी मानव सदृश शरीर है। उनके शरीर का भी सफेद प्रकाश है। परन्तु सत्यलोक निवासियों के शरीर का प्रकाश सोलह सूर्यों के प्रकाश के समान है। बालक रूपधारी कविर्देव ने अपने ही अन्य स्वरूप पर चंवर किया। जो स्वरूप अत्यधिक तेजोमय था तथा सिंहासन पर एक सफेद गुबन्द में विराज मान था। स्वामी रामानन्द जी ने सोचा कि पूर्ण परमात्मा तो यह है जो तेजोमय शरीर युक्त है। यह बाल रूपधारी आत्मा कबीर यहाँ का अनुचर अर्थात् सेवक होगा। स्वामी रामानन्द जी ने इतना विचार ही किया था। उसी समय सिंहासन पर विराजमान तेजोमय शरीर युक्त परमात्मा सिंहासन त्यागकर खड़ा हो गया तथा बालक कबीर जी को सिंहासन पर बैठने के लिए प्रार्थना की नीचे से रामानन्द जी के साथ गया बालक कबीर जी उस सिंहासन पर विराजमान हो गए तथा वह तेजोमय शरीर धारी प्रभु बालक के सिर पर श्रद्धा से चंवर करने लगा। रामानन्द जी ने सोचा यह परमात्मा इस बच्चे पर चंवर करने लगा। यह बालक यहां का नौकर (सेवक) नहीं हो सकता। इतने में तेजोमय शरीर वाला परमात्मा उस बालक कबीर जी के शरीर में समा गया। बालक कबीर जी का शरीर उसी प्रकार उतने ही प्रकाश युक्त हो गया जितना पहले सिंहासन पर बैठे पुरूष (परमेश्वर) का था।

इतनी लीला करके स्वामी रामानन्द जी की आत्मा को वापस शरीर में भेज दिया। महर्षि रामानन्द जी ने आँखे खोल कर देखा तो बालक रूपधारी परमेश्वर कबीर जी को सामने भी बैठा पाया। महर्षि रामानन्द जी को पूर्ण विश्वास हो गया कि यह बालक कबीर जी ही परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् वासुदेव (कुल का मालिक) है। दोनों स्थानों (ऊपर सत्यलोक में तथा नीचे पृथ्वी लोक में) पर स्वयं ही लीला कर रहा है। यही परम दिव्य पुरूष अर्थात् आदि पुरूष है। सत्यलोक में जहाँ पर यह परमात्मा मूल रूप में निवास करता है वह सनातन परमधाम है। परमेश्वर कबीर जी ने इसी प्रकार सन्त गरीबदास जी महाराज छुड़ानी (हरियाणा) वाले को सर्व ब्रह्मण्डों को प्रत्यक्ष दिखाया था। उनका ज्ञान योग खोल दिया था तथा परमेश्वर ने गरीबदास जी महाराज को स्वामी रामानन्द जी के विषय में बताया था कि किस प्रकार मैंने स्वामी

जी को शरण में लिया था। महाराज गरीबदास जी ने अपनी अमृतवाणी में उल्लेख किया है।

तहाँ वहाँ चित चक्रित भया, देखि फजल दरबार।
गरीबदास सिजदा किया, हम पाये दीदार।।
बोलत रामानन्द जी सुन कबिर करतार।
गरीबदास सब रूप में तुमही बोलनहार।।
दोहु ठोर है एक तू, भया एक से दोय।
गरीबदास हम कारणें उतरे हो मग जोय।।
तुम साहेब तुम सन्त हो तुम सतगुरु तुम हंस।
गरीबदास तुम रूप बिन और न दूजा अंस।।
तुम स्वामी मैं बाल बुद्धि भर्म कर्म किये नाश।
गरीबदास निज ब्रह्म तुम, हमरै दृढ विश्वास।।
सुन बे सुन से तुम परे, ऊरै से हमरे तीर।
गरीबदास सरबंग में, अविगत पुरूष कबीर।।
कोटि–2 सिजदा किए, कोटि–2 प्रणाम।
गरीबदास अनहद अधर, हम परसे तुम धाम।।
बोले रामानन्द जी, सुनों कबीर सुभान।
गरीबदास मुक्ता भये, उधरे पिण्ड अरू प्राण।।

उपरोक्त वाणी का भावार्थ :- सत्यलोक में तथा काशी नगर में पृथ्वी पर दोनों स्थानों पर परमात्मा कबीर जी को देख कर स्वामी रामानन्द जी ने कहा है कबीर परमात्मा आप दोनों स्थानों पर लीला कर रहे हो। आप ही निज ब्रह्म अर्थात् गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में कहा है कि उत्तम पुरूष अर्थात् वास्तविक परमेश्वर तो क्षर पुरूष (काल ब्रह्म) तथा अक्षर पुरूष (परब्रह्म) से अन्य ही है। वही परमात्मा कहा जाता है। जो तीनों लोकों में प्रवेश करके सबका धारण पोषण करता है वह परम अक्षर ब्रह्म आप ही हैं। आप ही की शक्ति से सर्व प्राणी गति कर रहे हैं। मैंने आप का वह सनातन परम धाम आँखों देखा है तथा वास्तविक अनहद धुन तो ऊपर सत्यलोक में है। ऐसा कह कर स्वामी रामानन्द जी ने कबीर परमेश्वर के चरणों में कोटि-2 प्रणाम किया तथा कहा आप परमेश्वर हो, आप ही सतगुरु तथा आप ही तत्त्वदर्शी सन्त हो आप ही हंस अर्थात् नीर-क्षीर को भिन्न-2 करने वाले सच्चे भक्त के गुणों युक्त हो। कबीर भक्त नाम से यहाँ पर प्रसिद्ध हो वास्तव में आप परमात्मा हो। मैं आपका भक्त आप मेरे गुरु जी।

परमेश्वर कबीर जी ने कहा हे स्वामी जी! गुरु जी तो आप ही रहो। मैं आपका शिष्य हूँ। यह गुरु परम्परा बनाए रखने के लिए अति आवश्यक है। यदि आप मेरे गुरु जी रूप में नहीं रहोगे तो भविष्य में सन्त व भक्त कहा

करेंगे कि गुरु बनाने की कोई अवश्यकता नहीं है। सीधा ही परमात्मा से ही सम्पर्क करो। ''कबीर'' ने भी गुरु नहीं बनाया था।

हे स्वामी जी! काल प्रेरित व्यक्ति ऐसी-2 बातें बना कर श्रद्धालुओं को भक्ति की दिशा से भ्रष्ट किया करेंगे तथा काल के जाल में फाँसे रखेंगे। इसलिए संसार की दृष्टि में आप मेरे गुरु जी की भूमिका कीजिये तथा वास्तव में जो साधना की विधि मैं बताऊँ आप वैसे भक्ति कीजिए। स्वामी रामानन्द जी ने कबीर परमेश्वर जी की बात को स्वीकार किया। कबीर परमेश्वर जी एक रूप में स्वामी रामानन्द जी को तत्त्वज्ञान सुना रहे थे तथा अन्य रूप धारण करके कुछ ही समय उपरान्त अपने घर पर आ गए। क्योंकि वहाँ नीरू तथा नीमा अति चिन्तित थे। बच्चे को सकुशल घर लौट आने पर नीरू तथा नीमा ने परमेश्वर का शुक्रिया किया। अपने बच्चे कबीर को सीने से लगा कर नीमा रोने लगी तथा बच्चे को अपने पति नीरू के पास ले गई। नीरू ने भी बच्चे कबीर से प्यार किया। नीरू ने पूछा बेटा! आपको उन ब्राह्मणों ने मारा तो नहीं? कबीर जी बोले नहीं पिता जी! स्वामी रामानन्द जी बहुत अच्छे हैं। मैंने उनको गुरु बना लिया है। उन्होंने मुझको सर्व ब्राह्मण समाज के समक्ष सीने से लगा कर कहा यह मेरा शिष्य है। आज से मैं सर्व हिन्दू समाज के सर्व जातियों के व्यक्तियों को शिष्य बनाया करूँगा। माता-पिता (नीरू तथा नीमा) अति प्रसन्न हुए तथा घर के कार्य में व्यस्त हो गए।

स्वामी रामानन्द जी ने कहा हे कबीर जी! हम सर्व की बुद्धि पर पत्थर पड़े थे आपने ही अज्ञान रूपी पत्थरों को हटाया है। बड़े पुण्यकर्मों से आपका दर्शन सुलभ हुआ है।

(यह शब्द अगम निगम बोध के पृष्ठ 38 पर लिखा है।)

मेरा नाम कबीरा हूँ जगत गुरू जाहिरा।(टेक)
तीन लोक में यश है मेरा, त्रिकुटी है अस्थाना।
पाँच–तीन हम ही ने किन्हें, जातें रचा जिहाना।।
गगन मण्डल में बासा मेरा, नौवें कमल प्रमाना।
ब्रह्म बीज हम ही से आया, बनी जो मूर्ति नाना।।
संखो लहर मेहर की उपजैं, बाजै अनहद बाजा।
गुप्त भेद वाही को देंगे, शरण हमरी आजा।।
भव बंधन से लेऊँ छुड़ाई, निर्मल करूं शरीरा।
सुर नर मुनि कोई भेद न पावै, पावै संत गंभीरा।।
बेद–कतेब में भेद ना पूरा, काल जाल जंजाला।
कह कबीर सुनो गुरू रामानन्द, करूँ अमर ज्ञान उजाला।।

अब विश्व की उत्पति (सृष्टि रचना) का ज्ञान कराता हूँ जो स्वयं परमेश्वर ने अपने द्वारा रचे जगत का ज्ञान बताया है। कृपया आगे पढ़ें।

''बारहवां अध्याय''

संक्षिप्त सृष्टि रचना

सबसे पहले सतपुरुष अकेले थे, कोई रचना नहीं थी। सर्वप्रथम परमेश्वर जी ने चार अविनाशी लोकों की रचना वचन (शब्द) से की।

1. अनामी लोक जिसको अकह लोक भी कहते हैं।

2. अगम लोक 3. अलख लोक 4. सतलोक।

फिर परमात्मा ने चारों लोकों में चार रुप धारण किए। चार उपमात्मक नामों से प्रत्येक लोक में प्रसिद्ध हुए।

1. अनामी लोक में अनामी पुरुष या अकह पुरुष।

2. अगम लोक में अगम पुरुष।

3. अलख लोक में अलख पुरुष।

4. सतलोक में सतपुरुष उपमात्मक नाम रखे।

फिर चारों लोकों में परमात्मा ने वचन से ही एक-एक सिंहासन (तख्त) बनाया। प्रत्येक सिंहासन पर सम्राट के समान मुकुट आदि धारण करके विराजमान हो गए। फिर सतलोक में परमेश्वर ने अन्य रचना की। एक शब्द (वचन) से 16 द्वीपों तथा एक मानसरोवर की रचना की। पुनः 16 वचनों से 16 पुत्रों की उत्पत्ति की। उनमें मुख्य भूमिका अचिन्त, तेज, सहजदास, जोगजीत, कूर्म, इच्छा, धैर्य और ज्ञानी की रही है।

अपने पुत्रों को सबक सिखाने के लिए कि समर्थ के बिना कोई कार्य सफल नहीं हो सकता। जिसका काम उसी को साजे और करे तो मूर्ख बाजे।

सतपुरुष ने अपने पुत्र अचिन्त से कहा कि आप अन्य रचना सतलोक में करें। मैंने कुछ शक्ति तेरे को प्रदान कर दी है। अचिन्त ने अपने वचन से अक्षर पुरुष की उत्पत्ति की। अक्षर पुरुष युवा उत्पन्न हुआ। मानसरोवर में स्नान करने गया, उसी जल पर तैरने लगा। कुछ देर में निंद्रा आ गई। सरोवर में गहरा नीचे चला गया। (सतलोक में अमर शरीर है, वहाँ पर शरीर श्वांसों पर निर्भर नहीं है।) बहुत समय तक अक्षर पुरूष जल से बाहर नहीं आया। अचिन्त आगे सृष्टि नहीं कर सका, तब सतपुरुष (परम अक्षर पुरुष) ने मानसरोवर पर जाकर कुछ जल अपनी चुल्लु (हाथ) में लिया। उसका एक विशाल अण्डा वचन से बनाया तथा एक आत्मा वचन से उत्पन्न करके अण्डे में प्रवेश की और अण्डे को जल में छोड़ दिया। जल में अण्डा नीचे जाने लगा तो उसकी गड़गड़ाहट के शोर से अक्षर पुरूष की निंद्रा भंग हो गई। अक्षर पुरुष ने क्रोध से देखा कि किसने मुझे जगा दिया। क्रोध उस

अण्डे पर गिरा तो अण्डा फूट गया। उसमें से एक युवा तेजोमय व्यक्ति निकला। उसका नाम क्षर पुरुष रखा। (आगे चलकर यही काल कहलाया) सतपुरुष ने दोनों से कहा कि आप जल से बाहर आओ। अक्षर पुरुष तुम निंद्रा में थे, तेरे को नींद से उठाने के लिए यह सब किया है। अक्षर पुरुष और क्षर पुरुष से सतपुरुष ने कहा कि आप दोनों अचिंत के लोक में रहो।

कुछ समय के पश्चात् (क्षर पुरुष जिसे ज्योति निरंजन काल भी कहते हैं) ने मन में विचार किया कि हम तीन तो एक लोक में रह रहे हैं। मेरे अन्य भाई एक-एक द्वीप में रह रहे हैं। यह विचार कर उसने अलग द्वीप प्राप्त करने के लिए तप प्रारम्भ किया। इससे पहले सतपुरुष जी ने अपने पुत्र अचिन्त से कहा कि आप सृष्टि रचना नहीं कर सकते। मैंने तुम्हें यह शिक्षा देने के लिए ही आप से कहा कि अन्य रचना करो। क्योंकि अचिन्त आप तो अक्षर पुरुष को भी नहीं उठा सके। अब आगे कोई भी यह कोशिश न करना। सर्व रचना मैं अपनी शब्द शक्ति से रचूँगा।

सतपुरुष जी ने सतलोक में असँख्यों लोक रचे तथा प्रत्येक में अपने वचन (शब्द) से अन्य आत्माओं की उत्पत्ति की। ये सब लोक सतपुरुष के सिंहासन के इर्द-गिर्द थे। इनमें केवल नर हंस (सतलोक में मनुष्यों को हंस कहते हैं) ही रहते हैं और उनको परमेश्वर ने शक्ति दे रखी है कि वे अपना परिवार (नर हंस) वचन से उत्पन्न कर सकते है। वे केवल दो पुत्र ही उत्पन्न कर सकते हैं।

क्षर पुरुष (ज्योति निरंजन) ने तप करना शुरु किया। उसने 70 युग तक तप किया। सत्पुरुष जी ने क्षर पुरुष से पूछा कि आप तप किसलिए कर रहे हो? क्षर पुरुष ने कहा कि यह स्थान मेरे लिए कम है। मुझे अलग स्थान चाहिए। परमेश्वर (सतपुरुष) जी ने उसे 70 युग के तप के प्रतिफल में 21 ब्रह्माण्ड दे दिए जो सतलोक के बाहरी क्षेत्र में थे जैसे 21 प्लॉट मिल गए हों। ज्योति निरंजन (क्षर पुरुष) ने विचार किया कि इन ब्रह्माण्डों में कुछ रचना भी होनी चहिए। उसके लिए, फिर 70 युग तक तप किया। फिर सतपुरुष जी ने पूछा कि अब क्या चाहता है? क्षर पुरुष ने कहा कि सृष्टि रचना की सामग्री देने की कृपा करें। सतपुरुष जी ने उसको पाँच तत्व (जल, पृथ्वी, अग्नि, वायु तथा आकाश) तथा तीन गुण (रजगुण, सतगुण तथा तमगुण) दे दिये तथा कहा कि इनसे अपनी रचना कर।

क्षर पुरूष ने तीसरी बार फिर तप प्रारम्भ किया। जब 64 (चौंसठ) युग तप करते हो गए तो सत्य पुरूष जी ने पूछा कि आप और क्या चाहते हैं? क्षर पुरूष (ज्योति निरंजन) ने कहा कि मुझे कुछ आत्मा दे दो। मेरा अकेले का दिल नहीं लग रहा।

क्षर पुरूष को आत्मा ऐसे मिली, आगे पढ़ें :-

''हम काल के लोक में कैसे आए?''

जिस समय क्षर पुरुष (ज्योति निरंजन) एक पैर पर खड़ा होकर तप कर रहा था। तब हम सभी आत्माऐं इस क्षर पुरुष पर आकर्षित हो गए। जैसे जवान बच्चे अभिनेता व अभिनेत्री पर आसक्त हो जाते हैं। लेना एक न देने दो। व्यर्थ में चाहने लग जाते हैं। वे अपनी कमाई करने के लिए नाचते-कूदते हैं। युवा-बच्चे उन्हें देखकर अपना धन नष्ट करते हैं। ठीक इसी प्रकार हम अपने परमपिता सतपुरुष को छोड़कर काल पुरुष (क्षर पुरुष) को हृदय से चाहने लग गए थे। जो परमेश्वर हमें सर्व सुख सुविधा दे रहा था। उससे मुँह मोड़कर इस नकली ड्रामा करने वाले काल ब्रह्म को चाहने लगे। सत पुरुष जी ने बीच-बीच में बहुत बार आकाशवाणी की कि बच्चो तुम इस काल की क्रिया को मत देखो, मस्त रहो। हम ऊपर से तो सावधान हो गए, परन्तु अन्दर से चाहते रहे। परमेश्वर तो अन्तर्यामी है। इन्होंने जान लिया कि ये यहाँ रखने के योग्य नहीं रहे। काल पुरुष (क्षर पुरुष = ज्योति निरंजन) ने जब दो बार तप करके फल प्राप्त कर लिया तब उसने सोचा कि अब कुछ जीवात्मा भी मेरे साथ रहनी चाहिए। मेरा अकेले का दिल नहीं लगेगा। इसलिए जीवात्मा प्राप्ति के लिए तप करना शुरु किया। 64 युग तक तप करने के पश्चात् परमेश्वर जी ने पूछा कि ज्योति निरंजन अब किसलिए तप कर रहा है? क्षर पुरुष ने कहा कि कुछ आत्माएं प्रदान करो, मेरा अकेले का दिल नहीं लगता। सतपुरुष ने कहा कि तेरे तप के बदले में और ब्रह्माण्ड दे सकता हूं, परन्तु अपनी आत्माएं नहीं दूँगा। ये मेरे शरीर से उत्पन्न हुई हैं। हाँ, यदि वे स्वयं जाना चाहते हैं तो वह जा सकते हैं। युवा कविर् (समर्थ कबीर) के वचन सुनकर ज्योति निरंजन हमारे पास आया। हम सभी हंस आत्मा पहले से ही उस पर आसक्त थे। हम उसे चारों तरफ से घेरकर खड़े हो गए। ज्योति निरंजन ने कहा कि मैंने पिता जी से अलग 21 ब्रह्माण्ड प्राप्त किए हैं। वहाँ नाना प्रकार के रमणीय स्थल बनाए हैं। क्या आप मेरे साथ चलोगे? हम सभी हंसों ने जो आज 21 ब्रह्माण्डों में परेशान हैं, कहा कि हम तैयार हैं। यदि पिता जी आज्ञा दें, तब क्षर पुरूष (काल), पूर्ण ब्रह्म महान् कविर् (समर्थ कबीर प्रभु) के पास गया तथा सर्व वार्ता कही। तब कविरग्नि (कबीर परमेश्वर) ने कहा कि मेरे सामने स्वीकृति देने वाले को आज्ञा दूँगा। क्षर पुरूष तथा परम अक्षर पुरूष (कविर्मितौजा) दोनों हम सभी हंसात्माओं के पास आए। सत् कविर्देव ने कहा कि जो हंसात्मा ब्रह्म के साथ जाना चाहता हैं, हाथ ऊपर करके स्वीकृति दें। अपने

पिता के सामने किसी की हिम्मत नहीं हुई। किसी ने स्वीकृति नहीं दी। बहुत समय तक सन्नाटा छाया रहा। तत्पश्चात् एक हंस आत्मा ने साहस किया तथा कहा कि पिता जी मैं जाना चाहता हूँ। फिर तो उसकी देखा-देखी (जो आज काल (ब्रह्म) के इक्कीस ब्रह्माण्डों में फँसी हैं) हम सभी आत्माओं ने स्वीकृति दे दी। परमेश्वर कबीर जी ने ज्योति निरंजन से कहा कि आप अपने स्थान पर जाओ। जिन्होंने तेरे साथ जाने की स्वीकृति दी है, मैं उन सर्व हंस आत्माओं को आपके पास भेज दूँगा। ज्योति निरंजन अपने 21 ब्रह्माण्डों में चला गया। उस समय तक यह इक्कीस ब्रह्माण्ड सतलोक में ही थे।

तत्पश्चात् पूर्ण ब्रह्म ने सर्व प्रथम स्वीकृति देने वाले हंस को लड़की का रूप दिया परन्तु स्त्री इन्द्री नहीं रची तथा सर्व आत्माओं को (जिन्होंने ज्योति निरंजन (ब्रह्म) के साथ जाने की सहमति दी थी) उस लड़की के शरीर में प्रवेश कर दिया तथा उसका नाम आष्ट्रा (आदि माया/प्रकृति देवी/दुर्गा) पड़ा तथा सत्यपुरूष ने कहा कि पुत्री मैंने तेरे को शब्द शक्ति प्रदान कर दी है। जितने जीव ब्रह्म कहे आप उत्पन्न कर देना। पूर्ण ब्रह्म कर्विदेव (कबीर साहेब) ने अपने पुत्र सहज दास के द्वारा प्रकृति को क्षर पुरूष के पास भिजवा दिया। सहज दास जी ने ज्योति निरंजन को बताया कि पिता जी ने इस बहन के शरीर में उन सब आत्माओं को प्रवेश कर दिया है, जिन्होंने आपके साथ जाने की सहमति व्यक्त की थी। इसको वचन शक्ति प्रदान की है, आप जितने जीव चाहोगे प्रकृति अपने शब्द से उत्पन्न कर देगी। यह कहकर सहजदास वापिस अपने द्वीप में आ गया।

युवा होने के कारण लड़की का रंग-रूप निखरा हुआ था। ब्रह्म के अन्दर विषय-वासना उत्पन्न हो गई तथा प्रकृति देवी के साथ अभद्र गतिविधि प्रारम्भ की। तब दुर्गा ने कहा कि ज्योति निरंजन मेरे पास पिता जी की प्रदान की हुई शब्द शक्ति है। आप जितने प्राणी कहोगे मैं वचन से उत्पन्न कर दूँगी। आप मैथुन परम्परा शुरू मत करो। आप भी उसी पिता के शब्द से अण्डे से उत्पन्न हुए हो तथा मैं भी उसी परमपिता के वचन से ही बाद में उत्पन्न हुई हूँ। आप मेरे बड़े भाई हो, बहन-भाई का यह योग महापाप का कारण बनेगा। परन्तु ज्योति निरंजन ने प्रकृति देवी की एक भी प्रार्थना नहीं सुनी तथा अपनी शब्द शक्ति द्वारा नाखुनों से स्त्री इन्द्री (भग) प्रकृति को लगा दी तथा बलात्कार करने की ठानी। उसी समय दुर्गा ने अपनी इज्जत रक्षा के लिए कोई और चारा न देखकर सूक्ष्म रूप बनाया तथा ज्योति निरंजन के खुले मुख के द्वारा पेट में प्रवेश करके पूर्ण ब्रह्म कविर् देव से अपनी रक्षा के लिए याचना की। उसी समय कर्विदेव(कविर् देव) अपने पुत्र योग संतायन अर्थात् जोगजीत का रूप बनाकर वहाँ प्रकट हुए तथा कन्या को

ब्रह्म के उदर से बाहर निकाला तथा कहा ज्योति निरंजन आज से तेरा नाम 'काल' होगा। तेरे जन्म-मृत्यु होते रहेंगे। इसीलिए तेरा नाम क्षर पुरूष होगा तथा एक लाख मानव शरीर धारी प्रणियों को प्रतिदिन खाया करेगा व सवा लाख उत्पन्न किया करेगा। आप दोनों को इक्कीस ब्रह्माण्ड सहित निष्कासित किया जाता है। इतना कहते ही इक्कीस ब्रह्माण्ड विमान की तरह चल पड़े। सहज दास के द्वीप के पास से होते हुए सतलोक से सोलह शंख कोस (एक कोस लगभग 3 कि.मी. का होता है) की दूरी पर आकर रूक गए।

विशेष विवरण :- अब तक तीन शक्तियों का विवरण आया है।

1. पूर्णब्रह्म जिसे अन्य उपमात्मक नामों से भी जाना जाता है, जैसे सतपुरूष, अकालपुरूष, शब्द स्वरूपी राम, परम अक्षर ब्रह्म/पुरूष आदि। यह पूर्णब्रह्म असंख्य ब्रह्माण्डों का स्वामी है तथा वास्तव में अविनाशी है।

2. परब्रह्म जिसे अक्षर पुरूष भी कहा जाता है। यह वास्तव में अविनाशी नहीं है। यह सात शंख ब्रह्माण्डों का स्वामी है।

3. ब्रह्म जिसे ज्योति निरंजन, काल, कैल, क्षर पुरूष तथा धर्मराय आदि नामों से जाना जाता है जो केवल इक्कीस ब्रह्माण्ड का स्वामी है। अब आगे इसी ब्रह्म (काल) की सृष्टि के एक ब्रह्माण्ड का परिचय दिया जाएगा जिसमें तीन और नाम आपके पढ़ने में आयेंगे:- ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव।

ब्रह्म तथा ब्रह्मा में भेद - एक ब्रह्माण्ड में बने सर्वोपरि स्थान पर ब्रह्म (क्षर पुरूष) स्वयं तीन गुप्त स्थानों की रचना करके ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव रूप में रहता है तथा अपनी पत्नी प्रकृति (दुर्गा) के सहयोग से तीन पुत्रों की उत्पत्ति करता है। उनके नाम भी ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव ही रखता है। जो ब्रह्म का पुत्र ब्रह्मा है, वह एक ब्रह्माण्ड में केवल तीन लोकों (पृथ्वी लोक, स्वर्ग लोक तथा पाताल लोक) में एक रजोगुण विभाग का मंत्री (स्वामी) है। इसे त्रिलोकिय ब्रह्मा कहा है तथा ब्रह्म जो ब्रह्मलोक में ब्रह्मा रूप में रहता है, उसे महाब्रह्मा व ब्रह्मलोकिय ब्रह्मा कहा है। इसी ब्रह्म (काल) को सदाशिव, महाशिव, महाविष्णु भी कहा है।

श्री विष्णु पुराण में प्रमाण :- चतुर्थ अंश अध्याय 1 पृष्ठ 230-231 पर श्री ब्रह्मा जी ने कहा :- जिस अजन्मा सर्वमय विधाता परमेश्वर का आदि, मध्य, अन्त, स्वरूप, स्वभाव और सार हम नहीं जान पाते। (श्लोक 83)

जो मेरा रूप धारण कर संसार की रचना करता है, स्थिति के समय जो पुरूष रूप है तथा जो रूद्र रूप से विश्व का ग्रास कर जाता है, अनन्त रूप से सम्पूर्ण जगत् को धारण करता है।(श्लोक 86)

(देखें एक ब्रह्माण्ड का लघु चित्र)
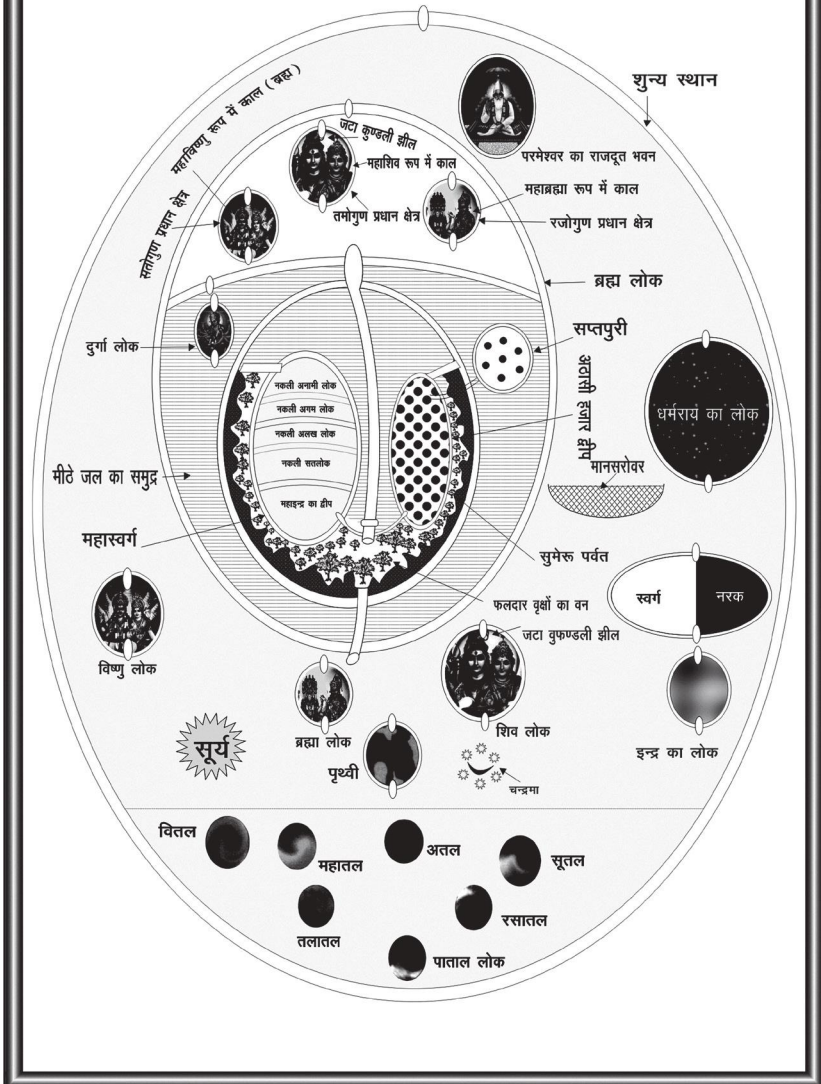
"श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी व श्री शिव जी की उत्पत्ति"

काल(ब्रह्म) ने प्रकृति (दुर्गा) से कहा कि अब मेरा कौन क्या बिगाड़ेगा? मनमानी करूँगा। प्रकृति ने फिर प्रार्थना की कि आप कुछ शर्म करो। प्रथम तो आप मेरे बड़े भाई हो क्योंकि उसी पूर्ण परमात्मा (कविर्देव) की वचन शक्ति से आपकी (ब्रह्म) की अण्डे से उत्पत्ति हुई तथा बाद मे मेरी उत्पत्ति उसी परमेश्वर के वचन से हुई है। दूसरे मैं आपके पेट से बाहर निकली हूँ। मैं आपकी बेटी हुई तथा आप मेरे पिता हुए। इन पवित्र नातों में बिगाड़ करना महापाप होगा। मेरे पास पिता की प्रदान की हुई शब्द शक्ति है, जितने प्राणी आप कहोगे मैं वचन से उत्पन्न कर दूँगी। ज्योति निरंजन ने दुर्गा की एक भी विनय नहीं सुनी तथा कहा कि मुझे जो सजा मिलनी थी, मिल गई। मुझे सतलोक से निष्कासित कर दिया। अब मैं मनमानी करूँगा। यह कहकर काल पुरूष (क्षर पुरूष) ने प्रकृति के साथ जबरदस्ती शादी की तथा तीन पुत्रों (रजगुण युक्त ब्रह्मा जी, सतगुण युक्त विष्णु जी तथा तमगुण युक्त शिव शंकर जी) की उत्पत्ति की। जवान होने तक तीनों पुत्रों को दुर्गा के द्वारा अचेत करवा देता है, फिर युवा होने पर श्री ब्रह्मा जी को कमल के फूल पर, श्री विष्णु जी को शेष नाग की शैय्या पर तथा श्री शिव जी को कैलाश पर्वत पर सचेत करके इकट्ठे कर देता है। तत्पश्चात् प्रकृति (दुर्गा) द्वारा इन तीनों का विवाह कर दिया जाता है। काल ब्रह्म के आदेश से प्रकृति देवी ने तीनों को एक ब्रह्माण्ड में तीन लोकों (स्वर्ग लोक, पृथ्वी लोक, तथा पाताल लोक) में एक-एक विभाग के मंत्री पद को संभालता है। काल ने एक ब्रह्माण्ड में एक ब्रह्मलोक की रचना की है। उसी में तीन गुप्त स्थान बनाए हैं। एक रजोगुण प्रधान स्थान है जहाँ पर यह ब्रह्म (काल) स्वयं महाब्रह्मा (मुख्यमंत्री) रूप में रहता है तथा अपनी पत्नी दुर्गा को महासावित्री रूप में रखता है। इन दोनों के संयोग से जो पुत्र इस स्थान पर उत्पन्न होता है, वह स्वतः ही रजोगुणी बन जाता है। दूसरा स्थान सतोगुण प्रधान स्थान बनाया है। वहाँ पर यह क्षर पुरूष स्वयं महाविष्णु रूप बनाकर रहता है तथा अपनी पत्नी दुर्गा को महालक्ष्मी रूप में रखकर जो पुत्र उत्पन्न करता है उसका नाम विष्णु रखता है, वह बालक सतोगुण युक्त होता है तथा तीसरा इसी काल ने वहीं पर एक तमोगुण प्रधान क्षेत्र बनाया है। उसमें यह स्वयं सदाशिव रूप बनाकर रहता है तथा अपनी पत्नी दुर्गा को महापार्वती रूप में रखता है। इन दोनों के पति-पत्नी व्यवहार से जो पुत्र उत्पन्न होता है, उसका नाम शिव रख देते हैं तथा तमोगुण युक्त कर देते हैं। (प्रमाण के लिए देखें पवित्र श्री शिव महापुराण, विद्यवेश्वर संहिता के पृष्ठ 24-26 पर जिसमें ब्रह्मा, विष्णु,

रूद्र तथा महेश्वर से अन्य सदाशिव है तथा रूद्र संहिता अध्याय 6 तथा 7,9 पृष्ठ नं०. 100 से, 105 तथा 110 पर अनुवादकर्ता श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार, गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित तथा पवित्र श्रीमद् देवी महापुराण तीसरा स्कन्ध पृष्ठ नं. 114 से 123 तक, गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित, जिसके अनुवाद कर्ता है श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार चिमन लाल गोस्वामी) फिर इन्हीं को धोखे में रखकर काल ब्रह्म अपने खाने के लिए जीवों की उत्पत्ति श्री ब्रह्मा जी द्वारा तथा स्थिति (एक-दूसरे को मोह-ममता में रखकर काल जाल में रखना) श्री विष्णु जी से तथा संहार (क्योंकि काल पुरूष को शापवश एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों के सूक्ष्म शरीर से मैल निकालकर खाना होता है, उसके लिए इक्कीसवें ब्रह्माण्ड में एक तप्तशिला है जो स्वतः गर्म रहती है, उस पर गर्म करके मैल पिघलाकर खाता है, जीव मरते नहीं परन्तु कष्ट असहनीय होता है, फिर प्राणियों को कर्म आधार पर अन्य शरीर प्रदान करता है) श्री शिव जी द्वारा करवाता है। जैसे किसी मकान में तीन कमरे बने हों। एक कमरे में अश्लील चित्र लगे हों। उस कमरे में जाते ही मन में वैसे ही मलीन विचार उत्पन्न हो जाते हैं। दूसरे कमरे में साधु-सन्तों, भक्तों के चित्र लगे हों तो मन में अच्छे विचार, प्रभु का चिंतन ही बना रहता है। तीसरे कमरे में देशभक्तों व शहीदों के चित्र लगे हों तो मन में वैसे ही जोशीले विचार उत्पन्न हो जाते हैं। ठीक इसी प्रकार ब्रह्म(काल) ने अपनी सूझ-बूझ से उपरोक्त तीनों गुण प्रधान स्थानों की रचना की हुई है।

(देखें ब्रह्म लोक का लघु चित्र व ज्योति निंरजन (काल) ब्रह्म, के लोक 21 ब्रह्माण्ड का लघु चित्र इसी पुस्तक के पृष्ठ 367 व 368 पर)

ब्रह्म लोक का लघु चित्र
महाविष्णु रूप में काल
जटा कुण्डली झील
महाब्रह्मा रूप में काल
महाशिव रूप में काल
रजोगुण प्रधान क्षेत्र
सतोगुण प्रधान क्षेत्र
तमोगुण प्रधान क्षेत्र
शुन्य स्थान
दुर्गा लोक
सप्तपुरी
नकली अनामी लोक
नकली अगम लोक
नकली अलख लोक
नकली सतलोक
महाइन्द्र का द्वीप
अठासी हजार द्वीप
मीठे जल का समुद्र
महास्वर्ग
सुमेर पर्वत
फलदार वृक्षों का वन
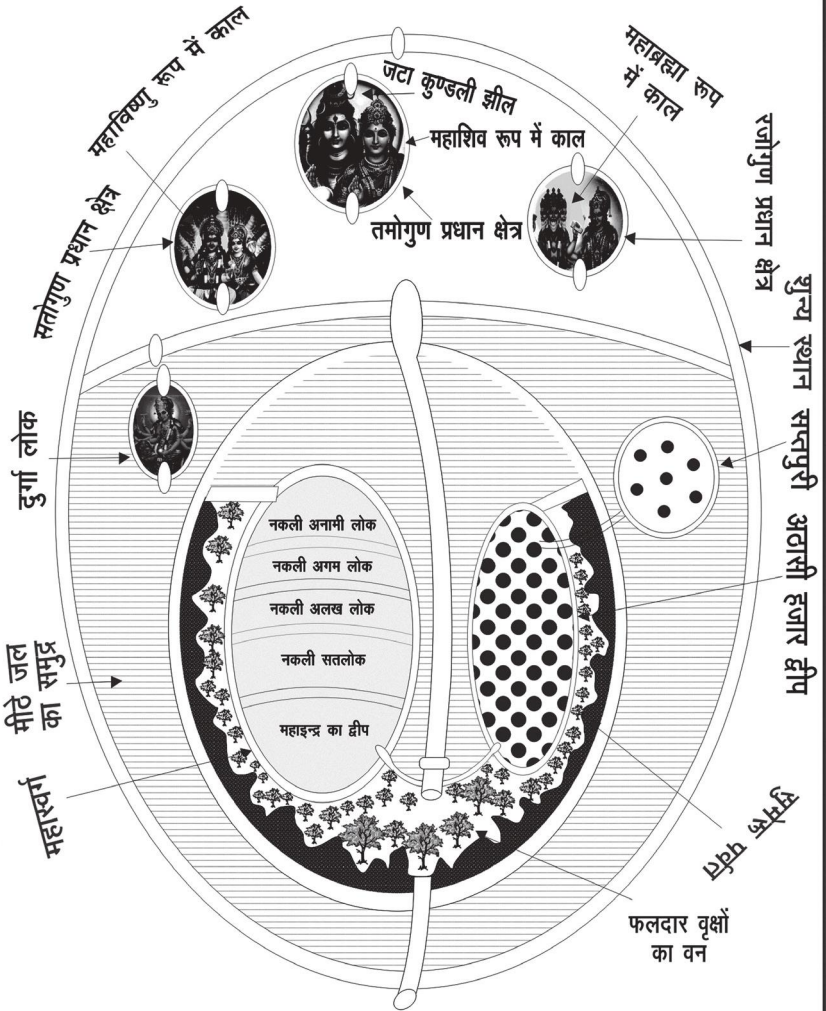
ज्योति निरंजन (काल) ब्रह्म के लोक (21 ब्रह्मण्ड) का लघु चित्र
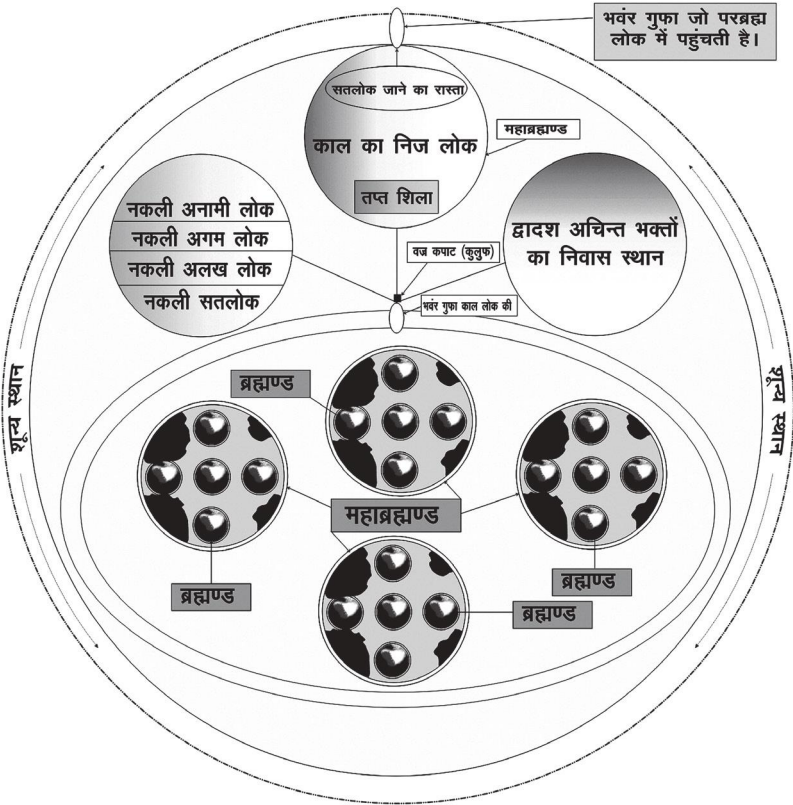
''सम्पूर्ण सृष्टि रचना''

(सूक्ष्मवेद से निष्कर्ष रूप सृष्टि रचना का वर्णन)

प्रभु प्रेमी आत्माऐं प्रथम बार निम्न सृष्टि की रचना को पढेंगे तो ऐसे लगेगा जैसे दन्त कथा हो, परन्तु सर्व पवित्र सद्ग्रन्थों के प्रमाणों को पढ़कर दाँतों तले उँगली दबाऐंगे कि यह वास्तविक अमृत ज्ञान कहाँ छुपा था? कृप्या धैर्य के साथ पढ़ें तथा इस अमृत ज्ञान को सुरक्षित रखें। आप की एक सौ एक पीढ़ी तक काम आएगा। पवित्रात्माऐं कृप्या सत्यनारायण (अविनाशी प्रभु/सतपुरुष) द्वारा रची सृष्टि रचना का वास्तविक ज्ञान पढ़ें।

1. पूर्ण ब्रह्म :- इस सृष्टि रचना में सतपुरुष-सतलोक का स्वामी (प्रभु), अलख पुरुष-अलख लोक का स्वामी (प्रभु), अगम पुरुष-अगम लोक का स्वामी (प्रभु) तथा अनामी पुरुष-अनामी अकह लोक का स्वामी (प्रभु) तो एक ही पूर्ण ब्रह्म है, जो वास्तव में अविनाशी प्रभु है जो भिन्न-२ रूप धारण करके अपने चारों लोकों में रहता है। जिसके अन्तर्गत असंख्य ब्रह्माण्ड आते हैं।

2. परब्रह्म :- यह केवल सात संख ब्रह्माण्ड का स्वामी (प्रभु) है। यह अक्षर पुरुष भी कहलाता है। परन्तु यह तथा इसके ब्रह्माण्ड भी वास्तव में अविनाशी नहीं है।

3. ब्रह्म :- यह केवल इक्कीस ब्रह्माण्ड का स्वामी (प्रभु) है। इसे क्षर पुरुष, ज्योति निरंजन, काल आदि उपमा से जाना जाता है। यह तथा इसके सर्व ब्रह्माण्ड नाशवान हैं।

(उपरोक्त तीनों पुरूषों (प्रभुओं) का प्रमाण पवित्र श्री मद्भगवत गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में भी है।)

4. ब्रह्मा :- ब्रह्मा इसी ब्रह्म का ज्येष्ठ पुत्र है, विष्णु मध्य वाला पुत्र है तथा शिव अंतिम तीसरा पुत्र है। ये तीनों ब्रह्म के पुत्र केवल एक ब्रह्माण्ड में एक विभाग (गुण) के स्वामी (प्रभु) हैं तथा नाशवान हैं। विस्तृत विवरण के लिए कृप्या पढ़ें निम्न लिखित सृष्टि रचना :-

{कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ने सुक्ष्म वेद अर्थात् कबिर्बाणी में अपने द्वारा रची सृष्टि का ज्ञान स्वयं ही बताया है जो निम्नलिखित है}

सर्व प्रथम केवल एक स्थान 'अनामी (अनामय) लोक' था। जिसे अकह लोक भी कहा जाता है, पूर्ण परमात्मा उस अनामी लोक में अकेला रहता था। उस परमात्मा का वास्तविक नाम कविर्देव अर्थात् कबीर परमेश्वर है। सभी आत्माऐं उस पूर्ण धनी के शरीर में समाई हुई थी। इसी कविर्देव का उपमात्मक (पदवी का) नाम अनामी पुरुष है (पुरुष का अर्थ प्रभु होता है। प्रभु ने मनुष्य को अपने ही स्वरूप में बनाया है, इसलिए मानव का नाम भी पुरुष ही पड़ा है।) अनामी पुरूष के एक रोम (शरीर के बाल) का प्रकाश संख सूर्यों की रोशनी से भी अधिक है।

परमेश्वर कबीर साहेब के असंख्य ब्रह्मण्डों का लघु चित्र

अनामी लोक : इस लोक में कबीर साहेब अनामी पुरूष रूप में रहते हैं। यहाँ अकेले हैं।

अगम लोक : इस लोक में भी कबीर साहेब अगम पुरूष रूप में रहते हैं।

अलख लोक : इस लोक में भी कबीर साहेब अलख पुरूष रूप में रहते हैं।

साहेब कबीर (सतपुरूष) का सतलोक में परम स्थान

कुर्म का द्वीप

धैर्य का द्वीप

दयाल का द्वीप

असंख्य ब्रह्मण्ड का कुल मालिक सतगुरू कबीर साहेब का सतलोक

ज्ञानी का द्वीप

योग संतायन का द्वीप

परब्रह्म का स्थान

अचिन्त का द्वीप

विवेक का द्वीप

प्रेम का द्वीप

परब्रह्म के सात शंख ब्रह्मण्ड

ज्योति निरंजन (काल) के इक्कीस ब्रह्मण्ड अर्थात काल लोक

मानसरोवर

तेज का द्वीप

जलरंगी का द्वीप

सुरति का द्वीप

आनन्द का द्वीप

संतोष का द्वीप

सहज का द्वीप

क्षमा का द्वीप

निष्काम का द्वीप

सत्लोक
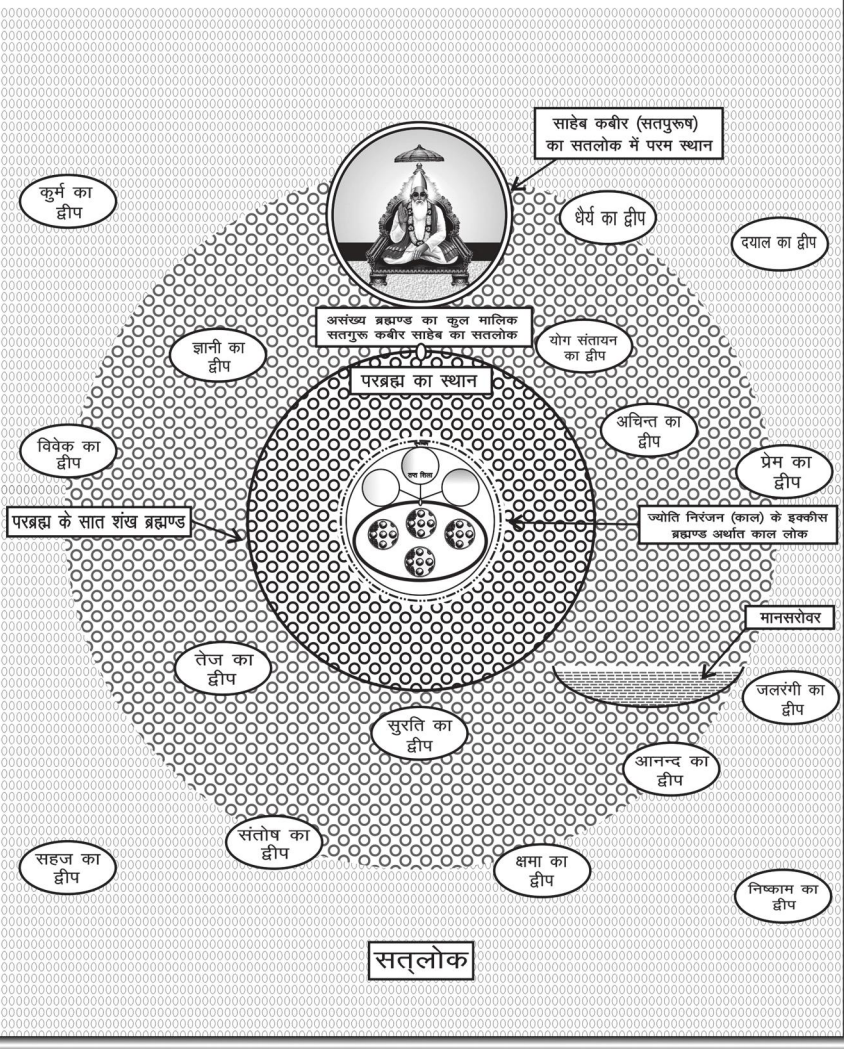
विशेष :- जैसे किसी देश के आदरणीय प्रधान मंत्री जी का शरीर का नाम तो अन्य होता है तथा पद का उपमात्मक (पदवी का) नाम प्रधानमंत्री होता है। कई बार प्रधानमंत्री जी अपने पास कई विभाग भी रख लेते हैं। तब जिस भी विभाग के दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करते हैं तो उस समय उसी पद को लिखते हैं। जैसे गृह मंत्रालय के दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करेगें तो अपने को गृह मंत्री लिखेगें। वहाँ उसी व्यक्ति के हस्ताक्षर की शक्ति कम होती है। इसी प्रकार कबीर परमेश्वर (कविर्देव) की रोशनी में अंतर भिन्न-भिन्न लोकों में होता जाता है।

ठीक इसी प्रकार पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ने नीचे के तीन और लोकों (अगमलोक, अलख लोक, सतलोक) की रचना शब्द(वचन) से की। यही पूर्णब्रह्म परमात्मा कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ही अगम लोक में प्रकट हुआ तथा कविर्देव (कबीर परमेश्वर) अगम लोक का भी स्वामी है तथा वहाँ इनका उपमात्मक (पदवी का) नाम अगम पुरुष अर्थात् अगम प्रभु है। इसी अगम प्रभु का मानव सदृश शरीर बहुत तेजोमय है जिसके एक रोम (शरीर के बाल) की रोशनी खरब सूर्य की रोशनी से भी अधिक है।

यह पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबिर देव = कबीर परमेश्वर) अलख लोक में प्रकट हुआ तथा स्वयं ही अलख लोक का भी स्वामी है तथा उपमात्मक (पदवी का) नाम अलख पुरुष भी इसी परमेश्वर का है तथा इस पूर्ण प्रभु का मानव सदृश शरीर तेजोमय (स्वर्ज्योति) स्वयं प्रकाशित है। एक रोम (शरीर के बाल) की रोशनी अरब सूर्यों के प्रकाश से भी ज्यादा है।

यही पूर्ण प्रभु सतलोक में प्रकट हुआ तथा सतलोक का भी अधिपति यही है। इसलिए इसी का उपमात्मक (पदवी का) नाम सतपुरुष (अविनाशी प्रभु)है। इसी का नाम अकालमूर्ति - शब्द स्वरूपी राम - पूर्ण ब्रह्म - परम अक्षर ब्रह्म आदि हैं। इसी सतपुरुष कविर्देव (कबीर प्रभु) का मानव सदृश शरीर तेजोमय है। जिसके एक रोम (शरीर के बाल) का प्रकाश करोड़ सूर्यों तथा इतने ही चन्द्रमाओं के प्रकाश से भी अधिक है।

इस कविर्देव (कबीर प्रभु) ने सतपुरुष रूप में प्रकट होकर सतलोक में विराजमान होकर प्रथम सतलोक में अन्य रचना की।

एक शब्द (वचन) से सोलह द्वीपों की रचना की। फिर सोलह शब्दों से सोलह पुत्रों की उत्पत्ति की। एक मानसरोवर की रचना की जिसमें अमृत भरा। सोलह पुत्रों के नाम हैं :-(1) ''कूर्म'', (2)''ज्ञानी'', (3) ''विवेक'', (4) ''तेज'', (5) ''सहज'', (6) ''सन्तोष'', (7)''सुरति'', (8) ''आनन्द'', (9) ''क्षमा'', (10) ''निष्काम'', (11) 'जलरंगी' (12)''अचिन्त'', (13) ''प्रेम'', (14) ''दयाल'', (15) ''धैर्य'' (16) ''योग संतायन'' अर्थात् ''योगजीत''।

सतपुरुष कविर्देव ने अपने पुत्र अचिन्त को सत्यलोक की अन्य रचना का भार सौंपा तथा शक्ति प्रदान की। अचिन्त ने अक्षर पुरुष (परब्रह्म) की

शब्द से उत्पत्ति की तथा कहा कि मेरी मदद करना। अक्षर पुरुष स्नान करने मानसरोवर पर गया, वहाँ आनन्द आया तथा सो गया। लम्बे समय तक बाहर नहीं आया। तब अचिन्त की प्रार्थना पर अक्षर पुरुष को नींद से जगाने के लिए कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ने उसी मानसरोवर से कुछ अमृत जल लेकर एक अण्डा बनाया तथा उस अण्डे में एक आत्मा प्रवेश की तथा अण्डे को मानसरोवर के अमृत जल में छोड़ा। अण्डे की गड़गड़ाहट से अक्षर पुरुष की निंद्रा भंग हुई। उसने अण्डे को क्रोध से देखा जिस कारण से अण्डे के दो भाग हो गए। उसमें से ज्योति निंरजन (क्षर पुरुष) निकला जो आगे चलकर 'काल' कहलाया। इसका वास्तविक नाम ''कैल'' है। तब सतपुरुष (कविर्देव) ने आकाशवाणी की कि आप दोनों बाहर आओ तथा अचिंत के द्वीप में रहो। आज्ञा पाकर अक्षर पुरुष तथा क्षर पुरुष (कैल) दोनों अचिंत के द्वीप में रहने लगे (बच्चों की नालायकी उन्हीं को दिखाई कि कहीं फिर प्रभुता की तड़फ न बन जाए, क्योंकि समर्थ बिना कार्य सफल नहीं होता) फिर पूर्ण धनी कविर्देव ने सर्व रचना स्वयं की। अपनी शब्द शक्ति से एक राजेश्वरी (राष्ट्री) शक्ति उत्पन्न की, जिससे सर्व ब्रह्माण्डों को स्थापित किया। इसी को पराशक्ति परानन्दनी भी कहते हैं। पूर्ण ब्रह्म ने सर्व आत्माओं को अपने ही अन्दर से अपनी वचन शक्ति से अपने मानव शरीर सदृश उत्पन्न किया। प्रत्येक हंस आत्मा का परमात्मा जैसा ही शरीर रचा जिसका तेज 16 (सोलह) सूर्यों जैसा मानव सदृश ही है। परन्तु परमेश्वर के शरीर के एक रोम (शरीर के बाल) का प्रकाश करोड़ों सूर्यों से भी ज्यादा है। बहुत समय उपरान्त क्षर पुरुष (ज्योति निरंजन) ने सोचा कि हम तीनों (अचिन्त - अक्षर पुरुष - क्षर पुरुष) एक द्वीप में रह रहे हैं तथा अन्य एक-एक द्वीप में रह रहे हैं। मैं भी साधना करके अलग द्वीप प्राप्त करूँगा। उसने ऐसा विचार करके एक पैर पर खड़ा होकर सत्तर (70) युग तक तप किया।

"आत्माएँ काल के जाल में कैसे फँसी?"

विशेष :- जब ब्रह्म (ज्योति निरंजन) तप कर रहा था हम सभी आत्माऐं, जो आज ज्योति निरंजन के इक्कीस ब्रह्माण्डों में रहते हैं इसकी साधना पर आसक्त हो गए तथा ह्दय से इसे चाहने लगे। अपने सुखदाई प्रभु सत्य पुरूष से विमुख हो गए। जिस कारण से पतिव्रता पद से गिर गए। पूर्ण प्रभु के बार-बार सावधान करने पर भी हमारी आसक्ति क्षर पुरुष से नहीं हटी। {यही प्रभाव आज भी काल सृष्टि में विद्यमान है। जैसे नौजवान बच्चे फिल्म स्टारों (अभिनेताओं तथा अभिनेत्रियों) की बनावटी अदाओं तथा अपने रोजगार उद्देश्य से कर रहे भूमिका पर अति आसक्त हो जाते हैं, रोकने से नहीं रूकते। यदि कोई अभिनेता या अभिनेत्री निकटवर्ती शहर में आ जाए

तो देखें उन नादान बच्चों की भीड़ केवल दर्शन करने के लिए बहु संख्या में एकत्रित हो जाती हैं। 'लेना एक न देने दो' रोजी रोटी अभिनेता कमा रहे हैं, नौजवान बच्चे लुट रहे हैं। माता–पिता कितना ही समझाऐं किन्तु बच्चे नहीं मानते। कहीं न कहीं, कभी न कभी, लुक–छिप कर जाते ही रहते हैं।}

पूर्ण ब्रह्म कविर्देव (कबीर प्रभु) ने क्षर पुरुष से पूछा कि बोलो क्या चाहते हो? उसने कहा कि पिता जी यह स्थान मेरे लिए कम है, मुझे अलग से द्वीप प्रदान करने की कृपा करें। हक्का कबीर (सत् कबीर) ने उसे 21 (इक्कीस) ब्रह्माण्ड प्रदान कर दिए। कुछ समय उपरान्त ज्योति निरंजन ने सोचा इस में कुछ रचना करनी चाहिए। खाली ब्रह्माण्ड(प्लाट) किस काम के। यह विचार कर 70 युग तप करके पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर प्रभु) से रचना सामग्री की याचना की। सतपुरुष ने उसे तीन गुण तथा पाँच तत्व प्रदान कर दिए, जिससे ब्रह्म (ज्योति निरंजन) ने अपने ब्रह्माण्डों में कुछ रचना की। फिर सोचा कि इसमें जीव भी होने चाहिए, अकेले का दिल नहीं लगता। यह विचार करके 64 (चौसठ) युग तक फिर तप किया। पूर्ण परमात्मा कविर् देव के पूछने पर बताया कि मुझे कुछ आत्मा दे दो, मेरा अकेले का दिल नहीं लग रहा। तब सतपुरुष कविरग्नि (कबीर परमेश्वर) ने कहा कि ब्रह्म तेरे तप के प्रतिफल में मैं तुझे और ब्रह्माण्ड दे सकता हूँ, परन्तु मेरी आत्माओं को किसी भी जप-तप साधना के फल रूप में नहीं दे सकता। हाँ, यदि कोई स्वेच्छा से तेरे साथ जाना चाहे तो वह जा सकता है। युवा कविर् (समर्थ कबीर) के वचन सुन कर ज्योति निरंजन हमारे पास आया। हम सभी हंस आत्मा पहले से ही उस पर आसक्त थे। हम उसे चारों तरफ से घेर कर खड़े हो गए। ज्योति निंरजन ने कहा कि मैंने पिता जी से अलग 21 ब्रह्माण्ड प्राप्त किए हैं। वहाँ नाना प्रकार के रमणीय स्थल बनाए हैं। क्या आप मेरे साथ चलोगे? हम सभी हंसों ने जो आज 21 ब्रह्माण्डों में परेशान हैं, कहा कि हम तैयार हैं यदि पिता जी आज्ञा दें तब क्षर पुरुष पूर्ण ब्रह्म महान् कविर् (समर्थ कबीर प्रभु) के पास गया तथा सर्व वार्ता कही। तब कविरग्नि (कबीर परमेश्वर) ने कहा कि मेरे सामने स्वीकृति देने वाले को आज्ञा दूंगा। क्षर पुरुष तथा परम अक्षर पुरुष (कविरमितौजा=कविर अमित औजा यानि जिसकी शक्ति का कोई वार नहीं, वह कबीर) दोनों हम सभी हंसात्माओं के पास आए। सत् कविर्देव ने कहा कि जो हंस आत्मा ब्रह्म के साथ जाना चाहता है हाथ ऊपर करके स्वीकृति दे। अपने पिता के सामने किसी की हिम्मत नहीं हुई। किसी ने स्वीकृति नहीं दी। बहुत समय तक सन्नाटा छाया रहा। तत्पश्चात् एक हंस आत्मा ने साहस किया तथा कहा कि पिता जी मैं जाना चाहता हूँ। फिर तो उसकी देखा-देखी (जो आज काल (ब्रह्म) के इक्कीस ब्रह्माण्डों में फंसी हैं) हम सभी आत्माओं ने स्वीकृति दे

दी। परमेश्वर कबीर जी ने ज्योति निरंजन से कहा कि आप अपने स्थान पर जाओ। जिन्होंने तेरे साथ जाने की स्वीकृति दी है मैं उन सर्व हंस आत्माओं को आपके पास भेज दूंगा। ज्योति निरंजन अपने 21 ब्रह्माण्डों में चला गया। उस समय तक यह इक्कीस ब्रह्माण्ड सतलोक में ही थे।

तत्पश्चात् पूर्ण ब्रह्म ने सर्व प्रथम स्वीकृति देने वाले हंस को लड़की का रूप दिया परन्तु स्त्री इन्द्री नहीं रची तथा सर्व आत्माओं को (जिन्होंने ज्योति निरंजन (ब्रह्म) के साथ जाने की सहमति दी थी) उस लड़की के शरीर में प्रवेश कर दिया तथा उसका नाम आष्ट्रा (आदि माया/ प्रकृति देवी/ दुर्गा) पड़ा तथा सत्य पुरूष ने कहा कि पुत्री मैंने तेरे को शब्द शक्ति प्रदान कर दी है जितने जीव ब्रह्म कहे आप उत्पन्न कर देना। पूर्ण ब्रह्म कविर्देव (कबीर साहेब) अपने पुत्र सहज दास के द्वारा प्रकृति को क्षर पुरुष के पास भिजवा दिया। सहज दास जी ने ज्योति निरंजन को बताया कि पिता जी ने इस बहन के शरीर में उन सर्व आत्माओं को प्रवेश कर दिया है जिन्होंने आपके साथ जाने की सहमति व्यक्त की थी तथा इसको पिता जी ने वचन शक्ति प्रदान की है, आप जितने जीव चाहोगे प्रकृति अपने शब्द से उत्पन्न कर देगी। यह कह कर सहजदास वापिस अपने द्वीप में आ गया।

युवा होने के कारण लड़की का रंग-रूप निखरा हुआ था। ब्रह्म के अन्दर विषय-वासना उत्पन्न हो गई तथा प्रकृति देवी के साथ अभद्र गति विधि प्रारम्भ की। तब दुर्गा ने कहा कि ज्योति निरंजन मेरे पास पिता जी की प्रदान की हुई शब्द शक्ति है। आप जितने प्राणी कहोगे मैं वचन से उत्पन्न कर दूँगी। आप मैथुन परम्परा शुरु मत करो। आप भी उसी पिता के शब्द से अण्डे से उत्पन्न हुए हो तथा मैं भी उसी परमपिता के वचन से ही बाद में उत्पन्न हुई हूँ। आप मेरे बड़े भाई हो, बहन-भाई का यह योग महापाप का कारण बनेगा। परन्तु ज्योति निरंजन ने प्रकृति देवी की एक भी प्रार्थना नहीं सुनी तथा अपनी शब्द शक्ति द्वारा नाखुनों से स्त्री इन्द्री (भग) प्रकृति को लगा दी तथा बलात्कार करने की ठानी। उसी समय दुर्गा ने अपनी इज्जत रक्षा के लिए कोई और चारा न देख सुक्ष्म रूप बनाया तथा ज्योति निरंजन के खुले मुख के द्वारा पेट में प्रवेश करके पूर्णब्रह्म कविर् देव से अपनी रक्षा के लिए याचना की। उसी समय कविर्देव (कविर् देव) अपने पुत्र योग संतायन अर्थात् जोगजीत का रूप बनाकर वहाँ प्रकट हुए तथा कन्या को ब्रह्म के उदर से बाहर निकाला तथा कहा कि ज्योति निरंजन आज से तेरा नाम 'काल' होगा। तेरे जन्म-मृत्यु होते रहेंगे। <u>इसीलिए तेरा नाम क्षर पुरुष होगा तथा एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों को प्रतिदिन खाया करेगा व सवा लाख उत्पन्न किया करेगा।</u> आप दोनों को इक्कीस ब्रह्माण्ड सहित निष्कासित किया जाता है। इतना कहते ही इक्कीस ब्रह्माण्ड विमान की तरह चल पड़े।

सहज दास के द्वीप के पास से होते हुए सतलोक से सोलह संख कोस (एक कोस लगभग 3 कि. मी. का होता है) की दूरी पर आकर रूक गए।

विशेष विवरण - अब तक तीन शक्तियों का विवरण आया है।

1. पूर्णब्रह्म जिसे अन्य उपमात्मक नामों से भी जाना जाता है, जैसे सतपुरुष, अकालपुरुष, शब्द स्वरूपी राम, परम अक्षर ब्रह्म/पुरुष आदि। यह पूर्णब्रह्म असंख्य ब्रह्माण्डों का स्वामी है तथा वास्तव में अविनाशी है।

2. परब्रह्म जिसे अक्षर पुरुष भी कहा जाता है। यह वास्तव में अविनाशी नहीं है। यह सात शंख ब्रह्माण्डों का स्वामी है।

3. ब्रह्म जिसे ज्योति निरंजन, काल, कैल, क्षर पुरुष तथा धर्मराय आदि नामों से जाना जाता है, जो केवल इक्कीस ब्रह्माण्ड का स्वामी है। अब आगे इसी ब्रह्म (काल) की सृष्टि के एक ब्रह्माण्ड का परिचय दिया जाएगा, जिसमें तीन और नाम आपके पढ़ने में आयेंगे - ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव।

ब्रह्म तथा ब्रह्मा में भेद - एक ब्रह्माण्ड में बने सर्वोपरि स्थान पर ब्रह्म (क्षर पुरुष) स्वयं तीन गुप्त स्थानों की रचना करके ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव रूप में रहता है तथा अपनी पत्नी प्रकृति (दुर्गा) के सहयोग से तीन पुत्रों की उत्पत्ति करता है। उनके नाम भी ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव ही रखता है। जो ब्रह्म का पुत्र ब्रह्मा है वह एक ब्रह्माण्ड में केवल तीन लोकों (पृथ्वी लोक, स्वर्ग लोक तथा पाताल लोक) में एक रजोगुण विभाग का मंत्री (स्वामी) है। इसे त्रिलोकीय ब्रह्मा कहा है तथा ब्रह्म जो ब्रह्मलोक में ब्रह्मा रूप में रहता है उसे महाब्रह्मा व ब्रह्मलोकिय ब्रह्मा कहा है। इसी ब्रह्म (काल) को सदाशिव, महाशिव तथा महाविष्णु भी कहा है।

श्री विष्णु पुराण में प्रमाण :- चतुर्थ अंश अध्याय 1 पृष्ठ 230-231 पर श्री ब्रह्मा जी ने कहा :- जिस अजन्मा, सर्वमय विधाता परमेश्वर का आदि, मध्य, अन्त, स्वरूप, स्वभाव और सार हम नहीं जान पाते (श्लोक 83)

जो मेरा रूप धारण कर संसार की रचना करता है, स्थिति के समय जो पुरूष रूप है तथा जो रूद्र रूप से विश्व का ग्रास कर जाता है, अनन्त रूप से सम्पूर्ण जगत् को धारण करता है।(श्लोक 86)

"श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी व श्री शिव जी की उत्पत्ति"

काल (ब्रह्म) ने प्रकृति (दुर्गा) से कहा कि अब मेरा कौन क्या बिगाडेगा? मन मानी करूंगा प्रकृति ने फिर प्रार्थना की कि आप कुछ शर्म करो। प्रथम तो आप मेरे बड़े भाई हो, क्योंकि उसी पूर्ण परमात्मा (कविर्देव) की वचन शक्ति से आप की (ब्रह्म की) अण्डे से उत्पत्ति हुई तथा बाद में मेरी उत्पत्ति उसी परमेश्वर के वचन से हुई है। दूसरे मैं आपके पेट से बाहर निकली हूँ, मैं आपकी बेटी हुई तथा आप मेरे पिता हुए।

एक ब्रह्मण्ड का लघु चित्र
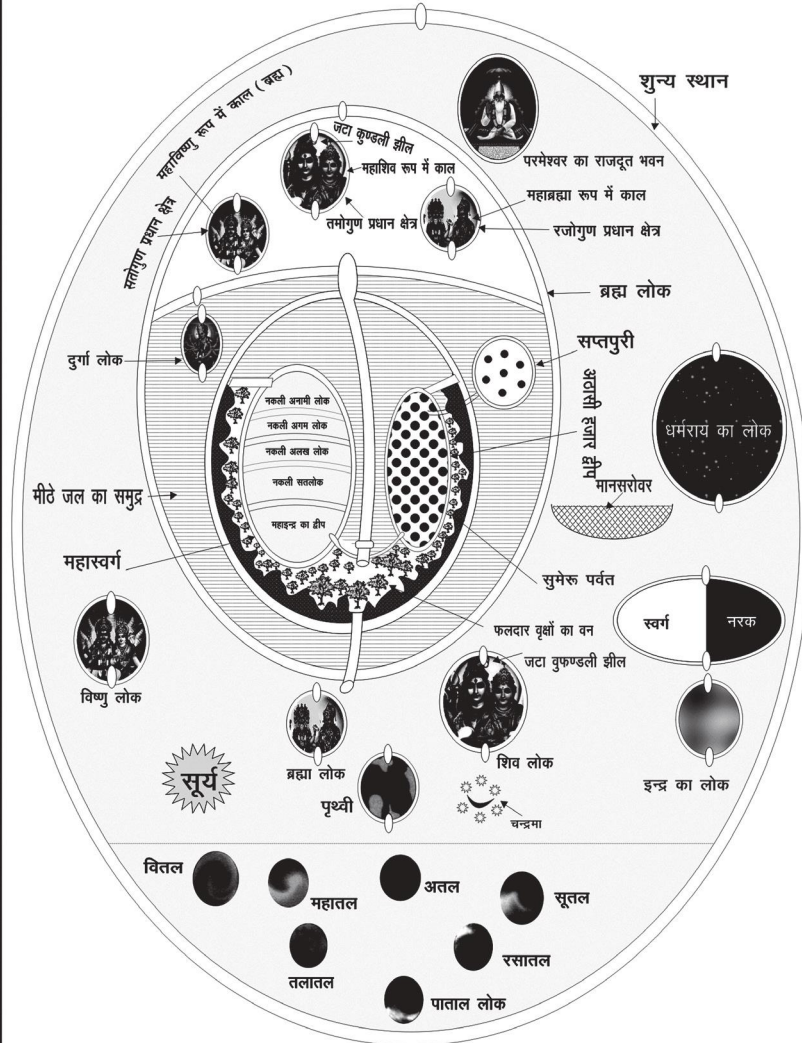
शुन्य स्थान
परमेश्वर का राजदूत भवन
महाविष्णु रूप में काल (ब्रह्म)
जटा कुण्डली झील
महाशिव रूप में काल
महाब्रह्मा रूप में काल
सतोगुण प्रधान क्षेत्र
तमोगुण प्रधान क्षेत्र
रजोगुण प्रधान क्षेत्र
ब्रह्म लोक
सप्तपुरी
दुर्गा लोक
अठासी हजार द्वीप
नकली अनामी लोक
नकली अगम लोक
नकली अलख लोक
नकली सतलोक
महाइन्द्र का द्वीप
धर्मराय का लोक
मीठे जल का समुद्र
मानसरोवर
महास्वर्ग
सुमेरू पर्वत
स्वर्ग
नरक
फलदार वृक्षों का वन
जटा वुफण्डली झील
विष्णु लोक
शिव लोक
ब्रह्मा लोक
सूर्य
पृथ्वी
चन्द्रमा
इन्द्र का लोक
वितल
महातल
अतल
सूतल
तलातल
रसातल
पाताल लोक

इन पवित्र नातों में बिगाड़ करना महापाप होगा। मेरे पास पिता की प्रदान की हुई शब्द शक्ति है, जितने प्राणी आप कहोगे मैं वचन से उत्पन्न कर दूंगी। ज्योति निरंजन ने दुर्गा की एक भी विनय नहीं सुनी तथा कहा कि मुझे जो सजा मिलनी थी मिल गई, मुझे सतलोक से निष्कासित कर दिया। अब मनमानी करूंगा। यह कह कर काल पुरूष (क्षर पुरूष) ने प्रकृति के साथ जबरदस्ती शादी की तथा तीन पुत्रों (रजगुण युक्त - ब्रह्मा जी, सतगुण युक्त - विष्णु जी तथा तमगुण युक्त - शिव शंकर जी) की उत्पत्ति की। जवान होने तक तीनों पुत्रों को दुर्गा के द्वारा अचेत करवा देता है, फिर युवा होने पर श्री ब्रह्मा जी को कमल के फूल पर, श्री विष्णु जी को शेष नाग की शैय्या पर तथा श्री शिव जी को कैलाश पर्वत पर सचेत करके इक्ट्ठे कर देता है। तत्पश्चात् प्रकृति (दुर्गा) द्वारा इन तीनों का विवाह कर दिया जाता है। काल ब्रह्म के आदेश से प्रकृति देवी ने तीनों को एक ब्रह्माण्ड में तीन लोकों (स्वर्ग लोक, पृथ्वी लोक तथा पाताल लोक) में एक-एक विभाग के मंत्री (प्रभु) नियुक्त कर दिया। जैसे श्री ब्रह्मा जी को रजोगुण विभाग, विष्णु जी को सत्तोगुण विभाग एवं श्री शिव शंकर जी को तमोगुण विभाग का प्रभु बनाया तथा काल ब्रह्म स्वयं गुप्त (महाब्रह्मा - महाविष्णु - महाशिव) रूप से मुख्यमंत्री पद को संभालता है। काल ने एक ब्रह्माण्ड में एक ब्रह्मलोक की रचना की है। उसी में तीन गुप्त स्थान बनाए हैं। एक रजोगुण प्रधान स्थान है जहाँ पर यह ब्रह्म (काल) स्वयं महाब्रह्मा (मुख्यमंत्री) रूप में रहता है तथा अपनी पत्नी दुर्गा को महासावित्री रूप में रखता है। इन दोनों के संयोग से जो पुत्र इस स्थान पर उत्पन्न होता है वह स्वतः ही रजोगुणी बन जाता है। दूसरा स्थान सतोगुण प्रधान स्थान बनाया है। वहाँ पर यह क्षर पुरुष स्वयं महाविष्णु रूप बना कर रहता है तथा अपनी पत्नी दुर्गा को महालक्ष्मी रूप में रख कर जो पुत्र उत्पन्न करता है उसका नाम विष्णु रखता है, वह बालक सतोगुण युक्त होता है तथा तीसरा इसी काल ने वहीं पर एक तमोगुण प्रधान क्षेत्र बनाया है। उसमें यह स्वयं सदाशिव रूप बनाकर रहता है तथा अपनी पत्नी दुर्गा को महापार्वती रूप में रखता है। इन दोनों के पति-पत्नी व्यवहार से जो पुत्र उत्पन्न होता है उसका नाम शिव रख देते हैं तथा तमोगुण युक्त कर देते हैं। (प्रमाण के लिए देखें पवित्र श्री शिव महापुराण, विद्यवेश्वर संहिता पृष्ठ 24-26 जिस में ब्रह्मा, विष्णु, रूद्र तथा महेश्वर से अन्य सदाशिव है तथा रूद्र संहिता अध्याय 6 तथा 7, 9 पृष्ठ नं. 100 से, 105 तथा 110 पर अनुवाद कर्ता श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार, गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित तथा पवित्र श्रीमद् देवी महापुराण तीसरा स्कन्ध पृष्ठ नं. 114 से 123 तक, गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित, जिसके अनुवाद कर्ता हैं श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार चिमन लाल गोस्वामी) फिर इन्हीं

को धोखे में रख कर काल ब्रह्म अपने खाने के लिए जीवों की उत्पत्ति श्री ब्रह्मा जी द्वारा तथा स्थिति (एक-दूसरे को मोह-ममता में रख कर काल जाल में रखना) श्री विष्णु जी से तथा संहार (क्योंकि काल पुरुष को शापवश एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों के सूक्ष्म शरीर से मैल निकाल कर खाना होता है उसके लिए इक्कीसवें ब्रह्माण्ड में एक तप्तशिला है जो स्वतः गर्म रहती है, उस पर गर्म करके मैल पिंघला कर खाता है, जीव मरते नहीं परन्तु कष्ट असहनीय होता है, फिर प्राणियों को कर्म आधार पर अन्य शरीर प्रदान करता है) श्री शिव जी द्वारा करवाता है। जैसे किसी मकान में तीन कमरे बने हों। एक कमरे में अश्लील चित्र लगे हों। उस कमरे में जाते ही मन में वैसे ही मलिन विचार उत्पन्न हो जाते हैं। दूसरे कमरे में साधु-सन्तों, भक्तों के चित्र लगे हों तो मन में अच्छे विचार, प्रभु का चिन्तन ही बना रहता है। तीसरे कमरे में देश भक्तों व शहीदों के चित्र लगे हों तो मन में वैसे ही जोशीले विचार उत्पन्न हो जाते हैं। ठीक इसी प्रकार ब्रह्म (काल) ने अपनी सूझ-बूझ से उपरोक्त तीनों गुण प्रधान स्थानों की रचना की हुई है।

''तीनों गुण क्या हैं? प्रमाण सहित''

''तीनों गुण रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिव जी हैं। ब्रह्म (काल) तथा प्रकृति (दुर्गा) से उत्पन्न हुए हैं तथा तीनों नाशवान हैं''

प्रमाण :- गीताप्रैस गोरखपुर से प्रकाशित श्री शिव महापुराण जिसके सम्पादक हैं श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार पृष्ठ सं. 24 से 26 विद्यवेश्वर संहिता तथा पृष्ठ 110 अध्याय 9 रूद्र संहिता ''इस प्रकार ब्रह्मा-विष्णु तथा शिव तीनों देवताओं में गुण हैं, परन्तु शिव (ब्रह्म-काल) गुणातीत कहा गया है।

दूसरा प्रमाण :- गीताप्रैस गोरखपुर से प्रकाशित श्रीमद् देवीभागवत पुराण जिसके सम्पादक हैं श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार चिमन लाल गोस्वामी, तीसरा स्कन्ध, अध्याय 5 पृष्ठ 123 :- भगवान विष्णु ने दुर्गा की स्तुति की : कहा कि मैं (विष्णु), ब्रह्मा तथा शंकर तुम्हारी कृपा से विद्यमान हैं। हमारा तो आविर्भाव (जन्म) तथा तिरोभाव (मृत्यु) होती है। हम नित्य (अविनाशी) नहीं हैं। तुम ही नित्य हो, जगत् जननी हो, प्रकृति और सनातनी देवी हो। भगवान शंकर ने कहा : यदि भगवान ब्रह्मा तथा भगवान विष्णु तुम्हीं से उत्पन्न हुए हैं तो उनके बाद उत्पन्न होने वाला मैं तमोगुणी लीला करने वाला शंकर क्या तुम्हारी संतान नहीं हुआ ? अर्थात् मुझे भी उत्पन्न करने वाली तुम ही हों। इस संसार की सृष्टि-स्थिति-संहार में तुम्हारे गुण सदा सर्वदा हैं। इन्हीं तीनों गुणों से उत्पन्न हम, ब्रह्मा-विष्णु तथा शंकर नियमानुसार कार्य में तत्पर रहते हैं।

❖ उपरोक्त यह विवरण केवल हिन्दी में अनुवादित श्री देवीमहापुराण से है, जिसमें कुछ तथ्यों को छुपाया गया है। इसलिए यही प्रमाण देखें श्री

मद्देवीभागवत महापुराण सभाषटिकम् समहात्यम्, खेमराज श्री कृष्ण दास प्रकाशन मुम्बई, इसमें संस्कृत सहित हिन्दी अनुवाद किया है।

तीसरा स्कन्ध अध्याय 4 पृष्ठ 10, श्लोक 42 :-

ब्रह्मा – अहम् ईश्वरः फिल ते प्रभावात्सर्वे वयं जनि युता न यदा तू नित्याः
के अन्ये सुराः शतमख प्रमुखाः च नित्या नित्या त्वमेव जननी प्रकृतिः पुराणा। (42)

हिन्दी अनुवाद :- हे मात! ब्रह्मा, मैं तथा शिव तुम्हारे ही प्रभाव से जन्मवान हैं, नित्य नही हैं अर्थात् हम अविनाशी नहीं हैं, फिर अन्य इन्द्रादि दूसरे देवता किस प्रकार नित्य हो सकते हैं। तुम ही अविनाशी हो, प्रकृति तथा सनातनी देवी हो।

पृष्ठ 11-12, अध्याय 5, श्लोक 8 :- यदि दयार्द्रमना न सदांऽबिके कथमहं विहितः च तमोगुणः कमलजश्च रजोगुणसंभवः सुविहितः किमु सत्वगुणों हरिः।(8)

अनुवाद :- भगवान शंकर बोले :-हे मात! यदि हमारे ऊपर आप दयायुक्त हो तो मुझे तमोगुण क्यों बनाया, कमल से उत्पन्न ब्रह्मा को रजोगुण किसलिए बनाया तथा विष्णु को सतगुण क्यों बनाया? अर्थात् जीवों के जन्म-मृत्यु रूपी दुष्कर्म में क्यों लगाया?

श्लोक 12 :- रमयसे स्वपतिं पुरुषं सदा तव गतिं न हि विह विद्म शिवे (12)

हिन्दी - अपने पति पुरुष अर्थात् काल भगवान के साथ सदा भोग-विलास करती रहती हो। आपकी गति कोई नहीं जानता।

निष्कर्ष :- उपरोक्त प्रमाणों से प्रमाणित हुआ की रजगुण - ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव है ये तीनों नाशवान है। दुर्गा का पति ब्रह्म (काल) है यह उसके साथ भोग विलास करता है।

"ब्रह्म (काल) की अव्यक्त रहने की प्रतिज्ञा"

सूक्ष्मवेद से शेष सृष्टि रचना-------

तीनों पुत्रों की उत्पत्ति के पश्चात् ब्रह्म ने अपनी पत्नी दुर्गा (प्रकृति) से कहा मैं प्रतिज्ञा करता हुँ कि भविष्य में मैं किसी को अपने वास्तविक रूप में दर्शन नहीं दूंगा। जिस कारण से मैं अव्यक्त माना जाऊँगा। दुर्गा से कहा कि आप मेरा भेद किसी को मत देना। मैं गुप्त रहूँगा। दुर्गा ने पूछा कि क्या आप अपने पुत्रों को भी दर्शन नहीं दोगे? ब्रह्म ने कहा मैं अपने पुत्रों को तथा अन्य को किसी भी साधना से दर्शन नहीं दूंगा, यह मेरा अटल नियम रहेगा। दुर्गा ने कहा यह तो आपका उत्तम नियम नहीं है जो आप अपनी संतान से भी छुपे रहोगे। तब काल ने कहा दुर्गा मेरी विवशता है। मुझे एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों का आहार करने का शाप लगा है। यदि मेरे पुत्रों (ब्रह्मा, विष्णु, महेश) को पता लग गया तो ये उत्पत्ति, स्थिति तथा संहार का कार्य नहीं करेंगे। इसलिए यह मेरा अनुत्तम नियम सदा रहेगा। जब ये तीनों कुछ बड़े हो जाएं तो इन्हें अचेत कर देना। मेरे विषय में नहीं बताना, नहीं

तो मैं तुझे भी दण्ड दूंगा, दुर्गा इस डर के मारे वास्तविकता नहीं बताती।

{प्रमाण :- इसीलिए गीता अध्याय 7 श्लोक 24 में कहा है कि यह बुद्धि हीन जन समुदाय मेरे अनुत्तम नियम से अपरिचित हैं कि मैं कभी भी किसी के सामने प्रकट नहीं होता अपनी योग माया से छुपा रहता हूँ। इसलिए मुझ अव्यक्त को मनुष्य रूप में आया हुआ अर्थात् कृष्ण मानते हैं।

(अबुद्धयः) बुद्धि हीन (मम्) मेरे (अनुत्तमम्) अनुत्तम अर्थात् घटिया (अव्ययम्) अविनाशी (परम् भावम्) विशेष भाव को (अजानन्तः) न जानते हुए (माम् अव्यक्तम्) मुझ अव्यक्त को (व्यक्तिम्) मनुष्य रूप में (आपन्नम) आया (मन्यन्ते) मानते हैं अर्थात् मैं कृष्ण नहीं हूँ। (गीता अध्याय 7 श्लोक 24)

गीता अध्याय 11 श्लोक 47 तथा 48 में कहा है कि यह मेरा वास्तविक काल रूप है। इसके दर्शन अर्थात् ब्रह्म प्राप्ति न वेदों में वर्णित विधि से, न जप से, न तप से तथा न किसी क्रिया से हो सकती है।}

जब तीनों बच्चे युवा हो गए तब माता भवानी (प्रकृति, अष्टंगी) ने कहा कि तुम सागर मन्थन करो। प्रथम बार सागर मन्थन किया तो (ज्योति निरंजन ने अपने श्वांसों द्वारा चार वेद उत्पन्न किए। उनको गुप्त वाणी द्वारा आज्ञा दी कि सागर में निवास करो) चारों वेद निकले वह ब्रह्मा ने लिए। वस्तु लेकर तीनों बच्चे माता के पास आए तब माता ने कहा कि चारों वेदों को ब्रह्मा रखे व पढ़े।

नोट :- वास्तव में पूर्णब्रह्म ने, ब्रह्म अर्थात् काल को पाँच वेद प्रदान किए थे। लेकिन ब्रह्म ने केवल चार वेदों को प्रकट किया। पाँचवां वेद छुपा दिया। जो पूर्ण परमात्मा ने स्वयं प्रकट होकर कविर्गिर्भीः अर्थात् कविर्वाणी (कबीर वाणी) द्वारा लोकोक्तियों व दोहों के माध्यम से प्रकट किया है।

दूसरी बार सागर मन्थन किया तो तीन कन्याऐं मिली। माता ने तीनों को बांट दिया। प्रकृति (दुर्गा) ने अपने ही अन्य तीन रूप (सावित्री,लक्ष्मी तथा पार्वती) धारण किए तथा समुन्द्र में छुपा दी। सागर मन्थन के समय बाहर आ गई। वही प्रकृति तीन रूप हुई तथा भगवान ब्रह्मा को सावित्री, भगवान विष्णु को लक्ष्मी, भगवान शंकर को पार्वती पत्नी रूप में दी। तीनों ने भोग विलास किया, सुर तथा असुर दोनों पैदा हुए।

{जब तीसरी बार सागर मन्थन किया तो चौदह रत्न ब्रह्मा को तथा अमृत विष्णु को व देवताओं को, मद्य(शराब) असुरों को तथा विष परमार्थ शिव ने अपने कंठ में ठहराया। यह तो बहुत बाद की बात है।} जब ब्रह्मा वेद पढ़ने लगा तो पता चला कि कोई सर्व ब्रह्माण्डों की रचना करने वाला कुल का मालिक पुरूष (प्रभु) और है। तब ब्रह्मा जी ने विष्णु जी व शंकर जी को बताया कि वेदों में वर्णन है कि सृजनहार कोई और प्रभु है परन्तु वेद कहते हैं कि भेद हम भी नहीं जानते, उसके लिए संकेत है कि किसी तत्वदर्शी संत से पूछो। तब ब्रह्मा माता के पास आया और सब वृतांत कह

सुनाया। माता कहा करती थी कि मेरे अतिरिक्त और कोई नहीं है। मैं ही कर्ता हूँ। मैं ही सर्वशक्तिमान हूँ परन्तु ब्रह्मा ने कहा कि वेद ईश्वर कृत हैं यह झूठ नहीं हो सकते। दुर्गा ने कहा कि तेरा पिता तुझे दर्शन नहीं देगा, उसने प्रतिज्ञा की हुई है। तब ब्रह्मा ने कहा माता जी अब आप की बात पर अविश्वास हो गया है। मैं उस पुरूष (प्रभु) का पता लगाकर ही रहूँगा। दुर्गा ने कहा कि यदि वह तुझे दर्शन नहीं देगा तो तुम क्या करोगे? ब्रह्मा ने कहा कि मैं आपको शक्ल नहीं दिखाऊँगा। दूसरी तरफ ज्योति निरंजन ने कसम खाई है कि मैं अव्यक्त रहूँगा किसी को दर्शन नहीं दूंगा अर्थात् 21 ब्रह्माण्ड में कभी भी अपने वास्तविक काल रूप में आकार में नहीं आऊँगा।

गीता अध्याय नं. 7 का श्लोक नं. 24

अव्यक्तम्, व्यक्तिम्, आपन्नम्, मन्यन्ते, माम्, अबुद्धयः।
परम्, भावम्, अजानन्तः, मम, अव्ययम्, अनुत्तमम्।।24।।

अनुवाद : (अबुद्धयः) बुद्धिहीन लोग (मम्) मेरे (अनुतमम्) अश्रेष्ठ (अव्ययम्) अटल (परम्) परम (भावम्) भावको (अजानन्तः) न जानते हुए (अव्यक्तम्) अदृश्यमान (माम्) मुझे काल को (व्यक्तिम्) नर रूप आकार में कृष्ण (आपन्नम्) प्राप्त हुआ (मन्यन्ते) मानते हैं।

गीता अध्याय नं. 7 का श्लोक नं. 25

न, अहम्, प्रकाशः, सर्वस्य, योगमायासमातः।
मूढः, अयम्, न, अभिजानाति, लोकः, माम्, अजम्, अव्ययम्।।25।।

अनुवाद : (अहम्) मैं (योगमाया समावृतः) योगमायासे छिपा हुआ (सर्वस्य) सबके (प्रकाशः) प्रत्यक्ष (न) नहीं होता अर्थात् अदृश्य अर्थात् अव्यक्त रहता हूँ इसलिये (अजम्) जन्म न लेने वाले (अव्ययम्) अविनाशी अटल भावको (अयम्) यह (मूढः) अज्ञानी (लोकः) जनसमुदाय संसार (माम्) मुझे (न) नहीं (अभिजानाति) जानता अर्थात् मुझको कृष्ण समझता है। क्योंकि ब्रह्म अपनी शब्द शक्ति से अपने नाना रूप बना लेता है, यह दुर्गा का पति है इसलिए इस मंत्र में कह रहा है कि मैं श्री कृष्ण आदि की तरह दुर्गा से जन्म नहीं लेता।

"श्री ब्रह्मा का अपने पिता (काल/ब्रह्म) की प्राप्ति के लिए प्रयत्न"

तब दुर्गा ने ब्रह्मा जी से कहा कि अलख निंरजन तुम्हारा पिता है परन्तु वह तुम्हें दर्शन नहीं देगा। ब्रह्मा ने कहा कि मैं दर्शन करके ही लौटूंगा। माता ने पूछा कि यदि तुझे दर्शन नहीं हुए तो क्या करेगा? ब्रह्मा ने कहा मैं प्रतिज्ञा करता हूँ। यदि पिता के दर्शन नहीं हुए तो मैं आपके समक्ष नहीं आऊंगा। यह कह कर ब्रह्मा जी व्याकुल होकर उत्तर दिशा की तरफ चल दिया जहाँ अन्धेरा ही अन्धेरा है। वहाँ ब्रह्मा ने चार युग तक ध्यान लगाया परन्तु कुछ भी प्राप्ति नहीं हुई। काल ने आकाशवाणी की कि जीव उत्पत्ति क्यों नहीं की? भवानी ने कहा कि आप का ज्येष्ठ पुत्र ब्रह्मा जिद्द करके आप की तलाश में

गया है। ब्रह्मा के बिना जीव उत्पति का सब कार्य असम्भव है। ब्रह्म (काल) ने कहा उसे वापिस बुला लो। मैं उसे दर्शन नहीं दूँगा। तब दुर्गा (प्रकृति) ने अपनी शब्द शक्ति से गायत्री नाम की लड़की उत्पन्न की तथा उसे ब्रह्मा को लौटा लाने को कहा। गायत्री ब्रह्मा जी के पास गई परंतु ब्रह्मा जी समाधि लगाए हुए थे उन्हें कोई आभास ही नहीं था कि कोई आया है। तब आदि कुमारी (प्रकृति) ने गायत्री को ध्यान द्वारा बताया कि इस के चरण स्पर्श कर। तब गायत्री ने ऐसा ही किया। ब्रह्मा जी का ध्यान भंग हुआ तो क्रोध वश बोले कि कौन पापिन है जिसने मेरा ध्यान भंग किया है। मैं तुझे शाप दूंगा। गायत्री कहने लगी कि मेरा दोष नहीं है पहले मेरी बात सुनो तब शाप देना। मेरे को माता ने तुम्हें लौटा लाने को कहा है क्योंकि आपके बिना जीव उत्पत्ति नहीं हो सकती। ब्रह्मा ने कहा कि मैं कैसे जाऊँ? पिता जी के दर्शन हुए नहीं, ऐसे जाऊँ तो मेरा उपहास होगा। यदि आप माता जी के समक्ष यह कह दें कि ब्रह्मा को पिता (ज्योति निरंजन) के दर्शन हुए हैं, मैंने अपनी आँखो से देखा है तो मैं आपके साथ चलूं। तब गायत्री ने कहा कि आप मेरे साथ संभोग (सैक्स) करोगे तो मैं आपकी झूठी साक्षी (गवाही) भरूंगी। तब ब्रह्मा ने सोचा कि पिता के दर्शन हुए नहीं, वैसे जाऊँ तो माता के सामने शर्म लगेगी और चारा नहीं दिखाई दिया, फिर गायत्री से रति क्रिया (संभोग) की।

तब गायत्री ने कहा कि क्यों न एक गवाह और तैयार किया जाए। ब्रह्मा ने कहा बहुत ही अच्छा है। तब गायत्री ने शब्द शक्ति से एक लड़की (पुहपवति नाम की) पैदा की तथा उससे दोनों ने कहा कि आप गवाही देना कि ब्रह्मा ने पिता के दर्शन किए हैं। तब पुहपवति ने कहा कि मैं क्यों झूठी गवाही दूँ? हाँ, यदि ब्रह्मा मेरे से रति क्रिया (संभोग) करे तो गवाही दे सकती हूँ। गायत्री ने ब्रह्मा को समझाया (उकसाया) कि और कोई चारा नहीं है तब ब्रह्मा ने पुहपवति से संभोग किया तो तीनों मिलकर आदि माया (प्रकृति) के पास आए। दोनों देवियों ने उपरोक्त शर्त इसलिए रखी थी कि यदि ब्रह्मा माता के सामने हमारी झूठी गवाही को बता देगा तो माता हमें शाप दे देगी। इसलिए उसे भी दोषी बना लिया।

(यहाँ महाराज गरीबदास जी कहते हैं कि – ''दास गरीब यह चूक धुरों धुर'')

"माता (दुर्गा) द्वारा ब्रह्मा को शाप देना"

तब माता ने ब्रह्मा से पूछा क्या तुझे तेरे पिता के दर्शन हुए? ब्रह्मा ने कहा हाँ मुझे पिता के दर्शन हुए हैं। दुर्गा ने कहा साक्षी बता। तब ब्रह्मा ने कहा इन दोनों के समक्ष साक्षात्कार हुआ है। देवी ने उन दोनों लड़कियों से पूछा क्या तुम्हारे सामने ब्रह्म का साक्षात्कार हुआ है तब दोनों ने कहा कि हाँ, हमने अपनी आँखों से देखा है। फिर भवानी (प्रकृति) को संशय हुआ कि

मुझे तो ब्रह्म ने कहा था कि मैं किसी को दर्शन नहीं दूंगा, परन्तु ये कहते हैं कि दर्शन हुए हैं। तब अष्टंगी ने ध्यान लगाया और काल/ज्योति निरंजन से पूछा कि यह क्या कहानी है? ज्योति निंरजन जी ने कहा कि ये तीनों झूठ बोल रहे हैं। तब माता ने कहा तुम झूठ बोल रहे हो। आकाशवाणी हुई है कि इन्हें कोई दर्शन नहीं हुए। यह बात सुनकर ब्रह्मा ने कहा कि माता जी मैं सौगंध खाकर पिता की तलाश करने गया था। परन्तु पिता (ब्रह्म) के दर्शन हुए नहीं। आप के पास आने में शर्म लग रही थी। इसलिए हमने झूठ बोल दिया। तब माता (दुर्गा) ने कहा कि अब मैं तुम्हें शाप देती हूँ।

ब्रह्मा को श्राप :- तेरी पूजा जग में नहीं होगी। आगे तेरे वंशज होंगे वे बहुत पाखण्ड करेंगे। झूठी बात बना कर जग को ठगेंगे। ऊपर से तो कर्म काण्ड करते दिखाई देंगे अन्दर से विकार करेंगे। कथा पुराणों को पढ़कर सुनाया करेंगे, स्वयं को ज्ञान नहीं होगा कि सद्ग्रन्थों में वास्तविकता क्या है, फिर भी मान वश तथा धन प्राप्ति के लिए गुरु बन कर अनुयाइयों को लोकवेद (शास्त्र विरुद्ध दंत कथा) सुनाया करेंगे। देवी-देवों की पूजा करके तथा करवाकर, दूसरों की निन्दा करके कष्ट पर कष्ट उठाएँगे। जो उनके अनुयाई होंगे उनको परमार्थ नहीं बताएंगे। दक्षिणा के लिए जगत को गुमराह करते रहेंगे। अपने आपको सबसे अच्छा मानेंगे, दूसरों को नीचा समझेंगे। जब माता के मुख से यह सुना तो ब्रह्मा मुर्छित होकर जमीन पर गिर गया। बहुत समय उपरान्त होश में आया।

गायत्री को श्राप :- तेरे कई सांड पति होंगे। तू मृतलोक में गाय बनेगी।

पुहपवति को श्राप :- तेरी जगह गंदगी में होगी। तेरे फूलों को कोई पूजा में नहीं लाएगा। इस झूठी गवाही के कारण तुझे यह नरक भोगना होगा। तेरा नाम केवड़ा केतकी होगा। (हरियाणा में कुसोंधी कहते हैं। यह गंदगी (कुरड़ियों) वाली जगह पर होती है।)

इस प्रकार तीनों को शाप देकर माता भवानी बहुत पछताई। {इस प्रकार पहले तो जीव बिना सोचे मन (काल निरंजन) के प्रभाव से गलत कार्य कर देता है परन्तु जब आत्मा (सतपुरूष अंश) के प्रभाव से उसे ज्ञान होता है तो पीछे पछताना पड़ता है। जिस प्रकार माता-पिता अपने बच्चों को छोटी सी गलती के कारण ताड़ते हैं (क्रोधवश होकर) परन्तु बाद में बहुत पछताते हैं। यही प्रक्रिया मन (काल-निंरजन) के प्रभाव से सर्व जीवों में क्रियावान हो रही है।} हाँ, यहाँ एक बात विशेष है कि निरंजन (काल-ब्रह्म) ने भी अपना कानून बना रखा है कि यदि कोई जीव किसी दुर्बल जीव को सताएगा तो उसे उसका बदला देना पड़ेगा। जब आदि भवानी (प्रकृति, अष्टंगी) ने ब्रह्मा, गायत्री व पुहपवति को शाप दिया तो अलख निंरजन (ब्रह्म-काल) ने कहा कि हे भवानी (प्रकृति/अष्टंगी) यह आपने अच्छा नहीं किया। अब मैं (निरंजन)

आपको श्राप देता हूँ कि द्वापर युग में तेरे भी पाँच पति होंगे। (द्रोपदी ही आदिमाया का अवतार हुई है।) जब यह आकाश वाणी सुनी तो आदि माया ने कहा कि हे ज्योति निंरजन (काल) मैं तेरे वश पड़ी हूँ जो चाहे सो कर ले।

{सृष्टि रचना में दुर्गा जी के अन्य नामों का बार-बार लिखने का उद्देश्य है कि पुराणों, गीता तथा वेदों में प्रमाण देखते समय भ्रम उत्पन्न नहीं होगा। जैसे गीता अध्याय 14 श्लोक 3-4 में काल ब्रह्म ने कहा है कि प्रकृति तो गर्भ धारण करने वाली सब जीवों की माता है। मैं उसके गर्भ में बीज स्थापित करने वाला पिता हूँ। श्लोक 5 में कहा है कि प्रकृति से उत्पन्न तीनों गुण जीवात्मा को कर्मों के बँधन में बाँधते हैं।-(लेख समाप्त)। इस प्रकरण में प्रकृति तो दुर्गा है तथा तीनों गुण तीनों देवता यानि रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव के सांकेतिक नाम हैं।}

”श्री विष्णु का अपने पिता (काल/ब्रह्म) की प्राप्ति के लिए प्रस्थान व माता का आशीर्वाद पाना“

इसके बाद विष्णु से प्रकृति ने कहा कि पुत्र तू भी अपने पिता का पता लगा ले। तब विष्णु अपने पिता जी काल (ब्रह्म) का पता करते-करते पाताल लोक में चले गए, जहाँ शेषनाग था। उसने विष्णु को अपनी सीमा में प्रविष्ट होते देख कर क्रोधित हो कर जहर भरा फुंकारा मारा। उसके विष के प्रभाव से विष्णु जी का रंग सांवला हो गया, जैसे स्प्रे पेंट हो जाता है। तब विष्णु ने चाहा कि इस नाग को मजा चखाना चाहिए। तब ज्योति निरंजन (काल) ने देखा कि अब विष्णु को शांत करना चाहिए। तब आकाशवाणी हुई कि विष्णु अब तू अपनी माता जी के पास जा और सत्य-सत्य सारा विवरण बता देना तथा जो कष्ट आपको शेषनाग से हुआ है, इसका प्रतिशोध द्वापर युग में लेना। द्वापर युग में आप (विष्णु) तो कृष्ण अवतार धारण करोगे और कालीदह में कालिन्द्री नामक नाग, शेष नाग का अवतार होगा।

ऊँच होई के नीच सतावै, ताकर ओएल (बदला) मोही सों पावै।
जो जीव देई पीर पुनी काँहु, हम पुनि ओएल दिवावें ताहूँ।।

तब विष्णु जी माता जी के पास आए तथा सत्य-सत्य कह दिया कि मुझे पिता के दर्शन नहीं हुए। इस बात से माता (प्रकृति) बहुत प्रसन्न हुई और कहा कि पुत्र तू सत्यवादी है। अब मैं अपनी शक्ति से तेरे पिता से मिलाती हूँ तथा तेरे मन का संशय खत्म करती हूँ।

कबीर, देख पुत्र तोहि पिता भीटाऊँ, तौरे मन का धोखा मिटाऊँ।
मन स्वरूप कर्ता कह जानों, मन ते दूजा और न मानो।
स्वर्ग पाताल दौर मन केरा, मन अस्थीर मन अहै अनेरा।
निंरकार मन ही को कहिए, मन की आस निश दिन रहिए।

देख हूँ पलटि सुन्य मह ज्योति, जहाँ पर झिलमिल झालर होती।।

इस प्रकार माता (अष्टंगी, प्रकृति) ने विष्णु से कहा कि मन ही जग का कर्ता है, यही ज्योति निरंजन है। ध्यान में जो एक हजार ज्योतियाँ नजर आती हैं वही उसका रूप है। जो शंख, घण्टा आदि का बाजा सुना, यह महास्वर्ग में निरंजन का ही बज रहा है। तब माता (अष्टंगी, प्रकृति) ने कहा कि हे पुत्र तुम सब देवों के सरताज हो और तेरी हर कामना व कार्य मैं पूर्ण करूंगी। तेरी पूजा सर्व जग में होगी। आपने मुझे सच-सच बताया है। काल के इक्कीस ब्रह्माण्ड़ों के प्राणियों की विशेष आदत है कि अपनी व्यर्थ महिमा बनाता है। जैसे दुर्गा जी श्री विष्णु जी को कह रही है कि तेरी पूजा जग में होगी। मैंने तुझे तेरे पिता के दर्शन करा दिए। दुर्गा ने केवल प्रकाश दिखा कर श्री विष्णु जी को बहका दिया। श्री विष्णु जी भी प्रभु की यही स्थिति अपने अनुयाइयों को समझाने लगे कि परमात्मा का केवल प्रकाश दिखाई देता है। परमात्मा निराकार है। इसके बाद आदि भवानी रूद्र(महेश जी) के पास गई तथा कहा कि महेश तू भी कर ले अपने पिता की खोज तेरे दोनों भाइयों को तो तुम्हारे पिता के दर्शन नहीं हुए उनको जो देना था वह प्रदान कर दिया है अब आप माँगो जो माँगना है। तब महेश ने कहा कि हे जननी! मेरे दोनों बड़े भाईयों को पिता के दर्शन नहीं हुए फिर प्रयत्न करना व्यर्थ है। कृपा मुझे ऐसा वर दो कि मैं अमर (मृत्युंजय) हो जाऊँ। तब माता ने कहा कि यह मैं नहीं कर सकती। हाँ युक्ति बता सकती हूँ, जिससे तेरी आयु सबसे लम्बी बनी रहेगी। विधि योग समाधि है (इसलिए महादेव जी ज्यादातर समाधि में ही रहते हैं)। इस प्रकार माता (अष्टंगी, प्रकृति) ने तीनों पुत्रों को विभाग बांट दिए :-

भगवान ब्रह्मा जी को काल लोक में लख चौरासी के चोले (शरीर) रचने (बनाने) का अर्थात् रजोगुण प्रभावित करके संतान उत्पत्ति के लिए विवश करके जीव उत्पत्ति कराने का विभाग प्रदान किया। भगवान विष्णु जी को इन जीवों के पालन पोषण (कर्मानुसार) करने, तथा मोह-ममता उत्पन्न करके स्थिति बनाए रखने का विभाग दिया।

भगवान शिव शंकर (महादेव) को संहार करने का विभाग प्रदान किया क्योंकि इनके पिता निरंजन को एक लाख मानव शरीर धारी जीव प्रतिदिन खाने पड़ते हैं।

यहाँ पर मन में एक प्रश्न उत्पन्न होगा कि ब्रह्मा, विष्णु तथा शंकर जी से उत्पत्ति, स्थिति और संहार कैसे होता है। ये तीनों अपने-२ लोक में रहते हैं। जैसे आजकल संचार प्रणाली को चलाने के लिए उपग्रहों को ऊपर आसमान में छोड़ा जाता है और वे नीचे पृथ्वी पर संचार प्रणाली को चलाते हैं। ठीक इसी प्रकार ये तीनों देव जहां भी रहते हैं इनके शरीर से निकलने वाले सूक्ष्म गुण की तरंगें तीनों लोकों में अपने आप हर प्राणी पर प्रभाव

बनाए रहती है। उपरोक्त विवरण एक ब्रह्माण्ड में ब्रह्म (काल) की रचना का है। ऐसे-ऐसे क्षर पुरुष (काल) के इक्कीस ब्रह्माण्ड हैं।

परन्तु क्षर पुरूष (काल) स्वयं व्यक्त अर्थात् वास्तविक शरीर रूप में सबके सामने नहीं आता। उसी को प्राप्त करने के लिए तीनों देवों (ब्रह्मा जी, विष्णु जी, शिव जी) को वेदों में वर्णित विधि अनुसार भरसक साधना करने पर भी ब्रह्म (काल) के दर्शन नहीं हुए। बाद में ऋषियों ने वेदों को पढ़ा। उसमें लिखा है कि 'अग्नेः तनूर् असि' (पवित्र यजुर्वेद अ. 1 मंत्र 15) परमेश्वर सशरीर है तथा पवित्र यजुर्वेद अध्याय 5 मंत्र 1 में लिखा है कि 'अग्नेः तनूर् असि विष्णवे त्वा सोमस्य तनूर् असि'। इस मंत्र में दो बार वेद गवाही दे रहा है कि सर्वव्यापक, सर्वपालन कर्ता सतपुरुष सशरीर है। पवित्र यजुर्वेद अध्याय 40 मंत्र 8 में कहा है कि (कविर् मनिषी) जिस परमेश्वर की सर्व प्राणियों को चाह है, वह कविर् अर्थात् कबीर है। उसका शरीर बिना नाड़ी (अस्नाविरम्) का है, (शुक्रम्) वीर्य से बनी पाँच तत्व से बनी भौतिक (अकायम्) काया रहित है। वह सर्व का मालिक सर्वोपरि सत्यलोक में विराजमान है, उस परमेश्वर का तेजपुंज का (स्वर्ज्योति) स्वयं प्रकाशित शरीर है जो शब्द रूप अर्थात् अविनाशी है। वही कविर्देव (कबीर परमेश्वर) है जो सर्व ब्रह्माण्डों की रचना करने वाला (व्यदधाता) सर्व ब्रह्माण्डों का रचनहार (स्वयम्भूः) स्वयं प्रकट होने वाला (यथा तथ्य अर्थान्) वास्तव में (शाश्वत्) अविनाशी है (गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में भी प्रमाण है।) भावार्थ है कि पूर्ण ब्रह्म का शरीर का नाम कबीर (कविर देव) है। उस परमेश्वर का शरीर नूर तत्व से बना है। परमात्मा का शरीर अति सूक्ष्म है जो उस साधक को दिखाई देता है जिसकी दिव्य दृष्टि खुल चुकी है। इस प्रकार जीव का भी सुक्ष्म शरीर है जिसके ऊपर पाँच तत्व का खोल (कवर) अर्थात् पाँच तत्व की काया चढ़ी होती है जो माता-पिता के संयोग से (शुक्रम) वीर्य से बनी है। शरीर त्यागने के पश्चात् भी जीव का सुक्ष्म शरीर साथ रहता है। वह शरीर उसी साधक को दिखाई देता है जिसकी दिव्य दृष्टि खुल चुकी है। इस प्रकार परमात्मा व जीव की स्थिति को समझें। वेदों में ओ३म् नाम के स्मरण का प्रमाण है जो केवल ब्रह्म साधना है। इस उद्देश्य से ओ३म् नाम के जाप को पूर्ण ब्रह्म का मान कर ऋषियों ने भी हजारों वर्ष हठयोग (समाधि लगा कर) करके प्रभु प्राप्ति की चेष्टा की, परन्तु प्रभु दर्शन नहीं हुए, सिद्धियाँ प्राप्त हो गई। उन्हीं सिद्धी रूपी खिलौनों से खेल कर ऋषि भी जन्म-मृत्यु के चक्र में ही रह गए तथा अपने अनुभव के शास्त्रों में परमात्मा को निराकार लिख दिया। ब्रह्म (काल) ने कसम खाई है कि मैं अपने वास्तविक रूप में किसी को दर्शन नहीं दूँगा। मुझे अव्यक्त जाना करेंगे (अव्यक्त का भावार्थ है कि कोई आकार में है परन्तु व्यक्तिगत रूप से स्थूल रूप में दर्शन नहीं देता। जैसे आकाश में बादल छा जाने पर

दिन के समय सूर्य अदृश हो जाता है। वह दृश्यमान नहीं है, परन्तु वास्तव में बादलों के पार ज्यों का त्यों है, इस अवस्था को अव्यक्त कहते हैं।)। (प्रमाण के लिए गीता अध्याय 7 श्लोक 24-25, अध्याय 11 श्लोक 48 तथा 32)

पवित्र गीता जी बोलने वाला ब्रह्म (काल) श्री कृष्ण जी के शरीर में प्रेतवत प्रवेश करके कह रहा है कि अर्जुन मैं बढ़ा हुआ काल हूँ और सर्व को खाने के लिए आया हूँ। (गीता अध्याय 11 का श्लोक नं. 32) यह मेरा वास्तविक रूप है, इसको तेरे अतिरिक्त न तो कोई पहले देख सका तथा न कोई आगे देख सकता है अर्थात् वेदों में वर्णित यज्ञ-जप-तप तथा ओ३म् नाम आदि की विधि से मेरे इस वास्तविक स्वरूप के दर्शन नहीं हो सकते। (गीता अध्याय 11 श्लोक नं 48) मैं कृष्ण नहीं हूँ, ये मूर्ख लोग कृष्ण रूप में मुझ अव्यक्त को व्यक्त (मनुष्य रूप) मान रहे हैं। क्योंकि ये मेरे घटिया नियम से अपरिचित हैं कि मैं कभी वास्तविक इस काल रूप में सबके सामने नहीं आता। अपनी योग माया से छुपा रहता हूँ (गीता अध्याय 7 श्लोक नं. 24-25) विचार करें:- अपने छुपे रहने वाले विधान को स्वयं अश्रेष्ठ (अनुत्तम) क्यों कह रहे हैं?

यदि पिता अपनी सन्तान को भी दर्शन नहीं देता तो उसमें कोई त्रुटि है जिस कारण से छुपा है तथा सुविधाएं भी प्रदान कर रहा है। काल (ब्रह्म) को शापवश एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों का आहार करना पड़ता है तथा 25 प्रतिशत प्रतिदिन जो ज्यादा उत्पन्न होते हैं उन्हें ठिकाने लगाने के लिए तथा कर्म भोग का दण्ड देने के लिए चौरासी लाख योनियों की रचना की हुई है। यदि सबके सामने बैठ कर किसी की पुत्री, किसी की पत्नी, किसी के पुत्र, माता-पिता को खाएगा तो सर्व को ब्रह्म से घृणा हो जाए तथा जब भी कभी पूर्ण परमात्मा कविरग्नि (कबीर परमेश्वर) स्वयं आए या अपना कोई संदेशवाहक (दूत) भेंजे तो सर्व प्राणी सत्यभक्ति करके काल के जाल से निकल जाऐं।

इसलिए धोखा देकर रखता है तथा पवित्र गीता अध्याय 7 श्लोक 18,24,25 में अपनी साधना से होने वाली मुक्ति (गति) को भी (अनुत्तमाम्) अति अश्रेष्ठ कहा है तथा अपने विधान (नियम)को भी (अनुत्तम) अश्रेष्ठ कहा है।

प्रत्येक ब्रह्माण्ड में बने ब्रह्मलोक में एक महास्वर्ग बनाया है। महास्वर्ग में एक स्थान पर नकली सतलोक - नकली अलख लोक - नकली अगम लोक तथा नकली अनामी लोक की रचना प्राणियों को धोखा देने के लिए प्रकृति (दुर्गा/आदि माया) द्वारा करवा रखी है। कबीर साहेब का एक शब्द है 'कर नैनों दीदार महल में प्यारा है' में वाणी है कि 'काया भेद किया निरवारा, यह सब रचना पिण्ड मंझारा है। माया अविगत जाल पसारा, सो कारीगर भारा है। आदि माया किन्ही चतुराई, झूठी बाजी पिण्ड दिखाई, अविगत रचना रचि अण्ड माहि वाका प्रतिबिम्ब डारा है।'

ब्रह्म लोक का लघु चित्र
महाविष्णु रूप में काल
जटा कुण्डली झील
महाब्रह्मा रूप में काल
महाशिव रूप में काल
सतोगुण प्रधान क्षेत्र
तमोगुण प्रधान क्षेत्र
रजोगुण प्रधान क्षेत्र
शून्य स्थान
दुर्गा लोक
सप्तपुरी
नकली अनामी लोक
नकली अगम लोक
नकली अलख लोक
नकली सतलोक
महाइन्द्र का द्वीप
अठासी हजार द्वीप
मीठे जल का समुद्र
महास्वर्ग
सुमेरु पर्वत
फलदार वृक्षों का वन
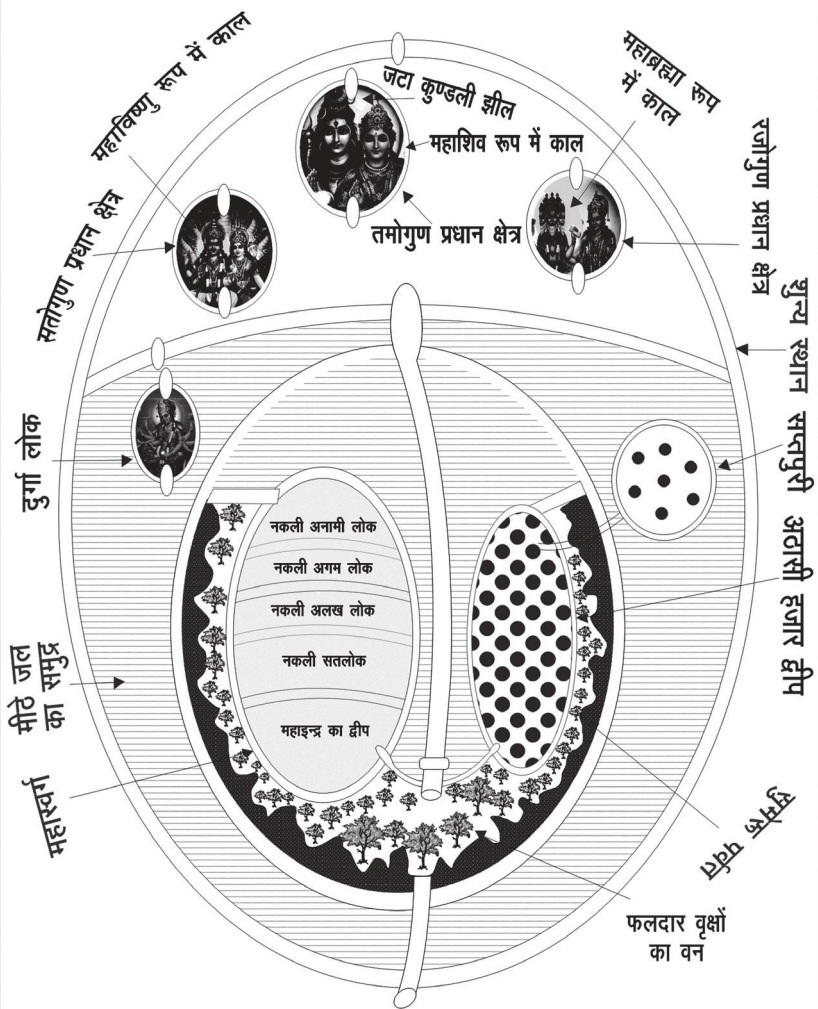
ज्योति निरंजन (काल) ब्रह्म के लोक (21 ब्रह्मण्ड) का लघु चित्र
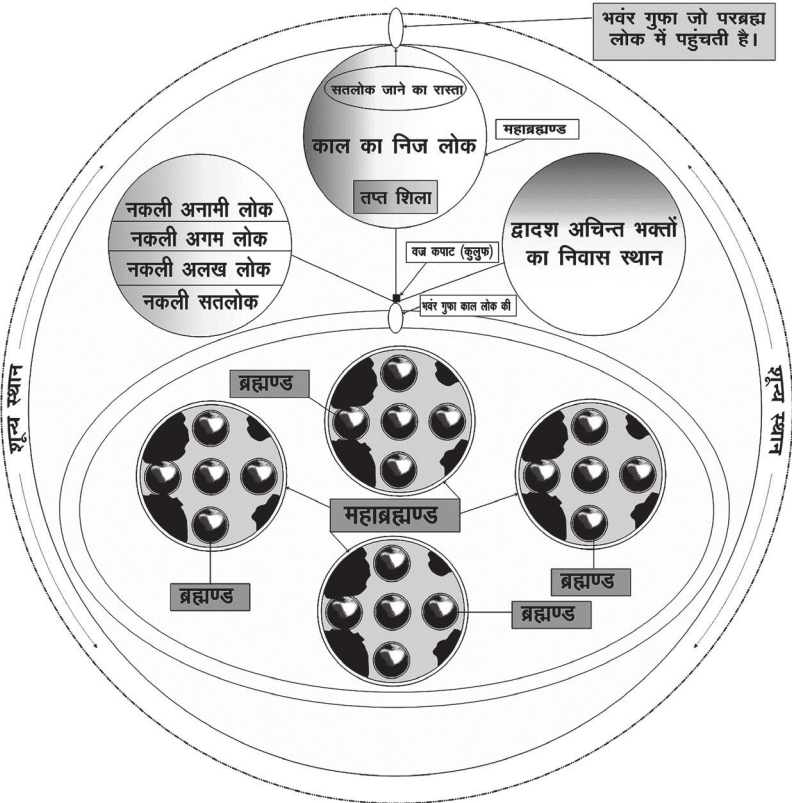
एक ब्रह्माण्ड में अन्य लोकों की भी रचना है, जैसे श्री ब्रह्मा जी का लोक, श्री विष्णु जी का लोक, श्री शिव जी का लोक। जहाँ पर बैठकर तीनों प्रभु नीचे के तीन लोकों (स्वर्गलोक अर्थात् इन्द्र का लोक - पृथ्वी लोक तथा पाताल लोक) पर एक - एक विभाग के मालिक बन कर प्रभुता करते हैं तथा अपने पिता काल के खाने के लिए प्राणियों की उत्पत्ति, स्थिति तथा संहार का कार्यभार संभालते हैं। तीनों प्रभुओं की भी जन्म व मृत्यु होती है। तब काल इन्हें भी खाता है। इसी ब्रह्माण्ड {इसे अण्ड भी कहते हैं क्योंकि ब्रह्माण्ड की बनावट अण्डाकार है, इसे पिण्ड भी कहते हैं क्योंकि शरीर (पिण्ड) में एक ब्रह्माण्ड की रचना कमलों में टी.वी. की तरह देखी जाती है} में एक मानसरोवर तथा धर्मराय (न्यायधीश) का भी लोक है तथा एक गुप्त स्थान पर पूर्ण परमात्मा अन्य रूप धारण करके रहता है जैसे प्रत्येक देश का राजदूत भवन होता है। वहाँ पर कोई नहीं जा सकता। वहाँ पर वे आत्माऐं रहती हैं जिनकी सत्यलोक की भक्ति अधूरी रहती है। जब भक्ति युग आता है तो उस समय परमेश्वर कबीर जी अपना प्रतिनिधी पूर्ण संत सतगुरु भेजते हैं। इन पुण्यात्माओं को पृथ्वी पर उस समय मानव शरीर प्राप्त होता है तथा ये शीघ्र ही सत भक्ति पर लग जाते हैं तथा सतगुरु से दीक्षा प्राप्त करके पूर्ण मोक्ष प्राप्त कर जाते हैं। उस स्थान पर रहने वाले हंस आत्माओं की निजी भक्ति कमाई खर्च नहीं होती। परमात्मा के भण्डार से सर्व सुविधाऐं उपलब्ध होती हैं। ब्रह्म (काल) के उपासकों की भक्ति कमाई स्वर्ग-महा स्वर्ग में समाप्त हो जाती है क्योंकि इस काल लोक (ब्रह्म लोक) तथा परब्रह्म लोक में प्राणियों को अपना किया कर्मफल ही मिलता है।

क्षर पुरुष (ब्रह्म) ने अपने 20 ब्रह्माण्डों को चार महाब्रह्माण्डों में विभाजित किया है। एक महाब्रह्माण्ड में पाँच ब्रह्माण्डों का समूह बनाया है तथा चारों ओर से अण्डाकार गोलाई (परिधि) में रोका है तथा चारों महा ब्रह्माण्डों को भी फिर अण्डाकार गोलाई (परिधि) में रोका है।

इक्कीसवें ब्रह्माण्ड की रचना एक महाब्रह्माण्ड जितना स्थान लेकर की है। इक्कीसवें ब्रह्माण्ड में प्रवेश होते ही तीन रास्ते बनाए हैं। इक्कीसवें ब्रह्माण्ड में भी बांई तरफ नकली सतलोक, नकली अलख लोक, नकली अगम लोक, नकली अनामी लोक की रचना प्राणियों को धोखे में रखने के लिए आदि माया (दुर्गा) से करवाई है तथा दांई तरफ बारह सर्व श्रेष्ठ ब्रह्म साधकों (भक्तों) को रखता है। फिर प्रत्येक युग में उन्हें अपने संदेश वाहक (सन्त सतगुरू) बनाकर पृथ्वी पर भेजता है, जो शास्त्र विधि रहित साधना व ज्ञान बताते हैं तथा स्वयं भी भक्तिहीन हो जाते हैं तथा अनुयाइयों को भी काल जाल में फंसा जाते हैं। फिर वे गुरु जी तथा अनुयाई दोनों ही नरक में जाते हैं। फिर सामने एक ताला (कुलुफ) लगा रखा है। वह रास्ता

काल (ब्रह्म) के निज लोक में जाता है। जहाँ पर यह ब्रह्म (काल) अपने वास्तविक मानव सदृश काल रूप में रहता है। इसी स्थान पर एक पत्थर की टुकड़ी तवे के आकार की (चपाती पकाने की लोहे की गोल प्लेट सी होती है) स्वतः गर्म रहती है। जिस पर एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों के सूक्ष्म शरीर को भूनकर उनमें से गंदगी निकाल कर खाता है। उस समय सर्व प्राणी बहुत पीड़ा अनुभव करते हैं तथा हाहाकार मच जाती है। फिर कुछ समय उपरान्त वे बेहोश हो जाते हैं। जीव मरता नहीं। फिर धर्मराय के लोक में जाकर कर्माधार से अन्य जन्म प्राप्त करते हैं तथा जन्म-मृत्यु का चक्कर बना रहता है। उपरोक्त सामने लगा ताला ब्रह्म (काल) केवल अपने आहार वाले प्राणियों के लिए कुछ क्षण के लिए खोलता है। पूर्ण परमात्मा के सत्यनाम व सारनाम से यह ताला स्वयं खुल जाता है। ऐसे काल का जाल पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर साहेब) ने स्वयं ही अपने निजी भक्त धर्मदास जी को समझाया।

"परब्रह्म के सात संख ब्रह्माण्डों की स्थापना"

कबीर परमेश्वर (कविर्देव) ने आगे बताया है कि परब्रह्म (अक्षर पुरुष) ने अपने कार्य में गफलत की क्योंकि यह मानसरोवर में सो गया तथा जब परमेश्वर (मैंनें अर्थात् कबीर साहेब ने) उस सरोवर में अण्डा छोड़ा तो अक्षर पुरुष (परब्रह्म) ने उसे क्रोध से देखा। इन दोनों अपराधों के कारण सात संख ब्रह्माण्ड़ों सहित सतलोक से बाहर कर दिया। अन्य कारण अक्षर पुरुष (परब्रह्म) अपने साथी ब्रह्म (क्षर पुरुष) की विदाई में व्याकुल होकर परमपिता कविर्देव (कबीर परमेश्वर) की याद भूलकर उसी को याद करने लगा तथा सोचा कि क्षर पुरुष (ब्रह्म) तो बहुत आनन्द मना रहा होगा, वह स्वतंत्र राज्य करेगा, मैं पीछे रह गया तथा अन्य कुछ आत्माऐं जो परब्रह्म के साथ सात संख ब्रह्माण्डों में जन्म-मृत्यु का कर्मदण्ड भोग रही हैं, उन हंस आत्माओं की विदाई की याद में खो गई जो ब्रह्म (काल) के साथ इक्कीस ब्रह्माण्डों में फंसी हैं तथा पूर्ण परमात्मा, सुखदाई कविर्देव की याद भुला दी। परमेश्वर कविर् देव के बार-बार समझाने पर भी आस्था कम नहीं हुई। परब्रह्म (अक्षर पुरुष) ने सोचा कि मैं भी अलग स्थान प्राप्त करूं तो अच्छा रहे। यह सोच कर राज्य प्राप्ति की इच्छा से सारनाम का जाप प्रारम्भ कर दिया। इसी प्रकार अन्य आत्माओं ने (जो परब्रह्म के सात संख ब्रह्माण्डों में फंसी हैं) सोचा कि वे जो ब्रह्म के साथ आत्माऐं गई हैं वे तो वहाँ मौज-मस्ती मनाऐंगे, हम पीछे रह गये। परब्रह्म के मन में यह धारणा बनी कि क्षर पुरुष अलग होकर बहुत सुखी होगा। यह विचार कर अन्तरात्मा से भिन्न स्थान प्राप्ति की ठान ली। परब्रह्म (अक्षर पुरुष) ने हठ योग नहीं किया, परन्तु

केवल अलग राज्य प्राप्ति के लिए सहज ध्यान योग विशेष कसक के साथ करता रहा। अलग स्थान प्राप्त करने के लिए पागलों की तरह विचरने लगा, खाना-पीना भी त्याग दिया। अन्य कुछ आत्माऐं जो पहले काल ब्रह्म के साथ गई आत्माओं के प्रेम में व्याकुल थी, वे अक्षर पुरूष के वैराग्य पर आसक्त होकर उसे चाहने लगी। पूर्ण प्रभु के पूछने पर परब्रह्म ने अलग स्थान माँगा तथा कुछ हंसात्माओं के लिए भी याचना की। तब कविर्देव ने कहा कि जो आत्मा आपके साथ स्वेच्छा से जाना चाहें उन्हें भेज देता हूँ। पूर्ण प्रभु ने पूछा कि कौन हंस आत्मा परब्रह्म के साथ जाना चाहता है, सहमति व्यक्त करे। बहुत समय उपरान्त एक हंस ने स्वीकृति दी, फिर देखा-देखी उन सर्व आत्माओं ने भी सहमति व्यक्त कर दी। सर्व प्रथम स्वीकृति देने वाले हंस को स्त्री रूप बनाया, उसका नाम ईश्वरी माया (प्रकृति सुरति) रखा तथा अन्य आत्माओं को उस ईश्वरी माया में प्रवेश करके अचिन्त द्वारा अक्षर पुरुष (परब्रह्म) के पास भेजा। (पतिव्रता पद से गिरने की सजा पाई।) कई युगों तक दोनों सात संख ब्रह्माण्डों में रहे, परन्तु परब्रह्म ने दुर्व्यवहार नहीं किया। ईश्वरी माया की स्वेच्छा से अंगीकार किया तथा अपनी शब्द शक्ति द्वारा नाखुनों से स्त्री इन्द्री (योनि) बनाई। ईश्वरी देवी की सहमति से संतान उत्पन्न की। इस लिए परब्रह्म के लोक (सात संख ब्रह्माण्डों) में प्राणियों को तप्तशिला का कष्ट नहीं है तथा वहाँ पशु-पक्षी भी ब्रह्म लोक के देवों से अच्छे चरित्र युक्त हैं। आयु भी बहुत लम्बी है, परन्तु जन्म - मृत्यु कर्माधार पर कर्मदण्ड तथा परिश्रम करके ही उदर पूर्ति होती है। स्वर्ग तथा नरक भी ऐसे ही बने हैं। परब्रह्म (अक्षर पुरुष) को सात संख ब्रह्माण्ड उसके इच्छा रूपी भक्ति ध्यान अर्थात् सहज समाधि विधि से की उस की कमाई के प्रतिफल में प्रदान किये तथा सत्यलोक से भिन्न स्थान पर गोलाकार परिधि में बन्द करके सात संख ब्रह्माण्डों सहित अक्षर ब्रह्म व ईश्वरी माया को निष्कासित कर दिया।

पूर्ण ब्रह्म (सतपुरुष) असंख्य ब्रह्माण्डों जो सत्यलोक आदि में हैं तथा ब्रह्म के इक्कीस ब्रह्माण्डों तथा परब्रह्म के सात संख ब्रह्माण्डों का भी प्रभु (मालिक) है अर्थात् परमेश्वर कविर्देव कुल का मालिक है।

श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी आदि के चार-चार भुजाएं तथा 16 कलाएं हैं तथा प्रकृति देवी (दुर्गा) की आठ भुजाएं हैं तथा 64 कलाएं हैं। ब्रह्म (क्षर पुरुष) की एक हजार भुजाएं हैं तथा एक हजार कलाएं है तथा इक्कीस ब्रह्माण्डों का प्रभु है। परब्रह्म (अक्षर पुरुष) की दस हजार भुजाएं हैं तथा दस हजार कला हैं तथा सात संख ब्रह्माण्डों का प्रभु है। पूर्ण ब्रह्म (परम अक्षर पुरुष अर्थात् सतपुरुष) की असंख्य भुजाएं तथा असंख्य कलाएं हैं तथा ब्रह्म के इक्कीस ब्रह्माण्ड व परब्रह्म के सात संख ब्रह्माण्डों सहित

असंख्य ब्रह्माण्डों का प्रभु है। प्रत्येक प्रभु अपनी सर्व भुजाओं को समेट कर केवल दो भुजाएं भी रख सकते हैं तथा जब चाहें सर्व भुजाओं को भी प्रकट कर सकते हैं। पूर्ण परमात्मा परब्रह्म के प्रत्येक ब्रह्माण्ड में भी अलग स्थान बनाकर अन्य रूप में गुप्त रहता है। यूं समझो जैसे एक घूमने वाला कैमरा बाहर लगा देते हैं तथा अन्दर टी.वी. (टेलीविजन) रख देते हैं। टी.वी. पर बाहर का सर्व दृश्य नजर आता है तथा दूसरा टी.वी. बाहर रख कर अन्दर का कैमरा स्थाई करके रख दिया जाए, उसमें केवल अन्दर बैठे प्रबन्धक का चित्र दिखाई देता है। जिससे सर्व कर्मचारी सावधान रहते हैं।

इसी प्रकार पूर्ण परमात्मा अपने सतलोक में बैठ कर सर्व को नियंत्रित किए हुए हैं तथा प्रत्येक ब्रह्माण्ड में भी सतगुरु कविर्देव विद्यमान रहते हैं जैसे सूर्य दूर होते हुए भी अपना प्रभाव अन्य लोकों में बनाए हुए है।

"पवित्र अथर्ववेद में सृष्टि रचना का प्रमाण"

अथर्ववेद काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र नं. 1 :-

ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद् वि सीमतः सुरुचो वेन आवः।

सः बुध्न्या उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च वि वः।। 1।।

ब्रह्म–ज–ज्ञानम्–प्रथमम्–पुरस्त्तात्–विसिमतः–सुरुचः–वेनः–आवः–सः–बुध्न्याः –उपमा–अस्य–विष्ठाः–सतः–च–योनिम्–असतः–च–वि वः

अनुवाद :– (प्रथमम्) प्राचीन अर्थात् सनातन (ब्रह्म) परमात्मा ने (ज) प्रकट होकर (ज्ञानम्) अपनी सूझ–बूझ से (पुरस्त्तात्) शिखर में अर्थात् सतलोक आदि को (सुरुचः) स्वइच्छा से बड़े चाव से स्वप्रकाशित (विसिमतः) सीमा रहित अर्थात् विशाल सीमा वाले भिन्न लोकों को रचा। उस (वेनः) जुलाहे ने ताने अर्थात् कपड़े की तरह बुनकर (आवः) सुरक्षित किया (च) तथा (सः) वह पूर्ण ब्रह्म ही सर्व रचना करता है (अस्य) इसलिए उसी (बुध्न्याः) मूल मालिक ने (योनिम्) मूलस्थान सत्यलोक की रचना की है (अस्य) इस के (उपमा) सदृश अर्थात् मिलते जुलते (सतः) अक्षर पुरुष अर्थात् परब्रह्म के लोक कुछ स्थाई (च) तथा (असतः) क्षर पुरुष के अस्थाई लोक आदि (वि वः) आवास स्थान भिन्न (विष्ठाः) स्थापित किए।

भावार्थ :- पवित्र वेदों को बोलने वाला ब्रह्म (काल) कह रहा है कि सनातन परमेश्वर ने स्वयं अनामय (अनामी) लोक से सत्यलोक में प्रकट होकर अपनी सूझ-बूझ से कपड़े की तरह रचना करके ऊपर के सतलोक आदि को सीमा रहित स्वप्रकाशित अजर - अमर अर्थात् अविनाशी ठहराए तथा नीचे के परब्रह्म के सात संख ब्रह्माण्ड तथा ब्रह्म के 21 ब्रह्माण्ड व इनमें छोटी-से छोटी रचना भी उसी परमात्मा ने अस्थाई की है।

अथर्ववेद काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र नं. 2 :-

इयं पित्र्या राष्ट्र्येत्वग्रे प्रथमाय जनुषे भुवनेष्ठाः।

तस्मा एतं सुरुचं ह्वारमह्यं घर्मं श्रीणन्तु प्रथमाय धास्यवे।।2।।

इयम्–पित्र्या–राष्ट्रि–एतु–अग्रे–प्रथमाय–जनुषे–भुवनेष्ठाः–तस्मा

एतम्–सुरूचम्–हवारमह्मम्–धर्मम्–श्रीणान्तु–प्रथमाय–धास्यवे।

अनुवाद :– (इयम्) इसी (पित्र्या) जगतपिता परमेश्वर ने (एतु) इस (अग्रे) सर्वोत्तम् (प्रथमाय) सर्व से पहली माया परानन्दनी (राष्ट्रि) राजेश्वरी शक्ति अर्थात् पराशक्ति जिसे आकर्षण शक्ति भी कहते हैं, को (जनुषे) उत्पन्न करके (भुवनेष्ठाः) लोक स्थापना की (तस्मा) उसी परमेश्वर ने (सुरुचम्) बड़े चाव के साथ स्वेच्छा से (एतम्) इस (प्रथमाय) प्रथम उत्पति की शक्ति अर्थात् पराशक्ति के द्वारा (ह्वारमह्यम्) एक दूसरे के वियोग को रोकने अर्थात् आकर्षण शक्ति के (श्रीणान्तु) गुरूत्व आकर्षण को परमात्मा ने आदेश दिया सदा रहो उस कभी समाप्त न होने वाले (धर्मम्) स्वभाव से (धास्यवे) धारण करके ताने अर्थात् कपड़े की तरह बुनकर रोके हुए है।

भावार्थ :- जगतपिता परमेश्वर ने अपनी शब्द शक्ति से राष्ट्री अर्थात् सबसे पहली माया राजेश्वरी उत्पन्न की तथा उसी पराशक्ति के द्वारा एक-दूसरे को आकर्षण शक्ति से रोकने वाले कभी न समाप्त होने वाले गुण से उपरोक्त सर्व ब्रह्माण्डों को स्थापित किया है।

अथर्ववेद काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र नं. 3 :-

प्र यो जज्ञे विद्वानस्य बन्धुर्विश्वा देवानां जनिमा विवक्ति।

ब्रह्म ब्रह्मण उज्जभार मध्यान्नीचैरुच्चैः स्वधा अभि प्र तस्थौ।।3।।,

प्र–यः–जज्ञे–विद्वानस्य–बन्धुः–विश्वा–देवानाम्–जनिमा–विवक्ति–ब्रह्मः

ब्रह्मणः–उज्जभार–मध्यात्–निचैः–उच्चैः–स्वधा–अभिः–प्रतस्थौ

अनुवाद :– (प्र) सर्व प्रथम (देवानाम्) देवताओं व ब्रह्माण्डों की (जज्ञे) उत्पति के ज्ञान को (विद्वानस्य) जिज्ञासु भक्त का (यः) जो (बन्धुः) वास्तविक साथी अर्थात् पूर्ण परमात्मा ही अपने निज सेवक को (जनिमा) अपने द्वारा सृजन किए हुए को (विवक्ति) स्वयं ही ठीक–ठीक विस्तार पूर्वक बताता है कि (ब्रह्मणः) पूर्ण परमात्मा ने (मध्यात्) अपने मध्य से अर्थात् शब्द शक्ति से (ब्रह्मः) ब्रह्म–क्षर पुरूष अर्थात् काल को (उज्जभार) उत्पन्न करके (विश्वा) सारे संसार को अर्थात् सर्व लोकों को (उच्चैः) ऊपर सत्यलोक आदि (निचैः) नीचे परब्रह्म व ब्रह्म के सर्व ब्रह्माण्ड (स्वधा) अपनी धारण करने वाली (अभिः) आकर्षण शक्ति से (प्र तस्थौ) दोनों को अच्छी प्रकार स्थित किया।

भावार्थ :- पूर्ण परमात्मा अपने द्वारा रची सृष्टि का ज्ञान तथा सर्व आत्माओं की उत्पत्ति का ज्ञान अपने निजी दास को स्वयं ही सही बताता है कि पूर्ण परमात्मा ने अपने मध्य अर्थात् अपने शरीर से अपनी शब्द शक्ति के द्वारा ब्रह्म (क्षर पुरुष/काल) की उत्पत्ति की तथा सर्व ब्रह्माण्डों को ऊपर सतलोक, अलख लोक, अगम लोक, अनामी लोक आदि तथा नीचे परब्रह्म

के सात संख ब्रह्माण्ड तथा ब्रह्म के 21 ब्रह्माण्डों को अपनी धारण करने वाली आकर्षण शक्ति से ठहराया हुआ है।

जैसे पूर्ण परमात्मा कबीर परमेश्वर (कविर्देव) ने अपने निजी सेवक अर्थात् सखा श्री धर्मदास जी, आदरणीय गरीबदास जी आदि को अपने द्वारा रची सृष्टि का ज्ञान स्वयं ही बताया। उपरोक्त वेद मंत्र भी यही समर्थन कर रहा है।

अथर्ववेद काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र नं. 4

सः हि दिवः सः पृथिव्या ऋतस्था मही क्षेमं रोदसी अस्कभायत्।
महान् मही अस्कभायद् वि जातो द्यां सद्म पार्थिवं च रजः।।4।।

:—हि—दिवः—स—पृथिव्या—ऋतस्था—मही—क्षेमम्—रोदसी—अकस्भायत्—
महान् —मही—अस्कभायद्—विजातः—धाम्—सदम्—पार्थिवम्—च—रजः

अनुवाद :— (सः) उसी सर्वशक्तिमान परमात्मा ने (हि) निःसंदेह (दिवः) ऊपर के चारों दिव्य लोक जैसे सत्य लोक, अलख लोक, अगम लोक तथा अनामी अर्थात् अकह लोक अर्थात् दिव्य गुणों युक्त लोकों को (ऋतस्था) सत्य स्थिर अर्थात् अजर—अमर रूप से स्थिर किए (स) उन्हीं के समान (पृथिव्या) नीचे के पृथ्वी वाले सर्व लोकों जैसे परब्रह्म के सात संख तथा ब्रह्म/काल के इक्कीस ब्रह्माण्ड (मही) पृथ्वी तत्व से (क्षेमम्) सुरक्षा के साथ (अस्कभायत्) ठहराया (रोदसी) आकाश तत्व तथा पृथ्वी तत्व दोनों से ऊपर नीचे के ब्रह्माण्डों को{जैसे आकाश एक सुक्ष्म तत्व है, आकाश का गुण शब्द है, पूर्ण परमात्मा ने ऊपर के लोक शब्द रूप रचे जो तेजपुंज के बनाए हैं तथा नीचे के परब्रह्म (अक्षर पुरूष) के सप्त संख ब्रह्माण्ड तथा ब्रह्म/क्षर पुरूष के इक्कीस ब्रह्माण्डों को पृथ्वी तत्व से अस्थाई रचा} (महान्) पूर्ण परमात्मा ने (पार्थिवम्) पृथ्वी वाले (वि) भिन्न—भिन्न (धाम्) लोक (च) और (सदम्) आवास स्थान (मही) पृथ्वी तत्व से (रजः) प्रत्येक ब्रह्माण्ड में छोटे—छोटे लोकों की (जातः) रचना करके (अस्कभायत्) स्थिर किया।

भावार्थ :- ऊपर के चारों लोक सत्यलोक, अलख लोक, अगम लोक, अनामी लोक, यह तो अजर-अमर स्थाई अर्थात् अविनाशी रचे हैं तथा नीचे के ब्रह्म तथा परब्रह्म के लोकों को अस्थाई रचना करके तथा अन्य छोटे-छोटे लोक भी उसी परमेश्वर ने रच कर स्थिर किए।

अथर्ववेद काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र 5

सः बुध्न्यादाष्ट्र जनुषोऽभ्यग्रं बृहस्पतिर्देवता तस्य सम्राट्।
अहर्यच्छुक्रं ज्योतिषो जनिष्टाथ द्युमन्तो वि वसन्तु विप्राः।।5।।

सः—बुध्न्यात्—आष्ट्र—जनुषेः—अभि—अग्रम्—बृहस्पतिः—देवता—तस्य—सम्राट—अहः— यत्—शुक्रम्—ज्योतिषः—जनिष्ट—अथ—द्युमन्तः—वि—वसन्तु—विप्राः

अनुवाद :— (सः) उसी (बुध्न्यात्) मूल मालिक से (अभि—अग्रम्) सर्व प्रथम स्थान पर (आष्ट्र) अष्टँगी माया—दुर्गा अर्थात् प्रकृति देवी (जनुषेः) उत्पन्न हुई

क्योंकि नीचे के परब्रह्म व ब्रह्म के लोकों का प्रथम स्थान सतलोक है यह तीसरा धाम भी कहलाता है (तस्य) इस दुर्गा का भी मालिक यही (सम्राट) राजाधिराज (बृहस्पतिः) सबसे बड़ा पति व जगतगुरु (देवता) परमेश्वर है। (यत्) जिस से (अहः) सबका वियोग हुआ (अथ) इसके बाद (ज्योतिषः) ज्योति रूप निरंजन अर्थात् काल के (शुक्रम्) वीर्य अर्थात् बीज शक्ति से (जनिष्ट) दुर्गा के उदर से उत्पन्न होकर (विप्राः) भक्त आत्माएं (वि) अलग से (द्युमन्तः) मनुष्य लोक तथा स्वर्ग लोक में ज्योति निरंजन के आदेश से दुर्गा ने कहा (वसन्तु) निवास करो, अर्थात् वे निवास करने लगी।

भावार्थ :- पूर्ण परमात्मा ने ऊपर के चारों लोकों में से जो नीचे से सबसे प्रथम अर्थात् सत्यलोक में आष्ट्रा अर्थात् अष्टंगी (प्रकृति देवी/दुर्गा) की उत्पत्ति की। यही राजाधिराज, जगतगुरु, पूर्ण परमेश्वर (सतपुरुष) है जिससे सबका वियोग हुआ है। फिर सर्व प्राणी ज्योति निरंजन (काल) के (वीर्य) बीज से दुर्गा (आष्ट्रा) के गर्भ द्वारा उत्पन्न होकर स्वर्ग लोक व पृथ्वी लोक पर निवास करने लगे।

अथर्ववेद काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र 6

नूनं तदस्य काव्यो हिनोति महो देवस्य पूर्व्यस्य धाम।
एष जज्ञे बहुभिः साकमित्था पूर्वे अर्धे विषिते ससन् नु।।6।।

नूनम्—तत्—अस्य—काव्यः—महः—देवस्य—पूर्व्यस्य—धाम—हिनोति—पूर्वे—विषिते—एष— जज्ञे—बहुभिः—साकम्—इत्था—अर्धे—ससन्—नु।

अनुवाद :– (नूनम्) निसंदेह (तत्) वह पूर्ण परमेश्वर अर्थात् तत् ब्रह्म ही (अस्य) इस (काव्यः) भक्त आत्मा जो पूर्ण परमेश्वर की भक्ति विधिवत करता है को वापिस (महः) सर्वशक्तिमान (देवस्य) परमेश्वर के (पूर्व्यस्य) पहले के (धाम) लोक में अर्थात् सत्यलोक में (हिनोति) भेजता है।

(पूर्वे) पहले वाले (विषिते) विशेष चाहे हुए (एष) इस परमेश्वर को व (जज्ञे) सृष्टि उत्पति के ज्ञान को जान कर (बहुभिः) बहुत आनन्द (साकम्) के साथ (अर्धे) आधा (ससन्) सोता हुआ (इत्था) विधिवत् इस प्रकार (नु) सच्ची आत्मा से स्तुति करता है।

भावार्थ :- वही पूर्ण परमेश्वर सत्य साधना करने वाले साधक को उसी पहले वाले स्थान (सत्यलोक) में ले जाता है, जहाँ से बिछुड़ कर आए थे। वहाँ उस वास्तविक सुखदाई प्रभु को प्राप्त करके खुशी से आत्म विभोर होकर मस्ती से स्तुति करता है कि हे परमात्मा असंख्य जन्मों के भूले-भटकों को वास्तविक ठिकाना मिल गया। इसी का प्रमाण पवित्र ऋग्वेद मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 16 में भी है।

आदरणीय गरीबदास जी को इसी प्रकार पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर परमेश्वर) स्वयं सत्यभक्ति प्रदान करके सत्यलोक लेकर गए थे, तब अपनी

अमृतवाणी में आदरणीय गरीबदास जी महाराज ने आँखों देखकर कहा :-

गरीब, अजब नगर में ले गए, हमकुँ सतगुरु आन।
झिलके बिम्ब अगाध गति, सुते चादर तान।।

अथर्ववेद काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र 7

योऽथर्वाणं पित्तरं देवबन्धुं बृहस्पतिं नमसाव च गच्छात्।
त्वं विश्वेषां जनिता यथासः कविर्देवो न दभायत् स्वधावान्।।7।।

यः—अथर्वाणम्—पित्तरम्—देवबन्धुम्—बृहस्पतिम्—नमसा—अव—च—गच्छात्—त्वम्— विश्वेषाम्—जनिता—यथा—सः—कविर्देवः—न—दभायत्—स्वधावान्

अनुवाद :— (यः) जो (अथर्वाणम्) अचल अर्थात् अविनाशी (पित्तरम्) जगत पिता (देव बन्धुम्) भक्तों का वास्तविक साथी अर्थात् आत्मा का आधार (बृहस्पतिम्) जगतगुरु (च) तथा (नमसा) विनम्र पुजारी अर्थात् विधिवत् साधक को (अव) सुरक्षा के साथ (गच्छात्) सतलोक गए हुओं को अर्थात् जिनका पूर्ण मोक्ष हो गया, वे सत्यलोक में जा चुके हैं। उनको सतलोक ले जाने वाला (विश्वेषाम्) सर्व ब्रह्माण्डों की (जनिता) रचना करने वाला जगदम्बा अर्थात् माता वाले गुणों से भी युक्त (न दभायत्) काल की तरह धोखा न देने वाले (स्वधावान्) स्वभाव अर्थात् गुणों वाला (यथा) ज्यों का त्यों अर्थात् वैसा ही (सः) वह (त्वम्) आप (कविर्देवः/ कविर्देवः) कविर्देव है अर्थात् भाषा भिन्न इसे कबीर परमेश्वर भी कहते हैं।

भावार्थ :- इस मंत्र में यह भी स्पष्ट कर दिया कि उस परमेश्वर का नाम कविर्देव अर्थात् कबीर परमेश्वर है, जिसने सर्व रचना की है।

जो परमेश्वर अचल अर्थात् वास्तव में अविनाशी (गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में भी प्रमाण है) जगत् गुरु, आत्माधार, जो पूर्ण मुक्त होकर सत्यलोक गए हैं उनको सतलोक ले जाने वाला, सर्व ब्रह्माण्डों का रचनहार, काल (ब्रह्म) की तरह धोखा न देने वाला ज्यों का त्यों वह स्वयं कविर्देव अर्थात् कबीर प्रभु है। यही परमेश्वर सर्व ब्रह्माण्डों व प्राणियों को अपनी शब्द शक्ति से उत्पन्न करने के कारण (जनिता) माता भी कहलाता है तथा (पित्तरम्) पिता तथा (बन्धु) भाई भी वास्तव में यही है तथा (देव) परमेश्वर भी यही है। इसलिए इसी कविर्देव (कबीर परमेश्वर) की स्तुति किया करते हैं। त्वमेव माता च पिता त्वमेव त्वमेव बन्धु च सखा त्वमेव, त्वमेव विद्या च द्रविणंम त्वमेव, त्वमेव सर्वं मम् देव देव। इसी परमेश्वर की महिमा का पवित्र ऋग्वेद मण्डल नं. 1 सूक्त नं. 24 में विस्तृत विवरण है।

ऋग्वेद मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 1

सहस्त्रशीर्षा पुरूषः सहस्त्राक्षः सहस्त्रपात्।
स भूमिं विश्वतों वृत्वात्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम्।।1।।

सहस्त्रशिर्षा—पुरूषः—सहस्त्राक्षः—सहस्त्रपात्स—भूमिम्—विश्वतः—वृत्वा—
अत्यातिष्ठत् —दशंगुलम्।

अनुवाद :– (पुरूषः) विराट रूप काल भगवान अर्थात् क्षर पुरूष (सहस्रशिर्षा) हजार सिरों वाला (सहस्राक्षः) हजार आँखों वाला (सहस्रपात्) हजार पैरों वाला है (स) वह काल (भूमिम्) पृथ्वी वाले इक्कीस ब्रह्माण्डों को (विश्वतः) सब ओर से (दशंगुलम्) दसों अंगुलियों से अर्थात् पूर्ण रूप से काबू किए हुए (वृत्वा) गोलाकार घेरे में घेर कर (अत्यातिष्ठत्) इस से बढ़कर अर्थात् अपने काल लोक में सबसे न्यारा भी इक्कीसवें ब्रह्माण्ड में ठहरा है अर्थात् रहता है।

भावार्थ :- इस मंत्र में विराट (काल/ब्रह्म) का वर्णन है। (गीता अध्याय 10-11 में भी इसी काल/ब्रह्म का ऐसा ही वर्णन है अध्याय 11 मंत्र नं. 46 में अर्जुन ने कहा है कि हे सहस्राबाहु अर्थात् हजार भुजा वाले आप अपने चतुर्भुज रूप में दर्शन दीजिए)

जिसके हजारों हाथ, पैर, हजारों आँखे, कान आदि हैं वह विराट रूप काल प्रभु अपने आधीन सर्व प्राणियों को पूर्ण काबू करके अर्थात् 20 ब्रह्माण्डों को गोलाकार परिधि में रोककर स्वयं इनसे ऊपर (अलग) इक्कीसवें ब्रह्माण्ड में बैठा है।

"पवित्र ऋग्वेद में सृष्टि रचना का प्रमाण"

ऋग्वेद मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 2

पुरूष एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम्।

उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति।।2।।

पुरूष–एव–इदम्–सर्वम्–यत्–भूतम्–यत्–च–भाव्यम्

उत–अमृतत्वस्य– इशानः–यत्–अन्नेन–अतिरोहति

अनुवाद :– (एव) इसी प्रकार कुछ सही तौर पर (पुरूष) भगवान है वह अक्षर पुरूष अर्थात् परब्रह्म है (च) और (इदम्) यह (यत्) जो (भूतम्) उत्पन्न हुआ है (यत्) जो (भाव्यम्) भविष्य में होगा (सर्वम्) सब (यत्) प्रयत्न से अर्थात् मेहनत द्वारा (अन्नेन) अन्न से (अतिरोहति) विकसित होता है। यह अक्षर पुरूष भी (उत) सन्देह युक्त (अमृतत्वस्य) मोक्ष का (इशानः) स्वामी है अर्थात् भगवान तो अक्षर पुरूष भी कुछ सही है परन्तु पूर्ण मोक्ष दायक नहीं है।

भावार्थ :- इस मंत्र में परब्रह्म (अक्षर पुरुष) का विवरण है जो कुछ भगवान वाले लक्षणों से युक्त है, परन्तु इसकी भक्ति से भी पूर्ण मोक्ष नहीं है, इसलिए इसे संदेहयुक्त मुक्ति दाता कहा है। इसे कुछ प्रभु के गुणों युक्त इसलिए कहा है कि यह काल की तरह तप्तशिला पर भून कर नहीं खाता। परन्तु इस परब्रह्म के लोक में भी प्राणियों को परिश्रम करके कर्माधार पर ही फल प्राप्त होता है तथा अन्न से ही सर्व प्राणियों के शरीर विकसित होते हैं, जन्म तथा मृत्यु का समय भले ही काल (क्षर पुरुष) से अधिक है, परन्तु फिर भी उत्पत्ति प्रलय तथा चौरासी लाख योनियों में यातना बनी रहती है।
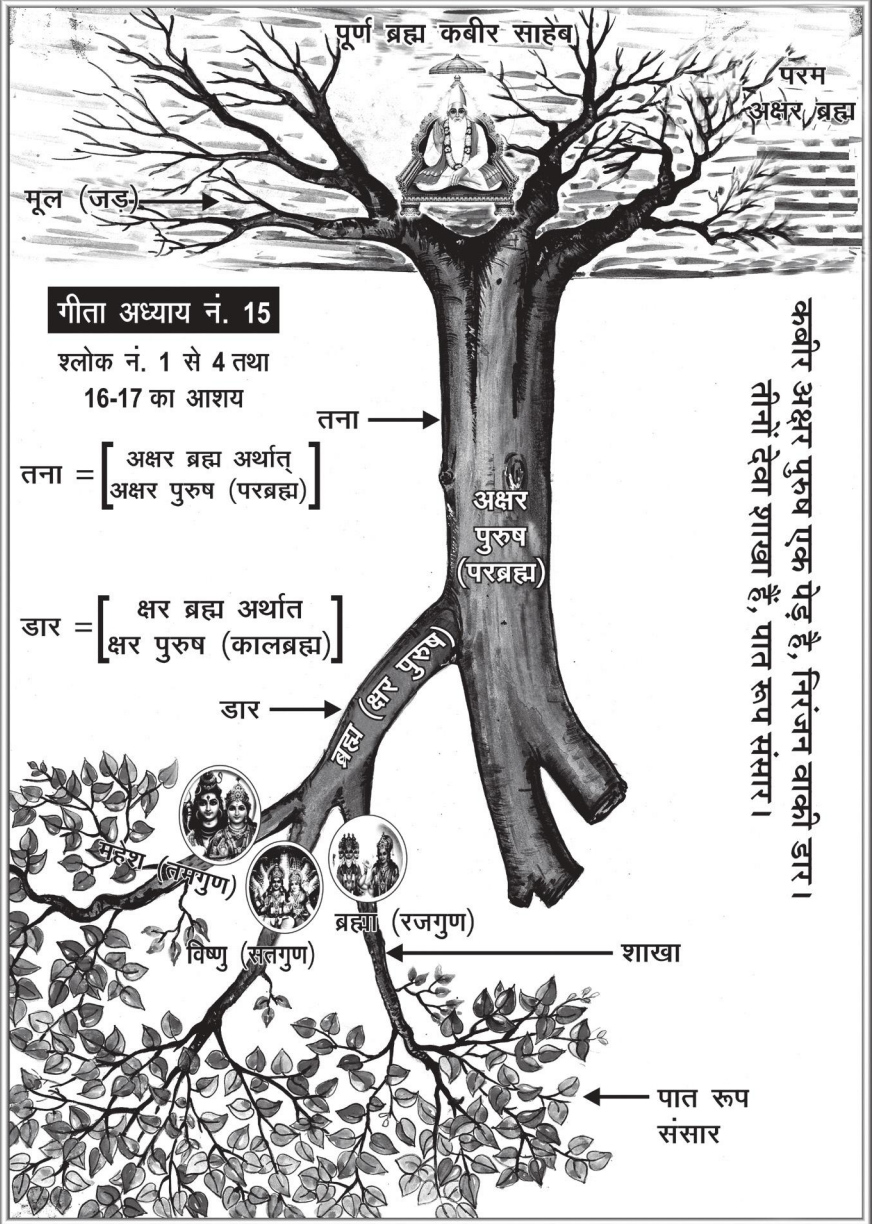
ऊपर जड़ नीचे शाखा वाला उल्टा लटका हुआ संसार रूपी वृक्ष का चित्र

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 3

एतावानस्य महिमातो ज्यायाँश्च पुरूषः।
पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि।।3।।
तावान्—अस्य—महिमा—अतः—ज्यायान्—च—पुरूषः
पादः—अस्य—विश्वा— भूतानि—त्रि—पाद्—अस्य—अमृतम्—दिवि

अनुवाद :— (अस्य) इस अक्षर पुरूष अर्थात् परब्रह्म की तो (एतावान्) इतनी ही (महिमा) प्रभुता है। (च) तथा (पुरूषः) वह परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् पूर्ण ब्रह्म परमेश्वर तो (अतः) इससे भी (ज्यायान्) बड़ा है (विश्वा) समस्त (भूतानि) क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष तथा इनके लोकों में तथा सत्यलोक तथा इन लोकों में जितने भी प्राणी हैं (अस्य) इस पूर्ण परमात्मा परम अक्षर पुरूष का (पादः) एक पैर है अर्थात् एक अंश मात्र है। (अस्य) इस परमेश्वर के (त्रि) तीन (दिवि) दिव्य लोक जैसे सत्यलोक—अलख लोक—अगम लोक (अमृतम्) अविनाशी (पाद्) दूसरा पैर है अर्थात् जो भी सर्व ब्रह्माण्डों में उत्पन्न है वह सत्यपुरूष पूर्ण परमात्मा का ही अंश या अंग है।

भावार्थ :- इस ऊपर के मंत्र 2 में वर्णित अक्षर पुरुष (परब्रह्म) की तो इतनी ही महिमा है तथा वह पूर्ण पुरुष कविर्देव तो इससे भी बड़ा है अर्थात् सर्वशक्तिमान है तथा सर्व ब्रह्माण्ड उसी के अंश मात्र पर ठहरे हैं। इस मंत्र में तीन लोकों का वर्णन इसलिए है क्योंकि चौथा अनामी (अनामय) लोक अन्य रचना से पहले का है। यही तीन प्रभुओं (क्षर पुरूष-अक्षर पुरूष तथा इन दोनों से अन्य परम अक्षर पुरूष) का विवरण श्रीमद्भगवत गीता अध्याय 15 श्लोक संख्या 16-17 में है।

{**इसी का प्रमाण आदरणीय गरीबदास साहेब जी कहते हैं कि :-**

गरीब, जाके अर्ध रूम पर सकल पसारा, ऐसा पूर्ण ब्रह्म हमारा।।
गरीब, अनन्त कोटि ब्रह्माण्ड का, एक रति नहीं भार।
सतगुरु पुरुष कबीर हैं, कुल के सृजनहार।।

इसी का प्रमाण आदरणीय दादू साहेब जी कह रहे हैं कि :-

जिन मोकुं निज नाम दिया, सोई सतगुरु हमार।
दादू दूसरा कोए नहीं, कबीर सृजनहार।।

इसी का प्रमाण आदरणीय नानक साहेब जी देते हैं कि :-

यक अर्ज गुफतम पेश तो दर कून करतार। हक्का कबीर करीम तू, बेएब परवरदिगार।।

(श्री गुरु ग्रन्थ साहेब, पृष्ठ नं. 721, महला 1, राग तिलंग)

कून करतार का अर्थ होता है सर्व का रचनहार, अर्थात् शब्द शक्ति से रचना करने वाला शब्द स्वरूपी प्रभु, हक्का कबीर का अर्थ है सत् कबीर, करीम का अर्थ दयालु, परवरदिगार का अर्थ परमात्मा है।}

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 4

त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरूषः पादोऽस्येहाभवत्पुनः।

ततो विष्व ङ्व्यक्रामत्साशनानशने अभि।।4।।

त्रि—पाद—ऊर्ध्वः—उदैत्—पुरूषः—पादः—अस्य—इह—अभवत्—पूनः

ततः— विश्वङ्— व्यक्रामत्—सः—अशनानशने—अभि

अनुवाद :— (पुरूषः) यह परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् अविनाशी परमात्मा (ऊर्ध्वः) ऊपर (त्रि) तीन लोक जैसे सत्यलोक—अलख लोक—अगम लोक रूप (पाद) पैर अर्थात् ऊपर के हिस्से में (उदैत्) प्रकट होता है अर्थात् विराजमान है (अस्य) इसी परमेश्वर पूर्ण ब्रह्म का (पादः) एक पैर अर्थात् एक हिस्सा जगत रूप (पुनर्) फिर (इह) यहाँ (अभवत्) प्रकट होता है (ततः) इसलिए (सः) वह अविनाशी पूर्ण परमात्मा (अशनानशने) खाने वाले काल अर्थात् क्षर पुरूष व न खाने वाले परब्रह्म अर्थात् अक्षर पुरूष के भी (अभि)ऊपर (विश्वङ्)सर्वत्र (व्यक्रामत्)व्याप्त है अर्थात् उसकी प्रभुता सर्व ब्रह्माण्डों व सर्व प्रभुओं पर है वह कुल का मालिक है। जिसने अपनी शक्ति को सर्व के ऊपर फैलाया है।

भावार्थ :- यही सर्व सृष्टि रचनहार प्रभु अपनी रचना के ऊपर के हिस्से में तीनों स्थानों (सतलोक, अलखलोक, अगमलोक) में तीन रूप में स्वयं प्रकट होता है अर्थात् स्वयं ही विराजमान है। यहाँ अनामी लोक का वर्णन इसलिए नहीं किया क्योंकि अनामी लोक में कोई रचना नहीं है तथा अकह (अनामय) लोक शेष रचना से पूर्व का है फिर कहा है कि उसी परमात्मा के सत्यलोक से बिछुड़ कर नीचे के ब्रह्म व परब्रह्म के लोक उत्पन्न होते हैं और वह पूर्ण परमात्मा खाने वाले ब्रह्म अर्थात् काल से (क्योंकि ब्रह्म/काल विराट शाप वश एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों को खाता है) तथा न खाने वाले परब्रह्म अर्थात् अक्षर पुरुष से (परब्रह्म प्राणियों को खाता नहीं, परन्तु जन्म-मृत्यु, कर्मदण्ड ज्यों का त्यों बना रहता है) भी ऊपर सर्वत्र व्याप्त है अर्थात् इस पूर्ण परमात्मा की प्रभुता सर्व के ऊपर है, कबीर परमेश्वर ही कुल का मालिक है। जिसने अपनी शक्ति को सर्व के ऊपर फैलाया है जैसे सूर्य अपने प्रकाश को सर्व के ऊपर फैला कर प्रभावित करता है, ऐसे पूर्ण परमात्मा ने अपनी शक्ति रूपी रेंज (क्षमता) को सर्व ब्रह्माण्डों को नियन्त्रित रखने के लिए छोड़ा हुआ है जैसे मोबाईल फोन का टावर एक देशिय होते हुए अपनी शक्ति अर्थात् मोबाइल फोन की रेंज (क्षमता) चहुं ओर फैलाए रहता है। इसी प्रकार पूर्ण प्रभु ने अपनी निराकार शक्ति सर्व व्यापक की है जिससे पूर्ण परमात्मा सर्व ब्रह्माण्डों को एक स्थान पर बैठ कर नियन्त्रित रखता है।

इसी का प्रमाण आदरणीय गरीबदास जी महाराज दे रहे हैं (अमृतवाणी राग कल्याण)

तीन चरण चिन्तामणी साहेब, शेष बदन पर छाए।
माता, पिता, कुल न बन्धु, ना किन्हें जननी जाये।।

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 5

तस्माद्विराळजायत विराजो अधि पूरूषः।
स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुरः।।5।।

तस्मात्—विराट्—अजायत—विराजः—अधि—पुरूषः
स—जातः—अत्यरिच्यत— पश्चात् —भूमिम्—अथः—पुरः।

अनुवाद :— (तस्मात्) उसके पश्चात् उस परमेश्वर सत्यपुरूष की शब्द शक्ति से (विराट्) विराट अर्थात् ब्रह्म, जिसे क्षर पुरूष व काल भी कहते हैं (अजायत) उत्पन्न हुआ है (पश्चात्) इसके बाद (विराजः) विराट पुरूष अर्थात् काल भगवान से (अधि) बड़े (पुरूषः) परमेश्वर ने (भूमिम्) पृथ्वी वाले लोक, काल ब्रह्म तथा परब्रह्म के लोक को (अत्यरिच्यत) अच्छी तरह रचा (अथः) फिर (पुरः) अन्य छोटे—छोटे लोक (स) उस पूर्ण परमेश्वर ने ही (जातः) उत्पन्न किया अर्थात् स्थापित किया।

भावार्थ :- उपरोक्त मंत्र 4 में वर्णित तीनों लोकों (अगमलोक, अलख लोक तथा सतलोक) की रचना के पश्चात पूर्ण परमात्मा ने ज्योति निरंजन (ब्रह्म) की उत्पत्ति की अर्थात् उसी सर्व शक्तिमान परमात्मा पूर्ण ब्रह्म कविर्देव (कबीर प्रभु) से ही विराट अर्थात् ब्रह्म (काल) की उत्पत्ति हुई। यही प्रमाण गीता अध्याय 3 मन्त्र 15 में है कि अक्षर पुरूष अर्थात् अविनाशी प्रभु से ब्रह्म उत्पन्न हुआ यही प्रमाण अर्थववेद काण्ड 4 अनुवाक 1 सुक्त 3 में है कि पूर्ण ब्रह्म से ब्रह्म की उत्पत्ति हुई उसी पूर्ण ब्रह्म ने (भूमिम्) पृथ्वी आदि छोटे-बड़े सर्व लोकों की रचना की। वह पूर्णब्रह्म इस विराट भगवान अर्थात् ब्रह्म से भी बड़ा है अर्थात् इसका भी मालिक है।

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 15

सप्तास्यासन्परिधयस्त्रिः सप्त समिधः कृताः।
देवा यद्यज्ञं तन्वाना अबध्नन्पुरूषं पशुम्।।15।।

सप्त—अस्य—आसन्—परिधयः—त्रिसप्त—समिधः—कृताः
देवा—यत्—यज्ञम्— तन्वानाः— अबध्नन्—पुरूषम्—पशुम्।

अनुवाद :— (सप्त) सात संख ब्रह्माण्ड तो परब्रह्म के तथा (त्रिसप्त) इक्कीस ब्रह्माण्ड काल ब्रह्म के (समिधः) कर्मदण्ड दुःख रूपी आग से दुःखी (कृताः) करने वाले (परिधयः) गोलाकार घेरा रूप सीमा में (आसन्) विद्यमान हैं (यत्) जो (पुरूषम्) पूर्ण परमात्मा की (यज्ञम्) विधिवत् धार्मिक कर्म अर्थात् पूजा करता है (पशुम्) बलि के पशु रूपी काल के जाल में कर्म बन्धन में बंधे (देवा) भक्तात्माओं को (तन्वानाः) काल के द्वारा रचे अर्थात् फैलाये पाप कर्म बंधन जाल से (अबध्नन्) बन्धन रहित करता है अर्थात् बन्दी छुड़ाने वाला बन्दी छोड़ है।

भावार्थ :- सात संख ब्रह्माण्ड परब्रह्म के तथा इक्कीस ब्रह्माण्ड ब्रह्म के हैं जिन में गोलाकार सीमा में बंद पाप कर्मों की आग में जल रहे प्राणियों को वास्तविक पूजा विधि बता कर सही उपासना करवाता है जिस कारण से बलि दिए जाने वाले पशु की तरह जन्म-मृत्यु के काल (ब्रह्म) के खाने के लिए तप्त शिला के कष्ट से पीड़ित भक्तात्माओं को काल के कर्म बन्धन के फैलाए जाल को तोड़कर बन्धन रहित करता है अर्थात् बंधन छुड़वाने वाला बन्दी छोड़ है। इसी का प्रमाण पवित्र यजुर्वेद अध्याय 5 मंत्र 32 में है कि कविरंघारिसि (कविर्) कबिर परमेश्वर (अंघ) पाप का (अरि) शत्रु (असि) है अर्थात् पाप विनाशक कबीर है। बम्भारिसि (बम्भारि) बन्धन का शत्रु अर्थात् बन्दी छोड़ कबीर परमेश्वर (असि) है।

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 16

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।
ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः।।16।।

यज्ञेन्—अयज्ञम—अ—यजन्त—देवाः—तानि—धर्माणि—प्रथमानि— आसन्—ते—ह—नाकम्— महिमानः— सचन्त— यत्र—पूर्वे—साध्याः—सन्ति देवाः।

अनुवाद :— जो (देवाः) निर्विकार देव स्वरूप भक्तात्माएं (अयज्ञम्) अधूरी गलत धार्मिक पूजा के स्थान पर (यज्ञेन) सत्य भक्ति धार्मिक कर्म के आधार पर (अयजन्त) पूजा करते हैं (तानि) वे (धर्माणि) धार्मिक शक्ति सम्पन्न (प्रथमानि) मुख्य अर्थात् उत्तम (आसन्) हैं (ते ह) वे ही वास्तव में (महिमानः) महान भक्ति शक्ति युक्त होकर (साध्याः) सफल भक्त जन (नाकम्) पूर्ण सुखदायक परमेश्वर को (सचन्त) भक्ति निमित कारण अर्थात् सत्भक्ति की कमाई से प्राप्त होते हैं, वे वहाँ चले जाते हैं। (यत्र) जहाँ पर (पूर्वे) पहले वाली सृष्टि के (देवाः) पापरहित देव स्वरूप भक्त आत्माएं (सन्ति) रहती हैं।

भावार्थ :- जो निर्विकार (जिन्होने मांस,शराब, तम्बाकू सेवन करना त्याग दिया है तथा अन्य बुराईयों से रहित है वे) देव स्वरूप भक्त आत्माएं शास्त्र विधि रहित पूजा को त्याग कर शास्त्रानुकूल साधना करते हैं वे भक्ति की कमाई से धनी होकर काल के ऋण से मुक्त होकर अपनी सत्य भक्ति की कमाई के कारण उस सर्व सुखदाई परमात्मा को प्राप्त करते हैं अर्थात् सत्यलोक में चले जाते हैं जहाँ पर सर्व प्रथम रची सृष्टि के देव स्वरूप अर्थात् पाप रहित हंस आत्माएं रहती हैं।

जैसे कुछ आत्माएं तो काल (ब्रह्म) के जाल में फंस कर यहाँ आ गई, कुछ परब्रह्म के साथ सात संख ब्रह्माण्डों में आ गई, फिर भी असंख्य आत्माएं जिनका विश्वास पूर्ण परमात्मा में अटल रहा, जो पतिव्रता पद से नहीं गिरी वे वहीं रह गई, इसलिए यहाँ वही वर्णन पवित्र वेदों ने भी सत्य बताया है। यही प्रमाण गीता अध्याय 8 के श्लोक संख्या 8 से 10 में वर्णन

है कि जो साधक पूर्ण परमात्मा की सतसाधना शास्त्रविधि अनुसार करता है वह भक्ति की कमाई के बल से उस पूर्ण परमात्मा को प्राप्त होता है अर्थात् उसके पास चला जाता है। इससे सिद्ध हुआ कि तीन प्रभु हैं ब्रह्म - परब्रह्म - पूर्णब्रह्म। इन्हीं को 1. ब्रह्म - ईश - क्षर पुरुष 2. परब्रह्म - ईश्वर - अक्षर पुरुष/अक्षर ब्रह्म तथा 3. पूर्ण ब्रह्म - परमेश्वर - परम अक्षर ब्रह्म - सतपुरुष आदि पर्यायवाची शब्दों से जाना जाता है।

यही प्रमाण ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मंत्र 17 से 20 में स्पष्ट है कि पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर परमेश्वर) शिशु रूप धारण करके प्रकट होता है तथा अपना निर्मल ज्ञान अर्थात् तत्वज्ञान (कविर्गीर्भिः) कबीर वाणी के द्वारा अपने अनुयाइयों को बोल-बोल कर वर्णन करता है। वह कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ब्रह्म (क्षर पुरुष) के धाम तथा परब्रह्म (अक्षर पुरुष) के धाम से भिन्न जो पूर्ण ब्रह्म (परम अक्षर पुरुष) का तीसरा ऋतधाम (सतलोक) है, उसमें आकार में विराजमान है तथा सतलोक से चौथा अनामी लोक है, उसमें भी यही कविर्देव (कबीर परमेश्वर) अनामी पुरुष रूप में मनुष्य सदृश आकार में विराजमान है।

''पवित्र श्रीमद्देवी महापुराण में सृष्टि रचना का प्रमाण''

''ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव के माता–पिता''

(दुर्गा और ब्रह्म के योग से ब्रह्मा, विष्णु और शिव का जन्म)

पवित्र श्रीमद्देवी महापुराण तीसरा स्कन्द अध्याय 1-3(गीताप्रैस गोरखपुर से प्रकाशित, अनुवादकर्ता श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार तथा चिमन लाल गोस्वामी जी, पृष्ठ नं. 114 से)

पृष्ठ नं. 114 से 118 तक विवरण है कि कितने ही आचार्य भवानी को सम्पूर्ण मनोरथ पूर्ण करने वाली बताते हैं। वह प्रकृति कहलाती है तथा ब्रह्म के साथ अभेद सम्बन्ध है। {जैसे पत्नी को अर्धांगनी भी कहते हैं अर्थात् दुर्गा ब्रह्म (काल) की पत्नी है।} एक ब्रह्माण्ड की सृष्टि रचना के विषय में राजा श्री परीक्षित के पूछने पर श्री व्यास जी ने बताया कि मैंने श्री नारद जी से पूछा था कि हे देवर्षे ! इस ब्रह्माण्ड की रचना कैसे हुई? मेरे इस प्रश्न के उत्तर में श्री नारद जी ने कहा कि मैंने अपने पिता श्री ब्रह्मा जी से पूछा था कि हे पिता श्री इस ब्रह्माण्ड की रचना आपने की या श्री विष्णु जी इसके रचयिता हैं या शिव जी ने रचा है? सच-सच बताने की कृपा करें। तब मेरे पूज्य पिता श्री ब्रह्मा जी ने बताया कि बेटा नारद, मैंने अपने आपको कमल के फूल पर बैठा पाया था, मुझे ज्ञान नहीं, इस अगाध जल में मैं कहाँ से उत्पन्न हो गया। एक हजार वर्ष तक पृथ्वी का अन्वेषण करता रहा, कहीं जल का ओर-छोर नहीं पाया। फिर आकाशवाणी हुई कि तप करो। एक

हजार वर्ष तक तप किया। फिर सृष्टि करने की आकाशवाणी हुई। इतने में मधु और कैटभ नाम के दो राक्षस आए, उनके भय से मैं कमल का डण्ठल पकड़ कर नीचे उतरा। वहाँ भगवान विष्णु जी शेष शैय्या पर अचेत पड़े थे। उनमें से एक स्त्री (प्रेतवत प्रविष्ट दुर्गा) निकली। वह आकाश में आभूषण पहने दिखाई देने लगी। तब भगवान विष्णु होश में आए। अब मैं तथा विष्णु जी दो थे। इतने में भगवान शंकर भी आ गए। देवी ने हमें विमान में बैठाया तथा ब्रह्म लोक में ले गई। वहाँ एक ब्रह्मा, एक विष्णु तथा एक शिव और देखा फिर एक देवी देखी,उसे देख कर विष्णु जी ने विवेक पूर्वक निम्न वर्णन किया (ब्रह्म काल ने भगवान विष्णु को चेतना प्रदान कर दी, उसको अपने बाल्यकाल की याद आई तब बचपन की कहानी सुनाई)।

पृष्ठ नं. 119-120 पर भगवान विष्णु जी ने श्री ब्रह्मा जी तथा श्री शिव जी से कहा कि यह हम तीनों की माता है, यही जगत् जननी प्रकृति देवी है। मैंने इस देवी को तब देखा था जब मैं छोटा सा बालक था, यह मुझे पालने में झुला रही थी।

तीसरा स्कन्ध पृष्ठ नं. 123 पर श्री विष्णु जी ने श्री दुर्गा जी की स्तुति करते हुए कहा - तुम शुद्ध स्वरूपा हो, यह सारा संसार तुम्हीं से उद्भासित हो रहा है, मैं (विष्णु), ब्रह्मा और शंकर हम सभी तुम्हारी कृपा से ही विद्यमान हैं। हमारा आविर्भाव (जन्म) और तिरोभाव (मृत्यु) हुआ करता है अर्थात् हम तीनों देव नाशवान हैं, केवल तुम ही नित्य (अविनाशी) हो, जगत जननी हो, प्रकृति देवी हो।

भगवान शंकर बोले - देवी यदि महाभाग विष्णु तुम्हीं से प्रकट (उत्पन्न) हुए हैं तो उनके बाद उत्पन्न होने वाले ब्रह्मा भी तुम्हारे ही बालक हुए। फिर मैं तमोगुणी लीला करने वाला शंकर क्या तुम्हारी संतान नहीं हुआ अर्थात् मुझे भी उत्पन्न करने वाली तुम्हीं हो।

विचार करें :- उपरोक्त विवरण से सिद्ध हुआ कि श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी, श्री शिव जी नाशवान हैं। मृत्युंजय (अजर-अमर) व सर्वेश्वर नहीं हैं तथा दुर्गा (प्रकृति) के पुत्र हैं तथा ब्रह्म (काल-सदाशिव) इनका पिता है।

तीसरा स्कन्ध पृष्ठ नं. 125 पर ब्रह्मा जी के पूछने पर कि हे माता! वेदों में जो ब्रह्म कहा है वह आप ही हैं या कोई अन्य प्रभु है? इसके उत्तर में यहाँ तो दुर्गा कह रही है कि मैं तथा ब्रह्म एक ही हैं। फिर इसी स्कन्ध अ. 6 के पृष्ठ नं. 129 पर कहा है कि अब मेरा कार्य सिद्ध करने के लिए विमान पर बैठ कर तुम लोग शीघ्र पधारो (जाओ)। कोई कठिन कार्य उपस्थित होने पर जब तुम मुझे याद करोगे, तब मैं सामने आ जाऊँगी। देवताओं मेरा (दुर्गा का) तथा ब्रह्म का ध्यान तुम्हें सदा करते रहना चाहिए। हम दोनों का स्मरण करते रहोगे तो तुम्हारे कार्य सिद्ध होने में तनिक भी संदेह नहीं है।

उपरोक्त व्याख्या से स्वसिद्ध है कि दुर्गा (प्रकृति) तथा ब्रह्म (काल) ही तीनों देवताओं के माता-पिता हैं तथा ब्रह्मा, विष्णु व शिव जी नाशवान हैं व

पूर्ण शक्ति युक्त नहीं हैं।

तीनों देवताओं (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी, श्री शिव जी) की शादी दुर्गा (प्रकृति देवी) ने की। पृष्ठ नं. 128-129 पर, तीसरे स्कन्ध में।

गीता अध्याय नं. 7 का श्लोक नं. 12

ये, च, एव, सात्विकाः, भावाः, राजसाः, तामसाः, च, ये,
मतः, एव, इति, तान्, विद्धि, न, तु, अहम्, तेषु, ते, मयि।।

अनुवाद : (च) और (एव) भी (ये) जो (सात्विकाः) सत्वगुण विष्णु जी से स्थिति (भावाः) भाव हैं और (ये) जो (राजसाः) रजोगुण ब्रह्मा जी से उत्पत्ति (च) तथा (तामसाः) तमोगुण शिव से संहार हैं (तान्) उन सबको तू (मतः,एव) मेरे द्वारा सुनियोजित नियमानुसार ही होने वाले हैं (इति) ऐसा (विद्धि) जान (तु) परन्तु वास्तवमें (तेषु) उनमें (अहम्) मैं और (ते) वे (मयि) मुझमें (न) नहीं हैं।

''पवित्र शिव महापुराण में सृष्टि रचना का प्रमाण''

(काल ब्रह्म व दुर्गा से विष्णु, ब्रह्मा व शिव की उत्पत्ति)

इसी का प्रमाण पवित्र श्री शिव पुराण गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित, अनुवादकर्ता श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार, इसके अध्याय 6 रूद्र संहिता, पृष्ठ नं. 100 पर कहा है कि जो मूर्ति रहित परब्रह्म है, उसी की मूर्ति भगवान सदाशिव है। इनके शरीर से एक शक्ति निकली, वह शक्ति अम्बिका, प्रकृति (दुर्गा), त्रिदेव जननी (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी को उत्पन्न करने वाली माता) कहलाई। जिसकी आठ भुजाऐं हैं। वे जो सदाशिव हैं, उन्हें शिव, शंभू और महेश्वर भी कहते हैं। (पृष्ठ नं. 101 पर) वे अपने सारे अंगों में भस्म रमाये रहते हैं। उन काल रूपी ब्रह्म ने एक शिवलोक नामक क्षेत्र का निर्माण किया। फिर दोनों ने पति-पत्नी का व्यवहार किया जिससे एक पुत्र उत्पन्न हुआ। उसका नाम विष्णु रखा (शिव पुराण पृष्ठ नं. 102)।

फिर रूद्र संहिता अध्याय नं. 7 पृष्ठ नं. 103 पर ब्रह्मा जी ने कहा कि मेरी उत्पत्ति भी भगवान सदाशिव (ब्रह्म-काल) तथा प्रकृति (दुर्गा) के संयोग से अर्थात् पति-पत्नी के व्यवहार से ही हुई। फिर मुझे बेहोश कर दिया।

फिर रूद्र संहिता अध्याय नं. 9 पृष्ठ नं. 110 पर कहा है कि इस प्रकार ब्रह्मा, विष्णु तथा रूद्र इन तीनों देवताओं में गुण हैं, परन्तु शिव (काल-ब्रह्म) गुणातीत माने गए हैं।

यहाँ पर चार सिद्ध हुए अर्थात् सदाशिव (काल-ब्रह्म) व प्रकृति (दुर्गा) से ही ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव उत्पन्न हुए हैं। तीनों भगवानों (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी) की माता जी श्री दुर्गा जी तथा पिता जी श्री ज्योति निरंजन (ब्रह्म) है। यही तीनों प्रभु रजगुण-ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण-शिव जी हैं।

''पवित्र श्रीमद्भगवत गीता जी में सृष्टि रचना का प्रमाण''

इसी का प्रमाण पवित्र गीता जी अध्याय 14 श्लोक 3 से 5 तक है। ब्रह्म (काल) कह रहा है कि प्रकृति (दुर्गा) तो मेरी पत्नी है, मैं ब्रह्म (काल) इसका पति हूँ। हम दोनों के संयोग से सर्व प्राणियों सहित तीनों गुणों (रजगुण - ब्रह्मा जी, सतगुण - विष्णु जी, तमगुण - शिवजी) की उत्पत्ति हुई है। मैं (ब्रह्म) सर्व प्राणियों का पिता हूँ तथा प्रकृति (दुर्गा) इनकी माता है। मैं इसके उदर में बीज स्थापना करता हूँ जिससे सर्व प्राणियों की उत्पत्ति होती है। प्रकृति (दुर्गा) से उत्पन्न तीनों गुण (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) जीव को कर्म आधार से शरीर में बांधते हैं। यही प्रमाण अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 तथा 16, 17 में भी है।

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 1

ऊर्ध्वमूलम्, अधःशाखम्, अश्वत्थम्, प्राहुः, अव्ययम्,
छन्दांसि, यस्य, पर्णानि, यः, तम्, वेद, सः, वेदवित् ।।

अनुवाद : (ऊर्ध्वमूलम्) ऊपर को पूर्ण परमात्मा आदि पुरुष परमेश्वर रूपी जड़ वाला (अधःशाखम्) नीचे को तीनों गुण अर्थात् रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु व तमगुण शिव रूपी शाखा वाला (अव्ययम्) अविनाशी (अश्वत्थम्) विस्तारित पीपल का वृक्ष है, (यस्य) जिसके (छन्दांसि) जैसे वेद में छन्द है ऐसे संसार रूपी वृक्ष के भी विभाग छोटे—छोटे हिस्से टहनियाँ व (पर्णानि) पत्ते (प्राहुः) कहे हैं (तम्) उस संसाररूप वृक्षको (यः) जो (वेद) इसे विस्तार से जानता है (सः) वह (वेदवित्) पूर्ण ज्ञानी अर्थात् तत्वदर्शी है।

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 2

अधः, च, ऊर्ध्वम्, प्रसृताः, तस्य, शाखाः, गुणप्रवृद्धाः,
विषयप्रवालाः, अधः, च, मूलानि, अनुसन्ततानि, कर्मानुबन्धीनि, मनुष्यलोके ।।

अनुवाद :— (तस्य) उस वृक्ष की (अधः) नीचे (च) और (ऊर्ध्वम्) ऊपर (गुणप्रवृद्धाः) तीनों गुणों ब्रह्मा—रजगुण, विष्णु—सतगुण, शिव—तमगुण रूपी (प्रसृता) फैली हुई (विषयप्रवालाः) विकार— काम क्रोध, मोह, लोभ अहंकार रूपी कोपल (शाखाः) डाली ब्रह्मा, विष्णु, शिव (कर्मानुबन्धीनि) जीवको कर्मों में बाँधने की (मूलानि) जड़ें अर्थात् मुख्य कारण हैं (च) तथा (मनुष्यलोके) मनुष्यलोक—अर्थात् पृथ्वी लोक में (अधः) नीचे—नरक, चौरासी लाख जूनियों में (ऊर्ध्वम्) ऊपर स्वर्ग लोक आदि में (अनुसन्ततानि) व्यवस्थित किए हुए हैं।

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 3

न, रूपम्, अस्य, इह, तथा, उपलभ्यते, न, अन्तः, न, च, आदिः, न, च,
सम्प्रतिष्ठा, अश्वत्थम्, एनम्, सुविरूढमूलम्, असंगशस्त्रेण, दृढेन, छित्वा ।।

अनुवाद : (अस्य) इस रचना का (न) नहीं (आदिः) शुरूवात (च) तथा (न) नहीं (अन्तः) अन्त है (न) नहीं (तथा) वैसा (रूपम्) स्वरूप (उपलभ्यते) पाया जाता है (च) तथा (इह) यहाँ विचार काल में अर्थात् मेरे द्वारा दिया जा रहा गीता ज्ञान में पूर्ण जानकारी मुझे भी (न) नहीं है (सम्प्रतिष्ठा) क्योंकि सर्वब्रह्माण्डों की रचना की अच्छी तरह स्थिति का मुझे भी ज्ञान नहीं है (एनम्) इस (सुविरूढमूलम्) अच्छी तरह स्थाई स्थिति वाला (अश्वत्थम्) मजबूत स्वरूपवाले संसार रूपी वृक्ष के ज्ञान को (असंङ्गशस्त्रेण) पूर्ण ज्ञान रूपी (दृढेन्) दृढ़ सूक्षम वेद अर्थात् तत्वज्ञान के द्वारा जानकर (छित्वा) काटकर अर्थात् निरंजन की भक्ति को क्षणिक अर्थात् क्षण भंगुर जानकर ब्रह्मा, विष्णु, शिव, ब्रह्म तथा परब्रह्म से भी आगे पूर्णब्रह्म की तलाश करनी चाहिए।

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 4

ततः, पदम्, तत्, परिमार्गितव्यम्, यस्मिन्, गताः, न, निवर्तन्ति, भूयः,
तम्, एव्, च, आद्यम्, पुरुषम्, प्रपद्ये, यतः, प्रवृतिः, प्रसृता, पुराणी।।

अनुवाद : जब तत्वदर्शी संत मिल जाए (ततः) इसके पश्चात् (तत्) उस परमात्मा के (पदम्) पद स्थान अर्थात् सतलोक को (परिमार्गितव्यम्) भली भाँति खोजना चाहिए (यस्मिन्) जिसमें (गताः) गए हुए साधक (भूयः) फिर (न, निवर्तन्ति) लौटकर संसार में नहीं आते (च) और (यतः) जिस परमात्मा—परम अक्षर ब्रह्म से (पुराणी) आदि (प्रवृतिः) रचना—सृष्टि (प्रसृता) उत्पन्न हुई है (तम्) अज्ञात (आद्यम्) आदि यम अर्थात् मैं काल निरंजन (पुरुषम्) पूर्ण परमात्मा की (एव) ही (प्रपद्ये) मैं शरण में हूँ तथा उसी की पूजा करता हूँ।

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 16

द्वौ, इमौ, पुरुषौ, लोके, क्षरः, च, अक्षरः, एव, च,
क्षरः, सर्वाणि, भूतानि, कूटस्थः, अक्षरः, उच्यते।।

अनुवाद : (लोके) इस संसारमें (द्वौ) दो प्रकारके (क्षरः) नाशवान् (च) और (अक्षरः) अविनाशी (पुरुषौ) भगवान हैं (एव) इसी प्रकार (इमौ) इन दोनों प्रभुओं के लोकों में (सर्वाणि) सम्पूर्ण (भूतानि) प्राणियों के शरीर तो (क्षरः) नाशवान् (च) और (कूटस्थः) जीवात्मा (अक्षरः) अविनाशी (उच्यते) कहा जाता है।

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 17

उत्तमः, पुरुषः, तु, अन्यः, परमात्मा, इति, उदाहृतः,
यः, लोकत्रयम् आविश्य, बिभर्ति, अव्ययः, ईश्वरः।।

अनुवाद : (उत्तमः) उत्तम (पुरुषः) प्रभु (तु) तो (अन्यः) उपरोक्त दोनों प्रभुओं ''क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष'' से भी अन्य ही है (इति) यह वास्तव में (परमात्मा) परमात्मा (उदाहृतः) कहा गया है (यः) जो (लोकत्रयम्) तीनों लोकों में (आविश्य) प्रवेश करके (बिभर्ति) सबका धारण पोषण करता है एवं (अव्ययः)

अविनाशी (ईश्वरः) ईश्वर (प्रभुओं में श्रेष्ठ अर्थात् समर्थ प्रभु) है।

भावार्थ - गीता ज्ञान दाता प्रभु ने केवल इतना ही बताया है कि यह संसार उल्टे लटके वृक्ष तुल्य जानो। ऊपर जड़ें (मूल) तो पूर्ण परमात्मा है। नीचे टहनीयाँ आदि अन्य हिस्से जानों। इस संसार रूपी वृक्ष के प्रत्येक भाग का भिन्न-भिन्न विवरण जो संत जानता है वह तत्वदर्शी संत है जिसके विषय में गीता अध्याय 4 श्लोक नं. 34 में कहा है। गीता अध्याय 15 श्लोक नं. 2-3 में केवल इतना ही बताया है कि तीन गुण रूपी शाखा हैं। यहां विचारकाल में अर्थात् गीता में आपको मैं (गीता ज्ञान दाता) पूर्ण जानकारी नहीं दे सकता क्योंकि मुझे इस संसार की रचना के आदि व अंत का ज्ञान नहीं है। उस के लिए गीता अध्याय 4 श्लोक नं. 34 में कहा है कि किसी तत्त्वदर्शी संत से उस पूर्ण परमात्मा का ज्ञान जानों इस गीता अध्याय 15 श्लोक 1 में उस तत्वदर्शी संत की पहचान बताई है कि वह संसार रूपी वृक्ष के प्रत्येक भाग का ज्ञान कराएगा। उसी से पूछो। गीता अध्याय 15 के श्लोक 4 में कहा है कि उस तत्वदर्शी संत के मिल जाने के पश्चात् उस परमपद परमेश्वर की खोज करनी चाहिए अर्थात् उस तत्वदर्शी संत के बताए अनुसार साधना करनी चाहिए जिससे पूर्ण मोक्ष (अनादि मोक्ष) प्राप्त होता है। गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में स्पष्ट किया है कि तीन प्रभु हैं एक क्षर पुरूष (ब्रह्म) दूसरा अक्षर पुरूष (परब्रह्म) तीसरा परम अक्षर पुरूष (पूर्ण ब्रह्म)। क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष वास्तव में अविनाशी नहीं हैं। वह अविनाशी परमात्मा तो इन दोनों से अन्य ही है। वही तीनों लोकों में प्रवेश करके सर्व का धारण पोषण करता है।

उपरोक्त श्रीमद्भगवत गीता अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 तथा 16-17 में यह प्रमाणित हुआ कि उल्टे लटके हुए संसार रूपी वृक्ष की मूल अर्थात् जड़ तो परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् पूर्ण ब्रह्म है जिससे पूर्ण वृक्ष का पालन होता है तथा वृक्ष का जो हिस्सा पृथ्वी के तुरन्त बाहर जमीन के साथ दिखाई देता है वह तना होता है उसे अक्षर पुरुष अर्थात् परब्रह्म जानों। उस तने से ऊपर चल कर अन्य मोटी डार निकलती है उनमें से एक डार को ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरुष जानों तथा उसी डार से अन्य तीन शाखाएं निकलती हैं उन्हें ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव जानों तथा शाखाओं से आगे पत्ते रूप में सांसारिक प्राणी जानों। उपरोक्त गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में स्पष्ट है कि क्षर पुरुष (ब्रह्म) तथा अक्षर पुरुष (परब्रह्म) तथा इन दोनों के लोकों में जितने प्राणी हैं उनके स्थूल शरीर तो नाशवान हैं तथा जीवात्मा अविनाशी है अर्थात् उपरोक्त दोनों प्रभु व इनके अन्तर्गत सर्व प्राणी नाशवान हैं। भले ही अक्षर पुरुष (परब्रह्म) को अविनाशी कहा है परन्तु वास्तव में अविनाशी परमात्मा तो इन दोनों से अन्य है। वह तीनों लोकों में प्रवेश करके सबका पालन-पोषण करता है। उपरोक्त विवरण में तीन प्रभुओं का भिन्न-भिन्न विवरण दिया है।

"पवित्र बाईबल तथा पवित्र कुरान शरीफ में सृष्टि रचना का प्रमाण"

इसी का प्रमाण पवित्र बाईबल में तथा पवित्र कुरान शरीफ में भी है। कुरान शरीफ में पवित्र बाईबल का भी ज्ञान है, इसलिए इन दोनों पवित्र सद्ग्रन्थों ने मिल-जुल कर प्रमाणित किया है कि कौन तथा कैसा है सृष्टि रचनहार तथा उसका वास्तविक नाम क्या है।

पवित्र बाईबल (उत्पत्ति ग्रन्थ पृष्ठ नं. 2 पर, अ. 1:20 - 2:5 पर)

छटवां दिन :– प्राणी और मनुष्य :

अन्य प्राणियों की रचना करके 26. फिर परमेश्वर ने कहा, हम मनुष्य को अपने स्वरूप के अनुसार अपनी समानता में बनाएं, जो सर्व प्राणियों को काबू रखेगा। 27. तब परमेश्वर ने मनुष्य को अपने स्वरूप के अनुसार उत्पन्न किया, अपने ही स्वरूप के अनुसार परमेश्वर ने उसको उत्पन्न किया, नर और नारी करके मनुष्यों की सृष्टि की।

29. प्रभु ने मनुष्यों के खाने के लिए जितने बीज वाले छोटे पेड़ तथा जितने पेड़ों में बीज वाले फल होते हैं वे भोजन के लिए प्रदान किए हैं, (माँस खाना नहीं कहा है।)

सातवां दिन :– विश्राम का दिन :

परमेश्वर ने छः दिन में सर्व सृष्टि की उत्पत्ति की तथा सातवें दिन विश्राम किया।

पवित्र बाईबल ने सिद्ध कर दिया कि परमात्मा मानव सदृश शरीर में है, जिसने छः दिन में सर्व सृष्टि की रचना की तथा फिर विश्राम किया।

पवित्र कुरान शरीफ (सुरत फुर्कानि 25, आयत नं. 52, 58, 59)

आयत 52 :– फला तुतिअल् – काफिरन् व जहिद्हुम बिही जिहादन् कबीरा (कबीरन्)।।52।

इसका भावार्थ है कि हजरत मुहम्मद जी का खुदा (प्रभु) कह रहा है कि हे पैगम्बर! आप काफिरों (जो एक प्रभु की भक्ति त्याग कर अन्य देवी–देवताओं तथा मूर्ति आदि की पूजा करते हैं) का कहा मत मानना, क्योंकि वे लोग कबीर को पूर्ण परमात्मा नहीं मानते। आप मेरे द्वारा दिए इस कुरान के ज्ञान के आधार पर अटल रहना कि कबीर ही पूर्ण प्रभु है तथा कबीर अल्लाह के लिए संघर्ष करना (लड़ना नहीं) अर्थात् अडिग रहना।

आयत 58 :– व तवक्कल् अलल् – हय्यिल्लजी ला यमूतु व सब्बिह् बिहम्दिही व कफा बिही बिजुनूबि अिबादिही खबीरा (कबीरा)।।58।

भावार्थ है कि हजरत मुहम्मद जी जिसे अपना प्रभु मानते हैं वह अल्लाह (प्रभु) किसी और पूर्ण प्रभु की तरफ संकेत कर रहा है कि ऐ पैगम्बर उस कबीर परमात्मा पर विश्वास रख जो तुझे जिंदा महात्मा के रूप में आकर मिला था। वह कभी मरने वाला नहीं है अर्थात् वास्तव में अविनाशी है। तारीफ के साथ उसकी पाकी (पवित्र महिमा) का गुणगान किए जा, वह

कबीर अल्लाह (कविर्देव) पूजा के योग्य है तथा अपने उपासकों के सर्व पापों को विनाश करने वाला है।

आयत 59 :– अल्ल्जी खलकस्समावाति वल्अर्ज व मा बैनहुमा फी सित्तति अय्यामिन् सुम्मस्तवा अलल्अर्शि अर्रह्मानु फस्अल् बिही खबीरन्(कबीरन्)।।59।।

भावार्थ है कि हजरत मुहम्मद को कुरान शरीफ बोलने वाला प्रभु (अल्लाह) कह रहा है कि वह कबीर प्रभु वही है जिसने जमीन तथा आसमान के बीच में जो भी विद्यमान है सर्व सृष्टि की रचना छः दिन में की तथा सातवें दिन ऊपर अपने सत्यलोक में सिंहासन पर विराजमान हो (बैठ) गया। उसके विषय में जानकारी किसी (बाखबर) तत्वदर्शी संत से पूछो। उस पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति कैसे होगी तथा वास्तविक ज्ञान तो किसी तत्वदर्शी संत (बाखबर) से पूछो, मैं नहीं जानता।

उपरोक्त दोनों पवित्र (ईसाई तथा मुसलमान) धर्मों के पवित्र शास्त्रों ने भी मिल-जुल कर प्रमाणित कर दिया कि सर्व सृष्टि रचनहार, सर्व पाप विनाशक, सर्व शक्तिमान, अविनाशी परमात्मा मानव सदृश शरीर में आकार में है तथा सत्यलोक में रहता है। उसका नाम कबीर है, उसी को अल्लाहु अकबिरू भी कहते हैं।३

आदरणीय धर्मदास जी ने पूज्य कबीर प्रभु से पूछा कि हे सर्वशक्तिमान! आज तक यह तत्वज्ञान किसी ने नहीं बताया, वेदों के मर्मज्ञ ज्ञानियों ने भी नहीं बताया। इससे सिद्ध है कि चारों पवित्र वेद तथा चारों पवित्र कतेब (कुरान शरीफ आदि) झूठे हैं। पूर्ण परमात्मा ने कहा :-

कबीर, बेद कतेब झूठे नहीं भाई, झूठे हैं जो समझे नाहिं।

भावार्थ है कि चारों पवित्र वेद (ऋग्वेद - अथर्ववेद - यजुर्वेद - सामवेद) तथा पवित्र चारों कतेब (कुरान शरीफ - जबूर - तौरात - इंजिल) गलत नहीं हैं। परन्तु जो इनको नहीं समझ पाए वे नादान हैं।

''पूज्य कबीर परमेश्वर (कविर् देव) जी की अमृतवाणी में सृष्टि रचना''

➢ विशेष :- निम्न अमृतवाणी सन् 1403 से {जब पूज्य कविर्देव (कबीर परमेश्वर) लीलामय शरीर में पाँच वर्ष के हुए} सन् 1518 {जब कविर्देव (कबीर परमेश्वर) मगहर स्थान से सशरीर सतलोक गए} के बीच में लगभग 600 वर्ष पूर्व परम पूज्य कबीर परमेश्वर (कविर्देव) जी द्वारा अपने निजी सेवक (दास भक्त) आदरणीय धर्मदास साहेब जी को सुनाई थी तथा धनी धर्मदास साहेब जी ने लिपिबद्ध की थी। परन्तु उस समय के पवित्र हिन्दुओं तथा मुसलमानों के नादान गुरुओं (नीम-हकीमों) ने कहा कि यह धाणक (जुलाहा) कबीर झूठा है। किसी भी सद् ग्रन्थ में श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी के माता-पिता का नाम नहीं है। ये तीनों प्रभु अविनाशी

हैं इनका जन्म-मृत्यु नहीं होता। न ही पवित्र वेदों व पवित्र कुरान शरीफ आदि में कबीर परमेश्वर का प्रमाण है तथा परमात्मा को निराकार लिखा है। हम प्रतिदिन पढ़ते हैं। भोली आत्माओं ने उन विचक्षणों (चतुर गुरुओं) पर विश्वास कर लिया कि सचमुच यह कबीर धाणक तो अशिक्षित है तथा गुरु जी शिक्षित हैं, सत्य कह रहे होंगे। आज वही सच्चाई प्रकाश में आ रही है तथा अपने सर्व पवित्र धर्मों के पवित्र सद्ग्रन्थ साक्षी हैं। इससे सिद्ध है कि पूर्ण परमेश्वर, सर्व सृष्टि रचनहार, कुल करतार तथा सर्वज्ञ कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ही है जो काशी (बनारस) में कमल के फूल पर प्रकट हुए तथा 120 वर्ष तक वास्तविक तेजोमय शरीर के ऊपर मानव सदृश शरीर हल्के तेज का बना कर रहे तथा अपने द्वारा रची सृष्टि का ठीक-ठीक (वास्तविक तत्त्व) ज्ञान देकर सशरीर सतलोक चले गए।

कृपया पाठक पढ़ें निम्न अमृतवाणी परमेश्वर कबीर साहेब जी द्वारा उच्चारित :-

धर्मदास यह जग बौराना। कोई न जाने पद निरवाना।।1।।
यहि कारन मैं कथा पसारा। जगसे कहियो राम नियारा।।
यही ज्ञान जग जीव सुनाओ। सब जीवों का भरम नशाओ।।2।।
भरम गये जग वेद पुराना। आदि राम का भेद न जाना।।3।।
राम राम सब जगत बखाने। आदि राम कोई बिरला जाने।।4।।
ज्ञानी सुने सो हिरदै लगाई। मूर्ख सुने सो गम्य ना पाई।।5।।
अब मैं तुमसे कहूँ चिताई। त्रिदेवन की उत्पत्ति भाई।।6।।
कुछ संक्षेप कहूँ गौहराई। सब संशय तुम्हरे मिट जाई।।7।।
माँ अष्टंगी पिता निरंजन। वे जम दारुण वंशन अंजन।।8।।
पहिले कीन्ह निरंजन राई। पीछे से माया उपजाई।।9।।
माया रूप देख अति शोभा। देव निरंजन तन मन लोभा।।10।।
कामदेव धर्मराय सत्ताये। देवी को तुरतही धर खाये।।11।।
पेट से देवी करी पुकारा। साहब मेरा करो उबारा।।12।।
टेर सुनी तब हम तहाँ आये। अष्टंगी को बंद छुड़ाये।।13।।
सतलोक में कीन्हा दुराचारि, काल निरंजन दिन्हा निकारि।।14।।
माया समेत दिया भगाई, सोलह संख कोस दूरी पर आई।।15।।
अष्टंगी और काल अब दोई, मंद कर्म से गए बिगोई।।16।।
धर्मराय को हिकमत कीन्हा। नख रेखा से भगकर लीन्हा।।17।।
धर्मराय किन्हाँ भोग विलासा। माया को रही तब आसा।।18।।
तीन पुत्र अष्टंगी जाये। ब्रह्मा विष्णु शिव नाम धराये।।19।।
तीन देव विस्तार चलाये। इनमें यह जग धोखा खाये।।20।।
पुरुष गम्य कैसे को पावै। काल निरंजन जग भरमावै।।21।।

तीन लोक अपने सुत दीन्हा। सुन्न निरंजन बासा लीन्हा।।22।।
अलख निरंजन सुन्न ठिकाना। ब्रह्मा विष्णु शिव भेद न जाना।।23।।
तीन देव सो उनको धावें। निरंजन का वे पार ना पावें।।24।।
अलख निरंजन बड़ा बटपारा। तीन लोक जिव कीन्ह अहारा।।25।।
ब्रह्मा विष्णु शिव नहीं बचाये। सकल खाय पुन धूर उड़ाये।।26।।
तिनके सुत हैं तीनों देवा। आंधर जीव करत हैं सेवा।।27।।
अकाल पुरुष काहू नहीं चीन्हां। काल पाय सबही गह लीन्हां।।28।।
ब्रह्म काल सकल जग जाने। आदि ब्रह्म को ना पहिचाने।।29।।
तीनों देव और औतारा। ताको भजे सकल संसारा।।30।।
तीनों गुण का यह विस्तारा। धर्मदास मैं कहों पुकारा।।31।।
गुण तीनों की भक्ति में, भूल परो संसार।।32।।
कहै कबीर निज नाम बिन, कैसे उतरैं पार।।33।।

उपरोक्त अमृतवाणी में परमेश्वर कबीर साहेब जी ने अपने निजी सेवक श्री धर्मदास जी से कहा था कि धर्मदास यह सर्व संसार तत्त्वज्ञान के अभाव से विचलित है। किसी को पूर्ण मोक्ष मार्ग तथा पूर्ण सृष्टि रचना का ज्ञान नहीं है। इसलिए मैं आपको मेरे द्वारा रची सृष्टि की कथा सुनाता हूँ। बुद्धि मान व्यक्ति तो तुरंत समझ जायेंगे। परन्तु जो सर्व प्रमाणों को देखकर भी नहीं मानेंगे तो वे नादान प्राणी काल प्रभाव से प्रभावित हैं, वे भक्ति योग्य नहीं। अब मैं बताता हूँ तीनों (देवों) देवताओं (ब्रह्मा जी, विष्णु जी तथा शिव जी) की उत्पत्ति कैसे हुई? इनकी माता जी तो अष्टंगी (दुर्गा) है तथा पिता ज्योति निरंजन (ब्रह्म, काल) है। पहले ब्रह्म की उत्पत्ति अण्डे से हुई। फिर दुर्गा की उत्पत्ति हुई। दुर्गा के रूप पर आसक्त होकर काल (ब्रह्म) ने गलती (छेड़-छाड़) की, तब दुर्गा (प्रकृति) ने इसके पेट में शरण ली। मैं वहाँ गया जहाँ ज्योति निरंजन काल था। तब भवानी को ब्रह्म के उदर से निकाल कर इक्कीस ब्रह्मण्ड समेत सोलह (16) संख कोस की दूरी पर भेज दिया। ज्योति निरंजन (धर्मराय) ने प्रकृति देवी (दुर्गा) के साथ भोग-विलास किया। इन दोनों के संयोग से तीनों गुणों (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी) की उत्पत्ति हुई। इन्हीं तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिव जी) की ही साधना करके सर्व प्राणी काल जाल में फंसे हैं। जब तक वास्तविक मंत्र नहीं मिलेगा, पूर्ण मोक्ष कैसे होगा?

➢ विशेष :- पाठकजन विचार करें कि श्री ब्रह्मा जी श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी की स्थिति अविनाशी बताई गई थी। सर्व हिन्दू समाज अभी तक तीनों परमात्माओं को अजर, अमर व जन्म-मृत्यु रहित मानते रहे जबकि ये तीनों नाशवान हैं। इन के पिता काल रूपी ब्रह्म तथा माता दुर्गा (प्रकृति/अष्टांगी) हैं जैसा आप ने पूर्व प्रमाणों में पढ़ा यह ज्ञान अपने शास्त्रों में भी विद्यमान है

परन्तु हिन्दू समाज के कलयुगी गुरूओं, ऋषियों, सन्तों को ज्ञान नहीं। जो अध्यापक पाठ्यक्रम (सलेबस) से ही अपरिचित है वह अध्यापक ठीक नहीं (वह विद्वान नही) है, विद्यार्थियों के भविष्य का शत्रु है। इसी प्रकार जिन गुरूओं को अभी तक यह नहीं पता कि श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव जी के माता-पिता कौन हैं? तो वे गुरू, ऋषि,सन्त ज्ञान हीन हैं। जिस कारण से सर्व भक्त समाज को शास्त्र विरूद्ध ज्ञान (लोक वेद अर्थात् दन्त कथा) सुना कर अज्ञान से परिपूर्ण कर दिया। शास्त्रविधि विरूद्ध भक्तिसाधना करा के परमात्मा के वास्तविक लाभ (पूर्ण मोक्ष) से वंचित रखा सबका मानव जन्म नष्ट करा दिया क्योंकि श्री मद्भगवत गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में यही प्रमाण है कि जो शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण (पूजा) करता है। उसे कोई लाभ नहीं होता पूर्ण परमात्मा कबीर जी ने पाँच वर्ष की लीलामय आयु में सन् 1403 से ही सर्व शास्त्रों युक्त ज्ञान अपनी अमृतवाणी (कविरवाणी) में बताना प्रारम्भ किया था। परन्तु उन अज्ञानी गुरूओं ने यह ज्ञान भक्त समाज तक नहीं जाने दिया। जो वर्तमान में सर्व सद्ग्रन्थों से स्पष्ट हो रहा है। इससे सिद्ध है कि कर्विदेव (कबीर प्रभु) तत्त्वदर्शी सन्त रूप में स्वयं पूर्ण परमात्मा ही आए थे।

“आदरणीय गरीबदास साहेब जी की अमृतवाणी में सृष्टि रचना का प्रमाण”

आदि रमैणी (अमरग्रन्थ पृष्ठ नं. 690 से 692 तक)

आदि रमैंणी अदली सारा। जा दिन होते धुंधुंकारा।।1।।
सतपुरुष कीन्हा प्रकाशा। हम होते तखत कबीर खवासा।।2।।
मन मोहिनी सिरजी माया। सतपुरुष एक ख्याल बनाया।।3।।
धर्मराय सिरजे दरबानी। चौसठ जुगतप सेवा ठांनी।।4।।
पुरुष पृथिवी जाकूं दीन्ही। राज करो देवा आधीनी।।5।।
ब्रह्मण्ड इकीस राज तुम्ह दीन्हा। मन की इच्छा सब जुग लीन्हा।।6।।
माया मूल रूप एक छाजा। मोहि लिये जिनहूँ धर्मराजा।।7।।
धर्म का मन चंचल चित धार्‌या। मन माया का रूप बिचारा।।8।।
चंचल चेरी चपल चिरागा। या के परसे सरबस जागा।।9।।
धर्मराय कीया मन का भागी। विषय वासना संग से जागी।।10।।
आदि पुरुष अदली अनरागी। धर्मराय दिया दिल सें त्यागी।।11।।
पुरुष लोक सें दीया ढहाही। अगम दीप चलि आये भाई।।12।।
सहज दास जिस दीप रहंता। कारण कौंन–कौंन कुल पंथा।।13।।
धर्मराय बोले दरबानी। सुनो सहज दास ब्रह्मज्ञानी।।14।।
चौसठ जुग हम सेवा कीन्ही। पुरुष पृथिवी हम कूं दीन्ही।।15।।

चंचल रूप भया मन बौरा। मनमोहिनी ठगिया भौंरा।।16।।
सतपुरुष के ना मन भाये। पुरुष लोक से हम चलि आये।।17।।
अगर दीप सुनत बड़भागी। सहज दास मेटो मन पागी।।18।।
बोले सहजदास दिल दानी। हम तो चाकर सत सहदानी।।19।।
सतपुरुष सें अरज गुजारूं। जब तुम्हारा बिवाण उतारूं।।20।।
सहज दास को कीया पीयाना। सत्यलोक लीया प्रवाना।।21।।
सतपुरुष साहिब सरबंगी। अविगत अदली अचल अभंगी।।22।।
धर्मराय तुम्हरा दरबानी। अगर दीप चलि गये प्रानी।।23।।
कौंन हुकम करी अरज अवाजा। कहां पठावौ उस धर्मराजा।।24।।
भई अवाज अदली एक साचा। विषय लोक जा तीन्यूं बाचा।।25।।
सहज विमाँन चले अधिकाई। छिन में अगर दीप चलि आई।।26।।
हमतो अरज करी अनरागी। तुम्ह विषय लोक जावो बड़भागी।।27।।
धर्मराय के चले विमाना। मानसरोवर आये प्राना।।28।
मानसरोवर रहन न पाये। दरै कबीरा थांना लाये।।29।।
बंकनाल की विषमी बाटी। तहां कबीरा रोकी घाटी।।30।।
इन पाँचों मिलि जगत बंधाना। लख चौरासी जीव संताना।।31।।
ब्रह्मा विष्णु महेश्वर माया। धर्मराय का राज पठाया।।32।।
यौह खोखा पुर झूठी बाजी। भिसति बैकुण्ठ दगासी साजी।।33।।
कृतिम जीव भुलांनें भाई। निज घर की तो खबरि न पाई।।34।।
सवा लाख उपजें नित हंसा। एक लाख विनशें नित अंसा।।35।।
उपति खपति प्रलय फेरी। हर्ष शोक जौंरा जम जेरी।।36।।
पाँचों तत्त्व हैं प्रलय माँही। सत्त्वगुण रजगुण तमगुण झांई।।37।।
आठों अंग मिली है माया। पिण्ड ब्रह्मण्ड सकल भरमाया।।38।।
या में सुरति शब्द की डोरी। पिण्ड ब्रह्मण्ड लगी है खोरी।।39।।
श्वासा पारस मन गह राखो। खोल्हि कपाट अमीरस चाखो।।40।।
सुनाऊं हंस शब्द सुन दासा। अगम दीप है अग है बासा।।41।।
भवसागर जम दण्ड जमाना। धर्मराय का है तलबांना।।42।।
पाँचों ऊपर पद की नगरी। बाट बिहंगम बंकी डगरी।।43।।
हमरा धर्मराय सों दावा। भवसागर में जीव भरमावा।।44।।
हम तो कहैं अगम की बानी। जहाँ अविगत अदली आप बिनानी।।45।।
बंदी छोड़ हमारा नामं। अजर अमर है अस्थीर ठामं।।46।।
जुगन जुगन हम कहते आये। जम जौंरा सें हंस छुटाये।।47।।
जो कोई मानें शब्द हमारा। भवसागर नहीं भरमें धारा।।48।।
या में सुरति शब्द का लेखा। तन अंदर मन कहो कीन्ही देखा।।49।।
दास गरीब अगम की बानी। खोजा हंसा शब्द सहदानी।।50।।

उपरोक्त अमृतवाणी का भावार्थ है कि आदरणीय गरीबदास साहेब जी ने भी यही कहा कि यहाँ पहले केवल अंधकार था तथा पूर्ण परमात्मा कबीर साहेब जी सत्यलोक में तख्त (सिंहासन) पर विराजमान थे। हम वहाँ चाकर थे। परमात्मा ने ज्योति निरंजन को उत्पन्न किया। फिर उसके तप के प्रतिफल में इक्कीस ब्रह्मण्ड प्रदान किए। फिर माया (प्रकृति) की उत्पत्ति की। युवा दुर्गा के रूप पर मोहित होकर ज्योति निरंजन (ब्रह्म) ने दुर्गा (प्रकृति) से बलात्कार करने की चेष्टा की। ब्रह्म को उसकी सजा मिली। उसे सत्यलोक से निकाल दिया तथा शॉप लगा कि एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों का प्रतिदिन आहार करेगा, सवा लाख उत्पन्न करेगा। यहाँ सर्व प्राणी जन्म-मृत्यु का कष्ट उठा रहे हैं। यदि कोई पूर्ण परमात्मा का वास्तविक शब्द (सच्चानाम जाप मंत्र) हमारे से प्राप्त करेगा, उसको काल की बंद से छुड़वा देंगे। हमारा बन्दी छोड़ नाम है। आदरणीय गरीबदास जी अपने गुरु व प्रभु कबीर परमात्मा के आधार पर कह रहे हैं कि सच्चे मंत्र अर्थात् सत्यनाम व सारशब्द की प्राप्ति कर लो, पूर्ण मोक्ष हो जायेगा। नहीं तो नकली नाम दाता संतों व महन्तों की मीठी-मीठी बातों में फंस कर शास्त्र विधि रहित साधना करके काल जाल में रह जाओगे। फिर कष्ट पर कष्ट उठाओगे। संत गरीबदास जी कृत अमर ग्रन्थ के अध्याय ''हंस परमहंस की कथा की वाणी नं. 37-43 में कहा है :-

माया आदि निरंजन भाई, अपने जाये आपै खाई। ब्रह्मा बिष्णु महेश्वर चेला, ओम् सोहं का है खेला।।37।। शिखर शुन्य में धर्म अन्यायी, जिन शक्ति डायन महल पठाई। लाख ग्रासै नित उठि दूती, माया आदि तख्त की कूती।।38।। सवा लाख घड़ियें, नित भांडे, हंसा उत्पत्ति प्रलय डांडे। ये तीनौं चेला बट पारी, सिरजे पुरुषा सिरजी नारी।।39।। खोखापुर में जीव भुलाये, स्वप्ना बहिश्त बैकुण्ठ बनाये। यौह हरहट का कूवा लोई, या गल बंध्या है सब कोई।।40।। कीड़ी कुंजर और अवतारा, हरहट डोरी बंधे कई बारा। अरब अलिल इन्द्र हुए हैं भाई, हरहट डोरि बंधे सब आई।।41।। शेष महेश अरू गणेश तांई, हरहट डोरि बंध सब आंई। शुक्रादिक ब्रह्मादिक देवा, हरहट डोरि बंधे सब खेवा। कोटिक कर्ता फिरता देख्या, हरहट डोरि कहूं सुनि लेखा।।42।। चतुर्भुजी भगवान कहावैं, हरहट डोरि बंधे सब आवै। योह है खोखा पुर का कूवा, यामें पर्या सो निश्चय मूवा।।43।।

ज्योति निरंजन (कालबली) के वश होकर के ये तीनों देवता (रजगुण-ब्रह्मा, सतगुण-विष्णु, तमगुण-शिव) अपनी महिमा दिखाकर जीवों को स्वर्ग नरक तथा भवसागर में (लख चौरासी योनियों में) भटकाते रहते हैं। ज्योति निरंजन अपनी माया से नागिनी की तरह जीवों को पैदा करते हैं और फिर मार देते हैं। जिस प्रकार नागिनी अपनी दुम से अण्डों के चारों ओर कुण्डली बनाती

है फिर उन अण्डों पर अपना फन मारती है। जिससे अण्डा फूट जाता है। उसमें से बच्चा निकल जाता है। उसको नागिनी खा जाती है। फन मारते समय कई अण्डे फूट जाते हैं क्योंकि नागिनी के बहुत सारे अण्डे होते हैं। जो अण्डे फूटते हैं उनमें से बच्चे निकलते हैं यदि कोई बच्चा कुण्डली (सर्पनी की दुम का घेरा) से बाहर निकल जाता है तो वह बच्चा बच जाता है नहीं तो कुण्डली में वह (नागिनी) छोड़ती नहीं। जितने बच्चे उस कुण्डली के अन्दर होते हैं उन सबको खा जाती है। जो साधक ब्रह्म (काल ब्रह्म यानि ज्योति निरंजन, देवी दुर्गा तथा ब्रह्मा, विष्णु, शिव तथा अन्य देवताओं तक की भक्ति करते हैं, वे काल ब्रह्म रूपी नागनी के घेरे यानि जन्म-मरण के चक्र में काल लोक में रह जाते हैं जिनको काल ज्योति निरंजन खाता है।)

माया काली नागिनी, अपने जाये खात।
कुण्डली में छोड़ै नहीं, सौ बातों की बात।।

इसी प्रकार यह कालबली का जाल है। निरंजन तक की भक्ति पूरे संत से नाम लेकर करेगें तो भी इस निरंजन की कुण्डली (इक्कीस ब्रह्मण्डों) से बाहर नहीं निकल सकते। स्वयं ब्रह्मा, विष्णु, महेश, आदि माया शेराँवाली भी निरंजन की कुण्डली में है। ये बेचारे अवतार धार कर आते हैं और जन्म-मृत्यु का चक्कर काटते रहते हैं। इसलिए विचार करें सोहं जाप जो कि ध्रुव व प्रहलाद व शुकदेव ऋषि ने जपा, वह भी पार नहीं हुए। क्योंकि श्री विष्णु पुराण के प्रथम अंश के अध्याय 12 के श्लोक 93 में पृष्ठ 51 पर लिखा है कि ध्रुव केवल एक कल्प अर्थात् एक हजार चतुर्युग तक ही मुक्त है। इसलिए काल लोक में ही रहे तथा 'ॐ नमः भगवते वासुदेवाय' मन्त्र जाप करने वाले भक्त भी कृष्ण तक की भक्ति कर रहे हैं, वे भी चौरासी लाख योनियों के चक्कर काटने से नहीं बच सकते। यह परम पूज्य कबीर साहिब जी व आदरणीय गरीबदास साहेब जी महाराज की वाणी प्रत्यक्ष प्रमाण देती हैं।

अनन्त कोटि अवतार हैं, माया के गोविन्द।
कर्ता हो हो अवतरे, बहुर पड़े जग फंध।।

सतपुरुष कबीर साहिब जी की भक्ति से ही जीव मुक्त हो सकता है। जब तक जीव सतलोक में वापिस नहीं चला जाएगा। तब तक काल लोक में इसी तरह कर्म करेगा और की हुई नाम व दान धर्म की कमाई स्वर्ग रूपी होटलों में समाप्त करके वापिस कर्म आधार से चौरासी लाख प्रकार के प्राणियों के शरीर में कष्ट उठाने वाले काल लोक में चक्कर काटता रहेगा।

माया (दुर्गा) से उत्पन्न हो कर करोड़ों गोबिन्द (ब्रह्मा,विष्णु, शिव) मर चुके हैं जो भगवान का अवतार बन कर आये थे फिर कर्म बन्धन में बंधकर कर्मों को भोगकर चौरासी लाख योनियों में चले गए। जैसे भगवान विष्णु जी

को देवऋषि नारद का श्राप लगा। वे श्री रामचन्द्र रूप में अयोध्या में आए। फिर श्री राम जी रूप में बाली का वध किया था। उस कर्म का दण्ड भोगने के लिए श्री कृष्ण जी का जन्म हुआ। फिर बाली वाली आत्मा शिकारी बना तथा अपना प्रतिशोध लिया। श्री कृष्ण जी के पैर में विषाक्त तीर मार कर वध किया।

महाराज गरीबदास जी अपनी वाणी में कहते हैं :-

ब्रह्मा विष्णु महेश्वर माया, और धर्मराय कहिये।
इन पाँचों मिल परपंच बनाया, वाणी हमरी लहिये।।
इन पाँचों मिल जीव अटकाये, जुगन–जुगन हम आन छुटाये।
बन्दी छोड़ हमारा नामं, अजर अमर है अस्थिर ठामं।।
पीर पैगम्बर कुतुब औलिया, सुर नर मुनिजन ज्ञानी।
येता को तो राह न पाया, जम के बंधे प्राणी।।
धर्मराय की धूमा–धामी, जम पर जंग चलाऊँ।
जोरा को तो जान न दूगां, बांध अदल घर ल्याऊँ।।
काल अकाल दोहूँ को मोसूं, महाकाल सिर मूंडू।
मैं तो तख्त हजूरी हुकमी, चोर खोज कूं ढूंढू।।
मूला माया मग में बैठी, हंसा चुन–चुन खाई।
ज्योति स्वरूपी भया निरंजन, मैं ही कर्ता भाई।।
संहस अठासी दीप मुनीश्वर, बंधे मुला डोरी।
ऐत्यां में जम का तलबाना, चलिए पुरुष कीशोरी।।
मूला का तो माथा दागूं, सतकी मोहर करूंगा।
पुरुष दीप कूं हंस चलाऊँ, दरा न रोकन दूंगा।।
हम तो बन्दी छोड़ कहावां, धर्मराय है चकवै।
सतलोक की सकल सुनावां, वाणी हमरी अखवै।।
नौ लख पटट्न ऊपर खेलूं, साहदरे कूं रोकूं।
द्वादस कोटि कटक सब काटूं, हंस पठाऊँ मोखूं।।
चौदह भुवन गमन है मेरा, जल थल में सरबंगी।
खालिक खलक खलक में खालिक, अविगत अचल अभंगी।।
अगर अलील चक्र है मेरा, जित से हम चल आए।
पाँचों पर प्रवाना मेरा, बंधि छुटावन धाये।।
जहाँ ओंकार निरंजन नाहीं, ब्रह्मा विष्णु वेद नहीं जाहीं।
जहाँ करता नहीं काल भगवाना, काया माया पिण्ड न प्राणा।।
पाँच तत्व तीनों गुण नाहीं, जोरा काल दीप नहीं जाहीं।
अमर करूं सतलोक पठाँऊ, तातैं बन्दी छोड़ कहाऊँ।।
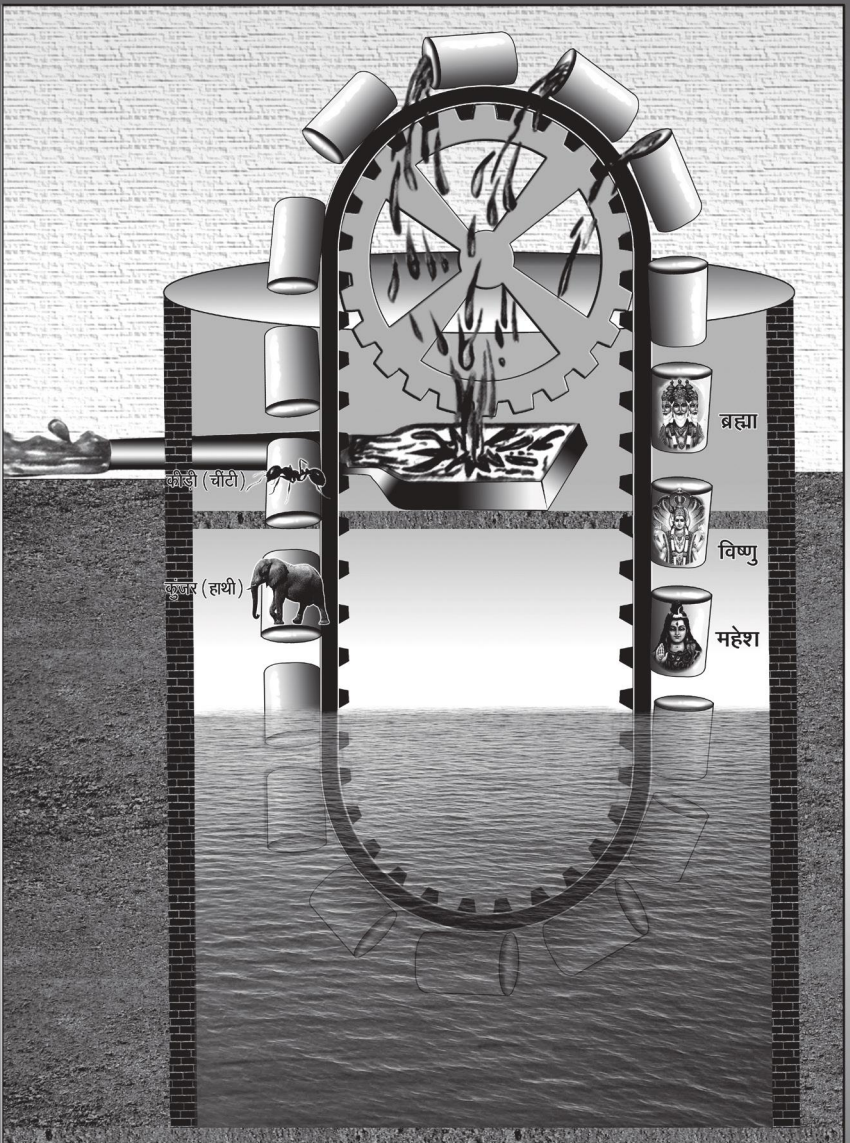
योह हरहट का कुआँ लोई, या गल बंध्या है सब कोई ।
कीड़ी कुंजर और अवतारा, हरहट डोरी बंधे कई बारा ।।

काल लोक में जन्म–मरण रूपी हरहट (चक्र)

कबीर परमेश्वर (कविर्देव) की महिमा बताते हुए आदरणीय गरीबदास साहेब जी कह रहे हैं कि हमारे प्रभु कविर् (कविर्देव) बन्दी छोड़ हैं। बन्दी छोड़ का भावार्थ है काल की कारागार से छुटवाने वाला, काल ब्रह्म के इक्कीस ब्रह्मण्डों में सर्व प्राणी पापों के कारण काल के बंदी हैं। पूर्ण परमात्मा (कविर्देव) कबीर साहेब पाप का विनाश कर देते हैं। पापों का विनाश न ब्रह्म, न परब्रह्म, न ही ब्रह्मा-विष्णु-शिव जी कर सकते। केवल जैसा कर्म है, उसका वैसा ही फल देते हैं। इसीलिए यजुर्वेद अध्याय 5 के मन्त्र 32 में लिखा है 'कविरंघारिरसि' = (कविर्) कविर्देव (कबीर परमेश्वर) (अंघ अरि) पापों का शत्रु है, 'बम्भारिरसि' = (बम्भारिः) का बन्धनों का (अरि) शत्रु अर्थात् बंधनों का शत्रु यानि बन्दी छोड़ है।

इन पाँचों (ब्रह्मा-विष्णु-शिव-माया और धर्मराय) से ऊपर सतपुरुष परमात्मा (कविर्देव) है। जो सतलोक का मालिक है। शेष सर्व परब्रह्म-ब्रह्म तथा ब्रह्मा-विष्णु-शिव जी व आदि माया नाशवान परमात्मा हैं। महाप्रलय में ये सब तथा इनके लोक समाप्त हो जाएंगे। आम जीव से कई हजार गुणा ज्यादा लम्बी इनकी उम्र है। परन्तु जो समय निर्धारित है वह एक दिन पूरा अवश्य होगा। इसी विषय में आदरणीय गरीबदास जी महाराज ने कहा है :-

शिव ब्रह्मा का राज, इन्द्र गिनती कहां। चार मुक्ति वैकुंण्ठ समझ, येता लह्या।।
संख जुगन की जुनी, उम्र बड़ धाारिया। जा जननी कुर्बान, सु कागज पारिया।।
येती उम्र बुलंद मरैगा अंत रे। सतगुरु लगे न कान, न भैंटे संत रे।।

चाहे संख युग की लम्बी उम्र भी क्यों न हो वह एक दिन समाप्त जरूर होगी। यदि सतपुरुष परमात्मा (कविर्देव) कबीर साहेब के नुमाँयदे पूर्ण संत(गुरु) जो तीन नाम का मंत्र (जिसमें एक ओउम् + तत् + सत् सांकेतिक हैं) देता है तथा उसे पूर्ण संत द्वारा नाम दान करने का आदेश है, उससे उपदेश लेकर नाम की कमाई करेंगे तो हम सतलोक के अधिकारी हंस हो सकते हैं। सत्य साधना बिना बहुत लम्बी उम्र कोई काम नहीं आएगी क्योंकि निरंजन लोक में दुःख ही दुःख है।

कबीर, जीवना तो थोड़ा ही भला, जै सत सुमरन होय।
लाख वर्ष का जीवना, लेखै धरै ना कोय।।

❖ यदि सत्य साधना की जाए तो कम आयु ही अच्छी है। यदि सत्य साधना सतपुरूष की नहीं है तथा काल ब्रह्म की व देवताओं व देवियों की पूजा करके व प्राणायाम आदि करके लंबी आयु जीने वालों का कोई लेखा (Account) मोक्ष मार्ग में नहीं किया जाएगा। इतनी लंबी आयु (जितनी शंकर जी की है) मिल जाए तो भी एक दिन मृत्यु अवश्य होगी। भक्ति गलत है। इसलिए जन्म तथा मृत्यु का चक्र बना रहेगा। ऐसी आयु का क्या औचित्य है।

कबीर साहिब अपनी (पूर्णब्रह्म की) जानकारी स्वयं बताते हैं कि इन परमात्माओं से ऊपर असंख्य भुजा का परमात्मा सतपुरुष है जो सत्यलोक (सच्च खण्ड, सतधाम) में रहता है तथा उसके अन्तर्गत सर्वलोक [ब्रह्म (काल) के 21 ब्रह्मण्ड व ब्रह्मा, विष्णु, शिव शक्ति के लोक तथा परब्रह्म के सात संख ब्रह्मण्ड व अन्य सर्व ब्रह्मण्ड] आते हैं और वहाँ पर सत्यनाम-सारनाम के जाप द्वारा जाया जाएगा जो पूरे गुरु से प्राप्त होता है। सच्चखण्ड (सतलोक) में जो आत्मा चली जाती है उसका पुनर्जन्म नहीं होता। सतपुरुष (पूर्णब्रह्म) कबीर साहेब (कविर्देव) ही अन्य लोकों में स्वयं ही भिन्न-भिन्न नामों से विराजमान हैं। जैसे अलख लोक में अलख पुरुष, अगम लोक में अगम पुरुष तथा अकह लोक में अनामी पुरुष रूप में विराजमान हैं। ये तो उपमात्मक नाम हैं, परन्तु वास्तविक नाम उस पूर्ण पुरुष का कविर्देव (भाषा भिन्न होकर कबीर साहेब) है।

“आदरणीय नानक साहेब जी की वाणी में सृष्टि रचना का संकेत”

श्री नानक साहेब जी की अमृतवाणी, महला 1, राग बिलावलु, अंश 1 (श्री गुरू ग्रन्थ साहेब पृ. 839)

आपे सचु कीआ कर जोड़ि। अंडज फोड़ि जोडि विछोड़।।
धरती आकाश कीए बैसण कउ थाउ। राति दिनंतु कीए भउ–भाउ।।
जिन कीए करि वेखणहारा।(3)
त्रितीआ ब्रह्मा–बिसनु–महेसा। देवी देव उपाए वेसा।।(4)
पउण पाणी अगनी बिसराउ। ताही निरंजन साचो नाउ।।
तिसु महि मनुआ रहिआ लिव लाई। प्रणवति नानकु कालु न खाई।।(10)

उपरोक्त अमृतवाणी का भावार्थ है कि सच्चे परमात्मा (सतपुरुष) ने स्वयं ही अपने हाथों से सर्व सृष्टि की रचना की है। उसी ने अण्डा बनाया फिर फोड़ा तथा उसमें से ज्योति निरंजन निकला। उसी पूर्ण परमात्मा ने सर्व प्राणियों के रहने के लिए धरती, आकाश, पवन, पानी आदि पाँच तत्व रचे। अपने द्वारा रची सृष्टि का स्वयं ही साक्षी है। दूसरा कोई सही जानकारी नहीं दे सकता। फिर अण्डे के फूटने से निकले निरंजन के बाद तीनों श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी की उत्पत्ति हुई तथा अन्य देवी-देवता उत्पन्न हुए तथा अनगिनत जीवों की उत्पत्ति हुई। उसके बाद अन्य देवों के जीवन चरित्र तथा अन्य ऋषियों के अनुभव के छः शास्त्र तथा अठारह पुराण बन गए। पूर्ण परमात्मा के सच्चे नाम (सत्यनाम) की साधना अनन्य मन से करने से तथा गुरु मर्यादा में रहने वाले (प्रणवति) को श्री नानक जी कह रहे हैं कि काल नहीं खाता।

राग मारु(अंश) अमृतवाणी महला 1(श्री गुरू ग्रन्थ साहेब पृ. 1037)

सुनहु ब्रह्मा, बिसनु, महेसु उपाए। सुने वरते जुग सबाए।।

इसु पद बिचारे सो जनु पुरा। तिस मिलिए भरमु चुकाइदा।।(3)
साम वेदु, रुगु जुजरु अथरबणु। ब्रहमें मुख माइआ है त्रैगुण।।
ता की कीमत कहि न सकै। को तिउ बोले जिउ बुलाईदा।।(9)

उपरोक्त अमृतवाणी का सारांश है कि जो संत पूर्ण सृष्टि रचना सुना देगा तथा बताएगा कि अण्डे के दो भाग होकर कौन निकला, जिसने फिर ब्रह्मलोक की सुन्न में अर्थात् गुप्त स्थान पर ब्रह्मा-विष्णु-शिव जी की उत्पत्ति की तथा वह परमात्मा कौन है जिसने ब्रह्म (काल) के मुख से चारों वेदों (पवित्र ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद) को उच्चारण करवाया, वह पूर्ण परमात्मा जैसा चाहे वैसे ही प्रत्येक प्राणी को बुलवाता है। इस सर्व ज्ञान को पूर्ण बताने वाला सन्त मिल जाए तो उसके पास जाइए तथा जो सभी शंकाओं का पूर्ण निवारण करता है, वही पूर्ण सन्त अर्थात् तत्वदर्शी है।

श्री गुरु ग्रन्थ साहेब पृष्ठ 929 अमृत वाणी श्री नानक साहेब जी की राग रामकली महला 1 दखणी ओअंकार

ओअंकारि ब्रह्मा उतपति। ओअंकारू कीआ जिनि चित।
ओअंकारि सैल जुग भए। ओअंकारि बेद निरमए।
ओअंकारि सबदि उधरे। ओअंकारि गुरुमुखि तरे।
ओनम अखर सुणहू बीचारु। ओनम अखरु त्रिभवण सारु।

उपरोक्त अमृतवाणी में श्री नानक साहेब जी कह रहे हैं कि ओंकार अर्थात् ज्योति निरंजन (काल) से ब्रह्मा जी की उत्पत्ति हुई। कई युगों मस्ती मार कर ओंकार (ब्रह्म) ने वेदों की उत्पत्ति की जो ब्रह्मा जी को प्राप्त हुए। तीन लोक की भक्ति का केवल एक ओउम् मंत्र ही वास्तव में जाप करने का है। इस ओउम् शब्द को पूरे संत से उपदेश लेकर अर्थात् गुरू धारण करके जाप करने से उद्धार होता है।

विशेष :- श्री नानक साहेब जी ने तीनों मंत्रों (ओउम् + तत् + सत्) का स्थान-स्थान पर रहस्यात्मक विवरण दिया है। उसको केवल पूर्ण संत (तत्वदर्शी संत) ही समझ सकता है तथा तीनों मंत्रों के जाप को उपदेशी को समझाया जाता है।

(पृ. 1038) उत्तम सतिगुरु पुरुष निराले, सबदि रते हरि रस मतवाले।
रिधि, बुधि, सिधि, गिआन गुरु ते पाइए, पूरे भाग मिलाईदा।।(15)
सतिगुरु ते पाए बीचारा, सुन समाधि सचे घरबारा।
नानक निरमल नादु सबद धुनि, सचु रामैं नामि समाइदा (17)

उपरोक्त अमृतवाणी का भावार्थ है कि वास्तविक ज्ञान देने वाले सतगुरु तो निराले ही हैं, वे केवल नाम जाप को जपते हैं, अन्य हठयोग साधना नहीं बताते। यदि आप को धन दौलत, पद, बुद्धि या भक्ति शक्ति भी चाहिए तो वह भक्ति मार्ग का ज्ञान पूर्ण संत ही पूरा प्रदान करेगा, ऐसा पूर्ण संत

बड़े भाग्य से ही मिलता है। वही पूर्ण संत विवरण बताएगा कि ऊपर सुन्न (आकाश) में अपना वास्तविक घर (सत्यलोक) परमेश्वर ने रच रखा है।

उसमें एक वास्तविक सार नाम की धुन (आवाज) हो रही है। उस आनन्द में अविनाशी परमेश्वर के सार शब्द से समाया जाता है अर्थात् उस वास्तविक सुखदाई स्थान में वास हो सकता है, अन्य नामों तथा अधूरे गुरुओं से नहीं हो सकता।

आंशिक अमृतवाणी महला पहला (श्री गुरू ग्रन्थ साहेब पृ. 359-360)

सिव नगरी महि आसणि बैसउ कलप त्यागी वादं।(1)
सिंडी सबद सदा धुनि सोहै अहिनिसि पूरै नादं।(2)
हरि कीरति रह रासि हमारी गुरु मुख पंथ अतीतं (3)
सगली जोति हमारी संमिआ नाना वरण अनेकं।
कह नानक सुणि भरथरी जोगी पारब्रह्म लिव एकं।(4)

उपरोक्त अमृतवाणी का भावार्थ है कि श्री नानक साहेब जी कह रहे हैं कि हे भरथरी योगी जी आप की साधना भगवान शिव तक है, उससे आप को शिव नगरी (लोक) में स्थान मिला है और शरीर में जो सिंगी शब्द आदि हो रहा है वह इन्हीं कमलों का है तथा टेलीविजन की तरह प्रत्येक देव के लोक से शरीर में सुनाई दे रहा है।

हम तो एक परमात्मा पारब्रह्म अर्थात् सर्व से पार जो पूर्ण परमात्मा है अन्य किसी और एक परमात्मा में लौ (अनन्य मन से लग्न) लगाते हैं।

हम ऊपरी दिखावा (भस्म लगाना, हाथ में दंडा रखना) नहीं करते। मैं तो सर्व प्राणियों को एक पूर्ण परमात्मा (सतपुरुष) की सन्तान समझता हूँ। सर्व उसी शक्ति से चलायमान हैं। हमारी मुद्रा तो सच्चा नाम जाप गुरु से प्राप्त करके करना है तथा क्षमा करना हमारा बाणा (वेशभूषा) है। मैं तो पूर्ण परमात्मा का उपासक हूँ तथा पूर्ण सतगुरु का भक्ति मार्ग इससे भिन्न है।

अमृतवाणी राग आसा महला 1 (श्री गुरू ग्रन्थ साहेब पृ. 420)

।।आसा महला 1।। जिनी नामु विसारिआ दूजै भरमि भुलाई। मूलु छोड़ि डाली लगे किआ पावहि छाई।।1।। साहिबु मेरा एकु है अवरु नहीं भाई। किरपा ते सुखु पाइआ साचे परथाई।।3।। गुर की सेवा सो करे जिसु आपि कराए। नानक सिरु दे छूटीऐ दरगह पति पाए।।8।।18।।

उपरोक्त वाणी का भावार्थ है कि श्री नानक साहेब जी कह रहे हैं कि जो पूर्ण परमात्मा का वास्तविक नाम भूल कर अन्य भगवानों के नामों के जाप में भ्रम रहे हैं वे तो ऐसा कर रहे हैं कि मूल (पूर्ण परमात्मा) को छोड़ कर डालियों (तीनों गुण रूप रजगुण-ब्रह्मा, सतगुण-विष्णु, तमगुण-शिवजी) की सिंचाई (पूजा) कर रहे हैं। उस साधना से कोई सुख नहीं हो सकता अर्थात् पौधा सूख जाएगा तो छाया में नहीं बैठ पाओगे। भावार्थ है कि शास्त्र विधि रहित

साधना करने से व्यर्थ प्रयत्न है। कोई लाभ नहीं। इसी का प्रमाण पवित्र गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में भी है। उस पूर्ण परमात्मा को प्राप्त करने के लिए मनमुखी (मनमानी) साधना त्याग कर पूर्ण गुरुदेव को समर्पण करने से तथा सच्चे नाम के जाप से ही मोक्ष संभव है, नहीं तो मृत्यु के उपरांत नरक जाएगा।

(श्री गुरु ग्रन्थ साहेब पृष्ठ नं. 843-844)

।।बिलावलु महला 1।। मैं मन चाहु घणा साचि विगासी राम। मोही प्रेम पिरे प्रभु अबिनासी राम।। अविगतो हरि नाथु नाथह तिसै भावै सो थीऐ। किरपालु सदा दइआलु दाता जीआ अंदरि तूं जीऐ। मैं आधारु तेरा तू खसमु मेरा मै ताणु तकीआ तेरओ। साचि सूचा सदा नानक गुरसबदि झगरु निबेरओ।।4।।2।।

उपरोक्त अमृतवाणी में श्री नानक साहेब जी कह रहे हैं कि अविनाशी पूर्ण परमात्मा नाथों का भी नाथ है अर्थात् देवों का भी देव है (सर्व प्रभुओं श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी, श्री शिव जी तथा ब्रह्म व परब्रह्म पर भी नाथ है अर्थात् स्वामी है) मैं तो सच्चे नाम को हृदय में समा चुका हूँ। हे परमात्मा! सर्व प्राणियों का जीवन आधार भी आप ही हो। मैं आपके आश्रित हूँ आप मेरे मालिक हो। आपने ही गुरु रूप में आकर सत्यभक्ति का निर्णायक ज्ञान देकर सर्व झगड़ा निपटा दिया अर्थात् सर्व शंका का समाधान कर दिया।

(श्री गुरु ग्रन्थ साहेब पृष्ठ नं. 721, राग तिलंग महला 1)

यक अर्ज गुफतम् पेश तो दर कून करतार।
हक्का कबीर करीम तू बेअब परवरदिगार।
नानक बुगोयद जन तुरा तेरे चाकरां पाखाक।

उपरोक्त अमृतवाणी में स्पष्ट कर दिया कि हे (हक्का कबीर) आप सत्कबीर (कून करतार) शब्द शक्ति से रचना करने वाले शब्द स्वरूपी प्रभु अर्थात् सर्व सृष्टि के रचन हार हो, आप ही बेऐब निर्विकार (परवरदिगार) सर्व के पालन कर्ता दयालु प्रभु हो, मैं आपके दासों का भी दास हूँ।

(श्री गुरु ग्रन्थ साहेब पृष्ठ नं. 24, राग सीरी महला 1)

तेरा एक नाम तारे संसार, मैं ऐहा आस ऐहो आधार।
नानक नीच कहै बिचार, धाणक रूप रहा करतार।।

उपरोक्त अमृतवाणी में प्रमाण किया है कि जो काशी में धाणक (जुलाहा) है यही (करतार) कुल का सृजनहार है। अति आधीन होकर श्री नानक साहेब जी कह रहे हैं कि मैं सत कह रहा हूँ कि यह धाणक अर्थात् कबीर जुलाहा ही पूर्ण ब्रह्म (सतपुरुष) है।

विशेष :- उपरोक्त प्रमाणों के सांकेतिक ज्ञान से प्रमाणित हुआ सृष्टि रचना कैसे हुई? पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति करनी चाहिए जो पूर्ण संत से नाम लेकर ही संभव है।

''अन्य संतों द्वारा सृष्टि रचना की दन्त कथा''

अन्य संतों द्वारा जो सृष्टि रचना का ज्ञान बताया है वह कैसा है? कृप्या निम्न पढ़े :- सृष्टि रचना के विषय में राधास्वामी पंथ के सन्तों के व धन-धन सतगुरू पंथ के सन्त के विचार :-

पवित्र पुस्तक जीवन चरित्र परम संत बाबा जयमल सिंह जी महाराज'' पृष्ठ नं. 102-103 से ''सृष्टि की रचना'' (सावन कृपाल पब्लिकेशन, दिल्ली)

''पहले सतपुरुष निराकार था, फिर इजहार (आकार) में आया तो ऊपर के तीन निर्मल मण्डल (सतलोक, अलखलोक, अगमलोक) बन गया तथा प्रकाश तथा मण्डलों का नाद (धुनि) बन गया।''

पवित्र पुस्तक सारवचन (नसर) प्रकाशक :- राधास्वामी सत्संग सभा, दयालबाग आगरा, ''सृष्टि की रचना'' पृष्ठ 8 :-

''प्रथम धूंधूकार था। उसमें पुरुष सुन्न समाध में थे। जब कुछ रचना नहीं हुई थी। फिर जब मौज हुई तब शब्द प्रकट हुआ और उससे सब रचना हुई, पहले सतलोक और फिर सतपुरुष की कला से तीन लोक और सब विस्तार हुआ।''

यह ज्ञान तो ऐसा है जैसे एक समय कोई बच्चा नौकरी लगने के लिए साक्षात्कार (इन्टरव्यू) के लिए गया। अधिकारी ने पूछा कि आप ने महाभारत पढ़ा है। लड़के ने उत्तर दिया कि उंगलियों पर रट रखा है। अधिकारी ने प्रश्न किया कि पाँचों पाण्डवों के नाम बताओ। लड़के ने उत्तर दिया कि एक भीम था, एक उसका बड़ा भाई था, एक उससे छोटा था, एक और था तथा एक का नाम मैं भूल गया। उपरोक्त सृष्टि रचना का ज्ञान तो ऐसा है।

सतपुरुष व सतलोक की महिमा बताने वाले व पाँच नाम (औंकार - ज्योति निरंजन - ररंकार - सोहं - सत्यनाम) देने वाले व तीन नाम (अकाल मूर्ति - सतपुरुष - शब्द स्वरूपी राम) देने वाले संतों द्वारा रची पुस्तकों से कुछ निष्कर्ष :-

संतमत प्रकाश भाग 3 पृष्ठ 76 पर लिखा है कि ''सच्चखण्ड या सतनाम चौथा लोक है'', यहाँ पर 'सतनाम' को स्थान कहा है। फिर इस पवित्र पुस्तक के पृष्ठ नं. 79 पर लिखा है कि ''एक राम दशरथ का बेटा, दूसरा राम 'मन', तीसरा राम 'ब्रह्म', चौथा राम 'सतनाम', यह असली राम है।'' फिर पवित्र पुस्तक संतमत प्रकाश पहला भाग पृष्ठ नं. 17 पर लिखा है कि ''वह सतलोक है, उसी को सतनाम कहा जाता है।''

पवित्र पुस्तक 'सार वचन नसर यानि वार्तिक' पृष्ठ नं. 3 पर लिखा है कि ''अब समझना चाहिए कि राधा स्वामी पद सबसे उच्चा मुकाम है कि जिसको संतों ने सतलोक और सच्चखण्ड और सार शब्द और सत शब्द

और सतनाम और सतपुरुष करके ब्यान किया है।'' पवित्र पुस्तक सार वचन (नसर) आगरा से प्रकाशित पृष्ठ नं. 4 पर भी उपरोक्त ज्यों का त्यों वर्णन है। पवित्र पुस्तक 'सच्चखण्ड की सड़क' पृष्ठ नं. 226 ''संतों का देश सच्चखण्ड या सतलोक है, उसी को सतनाम- सतशब्द-सारशब्द कहा जाता है।''

विशेष :- उपरोक्त व्याख्या ऐसी लगी जैसे किसी ने जीवन में न तो शहर देखा, न कार देखी और न पैट्रोल देखा है, न ड्राईवर का ज्ञान हो कि ड्राईवर किसे कहते हैं और वह व्यक्ति अन्य साथियों से कहे कि मैं शहर में जाता हूँ, कार में बैठ कर आनंद मनाता हूँ। फिर साथियों ने पूछा कि कार कैसी है, पैट्रोल कैसा है और ड्राईवर कैसा है, शहर कैसा है? उस गुरु जी ने उत्तर दिया कि शहर कहो चाहे कार एक ही बात है, शहर भी कार ही है, पैट्रोल भी कार को ही कहते हैं, ड्राईवर भी कार को ही कहते हैं, सड़क भी कार को ही कहते हैं।

आओ विचार करें - सतपुरुष तो पूर्ण परमात्मा है, सतनाम वह दो मंत्र का नाम है जिसमें एक ओ३म् + तत् सांकेतिक है तथा इसके बाद सारनाम साधक को पूर्ण गुरु द्वारा दिया जाता है। यह सतनाम तथा सारनाम दोनों स्मरण करने के नाम हैं। सतलोक वह स्थान है जहाँ सतपुरुष रहता है। पुण्यात्माएं स्वयं निर्णय करें सत्य तथा असत्य का।

अधिक जानकारी के लिए हमारी वेबसाईट www.jagatgururampalji.org पर जाकर अधिक ज्ञान ग्रहण कर सकते हैं।

''तेरहवां अध्याय''

काल ब्रह्म क्यों भ्रमित साधना-पूजा का भ्रम जाल फैलाता है?

कृपया पढ़ें वह कारण :-

''कबीर परमेश्वर जी की काल से वार्ता''

जब परमेश्वर ने सर्व ब्रह्मण्डों की रचना की और अपने लोक में विश्राम करने लगे। उसके बाद हम सभी काल के ब्रह्मण्ड में रह कर अपना किया हुआ कर्मदण्ड भोगने लगे और बहुत दुःखी रहने लगे। सुख व शांति की खोज में भटकने लगे और हमें अपने निज घर सतलोक की याद सताने लगी तथा वहां जाने के लिए भक्ति प्रारंभ की। किसी ने चारों वेदों को कंठस्थ किया तो कोई उग्र तप करने लगा और हवन यज्ञ, ध्यान, समाधि आदि क्रियाएं प्रारम्भ की, लेकिन अपने निज घर सतलोक नहीं जा सके क्योंकि उपरोक्त क्रियाएं करने से अगले जन्मों में अच्छे समृद्ध जीवन को प्राप्त होकर (जैसे राजा-महाराजा, बड़ा व्यापारी, अधिकारी, देव-महादेव, स्वर्ग-महास्वर्ग आदि) वापिस लख चौरासी भोगने लगे। बहुत परेशान रहने लगे और परमपिता परमेश्वर से प्रार्थना करने लगे कि हे दयालु! हमें निज घर का रास्ता दिखाओ। हम हृदय से आपकी भक्ति करते हैं। आप हमें दर्शन क्यों नहीं दे रहे हो?

यह वृतान्त कबीर साहेब ने धर्मदास जी को बताते हुए कहा कि धर्मदास इन जीवों की पुकार सुनकर मैं अपने सतलोक से जोगजीत का रूप बनाकर काल लोक में आया। तब इक्कीसवें ब्रह्मण्ड में जहां काल का निज घर है वहां पर तप्तशिला पर जीवों को भूनकर सुक्ष्म शरीर से गंध निकाला जा रहा था। मेरे पहुंचने के बाद उन जीवों की जलन समाप्त को गई। उन्होंने मुझे देखकर कहा कि हे पुरुष! आप कौन हो? आपके दर्शन मात्र से ही हमें बड़ा सुख व शांति का आभास हो रहा है। फिर मैंने बताया कि मैं पारब्रह्म परमेश्वर कबीर हूं। आप सब जीव मेरे लोक से आकर काल ब्रह्म के लोक में फंस गए हो। यह काल रोजाना एक लाख मानव के सुक्ष्म शरीर से गंध निकाल कर खाता है और बाद में नाना-प्रकार की योनियों में दण्ड भोगने के लिए छोड़ देता है। तब वे जीवात्माएं कहने लगी कि हे दयालु परमश्ेवर! हमें इस काल की जेल से छुड़वाओ। मैंने बताया कि यह ब्रह्मण्ड काल ने तीन बार भक्ति करके मेरे से प्राप्त किए हुए हैं जो आप यहां सब वस्तुओं का प्रयोग कर रहे हो ये सभी काल की हैं और आप सब अपनी इच्छा से घूमने के लिए आए हो। इसलिए अब आपके ऊपर काल ब्रह्म का बहुत ज्यादा ऋण हो चुका है और वह ऋण मेरे सच्चे नाम के जाप के बिना नहीं उतर सकता।

जब तक आप ऋण मुक्त नहीं हो जाते, तब तक आप काल ब्रह्म की जेल से बाहर नहीं जा सकते। इसके लिए आपको मुझसे नाम उपदेश लेकर भक्ति करनी होगी। तब मैं आपको छुड़वा कर ले जाऊंगा। हम यह वार्ता कर ही रहे थे कि वहां पर काल ब्रह्म प्रकट हो गया और उसने बहुत क्रोधित होकर मेरे ऊपर हमला बोला। मैंने अपनी शब्द शक्ति से उसको मुर्छित कर दिया। फिर कुछ समय बाद वह होश में आया। मेरे चरणों में गिरकर क्षमा याचना करने लगा और बोला कि आप मुझ से बड़े हो, मुझ पर कुछ दया करो और यह बताओ कि आप मेरे लोक में क्यों आए हो? तब मैंने काल पुरुष को बताया कि कुछ जीवात्माएं भक्ति करके अपने निज घर सतलोक में वापिस जाना चाहती हैं। उन्हें सतभक्ति मार्ग नहीं मिल रहा है। इसलिए वे भक्ति करने के बाद भी इसी लोक में रह जाती हैं। मैं उनको सतभक्ति मार्ग बताने के लिए और तेरा भेद देने के लिए आया हूं कि तूं काल है, एक लाख जीवों का आहार करता है और सवा लाख जीवों को उत्पन्न करता है तथा भगवान बन कर बैठा है। मैं इनको बताऊंगा कि तुम जिसकी भक्ति करते हो वह भगवान नहीं, काल है। इतना सुनते ही काल बोला कि यदि सब जीव वापिस चले गए तो मेरे भोजन का क्या होगा? मैं भूखा मर जाऊंगा। आपसे मेरी प्रार्थना है कि तीन युगों में जीव कम संख्या में ले जाना और सबको मेरा भेद मत देना कि मैं काल हूँ, सबको खाता हूँ। जब कलियुग आए तो चाहे जितने जीवों को ले जाना। ये वचन काल ने मुझसे प्राप्त कर लिए।

कबीर साहेब ने धर्मदास को आगे बताते हुए कहा कि सतयुग, त्रेतायुग, द्वापरयुग में भी मैं आया था और बहुत जीवों को सतलोक लेकर गया लेकिन इसका भेद नहीं बताया। अब मैं कलियुग में आया हूं और काल से मेरी वार्ता हुई है। काल ब्रह्म ने मुझ से कहा कि अब आप चाहे जितना जोर लगा लेना, आपकी बात कोई नहीं सुनेगा। प्रथम तो मैंने जीव को भक्ति के लायक ही नहीं छोड़ा है। उनमें बीड़ी, सिगरेट, शराब, मांस आदि दुर्व्यसन की आदत डाल कर इनकी वृति को बिगाड़ दिया है। नाना-प्रकार की पाखण्ड पूजा में जीवात्माओं को लगा दिया है। दूसरी बात यह होगी कि जब आप अपना ज्ञान देकर वापिस अपने लोक में चले जाओगे। उससे पहले मैं (काल) अपने दूत भेजकर आपके पंथ से मिलते-जुलते बारह पंथ चलाकर जीवों को भ्रमित कर दूंगा। महिमा सतलोक की बताएंगे, आपका ज्ञान कथेंगे लेकिन नाम-जाप मेरा करेंगे, जिसके परिणामस्वरूप मेरा ही भोजन बनेंगे। यह बात सुनकर कबीर साहेब ने कहा कि आप अपनी कोशिश करना, मैं सतमार्ग बताकर ही वापिस जाऊंगा और जो मेरा ज्ञान सुन लेगा वह तेरे बहकावे में कभी नहीं आएगा।

सतगुरु कबीर साहेब ने कहा कि हे निरंजन! यदि मैं चाहूं तो तेरे सारे

खेल को क्षण भर में समाप्त कर सकता हूँ, परंतु ऐसा करने से मेरा वचन भंग होता है। यह सोच कर मैं अपने प्यारे हंसों को यथार्थ ज्ञान देकर शब्द का बल प्रदान करके सतलोक ले जाऊंगा और कहा कि :-

कह कबीर सुनो धर्मराया, हम शंखों हंसा पद परसाया।
जिन लीन्हा हमरा प्रवाना, सो हंसा हम किए अमाना।।

(पवित्र कबीर सागर में जीवों को काल ब्रह्म द्वारा भूल-भूलइयां में डालने के लिए तथा अपनी भूख को मिटाने के लिए तरह-तरह के तरीकों का वर्णन)

द्वादस पंथ करूं मैं साजा, नाम तुम्हारा ले करूं अवाजा।
द्वादस यम संसार पठहो, नाम तुम्हारे पंथ चलैहो।।
प्रथम दूत मम प्रगटे जाई, पीछे अंश तुम्हारा आई।।
यही विधि जीवनको भ्रमाऊं, पुरुष नाम जीवन समझाऊं।।
द्वादस पंथ नाम जो लैहे, सो हमरे मुख आन समै है।।
कहा तुम्हारा जीव नहीं माने, हमारी ओर होय बाद बखानै।।
मैं दृढ़ फंदा रची बनाई, जामें जीव रहे उरझाई।।
देवल देव पाषान पूजाई, तीर्थ व्रत जप–तप मन लाई।।
यज्ञ होम अरू नेम अचारा, और अनेक फंद में डारा।।
जो ज्ञानी जाओ संसारा, जीव न मानै कहा तुम्हारा।।

(सतगुरु वचन)

ज्ञानी कहे सुनो अन्याई, काटो फंद जीव ले जाई।।
जेतिक फंद तुम रचे विचारी, सत्य शबद तै सबै बिंडारी।।
जौन जीव हम शब्द दृढावै, फंद तुम्हारा सकल मुकावै।।
चौका कर प्रवाना पाई, पुरुष नाम तिहि देऊं चिन्हाई।।
ताके निकट काल नहीं आवै, संधि देखी ताकहं सिर नावै।।

उपरोक्त विवरण से सिद्ध होता है कि जो अनेक पंथ चले हुए हैं। जिनके पास कबीर साहेब द्वारा बताया हुआ सतभक्ति मार्ग नहीं है, ये सब काल प्रेरित हैं। अतः बुद्धिमान को चाहिए कि सोच-विचार कर भक्ति मार्ग अपनांए क्योंकि मनुष्य जन्म अनमोल है, यह बार-बार नहीं मिलता। कबीर साहेब कहते हैं कि :-

कबीर मानुष जन्म दुर्लभ है, मिले न बारम्बार।
तरूवर से पत्ता टूट गिरे, बहुर न लगता डारि।।

काल निरंजन द्वारा कबीर जी से तीन युगों में कम जीव ले जाने का वचन लेना

(विस्तृत व सम्पूर्ण वर्णन)

प्रश्न :- कबीर जी के नाम से चले 12 पंथों के वास्तविक मुखिया कौन

हैं और तेरहवां पंथ कौन चलाएगा?

उत्तर :- जैसा कि कबीर सागर के संशोधनकर्ता स्वामी युगलानन्द (बिहारी) जी ने दुख व्यक्त किया है कि समय-समय पर कबीर जी के ग्रन्थों से छेड़छाड़ करके उनकी बुरी दशा कर रखी है।

उदाहरण :- परमेश्वर कबीर जी का जोगजीत के रूप में काल ब्रह्म के साथ विवाद हुआ था। वह ''स्वसमवेद बोध'' पृष्ठ 117 से 122 तक तथा ''अनुराग सागर'' 60 से 67 तक है।

परमेश्वर कबीर जी अपने पुत्र जोगजीत के रूप में काल के प्रथम ब्रह्माण्ड में प्रकट हुए जो इक्कीसवां ब्रह्माण्ड है जहाँ पर तप्त शिला बनी है। काल ब्रह्म ने जोगजीत के साथ झगड़ा किया। फिर विवश होकर चरण पकड़कर क्षमा याचना की तथा प्रतिज्ञा करवाकर कुछ सुविधा माँगी।

1. तीनों युगों (सत्ययुग, त्रेतायुग, द्वापरयुग) में थोड़े जीव पार करना।

2. जोर-जबरदस्ती करके जीव मेरे लोक से न ले जाना।

3. आप अपना ज्ञान समझाना। जो आपके ज्ञान को माने, वह आपका और जो मेरे ज्ञान को माने, वह मेरा।

4. कलयुग में पहले मेरे दूत प्रकट होने चाहिऐं, पीछे आपका दूत जाए।

5. त्रेतायुग में समुद्र पर पुल बनवाना। उस समय मेरा पुत्र विष्णु रामचंद्र रूप में लंका के राजा रावण से युद्ध करेगा, समुद्र रास्ता नहीं देगा।

6. द्वापर युग में शरीर त्यागकर जाऊँगा। राजा इन्द्रदमन मेरे नाम से (जगन्नाथ नाम से) समुद्र के किनारे मेरी आज्ञा से मंदिर बनवाना चाहेगा। उसको समुद्र बाधा करेगा। आप उस मंदिर की सुरक्षा करना। परमेश्वर ने सर्व माँगें स्वीकार कर ली और वचनबद्ध हो गए। तब काल ब्रह्म हँसा और कहा कि हे जोगजीत! आप जाओ संसार में। जिस समय कलयुग आएगा। उस समय मैं अपने 12 दूत (नकली सतगुरू) संसार में भेजूँगा। जब कलयुग 5505 वर्ष पूरा होगा, तब तक मेरे दूत तेरे नाम से (कबीर जी के नाम से) 12 कबीर पंथ चला दूँगा। कबीर जी ने जोगजीत रूप में काल ब्रह्म से कहा था कि कलयुग में मेरा नाम कबीर होगा और मैं कबीर नाम से पंथ चलाऊँगा। इसलिए काल ज्योति निरंजन ने कहा था कि आप कबीर नाम से एक पंथ चलाओगे तो मैं (काल) कबीर नाम से 12 पंथ चलाऊँगा। सर्व मानव को भ्रमित करके अपने जाल में फाँसकर रखूँगा। इनके अतिरिक्त और भी कई पंथ चलाऊँगा जो सतलोक, सच्चखण्ड की बातें किया करेंगे तथा सत्य साधना उनके पास नहीं होगी। जिस कारण से वे सत्यलोक की आश में गलत नामों को जाप करके मेरे जाल में ही रह जाऐंगे।

काल ब्रह्म ने पूछा था कि आप किस समय कलयुग में अपना सत्य कबीर

पंथ चलाओगे? कबीर जी ने कहा था कि जिस समय कलयुग 5505 (पाँच हजार पाँच सौ पाँच) वर्ष बीत जाएगा, तब मैं अपना यथार्थ तेरहवां कबीर पंथ चलाऊँगा।

काल ने कहा कि उस समय से पहले मैं पूरी पृथ्वी के ऊपर शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण करवाकर शास्त्रविरूद्ध ज्ञान बताकर झूठे नाम तथा गलत साधना के अभ्यस्त कर दूँगा। जब तेरा तेरहवां अंश आकर सत्य कबीर पंथ चलाएगा, उसकी बात पर कोई विश्वास नहीं करेगा, उल्टे उसके साथ झगड़ा करेंगे। कबीर जी को पता था कि जब कलयुग के 5505 वर्ष पूरे होंगे (सन् 1997 में) तब शिक्षा की क्रांति लाई जाएगी। सर्व मानव अक्षर ज्ञानयुक्त किया जाएगा। उस समय मेरा दास सर्व धार्मिक ग्रन्थों को ठीक से समझकर मानव समाज के रूबरू करेगा। सर्व प्रमाणों को आँखों देखकर शिक्षित मानव सत्य से परिचित होकर तुरंत मेरे तेरहवें पंथ में दीक्षा लेगा और पूरा विश्व मेरे द्वारा बताई भक्ति विधि तथा तत्त्वज्ञान को हृदय से स्वीकार करके भक्ति करेगा। उस समय पुनः सत्ययुग जैसा वातावरण होगा। आपसी रागद्वेष, चोरी-जारी, लूट-ठगी कोई नहीं करेगा। कोई धन संग्रह नहीं करेगा। भक्ति को अधिक महत्त्व दिया जाएगा। जैसे उस समय उस व्यक्ति को महान माना जा रहा होगा जिसके पास अधिक धन होगा, बड़ा व्यवसाय होगा, बड़ी-बड़ी कोठियाँ बना रखी होंगी, परंतु 13वें पंथ के प्रारम्भ होने के पश्चात् उन व्यक्तियों को मूर्ख माना जाएगा और जो भक्ति करेंगे, सामान्य मकान बनाकर रहेंगे, उनको महान, बड़े और सम्मानित व्यक्ति माना जाएगा।

''प्रमाण के लिए पवित्र कबीर सागर से भिन्न-भिन्न अध्यायों से अमृत बानी''

''कबीर जी तथा ज्योति निरंजन की वार्ता''

अनुराग सागर के पृष्ठ 62 से :-

''धर्मराय (ज्योति निरंजन) वचन''

धर्मराय अस विनती ठानी। मैं सेवक द्वितीया न जानी।।1
ज्ञानी बिनती एक हमारा। सो न करहू जिह से हो मोर बिगारा।।2
पुरूष दीन्ह जस मोकहं राजु। तुम भी देहहु तो होवे मम काजु।।3
अब मैं वचन तुम्हरो मानी। लीजो हंसा हम सो ज्ञानी।।4

पृष्ठ 63 से अनुराग सागर की वाणी :-

दयावन्त तुम साहेब दाता। ऐतिक कृपा करो हो ताता।।5
पुरूष शॉप मोकहं दीन्हा। लख जीव नित ग्रासन कीन्हा।।6

पृष्ठ 64 से अनुराग सागर की वाणी :-

जो जीव सकल लोक तव आवै। कैसे क्षुधा मोर मिटावै।।7
जैसे पुरूष कृपा मोपे कीन्हा। भौसागर का राज मोहे दीन्हा।।8
तुम भी कृपा मोपर करहु। जो माँगे सो मोहे देहो बरहु।।9
सतयुग, त्रेता, द्वापर मांहीं। तीनों युग जीव थोड़े जाहीं।।10
चौथा युग जब कलयुग आवै। तब तव शरण जीव बहु जावै।।11

पृष्ठ 65 से अनुराग सागर की वाणी, ऊपर से वाणी पंक्ति नं. 3 से :-

प्रथम दूत मम प्रकटै जाई। पीछे अंश तुम्हारा आई।।12

पृष्ठ 64 से अनुराग सागर की वाणी, ऊपर से वाणी पंक्ति नं. 6 :-

ऐसा वचन हरि मोहे दीजै। तब संसार गवन तव कीजै।।13

''जोगजीत वचन=ज्ञानी बचन''

पृष्ठ 64 से अनुराग सागर की वाणी, ऊपर से वाणी पंक्ति नं. 7 :-

अरे काल तुम परपंच पसारा। तीनों युग जीवन दुख डारा।।14
बीनती तोरी लीन्ह मैं जानि। मोकहं ठगा काल अभिमानी।।15
जस बीनती तू मोसन कीन्ही। सो अब बखस तोहे दीन्ही।।16
चौथा युग जब कलयुग आवै। तब हम अपना अंश पठावैं।।17

''धर्मराय (काल) वचन''

पृष्ठ 64 से अनुराग सागर की वाणी, ऊपर से वाणी पंक्ति नं. 17 :-

हे साहिब तुम पंथ चलाऊ। जीव उबार लोक लै जाऊ।।18

पृष्ठ 66 से अनुराग सागर की वाणी, ऊपर से वाणी पंक्ति नं. 8, 9, 16 से 21 :-

सन्धि छाप (सार शब्द) मोहे दिजे ज्ञानी। जैसे देवोंगे हंस सहदानी।।19
जो जन मोकूं संधि (सार शब्द) बतावै। ताके निकट काल नहीं आवै।।20
कहै धर्मराय जाओ संसारा। आनहु जीव नाम आधारा।।21
जो हंसा तुम्हरे गुण गावै। ताहि निकट हम नहीं जावैं।।22
जो कोई लेहै शरण तुम्हारी। मम सिर पग दै होवै पारी।।23
हम तो तुम संग कीन्ह ढ़िठाई। तात जान किन्ही लड़काइ।।24
कोटिन अवगुन बालक करही। पिता एक चित नहीं धरही।।25
जो पिता बालक कूं देहै निकारी। तब को रक्षा करै हमारी।।26
सारनाम देखो जेहि साथा। ताहि हंस मैं नीवाऊँ माथा।।27

ज्ञानी (कबीर) वचन

अनुराग सागर पृष्ठ 66 :-

जो तोहि देहुं संधि बताई। तो तूं जीवन को हइहो दुखदाई।।28
तुम परपंच जान हम पावा। काल चलै नहीं तुम्हरा दावा।।29

धर्मराय तोहि प्रकट भाखा। गुप्त अंक बीरा हम राखा।।30
जो कोई लेई नाम हमारा। ताहि छोड़ तुम हो जाना नियारा।।31
जो तुम मोर हंस को रोको भाई। तो तुम काल रहन नहीं पाई।।32

''धर्मराय (काल निरंजन) बचन''

पृष्ठ 62 तथा 63 से अनुराग सागर की वाणी :-

बेसक जाओ ज्ञानी संसारा। जीव न मानै कहा तुम्हारा।।33
कहा तुम्हारा जीव ना मानै। हमरी और होय बाद बखानै।।34
दृढ़ फंदा मैं रचा बनाई। जामें सकल जीव उरझाई।।35
वेद–शास्त्र समर्ति गुणगाना। पुत्र मेरे तीन प्रधाना।।36
तीनहू बहु बाजी रचि राखा। हमरी महिमा ज्ञान मुख भाखा।।37
देवल देव पाषाण पुजाई। तीर्थ व्रत जप तप मन लाई।।38
पूजा विश्व देव अराधी। यह मति जीवों को राखा बाँधि।।39
जग (यज्ञ) होम और नेम आचारा। और अनेक फंद मैं डारा।।40

''ज्ञानी (कबीर) वचन''

हमने कहा सुनो अन्याई। काटों फंद जीव ले जांई।।41
जेते फंद तुम रचे विचारी। सत्य शब्द ते सबै विडारी।।42
जौन जीव हम शब्द दृढ़ावैं। फंद तुम्हारा सकल मुक्तावैं।।43
जबही जीव चिन्ही ज्ञान हमारा। तजही भ्रम सब तोर पसारा।।44
सत्यनाम जीवन समझावैं। हंस उभार लोक लै जावै।।45
पुरूष सुमिरन सार बीरा, नाम अविचल जनावहूँ।
शीश तुम्हारे पाँव देके, हंस लोक पठावहूँ।।46
ताके निकट काल नहीं आवै। संधि देख ताको सिर नावै।।48
(संधि = सत्यनाम+सारनाम)

''धर्मराय (काल) वचन''

पंथ एक तुम आप चलऊ। जीवन को सतलोक लै जाऊ।।49
द्वादश पंथ करूँ मैं साजा। नाम तुम्हारा ले करों आवाजा।।50
द्वादश यम संसार पठाऊँ। नाम कबीर ले पंथ चलाऊँ।।51
प्रथम दूत मेरे प्रगटै जाई। पीछे अंश तुम्हारा आई।।52
यहि विधि जीवन को भ्रमाऊँ। आपन नाम पुरूष का बताऊँ।।53
द्वादश पंथ नाम जो लैहि। हमरे मुख में आन समैहि।।54

''ज्ञानी (कबीर) वचन'' चौपाई

अध्याय ''स्वसमवेद बोध'' पृष्ठ 121 :-

अरे काल परपंच पसारा। तीनों युग जीवन दुख आधारा।।55
बीनती तोरी लीन मैं मानी। मोकहं ठगे काल अभिमानी।।56

चौथा युग जब कलयुग आई। तब हम अपना अंश पठाई।।57
काल फंद छूटै नर लोई। सकल सृष्टि परवानिक (दीक्षित) होई।।58
घर–घर देखो बोध बिचारा। सत्यनाम सब ठोर उचारा।।59
पाँच हजार पाँच सौ पाँचा। तब यह वचन होयगा साचा।।60
कलयुग बीत जाए जब ऐता। सब जीव परम पुरूष पद चेता।।61

भावार्थ :- (वाणी सँख्या 55 से 61 तक) परमेश्वर कबीर जी ने कहा कि हे काल! तूने विशाल प्रपंच रच रखा है। तीनों युगों (सतयुग, त्रेता, द्वापर) में जीवों को बहुत कष्ट देगा। जैसा तू कह रहा है। तूने मेरे से प्रार्थना की थी, वह मान ली। तूने मेरे साथ धोखा किया है, परतुं चौथा युग जब कलयुग आएगा, तब मैं अपना अंश यानि कृपा पात्र आत्मा भेजूँगा। हे काल! तेरे द्वारा बनाए सर्व फंद यानि अज्ञान आधार से गलत ज्ञान व साधना को सत्य शब्द तथा सत्य ज्ञान से समाप्त करेगा। उस समय पूरा विश्व प्रवानिक यानि उस मेरे संत से दीक्षा लेकर दीक्षित होगा। उस समय तक यानि जब तक कलयुग पाँच हजार पाँच सौ पाँच नहीं बीत जाता, सत्यनाम, मूल नाम (सार शब्द) तथा मूल ज्ञान (तत्त्वज्ञान) प्रकट नहीं करना है। परंतु जब कलयुग पाँच हजार पाँच सौ पाँच वर्ष पूरा हो जाएगा, तब घर-घर में मेरे अध्यात्मिक ज्ञान की चर्चा हुआ करेगी और सत्यनाम, सार शब्द को सब उपदेशियों को प्रदान किया जाएगा। यह जो बात मैं कह रहा हूँ, ये मेरे वचन उस समय सत्य साबित होंगे, जब कलयुग के 5505 (पाँच हजार पाँच सौ पाँच) वर्ष पूरे हो जाऐंगे। जब कलयुग इतने वर्ष बीत जाएगा। तब सर्व मानव प्राणी परम पुरूष यानि सत्य पुरूष के पद अर्थात् उस परम पद के जानकार हो जाऐंगे जिसके विषय में गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में कहा है कि तत्त्वदर्शी संत के प्राप्त होने के पश्चात् परमेश्वर के उस परम पद की खोज करनी चाहिए जहाँ जाने के पश्चात् साधक लौटकर संसार में कभी नहीं आते। जिस परमेश्वर ने संसार रूपी वृक्ष का विस्तार किया है अर्थात् जिस परमेश्वर ने सृष्टि की रचना की है, उस परमेश्वर की भक्ति करो। उपरोक्त वाणी का भावार्थ है कि उस समय उस परमेश्वर के पद (सत्यलोक) के विषय में सबको पूर्ण ज्ञान होगा।

स्वसमवेद बोध पृष्ठ 170 :-

अथ स्वसम वेद की स्फुटवार्ता-चौपाई

एक लाख और असि हजारा। पीर पैगंबर और अवतारा।।62
सो सब आही निरंजन वंशा। तन धरी–धरी करैं निज पिता प्रशंसा।।63
दश अवतार निरंजन के रे। राम कृष्ण सब आहीं बडेरे।।64
इनसे बड़ा ज्योति निरंजन सोई। यामें फेर बदल नहीं कोई।।65

भावार्थ :- परमेश्वर कबीर जी ने बताया है कि बाबा आदम से लेकर

हजरत मुहम्मद तक कुल एक लाख अस्सी हजार (1,80,000) पैगंबर हुए हैं तथा दस अवतार जो हिन्दु मानते हैं, ये सब काल के भेजे आए हैं। इन सबने काल ब्रह्म की भक्ति का प्रचार किया है। जो दस अवतार हैं, इन दस अवतारों में राम तथा कृष्ण प्रमुख हैं। ये सब काल (जो इनका पिता है) की महिमा बनाकर सर्व जीवों को भ्रमित करके काल साधना दृढ़ कर गए हैं। इस सबका मुखिया ज्योति निरंजन काल (ब्रह्म) है।

कबीर सागर में स्वसमवेद बोध पृष्ठ 171 (1515) :-

सत्य कबीर वचन

दोहे :- पाँच हजार अरू पाँच सौ पाँच जब कलयुग बीत जाय।
महापुरूष फरमान तब, जग तारन कूं आय।।66
हिन्दु तुर्क आदि सबै, जेते जीव जहान।
सत्य नाम की साख गही, पावैं पद निर्वान।।67
यथा सरितगण आप ही, मिलैं सिन्धु में धाय।
सत्य सुकृत के मध्य तिमि, सब ही पंथ समाय।।68
जब लग पूर्ण होय नहीं, ठीक का तिथि बार।
कपट–चातुरी तबहि लौं, स्वसम बेद निरधार।।69
सबही नारी–नर शुद्ध तब, जब ठीक का दिन आवंत।
कपट चातुरी छोड़ि के, शरण कबीर गहंत।।70
एक अनेक ह्वै गए, पुनः अनेक हों एक।
हंस चलै सतलोक सब, सत्यनाम की टेक।।71
घर घर बोध विचार हो, दुर्मति दूर बहाय।
कलयुग में सब एक होई, बरतें सहज सुभाय।।72
कहाँ उग्र कहाँ शुद्र हो, हरै सबकी भव पीर(पीड़)।।73
सो समान समदृष्टि है, समर्थ सत्य कबीर।।74

भावार्थ :- परमेश्वर कबीर जी ने बताया है कि हे धर्मदास! मैंने ज्योति निरंजन यानि काल ब्रह्म से भी कहा था, अब आपको भी बता रहा हूँ।

स्वसमबेद बोध की वाणी सँख्या 66 से 74 का सरलार्थ :- जिस समय कलयुग पाँच हजार पाँच सौ पाँच वर्ष बीत जाएगा, तब एक महापुरूष विश्व को पार करने के लिए आएगा। हिन्दू, मुसलमान आदि-आदि जितने भी पंथ तब तक बनेंगे और जितने जीव संसार में हैं, वे मानव शरीर प्राप्त करके उस महापुरूष से सत्यनाम लेकर सत्यनाम की शक्ति से मोक्ष प्राप्त करेंगे। वह महापुरूष जो सत्य कबीर पंथ चलाएगा, उस (तेरहवें) पंथ में सब पंथ स्वतः ऐसे तीव्र गति से समा जाएंगे जैसे भिन्न-भिन्न नदियाँ अपने आप निर्बाध दौड़कर समुद्र में गिर जाती है। उनको कोई रोक नहीं पाता। ऐसे

उस तेरहवें पंथ में सब पंथ शीघ्रता से मिलकर एक पंथ बन जाएगा। परंतु जब तक ठीक का समय नहीं आएगा यानि कलयुग पाँच हजार पाँच सौ पाँच वर्ष पूरे नहीं करता, तब तक मैं जो यह ज्ञान स्वसमवेद में बोल रहा हूँ, आप लिख रहे हो, निराधार लगेगा।

जिस समय वह निर्धारित समय आएगा। उस समय स्त्री-पुरूष उच्च विचारों तथा शुद्ध आचरण के होकर कपट, व्यर्थ की चतुराई त्यागकर मेरी (कबीर जी की) शरण ग्रहण करेंगे। परमात्मा से लाभ लेने के लिए एक ''मानव'' धर्म से अनेक पंथ (धार्मिक समुदाय) बन गए हैं, वे सब पुनः एक हो जाएंगे। सब हंस (निर्विकार भक्त) आत्माएँ सत्य नाम की शक्ति से सतलोक चले जाएंगे। मेरे अध्यात्म ज्ञान की चर्चा घर-घर में होगी। जिस कारण से सबकी दुर्मति समाप्त हो जाएगी। कलयुग में फिर एक होकर सहज बर्ताव करेंगे यानि शांतिपूर्वक जीवन जीएंगे। कहाँ उग्र अर्थात् चाहे डाकू, लुटेरा, कसाई हो, चाहे शुद्र, अन्य बुराई करने वाला नीच होगा। परमात्मा सत्य भक्ति करने वालों की भवपीर यानि सांसारिक कष्ट हरेगा यानि दूर करेगा। सत्य साधना से सबकी भवपीर यानि संसारिक कष्ट समाप्त हो जाएंगे और उस 13वें (तेरहवें) पंथ का प्रवर्तक सबको समान दृष्टि से देखेगा अर्थात् ऊँच-नीच में भेदभाव नहीं करेगा। वह समर्थ सत्य कबीर ही होगा। (मम् सन्त मुझे जान मेरा ही स्वरूपम्)

प्रश्न :- वह तेरहवां पंथ कौन-सा है, उसका प्रवर्तक कौन है?

उत्तर :- वह तेरहवां पंथ ''यथार्थ सत कबीर'' पंथ है। उसके प्रवर्तक स्वयं कबीर परमेश्वर जी हैं। वर्तमान में उसका संचालक उनका गुलाम रामपाल दास पुत्र स्वामी रामदेवानंद जी महाराज है। (आध्यात्मिक दृष्टि से गुरू जी पिता माने जाते हैं जो आत्मा का पोषण करते हैं।)

प्रमाण :- वैसे तो संत धर्मदास जी की वंश परंपरा वाले महंतो से जुड़े श्रद्धालुओं ने अज्ञानतावश तेरहवां पंथ और संचालक धर्मदास की बिन्द (परिवार) की धारा वालों को सिद्ध करने की कुचेष्टा की है। परंतु हाथी के वस्त्र को भैंसे पर डालकर कोई कहे कि देखो यह वस्त्र भैंसे का है। बुद्धिमान तो तुरंत समझ जाते हैं कि यह भैंसा का वस्त्र नहीं है। यह तो भैंसे से कई गुणा लंबे-चौड़े पशु का है। भले ही वे ये न बता सकें कि यह हाथी का है।

उदाहरण :- पवित्र कबीर सागर के अध्याय ''कबीर चरित्र बोध'' के पृष्ठ 1834-1835 पर लिखा है।

''चौदहवां अध्याय''

शास्त्रानुकूल भक्ति से हुए भक्तों को लाभ

''शास्त्रविरूद्ध साधना से छुटकारा''

मैं भक्त हेमचंद दास सोलन (हिमाचल प्रदेश) का रहने वाला हूँ। पहले मैं अपने गाँव में महाकाली मंदिर में पुजारी रहा। 25 वर्ष से वहाँ पुजारी का काम करता था। भजन-कीर्तन और जो भी पूजाऐं मंदिर में होती, सभी किया करता था। पितर पूजा, श्राद्ध निकालना, शिव जी को जल चढ़ाना आदि क्रियाएँ करता था। लेकिन फिर भी हम दुःखी रहते थे। मेरी पत्नी को पैरालाईसिस थी। घर की आर्थिक स्थिति भी ठीक नहीं थी।

सन् 2005-2006 में संत रामपाल जी महाराज के कुछ लेख अखबारों में आते थे। मैं उन्हें समझ नहीं पाया, परंतु मैं इस तरह के धार्मिक कागजों को संभालकर रख लेता था। कुछ समय पश्चात् जैसे ही रद्दी से वो कागज मिले, मैं उसे पढ़ने बैठ गया और पढ़ते-पढ़ते मेरे दिल में ठेस-सी लगी कि ये ज्ञान कहाँ छिपा हुआ था? फिर मैंने उसमें आश्रम के फोन नं. देखे और पुस्तक मंगवाई। उसमें जब मैंने ज्ञान पढ़ा तो मैं हैरान रह गया, पैरों तले की जमीन खिसक गई क्योंकि मंदिर में पुजारी होने के बावजूद मैंने ऐसा नया ज्ञान कभी भी नहीं सुना था।

मैं पहले मानता रहा कि ब्रह्मा, विष्णु और शिव जी से ऊपर कोई है ही नहीं। परमात्मा निराकार है। संत रामपाल जी महाराज की पुस्तकों से ज्ञान हुआ कि परमात्मा साकार है, कबीर जी पूर्ण परमात्मा हैं। परमात्मा ने अंदर एक ऐसी प्रेरणा जगाई कि संत रामपाल जी के पास ही वह अमर मंत्र है जिससे हमारा कल्याण होना है। इसी से हमारा जन्म-मरण का भयंकर रोग कटेगा। उनके ज्ञान से प्रभावित होकर मैंने संत रामपाल जी महाराज से दीक्षा ली। मैंने सभी तरह की शास्त्रविरूद्ध पूजाऐं बंद कर दी। पितर पूजा, श्राद्ध निकालना आदि सब त्याग दिया।

गुरू जी का उपदेश लेने के बाद मुझे सबसे बड़ा तो आध्यात्मिक लाभ हुआ। जन्म-मरण से मुक्ति की सच्ची राह मिली। मेरी भक्तमति को पैरालाइसिस की परेशानी थी। हर जगह बड़े-बड़े डॉक्टरों व नीम-हकीमों के चक्कर लगा चुके थे, परंतु परमात्मा के आशीर्वाद मात्र से मेरी भक्तमति ठीक हो गई। परमात्मा की दया से हमारी आर्थिक स्थिति भी ठीक हो गई।

फिर मैंने ये ज्ञान प्रचार करना शुरू कर दिया। मुझे लगा कि ये ज्ञान तो जन-जन तक पहुँचना चाहिए। लेकिन मेरी बातों पर किसी ने गौर नहीं किया। लोगों ने विरोध किया, कहा कि तुम ये कौन-सा अलग ज्ञान ले आए। ऐसी बातें

ना किया करो। परंतु मुझे इस ज्ञान से परमात्मा की दया से कोई डगमग नहीं कर पाया। ऐसा सत्यज्ञान व सत्य भक्ति मार्ग पृथ्वी पर और कहीं नहीं है।

मेरी सर्व से प्रार्थना है कि आप भी प्रभु के चरणों में आओ। संत रूप में आए परमेश्वर के संदेश वाहक संत रामपाल जी महाराज को पहचानों। मुफ्त नाम उपदेश प्राप्त करके कृप्या अपना कल्याण करवाएँ।

भक्त हेमचंद दास
मोबाईल नं. 9816781489

''शास्त्रानुकूल भक्ति से मिला जीवन दान''

मेरा नाम सपना तोमर है। मैं शाहजहांपुर, उत्तरप्रदेश से हूँ। पहले मैं ब्रह्मा, विष्णु, महेश तथा माता की पूजा किया करती थी। मेरे पापा जी ने सन् 2013 में संत रामपाल जी महाराज से नामदान लिया था। वो टी.वी. पर सत्संग देखते थे। मैंने देखा कि संत रामपाल जी महाराज गीता, कुरान, गुरूग्रंथ साहिब और बाईबल आदि प्रमाण सहित खोलकर दिखा रहे हैं। संत रामपाल जी महाराज गीता जी का वर्णन बता रहे थे कि ब्रह्मा, विष्णु, महेश से ऊपर भी कोई भक्ति है। वास्तविक मंत्र तो अन्य ही है। मेरे पापा ने मुझे बताया कि बेटा संत रामपाल जी महाराज पूर्ण परमात्मा हैं, परमात्मा कबीर साहेब के अवतार हैं। उनसे दीक्षा ले लो। मैंने अप्रैल 2014 में संत रामपाल जी महाराज से नाम दीक्षा ली। संत रामपाल जी महाराज से नाम दीक्षा लेने के बाद मुझे काफी लाभ हुए। मेरे पति को 1-2 साल से पथरी की समस्या थी और फिर पाइल्स की समस्या भी हो गई। डॉक्टर के पास अल्ट्रासाउंड करवाया तो उन्होंने 5MM की पथरी बताई और बोले कि ये हैवी हो गयी है और इसका ऑपरेशन करवाओ। लेकिन उन्होंने ऑपरेशन नहीं करवाया। फिर मैंने संत रामपाल जी महाराज जी से प्रार्थना की तो परमात्मा ने उनकी पथरी ऐसे गायब कर दी जैसे उनको पथरी कभी थी ही नहीं। उसके कुछ समय बाद उनको पाइल्स (बवासीर) की समस्या बढ़ने लगी। एक देसी वैद्य के पास गए। उनकी दवाई से कुछ खास फायदा नहीं हुआ। वो उठ-बैठ व चल भी नहीं पाते थे। उनको पकड़कर ले जाना पड़ता था। वॉशरूम ले जाने में भी दिक्कत होती थी। वो बड़ी समस्या से गुजर रहे थे।

तब मैंने संत रामपाल जी महाराज को प्रार्थना लगाई कि परमात्मा ऐसे-ऐसे मेरे पति को समस्या है, परमात्मा दया करना। संत रामपाल जी महाराज ने बोला कि परमात्मा दया करेंगे, आप भक्ति करो। उन्होंने संत रामपाल जी महाराज के द्वारा दी हुई भक्ति की, जिससे उनकी बीमारी छू-मंतर हो गई। एक और दया मेरे पति पर संत रामपाल जी महाराज ने की। एक बार उनको डेंगू हो गया था। हमने उनको दिल्ली के GTB हॉस्पिटल में

एडमिट करवाया। ये 23 अक्टूबर 2018 की बात है। वहाँ वो दो दिन एडमिट रहे। उस सरकारी अस्पताल में उनका खास उपचार नहीं हो पाया जिससे उनकी हालत और खराब होती चली गई। मेरे सुसराल वालों ने बोला कि तू जब से घर में आई है और जो भक्ति कर रही है, तब से आये दिन घर में बीमारियां घेरे पड़ी हैं और तेरी वजह से सब कुछ हो रहा है।

मैं संत रामपाल जी महाराज के सामने रोने लगी कि परमात्मा! आज ये लोग ऐसा कह रहे हैं क्योंकि इन्हें नहीं पता कि आप परमात्मा आये हैं। लेकिन अभी परमात्मा मेरी परीक्षा ले रहे हैं कि कहीं मैं डगमगा ना जाऊँ। मेरे पति को फिर दूसरे हस्पताल स्टीफन में एडमिट करवा दिया। वहाँ पर उनके प्लेटलेट्स नहीं बढ़ रहे थे। उन्हें बहुत सारे ट्रीटमेंट दिए गए लेकिन कोई फायदा नहीं हुआ। एक दिन मैं अपनी बेटी के साथ उनसे हॉस्पिटल में मिलने गई। लेकिन उनका मुँह नहीं खुल रहा था। उनके दोनों दांत आपस में टकराते थे, उनकी एक अंगुली भी मुंह में नहीं जाती थी और वो बोल भी नहीं पा रहे थे। तब मैंने संत रामपाल जी महाराज का अमृत जल जो हमें मिलता है, वो उनके मुँह में डाला। उसके कुछ ही क्षण बाद उनका मुँह आपने आप खुलने लगा और वो मुझसे बात करने लगे। मुझे वहाँ रोना आ गया कि परमात्मा मुझे तो विश्वास है, लेकिन मैं अपने सुसराल वालों को कैसे विश्वास दिलाऊँ कि परमात्मा इतना बड़ा चमत्कार कर सकते हैं। फिर उनकी रीढ़ की हड्डी का पानी निकालकर टेस्ट के लिए भेजा तो डॉक्टर ने बताया कि इनको ब्लड कैंसर है। ब्लड कैंसर का नाम सुनकर सबके होश उड़ गए कि अब तो ये नहीं बचेंगे। लेकिन मुझे संत रामपाल जी महाराज पर पूरा विश्वास था। परमात्मा सत्संग में बताते है कि जो स्त्री सतगुरू रामपाल जी महाराज (पूर्ण परमात्मा) की भक्ति करती है, वो कभी विधवा नहीं होती और जो माता-पिता पूर्ण परमात्मा की भक्ति करते हैं, उनके सामने उनके बच्चों की मौत नहीं होती। वो स्टीफन अस्पताल में डेढ़ महीने एडमिट रहे। फिर संजय गांधी हॉस्पिटल में रेफर कर दिया। उनका वहाँ ब्लड कैंसर का ट्रीटमैंट चला और 15-16 लाख उनके ईलाज में लग गए। फिर एक दिन मेरे पति का शाम को फोन आया और उन्होंने मुझे कहा कि मैं अब नहीं बचूंगा, तू प्रार्थना कर लेना जो तुझे करना है। मेरे सुसराल वालों ने बोला कि तू संत रामपाल जी महाराज की भक्ति कर रही है जिससे हमारे लड़के की ये हालत हुई है। मेरी एक मौसी सास है, उन्होंने कहा कि अब तू हनुमान चालीसा का पाठ करना शुरू कर दे। मैंने कहा कि मैं संत रामपाल जी महाराज की शरण में हूँ, मैं अंतिम श्वांस तक उनकी भक्ति करूँगी, कोई दूसरी पूजा नहीं करूँगी। मैंने ये दृढ़ कर लिया था कि करेंगे तो संत रामपाल जी महाराज ही मेरे पति को ठीक करेंगे नहीं

तो दुनिया की कोई ताकत उनको ठीक नहीं कर सकती।

मुझ पर दबाव पड़ रहा था, मैं घर में अकेली पड़ गयी थी। मैं दुःखी हो गयी थी। शाम को मैंने गुरू जी के चरणों में दीपक जलाया। उस समय बच्चा मेरी गोद में था। मैंने संत रामपाल जी महाराज को दण्डवत् प्रणाम किया और मेरे बच्चे को भी करवाया। दण्डवत् प्रणाम करने के बाद मैंने परमात्मा से प्रार्थना की कि आप अगर समर्थ परमात्मा हैं तो मेरा विश्वास मत टूटने देना और ये लोग जो मुझे ताना मार रहे हैं और मुझे इतना सब कुछ कह रहे हैं, उसके बावजूद ऐसा कर देना कि इनकी बोलती बंद हो जाये।

तब संत रामपाल जी महाराज ने हमारे साथ ऐसा चमत्कार किया कि उनकी दो-तीन दिन बाद जो ब्लड कैंसर की फिर से रिपोर्ट करवाई तो वो नैगेटिव आई। संत रामपाल जी महाराज ने उनका कैंसर खत्म कर दिया व जो प्लेटलेट्स घटी हुई थी, वो रिपोर्ट भी एकदम नॉर्मल आई। आज मेरे पति एकदम स्वस्थ हैं और परमात्मा की भक्ति कर रहे हैं। एक दिन मेरे पति अपनी जाँच करवाने के लिए अस्पताल जा रहे थे। वो मेट्रो में बैठे हुए थे। उनकी हॉर्ट बीट 230 हो गयी थी। मेरे पास उनका फोन आया कि मैं अब नहीं बचूँगा। मैंने कहा कोई बात नहीं आपको संत रामपाल जी महाराज ने जो सतनाम दिया है, उसका स्मरण करो। वे जैसे-तैसे हॉस्पिटल पहुँच गए और जाँच करवाई। डॉक्टर ने कहा कि आपका हॉर्ट का ऑपरेशन होगा। आपके दिल में एक तरंग की जगह दो निकल रही हैं। दूसरी वाली बंद करनी पड़ेगी। संत रामपाल जी महाराज से आज्ञा लेकर हमने ऑपरेशन करवाया जो कि सफल हुआ और मेरे पति बिल्कुल ठीक हो गए। एक बार मेरे पति को संत रामपाल जी महाराज ने जीवन दान दिया। मेरे पति जब हॉस्पिटल में थे तो काल के दूत उन्हें लेने आ गए थे। रात का समय था और उनकी पल्स चलनी बंद हो गयी थी। पूरे हॉस्पिटल में कोहराम मच गया और मेरे भक्त जी को भी पता नहीं चला कि हुआ क्या? परंतु थोड़ी देर बाद उनकी पल्स वापस आ गई तब डॉक्टर भी आश्चर्यचक्ति हो गए कि ये हुआ क्या। एक इंसान मरने के बाद कैसे जिंदा हो गया? जब मैं हॉस्पिटल में उनसे मिलने गयी तो मैंने आस-पास के लोगों को बताया कि मैं संत रामपाल जी महाराज की शरण में हूँ और उन्होंने ही मेरे पति को जीवन दान दिया है। आज मेरे पति बिल्कुल स्वस्थ हैं। संत रामपाल जी महाराज की हमारे ऊपर दया है। आज मैं बहुत ही ज्यादा गर्व महसूस करती हूँ कि संत रामपाल जी महाराज की शरण में हूँ और आजीवन उनकी भक्ति करती रहूँगी। संत रामपाल जी महाराज प्रमाणित और शास्त्रानुकूल भक्ति-साधना बताते हैं। उनके द्वारा बताई गई भक्ति करने से सांसारिक सुख परमात्मा आपको देंगे।

मैं मानव समाज से प्रार्थना करना चाहूँगी कि वो इधर-उधर ना भटकें

और संत रामपाल जी महाराज की शरण में आएँ। संत रामपाल जी महाराज स्वयं परमात्मा के रूप में इस धरती पर बरवाला-हिसार आए हुए हैं। हर शहर में आज संत रामपाल जी महाराज के नामदान केन्द्र खुले हुए हैं, जहाँ नामदान की सुविधा है। आप वहाँ जाकर नामदान ले सकते हैं और अपना कल्याण करवा सकते हैं।

भक्तमति सपना तोमर
शाहजहांपुर (उत्तर प्रदेश)।
सम्पर्क सूत्र :- 9289326209

''पूर्ण परमात्मा की भक्ति से हुए अनगिनत लाभ''

मेरा नाम शलेन्द्र दास है। मैं जिला-सोनीपत हरियाणा का रहने वाला हूँ। मैं पिछले 25 साल से श्रीमद्भगवत गीता का रोजाना एक अध्याय का पाठ करता था। मैं हनुमान जी, शिव जी और साईं बाबा की पूजा करता व हफ्ते में तीन दिन व्रत भी करता था। संत रामपाल जी महाराज जी की शरण में जाने का कारण ये है कि मेरे पिताजी को 2012 में खाने वाली नली में कैंसर हो गया था तब हमने उनका राजीव गांधी हॉस्पिटल दिल्ली से ईलाज करवाया। मेरी मम्मी को भी घुटनों में दर्द रहता था। मेरे मन में ये सवाल उठता रहता था कि जिन्होंने कभी किसी का बुरा नहीं किया, उनके साथ इतना बुरा क्यों हो रहा है? पुरानी भक्ति करते हुए भी मेरे घर में दु:ख बढ़ते चले गए। मेरी आर्थिक स्थिति भी सही नहीं रही। कोई न कोई टैंशन मुझे रहती ही थी। एक बार ''ज्ञान गंगा'' पुस्तक मुझे कहीं से मिली, लेकिन मैंने पूरी नहीं पढ़ी। कई बार मैं ये सोचता था कि इतनी पूजा करने के बाद भी भगवान मेरा साथ क्यों नहीं देते?

तब मैंने ''ज्ञान गंगा'' पुस्तक को फिर से पढ़ना चालू किया तो मुझे समझ आया कि ये कोई पहुँचे हुए संत है। क्योंकि उन्होंने इतनी अच्छी-अच्छी बातें इस पुस्तक में लिखी हैं। मैं अपने पिता जी, बीवी और दोनों बच्चों को लेकर बरवाला आश्रम में 31 अगस्त 2014 को गया और हम सबने संत रामपाल जी महाराज जी से नाम लिया। उसके बाद मेरे पिताजी और माता जी की बीमारी एकदम ठीक हो गयी। संत रामपाल जी महाराज से नाम लेने के बाद हमें बहुत लाभ मिले। परमात्मा की प्राप्ति हो गई। हमारी जितनी भी प्रमाणित पुस्तकें हैं जैसे गीता, वेद, पुराण, इन सबका मैंने अध्ययन किया और मुस्लिमों की कुरआन मजीद, कुरआन शरीफ को भी पढ़ा। मैं पढ़ा-लिखा इंसान हूँ, इतनी जल्दी शरण में नहीं आया। पहले हर एक चीज का आकलन किया। मैंने आश्रम का सिस्टम देखा। वहाँ पर लाखों श्रद्धालु भंडारा करते हैं। आश्रम में गर्म पानी से लेकर, टॉयलेट तक हर चीज की व्यवस्था है। जब मैं गुरूजी

के दर्शन करने पहुँचा तब गुरू जी से दास (मैंने) ने अरदास लगाई कि मालिक! मेरे पिता जी को कैंसर हो गया है और इनकी आवाज चली गई है।

संत रामपाल जी महाराज ने मेरे पिता जी से कहा कि बेटा भक्ति कर, आवाज भी खुल जाएगी। तब संत रामपाल जी महाराज के आशीर्वाद से मेरे पिताजी की आवाज वापिस आ गई। इसके बाद मैंने गुरूजी से प्रार्थना लगाई कि मैं पिछले पाँच साल से फैक्ट्री लगाने की कोशिश कर रहा हूँ, लेकिन लग नहीं पा रही। संत रामपाल जी महाराज ने कहा बेटा भक्ति कर, तेरी फैक्ट्री भी लग जाऐगी। मैंने करीबन 2.5 करोड़ रूपये फैक्ट्री में लगाए। मुझे पता ही नहीं चला कि कहाँ से वो पैसे आए। मेरी प्रोडक्शन भी काफी अच्छी हुई। मेरी फैक्ट्री के कर्मचारी भी इस बात को मानते हैं कि सच में मेरे गुरू जी संत रामपाल जी महाराज भगवान हैं। एक लाभ और बताता हूँ। मेरे छोटे भाई को भूत-प्रेत की समस्या थी। जब वो भूत उसके ऊपर आ जाता तो वो उसको शराब/दारू पिलाता तो उसको ये पता हीं नहीं लगता कि वह कितनी शराब पी जाता है। मैंने उसको कई बार कहा कि भाई! तू संत रामपाल जी महाराज से नाम ले ले, लेकिन वो मानता नहीं था। वो भी अन्य लोगों की तरह गुरूजी के लिए गलत बोलता था। उसकी हालत खराब होती जा रही थी। उसके बाद मेरे भाई के साथ भी चमत्कार हुआ। उसने बताया कि जब वो रात को लेटा हुआ था तो उसे कमरे में छत्त पर संत रामपाल जी महाराज दिखाई दिए। वो प्रकट होकर बोले कि बेटा! चिंता मत कर, मैं तुझे मरने नहीं दूँगा। उसके पश्चात् उसने भी नाम ले लिया। संत रामपाल जी महाराज ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि की पूजा नहीं छुड़वाते, बल्कि शास्त्रानुसार इनकी पूजा की सही विधि बताते हैं। जो गीता जी के अंदर भी विदित है। जिससे सर्व लोगों को सुख होता है। मैं सर्व मानव समाज को यही संदेश देना चाहूँगा कि संत रामपाल जी महाराज पूर्ण परमात्मा है। उनसे नामदीक्षा लेकर अपना कल्याण करवाएँ। मेरी सभी से हाथ जोड़कर प्रार्थना है कि जल्दी करो। ये समय बीतता जा रहा है। जितना समय निकल जाऐगा, आप उतना समय मानव जीवन का खराब करेंगे। जल्दी से जल्दी आओ और संत रामपाल जी महाराज की शरण में आकर अपना कल्याण करवाओ।

भक्त शलेन्द्र दास
जिला-सोनीपत हरियाणा।

''सच्ची शास्त्रानुकूल भक्ति से प्रेतबाधा हुई दूर''

मेरा नाम राजू दास है। मैं गाँव-डाबोदा खुर्द, जिला-झज्जर (हरियाणा) से हूँ। पहले मैं पारम्परिक जैसे मंदिर में जाना, व्रत करना आदि करता था। इसके साथ ही हमने 12 साल पहले अपने मामा जी के माध्यम से सुदर्शनाचार्य

जी से नाम दीक्षा ली थी। वो वैष्णव धर्म से थे और बोला करते थे कि वो 7 पीढ़ियों से विष्णु जी की भक्ति कर रहे हैं। उस समय छोटी उम्र होने के कारण मुझे कुछ ज्ञान नहीं था। जब मैं सातवीं कक्षा में पढ़ता था। हमारे गांव में आसाराम नाम के गणित के अध्यापक थे जो संत रामपाल जी महाराज से जुड़े हुए थे। वो बच्चों को पढ़ाते समय कई बार परमात्मा की चर्चा किया करते थे। एक बार उन्होंने कहा कि बच्चों आप कोई भक्ति साधना करते हो क्या? तब हम सबने कहा, हाँ! सर, हम भक्ति करते हैं, मंदिरों में जाते हैं। तब उन्होंने पूछा कि ब्रह्मा, विष्णु, महेश के माता-पिता कौन हैं? उनकी इस बात पर सब बच्चे हँसने लगे। जबकि मुझे इस बात से झटका लगा कि उन्होंने ऐसी बात क्यों कही? फिर वो कहने लगे कि ब्रह्मा, विष्णु, महेश के माता दुर्गा जी है व पिता काल ब्रह्म हैं। हम सबने उनकी बातों को ऐसे ही टाल दिया। स्कूल खत्म होने के बाद मैंने उनसे पूछा कि सर आपने ये सब कहाँ से बताया तो उन्होंने कहा कि हमारे धर्मग्रंथों में ही लिखा हुआ है कि ब्रह्मा, विष्णु, महेश के माता-पिता हैं और इनकी जन्म-मृत्यु भी होती है। मास्टर जी ने मुझे ''गीता तेरा ज्ञान अमृत'' पुस्तक दी। मैं खुद गीता पढ़ता था। फिर मैंने गीता जी और संत रामपाल जी महाराज द्वारा लिखी पुस्तक ''गीता तेरा ज्ञान अमृत'' दोनों को मिलाया। गीता में प्रमाण देखकर मैं हक्का-बक्का रह गया कि जो मैं साधना कर रहा हूँ, वो तो बिल्कुल गीता जी के विरूद्ध है। फिर मैंने मास्टर जी से कहा कि मेरी तो सारी साधना गलत है। अब मैं क्या करूँ? उन्होंने कहा कि मुंडका (दिल्ली) में संत रामपाल जी महाराज जी का आश्रम है, वहाँ जाकर नामदीक्षा लो। वहाँ जाकर 2-3 दिन मैंने संत रामपाल जी महाराज का सत्संग सुना और 10 मई 2017 को मैंने संत रामपाल जी महाराज जी से नाम-दीक्षा ली।

संत रामपाल जी महाराज जी से नाम-दीक्षा लेने के बाद बहुत से लाभ हुए। पहला लाभ ये हुआ कि पहले मुझे भूत-प्रेत की समस्या थी, वो समाप्त हो गई। फरीदाबाद से संत सुदर्शन जी से मैंने नाम-दीक्षा ले रखी थी। उन्होंने भी मेरे ऊपर झाड़-फूंक किया। एक हवन भी किया, ताबीज बांधा, लेकिन उससे मुझे कोई भी लाभ नहीं हुआ था। यहाँ तक कि जब मैं रात को सोता था तब वो भूत-प्रेत मेरे सोते हुए की चद्दर को फेंक देते थे और मुझे इतनी बुरी तरह दबा लेते थे कि मुझे सांस लेने में भी बहुत ज्यादा तकलीफ होती थी। संत रामपाल जी महाराज की शरण में आने के बाद मुझे ये भी पता नहीं लगा कि भूत-प्रेत की बाधा कब खत्म हो गई। मेरी दादी को गले में कैंसर हो गया था। 3 महीने तक वो तड़पती रही और फिर शरीर छोड़ा। शरीर छोड़ने के बाद वो भूत बनी जबकि फरीदाबाद वाले सुदर्शन महाराज कहा करते थे कि हमारी साधना से तुम्हारी जन्म और मृत्यु समाप्त

हो जाएगी। वो झूठ कहा करते थे क्योंकि अगर ऐसा होता तो मेरी दादी भूत क्यों बनती? उनकी साधना करते-करते मेरी दादी को कैंसर हुआ और बुरी तरह तड़फ-तड़फकर उन्होंने शरीर छोड़ा। उनकी साधना शास्त्रविरूद्ध थी। जब घरवालों को पता चला कि मैं संत रामपाल जी महाराज का शिष्य हो गया हूँ तो घरवालों ने सुदर्शन महाराज को फोन करके कहा कि ये संत रामपाल जी महाराज का शिष्य हो गया है। उन्होंने बोला कि इसको आश्रम में लेकर आओ, हम देख लेंगे। उनको लगा कि संत रामपाल जी महाराज छोटे-मोटे संत है। उन्होंने मेरे ऊपर पित्तर छोड़ दिये। मेरे दादा जी, मेरे पिता जी को मेरे पीछे कर दिया, ये मानकर कि ये प्रेत बाधा से पीड़ित होगा तो दोबारा हमारे पास ही आएगा। लेकिन संत रामपाल जी महाराज की मेरे ऊपर इतनी दया थी कि वो मेरा कुछ नुकसान नहीं कर पाए। मेरे परिवार में मेरा सबसे ज्यादा मेरा दादी के साथ लगाव था। उन्होंने मेरी दादी को एक बार मेरे पास भेज दिया। मेरी दादी मेरे पास आकर रोने लग गई। मैं बोला दादी तू क्यों रो रही है? तो उसने कहा बेटा! तू संत रामपाल जी महाराज जी को छोड़कर वापिस उस फरीदाबाद वालों से नाम दीक्षा ले ले। मैंने कहा क्यों? उन्होंने कहा बेटा! तू अगर ऐसा नहीं करेगा तो वो हमें आश्रम से निकाल देंगे? उनकी ये बातें सुनकर मुझे बहुत धक्का लगा। उनकी शास्त्रविरूद्ध साधना ने उन्हें प्रेत बना दिया और प्रेत बनने के बाद भी वो आश्रम में रहते थे और उन्हें आश्रम से निकालने की भी धमकी दे दी। उनको पता था कि अगर ये संत रामपाल जी महाराज की शरण में रहेगा तो हम इसका कुछ बिगाड़ नहीं पाएँगे। इस बात से मुझे और दृढ़ विश्वास हो गया। लेकिन शास्त्रों के विपरीत और गलत गुरू मिलने से मेरी दादी जी का जीवन बर्बाद हो गया था। इसका मुझे बहुत दुःख है।

संत रामपाल जी महाराज ही कबीर परमात्मा हैं। उनका ज्ञान शास्त्रों पर आधारित है। वो जो भक्ति मंत्र दे रहे हैं, वो भी प्रमाणित है। जिनकी गवाही गीता, वेद आदि सब धर्मग्रंथ देते हैं। उनके मंत्रों के जाप से हर समस्या का निवारण होता है तथा भूत-प्रेत निकट नहीं आते। संत रामपाल जी महाराज की भक्ति-साधना में बहुत शक्ति है जिससे आपका कोई कुछ भी गलत नहीं कर सकता।

मैं भक्त समाज ये यही कहना चाहूँगा कि आप सभी से मेरा निवेदन है कि संत रामपाल जी महाराज कि शरण में आओ और अपने मनुष्य जीवन का कल्याण करवाओ।

भक्त राजू दास
गाँव-डाबोदा खुर्द, झज्जर (हरियाणा)

''संत हो तो ऐसा''

मेरा नाम सोमबीर सिंह अहलावत है। मैं गाँव-गंगटान, तहसील-बेरी, जिला- झज्जर, हरियाणा का रहने वाला हूँ। जगतगुरू तत्त्वदर्शी संत रामपाल जी महाराज जी से नाम दीक्षा लेने से पहले मैं पित्तर देव की भक्ति करता था। हनुमान जी, शिव जी तथा देवी दुर्गा इन सभी की भक्ति भी करता था। हमारे गाँव के पास डीघल गाँव है जिसमें एक बाबा का स्थान था, जिसे मैं भी मानता था। राधा स्वामी पंथ से भी नाम दीक्षा ले रखी थी। लेकिन उनसे मुझे किसी प्रकार की कोई संतुष्टि नहीं मिली। मेरी बड़ी भाभी ने संत रामपाल जी महाराज जी से सन् 2000 में नाम दीक्षा ले ली थी। मैं बहुत नीच आत्मा था। मैं अपनी भाभी को गाली देता था। बहुत गलत बोलता था। वह मुझे संत रामपाल जी महाराज जी की शरण में आने के लिए बहुत बोलती थी। कहती थी कि संत जी की शरण में आ जाओ, वरना बहुत बुरा हाल होगा। लेकिन मैं एक नहीं सुनता था। हमारे गाँव के पास करौंथा में संत रामपाल जी महाराज का सतलोक आश्रम था। हम सभी गाँव वाले इनके खिलाफ हो जाते थे। आर्य समाज ने भी इनको बहुत ही परेशान कर रखा था। मैंने सन् 2006 में अपनी भाभी का सिर फोड़ दिया था, बहुत मारा भी, लेकिन भाभी ने कुछ नहीं बोला। उसके बाद मेरी भाभी मेरी पत्नी को लेकर आश्रम में जाने लगी। संत रामपाल जी महाराज जी की दया से मेरी पत्नी ने उपदेश लिया और मुझे भी समझाती रही। 2 साल तक मेरे साथ संघर्ष किया। फिर मेरे अंदर संत रामपाल जी महाराज जी से नाम दीक्षा लेने की प्रेरणा हुई। मैंने 5 जून 2012 में बरवाला आश्रम में संत रामपाल जी महाराज से उपदेश लिया। संत रामपाल जी महाराज जी से उपदेश लेने के बाद जिंदगी में बहुत परिवर्तन हुए। पहले मेरी पत्नी बहुत बीमार रहती थी। बहुत ईलाज करवाया। मैं दिल्ली में SI के माध्यम से Parliament में काम करता था तो मैंने बहुत पैसे लगा दिए। लेकिन कोई फायदा नहीं हो रहा था। फिर मेरी बहन आई तो उसने कहा कि इनको भूत-प्रेत की बाधा है। वो किसी तांत्रिक बाबा को लेकर आई जिसने हमको बहुत अंध-विश्वास में डाल दिया। कभी दारू की बोतल तो कभी कुछ, लेकिन मुझे कुछ भी लाभ नहीं हुआ।

फिर उसके बाद जब मेरी भाभी संत रामपाल जी महाराज के पास लेकर गई, तब से आज तक मेरी पत्नी बिल्कुल ठीक है और कारोबार में भी बहुत बरकत हो गई है। मैं पहले शराब व हुक्के का सेवन भी बहुत ज्यादा किया करता था। मैं यह सोचता था कि यह कभी नहीं छूट सकते हैं। लेकिन संत रामपाल जी महाराज जी की दया से यह सब छूट गया। सारी बुराई अपने आप छूट गई जैसे कोई चमत्कार हुआ हो। मेरे दो बच्चे भी हैं। उन्होंने भी संत रामपाल जी महाराज जी से उपदेश ले रखा है। आज हम पूरा परिवार संत रामपाल

जी महाराज की दया से बहुत खुश हैं। मेरे गाँव वाले बोलते हैं कि तुम्हारे संत रामपाल जी महाराज ने ऐसा क्या कर दिया कि तुम्हारा तो जीवन ही बदल गया? मैंने गुरूजी से कहा कि मालिक दया करो। बच्चों को कहीं रोजगार मिल जाए। संत रामपाल जी महाराज जी ने कहा, बेटा! मालिक सब ठीक करेंगे। संत रामपाल जी महाराज की दया से मेरे छोटे बेटे का आर्मी में सलेक्शन हो गया। ये सब संत रामपाल जी महाराज द्वारा दी गई सत्भक्ति का कमाल है। संत रामपाल जी महाराज जी पूर्ण गुरू हैं जो सभी शास्त्रों में प्रमाण दिखाकर भक्ति बता रहे हैं। आर्य समाज की पोल भी संत रामपाल जी महाराज जी ने खोल दी है। परमात्मा निराकार नहीं बल्कि साकार है। जबकि मैं खुद पहले भ्रमित था। आज यदि कोई सच्चा गुरू है तो वह संत रामपाल जी महाराज जी हैं जिनके द्वारा बताई गई भक्ति से सभी दुःखों का अंत होता है।

मैं भक्त समाज से प्रार्थना करता हूँ कि संत रामपाल जी महाराज द्वारा बताई गई भक्ति सत्य है। उनका सत्संग सुनें, किताबें पढ़ें और नाम-दीक्षा लेकर अपना कल्याण करवाएँ।

सोमबीर सिंह अहलावत
पता :- गाँव-गंगटान, तहसील-बेरी,
जिला-झज्जर (हरियाणा)

अनहोनी की परमात्मा ने
(शादी के 16 साल बाद संतान प्राप्ति)

सतगुरु के दरबार में कमी काहे की नाहीं।
हंसा मौज न पावता तेरी चूक चाकरी माहीं।।

मैं भक्त रामजी दास ग्राम-कटरा पोस्ट-सलेहा, जिला-पन्ना (मध्यप्रदेश) का निवासी हूँ। मैं बचपन से परमात्मा की खोज में लगा हुआ था और हिन्दू धर्म के मंदिरों व धामों आदि पर जाता रहता था। साथ ही एक कबीर पंथी संत से नाम-उपदेश भी लिया हुआ था। मेरी शादी को कई साल बीत गए थे। लेकिन हमें कोई संतान प्राप्ति नहीं हुई। जहाँ मेडिकल फेल हो जाता है, वहाँ परमात्मा का विधान शुरू होता है।

कई जगह (देवी-देवताओं के पास मंदिर-मस्जिद, झाड़-फूंक करवाया) गए, वैष्णो देवी जम्मू भी गया, बड़े-बड़े डॉक्टरों को दिखाया। सबसे पहले सिविल अस्पताल मैहर में डॉ. श्रीमति एस. बी. अवधिया एम.डी. (D.G.O.), प्रसूति एवम् स्त्री रोग चिकित्सक को दिखाया और अल्ट्रासाउंड सोनोग्राफी के द्वारा उन्होंने देखा कि उनकी बच्चेदानी में गाँठें हैं, वे निकालनी पड़ेंगी। इसके लिए सतना में जाना पड़ेगा। 18 फरवरी 2009 में शकुंतलम् नर्सिंग होम सतना में बच्चेदानी का ऑपरेशन हुआ। इसके बाद भी हमें संतान

प्राप्ति नहीं हुई। लेकिन दवाएँ चलती रही। इसके बाद सन् 2012 में शारदा हॉस्पिटल एंड रिसर्च सेंटर सतना में डॉ. महेन्द्र सिंह (M.B.B.S., D.G.O.) के यहाँ 1 वर्ष तक इलाज चला। फिर अंत में डॉक्टरों ने हमें बोल दिया कि आप टेस्ट-ट्यूब बेबी करवा सकते हैं। परंतु उसकी भी कोई गारंटी नहीं है। उसमें लाख दो लाख रूपये खर्च आता है।

हम गरीब आदमी इतनी बड़ी रकम कहाँ से लाते? हमने मना कर दिया। हमने दुनिया के लोगों की रोज की बातों से तंग आकर फैसला किया कि चलो! रोज की खिच-खिच से अच्छा हम नोएडा (उत्तर प्रदेश) चलते हैं। वहीं काम करेंगे और वहीं इलाज करवाएँगे। फिर हमने सुन रखा था कि वैष्णों देवी जाने से संतान प्राप्ति होती है तो जुलाई 2012 में कटरा (जम्मू) जाकर वैष्णों देवी की यात्रा की। इससे भी कोई राहत नहीं मिली। हम मकर सक्रांति को जनवरी 2013 को घर आये। हम साधना चैनल पर सत्संग कार्यक्रम देखते थे। मेरे पिता जी बोले कि कबीर साहेब जी का सत्संग आता है, आप भी देखो। हमने सत्संग देखा और पुस्तक ''ज्ञान गंगा'' मंगवाई जो हमारे घर निःशुल्क प्राप्त हुई। पिताजी बोले कि आप बरवाला आश्रम चले जाओ, परमात्मा शायद दया करें।

हम दोनों ने 21 अप्रैल 2013 को सतलोक आश्रम बरवाला में सतगुरु रामपाल जी महाराज जी से नाम-दीक्षा लेकर अरदास लगाई कि कई साल हो गए, हमें संतान प्राप्ति नहीं हो रही है। परमात्मा बोले कि बेटा! भक्ति करो, परमात्मा दया करेंगे। इस प्रकार चलते-चलते नवम्बर 2014 में बरवाला कांड की लीला हो गई। हम घर आ गए। हमें पता लग गया था कि ये मानव जीवन किसलिए मिला है और हम भक्ति करने लगे थे। कुछ दिनों बाद फिर घर-परिवार वाले और रिश्तेदार वही पुराना रोना रोने लगे कि एक संतान तो होनी ही चाहिए। गाँव के लोग तो कभी-कभी यहाँ तक बोलने लगे कि इनका तो मुँह भी नहीं देखना चाहिए। एक दिन भक्तमति बोली कि चलो दवा करवाते हैं। परमात्मा दवा के लिए तो मना नहीं करते। हमने गुरु जी से अरदास लगाई कि दवा करवा लें। गुरु जी बोले कि करवा लो, परमात्मा दया करेंगे। फिर हमने डॉ. आभा पाठक (M.B.B.S., M.S., Gynecologist & Obstetrician) पाठक नर्सिंग होम सतना में मार्च 2019 में इलाज शुरू किया। उन्होंने भी लॉस्ट में बोल दिया कि हम ऐसे केस नहीं लेते। आपका तो भगवान ही मालिक है। अब मेडिकल और सांईस दोनों फेल हो चुके थे।

डॉक्टर मैडम के ऐसे बोलने पर हमने फैसला कर लिया कि अब हम कहीं दवा नहीं करवाएँगे। जो करेंगे, वो सब बंदी छोड़ सतगुरु रामपाल जी महाराज ही करेंगे। फिर सितम्बर 2020 में परमात्मा ने अपने कोटे से एक भक्त आत्मा हमें संतान रूप में दी जो हमारी किस्मत में नहीं थी। वह

परमात्मा ने दी। यहाँ तक कि जब हमारी भक्तमति घर से बाहर निकलती थी तो लोग बोलते थे कि यह बांझ है, इसका मुँह नहीं देखना चाहिए। परमात्मा ने उन्हें भी दिखा दिया।

उसके बाद तो परमात्मा पल-पल हमारे साथ चमत्कार करते हैं। एक समय की बात है, हम और भक्तमति मोटरसाइकिल पर कहीं जा रहे थे। अचानक हमारा एक्सीडेंट हो गया। भक्तमति का सिर फट गया। मुँह से झाग निकलने लगा, मानो मृत्यु हो गई हो। अस्पताल में डॉक्टर को दिखाया तो उन्होंने कहा कि ये बेहोश हैं और सिर की चोट है। अगर इनको होश नहीं आया तो ये कोमा में भी जा सकती हैं। सुबह 10:00 बजे हमारा एक्सीडेंट हुआ था और शाम को 3:00 बजे के आसपास भक्तमति जी को होश आ गया और हम घर आ गये।

एक जगह दास मजदूरी करता है। एक जगह काम के लिए गया था। जिनके यहाँ काम करना था, उनका मकान जर्जर था। जैसे ही दास ने प्रवेश किया, उस मकान में ऊपर से एक लकड़ी का गार्डर मेरे ऊपर गिर गया और लोगों ने कहा कि यह तो मर गया होगा। लेकिन जब दास ने ऊपर देखा तो सिर से 6 अंगुल ऊपर वह गार्डर का टुकड़ा हवा में लटकता रहा। जब दास ने उसको देखा तो दास के आँसू निकलने लगे।

पूर्ण परमात्मा की शरण में आने के बाद मानसिक, शारीरिक तथा आर्थिक सभी प्रकार के दुःखों से मुक्ति मिल गई। सबसे बड़ा फायदा यह हुआ कि संत रामपाल जी महाराज ने मुझे पूर्ण परमात्मा कबीर साहेब जी का परिचय करवा दिया, परिणामस्वरूप अब हमारा पूर्ण मोक्ष निश्चित है।

रामजी दास, ग्राम : कटरा, जिला : पन्ना (मध्यप्रदेश)
सम्पर्क सूत्र :- 9752319125

☞ उपरोक्त कुछ भक्तात्माओं की आत्मकथाएँ आपने पढ़ी। ऐसे-ऐसे भक्त अनेकों हैं जो अपनी आत्मकथा पुस्तकों में लिखवाना चाहते हैं। परंतु यहाँ स्थान के अभाव के कारण हम कुछेक भक्तों की आत्मकथा लिख पाए। यदि सभी भक्तों की आत्मकथा हम लिखने बैठ जाएँ तो शायद सैंकड़ों पुस्तकें छप जाएँगी। इसलिए समझदार व्यक्ति को संकेत ही पर्याप्त होता है। अगर आप अन्य कुछ भक्तों के अनुभव और सत्संग वीडियो में देखना चाहते हैं तो हमारी एप ''Sant Rampal Ji Maharaj'' पर देख व सुन सकते हैं।

Note : For Circulation The Followers of Sant Rampal Ji Maharaj & Like Minded People Only.

❑❑❑